आर. पी. सराफ

द्वारा लिखित

इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूपाइंट

(जनवरी 1995 से दिसम्बर 1998 तक)

में प्रकाशित लेखों का संकलन

भाग-3

Logon: www.nhcpm.org

प्रकाशक :

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन, भारत

❑ प्रकाशक :

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन

23/864, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड,
जोधपुर - 342 008 (राजस्थान) भारत
फोन : 94148-64548
E-mail: sajjankumarnhcpm@gmail.com
ghanshyamchouhan2719@gmail.com
Website: www.nhcpm.org

209, अशोक विहार, जानीपुर,
जम्मू सिटी (जम्मू-कश्मीर) भारत
फोन : 0191-2535354, 9419116969
E-mail: rcmakhnotra@yahoo.co.in

गाँव-भूपाल, डाक-मत्ति,
जिला-मानसा, पंजाब (भारत)
फोन : 9877257265, 9915342232
E-mail: sukhdev.nhcpm@gmail.com

डी-13-14, आफिसर्स कॉलोनी
एस.बी.बी.जे. ट्रेनिंग सेन्टर के सामने,
सागर रोड, बीकानेर (राजस्थान)
फोन : 09414418123

❑ **प्रथम संस्करण : 2021**

❑ **सहयोग राशि : 500/- (पांच सौ) रुपये मात्र**

❑ **मुद्रक :**
जांगिड़ कम्प्यूटर्स, जोधपुर
फोन : 6376545732

R P SARAF DWARA LIKHIT INTERNATIONALIST DEMOCRATIC VIEWPOINT KA SANKALAN PART-3

Published by : Prakriti-Manav Kendrit Jan Andolan, Bharat
First Edition : 2021

भूमिका

'आर.पी. सराफ के लेखों का संकलन भाग-3' में सन् 1995 से 1998 के दौरान लिखे गए लेखों का संकलन है।

यह वह समय था जब आर.पी. सराफ यह समझ रहे थे कि दुनिया में राजनीतिक पार्टियों की भूमिका नकारात्मक होती जा रही है। दुनिया का पर्यावरण बर्बाद हो गया है तथा मानव समाज में अमानवीयकरण तेजी से बढ़ता जा रहा है। वे स्वयं अपने नेतृत्व में जून, 1986 में बनाई गई 'इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक पार्टी' की भूमिका पर पुनर्विचार करने की प्रक्रिया में थे।

इस वक्त तक सोवियत संघ का विघटन हो चुका था, समाजवादी धड़ा बिखराव में था, अमेरिका दुनिया की बदली हुई परिस्थिति को अमेरिकी हित में मोड़ने की प्रक्रिया में था। भारत और पाकिस्तान ने परमाणु परीक्षण किये थे। जम्मू-कश्मीर विषय पर भारत-पाक के बीच अघोषित युद्ध जैसे हालात थे। भारत में 11वीं और 12वीं लोकसभा के चुनावों के बाद भी लोगों की मूल समस्याएं हल नहीं हो रही थी। भारत की राजनीति में अस्थिरता और अनिश्चितता का दौर था।

इस अवधि में आर.पी. सराफ ने 'इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूपाइंट' नामक पत्रिका में भारत के पुनर्गठन का एजेण्डा पेश किया था। भारत और दुनिया में उचित और न्यायिक समाज व्यवस्था की स्थापना के लिए प्रकृति-मानव हितैषी दिशा, वैज्ञानिक वास्तविकतावाद की आम अवधारणा और तर्क संगत मानवतावाद का सामाजिक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत किया।

भूमण्डलीकरण और इसका दुनिया पर प्रभाव का गहन पर्यवेक्षण करते हुए आ.पी. सराफ ने अन्तरनिर्भर मानव समाज की वर्तमान अवस्था और इसकी प्राथमिकताएं, मानव समाज का वर्तमान व्यवहार, अन्यायपूर्ण परमाणु अप्रसार संधि, परमाणु शस्त्रों की न्यायोचितता, लैंगिक असमानता, बहुध्रुवीय दुनिया में महाशक्तिवाद आदि विषयों पर लिखा।

भूमण्डलीकरण के बारे में उनका सोचना था कि दुनिया, वर्तमान राष्ट्रीय संरचनाओं में कुछ परिवर्तन के साथ एक इकाई बनने की तरफ आगे बढ़ रही है। जैसा कि उन्होंने कहा—'' भूमण्डलीकरण की इस प्रक्रिया में सभी मानवीय विषय ग्लोबल बन गए हैं। मानव जाति द्वारा इन विषयों को हल करते वक्त एक तरफ मानव समाज

और प्रकृति के हितों में सामंजस्य बैठाने की जरूरत है तो दूसरी तरफ मानव समाज के भीतर भी सामंजस्य बनाने की आवश्यकता है। उच्च और निम्न की, अमीरी और गरीबी की, लिंगों की असमानता की, राष्ट्रों के बीच और प्रत्येक राष्ट्र के भीतर विभेदताओं को मिटाने की, उचित समानता और न्यायोचित समाज बनाने की आवश्यकता है। मानव समाज सम्पूर्ण रूप में समृद्ध बनेगा, न कि क्षेत्रीय स्तर पर या न किसी एक ग्रुप के आधार पर। ग्लोबलाईजेशन के इस युग में एक देश या ब्लाक द्वारा किसी अन्य पर प्रभुत्व जमाने का विश्वास एक विकृत समझ है जो बदले में पिछड़ापन, गरीबी और वंचितपन को लाती है। सभी मूलभूत मानवीय विषय ग्लोबल बन गए हैं जो प्रत्येक देश द्वारा अन्य देशों खास करके पड़ोसी देशों के साथ मित्रता और सहयोग के द्वारा ही हल किये जा सकते हैं।''

उनका मत था कि दक्षिण एशिया के विकास में सबसे बड़ी रुकावट जम्मू-कश्मीर पर भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद है। वे जम्मू-कश्मीर विषय को दुनिया का सर्वोत्तम ज्वलंत बिन्दु मानते थे। भारत का प्रत्येक सार्क सदस्य देश के साथ भारत की बड़े भाई जैसी भूमिका है और उनके साथ द्विपक्षीय मतभेद है। पूर्व में भी भारत ने अपने पड़ोसी देशों के साथ प्रभुत्व जमाने की कोशिश की।

जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान पर आर.पी. सराफ ने जम्मू-कश्मीर विवाद में शामिल तीनों पक्ष यानी, भारत, पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर की जनता की आकांक्षाओं को एक वास्तविक, टिकाऊ, निष्पक्ष और तर्कसंगत आधार पर संतुष्ट करने के तीन फार्मूले पेश किए, ये फार्मूले हैं—

(i) जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा और विदेशी मामले की हद तक भारत-पाक सहराज्य के संवैधानिक ढांचे के तहत जम्मू-कश्मीर की सम्प्रभुत्ता को संयुक्त रूप से सौंपकर भारत-पाकिस्तान की अपनी-अपनी राष्ट्रीय आकांक्षाओं और हितों को संतुलित किया जा सकता है।

(ii) जम्मू-कश्मीर को संवैधानिक तौर पर स्वतंत्र राज्य की मान्यता देकर, जिसे सुरक्षा और विदेशी मामलों को छोड़कर, सभी मामलों में सम्प्रभू शक्तियां हासिल हों, जम्मू-कश्मीर के लागों, विशेष तौर पर कश्मीरियों की क्षेत्रीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है।

(iii) जम्मू-कश्मीर की विभिन्न नस्लीय-क्षेत्रीय समुदायों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव संवैधानिक स्वायत्तता देकर उनकी नस्लीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है।

इन सबके अलावा आर.पी. सराफ ने इस अवधि में उपमहाद्वीप में अल्पसंख्यकों की समस्याएं, पंजाब का सवाल, मानवाधिकारों, भारत-पाकिस्तान द्वारा परमाणु परीक्षणों,

गैर सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) की भूमिका, टिकाऊ विकास में विज्ञान, तकनीकी और इंजीनियरों की भूमिका, भारत की शुष्क भूमि और जंगलों के प्रबंध, इतिहास में कृषि का विषय, भारतीय कृषि की अवस्था, संकट और समाधान विषयों पर लेख लिखे।

हम आर.पी. सराफ के संकलन अंग्रेजी और हिन्दी में प्रकाशित कर रहे हैं, ताकि पाठक आर.पी. सराफ के वैचारिक, सांगठनिक और व्यवहारिक काम को उनके तात्कालिक सिद्धान्त और व्यवहार की रोशनी में परख कर सके।

आर.पी. सराफ ने दिसम्बर, 2002 में प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक पीपल्स मूवमेंट) का गठन किया। इससे संबंधित पत्रिका का नाम नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट रखा।

नेचन-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट के 5 नए बिन्दु जो इस व्यूपाइंट को अन्य अवधारणाओं से भिन्न अभिव्यक्त करता है वो 5 बिन्दु इस प्रकार हैं—

प्रथम, इसकी मान्यता है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो कारकों, यानि, प्रकृति और मानव समुदाय के कारण होता है ये दोनों सामाजिक परिवर्तन और विकास की प्रक्रिया को शुरू करने और आगे ले जाने के लिए आवश्यक सभी जरूरतों को मुहैया करते हैं। सामाजिक परिवर्तन एवं विकास के चालक 2-कारक के हमारे दृष्टिकोण के विपरीत चल रही समाजशास्त्रीय मान्यताएं एक-स्तम्भ आधारित सिद्धान्तों (मानव केन्द्रित, तकनीकी केन्द्रित, पर्यावरण केन्द्रित, प्रकृति केन्द्रित, ईश्वर केन्द्रित, आदि) को सामाजिक परिवर्तन एवं विकास के बुनियादी नियमों को आगे लाती है।

द्वितीय, यह मानता है कि सामाजिक परिवर्तन एवं विकास दो तरफा अन्तरक्रिया—यानि एक तरफ प्रकृति एवं मानव समाज के बीच तथा दूसरी तरफ समाज में मानवीय सामाजिक इकाइयों के बीच अन्तरक्रिया—से होता है। यह अन्तरक्रिया जो एक 2-तरफा गति—यानि कि एक तरफ एकता की और दूसरी तरफ संघर्ष की गति को अभिव्यक्त करती है। एकता की गति का परिणाम विशिष्ट घटनाक्रम के जुड़ने में, जबकि संघर्ष की गति उसके विभाजन में परिणित होती है। दोनों गतियां एक अविभाज्य सम्पूर्णता का निर्माण करती है। इनमें से प्रत्येक (यानि गति) एक समय में अन्य को द्वितीयक भूमिका में रखते हुए प्रथम स्थिति अख्तियार करती है और इसी प्रकार इसके उलट। यह लगातार तब तक चलती है जब तक विशिष्ट प्रक्रिया अन्य नई प्रक्रिया (जिसके अपने विशिष्ट गुण और मात्रा लिए होती है) में रूपान्तरित नहीं हो जाती।

तृतीय, विद्यमान चल रहे दृष्टिकोण, कि मानव की प्रकृति या तो जैविक है

अथवा सामाजिक; के विपरीत यह जोर देता है कि मानव अथवा मानव समुदाय का चरित्र, जैव-सामाजिक है। जैविक दृष्टिकोण स्व-हित को एकमात्र मानवीय प्रेरणा होने पर जोर देता है जबकि अन्य केवल सामाजिक को ही मानवीय प्रेरकता का कारण मानता है।

चतुर्थ, मानवीय विकास के सर्वोच्चता के विपरीत, यह मानता है कि मानव जाति प्रकृति के क्रमिक विकास की प्रक्रिया से पैदा हुई है, यह ब्रह्माण्ड की उच्चतम घटनाक्रम नहीं है। यहां तक कि हमारी पृथ्वी पर मानव जाति समाज में परिवर्तन और विकास की दो प्रेरक ताकतों में से मात्र एक (अन्य प्रकृति) ताकत है। हमारी पृथ्वी पर अन्य गैर-मानवीय घटनाक्रम के उनके अपने विकास के नियम है। मानव जाति अन्य गैर-मानवीय वस्तुओं से केवल मात्र अन्तरक्रिया करती है, किसी समय वह प्रथम और किसी अन्य समय में द्वितीय स्थिति रखती है।

पंचम, यह विश्वास करता है कि ब्रह्माण्ड में निरपेक्ष कुछ भी नहीं है। प्रत्येक घटनाक्रम लगातार परिवर्तन में है। यह केवल विशिष्ट समय और स्थान में प्रासंगिक है। कुछ निश्चित प्राकृतिक नियम हो सकते हैं जो शायद अरबों वर्षों तक प्रासंगिक है और बने रहते हैं, लेकिन हमारे विचार में, यहां तक कि वे भी अपनी संक्रमणशील प्रकृति में हैं हरेक की संक्रमणशील प्रकृति के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए, यहां तक कि किसी विशिष्ट समय में अलग-अलग घटनाक्रमों के संक्रमण के भिन्न-भिन्न नियम (अथवा संक्रमण का सार्वत्रिक नियम, यदि कोई हो तो) हो सकते हैं, और किसी विशिष्ट समय पर वे एक भिन्न घटनाक्रम में परिवर्तित हो जाए।

-संकलनकर्त्ता मण्डल

अनुक्रमणिका

क्र.	अंक सं./अवधि	विषय वस्तु	पृष्ठ सं.
	भूमिका		3
1.	85-86 जन.-फर. 1995	भारत, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश में अल्पसंख्यकों की समस्याएं	11-24
2.	,,	भारत-पाकिस्तान का भविष्य सहयोग में है	25-34
3.	86,87,88	एक अनिश्चित भविष्य	35-41
4.	,,	आठवां सार्क शिखर सम्मेलन	42-45
5.	,,	कोपेनहेगन का सामाजिक शिखर सम्मेलन	46-49
6.	,,	अप्रसार संधि—एक अनुचित समझौता संयुक्त राष्ट्र साधारण सभा का नियंत्रण अपेक्षित	50-53
7.	,,	मानवाधिकारों के प्रश्न पर और आगे विशेषकर पंजाब व कश्मीर के सन्दर्भ में	54-64
8.	,,	आई.डी.पी. संवाददाता सम्मेलन में आर.पी. सराफ द्वारा जारी किया गया बयान	65-69
9.	,,	चरार-ए-शरीफ त्रासदी त्रिपक्षीय वार्ता की आवश्यकता को दोहराती है न कि चुनाव की	70-79
10.	,,	सामान्य नागरिक संहिता पर उच्चतम न्यायालय के निर्देश स्त्री-पुरुष समानता ही वास्तविक मुद्दा	80-85
11.	89 जून 1995	दक्षिण एशिया में सहकारिता निर्माण - समस्याएं और संभावनाएं	86-93
12.	,,	कश्मीर में अघोषित भारत-पाक युद्ध जम्मू-कश्मीर के लोग सर्वोत्तम मध्यस्थ हो सकते हैं	94-104
13.	90-91 जुलाई-अग. 1995	अभी तक असमान और अतर्कसंगत दुनिया	105-115
14.	,,	एक अभूतपूर्व राष्ट्रीय संकट और हमारा विकल्प	116-139
15.	,,	मुख्य पार्टियों की साख संकट और हमारा विकल्प	140-146
16.	92-93 सित.-अक्टू. 1995	जम्मू-कश्मीर समस्या एक नए ढंग से हल करने की जरूरत	147-154
17.	94 नवम्बर 1995	लिंग समानता विश्व कार्यसूची का एक सर्वोच्च मुद्दा	155-166
18.	,,	व्यवस्था और अन्ध-व्यवस्था के बीच खड़ा आज का पंजाब	167-176
19.	97 फरवरी 1996	भारत के 'सत्यमेव जयते' के इम्तिहान की घड़ी	177-207
20.	98,99,100 मार्च-मई 1996	राजनैतिक अवसरवाद के दो स्वरूप हिन्दुत्व राजनीति बनाम झूठी धर्मनिरपेक्ष राजनीति	208-219
21.	,,	1996 का चुनावी जनमत एक नई संघीय प्रक्रिया की शुरूआत करता है	220-231
22.	,,	कुछ महत्वपूर्ण तथ्य	232-241
23.	101,102,103 जून-अग. 1996	जम्मू-कश्मीर विधान सभा निर्वाचन तथ्य स्वयं अपनी गाथा सुनाते हैं	242-247

24.	,,	जम्मू-कश्मीर में विधान सभा निर्वाचन जब तक त्रिपक्षीय वार्ता नहीं हो जाती कोई भी उचित प्रजातांत्रिक प्रक्रिया संभव नहीं है	248-252
25.	,,	जम्मू-कश्मीर विधान सभा चुना वही पुराना राग पुरानी मदिरा नई बोतल	253-258
26.	,,	न तो बन्दूक तथा न ही कपटपूर्ण निर्वाचन जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के लिए सही कदम हो सकते हैं	259-267
27.	,,	जम्मू-कश्मीर विधान सभा निर्वाचन मतदान एवं गोलियां एक साथ चल रहे हैं	268-274
28.	,,	जम्मू-कश्मीर समस्या सामाजिक यथार्थ, एक शांति की राजनीति की मांग करता है	275-284
29.	,,	ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस को आई.डी.पी. द्वारा विचार-विमर्श के लिए दिया गया द्वितीय आलेख	285-289
30.	,,	ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस को विचार-विमर्श के लिए भेजा गया इन्टरनेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी का तृतीय आलेख	290-292
31.	,,	सार्क मानवाधिकार चार्टर के अन्तर्गत पीड़ित मानव-समूहों के अधिकारों की रक्षा -इकबाल ए. अंसारी	293-294
32.	,,	ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस को आई.डी.पी. द्वारा दिया गया प्रथम आलेख	295-299
33.	,,	जम्मू-कश्मीर में लोकसभा चुनाव ना तो स्वतन्त्र और ना ही निष्पक्ष	300-304
34.	104-105 सित-अक्टू. 1996	आज मानव समाज किस तरह का व्यवहार कर रहा है	305-313
35.	,,	भारत के संकट की घड़ी	314-325
36.	,,	आई.डी.पी. की ग्यारहवीं कांग्रेस	326-331
37.	106,107,108 नवम्बर 1996 से जनवरी 1997	पंजाब विधानसभा चुनावों के बारे में आई.डी.पी. का नजरिया	332-340
38.	,,	गरीबी, बेघरबार, विकलांग, शरणार्थी, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति तथा सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों, स्वास्थ्य सुविधाओं एवं जनसंख्या नियंत्रण के संबंध में आई.डी.पी. का प्रोग्राम	341-342
39.	,,	पंजाब में खेतीबाड़ी तथा छोटे, मध्यम और धनी किसानों एवं ग्रामीण विकास के संबंध में आई.डी.पी. का दृष्टिकोण	343-346
40.	,,	शहरी मूलभूत ढांचे, बेरोजगारों, विद्यार्थियों, नौजवानों, प्रशासनिक सेवाओं, सैन्य बलों, पूर्व-सैनिकों तथा व्यापार और उद्योग के लिए आई.डी.पी. का प्रोग्राम	347-348

41.	,,	बरनाला के लोग इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक पार्टी और उसके उम्मीदवार को वोट क्यों डालें	349-352
42.	,,	शहरी और ग्रामीण मजदूरों के लिए आई.डी.पी. का प्रोग्राम	353-357
43.	,,	भारत की राष्ट्रीय प्रक्रिया एक अनिश्चित भविष्य की तरफ	358-368
44.	,,	चुनाव के बाद का जम्मू-कश्मीर परिदृश्य एवं इसकी मांगें	369-376
45.	109 फरवरी 1997	जे के समस्या और भारत-पाक शान्ति प्रक्रिया	377-387
46.	,,	चुनाव के बाद पंजाब के हालात और इसकी मांगें	388-393
47.	110 मार्च 1997	ऐतिहासिक वास्तविकता को समझने का एक प्रयास	394-428
48.	111-112 अप्रेल-मई 1997	देवगौड़ा के स्थान पर इन्द्रकुमार गुजराल का आना भारत की गड़बड़ राजनीतिक प्रक्रिया	329-438
49.	,,	1997 का बजट आर्थिक वास्तविकताओं की बुनियाद पर नहीं	439-445
50.	,,	(26-27 अप्रेल, 1997, जम्मू-में अखिल भारत रचनात्मक समाज राष्ट्रीय सम्मेल में प्रसारित पेपर) दक्षिण एशिया में शांति और समन्वय	446-450
51.	,,	(अप्रेल 26-27, 1997 जम्मू में अखिल भारत रचनात्मक समाज राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रस्तुत पत्र) जम्मू-कश्मीर में शान्ति एवं समन्वय	451-455
52.	,,	महिलाओं का घोषणा-पत्र	456-458
53.	113 जून 1997	भारतीय स्वतंत्रता के 50 वर्ष : भारतीय अल्पसंख्यक, पंजाब समस्या और मानवाधिकार	459-465
54.	,,	जम्मू-कश्मीर समस्या नई सामाजिक वास्तविकताएं और पिछले अनुभव नई पहलकदमियों की मांग करते हैं	466-474
55.	,,	क्षेत्रीय स्वयात्तता	475-481
56.	114 जुलाई 1997	आई.डी.पी. के सैद्धान्तिक और व्यवहारिक दिशा का एक लेखा-जोखा	482-493
57.	,,	क्या करना चाहिये और कैसे किया जाये	494-501
58.	115 अगस्त 1997	स्वतंत्रता के पहले और बाद का भारतीय राष्ट्रवाद	502-533
59.	116 अक्टू.-नव. 1997	विज्ञान-तकनीकी एवं इंजीनियरिंग टिकाऊ और न्याय संगत विकास को हासिल करने के लिए	534-554
60.	119 जनवरी 1998	एक अनुपयुक्त व्यवस्था और अनैतिक तरीके भारत को विपदा की तरफ धकेल रहे हैं	555-572
61.	120-121 फर.-मार्च 1998	भारत की अस्थिरता मतदाताओं की परेशान मानसिकता को दर्शाती है सिर्फ संघवाद ही इसका जवाब देता है	573-605

62.	122-123 अप्रेल-मई 1998	भारत और पाकिस्तान का भविष्य साझा है परंतु जम्मू-कश्मीर दोनों के लिए अतिआवश्यक जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक संयुक्त नियंत्रण में हल निहित	606-612
63.	,,	भारत पाक परमाणु विस्फोटों पर आई डी पी का बयान खतरा अन्दर से है, न कि बाहर से परमाणु परीक्षणों ने हमारे राष्ट्रीय हितों को हानि पहुंचाई है	613-616
64.	,,	परमाणु हथियार औचित्य और अनौचित्य	617-622
65.	,,	समृद्ध दक्षिण एशिया के निर्माण के लिए इसे टकराव और परमाणुरहित क्षेत्र बनाया जाए	623-626
66.	,,	परमाणु हथियार पर संयुक्त राष्ट्र महासभा के नियंत्रण की मांग	627-630
67.	,,	पोकरण II और चागाई परमाणु परीक्षणों के बाद उपमहाद्वीप में बने हालात पर	631-632
68.	124-126 जून-अगस्त 1998	इतिहास में कृषि का विकास	633-637
69.	,,	आज भारतीय कृषि की स्थिति	638-646
70.	,,	भारतीय कृषि में क्या गलत हुआ	647-651
71.	,,	आज भारतीय कृषि क्या मांग करती है	652-659
72.	,,	भारत की 'हरित क्रांति' कृषि जकड़ में पंजाब को गंभीर कृषि संकट का सामना	660-673
73.	,,	भारत में बारानी खेती की चुनौतियां बारानी भूमि की समस्याएं	674-677
74.	,,	भारतीय जंगल-जंगल निवासियों तथा सरकारी अधिकारियों के सांझे प्रबंध की मांग करते हैं	678-684
75.	127-130 सित.-दिस. 1998	आई डी पी का बारहवां पार्टी अधिवेशन	685
76.	,,	मानव अन्तरनिर्भरता की वर्तमान स्थिति तथा उसकी प्राथमिकताएं	686-691
77.	,,	दक्षिण एशिया में मामलों की स्थिति और उसकी जरूरतें	692-696
78.	,,	वर्तमान भारत की वास्तविकताएं और उनकी मांगें	697-707
79.	,,	नवम्बर 1998 के विधान सभा चुनावों के संकेत	708-709
80.	,,	जम्मू-कश्मीर पर	710
81.	,,	बहुध्रुवीय दुनिया में एशिया	711-717
82.	,,	एशिया में नयी आर्थिक व राजनैतिक स्थिति-उसकी प्रवृत्तियां तथा द्विपक्षीय और बहुपक्षीय सहयोग सम्बन्धी विकास की संभावनाएं	718-722
83.	,,	एशिया में आपसी समझ, सुरक्षा व सहयोग मजबूत करने में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका	723-730
84.	नवम्बर 2020	वैश्वीकरण प्रक्रिया और उसके तकाते	731-752

(यह दस्तावेज 25-26 मार्च, 1995 में जालंधर सेमीनार में प्रस्तुत किया गया था)

भारत, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश में अल्पसंख्यकों की समस्याएं

I

1. अल्पसंख्यक कौन है? समाज शास्त्री सामान्यतया किसी राष्ट्र में लोगों के नस्लीय, धार्मिक, भाषाई, प्रजातीय एवं सांस्कृतिक हिस्से को सम्मिलित करने के लिए इस संबोधन का प्रयोग करते हैं जो बहुसंख्यक लोगों से पृथक अपनी पहचान के प्रति सचेत होते हैं। ब्रिटिश विश्व-कोष के अनुसार अल्पसंख्यक वे लोग होते हैं जो विशिष्ट राजनीतिक इकाई में निवास करते हैं तथा बहुसंख्यकों से अलग अपनी भाषा, उत्पत्ति, धार्मिक विश्वास एवं अनुभवों के द्वारा परस्पर जुड़े होते हैं। एक अन्य परिभाषा के अनुसार अल्पसंख्यक एक समूह को संगठित करते हैं जो सामान्य लक्षणों (जैसे-प्रजाति, धर्म, नृवंशता, भाषा, परम्परा इत्यादि) से अथवा इन कारकों के मेल से जुड़े रहते हैं और किसी जनसंख्या में अप्रभुत्वकारी होते हैं।

II

2. इतिहास में अल्पसंख्यक कैसे उत्पन्न हुए? मानव समाज अपनी सामाजिक पहचान की विकास प्रक्रिया में विभिन्न चरणों से गुजरा है जिनमें प्रमुख रहे हैं गोत्र, जनजाति, धार्मिक समुदाय, (जो क्षेत्रीय समुदाय से भी जाना जाता है) राष्ट्र तथा नव उद्भित वैश्विक रचना। प्रत्येक अवस्था में विभिन्न प्रकार की तत्कालीन छोटी पहचानों में घालमेल रहा जो वृहत सामाजिक सामूहिकता में परिणित हुआ। ऐसा उनके विज्ञान, तकनिकी, सामाजिक ज्ञान एवं श्रम-विभाजन में परिवर्तन के कारण हो रहा था जो परिचालन का व्यापक क्षेत्र मांग करता था। एक से दूसरी अवस्था में विभिन्न ऐतिहासिक अस्मिताओं अथवा पहचान का सांगठनिक सिद्धांत परिवर्तित होता गया है।

3. उदाहरण स्वरूप भोजन एकत्रीकरण के श्रम विभाजन के उत्पन्न होने से मानव संगठन में प्रथम सामाजिक इकाई अथवा विशिष्ट पहचान वाला लोगों का समूह अस्तित्व में आया। यह तत्कालीन दो अथवा तीन मानव समूहों में परस्पर घालमेल से बनी, प्रत्येक तीन अथवा चार व्यक्तियों से निर्मित थी जो साथ-साथ भोजन की तलाश में घूमते थे किन्तु उन्हें अपनी सामाजिक पहचान का बोध नहीं था। गोत्र में 10-12 व्यक्ति थे जिन्होंने बाद में भोजन एकत्रीकरण के साथ-साथ शिकार, श्रम-विभाजन को भी अपना लिया। विभिन्न गोत्रों में जबरदस्त लड़ाई होती थी। गोत्र जीवन-शैली सैकड़ों, हजारों वर्ष रही। बाद में पशुपालन श्रम-विभाजन ने अपेक्षाकृत बड़ी सामाजिक इकाई के निर्माण की आवश्यकता प्रतिपादित की तथा विभिन्न गोत्रों ने विभिन्न

कबीलों में संगठित होकर प्रत्युत्तर दिया। प्रत्येक कबीला अब पृथक सामाजिक पहचान रखने लगा। फिर एक ऐतिहासिक अवस्था में कृषि श्रम-विभाजन की उत्पत्ति से विभिन्न कबीले विभिन्न धार्मिक समुदायों में संगठित हुए जिनकी पृथक सामाजिक पहचान एवं पृथक दर्शन था।

4. 18वीं सदी के उतरार्द्ध के आरंभ से 20वीं सदी के मध्य तक, औद्योगिक श्रम-विभाजन के विकास से विभिन्न धार्मिक समुदायों तथा गोत्रीय, कबीलाई अवशेषों में एकीकरण से विश्व के कई भागों में राष्ट्रों की उत्पत्ति हुई। अब नये विज्ञान, नयी तकनीकी, सामाजिक ज्ञान एवं संबंधित श्रम-विभाजन में वृद्धि से नयी एकीकरण प्रक्रिया जारी है विभिन्न राष्ट्र इकाइयों को एक वैश्विक समुदाय की ओर ले जा रही है।

5. तथापि, प्रत्येक राष्ट्र में आज भी पूर्व सामाजिक पहचानें विशेषकर धार्मिक पहचान विभिन्न शक्तियों में है जो अल्पसंख्यक के रूप में जानी जाती है। शायद ही कोई ऐसा राष्ट्र है जहां समुदायों में अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक की स्थिति न हो। एक आकलन के अनुसार 184 राष्ट्रों में 5000 बड़ी या छोटी सामाजिक पहचानें हैं, प्रत्येक अपनी पहचान के संबंध में किसी प्रकार की राजनैतिक सह संवैधानिक प्रमाणीकरण की अभिलाषा रखती है।

III

6. विभिन्न क्षेत्रों में जारी नृवंशीय उभारों को देखें तो पता चलता है कि कोई भी राष्ट्र आज यह दावा नहीं कर सकता कि उसने अपने क्षेत्र में अल्पसंख्यकों के पूर्ण विलीनीकरण की समस्या हल कर ली है। विकसित राष्ट्रों में अमेरिका में काले-गोरे का प्रश्न, कनाडा में क्वेबेक पृथकतावादियों की मांग, रूस में चेचेन्या विद्रोह, उत्तरी आयरलैण्ड में आयरिश रिपब्लिकन आंदोलन, स्पेन में बास्क संघर्ष, आर्मेनिया और अजरबैजान के बीच नागोर्नो कराबारक विवाद, पूर्व युगोस्लाविया में बोस्निया हर्जेगोविना में नश्लीय युद्ध तथा प्रवासियों एवं शरणार्थियों की समस्या जग जाहिर है। विकासशील राष्ट्रों में श्रीलंका में तमिल समस्या, बांग्लादेश में चकमा, भारत में कश्मीरी, सिख, नागा, बोडो, असमी समस्या, पाकिस्तान में सिंधी, मोहाजिर, शिया, बर्मा में करेन छापामार, इण्डोनेशिया में पूर्वी तिमोरी, दक्षिणी-पूर्व एशिया में प्रवासी चीनी, दक्षिण एशिया में प्रवासी भारतीय, ईरान, इराक, तुर्की में कुर्द, युगांडा, सोमालिया, अंगोला, सूडान, इथोपिया, नाइजीरिया इत्यादि में गृह युद्धों सहित प्रत्येक अफ्रीकी राष्ट्र में कबीलाई रूढ़िवादिता, लगभग सभी दक्षिणी अमेरिका राष्ट्रों में रेड इण्डियनों एवं गैर-यूरोपियों की समस्या तथा पूर्व सोवियत केन्द्रीय एशियन गणराज्यों में परस्पर व भीतर संघर्ष इत्यादि, राष्ट्रों की एकता एवं अखण्डता के सम्मुख कड़ी चुनौती पेश कर रहे हैं।

IV

7. उपर्युक्त तथ्य निम्न सबक सिखाते हैं।

8. प्रथम, किसी विकासशील देश में विदेशी प्रभुत्व को अस्वीकारने एवं औपनिवेशिक विरोध की भावना का अस्तित्व, इन देशों में अल्पसंख्यकों का बहुसंख्यकों के साथ काफी हद तक सामाजिक जुड़ाव और राष्ट्रीय एकीकरण में परिणित नहीं हुआ ।

9. दूसरा एक साझा धर्म का आधार अपने में राष्ट्रीय एकरूपता का आधार नहीं बन सकता जैसा कि 1971 के पाकिस्तान विभाजन, पाकिस्तान में विभिन्न मुस्लिम समुदायों में अन्त:संघर्ष, अफगानिस्तान में विभिन्न मुस्लिम पक्षों के बीच गृह युद्धों, अल्जीरिया, मिश्र में विभिन्न समूहों में सशस्त्र संघर्ष तथा ईरान, सऊदी अरब के मध्य गंभीर मतभेदों इत्यादि से स्पष्ट है। इसे अन्य उदाहरणों से भी देखा जा सकता है। उदाहरण स्वरूप द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान एक बुद्ध धर्म होना भी जापान को चीन तथा अन्य बौद्ध राष्ट्रों पर आक्रमण से रोक नहीं सका। तथापि दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में बौद्ध धर्म इन राष्ट्रों को ढीले-ढाले संघ में संगठित होने तक का आधार भी नहीं दे पाया। एक हिन्दू धर्म में साझे बंधन होने के बावजूद, भारत नेपाल को कोई मजबूत एकता में नहीं जोड़ सका। ईसाई धर्म से जुड़ाव के बावजूद इस सदी में मुख्य यूरोपीय राष्ट्रों ने एक दूसरे के विरुद्ध इस शताब्दी के रक्त रंजित दो विश्व युद्ध लड़े। सांस्कृतिक एकरूपता एवं समानता 21 अरब राष्ट्रों को एक परिसंघ में नहीं बांध पायी, एक राष्ट्र की तो बात ही अलग है।

10. तीसरा, आर्थिक कट्टरता एवं वर्ग आधारित न्याय पर टिके होने के बावजूद, साम्यवादी राष्ट्र निर्माण मॉडल, पूर्व सोवियत संघ, युगोस्लाविया तथा कई अन्य पूर्व सोवियत अनुगामी राष्ट्रों को एक नहीं कर पाया।

11. चौथा, पारम्परिक उदार राष्ट्र निर्माण मॉडल, अपने मुक्त बाजार रचनातंत्र और उपभोक्तावाद एवं वैयक्तिक स्वतन्त्रता के बावजूद, अल्पसंख्यक समस्या के लिये समुचित प्रबंधन नहीं कर पाया है जो विभिन्न विकसित राष्ट्रों में अल्पसंख्यकों में व्याप्त असंतोष से स्पष्ट होता है।

12. पांचवा सबक यह है कि राष्ट्रीय एकीकरण का अर्थ औपनिवेश विरोधी संघर्ष अथवा धार्मिक एकता, आर्थिक रूढ़िवाद अथवा मुक्त बाजार व्यवस्था से कुछ अधिक है।

V

13. अल्पसंख्यक एवं बहुसंख्यक में परस्पर एकीकरण के द्वारा एक मजबूत अथवा समरूप राष्ट्र के निर्माण में बाधाएं क्या है?

14. एक राष्ट्र के सम्मुख पांच कारकों द्वारा राष्ट्रीय ढांचे में लोगों की विविध श्रेणियों के आम एकीकरण का मुख्य कार्य है तथा रहा है ये हैं-राजनीति, अर्थव्यवस्था, संस्कृति, कूटनीति एवं सुरक्षा। ये कारक तीन मानव जरूरतों को पूरा करने में योगदान करते हैं ये हैं—आवश्यक वस्तुएं (भोजन, कपड़े, आवास, सेक्स) जीवन सुरक्षा एवं वैचारिक स्वतंत्रता (एक व्यक्ति, सामाजिक ग्रुप या राष्ट्र की)। पांच राष्ट्र निर्माण कारकों को लागू करना एक रूप अथवा समरूप जनसंख्या वाले राष्ट्र में कम कठिन है किन्तु विविध समाजों वाले राष्ट्रों में बहुत ही जटिल है जैसे पूर्व सोवियत संघ व यूगोस्लाविया, भारत, पाकिस्तान तथा कई विकासशील राष्ट्र। एकरूप राष्ट्रों के विपरीत, बहुवैविध्य राष्ट्रों में (मुख्यत: जो पूर्व औपनिवेशिक राष्ट्र है) शासन कर रहे बहुसंख्यकों ने अल्पसंख्यकों के विरुद्ध सभी बातों में भेदभाववूर्ण नीतियों को अपनाया है। अल्पसंख्यकों को मुख्य धारा से वंचित रखने से राष्ट्रीय एकीकरण में बाधा आयी है तथा कभी सशस्त्र तो कभी नि:शस्त्र संघर्षों के रूप में समस्या उत्पन्न हुई है।

15. लोकतंत्र में बहुसंख्यक की सर्वोच्चता के तर्क पर आधारित पारम्परिक बहुसंख्यकवादी उचितता लम्बे समय तक रही। परन्तु उपनिवेशी संरचना के टूटने विशेषकर शीत युद्ध के बाद के काल में इसे अल्पसंख्यकों द्वारा अधिकाधिक चुनौती दी गई है।

16. पारम्परिक बहुसंख्यवादी सर्वोच्चता के सिद्धान्त को चुनौती द्वितीय विश्व युद्धोपरान्त विज्ञान तकनीकी में विकास तथा सामाजिक ज्ञान एवं संबंधित सामाजिक श्रम विभाजन में वृद्धि के फलस्वरूप उत्पन्न हुई है जो बहुसंख्यक समर्थक लोकतंत्रों के विपरीत, देश एवं विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में बहुसंख्यक एवं अल्पसंख्यक के मध्य समान साझेदारी पर आधारित समतावादी सामाजिक ढांचे की मांग करती है।

VI

17. भारत, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश में अल्पसंख्यक समस्या की ओर मुड़ें जहाँ चार प्रमुख प्रश्न हैं (क) अल्पसंख्यकों की पहचान (ख) उनकी समस्या एवं इसके आयाम (ग) समस्या का कारण (घ) उनकी समस्या का हल।

VII

18. उपमहाद्वीपीय तीन राष्ट्रों में अल्पसंख्यकों की पहचान का प्रश्न लें। इसकी स्थिति इस प्रकार है—

19. भारत में न तो संविधान ने और न ही किसी न्यायालय ने अल्पसंख्यक को किसी भी रूप में परिभाषित किया है यद्यपि संविधान के अनुच्छेद 29-30 के अन्तर्गत भारतीय अल्पसंख्यकों को न्याय योग्य अधिकार प्रदत्त है।

20. बहरहाल अनुच्छेद 30 समुदाय की पहचान के आधार के लिए अप्रमुख दो कारकों धर्म और भाषा को निर्दिष्ट करता है।

21. चूंकि भारत में कोई भी प्रमुख भाषायी बहुसंख्यकता नहीं है, भाषायी अल्पसंख्यकता का प्रश्न पूर्व में शायद ही कभी उभरा हो इसके भविष्य में भी नहीं उभरने के ही आसार है।

22. इस परीक्षण के मुताबिक भारत में मुस्लिम (11.35), सिख (1.96), ईसाई (2.43), बौद्ध (0.71), जैन (0.48), पारसी तथा अंग्रेज भारतीय (एंग्लोइंडियन) (0.42) प्रतिशत प्रमुख अल्पसंख्यक समुदाय है यद्यपि जम्मू कश्मीर में मुस्लिम, पंजाब में सिख, मिजोरम, नागालैण्ड में ईसाई, इत्यादि बहुसंख्यक समुदाय है। इन 7 अल्पसंख्यक समुदायों में से प्रथम पाँच धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय है। छठी, धार्मिक सह प्रजातीय अल्पसंख्यक समुदाय है तथा केवल सातवां आंग्ल भारतीय सह धार्मिक सह भाषाई अल्पसंख्यक समुदाय है।

23. पाकिस्तान में अल्पसंख्यक समस्या अपेक्षाकृत जटिल है। प्रथम तो अधिकारिक तौर पर घोषित अल्पसंख्यक समुदाय है। इस श्रेणी में हिन्दू (1.2), ईसाई (1.2), सिख पारसी (0.6) प्रतिशत हैं दूसरा वहां भाषायी अल्पसंख्यक समुदाय है पंजाबी (60), सिंधी (30), बलुची, पख्तून, मोहाजिर, जिकरीस, इत्यादि (10) प्रतिशत हैं जिन्हें कोई अधिकारिक रूप से अल्पसंख्यक समुदाय का दर्जा हासिल नहीं है और आगे वैधानिक रूप से बहिष्कृत अल्पसंख्यक हैं। अहमदिया जिन्हें मुस्लिम कहलाने का भी अधिकार नहीं है इसके अलावा शियाओं का मुस्लिम समुदाय है। जिन्हें प्रताड़ित किया गया है।

24. बांग्लादेश में कुल जनसंख्या का 11 प्रतिशत अल्पसंख्यक समुदाय है जिनमें 10 प्रतिशत हिन्दू, 0.6 प्रतिशत बौद्ध, 0.3 प्रतिशत ईसाई तथा 0.1 प्रतिशत बिहारी मुसलमान हैं जिन्हें अधिकारिक तौर पर 'राज्य विहीन लोग' घोषित किया गया है।

VIII

25. उप महाद्वीपीय राष्ट्रों में अल्पसंख्यकों की समस्या एवं इसके आयाम पर नजर डालें तो स्थिति काफी दु:खद नजर आती है।

26. अल्पसंख्यकों का सामान्य हिस्सा दु:खद स्थिति चित्रित करता है वे चल रही स्थिति से पूरी तरह असंतुष्ट हैं एवं प्रत्येक पहलू में भविष्य के प्रति अनिश्चितता है, जैसे—सुरक्षा, विकास, वैचारिक स्वतंत्रता एवं अल्पसंख्यक समूह पहचान।

27. पूर्व को याद करें तो हम पाते हैं कि पूर्व 1947 के अखण्ड भारत में

अल्पसंख्यक समस्या का केन्द्रीय घटक यह रहा है कि कहीं बहुसंख्यक अपनी प्रभावी स्थिति से उनकी पृथक पहचान को छायांकित न कर दे एवं उन्हें मेहमान एवं संकटपूर्ण स्थिति में गुजर बसर न करना पड़े। उस अखण्ड भारत के तीन वारिस राष्ट्रों में अल्पसंख्यकों की स्थिति इस धारणा को सिद्ध करती है।

(अ)

28. भारत में इसका संविधान अल्पसंख्यकों के धार्मिक एवं शैक्षिक अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करता है। 1947 के बाद की प्रत्येक केन्द्रीय सरकार ने भाग्य सुधार का नारा दिया है। अब राष्ट्र ने भी वैधानिक अल्पसंख्यक आयोग का गठन किया है परन्तु वास्तविक तथ्य यह है कि अल्पसंख्यकों की स्थिति निरन्तर दयनीय होती जा रही है।

29. सुरक्षा के संबंध में यह स्थिति है कि सांप्रदायिक हिंसा की चुनौती हमेशा ही सिर पर मंडराती रही है। 1947 के बाद के काल में देश में हुए 22000 दंगों ने पूर्व के सारे रिकार्ड तोड़ दिये हैं।

30. विकास से संबंधित प्रामाणिक आंकड़े उपलब्ध ही नहीं है। परन्तु अनाधिकारिक आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि अल्पसंख्यक विशेषकर मुस्लिम समुदाय ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में स्वरोजगार, नारी शिक्षा, शैक्षिक स्तर, साक्षरता, चिकित्सा सुविधा, जीवन स्तर, शिशु रक्षा एवं सम्पन्नता में काफी पीछे है। राज्य सेवाओं में अल्पसंख्यक मात्र तीन फीसदी हैं। सेना, पुलिस, टी.वी., आकाशवाणी इत्यादि, जैसे महत्वपूर्ण विभागों में मुस्लिमों का बहुत ही कम प्रतिनिधित्व है। तथापि अल्पसंख्यकों का ऊपरी तबका (क्रिमीलेयर) शीर्ष पदों की सुविधा प्राप्त करता रहा है (जैसे, जाकिर हुसैन, फखरूद्दीन अली अहमद, जैलसिंह, इत्यादि)।

31. वैचारिक स्वतंत्रता के मामले में अल्पसंख्यक आयोग के अनुसार अधिकांश टाडा बन्दी अल्पसंख्यक समुदायों से सम्बंधित हैं।

32. अल्पसंख्यक समूह की पहचान के मामले में तीन तथ्य देखने योग्य हैं। प्रथम तो यह है कि तीन अल्पसंख्यक समुदायों, कश्मीरी मुस्लिम, पंजाबी सिक्ख तथा नागा ईसाइयों ने अपनी नृवंशीय सांस्कृतिक पहचान के खातिर शस्त्र उठा लिए हैं। दूसरा यह कि बाबरी मस्जिद विवाद इतिहास में कैसे यह शुरू हुआ, मंद हुआ, बंद हुआ एवं अंतत: मस्जिद नष्ट की गई। यह अल्पंख्यक पहचान के गुजरे ऐतिहासिक चिह्न के प्रति केन्द्र के पूर्वाग्रही विचार को स्पष्ट करता है। तीसरा यह कि 1984 में अमतृसर के स्वर्ण मन्दिर में आपरेशन ब्लूस्टार तथा 1984 के सिक्ख विरोधी दंगों में केन्द्र सरकार ने किसी भी अल्पसंख्यक पहचान के विचार उभरने को कुचलने में

दृढ़ता दिखाई।

(ब)

33. पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों को बहुत प्रताड़ित किया जाता है। ईश्वर निंदा तथा अन्य अमानवीय कानूनों (हदूद अधिनियम) ने उन्हें दूसरी श्रेणी का नागरिक बना दिया है और उन्हें मूल अधिकारों (जैसे-सुरक्षा, विकास, वैचारिक स्वतंत्रता, पहचान इत्यादि) से भी वंचित कर दिया है। हाल ही में दो ईसाइयों (एक किशोर सहित) को ईश निंदा के कथित आरोपों पर मृत्यु दण्ड दे दिया गया । केवल वैश्विक विरोध ही पाकिस्तान के सर्वोच्च न्यायालय को यह सजा निरस्त करने के लिये मना सका।

34. सुरक्षा के सबंध में पृथकतावादी, नश्लवादी एवं नशीली दवाओं का व्यापार करने वाली शक्तियां पाकिस्तान में उत्पात मचा रही हैं। उन्होंने अपनी आतंककारी गतिविधियों से पूरे पाकिस्तान में आतंक मचा दिया है। इन आक्रमणों के शिकार में अल्पसंख्यको की बजाय मुस्लिम ही है। ऐसा इसीलिये है कि गैर मुस्लिम अल्पसंख्यक अपनी कम अथवा अप्रभावशाली संख्या के कारण बहुसंख्यकों की दृष्टि से निकल गए हैं अथवा दिमाग से परे चले गये हैं। जिससे मुस्लिम-गैर मुस्लिम संघर्ष का कोई आधार नहीं दिखाई देता। एकता एवं संघर्ष की अन्तरक्रिया अब बहुसंख्यक समुदाय तक ही सीमित है। परिणाम स्वरूप, बहुसंख्यकों की शंका, घृणा एवं शत्रुता विभिन्न इस्लामी समूहों—शिया, जिसरी, अहमदिया इत्यादि के प्रति ही केन्द्रित है। तनाव एवं टकराव, पाकिस्तान मुस्लिम समुदाय में अब अन्तर धार्मिक है। पाक मस्जिदों में शिया एवं सुन्नी एक दूसरे को गोली का निशाना बना रहे हैं। एक तरफ मोहाजिर सिंधी एवं दूसरी तरफ 2 प्रतिद्वन्द्वी मोहाजिर दलों के मध्य सशस्त्र संघर्षों ने कराची, हैदराबाद तथा कई अन्य हिस्सों को कष्टदायक नासूर बना दिया है। यह सब पाकिस्ताान स्थापना के 47 वर्षों बाद घटित हो रहा है जिसके रचनाकारों ने उस भूमि पर भारतीय मुस्लिमों को स्वर्गीय जीवन प्रदान करने का प्रण लिया था।

35. पाकिस्तान सरकार पाकिस्तान को अस्थिर करने में भारत को एक पक्ष होने का आरोप लगा रही है। यह कहा जाता है कि आतंककारी आक्रमण भारत शासित जम्मू-कश्मीर में चल रहे मुस्लिम पृथकतावादी आंदोलन की प्रतिक्रिया स्वरूप थे। भारत प्रत्युत्तर में आरोप लगाता है कि पाकिस्तान घाटी में आतंकवाद को उकसा रहा है एवं उसके खिलाफ अदृश्य अथवा परोक्ष युद्ध लड़ रहा है।

36. विकास, वैचारिक स्वतंत्रता एवं अल्पसंख्यक पहचान के अल्पसंख्यक

अधिकारों का प्रश्न पाकिस्तान के वर्तमान सामाजिक पद्धति में कोई स्थान नहीं रखता है।

(स)

37. बांग्लादेश में राष्ट्र का इस्लामिक चरित्र होने के बावजूद अल्पसंख्यकों की स्थिति पाकिस्तान की तरह खराब नहीं है। कई उदार बहुसंख्यक हिस्सों में अल्पसंख्यकों के प्रति व्यापक सदभाव है। मानव अधिकार संगठन उनकी समस्याओं को उठा रहे हैं।

38. सुरक्षा के मामले में कई चिंताजनक बिन्दु हैं। गत दो दशकों से बौद्ध चकमा सशस्त्र संघर्ष कर रहे हैं। उनमें से लगभग 60000 लोगों ने भारत में शरण ले रखी है। वे बांग्लादेश सरकार पर धार्मिक प्रताड़नाओं का आरोप लगा रहे हैं। वे अपने अधिकारों के लिए भारत की बौद्ध परिषद के मंच से दावा कर रहे हैं और यह परिषद भारतीय सरकार से त्रिपक्षीय वार्तालाप चलाने की अपेक्षा रखती है। बाबरी मस्जिद विध्वंसोपरान्त अल्पसंख्यक आयोग के अनुसार 13 जानें गयी एवं अनाधिकारिक सूत्रों के मुताबिक 3600 पूजा स्थानों को क्षति पहुँचायी गई। हिन्दुओं के लिये ये घटनाएं दर्दनाक थी। अल्पसंख्यक आयोग के अनुसार गत 2 दशकों में 50 लाख लोग देश छोड़कर चले गये। लगभग 3 लाख उर्दू भाषी बिहारी मुस्लिम शरणार्थी शिविरों में राज्य विहीन लोगों की जिन्दगी बिता रहे हैं। पाकिस्तान उन्हें लेने के लिए तैयार हो गया किन्तु गत दो दशकों से उन्हें लेने एवं बसाने में आनाकानी कर रहा है।

39. विकास के संबंध में उनकी गरीबी का स्तर विचारणीय है। 1954 में पूर्वी बंगाल विधायिका में अल्पसंख्यकों के 72 प्रतिनिधि थे जो 1991 मे घटकर 11 हो गये। 80000 की मजबूत सशस्त्र सेना में केवल 500 लोग अल्पसंख्यक समुदायों से है। 80000 पुलिस कर्मचारियों में केवल 2000 लोग अल्पसंख्यक समुदायों से है। सुरक्षा, गृह, विदेशी मामलात मंत्रालय में कोई भी वरिष्ठ अधिकारी अल्पसंख्यक समुदाय से नहीं है। अयूब का शत्रु संपत्ति कानून, शत्रुनिहित संपत्ति कानून के नये नाम से अस्तित्व में है। यह कानून उन लोगों की संपत्ति से जुड़ा है जो प्रवास कर गये हैं।

40. वैचारिक स्वतंत्रता के मामले में स्थिति तसलीमा नसरीन के केस से स्पष्ट है। वर्तमान में कोई भी ईश निंदा कानून लागू नहीं है। परन्तु जमात-ए-इस्लामी, सरकार से ऐसे कानून को अस्तित्व में लाने की माँग कर रही है। एक मात्र परेशानी वाली बात यह है कि प्रमुख विपक्षी दल अवामी लीग जमात की इस माँग को समर्थन दे रही है।

41. अल्पसंख्यक समूह की पहचान हेतु अल्पसंख्यकों को कोई भी विशेष अधिकार प्रदत्त नहीं हैं। अल्पसंख्यकों ने अपने अधिकारों की सुरक्षा हेतु हिन्दू, बौद्ध, ईसाई एकता परिषद के रूप में साझे मंच का गठन किया है।

(द)

42. तथापि अल्पसंख्यक वर्तमान स्थिति से काफी खिन्न हैं।

43. इस स्थायी परेशानी के निवारण हेतु भारत, पाकिस्तान तथा बांग्ला देश में अल्पसंख्यक, उस राष्ट्र में प्रवास का विकल्प नहीं देखते, जहाँ उनके सहधर्मावलंबी रहते हों। इस विकल्प को व्यवहारिक नहीं मानने का बड़ा कारण पाकिस्तान के सिन्ध प्रान्त में बिहारी मुसलमानों की स्थिति है जहां वे नित नए हमलों का शिकार हो रहे हैं और कुछ बांग्लादेश के सहायता केन्द्रों में लड़ रहे हैं।

IX

44. तीन उपमहाद्वीपीय राष्ट्रों में अल्पसंख्यक रोग के कारण के प्रश्न की ओर आयें। तथ्यों द्वारा प्रदर्शित निहित कारण प्रत्येक की राष्ट्रवाद से संबंधित गलत धारणा है जबकि अल्पकालिक कारण उनके अपने राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में निहित है।

(अ)

45. भारतीय राष्ट्रीयता की गलत अवधारणा धर्म निरपेक्षता के मूलभूत सिद्धान्त में निहित है जो एक तरफ तो चतुराई से सभी अल्पसंख्यकों के प्रति मेल-मिलाप रखती है वहीं दूसरी ओर बहुसंख्यकों की बात का लगातार हित साधन करती है जो निम्नलिखित तथ्यों से स्पष्ट है।

प्रथमतया, भारतीय राष्ट्रवाद का संवैधानिक परिप्रेक्ष्य संविधान के अनुच्छेद 25 के तहत बहुसंख्यक हितों को भारतीय राज्य के साथ अभिन्न रूप से अथवा दोनों के हित एक जैसा प्रदर्शित करता है। यह बहुमत के प्रतीक चिह्नों को राज्य के प्रतीक बनाकर इनका संवैधानिकरण करता है। उदाहरणार्थ राष्ट्रीय भाषाओं में संस्कृत को संवैधानिक दर्जा देना (एक ऐसी भाषा जिसे भारत में किसी भी समूह द्वारा नहीं बोला जाता बल्कि हिन्दुओं द्वारा इसे ईश्वरीय भाषा माना जाता है), इण्डिया को भारत कहना (जो हिन्दू धारणा भारत माता अथवा महाभारत से लिया है); कहावत सत्यमेव जयते को राष्ट्रीय चिह्न के नीचे लिखना (जिसका हिन्दू धर्म पुस्तक मुण्डका उपनिषद से नकल किया है); वन्देमातरम् (एक ऐसा गीत जिसमें हिन्दू झलक है) को राष्ट्रीय गीत बनाना, गौ (जो हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार माता के समान है) हत्या पर नीति निर्देशक तत्व के तहत प्रतिबंध और इसी तरह के और भी। इन सब के बावजूद प्रत्येक

सरकारी आयोजनों में पूजा, आरती और शंखनाद तथा हिन्दू धर्म पुस्तकों से उच्चारण करना एक आम बात है।

दूसरा—भारतीय राष्ट्रवाद का राजनैतिक पहलू—जो शक्ति की राजनीति के सिद्धान्त अथवा भ्रष्ट एवं गैर जिम्मेदाराना लोकवाद पर आधारित है (जैसा कि मुख्य सत्ताधारी दलों के सिद्धान्त एवं व्यवहार से स्पष्ट है) जिसने धन सह भुजबल द्वारा राजनैतिक प्रक्रिया का अपराधीकरण कर दिया है तथा इसे हिंसा संभाव्य बना दिया है।

तीसरा—भारतीय राष्ट्रवाद का प्रशासनिक पहलू जो नौकरशाही गोपनीयता एवं गैर जवाबदेही पर आधारित है (जैसा कि भारतीय प्रशासनिक सेवाओं द्वारा व्यवहार में लाया जाता है) जिसने अल्पसंख्यकों के साथ भेद भाव किया है जिससे उनका इन सेवाओं में प्रतिनिधित्व घटकर 3 प्रतिशत हो गया है।

चौथा—भारतीय राष्ट्रवाद का आर्थिक पहलू—जो असक्षम एवं भ्रष्ट प्रक्रिया पर आधारित है (जैसा कि सार्वजनिक क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र के एक हिस्से से स्पष्ट है) जिसने हमारी आर्थिक गतिविधि को अल्प गुणवत्ता एवं उच्च लागत की प्रक्रिया में बदल दिया है।

पाँचवां—भारतीय राष्ट्रवाद का कूटनीतिक सह सुरक्षा पहलू — जो कमजोर एवं अधीनस्थ पर प्रभुत्व की शैली लिए हुए है जो पड़ौसियों के साथ व्यवहार की अधिकारवादी एवं टकरावपूर्ण शैली से स्पष्ट है।

(ब)

46. पाकिस्तानी राष्ट्रवाद सुन्नी कट्टरवाद के मूलभूत सिद्धान्त की गलत अवधारणा पर आधारित है। जिससे न केवल अल्पसंख्यक समुदाय बल्कि गैर सुन्नी मुस्लिम संप्रदाय भी मूलभूत मानवाधिकारों से वंचित हुए हैं। इसका राजनैतिक पहलू असहिष्णुता एवं टकराव से परिलक्षित है।

(स)

47. बाँग्लादेश में राष्ट्रवाद की गलत अवधारणा इसकी उदार धार्मिकता के मूल सिद्धान्त से संबंधित है, जो रूढ़िवादिता के दबाव के चलते संरक्षणवाद एवं संप्रदायवाद की ओर झुक जाती है, तो कभी उदारवादियों के चलते लोकंतात्रिक सुधारों की ओर मुड़ जाती है। इसका राजनैतिक पहलू भी शक्ति की राजनीति से प्रभावित है। चाहे मार्ग गलत हो या सही।

X

48. क्या उपमहाद्वीपीय अल्पसंख्यकवाद से बाहर आने का कोई रास्ता है? यह संकट अन्य संकटकालीन बिन्दुओं की तरह ही चुनौती और अवसर के मेल से

संघटित है। वास्तविकतापूर्ण प्रत्युत्तर द्वारा इसकी चुनौती को समाप्त करके तथा इसके अवसर को काम में लेकर दिया जा सकता है।

49. एक वास्तविक प्रत्युत्तर आमतौर पर दो मूलभूत बातों का कड़ाई से पालन करने अथवा अपनाने की मांग करता है—यानि पुरानी वास्तविकता से किसी के द्वारा लिये गए अनुभव से सबक लेकर तथा नयी वास्तविकताओं के अनुसार अपने आप का नवीनीकरण करके भारत, पाकिस्तान, बाँग्लादेश प्रत्येक को अपनी एक विशिष्ट रणनीति का विकास करना है जो दो वास्तविकताओं के अनुभवों के अनुसार हो।

XI

50. भारतीय वास्तविकता एवं इसके प्रत्युत्तर पर विचार विमर्श पर ध्यान दें, अधिकाधिक लोग अब इस विचार को मानने जा रहे हैं कि भारत का 1947 के बाद का राष्ट्रीय मॉडल देश को एक रखने में अप्रभावी सिद्ध हुआ है तथा टिकाऊ तरीके से भौतिक सुधार एवं लोगों को स्वतंत्रता एवं सुरक्षा प्रदान करने में भी असमर्थ रहा है। चिन्ताजनक अल्पसंख्यक समस्या भी इस संक्रमित मॉडल का हिस्सा एवं उत्पाद हैं। स्वाभाविक रूप से इस मॉडल का पुनर्निर्माण किए बिना भारत प्रगति नहीं कर सकता।

51. इस मॉडल का पुनर्निमार्ण करने के लिये नई वैश्विक वास्तविकता जो नये श्रम विभाजन तथा राष्ट्रों की अन्तरनिर्भरता पर आधारित है 3 सिद्धान्तों की आवश्यकता प्रतिपादित करती है।

(क) एक नयी दृष्टि जो एक तरफ प्रकृति के अनुकूल हो या दूसरी तरफ लोग समर्थक हो इस प्रकार यह पुरानी अमीर केन्द्रित दृष्टि के स्थान पर प्रकृति एवं मानव को समान स्तर पर रखें।

(ख) एक नया सामाजिक संगठनात्मक सिद्धान्त जो पुराने टकराववादी सिद्धान्त के विपरीत सहयोग एवं साझेदारी पर आधारित हो।

(ग) कार्य की पुरानी शैली 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' या बहुमत सर्वोच्चता के स्थान पर नयी शैली अपनायी जावे जो निर्णय में आम सहमति पर आधारित हो।

52. उपरोक्त दो वास्तविकताओं की रोशनी मे बढ़ने हेतु हमारी कार्य सूची को अल्पकाल एवं दीर्घकाल की दो तरफा प्रत्युत्तर की आवश्यकता है।

53. अल्पकालीन प्रत्युत्तर जो विशिष्ट अल्पसंख्यक मुद्दे से संबंधित हो, में निम्नलिखित उपायों को शामिल किया जा सकता है।

भारत, पाकिस्तान, बाँग्लादेश के संबंध में

(क) भारत, पाक, बाँगलादेश के प्रतिनिधियों से निर्मित बहुराष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग बनाने का प्रस्ताव, जो इन देशों में अल्पसंख्यकों के हितों की देखभाल करे

तथा सीमा के भीतर एवं सीमा पर संघर्षों को मिटाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। आयोग अपने कार्य सिद्धान्त सं. रा. सम्मेलन एवं समझौतों जैसे—स. राष्ट्र चार्टर 1945, मानवधिकारों की सार्वत्रिक घोषणा 1948, नागरिक राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय सहमति 1966, कानून लागू करने वाले अधिकारियों की स. रा. आचार संहिता 1979, प्रताड़ना के विरुद्ध सम्मेलन 1984 तथा अल्पसंख्यकों पर स. रा. घोषणा 1992 इत्यादि के आदेश पर निर्धारित कर सकता है।

(ख) भारत-पाक के संयुक्त नियंत्रण में वास्तविक नियंत्रण रेखा के दोनों ओर के कश्मीर के क्षेत्रों को 8 में से प्रत्येक नृवंशीय (नस्लीय) क्षेत्र को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान कर जम्मू कश्मीर विवाद का निपटारा किया जाये। संयुक्त नियंत्रण केवल राज्य की सुरक्षा मामलात एवं मुद्रा पर ही हो।

(ग) ब्रह्मपुत्र, गंगा एवं मेघना नदियों के पानी के बंटवारे हेतु संयुक्त भारत-बाँग्लादेश आयोग की स्थापना की जावे।

ये कदम तीनों राष्ट्रों की जनता एवं सरकारों में सद्भावना पैदा करने में सहायक होंगे।

केवल भारत के लिए

(घ) राज्य से धर्म को पृथक किया जाये।

(ड़) स्कूल, कॉलेजों में सत्यपरक इतिहास के शिक्षण को प्रेरित किया जावे जो पूर्व प्रचलनों या घटनाओं के सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं पर प्रकाश डाले।

(च) साम्प्रदायिकता को खत्म किया जाये जिसमें सैद्धांतिक एवं राजनीतिक साधन का उपयोग हो। बहुसंख्यक साम्प्रदायिकता पर विशेष ध्यान दिया जावे, साम्प्रदायिक दंगों को कड़ाई से कुचला जाये। एक सामाजिक समूह को दूसरे के विरुद्ध खड़ा कर ऐतिहासिक भूलों को समाप्त करने की प्रवृत्ति को समाप्त किया जावे, कट्टर नेताओं को अधिकाधिक प्रोत्साहन देना बन्द किया जावे, इत्यादि।

(छ) न्यायिक अथवा राजनैतिक प्रक्रिया द्वारा अयोध्या समस्या का निदान किया जाये।

(ज) साम्प्रदायिक आरक्षण अथवा साम्प्रदायिक चुनाव के बजाय आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रक्रिया शुरू की जाये; यही अल्पसंख्यकों की सत्ता में साझेदारी सुनिश्चित कर सकती है यदि वे नस्लीय आधार पर वोट देना चाहते हैं।

(झ) टाडा को समाप्त किया जावे।

(ञ) कानून, कानून क्रियान्वित करने वाली संस्थाओं तथा अल्पसंख्यकों की

सुरक्षा का पुनरावलोकन किया जावे तथा क्रियान्वयन को स्वच्छ एवं उचित बनाने के सुझावों पर अमल किया जाये।

(ट) संयुक्त पुलिस, पैरा मिलिट्री बल की स्थापना; जैसे प्रभावी उपाय किये जाये तथा दंगा पीड़ितों को भरपाई की पर्याप्त एवं शीघ्र व्यवस्था के उपाय किये जाये।

(ठ) उर्दू के विकास के लिये कठोर कदम उठाये जाये तथा उ. प्र. में इसे दूसरी राजभाषा का दर्जा दिया जाये।

(ड) अल्पसंख्यकों की दशा पर अल्पसंख्यक आयोग को प्रामाणिक आंकड़े तैयार करने को कहा जाये तथा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा, शैक्षिक विकास एवं आर्थिक उत्थान हेतु आयोग के सुझावों को स्वीकार किया जाये।

(ढ) अल्पसंख्यक वित्त विकास निगम की कार्य क्षमता को प्रभावी बनाया जावे तथा जहाँ वह नहीं है, वहाँ स्थापना की जाये।

(ण) आर्थिक आधार पर आरक्षण लागू किया जाये न कि जाति अथवा धर्म के आधार पर जिससे अल्पसंख्यकों के निर्धनतम् वर्ग को भी प्रतिनिधित्व मिलें।

(ब)

पुराने मॉडल को नयी आवश्यकता के अनुरूप बनाने हेतु दीर्घकालीन उपायों में निम्न कदमों को शामिल किया जा सकता है—

(क) उद्देश्य : भारत एवं विश्व में न्यायपूर्ण एवं स्वच्छ सामाजिक व्यवस्था स्थापित करना जो एक तरफ प्रकृति अनुकूल हो दूसरी तरफ लोक समर्थक हो।

(ख) आम अवधारणा : वैज्ञानिक यर्थाथवाद जो चहुँमुखी तथ्यों पर आधारित हो।

(ग) सामाजिक परिप्रेक्ष्य : वैश्वीकरण अथवा तर्क संगत मानवतावाद।

(घ) लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा लोगों को सत्ता का हस्तान्तरण : सभी आंतरिक टकरावों को बातचीत के माध्यम से हल करना।

पूर्ण संघीय ढांचे की स्थापना करना तथा विकेन्द्रीकृत संरचना का निर्माण करना जिसमें सभी राज्यों को स्वायत्तता हो और भारतीय संघ के भीतर पंजाब को विशेष दर्जा प्रदत हो। सभी स्तरों पर लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने की प्रक्रिया का निर्माण कर लोगों को शक्ति संपन्न बनाना तथा तथा समाज में सभी असमानताएं दूर करना जैसे, अमीरी-गरीबी के मध्य, औरत-आदमी के बीच, इत्यादि।

(ड़) टिकाऊ विकास : एक तरफ पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार करना यानि प्राकृतिक स्रोतों (जैसे जल, वायु एवं भूमि के संसाधनों) तथा दूसरी तरफ मानवीय एवं भौतिक स्रोतों का विकास करना यानि अर्थव्यवस्था का बाजार प्रणाली

एवं राज्य विनियोजन के न्याय पूर्ण मेल द्वारा वैश्वीकरण करना।

(च) क्षेत्रीय सुरक्षा एवं विकास : जम्मू कश्मीर प्रश्न को त्रिपक्षीय फार्मूले के आधार पर हल करना जिसमें नियंत्रण रेखा के दोनों ओर के कश्मीरी क्षेत्रों में सभी समूहों को पूर्ण स्वतंत्रता दी जाये तथा सुरक्षा, विदेश एवं मुद्रा के मामलों पर भारत-पाक का संयुक्त नियंत्रण हो जिससे सार्क के विकास का रास्ता खुल सके जो बाद में क्षेत्रीय सुरक्षा प्रणाली के साथ साझा बाजार क्षेत्र एवं संघीय राजनैतिक इकाई में परिवर्तित हो सकेगा।

(छ) मूल्य व्यवहार : तर्क संगत मानववादी सोच एवं लोकतांत्रिक व्यवहार को प्रोत्साहन देना।

(ज) विदेश एवं सुरक्षा मामले : अतंर्राष्ट्रीय सहयोग एवं मैत्री को बढ़ावा देना, पड़ोसियों के साथ क्षेत्रीय सुरक्षा प्रणाली का निर्माण करना तथा पाकिस्तान के साथ वादा करना कि वह परमाणु हथियारों एवं उनसे संबंधित उपप्रणाली का विकास नहीं करेगा।

XII

55. वह दिन दूर नही जब भारत, पाकिस्तान एवं बाँग्लादेश के लोगों के बीच शंका, घृणा की दीवार गिर जायेगी, जिनका साझा इतिहास, साझी वंशपरम्परा, अनुभव भाषाई भण्डार, परम्परा, आपसी दुख-तकलीफ और संघर्ष, इत्यादि हैं। जबकि तीनों देश स्वतंत्र एवं सम्प्रभु इकाई के रूप में रहेंगे और तीनों ही देश अपने लोगों के सुखद भविष्य हेतु संयुक्त मंच पर खड़े होंगे। 28-02-1995

❋ ❋ ❋

भारत-पाकिस्तान का भविष्य सहयोग में है

I

1. क्या 1947 के बाद के काल में पारम्परिक शीत युद्ध की राजनीति भारत पाकिस्तान द्वारा महसूस की जाने वाली परेशानियों का उत्तर हैं? तथ्य प्रदर्शित करते हैं कि इसने सुलझाने की बजाय परेशानियां बढाई हैं।

2. कुछ परिणामगत समस्याओं में से एक सशस्त्र संघर्ष है। दोनों ही राष्ट्र पहले ही तीन युद्ध लड़ चुके हैं जबकि चौथा क्षितिज पर मंडरा रहा है, यदि अन्तर्राष्ट्रीय दबावों के बावजूद दोनों राष्ट्र एक और सशस्त्र संघर्ष करते हैं तो यह अपने नाभिकीय आयामों के साथ न केवल जन धन की अभूतपूर्व हानि करेगा बल्कि अस्थिरता भी पैदा करेगा।

सम्पूर्ण विश्व, भारत एवं पाकिस्तान के बीच बढ़ते तनावों से चिंतित है। आज विश्व में 8 वास्तविक एवं सशक्त ज्वलंत बिन्दुओं में भारत-पाक संबंध नम्बर दो की स्थिति पर है एवं अत्यंत खतरनाक और नाजुक श्रेणी में आता है। इसमें इतनी शक्ति है कि वह दक्षिण एशिया को विश्व के प्रथम नाभिकीय युद्ध का सबसे दुर्भाग्यशाली क्षेत्र बना देगा।

3. भारत-पाक के मध्य शीत युद्ध की राजनीति से उत्पन्न दूसरी समस्या दोनों राष्ट्रों की विकासीय प्राथमिकताओं का विकृतीकरण हैं। दोनों ने अपनी राष्ट्रीय कार्यसूची में सैन्यकरण को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। एक अपुष्ट आकलन के अनुसार भारत ने अपनी सुरक्षा पर 600000 करोड़ रु. खर्च किए हैं। इसने अपने दो पड़ोसियों पाकिस्तान और चीन के साथ चार युद्ध लड़े हैं। 1000 करोड़ रु. श्रीलंका में लिट्टे विरोधी अभियान में खर्च हुये। 100 करोड़ रु. मालदीव में विदेशी षड़यंत्र को कुचलने पर खर्च हुये। साथ ही विगत 47 वर्षों में पैरामिलिट्री बलों पर भी काफी खर्चा हुआ। अनुमान लगाया जाता है कि पाकिस्तान ने 250000 करोड़ रु. गत 47 वर्षों में खर्च किए और इसी अवधि में भारत के साथ तीन युद्ध लड़े। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि लोगों को कितना लाभ मिलता यदि दोनों राष्ट्रों की सरकार अपने सैन्य खर्चे का एक तिहाई भी विकास कार्य पर खर्च करती।

1947 के बाद की अवधि में भारतीय रक्षा खर्च, बजट का औसत 20 प्रतिशत रहा (कुल घरेलु उत्पादन का लगभग 3.5 प्रतिशत) जबकि पाकिस्तान ने इसी अवधि में कुल बजट का 30 प्रतिशत रक्षा व्यय किया (कुल घरेलु उत्पादन का लगभग 5.5 प्रतिशत) गत 5 वर्षों से भारत जम्मू-कश्मीर में सैनिक अभियानों पर (सियाचीन पर व्यय सहित) लगभग 5 करोड़ रु. प्रतिदिन खर्च कर रहा है। पाकिस्तान कश्मीरी आतंकवादियों को सहायता एवं सियाचीन अभियानों पर एक

करोड़ रु. प्रतिदिन व्यय कर रहा है। स्पष्ट है कि यह भारी सुरक्षा खर्च दोनों राष्ट्रों के अल्प वित्तीय संसाधनों पर भारी बोझ डाल रहा है।

1994 की संयुक्त राष्ट्र विकास प्रोग्राम की रिपोर्ट के अनुसार सैन्यकरण भारत एवं पाक के लोगों को गंभीर रूप से चोट पहुँचा रहा है। सामाजिक समस्याओं पर काबू पाने के लिये आवश्यक धन राशि का शस्त्र खरीदने के लिये इस्तेमाल किया जा रहा है, यद्यपि कुपोषण एवं रोकी जा सकने वाली बीमारियों से मरने वालों की संख्या बाहरी आक्रमण में हताहत होने वालों की अपेक्षा 33 गुनी अधिक है।

जबकि दोनों ही देश सीमा के लिये कई करोड़ों डॉलर शस्त्रों पर खर्च कर रहे हैं। लेकिन सीमा के भीतर व्यक्तिगत एवं सामूहिक सुरक्षा बदतर होती जा रही है। सुरक्षा लोगों की अपेक्षा राष्ट्र राज्यों से अधिक संबंधित हो चुकी है, यद्यपि दैनिक मानवीय सुरक्षा—भूख, बीमारी, बेरोजगारी, अपराध, सामाजिक टकराव, राजनैतिक उत्पीड़न तथा पर्यावरणीय विनाश से सुरक्षा हमेशा से ही अधिकतर लोगों से चिरस्थायी तौर पर संबंधित रही है। मानव सुरक्षा, हथियारों से संबंधित नहीं है; यह मानवीय जीवन एवं सम्मान से संबंधित है।

तीसरी दुनिया में भारत पहले ही सबसे बड़ा हथियार आयातक राष्ट्र बन चुका है, पाकिस्तान भी विकासशील राष्ट्रों के बड़े हथियार आयातकर्ता की सूची में आता है। यह हथियारों का आयात एवं सुरक्षा पर बढ़ता सैन्य व्यय इस हद तक है जिसने भारत-पाकिस्तान को अधिक से अधिक सहायता प्राप्त करने एवं बड़े से बड़ा घाटे का बजट बनाने के लिए प्रेरित किया है। बढ़ते विदेशी ऋण ने प्रतिवर्ष बढ़ते ब्याज भुगतान को पूरा करने के लिए और ऋण लेने को मजबूर किया है। बढ़ती घाटे की वित्तीय व्यवस्था ने अर्थ व्यवस्था में मुद्रास्थिति के भंवर पैदा कर दिये हैं। चिरस्थायी मुद्रास्थिति ने भारत पाकिस्तान की अर्थ व्यवस्थाओं को उच्च लागत बना दिया जिससे निर्यात कमजोर हो रहे हैं और भुगतान संतुलन संकटपूर्ण होता जा रहा है।

तभी से ही भारत पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था में सैन्य खर्च को कम करना अनिवार्य आवश्यकता हो गया है। विशेषज्ञो की राय के अनुसार भारत- पाकिस्तान का सैन्य व्यय अति व्यापक है जिसे वर्तमान सुरक्षा जरूरतों को समझते हुए कम करना आवश्यक है। परन्तु उनकी शीत-युद्ध की राजनीति ने सैन्य व्यय कम करने के विकल्पों को नकार दिया है एवं सैन्य तैयारी को मजबूत करने का विकल्प अपनाया है।

सैन्य व्यय भारत-पाक के लिए अपने आप में भारी मायने रखता है, साथ ही इन नीतियों ने पड़ोसी राष्ट्रों को सुरक्षा व्यय के मामले में प्रतिस्पर्धी बना दिया है।

यह कहना गलत नहीं होगा कि सैन्य व्यय अल्प विकास के कारणों में से अति महत्वपूर्ण कारक रहा है। क्योंकि यह राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, कूटनीतिक इत्यादि प्राथमिकताओं को तोड़-मरोड़ देता है।

4. भारत पाक के मध्य शीत-युद्ध की राजनीति से उत्पन्न तीसरी समस्या द्विपक्षीय व्यापार में भारी गिरावट है जो इनकी अर्थ व्यवस्थाओ को गंभीर नुकसान पहुंचा रही है।

1947 के बाद से दोनों राष्ट्रों के बीच व्यापार 4 दशकों तक लगभग न के बराबर रहा है। कुछ वर्ष पहले यह 150 करोड़ रु. मूल्य का था। तथापि इनके मध्य तीसरे पक्ष से किया जाने वाला वास्तविक व्यापार (दुबई, सिंगापुर एवं तस्करी से) 5000 करोड़ रु. का रहा।

पाकिस्तान के पास भारत को निर्यात करने के लिए चीनी एवं उर्वरक भरपूर है जबकि भारत से आयात योग्य वस्तुएं गेहूं एवं सीमेंट हैं। अधिकारिक स्तर पर नई दिल्ली एवं इस्लामाबाद ने व्यापार उद्देश्य के लिए 400 मदों की पहचान की है।

यदि भारत पाक के मध्य शीत युद्ध की राजनीति से उत्पन्न तनावों को कमजोर कर सामान्य स्थिति बहाल की जाती है तो व्यापारिक सूत्रों के अनुसार इन राष्ट्रों के मध्य व्यापार 10000 करोड़ रु. तक पहुँच सकता है। इस प्रकार दोनों राष्ट्रों की अर्थ व्यवस्थाओं एवं नागरिकों को भरपूर लाभ मिल सकता है।

5. शीत युद्ध की राजनीति से उत्पन्न चौथी समस्या दोनों राष्ट्रों में मानव संसाधन विकास का प्रश्न रही है। भारत-पाकिस्तान में कुल जनसंख्या का क्रमशः 40 प्रतिशत व 30 प्रतिशत गरीबी रेखा से नीचे गुजर बसर कर रहा है। चिरस्थायी बेरोजगारी एवं निरंतर मूल्य वृद्धि उनके बोझ को लगातार बढ़ा रही है। दोनों देशों के निर्धन लोग लम्बे समय से अच्छा समय आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। परन्तु दोनों राष्ट्रों के नेताओं द्वारा की जाने वाली भारी भरकम गरीबी उन्मूलन की योजनाओं ने हमेशा भिन्न परिणामों को उत्पन्न किया है। प्रत्येक राष्ट्र में गरीबों की कुल संख्या 1947 की कुल जनसंख्या को भी पार कर चुकी हैं।

बढ़ती जनसंख्या के साथ स्रोतों का अनुत्पादक क्षेत्रों की ओर मुड़ने से शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अन्य सामाजिक सेवाओं पर निवेश इच्छित अथवा पर्याप्त सीमा तक नहीं हो पाया है। जो कुछ संसाधन इस ओर लगाया गया उसका बड़ा भाग भ्रष्टाचार का ग्रास बन गया है। इन सबसे सामाजिक सेवाओं का गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों रूपों का ह्रास हुआ है। स्पष्ट रूप से सामाजिक सेवाओं (जैसे पेयजल, खाद्य, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार इत्यादि) में विकास के बिना गरीबी हटाने की दिशा में कोई प्रगति नहीं की जा सकती।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की 1994 की रिपोर्ट के अनुसार विश्व 'मानव विकास सूचकांक' (गरीबी, अज्ञान एवं बीमारी को मापने का एक पैमाना) में भारत का स्थान 173 देशों में 136वां पाकिस्तान का 134वां है तथा दोनों ही राष्ट्र निम्नतम विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में आते हैं।

1993 की स.रा.वि.का. की रिपोर्ट के अनुसार भारत में शुद्ध गरीबों की संख्या 42 करोड़ 30 लाख (या 49 प्रतिशत) तथा पाकिस्तान में 3 करोड़ 60 लाख (या 30 प्रतिशत) रही। साक्षरता दर भारत एवं पाकिस्तान में क्रमशः 48.2 प्रतिशत एवं 34.8 प्रतिशत थी। भारत-पाक में साक्षरता दर विश्व की सबसे कम साक्षरता दर बनी हुई है। इस शताब्दी के अन्त तक भारत में विश्व के सबसे अधिक निरक्षर लोग होंगे। भारत में 7 करोड़ एवं पाकिस्तान में 1 करोड़ 10 लाख 5 वर्ष से कम आयु के बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। भारत में 75 करोड़ एवं पाकिस्तान में 15 करोड़ लोग शौचालय की सुविधा से वंचित है, स्वच्छ जल तक पहुंच नहीं रखने वाले लोगों की संख्या भारत में 75 करोड़ 40 लाख एवं पाकिस्तान में 6 करोड़ 9 लाख थी।

1993 की स.रा.वि.का. की रिपोर्ट के अनुसार 1988-90 के दो वर्षों की अवधि में भारत का शिक्षा एवं स्वास्थ्य पर व्यय कुल घरेलु उत्पादन का 6.4 प्रतिशत था जबकि सैन्य व्यय कुल घरेलु उत्पादन का 8 प्रतिशत था। पाकिस्तान के लिए ये आंकड़े क्रमशः 7.9 प्रतिशत एवं 13 प्रतिशत रहे।

कुछ अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों ने नये आंकड़ों के अनुसार यह रहस्योद्घाटित किया है कि चीन के 20 प्रतिशत एवं उपसहारीय अफ्रीका के 47 प्रतिशत के मुकाबले दक्षिण एशिया में गरीबों का प्रतिशत 55 प्रतिशत है। अगर 'अत्यन्त गरीब' की श्रेणी तैयार की जावे तो यह भारत के लिये 33 प्रतिशत, चीन के लिए 8 प्रतिशत एवं उपसहारीय अफ्रीका के लिये 30 प्रतिशत होगा।

6. भारत पाक के मध्य शीत युद्ध की राजनीति से उत्पन्न पांचवीं समस्या दोनों राष्ट्रों में राजनैतिक प्रक्रियाओं का अपराधीकरण होना है। विभिन्न प्रकार के अपराधीकरण में है—राजनीतिक प्रक्रिया में अपराधियों का प्रवेश, राजनीतिज्ञ पुलिस एवं अपराधी गठजोड़, सत्ता के दलालों एवं अतिरिक्त संवैधानिक केन्द्रों का उभरना, चहुंओर भ्रष्टाचार, अधिकार प्राप्त सत्ता में बैठे लोगों द्वारा कानून के शासन का उल्लंघन।

देश के लगभग 10 प्रतिशत जनप्रतिनिधि विभिन्न प्रकार के अपराधों से जुड़े गंदे तत्वों का समिश्रण हैं। संपूर्ण सत्ता दलालों एवं अति संवैधानिक केन्द्रों द्वारा चलायी जाती है जो विभिन्न स्तरों पर सतारूढ़ राजनैतिक दल के शीर्षस्थ नेताओं के साथ निकटता का दावा करते हैं।

अधिकांश राजनैतिक गतिविधियां अपराध द्वारा उत्पन्न काले धन के माध्यम से चलायी जाती हैं। सभी जन प्रतिनिधि चुनाव अधिकारियों को अपने चुनावी खर्चों का झूठा हिसाब देकर अपना कैरियर शुरू करते हैं। प्रत्येक राज्य में राजनीतिज्ञ-पुलिस-अपराधी बंधन बेशर्मी से संचालित होता है। हिमाचल, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश एवं आसाम में राजनीतिज्ञ, पुलिस एवं लकड़ी ठेकदारों के बीच संबंध है जिन्होंने लाखों हैक्टेयर जंगल साफ कर दिये हैं। दक्षिण बिहार में यही स्थिति कोयला माफियाओं की है। गुजरात, कर्नाटक, आंधप्रदेश, महाराष्ट्र में अवैध शराब उत्पादकों, बड़े नगरों में सम्पत्ति विक्रेताओं, दवाखोरों, तस्करों तथा ग्रामीण इलाकों में गुण्डे तथा डाकू प्रभावशाली है जो चुनावों पर नियंत्रण करते हैं। लगभग प्रत्येक वह व्यक्ति जो किसी राजीतिज्ञ को चुनावों में धन अथवा भुजबल से सहायता करता है वह चुनाव पश्चात् सम्मानीय स्थिति प्राप्त करता है एवं किसी भी दुष्कर्म करने पर कानून से प्रतिरोधक क्षमता का उपभोग करता है। घोटालों, काण्डों की अनन्त श्रृंखला एवं झटकों से यही धारणा पुष्ट होती है कि सत्ता भोग करने वाले लोग केवल अपनी जालसाजी एवं सौदेबाजी को वैधानिक जामा पहनाने का ही कार्य करते हैं।

II

7. विगत 47 वर्षों का रिकार्ड स्पष्ट करता है कि शीतयुद्ध की राजनीति ने अपने नुकसानदायक क्रियान्वन एवं आदेशों से भारत-पाकिस्तान दोनों राष्ट्रों के लोगों के लिये नकारात्मक परिणाम पैदा किये हैं। यह रिकार्ड इतना खराब है कि शीतयुद्ध के संचालक स्वयं इसे किसी भी पैमाने द्वारा उचित नहीं ठहरा सकते। प्रत्येक पक्ष इसे यह कह कर तर्क संगत ठहराते हैं कि दूसरे पक्ष ने उस पर टकराववादी रास्ता थोप दिया है। प्रमुख राय निर्माता यानि मुख्य धारा की राजनैतिक पार्टियां, प्रचार तंत्र, बुद्धिजीवी एवं कट्टरवादी (धार्मिक, आर्थिक व राजनीतिक) शक्तियों ने इस पथ पर बढ़ना जारी रखा। परिणाम स्वरूप दोनों राष्ट्रों का बहुमत शीतयुद्ध की इस राजनीति से प्रभावित है। परन्तु जब तक इस राजनीति को पूरी तौर पर खत्म नहीं किया जाता; दिन-ब-दिन नाजुक होती भारत पाकिस्तान की समस्याएं नहीं सुलझ सकेगी।

III

8. शीतयुद्ध की राजनीति की जड़ें कहाँ है?

9. इसका मुख्य कारण दोनों राष्ट्रों के राष्ट्रीयता के सिद्धान्तों में निहित हैं। पाकिस्तान का पैन इस्लामिक सिद्धान्त (जो सभी गैर मुस्लिम समुदायों एवं बहिष्कृत मुस्लिम समुदायों—शिया, अहमदिया, जिकरी इत्यादि को दूसरे दर्जे का नागरिक बना देता है, जैसाकि पाकिस्तान के मामले से स्पष्ट है) तथा बहुसंख्यकवादी भारतीय

राष्ट्रवाद (जो मौखिक रूप से सभी अल्पसंख्यकों को समान अधिकार प्रदान करता है किन्तु व्यवहार में उनके विरुद्ध भेदभाव करता है, जैसा कि भारत में है) ये हिन्दू एवं मुस्लिम राष्ट्र निर्माण के दो मूल रूप से भिन्न सिद्धान्त थे जिनमें से एक गाँधी एवं दूसरा जिन्ना द्वारा प्रतिपादित किया था—जिसमें स्वतंत्रता पूर्व साझा और एक एकीकृत राष्ट्रीय आंदोलन को छिन्न भिन्न कर दिया तथा हिन्दू एवं मुस्लिम समुदायों को टकराववादी रास्ते पर धकेल दिया और अंतत: 1947 में भारत का विभाजन हुआ।

10. शीतयुद्ध की राजनीति का अल्पकालिक कारण जम्मू कश्मीर की समस्या है जिसने 1947 में विभाजन के अवसर पर उत्पन्न होकर लगातार भारत-पाक शत्रुता को प्रेरित किया हैं और तीन युद्ध करवा देने के पश्चात् भी विश्व का सबसे ज्वलंत बिंदु है। भारत का तर्क है कि जम्मू कश्मीर संवैधानिक एवं कानूनी रूप से भारत में शामिल हो गया है। इस प्रकार अब यह भारत संघ का अभिन्न हिस्सा है जबकि पाकिस्तान दावा करता है कि 1947 के विभाजन से पैदा होकर एवं मुस्लिम बाहुल्य होने के साथ साथ भारत पाकिस्तान के इस मुद्दे पर पूरे समय तक लगातार झगड़ा कर रहा है, इसलिये यह विवाद का मामला है।

11. राष्ट्रवाद एवं जम्मू कश्मीर मुद्दे पर उपरोक्त दो विरोधाभाषी अवधारणाओं ने भारत-पाकिस्तान दोनों ही में दो भिन्न भिन्न सोच को पैदा किया है। भारतीय सोच यह है कि अन्तरनस्लीय एवं अन्तरधार्मिक तनावों के कारण पाकिस्तान में देर सवेर बाँग्लादेश की घटना की पुनरावृत्ति होने जा रही है। अत: देरी की बजाय शीघ्र ही भारत को पाकिस्तान के बिखराव की प्रक्रिया को सुगम बनाना चाहिये। पाकिस्तानी सोच यह है कि भारत साम्प्रदायिक, जातिवादी, नस्लीय एवं भाषाई संघर्षों के चलते लम्बे समय तक एक नहीं रह सकता, यह इन संघर्षों के चलते जल्दी ही अनिवार्य तौर पर बिखरेगा, अत: पाकिस्तान को भारत में अस्थिरता की प्रक्रिया में अनिवार्य रूप से आवश्यक सहायता देनी चाहिये।

12. इस सोच के कारण ही शीतयुद्ध की नीति को बढ़ावा मिला है। एक ऐसी नीति जो कोई नियंत्रण नहीं जानती और लगातार बढ़ती है। इस सोच और इससे संबंधित नीति के लगातार चलते रहने के कारण ही दोनों राष्ट्रों में परस्पर टकराववादी मस्तिष्कों की उत्पत्ति हुई।

यदि यह सोच शीघ्र नहीं बदली जाती तो दोनों राष्ट्र दो में से किसी भी संभावना का शिकार बन सकते हैं—या तो चौथा भारत पाक युद्ध नाभिकीय हथियारों सहित अथवा बाहरी एवं आंतरिक तनावों के चलते दोनों राष्ट्रों की अस्थिरता। दोनों संभावनाओं में से प्रत्येक गंभीर है और भारत-पाक के लोगों को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ सकती है।

IV

13. पुराने विश्वास अथवा मनस्थिति से पार पाना कोई आसान काम नहीं है। क्योंकि इसके दूरगामी परिणाम होते हैं। इसका मतलब न केवल प्रवृत्ति या मानसिकता को त्यागना ही नहीं बल्कि इसके सिद्धान्त, दृष्टि, शैली एवं ढांचे को भी परिवर्तित करना है। यदि ये कारक शासनकर्त्ता होते हैं तो इसका मतलब है सत्ता के विशेष अधिकारों को भी छोड़ना। वर्तमान उपभोगवादी एवं संग्रहवादी संस्कृति में गिने चुने लोग ही होते हैं जो सत्ता को छोड़कर सिद्धान्तों का विकल्प चुनते हैं।

14. पुरानी मन:स्थिति को किसी भी समुदाय द्वारा छोड़ना तभी होता है जब वह पुरानी कार्यसूची के स्थान पर नयी कार्यसूची को अपनाती है। इस बदलाव से पहले लोगों की मनोवृत्ति में परिवर्तन होता है जो किसी भी मूलभूत सामाजिक संरूपण का आधार तैयार करता है। नयी कार्यसूची को लोगों द्वारा अपनाने पर कभी-कभी सर्वांगी गिरावट आती है (जैसे सोवियत संघ) या नेतृत्व परिवर्तन (शांतिपूर्वक अथवा हिंसक) होता है (जैसे चैकोस्लाविया एवं रोमानिया)। अत: भारत-पाक के मध्य शीतयुद्ध की राजनीति को समाप्त करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य जो भारत-पाक के सभी लोकतांत्रिक एवं जागरूक लोगों के सम्मुख है लोगों को नयी सामाजिक कार्यसूची के पक्ष में प्रेरित एवं संगठित करना।

V

15. शीतयुद्धोपरान्त की स्थिति में जब विभिन्न राष्ट्र अपनी आंतरिक एवं बाहरी समस्याओं को सुलझाने के लिए शांति समझौतों की पहल कर रहे हैं तब भारतीय एवं पाकिस्तानी वक्ता अपने टकरावादी रवैये को छोड़ने की बजाय शीत युद्ध की नीतियों में नये परिवर्तन कर रहे हैं। एक महत्वपूर्ण पाकिस्तान विरोधी समूह भारत का भविष्य संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ सामरिक गठबंधन करने में पाता है तो दूसरा समूह (प्रमुखत: वामपक्ष एवं इसके सहयोगी) चीन अथवा रूस दोनों के साथ निकटता की वकालात कर रहे हैं। रूढ़िवादी परम्परागत लाईन पर विकास का स्वतंत्र रास्ता पेश कर रहे हैं, वे सैन्य शक्ति द्वारा राष्ट्र के निर्माण का दावा कर रहे हैं।

16. ये सभी दृष्टिकोण दो अंतर्राष्ट्रीय मूल वास्तविकताओं को नजरअंदाज करते हैं। प्रथम तो यह कि शीत युद्ध पश्चात् के काल में कोई भी देश से किसी भी द्विपक्षीय विवाद में एक दल विशेष की अवधारणा (शीत युद्ध के दिनों के विपरीत) रखने की आशा नहीं की जाती है तथा अपने हितों के आधार पर ही अपना स्टेण्ड रखने का विश्वास नहीं किया जाता है। यही कारण है कि भारत की शीतयुद्ध के लड़ाकू होने की छवि होने के कारण उसे सुरक्षा परिषद की सदस्यता प्रदान करने पर विचार नहीं किया गया और पाकिस्तान को उसके पारम्परिक सहयोगियों अमेरिका,

चीन, ईरान, इत्यादि ने जम्मू-कश्मीर प्रश्न पर नकार दिया है। दूसरी जमीनी वास्तविकता यह है कि शीतयुद्ध के पश्चात् में विश्व के राष्ट्रों के मध्य सैन्य शक्ति के स्थान पर आर्थिक शक्ति ने सम्मानीय स्थान अर्जित कर लिया है।

17. नई विश्व परिस्थितियां किसी भी राष्ट्र के लिये लाभदायक नहीं जो दृढ़ शस्त्र नीतियों एवं सैन्य शक्ति के निर्माण को अपनाता है।

18. अत: शीतयुद्ध की राजनीति किसी भी राष्ट्र के आंतरिक परिवर्तनों को नुकसान पहुँचाने के साथ अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर भी कोई सहयोग प्रदान नहीं करती।

VI

19. भारत एवं पाकिस्तान का भविष्य वास्तविक कार्य सूची को अपनाने पर निर्भर करता है जिन्हें दो वर्तमान वास्तविकताओं पर आधारित होना जरूरी है।

प्रथम तो यह कि 1947 के बाद भारत-पाकिस्तान दोनों की राष्ट्रीय प्रक्रियाएं—टकराव की कार्यसूची से प्रारंभ हुई। अत: दोनों राष्ट्रों द्वारा महसूस किया जाने वाला प्राथमिक कार्य अपनी अपनी राष्ट्रीय प्रक्रियाओं में आई विकृतियों को ठीक करना है।

दूसरा यह है कि नवविकसित राष्ट्रों की अन्तरनिर्भरता तथा नवस्थापित पर्यावरणीय असंतुलन—जो लोगों की अज्ञानता द्वारा उत्पन्न हुआ; नये सामाजिक विकास की परिकल्पना का निर्माण करने की माँग करते हैं।

(अ)

20. प्रथम वास्तविकता के लिए भारत-पाकिस्तान दोनों ही द्वारा अपनाई गयी शीत युद्ध की राजनीति को समाप्त करने की आवश्यकता है। यहाँ दो प्रमुख प्रश्न हैं—जम्मू-कश्मीर समस्या एवं प्रत्येक राष्ट्र में अल्पसंख्यकों का मुद्दा जिसने 1947 के बाद भारत पकिस्तान के संबंधों को नुकसान पहुंचाया है उन्हें ठीक से लिया जावे।

21. जहाँ तक जम्मू कश्मीर की समस्या का संबंध है सर्वाधिक वाजिब एवं टिकाऊ हल (जो भारत-पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के लोगों की आकांक्षा एवं मूड को दृष्टिगत रखता है एवं भारत-पाक एवं जम्मू-कश्मीर के लोगों का वर्तमान एवं भविष्य के हितों की बात करता है) यह है कि नियंत्रण रेखा के दोनों ओर स्थित राज्य के सभी आठ नस्लीय-क्षेत्रीय समूहों को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान कर दी जाये तथा भारत-पाकिस्तान दोनों के संयुक्त नियंत्रण में राज्य की सुरक्षा, मुद्रा एवं विदेशी मामलात ही हों।

22. जहाँ तक अल्पसंख्यकों का सवाल है दोनों राष्ट्रों को एक निश्चित समय के लिए अल्पसंख्यकों के समान अधिकारों को सुनिश्चित करने, उनकी समस्याओं,

शिकायतों को समझने एवं हल हेतु संयुक्त अभियान चलाना चाहिये अथवा भारत, पाक एवं बाँग्लादेश का संयुक्त अल्पसंख्यक आयोग अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा हेतु गठन किया जाना चाहिये।

जम्मू कश्मीर के आधार पर भारत एवं पाकिस्तान के बीच निकटस्थ सहयोग, क्षेत्रीय संघर्षों की समाप्ति, शस्त्र होड़ की समाप्ति, लोकतंत्र की मजबूती, आर्थिक विकास में तेजी, पर्यावरण सुधार इत्यादि का मार्ग प्रशस्त करेगा और संपूर्ण दक्षिण एशियाई राष्ट्रों में सामाजिक प्रगति का द्वार खोल देगा।

(ब)

23. दूसरी वास्तविकता स्पष्ट करती है कि सामाजिक विकास की नई अवधारणा जो टिकाऊपन के मूलभूत सिद्धान्त पर आधारित है, एक तरफ प्रकृति एवं मानव के मध्य संतुलन को पुनरस्थापित करे तो दूसरी तरफ सभी सामाजिक अवरोधों (जो राष्ट्रीय, नस्लीय, नृवंशीय, धार्मिक, भाषाई, लिंग, सामाजिक असमानता) को समाप्त कर मानव समाज की विभिन्न इकाइयों में परस्पर सौहार्द स्थापित करे।

24. प्रकृति एवं मानव के बीच संतुलन की पुनर्स्थापना का जहाँ तक सवाल है इसके लिये मानव की प्रकृति के प्रति अवधारणा और व्यवहार में पूर्ण परिर्वतन की आवश्यकता है। प्रत्येक प्रकार की मानव गतिविधि को इस प्रकार जोड़ना है कि प्रकृति की पूरी सुरक्षा एवं संरक्षण हो तथा प्रकृति का विनाश करने वाली प्रत्येक गतिविधि प्रतिबंधित हो। अन्तर्राष्ट्रीय से गांव स्तर तक हर गतिविधि, जिसमें मानव समाज विभिन्न स्तर तक संलग्न हो, की देखरेख पर्यावरण एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र आयोग द्वारा की जावे।

25. जहां तक विभिन्न मानव सामाजिक इकाइयों के मध्य सौहार्द स्थापना का प्रश्न है इसके लिए कम से कम 5 मुख्य कदम उठाने होंगे।

26. प्रथम कदम यह है कि आर्थिक अथवा भौतिक विकास की नई परिकल्पना तैयार की जाये जो टिकाऊ योग्य सीमाओं के भीतर उत्पादकता में वृद्धि एवं इसके समुचित वितरण पर समान महत्व डालती है।

दूसरा कदम राष्ट्रों के अंदर एवं राष्ट्रों के मध्य समानता स्थापित करना है। यह समानता संसाधनों एवं उत्पादों के उचित वितरण की हो न कि समान वितरण की। इसके लिये सभी प्रकार की असमानताओं को समाप्त करने की आवश्यकता है।

तीसरा कदम सुरक्षा की अवधारणा को सैन्य से सामाजिक सुरक्षा में परिवर्तन करना है। इसके लिये क्षेत्रीय अथवा वैश्विक आधार पर प्रत्येक राष्ट्र के लिये सामूहिक सशस्त्र सुरक्षा की आवश्यकता है जिससे अंततः राष्ट्रीय सुरक्षा व्यय में भारी कटौती होगी।

चौथा कदम न्यायिक एवं उचित आधार पर विश्व संसाधनों के बंटवारे पर विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों के मध्य नई साझेदारी विकसित करना है।

पांचवां कदम वैश्विक मुद्दों के प्रबन्धन हेतु स.रा. की संरचना को आधुनिक बनाना है।

27. ये कदम सभी राष्ट्रों के लिये सहयोग करना एवं सहयोगात्मक भावना द्वारा विवादों का निपटारा करना अनिवार्य बना देगा।

VII

28. आज हमें जिस बात को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। वह यह है कि सभी राष्ट्र विभिन्न रूपों में साझेदारी एवं अंततः एक ही विश्व समुदाय के निर्माण की ओर अग्रसर हो रहे हैं। जितनी जल्दी भारत एवं पाकिस्तान अपने 1947 की मानसिक स्थिति को त्याग देंगे उतनी ही जल्दी वे अपने साझे भविष्य की वास्तविकता को महसूस कर लेंगे जो भारत पाकिस्तान एवं सम्पूर्ण विश्व के लोगों के लिये सुखद होगा।

29. कोई पूछ सकता है कि क्या भारत पाक संबंध के मुद्दे को उठाने का यह सही समय है जबकि गत दो दशकों से वे निम्नतम स्तर पर है। शायद, यही सबसे उचित समय है क्योंकि एक छोर दूसरे छोर का मार्ग प्रशस्त करता है। (20.2.1995)

❋ ❋ ❋

एक अनिश्चित भविष्य

I

1. एक वर्ष की अवधि के भीतर, हमारे देश में ग्यारहवाँ आम चुनाव होने की सम्भावना है। हाल ही के विधान सभा चुनावों में क्या घटित हुआ है (यथा लोगों की परिर्वतन की इच्छा की झलक बिना किसी दल विशेष की पसन्द के), तथा आज क्या घटित हो रहा है (क्या प्रमुख राष्ट्रीय दलों द्वारा, आने वाले चुनावों में हर सम्भव तरीकों से चाहे वे अच्छे हो या बुरे हों, अधिकतम सफलता प्राप्त करने के लिए चतुराई पूर्ण योजनाएं व रणनीति तैयार करना), इन सब के आधार पर यही दिखाई देता है कि आगामी आम चुनावों के बाद कोई भी प्रमुख राजनैतिक दल अपने स्वयं के बलबूते पर सत्ता में आने की स्थिति में नहीं है। इसका अर्थ है कि राष्ट्र एक अधर में लटकी संसद की ओर बढ़ रहा है। कुछ राजनेता एवं समालोचक तो अभी से साझा सरकार की बात करने लग गए हैं।

2. साझा सरकार को केन्द्र में दो बार पहले से ही परखा जा चुका है, एक बार तो 1977-79 में जनता पार्टी के शासन के समय तथा दूसरी बार 1989-90 में राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार के समय (जिसे भारतीय जनता पार्टी, वामपंथी दलों तथा राष्ट्रीय मोर्चा के एक प्रकार के अघोषित संयुक्त मोर्चे का समर्थन प्राप्त था)। इन दोनों ही अवसरों पर, इसे (साझा राजनीति को) किसी न किसी कमी के साथ पाया गया। दिन प्रतिदिन के छोटे मोटे झगड़ों और विवादों ने इसके लिए कांग्रेस-आई से किसी भी रूप में बेहतर छवि का निर्माण नहीं किया।

3. केन्द्र और राज्यों के स्तरों पर हमारे देश की चार प्रमुख शक्तियों-कांग्रेस आई, भाजपा, जनतादल (अथवा राष्ट्रीय मोर्चा) और वामपंथी दल का अनुभव यह प्रकट करता है कि ऐसा कोई विशेष अन्तर इन सबमें नहीं है कि किसी एक को चुना जा सके या पसन्द किया जा सके। सामान्य उद्देश्य या लक्ष्य के आधार पर उनमें कोई आधारभूत अन्तर नहीं है। सत्ता और सम्पदा प्राप्त करने के उद्देश्य सबके एक समान है। ये सभी धन एवं बाहुबल की सत्ता, सम्प्रदायवाद और जातिवाद की राजनैतिक प्रणाली का ही अनुसरण करते हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि ये दल इन तीनों बातों में से किसी एक पर अधिक जोर देते हैं। कांग्रेस आई मुख्य रूप से धन एवं बाहुबल की शक्ति पर निर्भर करती है जिसके साथ पूरक ताकतों के रूप में सभी प्रकार का सम्प्रदायवाद एवं जातिवाद जुड़ा हुआ है, भारतीय जनता पार्टी मुख्य रूप से उग्रवादी या कट्टरवादी हिन्दु सम्प्रदायवाद की राजनीति का प्रयोग करती है जिसे जातिवाद तथा धन व बाहुबल की शक्ति का सहारा मिलता है तथा जनता पार्टी एवं वामपंथी पार्टियाँ,

मुख्यत: उत्पीड़ित जातिवाद की उग्रता पर निर्भर करती है जिसको अल्पसंख्यक सम्प्रदायवाद तथा धन व बाहुबल की शक्ति का समर्थन मिलता है।

II

4. सदैव सत्ता में बने रहने का उनका रणनीतिक लक्ष्य उन्हें भी गलत या सही करने को प्ररित करता है, ताकि उनके विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति हो सके। यदि कांग्रेस आई के सार्वजनिक प्रबन्ध का रिकार्ड काफी बुरा था, तो राष्ट्रीय मोर्चा-वाम मोर्चा तथा भारतीय जनता पार्टी का रिकार्ड भी भ्रामक एवं अन्धकारमय था। 1989-90 के रामो-वामो भाजपा गठबन्धन को केन्द्र की सत्ता के मात्र दस माह बाद ही जनता द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। पिछले पाँच दशकों के दौरान भी मार्क्सवादी कम्युनिष्ट पार्टी तथा अन्य वामपंथी दल अपने प्रभाव के थोड़े से परम्परागत क्षेत्रों से बाहर कोई मार्ग प्रशस्त नहीं कर सके, भाजपा को भी 1984 के आम चुनावों में बुरी तरह कुचल दिया गया जब इसके केवल 2 ही सांसद लोक सभा के लिए चुने गए तथा दुबारा 1993 के विधान सभाई आम चुनावों में भी इसके साथ ऐसा ही हुआ जबकि इसने उन चार राज्यों में से जहाँ यह दो वर्ष से सत्ता में थी-तीन में बहुमत खो दिया। 1993 में यह केवल एक राज्य राजस्थान में सत्ता प्राप्त कर सकी और वहाँ भी केवल कांग्रेस आई की परम्परागत राजनैतिक भ्रष्टाचार की तकनीक के आधार पर ही सत्ता में आ सकी थी। कई बार इसकी सम्प्रदायवाद की राजनीति की न्यायपलिका द्वारा निन्दा की गई है—जिसने इसके अनेक निर्वाचित सदस्यों को इस आधार पर अयोग्य घोषित कर दिया कि उन्होंने निर्वाचन के दौरान साम्प्रदायिक प्रचार का सहारा लिया।

5. इन चारों ही प्रमुख राजनैतिक दलों के पास कोई स्पष्ट राष्ट्रीय कार्यक्रम या कार्यसूची नहीं है। जबकि कांग्रेस आई, भाजपा व वामपंथी दल एक शक्तिशाली केन्द्र के पक्षधर है, वही जनता दल कभी कभी संघात्मक राजनीति की बात करता है। लेकिन जनता दल की संघात्मक की ढुल-मुल विचारधारा की स्पष्ट झलक एक शक्तिशाली केन्द्र का विचार रखने वाले वाम मोर्चा से इसके नजदीकी गठबन्धन से मिलती है। यह एक ऐसा गठबन्धन है जिसके बिना दोनों में कोई भी साझेदार प्रमुख शक्तिशाली दल का स्तर नहीं बनाये रख सकता। जबकि कांग्रेस आई की नई आर्थिक नीति बाजार की शक्तियों पर प्रमुख जोर देती है तथा भारतीय मानव संसाधनों के उपेक्षित भाग की अनदेखी करती है, वही भाजपा, वाम मोर्चा और जनता दल आर्थिक उदारीकरण (जिसका अर्थ है, पूंजी, तकनीक, बाजार, श्रम व स्पर्धा का वैश्वीकरण) का विरोध तो करते हैं किन्तु इनका कोई आर्थिक विकल्प प्रस्तुत नहीं करते। वास्तव में, यह विचारधारा पुराने नेहरूवादी आर्थिक ढांचे का समर्थन करने जैसी है, एक ऐसा ढांचा जो एक अकुशल सार्वजनिक क्षेत्र, विदेशी ऋण, घाटे की अर्थव्यवस्था, राजनीति

से प्रेरित निवेश, सैन्यकरण आदि पर आधारित है, जिसको वे प्रारम्भ में ही गरीब विरोधी व राष्ट्र-विरोधी के रूप में भर्त्सना कर चुके हैं। उनके क्रमशः पुराने आर्थिक ढांचे—व्यवस्थित अर्थव्यवस्था का साम्यावादी ढांचा तथा भाजपा का उधार लिया हुआ सांकेतिक शब्द मुक्त अर्थव्यवस्था, ये सब अव्यावहारिक साबित हो चुके हैं। विदेशी पूंजी के मामले में जबकि कांग्रेस आई का विकल्प है अनियन्त्रित आयात, वहीं भाजपा, वाममोर्चा और जनता दल, अपने स्वदेशीवाद के आन्तरिक संवाद या विचार के बावजूद चुनिन्दा आयात के पक्षपाती हैं और इन दलों की कतिपय राज्य सरकारें खुले तौर पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से सौदों पर विचार करती है। वास्तव में इन चारों ही प्रमुख राजनैतिक शक्तियों के पास ऐसी कोई ठोस आर्थिक नीति नहीं है, जो माल की उत्पादकता के बिन्दु और मानव संसाधन विकास की समस्या, विशेषकर गरीब एवं दलित वर्ग की, दोनों को समाविष्ट कर सके।

6. राजनीति का यह ताना-बाना पता नहीं अपने आप को कैसे सुलझा पाएगा। वर्तमान समय में तों सभी चीजें बदलने की स्थिति में है। कोई भी आधारभूत राजनैतिक संकेत अभी तक परिपक्वता के दायरे में अर्थात् निर्णायक स्थिति में नहीं आए हैं—यथा कांग्रेस आई की अन्तर्कलह, रामो-वामो गठबन्धन का पुनर्जीवित होना, विभिन्न क्षेत्रीय दलों का दृष्टिकोण (जैसे कि मुलायम समाजवादी पार्टी, कांशीराम की बहुजन समाज पार्टी, एआईएडीएमके, नवगठित अकाली दल, असम गण परिषद, मणिपुर इत्यादि), कश्मीरी उग्रवाद की स्थिति, भारत और पाकिस्तान के बीच शीतयुद्ध, नए केन्द्रीय बजट का सम्भावित प्रभाव, जम्मू कश्मीर मानवाधिकार, एन.पी.टी. तथा भारत-पाक युद्ध आदि के सम्बन्ध में यूनाइटेड स्टेटस, जापान, यूरोपियन यूनियन इत्यादि का दृष्टिकोण, आदि ।

7. भारतीय परिस्थिति इतनी अनिश्चित है कि कोई भी चीज सम्भव है। एक दलित उग्र जातिवाद सह अल्पसंख्यक साम्प्रदायिक संगठन, इसकी संरचना करने वाले केन्द्रीय घटक रामो-वामो एवं विभिन्न क्षेत्रीय समुहों के साथ, प्रमुख प्रभावशाली कारक के रूप में उभर सकता है लेकिन किसी करिश्माई व्यक्तित्व या नेतृत्व के अभाव में, जातिवादी अल्पसंख्यक साम्प्रदायिक संगठन नेतृत्व के लिए आन्तरिक संघर्ष के कारण असमंजस या पशोपेश की स्थिति में है (इसके प्रमुख खिलाड़ी ह्रै ज्योति बसु, लालू प्रसाद यादव, एन.टी. रामाराव, आर.के. हेगड़े, पासवान, शरद यादव इत्यादि)। अन्य सम्भावना हो सकती है राव विरोधी कांग्रेसी पक्ष के साथ रामो-वामो का गठबन्धन। तीसरा सम्भावित रूप कतिपय क्षेत्रीय पार्टियों के साथ कांग्रेस आई का संयुक्त मोर्चा हो सकता है जैसे कि मुलायम की समाजवादी पार्टी, कांशीराम की बहुजन समाज पार्टी, द्रविड़ मुनेत्र कड़गम, झारखण्ड पार्टी, बोडोलैण्ड मोर्चा, इत्यादि। चौथा विकल्प हो सकता है किसी पश्चिमी यूरोपीय क्रिश्चियन लिबरल पार्टी की तर्ज पर

भारतीय जनता पार्टी का प्रादुर्भाव। ऐसा कोई संगठन या गठबन्धन भी उभर कर सामने आ सकता है जिसकी आज कल्पना नहीं की जा सकती या जो आज दृष्टिगोचर नहीं होता है। हो सकता है आज की अविश्वनीय कांग्रेस आई ही निर्वाचकों को स्वीकार्य हो जावे।

III

8. एक सी ही अप्रतिष्ठित राजनैतिक शक्तियों को पुनः स्वीकार किए जाने का कारण एक प्रबल एवं प्रचलित सामान्य दृष्टिकोण में निहित है, जो एक तरफ तो यह मानता है कि समाज में गलत और सही में फर्क करने वाला मुख्य आधार अवसरवादी व सत्ता की राजनीति का स्वरूप ही है तथा दूसरी ओर वह स्वार्थ की अधिकतम पूर्ति को ही जीवन का प्रमुख उद्देश्य मानने वाले उपभोग वादी सिद्धान्त का समर्थन करता है अर्थात् उसे मान्यता देता है। मुख्य धारावाली राजनैतिक पार्टियों की धन व बाहुबल की सत्ता, साम्प्रदायवाद व जातिवाद की आपराधिक राजनीति से स्थिर किया हुआ तथा सत्ता की पूजा जैसे सामन्तवादी तरीके की दृढ़ता या आग्रह के साथ जुड़ कर रह गये इस दो तरफा सामान्य उद्देश्य के तहत सरकार को जनता का संरक्षक (माई बाप) कहलवाता है, किसी भी सरकारी राहत या रियायत को सरकार की ओर से जनता को एक दान के रूप में मानता है, सिद्धान्तों और मूल्यों के माध्यम से होने वाले सामाजिक परिर्वतन के किसी भी विचार को केवल मात्र एक धोखा पाखण्ड मानता है तथा केवल अपने स्वार्थ की पूर्ति करने वाली जीवनशैली से ही चिपका रहता है अर्थात् उसी में विश्वास करता है, दूसरों की परवाह किए बिना। यह हठी या विकृत स्वरूप आज भारत की राष्ट्रीय एकता व सामाजिक जीवन के लिए एक बड़ी धमकी (या चुनौती) का निर्माण करता है, जब तक इस सामान्य दृष्टिकोण को बदला नहीं जाएगा भारतीय समाज की गति आगे व पीछे चलना जारी रखेगी जो शक्तियों के सन्तुलन में महज मात्रात्मक परिर्वतन लाएगा। अर्थात जैसे लोग किसी एक अवसरवादी राजनैतिक सत्ता से ऊब जाएंगे, किसी समुचित विकल्प के अभाव में वे दूसरी का चुनाव कर लेंगे। सभी दलों या शक्तियों से बड़े पैमाने पर असंतुष्ट होने पर लोगों का झुकाव अधिक भयंकर नकारात्मक शक्तियों की ओर हो जाएगा। जो हमारे राष्ट्र के अस्तित्व तक को चुनौती देने के समान होगा।

IV

9. राजनैतिक अवसरवाद और उपभोगवाद के सामान्य स्वरूप को बदलने के लिए दो बातों की आवश्यकता है। प्रथम आवश्यकता एक समुचित सामाजिक कार्यक्रम तैयार करने की है जिसमें समाज की तात्कालिक, मध्यम अवधि एवं दीर्घ अवधि की समस्याओं का हल समाविष्ट हो, एक ऐसा कार्यक्रम जो आज के सत्ता की

पूजा करने वाले व उपभोगवादी समाज को, ऐसे टिकाऊ या स्थाई समाज मे बदल डाले जो प्रकृति एवं लोगों का पक्षधर हो।

10. दूसरी आवश्यकता एक नये प्रकार के प्रजातान्त्रिक दल व आन्दोलन के गठन करने की है जो सामाजिक वास्तविकता का सिद्धान्त और समुचित मानववाद से मार्गदर्शित होकर, अपने सदस्यों में से प्रत्येक में, तथा स्वयं अपने आप में, सिद्धान्त व व्यवहार के एक दृढ़ एकीकरण के माध्यम से एक तरफ तो परिवर्तन लाने तथा दूसरी ओर लोगों में एक समुचित मानववादी चेतना और एक प्रजातान्त्रिक व्यवहार तथा स्थाई या टिकाऊ जीवन शैली जागृत करे (एक ऐसी जीवनशैली जो व्यक्तिगत स्वार्थ तथा सार्वजनिक हित में एक सन्तुलन स्थापित करे)।

11. अपने सदस्यों और अपने आप को बदल डालने के लिए प्रजातान्त्रिक पार्टी व आन्दोलन को अपने प्रत्येक सदस्य के प्रेरणात्मक स्तर को ऊँचा उठाना होगा; उन्हें अवसरवादी दलों के उपभोगवाद से मुक्त करने में सहायता करनी होगी तथा उनमें सभी परिथितियों से कुछ सीखने को तैयार रहने की आदतों का सूत्रपात या बीजारोपण करना होगा, तथ्यों के आधार पर आगे बढ़ना सीखना होगा न कि पूर्व निर्णित कल्पनाओं या भावों के आधार पर तथा अपने अहम् को हर समय आवश्यक रूप से एक विवेकपूर्ण ढंग से संयत करना भी सीखना होगा।

12. सत्ता की पूजा व उपभोगवाद की सामान्य चेतना या विचारधारा को, एक विवेकपूर्ण मानववादी सामान्य चेतना और प्रजातान्त्रिक व्यवहार एवं जीवनशैली के आधार पर बदलने के लिए, प्रजातान्त्रिक पार्टी व आन्दोलन को, विभिन्न दशाओं के अनुरूप विविध प्रकार के कदमों का सूत्रपात करना होगा।

प्रथम कदम तो यह होना चाहिए कि जिन लोगों के बीच हमें काम करना है उनकी पहचान सुनिश्चित की जाये, उनकी वैचारिक राजनैतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक स्थिति की सामान्य जानकारी की जावे तथा किसी प्राथमिकता वाली समस्या की विशिष्ट जानकारी हासिल की जावे।

दूसरा कदम यह होना चाहिए कि ग्रामीण एवं शहरी संगोष्ठियों में, सामूहिक विचार विमर्श में, आन्तरिक बैठकों, सामाजिक उत्सवों, सांस्कृतिक अवसरों अथवा अन्य किसी भी क्रियाकलाप के दौरान, ग्राम, खण्ड, जिला, राज्य देश और विश्व से सम्बधित प्रत्येक महत्वपूर्ण विषय के लिये विधि एवं नीति सम्बंधित विचार—विमर्श में आम लोगों की भागीदारी सुनिश्चत करना—विविध महत्वपूर्ण विषय जैसे टिकाऊ विकास, पर्यावरण, जनसंख्या, मानवाधिकार, अल्पसंख्यक वर्ग, निर्धनता, बेरोजगारी, मूल्य वृद्धि, जातिगत आरक्षण, शिक्षा, महिला वर्ग, उद्योग, श्रमिक संगठन, कृषि, ग्रामीण विकास, साम्प्रदायिक दंगे, जातिगत अत्याचार (उत्पीड़न), न्यायपालिका,

पंचायतीराज, संचार माध्यम, कानून की क्रियान्विति, संवैधानिक बिन्दु, युद्ध, शीतयुद्ध, निशस्त्रीकरण की संधि, व्यापार एवं तटकर पर सामान्य समझौता, बहुराष्ट्रीय कम्पनियां तथा संयुक्त राष्ट्र इत्यादि इन विषयों पर विचार विमर्श में आम लोगों को भी शामिल करना वांछनीय है।

तीसरा कदम यह होना चाहिए कि विभिन्न प्रकार के सम्मेलनों व बैठकों में विभिन्न प्रकार की सामाजिक बुराइयों के कारण और हल के सम्बंध में होने वाली चर्चा में आम लोगों को शामिल किया जावे—जैसे कि राजनीति का अपराधीकरण, धन व बाहुबल द्वारा नियन्त्रित चुनावी प्रक्रिया, भ्रष्टाचार, जोड़तोड़, घोटाला, काला धन, तस्करी, नशीली वस्तुओं का व्यापार, गुण्डा तत्वों द्वारा जनता का उत्पीड़न, कर चोरी, सार्वजनिक सम्पति की चोरी, अस्वास्थ्यकर दशाएं, महिलाओं व बच्चों की पिटाई, उद्दण्डता, चापलूसी, दोहरी चाल या दोगला व्यवहार आदि।

चौथा कदम विभिन्न रचनात्मक कार्यों में आम लोगों को शामिल करने का होना चाहिये जैसे कि जल संरक्षण, भू-क्षरण की रोकथाम, वनारोपण, प्रदूषण—निवारण, साक्षरता अभियान, स्वास्थ्य सेवा केन्द्रों का संचालन, निर्धनों, अनाथों एवं निस्सहायों की बड़े पैमाने पर सहायता आदि।

पांचवां कदम होना चाहिए लोगों को उनके क्षेत्र की योजनाओं के निर्माण एवं उन पर विचार विमर्श में लोगों को शामिल करना—योजनाएं जो पर्यावरण, मानवीय संसाधनों और भौतिक संसाधनों के विकास से सम्बंधित हो जैसे कि जल-आपूर्ति, शिक्षा, स्वास्थ्य, विद्युत, परिवहन, डाक-सेवा, दूर-संचार, कृषि, कृषि-आधारित उद्योग, ग्रामीण ऋण, बाढ़ बचाव, मरुस्थल से बचाव, परम्परागत तकनीक का विकास तथा आम जनता से विचार विमर्श के लिए सांसदों, विधायकों, राजकीय विभागों, तकनीकी व्यक्तियों तथा विशेषज्ञों को आमन्त्रित करना, इत्यादि।

छठा कदम यह होना चाहिए कि परम्परागत प्रभुता वाली संस्कृति तथा इसके परम्परागत अधीनता वाले रूपों तथा इनको एक विवेकपूर्ण मानववादी संस्कृति तथा प्रजातान्त्रिक व्यवहार में विकसित करने से सम्बंधित विचार विमर्श में लोगों को शामिल किया जावे। नस्लीय-क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय कला (भाषा, संगीत, नाटक, वास्तुकला, साहित्य, विज्ञान एवं संस्कृति) आदि का इतिहास एवं उसके विकास से सम्बंधित विषयों पर सांस्कृतिक सम्मेलनों का आयोजन किया जाना चाहिए।

सातवां कदम यह होना चाहिए कि लोगों को मतदाता मण्डलों का गठन कर चुनावी प्रक्रिया में शामिल किया जावे, ये संस्थाएं लोगों को इस बात के लिए प्रेरित करें कि यदि उनमें से उपलब्ध हो तो ऐसा योग्य उम्मीदवार खड़ा करे जो सभी

मतदाताओं द्वारा व्यापक तौर पर स्वीकार्य हो तथा उन्हे इस बात के लिए भी प्रेरित करे कि वे ठोस कार्यक्रम व उद्देश्य के आधार पर मतदान करें, जो विभिन्न मुद्दों को समाविष्ट करें जैसे भ्रष्टाचार, राजनीति का अपराधीकरण, मानवधिकार, उम्मीदवार की सम्पत्ति व संसाधनों का खुलासा, उनके द्वारा जनसेवा का रिकार्ड तथा समाज को योगदान का विवरण आदि।

आठवाँ कदम होना चाहिये कि आम लोगों को उनकी रुचि तथा रुझान के अनुसार संगठित किया जावे या तो किसी बड़े संगठन के रूप में या सांस्कृतिक संस्था के रूप में या श्रमिक संगठनों के रूप में, विशेष कर महिलाओं, निर्धनों, दलितों, बेरोजगारों तथा अल्पसंख्यकों आदि को संगठित किया जावे।

नवम् किन्तु सबसे महत्वपूर्ण कदम यह होना चाहिए कि लोगों का संवैधानिक एवं कानूनी अधिकार सुनिश्चित किया जावे, नीति निर्धारण एवं निर्णय लेने में उनके विचार को निर्णायक बनाया जावे—ऐसा इस प्रकार किया जा सकता है—(1) विभिन्न स्तरों जैसे ग्राम, खण्ड, जिला, राज्य, राष्ट्र स्तर से सम्बंधित महत्वपूर्ण विषयों पर उस स्तर की सार्वजनिक चर्चाएं रख कर तथा इन विषयों पर जनमत संग्रह करवा कर, (2) समस्त सरकारी तन्त्र को जनता के प्रति उत्तरदायी बनाकर (3) जनता को सूचनाएं प्राप्त करने का अधिकार देकर (4) राजकीय गोपनीय अधिनियम, न्यायालय अवमानना अधिनियम, विधायकों के विशेषधिकारों, सेना के कोर्ट मार्शल के अधिकार, बन्दी कानून आदि को समाप्त करके तथा (5) राज्यों के ढांचों का संघीयकरण करके तथा ऊपर से नीचे तक सत्ता का विकेन्द्रीकरण करके तथा अन्य इसी प्रकार के तरीकों द्वारा। 10.05.95

❋ ❋ ❋

आठवाँ सार्क शिखर सम्मेलन

1. सात सदस्यों वाले दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क, दक्षेस) जो 1.3 बिलियन लोगों अर्थात् मानवजाति के पांचवें भाग का प्रतिनिधित्व करता है, ने मई 1995 में नई दिल्ली में अपने शिखर सम्मेलन का आयोजन किया।

2. इससे पूर्व के सात शिखर सम्मेलनों का, जिनमें इसके सदस्यों के बीच का पारस्परिक मतभेद ही परिलक्षित होता है, मुश्किल से ही कोई ठोस या प्रत्यक्ष परिणाम रहा हो। भारत और पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय विवाद मुख्यत: जम्मू-कश्मीर राज्य को लेकर, भारत और बांग्लादेश के बीच मुख्यत: गंगाजल के बंटवारे को लेकर, भू भागों के हस्तान्तरण को लेकर तथा बंगलादेश से शरणार्थियो के आवागमन को लेकर विवाद, भारत और नेपाल का विवाद मुख्यत: 1950 की भारत-नेपाल सन्धि को लेकर तथा हाल ही ऊर्जा-परियोजानाओं को लेकर किए गए संयुक्त समझौतों से सम्बंधित विवाद, ये सब बातें पिछले एक दशक पुरानी सार्क प्रक्रिया पर लगातार अपना प्रभाव डाल रही हैं।

3. हालांकि हाल में नई दिल्ली में आयोजित शिखर सम्मेलन अपने आप में विशिष्ट था, जिसने सदस्यों में इस संगठन की कमियों के बारे में जागृति अर्थात् जागरूकता पैदा की, इसका परिणाम यह रहा कि क्षेत्रीय सहयोग पर कुछ निश्चित एवं ठोस निर्णय लिए जा सके। शिखर सम्मेलन की कार्यसूची में दो प्रमुख बिन्दु जोड़े गए। एक तो गरीबी उन्मूलन का तथा दूसरा दक्षिण एशियन वरियता व्यापार प्रबन्ध को कार्यरूप में परिणत करना अर्थात् उसे क्रियान्वित करना।

4. गरीबी उन्मूलन के संबंध में देहली घोषणा ने 7 सम्बंधित देशों को यह जिम्मा दिलाया कि वे सन् 2002 तक अपना लक्ष्य हासिल कर लेंगे। यह इस बिन्दु पर पिछली सार्क घोषणाओं तथा हाल ही के कोपेनहैगन सामाजिक शिखर सम्मेलन घोषणा के अनुकरण में था। लेकिन इस घोषणा में किसी समन्वित या संयुक्त कार्यवाही के लिए कोई कार्यक्रम नहीं था, जबकि दक्षिण एशिया में सर्वाधिक गरीब जनसंख्या रहती है। एक आवश्यक बिन्दु जिस पर इसने जोर दिया वह था एक मंच या परिषद बनाने का समझौता जिसके माध्यम से निर्धनता से सम्बंधित तकनीकी विधियों का आदान-प्रदान किया जावे। राज्यों व सरकारों के अध्यक्षों ने वर्ष 1995 को गरीबी उन्मूलन के लिए सार्क वर्ष घोषित करने पर सहमति प्रदान की। उन्होंने गरीबों को बढ़ी हुई विकास की गति के लिए मानवीय विकास तथा समानता के अनुरूप और अधिक शक्तिशाली बनाने का अपना पुराना वादा पुन: दोहराया।

5. जहां तक साप्टा की क्रियान्विति का प्रश्न है, सातों ही राष्ट्र इस बात को जानते हुए कि उनमें आपसी मतभेदों के कारण कोई वास्तविक प्रगति नहीं हुई है, अब

अपने आप को आशा व अपेक्षा से भी कुछ अधिक करने लिए पाबन्द किया है। पारस्परिक व्यापार (सीमा-शुल्क) में छूट देकर एक शुरूआत की गई है। भारत ने 106 सामग्रियों पर कस्टम ड्यूटी में छूट की पेशकश की है, तथा पाकिस्तान ने 53 आइटमों पर छूट की घोषणा की है। श्रीलंका ने और अधिक सकारात्मक कदम उठाया है।

6. साप्टा के समझौते के ढांचे को अप्रेल 1993 में आयोजित ढाका शिखर सम्मेलन में अन्तिम रूप दिया गया था। परन्तु अब तक जो प्रगति हासिल की गई है वह किसी भी तरह सन्तोषजनक नहीं कही जा सकती।

7. एक संयुक्त राष्ट्र अनुमान के मुताबिक सार्क व्यापार की मात्रा यानि इसके 7 सदस्यों के व्यापार की मात्रा कुल विश्व व्यापार के 3 प्रतिशत से थोड़ी ज्यादा है, जबकि यूरोपिय यूनियन सहित विकसित देशों का हिस्सा लगभग 80 प्रतिशत और एशियन देशों का हिस्सा 20 प्रतिशत के करीब है। विश्व व्यापार विकास केन्द्र का कहना है कि यदि दक्षिणी एशिया में एक साझा बाजार की स्थापना की जावे तो आज के 3 बिलियन का व्यापार स्तर, शताब्दी के अन्त तक पांच गुनी क्षमता (15 बिलियन डॉलर) तक बढ़ सकता है।

8. अपने अस्तित्व की प्रथम दशाब्दी तक जब कि सार्क अपने अन्त:क्षेत्रीय विवादों में उलझा रहा, समूचे विश्व में क्षेत्रीय सहयोग की भावना या उत्कंठा जाग उठी। विश्व के विभिन्न भागों में नए नए क्षेत्रीय संगठन स्थापित होने लगे हैं जैसे यूरोपियन कम्यूनिटी, उत्तर अटलांटिक मुक्त व्यापार प्रबन्ध, दक्षिणी पूर्वी एशियन देशों का संगठन, एशिया पेसिफिक आर्थिक समुदाय। जनरल एग्रीमेन्ट ऑन टेरिफ्स एण्ड ट्रेड के अधीन एक नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक व्यवस्था अस्तित्व में आई है। अप्रसार सन्धि द्वारा देशों के लिए एक नई सकारात्मक भूमिका निर्धारित की गई है। जनसंख्या, निर्धनता, बेरोजगारी, लिंग-समानता, सामाजिक-एकता आदि के सुचारू प्रबन्धन के लिए कई नवीन कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए हैं। शीत युद्ध के बाद के काल में, विश्व में कई नवीन शक्ति-समीकरण उभर रहे हैं।

9. सार्क के दो सबसे बड़े सदस्यों भारत एवं पाकिस्तान की शत्रुता एवं परस्पर सन्देह की स्थिति, क्षेत्र के आर्थिक विकास में आने वाली कठिनाइयों में सबसे बड़ी कठिनाई है।

10. स्पष्ट है कि सार्क देशों का विकास तब तक नहीं हो सकता जब तक कि भारत व पाकिस्तान, जम्मू कश्मीर से सम्बंधित अपने विवाद को हल नहीं करते, तथा इसके साथ ही भारत बांग्लादेश तथा भारत नेपाल के विवाद को हल करना होगा। भारत, जो कि सार्क संगठन का सबसे बड़ा देश है, अपने पड़ौसी देशों को कुछ छूट या सुविधाएं प्रदान करके भी शान्ति प्राप्त करे तो यह फायदेमंद सौदा होगा।

11. सार्क सदस्यों में से अधिकांश – नेपाल, श्रीलंका एवं बांग्लादेश के प्रधानमंत्री तथा पाकिस्तान के राष्ट्रपति ने, एक या दूसरे से, द्विपक्षीय मामलों को सार्क सम्मेलन के विचार विमर्श के दायरे में लाने का सवाल उठाया था परन्तु भारत अब भी इस सवाल से दूर भागने की कोशिश कर रहा है।

12. आर्थिक सहयोग और साझा बाजार के लिए भागीदारी और मुक्त व्यापार की आवश्यकता होती है। इसका निर्माण शीत युद्ध की राजनीति से नहीं किया जा सकता जिसने केवल सैन्यीकरण और हथियारों की होड़ का सृजन किया है, एक दूसरे से मुकाबले की प्रवृत्ति को समाप्त कर परस्पर सहयोग की प्रवृत्ति को स्थापित करना होगा।

13. अब तक के विचार विमर्श से यह बात पूर्णतया स्पष्ट हो चुकी है कि अपनी गहन इच्छा और बड़े प्रयासों के बावजूद भी, भारत का दक्षिणी पूर्वी एशिया के राष्ट्रों के संगठन (ASEAN) एशिया पेसिफिक आर्थिक समुदाय (APEC) आर्थिक संगठन में कोई सम्मान या स्वागत नहीं है। पाकिस्तान अपने स्तर पर अफगानिस्तान, इरान एवं टर्की को साथ करके एक नया इस्लामिक आर्थिक संगठन खड़ा करने का प्रयास कर रहा है, जो केन्द्रीय एशियन इस्लामिक राज्यों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखेगा। पाकिस्तान ने बांग्लादेश को भी इस नव प्रस्तावित संगठन में शामिल होने के लिए आमन्त्रित किया है।

14. इस दौरान बांग्लादेश ने भी, जो क्षेत्र में सार्क के बहुत ही न्यून आर्थिक प्रभाव से खिन्न है, मलेशिया, इन्डोनेशिया, ब्रुनेई तथा बांग्लादेश को मिला कर एक नया इस्लामिक आर्थिक संगठन निर्मित करने पर विचार विमर्श किया। इस सम्बंध में मलेशिया का रुख बहुत ही सकारात्मक था।

15. भारत भी नए विकल्प खोजने का प्रयास कर रहा है। कुछ माह पूर्व ही, इसने हिन्द महासागर व्यापार संगठन बनाने का विचार अभिप्रस्तावित किया था, जिसमें भारत, दक्षिणी अफ्रीका, श्रीलंका, मारीशस, मालदीव, ओमान, सिंगापुर, इन्डोनेशिया और आस्ट्रेलिया को शामिल करना प्रस्तावित किया गया था। लेकिन यह केवल मायावी या भ्रामक विचार ही लगता है। कोई ऐसा कारण नहीं कि मलेशिया और इन्डोनेशिया सुसम्पन्न संगठन दक्षिणी पूर्वी एशियन राष्ट्र संगठन को छोड देंगे तथा बेमेल आर्थिक अनिश्चित भविष्य वाले एक बेमेल आर्थिक संगठन में शामिल हो जाएंगे। स्वाभाविक है कि नेपाल और भूटान का झुकाव भी चीन की ओर ज्यादा रहेगा।

दक्षिणी एशिया ब्रिटिश साम्राज्य के नीचे एक आर्थिक इकाई था। भौगोलिक और आर्थिक तत्वों के अलावा, इस क्षेत्र का विश्व के अन्य किसी भी क्षेत्र से

मुकाबला नहीं हैं अर्थात कोई भी क्षेत्र इस क्षेत्र के समान नहीं है क्योकि इस क्षेत्र में 1500 मिलियन लोग रहते हैं यहां 700 मिलियन प्रभावी उपभोक्ता हैं, संयुक्त राज्य के बाद विश्व का दूसरा सबसे बड़ा रेलमार्ग का जाल है (कुल 92256 किलोमीटर), विश्व की सर्वाधिक सिंचित भूमि यहां है (67 मिलियन हैक्टेयर्स), तथा विश्व के तकनीकी एवं वैज्ञानिक व्यक्तियों की बड़ी संख्या इस क्षेत्र में है। परन्तु क्षेत्रीय मतभेदों तथा आन्तरिक जातिगत झगड़ों ने इस क्षेत्र को अफ्रीकन उप सहारा राष्ट्रों के बाद दूसरे सर्वाधिक निर्धन क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया है।

आर्थिक संगठनों का विचार या विवेक हमारे राष्ट्रीय अन्तरनिर्भर विश्व के हाल ही में उत्पन्न नए श्रम विभाजन से पैदा हुआ है, जिसकी मांग है कि साझा बाजार, सामूहिक क्षेत्रीय सुरक्षा प्रणाली के आधार पर एक क्षेत्रीय आर्थिक एकीकरण स्थापित हो, तथा नवीन वैश्विक विषयों के मामले में संयुक्त क्षेत्रीय उत्तरदायित्व रहे जैसे कि पर्यावरण, जनसंख्या, निर्धनता, बेरोजगारी, लिंग-समानता, बाल-श्रम, मानवाधिकार, नशीले पदार्थों का व्यापार इत्यादि। क्षेत्रीय आर्थिक संगठन वैश्विक व्यवस्था के विकास का प्रथम चरण है। और कोई तरीका नहीं है जिससे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था तथा किसी देश की अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सौदेबाजी की शक्ति को सुधारा या बढ़ाया जा सके।

अगर सार्क बढ़ने में असफल रहता है तो इसके बहुत घातक परिणाम होंगे। यह न केवल दक्षिणी एशिया को विश्व का निर्धनतम क्षेत्र ही बना देगा, बल्कि यह, भारत और पाकिस्तान के आर्थिक ह्रास के परिणाम स्वरूप तथा इनके बीच शीतयुद्ध के चलते तथा आन्तरिक जातिगत विवादों के चलते, इन दोनों देशों के अन्दर अस्थिरता का भी कारण बनेगा। 9.5.1995

❋ ❋ ❋

कोपेनहेगन का सामाजिक शिखर सम्मेलन

I

1. सामाजिक विकास पर प्रथम संयुक्त राष्ट्र शिखर सम्मेलन का आयोजन 5 से 13 मार्च, 1995 तक कोपेनहेगन में किया गया। सभी दृष्टिकोण से यह सकारात्मक कदम था। प्रथम बार, संयुक्त राष्ट्र समुदाय तीन महत्वपूर्ण सामाजिक समस्याओं— निर्धनता, बेरोजगारी तथा सामाजिक एकता पर विचार विमर्श करने के लिए एकत्र हुआ। इस सभा में लगभग 118 देशों एवं सरकारों के अध्यक्षों ने भाग लिया।

2. अधिकृत सरकारी शिखर सम्मेलन के स्थान से लगभग 5 किलोमीटर दूरी पर ही एक समानान्तर बैठक 2000 गैर सरकारी संगठनों के द्वारा आयोजित की गई व इस बात पर विचार विमर्श किया गया कि निष्पक्ष व टिका ऊ सामाजिक विकास को संचालित करने वाले मूल बिन्दु की स्थापना में असफलता क्यों मिलती है।

II

3. सभा में किया गया विचार विमर्श मुख्य रूप से सामाजिक कार्यसूची के आर्थिक पहलू पर केन्द्रित रहा तथा इसकी बहु-आयामी अर्थात् व्यापक प्रकृति की अनदेखी की गई। हालांकि प्रथम बार विश्व समुदाय ने एकजुट होकर इसे एक मानवीय विषय के रूप में स्वीकार किया जिसका सम्बंध मुख्यत: विकासशील देशों से है।

4. शिखर सम्मेलन में जिन मुख्य आर्थिक बिन्दुओं या विषयों पर विचार विमर्श किया, वे थे ऋणों की माफी, विकास के लिए राजकीय सहायता, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा के लेनदेन पर कर, इत्यादि।

5. ऋण माफी पर, डेनमार्क की संसद ने यह संकल्प दर्शाया कि वे 6 विकासशील देशों द्वारा धारित 166 मिलियन डॉलर के ऋण को माफ करते हैं। इसके बाद आस्ट्रिया ने यह घोषणा की कि वह कई विकासशील देशों द्वारा लिए गए 100 मिलियन डॉलर के ऋण को माफ करता है। अन्य विकसित देशों ने चुप रहना ही पसन्द किया।

6. विकास पर सरकारी अनुदान के सम्बन्ध में, जापान ने घोषणा की कि वह सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 0.7 प्रतिशत विकास अनुदान देगा। यह संयुक्त राष्ट्र अनुमोदित लक्ष्य है। फ्रांस ने कहा कि वह सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 0.63 प्रतिशत पहले से ही अनुदान के रूप में दे रहा है। अन्य विकसित राष्ट्रों ने तो अपनी सरकारी विकास अनुदान की दर को सकल राष्ट्रीय उत्पाद के 0.7 प्रतिशत तक बढ़ाने की अपनी सहमति पर चुप्पी ही साध ली।

7. मुद्रा के अन्तर्राष्ट्रीय लेनदेन पर कर लगाने के बिन्दु पर फ्रांस, डेनमार्क व कनाडा ने मुद्रा के अल्पकालीन हस्तान्तरण पर एक विश्व स्तरीय कर लगाने का प्रयास किया, जो टोबिन टैक्स से भिन्न होगा तथा इससे तीसरे विश्व के विकास के लिए स्त्रोत का निर्माण हो सकेगा। लेकिन यह सुझाव शिखर सम्मेलन की अंतिम घोषणा में शामिल नहीं किया गया।

8. शिखर सम्मेलन में जिस दूसरे महत्वपूर्ण बिन्दु पर विचार विमर्श किया गया, वह यह था, कि आगामी दस वर्षों में प्रत्येक मानव की आधारभूत आवश्यकता की पूर्ति कि लिए प्रतिवर्ष 30 से 40 मिलियन डॉलर की एक अतिरिक्त राशि का फण्ड वांछनीय है जिसकी उपलब्धि 20:20 के समझौते द्वारा हो सकती है जिसके अन्तर्गत विकासशील देशों के बजट का 20 प्रतिशत भाग तथा विकसित देशों की सरकारी अनुदान की राशि का 20 प्रतिशत मानवीय प्राथमिकता वाले बिन्दुओं पर खर्च करने के लिए आवंटित की जाती है। अन्त में यह बिन्दु इस विषय में रुचि रखने वाले देशों की इच्छा पर छोड़ दिया गया।

III

9. निर्धनता, बेरोजगारी और सामाजिक एकता के सामाजिक मुद्दे कोई आकाश से नहीं गिरे हैं। न तो वे कोई अनिवार्य या अवश्यंभावी प्राकृतिक परिस्थितियां हैं तथा न वे विकासशील समाज के तार्किक परिणाम हैं।

मूलत: वे मानव निर्मित समस्याएं ज्यादा हैं। जिनका उद्‌भव विकास के दोषपूर्ण ढांचे के कारण हुआ है।

10. विश्व में पाए जाने वाले विकास के तीन ढांचों या प्रारूपों—पश्चिमी उदारवादी ढांचा, साम्यवादी ढांचा तथा पहले का उपनिवेशवाद व वर्तमान में उपनिवेशवाद के बाद का ढांचा—प्रत्येक ने अपने विशिष्ट गुणों के अनुसार उक्त तीनों सामाजिक समस्याओं के उद्‌भव व निरन्तरता में अपना योगदान दिया है।

11. पश्चिमी उदारवादी ढांचा, जो बाजार की तकनीक पर आधारित है, बहुत ज्यादा कार्यकुशल एवं उत्पादक है, परन्तु सामाजिक तौर पर बहुत ज्यादा असमान एवं पक्षपातपूर्ण है, तथा पर्यावरण के हिसाब से पूर्णत: हानिकारक है। इसकी बाजार की तकनीक एक तरफ तो पर्यावरण की कीमत पर उत्पादन में सर्वाधिक वृद्धि करती है, तथा दूसरी तरफ इसमें एक उपभोगवादी जीवनशैली की लालसा रहती है कि सामाजिक हितों की कीमत पर निजी हितों अर्थात् स्वार्थ की अधिकाधिक पूर्ति की जावे। इस ढांचे ने आवश्यक रूप से पर्यावरण असन्तुलन में वृद्धि की है तथा निर्धनता, बेरोजगारी व सामाजिक असमानता जैसी समस्याओं में वृद्धि की है। ये सब समस्याएं पहले तो औपनिवेशिक तथा उत्तर औपनिवेशिक देशों में उत्पन्न हुई तथा बाद में राष्ट्रीय स्तर पर

परस्पर निर्भर श्रम के सामाजिक विभाजन के पैदा होने के साथ इस ढांचे वाले मूल देशों में भी उत्पन्न हुई। आज की स्थिति में सभी विकसित देश, निम्न वृद्धि-दर, बहुत ज्यादा बेरोजगारी, अपराध तथा कुछ हद तक गरीबी से ग्रसित या पीड़ित हैं।

12. साम्यवादी ढांचे में, जो सर्वसत्तावादी या एकदलीय समाज के सिद्धान्त पर आधारित है, यह ढांचा जबकि आर्थिक समानता पर जोर देता है, गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता तथा बीमारियाँ आदि समस्याओं पर तुरन्त एवं अनुकूल रूप से ध्यान देता है, लेकिन इसके ढांचे में कार्यकुशलता व उत्पादकता की कमी है तथा प्राय: यह ढांचा प्राकृतिक स्त्रोतों का दुरुपयोग और बर्बादी करता है। इसका जो समष्टिगत व साम्यवादी स्वरूप है, वह एक तरफ तो पर्यावरण में असन्तुलन उत्पन्न करता है, तथा दूसरी तरफ राजनैतिक व सांस्कृतिक अधिकारों में कमी करता है—इस प्रकार एक ऐसी जीवन शैली का निमार्ण करता है जो केवल आर्थिक लाभों एवं सुविधाओं की ही चिन्ता करता है।

13. पुराना औपनिवेशिक तथा आज का उत्तर औपनिवेशिक ढांचा, जो मुख्यत: प्रभुत्ववाद तथा अधीनता के परम्परागत रूपों पर आधारित है, अभी परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है—विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में अपनाए गए भिन्न-भिन्न नमूनों के अनुसार इसमें परिर्वतन हो रहा है। इस प्रकार पूर्वी और दक्षिणी पूर्वी एशिया का जो ढांचा है, हालांकि पर्यावरण के हिसाब से इसमें कई पुराने दोष हैं, लेकिन पिछले दो दशकों से यह उच्च वृद्धि एवं रोजगार की दर वाले प्रारूप के रूप में उभरा है, जिसके परिणाम स्वरूप गरीबी एवं बेरोजगारी में काफी हद तक कमी हुई है, विकास का लेटिन अमेरिका प्रारूप, जिसे अधिकांश सम्बंधित देशों ने अपनाया है, यह भी शनै:-शनै: निर्धनता एवं गरीबी की समस्याओं से निपट रहा है, जिससे पर्यावरण की तरफ भी थोड़ा सा सुधार है। मध्यपूर्व प्रारूप का अस्तित्व तेल से प्राप्त राजस्व के ऊपर आधारित होकर सदैव की भांति बना हुआ है। लेकिन अफ्रीकन उप-सहारा क्षेत्र पर अब भी गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक बिखराव तथा पर्यावरण ह्रास अर्थात् पर्यावरण की दयनीय स्थिति का साम्राज्य बना हुआ है।

14. विकास के विभिन्न ढांचों की जो प्रचलित वर्तमान स्थिति है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि विश्व को आज एक ऐसे नए विकास प्रारूप या ढांचे की आवश्यकता है, जो एक तरफ तो, मानव समाज व प्रकृति के बीच सन्तुलन स्थापित करे, तथा दूसरी और अधिक सम्पन्न अभिजात्य वर्ग जिनके पास अत्यधिक धन है, उनमें तथा निर्धन लोग जिनके पास कुछ नही है, इन दोनों के बीच तथा साथ ही व्यक्ति और समाज के बीच भी उचित सामंजस्य स्थापित करें।

15. इस प्रकार का दुतरफा विकास ढांचा तीन आधारभूत सिद्धान्तों के आधार पर बनाया जाना चाहिए तथा बनाया जा सकता है।

(अ) प्रकृति और मनुष्य दोनों को विकास के केन्द्र में रखना।

(ब) समस्त सामाजिक असमानताओं को समाप्त कर देना—धनी-निर्धन, लिंग-समानता, वंश जाति व धर्म की असमानता, ग्रामीण व शहरी का विभेद तथा विकसित देशों का अन्तर इत्यादि।

(स) जनता को सत्ता सौंपना, विशेषकर महिलाओं व वंचित वर्ग को।

16. यद्यपि कोपनहेगन शिखर सम्मेलन में किसी आधारभूत मुद्दे को नहीं छुआ गया फिर भी यह सम्मेलन सही दिशा में एक कदम था। 28.4.1995

❋ ❋ ❋

अप्रसार सन्धि—एक अनुचित समझौता
संयुक्त राष्ट्र साधारण सभा का नियन्त्रण अपेक्षित

I

1. अप्रसार संधि पुनरावलोकन हेतु आयोजित एक माह के सम्मेलन समाप्ति के बाद बिना किसी मतदान के 178 देशों द्वारा अप्रसार सन्धि की अवधि को बिना किसी शर्त के अनिश्चित काल के लिए बढ़ा दिया गया है। अब केवल 12 देश इस सन्धि के दायरे से बाहर रहते हैं। इनमें से तीन (भारत, पाकिस्तान एवं उत्तर कोरिया) परमाणु हथियारों की क्षमता वाले हैं। इसका यह अर्थ है कि अब केवल 5 देश परमाणु हथियारों की क्षमता रखने वाले हैं तथा बाकी देश बिना परमाणु शक्ति वाले हैं जिन्होंने स्वेच्छा से ऐसा संकल्प लिया है।

2. अप्रसार सन्धि के तीन उद्देश्य हैं—परमाणु निशस्त्रीकरण, परमाणु हथियारों का अप्रसार तथा परमाणु ऊर्जा के शान्तिपूर्ण प्रयोग के अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग (अपरिवर्तनीय अधिकरों के रूप में सन्धि द्वारा मान्यता प्राप्त)।

3. सन्धि से सम्बंधित मामलों की क्या स्थिति है? इसका औचित्य या युक्ति युक्तता क्या है? अत: सन्धि के मूल पाठ की व्याख्या या परीक्षण ही आवश्यक नहीं है बल्कि इसके पीछे निहित भावना की समीक्षा आवश्यक है।

II

4. जहाँ तक सन्धि के औचित्य का प्रश्न है अथवा 5 परमाणु शक्ति वाले राष्ट्रों द्वारा परमाणु निशस्त्रीकरण में अपने गहरे विश्वास या आस्था की घोषणा का प्रश्न है, निम्नांकित तथ्य स्वयं अपनी कहानी बयान करते हैं—

प्रथम, 5 परमाणु अस्त्र धारक देशों के पास आज जितने परमाणु अस्त्र है (कुल 49900) वे 1968 में अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर किए उस समय की संख्या (41055) से कहीं अधिक है। यद्यपि शीत युद्ध की समाप्ति के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका एवं रूस ने अपने परमाणु शस्त्रों के वृहद् भण्डार को कम किया है तथापि 1994 की उनकी शस्त्र संख्या 1968 की संख्या से कहीं ज्यादा है।

द्वितीय, पांचों परमाणु अस्त्र धारक राष्ट्र विशेषकर यूनाइटेड स्टेटस निरन्तर रूप से परमाणु अस्त्रों की नई किस्म का विकास कर रहे हैं जिनका कम प्रभाव है किन्तु जो सही लक्ष्य पर मार करने की क्षमता रखते हैं। सन् 1993 में अमेरिका ने कानून द्वारा कम प्रभाव वाले परमाणु हथियारों से सम्बंधित अनुसंधान को अवैध घोषित कर दिया था, परन्तु अमेरिकन वायुसेना व जल सेना गुप्त रूप से यह अनुसंधान जारी रखे हुए हैं, उन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के अलावा जो अस्त्र-शस्त्रों के उत्पादन व व्यापार से जुड़ी हुई हैं। परमाणु अस्त्र धारक अन्य देशों में भी परमाणु हथियारों का

विकास उसी ढांचे पर चल रहा है, अन्तर केवल इतना है कि अमेरिकन इस मामले में समूचे विश्व से सम्बंध रखता है तथा अन्य देश फिलहाल तो क्षेत्रीय मामलों से ही सम्बंध रखते हैं।

तृतीय, परमाणु अस्त्र धारक पांचों राष्ट्र ऐसे स्थाई अश्वासन देने से मना करते हैं कि वे उन राष्ट्रों के खिलाफ परमाणु अस्त्रों का प्रयोग नहीं करेंगे, जिनके पास परमाणु हथियार नहीं है। जिसका बहुत अधिक ढिंढोरा पीटा गया अर्थात जिसका बहुत ज्यादा प्रचार-प्रसार किया गया, वह 'अप्रसार सन्धि पुनरावलोकन सम्मेलन' की पूर्वसंध्या को दिया हुआ 'परमाणु सुरक्षा आश्वासन' जो 11 अप्रेल 1995 का सुरक्षा परिषद का संकल्प है, बिल्कुल अपर्याप्त एवं दोषपूर्ण है। यह न केवल अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर करने वालो व हस्ताक्षर नहीं करने वालों में एक विभेदात्मक अन्तर करती है परन्तु यह क्रियान्विति के हिसाब से भी असम्भव है, और चलने योग्य नहीं है। यह सही है कि सुरक्षा परिषद का संकल्प यह आश्वासन देता है कि 'परमाणु हथियार विहिन किसी देश के विरुद्ध जो कि अप्रसार सन्धि का सदस्य है यदि कोई देश प्रकरण तत्काल सुरक्षा परिषद के ध्यान में ला सकता है कि वह अपने चार्टर के मुताबिक ऐसे कार्य से पीड़ित देश या धमकी मिलने वाले देश की सहायता के लिए तत्काल कोई कार्यवाही सुनिश्चित करे। ''लेकिन चूंकि 5 परमाणु अस्त्र धारक देश न ही केवल ऐसे देश है जो किसी परमाणु हथियार विहीन देश को धमकी दे सकते हैं कि वे उनके विरुद्ध परमाणु अस्त्र का प्रयोग करेंगे, वे वहीं देश हैं जिन्हें संयुक्त राष्ट्र की प्रणाली में वीटो की शक्ति प्राप्त है, अत: सुरक्षा परिषद भी नियम भंग करने वाले ऐसे राष्ट्र के विरुद्ध जिसको वीटो अधिकार प्राप्त है, कोई कार्यवाही करने में अक्षम रहेगी।

चतुर्थ, इस संधि में पांचों परमाणु अस्त्र धारक राष्ट्रों को एक प्रकार से एकाधिकार प्रदान कर दिया है शेष 173 हस्ताक्षरकर्त्ताओं के प्रति उनका कोई उत्तरदायित्व निर्धारित नहीं किया गया है, इस तरह एक प्रकार से एक ऐसे हथियार को जो एक लम्बे समय तक अभूतपूर्व तरीके से व्यापक विनाश कर सकता है, इस संधि के द्वारा वैधानिक करार दे दिया गया है। इस प्रकार के आतंक व भय पैदा करने वाले विनाशकारी हथियारों से दुनिया के लोगों की सुरक्षा की किसी भी प्रकार की गारन्टी प्राप्त किए बगैर कुछ का इन पर एकाधिकार कायम कर देना, संयुक्त राष्ट्र संघ की मानव अधिकार संहिता का उल्लंघन है, जो कि सभी व्यक्तियों, समूहों और राष्ट्रों को बिना किसी भय के स्वतन्त्र जीवन जीने का अधिकार प्रदान करती है।

पंचम् इस संधि ने तटस्थ राष्ट्रों को दोहरे कार्य के लिए बाध्य किया। जबकि एक तरफ तो उन्होंने 15 दिसम्बर 1994 को संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा में इस बात के लिए वोट दिया था कि परमाणु अस्त्रों के प्रयोग या प्रयोग की धमकी की वैधानिकता को अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में प्रसंग किया जाएगा अर्थात उसे चुनौती दी जाएगी, उन सभी ने यह बिन्दु अप्रेल-मई 1995 की अप्रसार संधि पुनरावलोकन

सम्मेलन में नहीं उठाया तथा बाद में उन्होंने सन्धि के अनिश्चित काल तक बढ़ाने के प्रस्ताव तथा परमाणु अस्त्र धारकों द्वारा उनके बिना शर्त प्रयोग के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर कर दिए।

छठे, अप्रसार सन्धि में कोई सत्यापन विधि नहीं है जिससे इस बात की जांच हो सके कि परमाणु अस्त्र धारक राष्ट्र अपनी जिम्मेदारियां पूरी तरह निभा रहे हैं अथवा नहीं। इससे इस बात की प्रबल सम्भावना रहती है कि परमाणु अस्त्र धारक राष्ट्र से परमाणु सामग्री तथा तकनीकी दूसरे राष्ट्रों को चली जावे। इससे सभी प्रकार के देशों के लिए सुरक्षा की जोखिम रहती है।

सातवें, इस सन्धि के कारण, परमाणु अस्त्र धारक देशों द्वारा परमाणु अस्त्र प्रसार और अनुसन्धान पर विश्व में उपलब्ध सामग्री के स्रोतों का दुरुपयोग एवं बर्बादी होगी क्योंकि अधिकांश वरिष्ठ सैन्य सेनापतियों के अनुसार, परमाणु अस्त्र परमाणु शक्ति सम्पन्न देशों के विरुद्ध तो प्रयोग किए जाने योग्य नहीं है। तथा जिन देशों के पास परमाणु अस्त्र नहीं है उनके विरुद्व परमाणु अस्त्रों का प्रयोग व्यापक मानव वध के समान होगा तथा एक युद्ध अपराध होगा।

आठवें, अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर के पहले भारत का यह कथन कि अधिकांश देश संधि की अवधि अनिश्चित काल के लिए बढ़ाने के पक्ष में नहीं है तथा हस्ताक्षर के बाद यह कथन कि 178 सदस्यों ने संधि को अनिश्चित काल के लिए बढ़ने के लिए जो सहमति दी है वह केवल संयुक्त राज्य अमेरिका के दबाव में आकर दी है, यह बात भारत की मनोगत मानसिकता या अनुभव को बताती है तथा विश्व जनमत से पृथकीकरण का संकेत देती है।

अन्तिम लेकिन और भी ज्यादा महत्वपूर्ण बात व तथ्य यह है कि पांचों परमाणु राष्ट्रों में से प्रत्येक विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका, अपने राष्ट्रवाद की भावना से ओतप्रोत होकर, विश्व के ऊपर अपनी राष्ट्रीय श्रेष्ठता स्थापित करना चाहता है। जबकि सामूहिक रूप से परमाणु राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र में तथा विभिन्न अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में अपने विशेषधिकार वाली स्थिति को कम करने वाले किसी भी कदम का एक जुट होकर मुकाबला करते हैं, वास्तविकता यह है कि आपस में ये राष्ट्र दूसरे से विवाद व शत्रुता रखते हैं तथा प्रत्येक देश यह प्रयास करता है कि वह वास्तविक रूप से श्रेष्ठ राष्ट्र के रूप में उभर सके। यही कारण है कि उनकी सैन्य रणनीति वास्तव में सभी राष्ट्रों के विरूद्ध परमाणु हथियारों के प्रयोग करने का विचार रखती हैं, चाहे उनके पास परमाणु अस्त्र हों या नहीं। संयुक्त राज्य अमेरिका की रणनीति तो इस बात पर पूर्णत: विचार व चिन्तन करती रहती है कि वैश्विक शत्रुओं द्वारा उत्पन्न किसी भी आपात स्थिति से कैसे निपटा जावे, साथ ही समस्त क्षेत्रीय चुनौतियों से निपटने के लिए किस प्रकार कदम उठाएं जावे, विशेषकर विकासशील राष्ट्रों में कतिपय प्रभावशाली व प्रभुत्व वाले राष्ट्रों से।

III

5. परमाणु अस्त्रों की चुनौती से प्राणीमात्र को लगातार एक संगीन खतरा बना रहता है। अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार परमाणु अस्त्रों का निर्माण एवं प्रयोग अमानवीय और अवैध है। सभी देशों के वैज्ञानिक व्यापक विनाश के इन हथियारों का प्रारम्भ से ही (1940) कड़ा विरोध कर रहे हैं, तथा यह मांग कर रहे हैं कि उन पर पूर्ण निषेध लागू किया जावे। मगर अफसोस कि राष्ट्रीय हित की आड़ में भ्रष्ट राजनीति के पोषकों की व्यक्तिगत सत्ता व प्रतिष्ठा की असीमित लालसा ने किसी भी स्वस्थ एवं विवेकपूर्ण सलाह को मानने से इन्कार कर दिया है।

6. मानवता का हित यह मांग करता है तथा मानवीय तर्क अधिकार पूर्वक यह कहता है कि मानव समाज के लिए यही सबसे उत्तम रास्ता है कि परमाणु अस्त्रों पर सब प्रकार का नियन्त्रण संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा को सौंप दिया जाना चाहिए, तथा अकेले उसे ही, विश्व की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार सुरक्षा परिषद द्वारा बिना किसी दखल के परमाणु अस्त्रों के क्षेत्र के समस्त भावी कार्यक्रम को निर्धारित करना चाहिए—इस प्रकार अन्तिम तौर पर उनके उन्मूलन या समाप्ति की ओर हो जाए। संयुक्त राष्ट्र आम सभा के नियंत्रण के बिना परमाणु अप्रसार संधि एक अन्यायपूर्ण एवं अतर्कसंगत संधि बन जाती है।

परमाणु अस्त्र धारक देशों के दिमाग में जो राष्ट्रीय श्रेष्ठता की भावना है, उसके आधार पर तो यही कहा जा सकता है, कि 1996 के लिए पांचों परमाणु राष्ट्रों द्वारा प्रस्तावित काम्प्रीहैन्सिव टेस्ट बैन ट्रीटी (CTBT) भी परमाणु शस्त्रों पर प्रभावित रोक के लिए कोई गारन्टी नहीं होगी।

7. अप्रसार सन्धि के लिए भारत का विरोध अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर तो विवेकहीन है तथा राष्ट्रीय तौर पर बहुत नुकसानप्रद है। यह 1947 के बाद के भारत पाक शीतयुद्ध तथा हथियारों की होड़ को परिवर्तित करती है जिसका परिणाम होगा या तो एक परमाणु युद्ध या दोनों देशों की ही अर्थव्यस्था खराब होती जाएगी (जो सैन्यीकरण का एक निश्चित परिणाम है)।

8. भारत का राष्ट्रीय हित यह मांग करता है कि पहले तो भारत जम्मू-कश्मीर पर पाकिस्तान से एक साफ-सुथरा समझौता करे (यथा जम्मू-कश्मीर प्रान्त पर भारत-पाक का एक संयुक्त नियन्त्रण रखा जाए तथा इसके आठों ही नस्लीय क्षेत्रों को सर्वाधिक स्वायत्तता दी जावे) तथा उसके बाद पाकिस्तान के साथ भारत भी परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर कर दे तथा अप्रसार सन्धि में शामिल राष्ट्रों के समुदाय के बीच भी तथा बाहर भी इस बात की पुरजोर मांग करे कि परमाणु हथियारों का समूचा नियन्त्रण संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा को सौंप दिया जावे। 18.5.1995

❋ ❋ ❋

7 मई, 1995 को चंडीगढ़ में आयोजित एक सेमीनार में प्रस्तुत

मानवाधिकारों के प्रश्न पर और आगे विशेषकर पंजाब व कश्मीर के सन्दर्भ में

I

1. मानवधिकार के प्रश्न में, इसके साधारण शाब्दिक अर्थ को सन्दर्भित किया जाए तो, मानव समाज में अन्त:सम्बंधों का एक दो तरफा रूप निहित है। एक तरफ तो इसका अर्थ न्यायोचित अधिकारों की एक शृंखला से है जिसका प्रत्येक मानवमात्र अधिकारी है, तथा जिसे समाज की किसी भी सत्ता द्वारा नहीं छीना जाना चाहिए, दूसरी और इसका अभिप्राय समाज के अधिकारों से है जिन्हें नहीं तोड़ने की अपेक्षा प्रत्येक व्यक्ति से की जाती है ताकि समाज की जटिल प्रक्रिया सुचारू रूप से चलती रह सके। इस प्रकार व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों के प्रति सम्मान और समाज के प्रति व्यक्ति के दायित्वों के बीच उचित संतुलन कायम किया जाना चाहिए। अगर यह सन्तुलन कायम नहीं किया जाए तो सम्भव है एक या दूसरे तरफ के अधिकारों का उल्लंघन हो।

2. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखें तो ज्ञात होता है कि मानव अधिकारों के मुद्दे का रूप समाज के विभिन्न रूपों में भिन्न भिन्न रहा है और इसका निश्चय सामाजिक विकास के स्तर के आधार पर हुआ है। इस प्रकार प्राचीन काल में जहाँ मात्र भोजन एकत्र करने वाले समाज ने एक कैदी को प्रत्येक मानवीय अधिकार से वंचित रखा तथा उसे या तो मृत्यु का दण्ड दिया या जीवनभर गुलाम बनने का, वहीं आधुनिक समय में एक कैदी भी, अन्य मनुष्यों की तरह, जीवन और सुरक्षा के अधिकार का उपयोग करता है। कुछ शताब्दी पहले ही, एक चोर को शारीरिक यातना का सबक सिखाने के लिए उसके हाथ काट दिये जाते थे, लेकिन अब निकृष्टतम अपराधियों व बदमाशों को भी शारीरिक यातना देने पर कानूनी पाबन्दी लगा दी गई है, इस उद्देश्य से कि उन्हें अच्छे नागरिक के रूप में परिवर्तित किया जा सके।

3. मानव अधिकारों के स्वरूप में परिवर्तन का कारण समाज के निरन्तर परिवर्तनशील वैज्ञानिक, तकनीकी तथा सामाजिक ज्ञान में निहित है, जिसकी परिणिति सामाजिक श्रम के विभाजन में सतत परिवर्तनों के रूप में होती है, जो एक समाज के सैद्धान्तिक, व्यावहारिक तथा संगठनात्मक ढांचे का निमार्ण करते हैं।

II

4. मानव अधिकारों की ऐतिहासिक प्रक्रिया के नए स्वरूप की शुरूआत द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुई, जबकि राष्ट्रों के नाम पर युद्ध पूर्व क्रूरता तथा युद्ध के

दौरान नाजीवाद, फासीवाद, सैनिकवाद तथा राष्ट्र के नाम पर सर्वाधिकारवाद की क्रूरता के विरुद्ध व्यापक असन्तोष ने विशेषकर यूरोप में, यह मांग पैदा की कि विश्व एवं राष्ट्रों का मानवीय आधार पर पुनर्गठन किया जावे। इसका परिणाम यह हुआ कि 1945 के मानवीय एवं उदारवादी चार्टर के आधार पर संयुक्त राष्ट्र और इससे सम्बंधित विविध संगठनों का प्रादुर्भाव हुआ। तीन वर्ष बाद, बिना किसी मतभेद के संयुक्त राष्ट्र ने 1948 की मानव अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय अर्थात् वैश्विक घोषणा को अपनाया जिसमें सामाजिक-राजनैतिक तथा सामाजिक-आर्थिक दोनों प्रकार के अधिकारों पर पारस्परिक समझौते की स्वीकृति प्रदान की, जिनमें से एक समानता एवं सामाजिक न्याय के मानदण्डों से सम्बंधित था और दूसरा नागरिक एवं राजनैतिक अधिकारों से सम्बंधित था। अब तक संयुक्त राष्ट्र बाईस पारस्परिक समझौतों को स्वीकार कर चुका है जिनमें से कुछ अपने अन्तिम चरण में है। संयुक्त राष्ट्र के घोषणा पत्र तथा इसके द्वारा स्वीकृत घोषणा पत्र तथा इसके द्वारा स्वीकृत अनेक समझौतों की थोड़े से देशों को छोड़ कर, लगभग सभी देशों द्वारा पुष्टि कर दी गई है।

5. शीतयुद्ध की स्थिति की समाप्ति के साथ ही, मानव अधिकारों का प्रश्न विश्व समाज के लिए प्रमुख विचारणीय मुद्दा बन गया है। मानव अधिकारों के अभियान ने समूचे विश्व में नई गति प्राप्त की है। आज शायद ही कोई देश इसकी उपेक्षा या इस पुकार की अनदेखी करता होगा।

6. हालांकि, समग्र रूप से विश्व में तथा पृथक् से प्रत्येक देश में, मानव अधिकारों की स्थिति अधिक सन्तोषजनक नहीं है, यद्यपि वह भूतकाल से कुछ बेहतर है। कुछ देश तो (मुख्यत: विकसित देश) केवल नागरिक एवं राजनैतिक अधिकारों पर ही जोर देते हैं, जबकि अन्य देश (मुख्यत: विकासशील देश) केवल आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर ही जोर देते हैं। सत्तावादी एवं केन्द्रवादी राज्य तो दोनों ही के प्रति उदासीन है, वे न तो प्रथम प्रकार के अधिकारों की ओर धयान देते हैं न दूसरे प्रकार के अधिकारों पर।

7. विश्व की आधी से भी अधिक जनसंख्या अब भी पर्याप्त भोजन, सुरक्षित या स्वच्छ जल, स्वास्थ्य, रक्षा, आवास व शिक्षा तक पंहुच आदि से और कुछ अत्याचार, भ्रष्ट न्याय व्यवस्था एवं कानून की क्रियान्विति करने वाली भ्रष्ट संस्थानों से मुक्ति, जैसे मानवीय अधिकारों से वंचित किए जाने की स्थिति से पीड़ित है। संयुक्त राज्य अमेरिका जो विश्व को मानवाधिकारों की शिक्षा देता है तथा दूसरे देशों में लोगों को मानव अधिकारों से वंचित किए जाने की स्थिति पर आंसू बहाता है—वह उन मदों पर जिन्हें जनकल्याण कहते हैं अपने सकल राष्ट्रीय उत्पाद का केवल एक प्रतिशत ही खर्च करता है, जबकि वहां की 14 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे रहती है।

तृतीय विश्व के अनेक देश सार्वजनिक स्रोतों को लूटने तथा मानव अधिकारों पर आक्रामण करने के लिए राष्ट्रवाद एवं विकास का प्रयोग करते हैं।

8. 1948 का संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र तथा 1966 के दो समझौते, मानव परिवार के समस्त सदस्यों के लिए मानवधिकारों के कार्यक्रम की संरचना करते हैं। समस्त विश्व द्वारा स्वीकार किए गए कार्यक्रम को, प्रत्येक मानवीय संगठन द्वारा मानव-अधिकारों के लिए इन्हें एक मानदण्ड पैमाना या मानक माना जाना चाहिए।

III

9. भारत में 1947 के बाद के काल का मानव अधिकारों का इतिहास पूर्णत: निराशाजनक है। संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार घोषणापत्र एवं समझौते पर सर्वप्रथम हस्ताक्षर करने वाला होने के बावजूद भी, तथा अपने संविधान में कतिपय मानवाधिकारों की स्वीकृति प्रदान कर विकासशील देशों का अगुआ होने के बावजूद भी, भारत ने इस अवधि के दौरान लगातार मानवाधिकारों के उल्लंघन की नीति का ही अनुसरण किया है।

10. आज देश में मानव अधिकारों का दृश्य बहुत ही धूमिल एवं अन्धकारमय है। हजारों राजनैतिक कैदी, जमीर के कैदियों सहित, जेलों में पड़े सड़ रहे हैं। कैदियों पर नियमित रूप से अत्याचार किए जा रहे हैं तथा बीसियों व्यक्ति पुलिस या सेना की हिरासत के दौरान अमानवीय यातनाओं के कारण मारे जाते हैं। पिटाई, लातें मारना, आंखों पर पट्टी बांध देना, बलात्कार करना, विद्युत करन्ट लगा देना तथा सिगरेट से जलाना, आदि कुछ अत्याचार के मानदण्डों के कुछ प्रचलित तरीके हैं। हिरासत में रखे जाने वाले व्यक्तियों को जलील या बेइज्जत किया जाता है, डराया, धमकाया जाता है तथा तफ्तीशकर्ताओं को लगातार रिश्वत दिए जाने को मजबूर किया जाता है। यदि पीड़ित व्यक्ति या उसके रिश्तेदार, कानून की पालना करवाने वाले कर्मचारियों द्वारा मानवाधिकार के उल्लंघन के खिलाफ शिकायत या रिपोर्ट दर्ज कराने का प्रयास करते हैं तो पुलिस आमतौर पर रिपोर्ट दर्ज करने से मना कर देती है और कभी कभी शिकायत कर्ताओं को धमकाती है अथवा दण्डित भी करती है तथा उन्हें झूठे मुकदमों में फंसाने का प्रयास भी करती है। यदि न्यायालय भी पुलिस को रिपोर्ट दर्ज करने का आदेश देते हैं, तो भी न्यायालय की कार्यवाही में रुकावट डाली जाती है या विलम्ब किया जाता है।

11. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (जो सैद्धान्तिक एवं संगठनात्मक दोनों रूपों में सरकार के अनुरूप व समर्थक है) के अध्यक्ष श्री रंगनाथ मिश्र ने ही हाल ही में यह बताया है कि भारत में मानवाधिकारों का व्यापक पैमाने पर दुरुपयोग हो रहा है—विशेष कर कश्मीर, पंजाब व उत्तरी पूर्वी राज्यों में। पूरे देश भर में, ऐसे अनेक स्पष्ट

उदाहरण हैं जिनमें इज्जत के साथ रहने के अधिकार को छीना गया है। अपने अपराध को उगलवाने के लिए हत्या, बलात्कार तथा थर्ड डिग्री तरीकों की कहानियों से तथा हिरासत में लिए व्यक्तियों को मूलभूत सुविधाओं से इन्कार किए जाने की घटनाओं से न्यायपालिका तथा कार्यपालिका दोनों की फाईलें भरी पड़ी हैं।

12. राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो द्वारा एकत्र किए गए आंकड़े बताते हैं कि सन् 1990 से 1992 के बीच में पुलिस हिरासत में 258 बलात्कार के मामले तथा 197 मौतों के मामलों होने की रिपोर्ट मिली। राष्ट्रीय पुलिस आयोग ने 1977 में आठ राज्यों में पुलिस ज्यादती एवं हिरासत में मौतों की घटनाओं का विश्लेषण एवं समीक्षा की तो पाया कि 17 न्यायिक जांचों में से 11 में, 82 मजिस्ट्रेट जांचों में से 37 में तथा अन्य अधिकारियों द्वारा की गई 430 जांचो में से 23 में पुलिस को दोषी ठहराया था। आयोग ने सिफारिश की थी कि हिरासत में मौतों के प्रत्येक मामले में न्यायिक जांच का स्थाई कानूनी प्रावधान किया जावे।

13. फरवरी 94 में उच्चतम न्यायालय ने यह टिप्पणी की थी—''इस न्यायालय ने देश को यह बताने का निश्चय किया है कि किस प्रकार की पुलिस के लिए वे (देशवासी) टैक्स का भुगतान कर रहे हैं इन पुलिस अधिकारियों को पूरी अवधि तक दण्ड भोगने को मजबूर किया जावे तभी वे सबक सीखेंगे।'' कुछ वर्ष पूर्व, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश ने यह टिप्पणी की थी कि भारतीय पुलिस अपराधियों की सबसे बड़ी संगठित गैंग है।

14. इतिहास से जानकारी मिलती है कि मध्ययुग में पुलिस एक भय एवं दमन की संस्था थी। ब्रिटिश औपनिवेशक साम्राज्य ने भी व्यापक स्तर पर लोगों को डरा ध मकाकर अपना साम्राज्य कायम रखने के लिए इसी पुलिस ढांचे को लगातार चलने दिया। लेकिन 1947 के बाद के शासक तो सभी पूर्ववर्ती शासकों से आगे बढ़ गये। राजनैतिक प्रक्रिया का अपराधीकरण करके उन्होंने राजनेता- पुलिस व अपराधियों के गठबन्धन को जन्म दिया है जिसने पुलिस को एक ऐसी सशस्त्र गैंग में बदल दिया है जिसके पास लोगों को भयाक्रान्त करने, उन्हें लूटने एवं अपनी इच्छानुसार उन्हें मारने तक का लाइसेंस है। यही कारण है कि देश में पुलिस के प्रति भयंकर भय व्याप्त है। आज के मानदण्डों के अनुसार, पुलिस का आचरण ही वह सर्वाधिक अच्छा ढंग है जिसके आधार पर समाज की सभ्यता के स्तर को जांचा जा सकता है। विकसित देशों में किसी कष्ट के समय सहायता के लिए पुलिस के पास जाते हैं, लेकिन हमारे देशवासी अपराधियों एवं चोर लुटेरों से भी ज्यादा पुलिस से भय खाते हैं।

15. लंदन स्थित एमनेस्टी इन्टरनेशनल की जनवरी 1995 की रिपोर्ट में यह

कहा गया है—''भारत के सभी 25 प्रान्तों में से प्रत्येक में अत्याचार एक व्यापक एवं रोजाना की प्रक्रिया बन गई है। एमनेस्टी इन्टरनेशनल की 1994 की रिपोर्ट में यह आरोप लगाया गया है कि 1958 व 1992 के बीच भारत में, जम्मू कश्मीर व पंजाब को छोड़कर, हिरासत में कुल 455 मौतें हुई हैं। केवल मात्र 1993 में देश में हिरासत में कोई 36 मौतें हुई हैं। इन अभागे लोगों में से 10 ने तो देश की राजधानी में अपने प्राण गंवाए। मानवाधिकारों के साथ साथ, हमारे लोगों में से 50 प्रतिशत तो आधे भूखे सोते हैं, 48 प्रतिशत निरक्षर रह जाते हैं तथा 30 प्रतिशत अपने सिर पर बिना किसी छत के खुले में सोते हैं।

16. भारत में मानवाधिकारों की जो स्थिति है वह अभिजात्य शासक वर्ग के सामान्य जनता के प्रति अमानवीय दृष्टिकोण का जीता जागता उदाहरण है, देश के वे आम आदमी जिनमें अधिकांशत: महिलाएं, अल्पसंख्यक, निर्धन लोग आते हैं तथा वे सभी लोग जिनका राजनैतिक दलों, संगठन या व्यापार में कोई स्थान या लक्ष्य नहीं है। द टाइम्स ऑफ इण्डिया द्वारा कराए गए सर्वे के अनुसार, इसके 70 प्रतिशत पाठक, जिनमें अधिकांशत: भारत के उच्च व अभिजात्य वर्ग के लोग हैं, क्रूर टाडा अधिनियम को जारी रखने के पक्ष में हैं। ऐसा इसीलिए है क्योंकि वे जानते हैं कि टाडा पांच सितारा अपराधियों अर्थात उच्च कोटि के अपराधियों के लिए नहीं है—प्रतिभूति घोटाला करने वाले, बैंक की राशि का गबन करने वाले, तस्कर, प्रदुषण फैलाने वाले, मिलावट करने वाले, काला बाजारी करने वाले और ऐसे ही अन्य अपराधी टाडा में व्यवहारिक तौर पर नहीं आते हैं। वे यह भली भांति जानते हैं कि राजनैतिक प्रक्रिया का अपराधीकरण, कुछ विशेष अधिकार वाले लोगों को तो सुरक्षा प्रदान करता है तथा वंचित लोगों को अपना शिकार बनाता है, कौन नहीं जानता कि, आज किसी भी महत्वपूर्ण व्यक्ति के लिए, देश के किसी भी भाग में, उसके मूल निवास स्थान सहित, पुलिस के बिना चलना फिरना असम्भव है। विशिष्ट व्यक्तियों की सुरक्षा का खर्चा जो 1950 के दशक मे केवल कुछ ही करोड़ रुपए था, अब बढ़ कर 500 करोड़ रुपए हो गया है, जो केन्द्र शासित चण्डीगढ प्रदेश की वार्षिक योजना की लागत 88 करोड़ के 5 गुणा से भी अधिक है।

IV

17. जम्मू-कश्मीर एवं पंजाब में मानव अधिकारों के उल्लंघन की मात्रा एवं व्यापकता तो गम्भीर रूप से अस्त-व्यस्त और व्याकुल करने वाली है। जम्मू कश्मीर तो हकीकत में सैनिक शासन के नीचे रह रहा है तथा पंजाब में भी जो राजनैतिक प्रक्रिया चल रही है वह सुरक्षा बलों पर आधारित है।

(अ)

18. एमनेस्टी इन्टरनेशनल की नवीनतम रिपोर्ट जो जनवरी 1995 में जारी की गई है, वह तो कश्मीर में भारत द्वारा मानवाधिकारों के हनन का एक गम्भीर कलंक या दोषारोपण है। इस रिपोर्ट में दो परिशिष्ट संलग्न हैं जिसमें 175 उन लोगों की सूची है जो 1990 से 1994 के बीच सुरक्षा बलों की हिरासत के दौरान मरे हैं, आरोप है कि गिरफ्तारी के बाद इन पर अत्याचार किए गए या इन्हें गोली से उड़ा दिया गया। यह रिपोर्ट कश्मीर में मानवाधिकारों की क्रियान्विति के सरकारी दावे को पूर्णतया नकारती है।

19. एक रिपोर्ट में सशस्त्र सैन्य संगठनों द्वारा मानव अधिकारों के दुरुपयोग की स्थिति का भी जिक्र है तथा रिपोर्ट में निर्दोष नागरिकों का सैनिकों द्वारा अपहरण, हत्या एवं दमन की कार्यवाही की निन्दा व भर्त्सना की गई है।

20. उक्त रिपोर्ट में एमनेस्टी इन्टरनेशनल ने इस बात पर चिन्ता व्यक्त की है की भारत सरकार पिछले मानवाधिकार हनन के मामले की निष्पक्ष जांच तथा भविष्य में हिरासत में अत्याचार व मौतें रोकने के लिए ठोस कदम उठाने की मांग को भी टालती रही है।

21. एमनेस्टी इन्टरनेशनल ने यह मांग की है कि रिपोर्ट के संलग्न सूची में वर्णित अत्याचार एवं हिरासत में हुई मौतों के समस्त मामलों में जांच के लिए अब त्वरित कार्यवाही की जावे तथा जो लोग भी हिरासत में अत्याचार व मौतों के लिए जिम्मेदार है उन्हें न्यायालय के कटघरे में लाकर खड़ा किया जावे। बन्दियों की सुरक्षा के लिए एक आयोग का गठन किया जावे तथा बन्दियों की सुरक्षा व्यवस्था में वृद्धि की जाने की व्यवस्था की जावे तथा बन्दियों का सम्मान किया जावे। सरकार को चाहिए कि वह अतिरिक्त न्यायिक सारांश निकालने या मध्यस्थ के लिए संयुक्त राष्ट्र के विशेष संवाददाताओं को आमन्त्रित करें, दमन व अत्याचार पर संयुक्त राष्ट्र के विशेष तथा थोपे गए एवं अनिच्छापूर्वक खो जाने या अदृश्य हो जाने की घटनाओं पर संयुक्त राष्ट्र के विशेष कार्यवाही दल को जम्मू कश्मीर में आमंत्रित किया जावे। कश्मीर में गम्भीर रूप से किया गया मानवाधिकार हनन का मामला एक प्रकार का दृढ़ एवं सतत प्रारूप का तरीका है। भारत सरकार व अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को अब इनकी अनदेखी करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

22. कश्मीर के साथ स्वच्छ एवं सही बर्ताव करने के सरकार के दावे का सन्दर्भ देते हुए एमनेस्टी इन्टरनेशनल पूछता है—''यदि सरकार को कुछ भी छिपाना नहीं है, तो यह हमेशा निष्पक्ष जांच की मांग को क्यों दबा देती है तथा मानवाधिकारों के उल्लंघन को रोकने के लिए प्रभावी कदम उठाने से पीछे क्यों हट जाती है। मानव

अधिकारों से सम्बंधित संगठनों को कश्मीर में मुक्त रूप से प्रवेश करने से लगातार मना करने की बात, सरकार के घाटी में खुले दिमाग से एवं उदारता से काम करने के दावे को खोखला साबित कर देती है।''

23. न्यूयॉर्क स्थित ह्यूमन राइटस वॉच ने दिसम्बर 1994 में जारी अपनी वार्षिक रिपोर्ट में कहा है कि मानवाधिकारों का हनन व दुरुपयोग बढ़ता ही जा रहा है, विशेषकर हिरासत में संदिग्ध उग्रवादियों की मौतों के मामले में।

(ब)

24. पंजाब में अभी अस्थिर एवं परिवर्तन की स्थिति चल रही है। पंजाब में अस्थिर एवं गिल द्वारा स्थापित व थोपी गई शांति एक सामान्य नजरिये से सामान्य स्थिति का भ्रम प्रदान कर सकती है, तथा नरसिंह राव सरकार के लिए, पंजाब की सुरक्षा बलों पर आधारित बेअन्त सरकार, एक चुनावी लाभ के रंगसर का पत्ता हो सकती है। लेकिन पंजाब की आधारभूत स्थिति—सेना एवं सेना के अतिरिक्त अन्य बलों का गिराव, पंजाब पुलिस की दस नई बटालियनों का गठन, अवैध गिरफ्तारी का चलना, नागरिकों का दमन, संदिग्ध व्यक्तियों पर अत्याचार, गैर-न्यायिक हत्याएं, थर्ड डिग्री तरीकों का प्रयोग, पंजाब से सर्वाधिक टाडा बन्दियों की गिरफ्तारी, ये सभी बातें यह संकेत देती हैं कि पंजाब में वर्तमान की स्थिति न तो सामान्य है तथा न ही खुशगवार। यह स्थिति इशारा कर रही है कि पंजाब में सेना द्वारा नियन्त्रित शांति आन्दोलन ने केवल एक कमजोर व्यवस्था ही पुनर्स्थापित की है। पंजाब समस्या का आधारभूत कारण अभी पहले की तरह ही प्रभाव में है।

25. पंजाब पुलिस की अत्याचार एवं ज्यादतियां, उदाहरणार्थ पश्चिम बंगाल की सरकार को सूचित किए बिना ही एक संदिग्ध उग्रवादी एवं उसकी पत्नी की कलकत्ता के समीपवर्ती देहात में पंजाब पुलिस द्वारा हत्या कर देना, चार महिला जेबकतरों के माथे पर गुदवा देना, दिल्ली में दो पत्रकारों की पिटाई, आदि—आज भी उतने ही क्रूर एवं अशिष्ट दृष्टान्त है जैसे कि उग्रवाद की प्रारम्भिक या यौवनावस्था में थे।

26. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने अपनी नवम्बर 1994 की रिपोर्ट में सरकार को यह चेतावनी दी है कि मानवाधिकार हनन के सम्बंध में उचित कार्यवाही करने में विलम्ब करना पंजाब में आतंकवाद की पुनरावृत्ति का एक संभावित कारण होगा। आयोग की रिपोर्ट ने गिरफ्तारी, हिरासत में रखने एवं संदिग्धों को मारने की पुलिस की अपनी तानाशाही को समाप्त करने के लिए अनगिनत कदम उठाए हैं।

27. खालिस्तानी उग्रवाद के पिछले 10 वर्षों के दौरान, सरकारी आंकड़ों के मुताबिक पंजाब में 21119 लोग मारे गए हैं—जबकि गैर सरकारी अनुमानों के आधार

पर यह संख्या 45000 से 188000 तक है।

ह्यूमन राइटस वॉच के अनुसार ऐसे खोए हुए लोगों की संख्या 10000 तक पहुंच चुकी है जिनका अता पता अब भी नहीं लग पाया है। दूसरे संगठनों का अनुमान है कि यह संख्या 20000 से 50000 है, जबकि सरकार का कहना है कि ये लोग सैन्य एवं उग्रवादी प्रशिक्षण के लिए पाकिस्तान चले गए हैं तथा अभी तक वापिस घुसपैठ का इन्तजार कर रहे हैं। एक व्यापक विश्वास एवं मान्यता यह भी है कि सुरक्षा बलों द्वारा उनका सफाया कर दिया गया है।

V

28. नागरिक अधिकारों अर्थात् स्वतन्त्रता की वर्तमान स्थिति बिल्कुल ही निराशाजनक होने के बावजूद भी, मानवीय अधिकारों के हनन के प्रति जनता चुप और उदासीन क्यों है? ऐसा विभिन्न कारणों से हो सकता है—

प्रथम यह कि सरकार स्थाई तौर पर अपना ध्यान आतंकवादी हिंसा पर केन्द्रित कर देती है इसके कारणों पर कोई ध्यान नहीं देती। लेकिन मूल प्रश्न यह है कि वे कौन सी बातें है जो कुछ व्यक्तियों को आतंकवाद की ओर मुड़ने के लिए प्रवृत्त करती हैं? क्या यह विदेशों के द्वारा उकसाया गया कदम है अथवा देश में ही उत्पन्न एक आन्दोलन है? समग्र ऐतिहासिक अर्थात् पिछला अनुभव यह बताता है कि सामूहिक आतंकवाद तो सामान्यत: एक संगठन या ढांचे की बदला लेने की भावना के विरुद्ध प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न व विकसित हुआ है, जबकि व्यक्तिगत आतंकवाद प्राय: अपना ही हित साधन करने वाले तथा बदले की भावना से प्रेरित होने वाले विशिष्ट संगठन या प्रणाली से उत्पन्न हुआ है। भारत में प्रचलित बहुसंख्यक के सिद्धान्त वाला राष्ट्रवाद ही प्राथमिक तौर पर देश में आम साम्प्रदायिक हिंसा तथा कश्मीर, पंजाब व उत्तर पूर्व में अल्पसंख्यकों के उग्रवाद के लिए जिम्मेदार है, जबकि अवसरवाद की राजनीति जिसे सभी प्रमुख दलों का समर्थन प्राप्त है, भारतीय राजनैतिक प्रक्रिया के अपराधीकरण के इस वास्तविक कारण को छिपा कर, सरकार आम जनता को सदैव भ्रमित करने का प्रयास करती है।

दूसरे, सरकार लगातार इस बात पर जोर देती है कि चूंकि आतंकवादी मानव अधिकारों का हनन करते हैं अत: सुरक्षा बलों को उनसे अच्छी तरह निपटने के लिए पूरी छूट देनी चाहिए, और सुरक्षा बल मानवाधिकारों का कितना हनन करते हैं यह स्पष्टत: सर्वविदित है, इस प्रकार सरकार अपनी संवैधानिक एवं कानूनी जिम्मेदारी से बचना चाहती है।

तीसरे, सरकार बार बार यह दोहराती है कि भारत की मानवता एवं करुणा पर आधारित परम्परागत संस्कृति और मानव अधिकार एक दूसरे के पर्याय हैं—इस प्रकार

सरकार एक दयापूर्ण एवं मानवीय विरासत की उत्तराधिकारी होने का नाटक करती है। लेकिन हमारे पुरातन अतीत के वास्तविक वसीयतनामे—जातिवाद, बालहत्या, सतीप्रथा आदि जिन्होंने हमारे आधे से अधिक लोगों को कष्टप्रद जीवन जीने के लिए बाध्य किया है—इस दावे को नकारात्मक घोषित कर देते हैं।

चौथे, सरकार बार-बार इस बात का जोर शोर से प्रचार करती है कि मानव अधिकारों के लिए, गहरा सम्मान भारतीय संविधान का मूलाधार है, इस प्रकार संविधान संचालक के रूप में सरकार, अपनी एक मानववादी शक्ल पेश करती है लेकिन भारतीय संविधान की सत्तावादी एवं केन्द्रवादी प्रवृत्ति और इसकी खतरनाक व क्रूर कानूनों के माध्यम से क्रियान्विति—जैसे टाडा, राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, सशस्त्र बल विशेष शक्ति अधिनियम, सरकारी दावे को अस्वीकार करते हैं, अर्थात् नकारते हैं।

पांचवें, रोजाना दोहराई जाने वाली प्रचलित सरकारी उक्ति कि आतंकवाद से राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा है, लोगों को यह धारणा रखने को बाध्य करती है कि चूंकि राष्ट्र को आतंकवाद का खतरा है अत: सरकार को लोगों के मूलभूत अधिकारों की रक्षा के लिए मजबूर नहीं किया जाना चाहिए। इस प्रकार यह स्थिति पुलिस द्वारा किए जा रहे अत्याचार, हिरासत में हुई मौतों तथा न्यायालय के अलावा दिए गए दण्ड को उचित ठहराती है तथा सरकार को मानवाधिकार उल्लंघन के आरोप से बचाती है।

छठे और अन्तिम, पर महत्वपूर्ण, मानव अधिकारों के हनन के विरुद्ध जनता की निष्क्रिय प्रतिक्रिया इस कारण है कि जनता का विश्वास अवसरवाद की उस राजनीति में नहीं है जिसका पालन सभी प्रमुख राजनैतिक दलों द्वारा किया जाता है। इस चालाकी भरी स्थिति से बाहर निकलने का कोई विकल्प उपलब्ध नहीं होने की स्थिति ही व्यापक निष्क्रियता या उदासीनता पैदा करने के लिए जिम्मेवार है।

VI

29. निम्नांकित कदम मानव अधिकारों की बदतर होती स्थिति को रोकने तथा बदलने के लिए हमारी मदद कर सकेंगे—

(क) लोगों में एक वैज्ञानिक विवेकपूर्ण दृष्टिकोण विकसित करके तथा उनमें प्रजातान्त्रिक व्यवहार का विकास करके, उनमें एक दृष्टिकोणात्मक परिवर्तन लाया जाए।

(ख) अपने आप को विश्व-सभ्यता का एक मात्र मार्ग दर्शक मानने की साम्प्रदायिक व ऐतिहासिक विचार धारा का त्याग किया जावे तथा इस हकीकत या वास्तविकता को स्वीकार किया जावे कि अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृति के विकास में सभी लोगों का योगदान है।

(ग) हमारी अधिनायकवादी एवं केन्द्रित संवैधानिक व्यवस्था को एक पूर्णरूपेण संघीय एवं विकेन्द्रित के रूप में परिवर्तित किया जाए, जिसमें राज्यों को सर्वाधिक स्वायत्तता प्रदान की जावे, निर्णय लेने का अधिकार लोगों को ऊपर से नीचे तक दिया जावे, गुप्त या छिपी हुई संवौधानिक खामियों को पूरा किया जावे। एक विशुद्ध एवं यथोचित धर्म निरपेक्षवाद (जो धर्म को राज्य से पृथक करती है) तथा सामाजिक न्याय और समानता आदि की स्थापना पर जोर दिया जावे।

(घ) समस्त सामाजिक विवादों (कश्मीर, आसाम, उत्तरी पूर्वी राज्यों तथा पंजाब के सशस्त्र आन्दोलनों सहित) का निपटारा बातचीत के जरिए किया जावे तथा मुकाबले, मुठभेड़ या असहिष्णुता की राजनीति का त्याग किया जावे।

(ड़) विकास का एक टिकाऊ दृष्टिकोण अपनाया जावे, जो एक तरफ तो प्रकृति की सुरक्षा में विश्वास रखता है तथा दूसरी तरफ मानव अधिकारों विशेषकर वंचित वर्गों के अधिकारों की सुरक्षा करते हुए जीवन-शैली की भोगवादी विचारधारा का त्याग करने में विश्वास रखता है।

(च) शस्त्रो पर कम धन खर्च किया जावे, अधिक धन, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य आधारभूत मदों पर खर्च किया जावे जो आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों के विकास के लिए आवश्यक है।

(ज) विभिन्न मानवाधिकार संगठनों को जम्मू कश्मीर व पंजाब में प्रवेश की अनुमति दी जावे तथा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठनों के बीच सहयोग में वृद्धि की जावे।

(झ) समस्त प्रकार के कानूनों में सुधार किया जावे, जैसे कि कानून की क्रियान्विति करने वाले समस्त संगठन अपने से सम्बंधित समस्त संवैधानिक एवं कानूनी जिम्मेदारियों का निर्वहन करें, हिरासत की अवधि में, बलात्कार एवं हत्या सहित, समस्त अत्याचारों के आरोपों की समुचित समय में न्यायिक जांच करने की स्थाई विधिक प्रावधान किया जावे तथा ऐसी जांच के परिणाम का तुरन्त सार्वजनिक प्रकाशन किया जावे, हिरासत के परिसर में प्रवेश के पूर्व कैदियों का स्वास्थ्य परीक्षण किया जावे तथा बाद में भी नियमित परीक्षण किया जावे समस्त बन्दियों को गिरफ्तारी से 24 घंटे के भीतर किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष अवश्य पेश किया जावे तथा बन्दी को गिरफ्तारी के कारणों से अविलम्ब अवगत कराया जावे, कैदी के रिश्तेदारों को उसकी गिरफ्तारी की तुरन्त सूचना दी जावे, कैदी के रिश्तेदारों व वकीलों को उससे तुरन्त मिलने दिया जावे, कैदियों को पुलिस एवं सैन्य हिरासत में अधिक लम्बे समय तक रखने की प्रणाली का अन्त किया जावे, हिरासत की अवधि में हुए अत्याचारों या दुष्कर्म करने वाले सुरक्षा कर्मियों पर मुकदमा किया जावे और पीड़ित व्यक्ति के

पुनर्वास की व्यवस्था की जावे तथा ऐसा ही गायब हो चुके या गुमशुदा लोगों के परिवारों के साथ भी किया जावे तथा उन सभी राजनैतिक बन्दियों को छोड़ दिया जावे जिनके विरुद्ध हिंसा का कोई आरोप नहीं है।

(ञ) समस्त सशस्त्र आतंकवादी संगठनों से अपील की जावे व उन्हें प्रेरित किया जावे कि वे मानववादी कानून के मूलभूत मानदण्डों का सम्मान करे (जिसकी यह अपेक्षा है कि हिंसा में भाग लेने वाले समस्त लोगों के साथ भी दयापूर्ण व्यवहार किया जाएगा), वे जेनेवा कन्वेशन के अनुच्छेद 3 में विश्वास करें, उन सभी बन्दियों को मुक्त कर दें जिन्हें केवल उनके विचार या धर्म के कारण बन्दी बनाया गया है, वे बन्दियों पर अत्याचार या क्रूरता नहीं करने तथा भिन्न राजनीति और विचारधारा रखने वालों को जान बूझ कर नहीं मारने तथा सुरक्षा-कर्मियों के रिश्तेदारों की हत्या नहीं करने के अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्ड का अनुसरण करें।

30. उपरोक्त सभी बातें, यदि उनकी सही ढंग से क्रियान्विति की जावे तो वे हमें मानवाधिकार संकट से उबार सकते हैं। अर्थात् संकट मुक्त कर सकते हैं। (30-04-95)

❋ ❋ ❋

आई. डी. पी. संवाददाता सम्मेलन में आर. पी. सराफ द्वारा जारी किया गया बयान

I

हमारा राष्ट्र किस प्रकार के भविष्य की प्रतीक्षा कर रहा है? 1947 के बाद के इतिहास में यह प्रश्न पहले कभी इतने जोर शोर से नहीं उठाया गया जितने जोर शोर से आज उठाया जा रहा है। हमारा यह राष्ट्रीय विश्वास समाप्त हो चुका है कि चाहे जो कुछ हो भारत एक विशिष्ट राष्ट्र है और समय की गति से परे है। यहाँ के सांस्कृतिक मूल्य हर विकट परिस्थिति में भी अस्तित्व रख सकते हैं।

II

हालात ऐसे मोड़ पर कैसे आ गए? यह इसलिए है कि हमारा शीत युद्ध का नेहरूवादी ढांचा हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया को सुचारू रूप से विकसित करने के लिए अनुकूल या सही साबित नहीं हुआ। एक तरफ तो यह 1947 के बाद की समस्याओं से निपटने में पूर्णत: निष्प्रभावी साबित हो चुका है—जैसे कि निर्धनता, बेरोजगारी, मूल्यवृद्धि, निरक्षरता, बीमारियां, भ्रष्टाचार, इत्यादि दूसरी ओर इसने कई नई समस्याओं को जन्म दिया है जैसे कि राजनीति का अपराधीकरण, अर्थव्यवस्था में खराब स्थिति तथा दोहरा एवं चापलूसी वाला व्यवहार का तरीका, अल्पसंख्यकों का सशस्त्र उग्रवाद, पाकिस्तान के साथ एक निरन्तर शीत युद्ध, परिस्थितिकीय असन्तुलन, बढ़ती जनसंख्या एवं इसी प्रकार की अन्य समस्याएं आदि। यह शीत युद्ध वाला नेहरूवादी ढांचा एक तरफ से सत्तावाद (या केन्द्रीयकरण) की प्रणाली तथा एक गैर जिम्मेदाराना लोकप्रियता या सुनिश्चित वोट बैंक राजनीति का एक मिश्रण ही रहा है जिसको 1985 तक सभी प्रमुख राजनैतिक दलों ने अपनाया।

III

हमारे राष्ट्र के निर्माण की प्रक्रिया में आज जो एक विकट परिस्थिति उत्पन्न हो गई है, उसमें हमारा क्या उत्तर है तथा क्या उत्तर होना चाहिए? इस प्रक्रिया के पुनरावलोकन विश्लेषण से मालूम होता है कि हमारी राष्ट्रीय समस्याएं प्राथमिक तौर पर आधुनिक है। अर्थात् पुरानी न होकर नई है। अत: हम उनके प्रति पुराने ढंग से कोई प्रतिक्रिया नहीं कर सकते जैसा कि भारतीय जनता पार्टी ने सुझाव दिया है राष्ट्रवाद का मध्यकालीन ढांचे की तरह हिन्दुकरण करके और रामो-वामो ने जैसे सुझाव दिया है आदिकाल की तरह राष्ट्रवाद का जातिकरण या मण्डलीकरण करके और न ही नवीनीकृत नेहरूवादी ढांचा (जिस पर मनमोहन सिंह द्वारा व्यापार का मुलम्मा चढ़ा दिया गया है) हमारी राष्ट्रीय आवश्यकता को पूरा कर सकता है तथा न करेगा।

कई ऐसे पुराने राष्ट्रीय मॉडल हैं जो अस्तित्व में है पर जर्जर हालत में है, वो भी कोई खास उपयोगी नहीं हो सकते। उदाहरण के तौर पर बाजार आधारित पश्चिमी उपभोगवादी ढांचा जिसने एक तरफ तो भयंकर चुनौती वाला पर्यावरण संकट पैदा किया है तथा दूसरी तरफ एक बिगड़ी हुई विश्व अर्थव्यवस्था का निर्माण किया है (जो थोड़े से विशेष अधिकार युक्त लोगों तथा बहुत से कम अधिकार युक्त लोगों में बंटी हुई है) वह स्वयं संकट की एक गम्भीर वेदना से पीड़ित है, यह व्यवस्था अपने आप का पुनर्निर्माण करने का प्रयास कर रही है क्षेत्रीय सभ्य बाजारों का गठन करके, सामूहिक रक्षा तकनीक का विकास करके तथा राष्ट्र से ऊपर राजनैतिक संस्थानों का गठन करके। सर्वाधिकार वाला साम्यवादी ढांचा जो, नियमित या नियन्त्रित विचाराधारा व भौतिकवादी जीवन पर आधारित है वह पहले से ही अस्तित्व के आयोग्य साबित हो चुका है तथा यह अपने आप को नई विधियों से आधुनिक करने में लगा हुआ है। धार्मिक या धर्म आधारित ढांचे ने (जो अपने राजनैतिक और आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु धर्म का प्रयोग करता है) जो धर्मान्धता पर आधारित है, अभी तक किसी भी एक क्षेत्र में कार्य नहीं किया है। क्योंकि संसदीय और वित्तिय संस्थानों का संचालन धर्म के तरीके से नहीं किया जा सकता। थोड़े से धार्मिक बातों की रट लगाए रखता है परन्तु व्यवहारिक जीवन में वास्तविक राजनीति का अनुसरण करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि पूर्व एशियाई ढांचे ने अपना कुछ आर्थिक महत्व स्थापित किया है, परन्तु इसने भी पर्यावरण के पहलू की अनदेखी की है।

स्वाभाविक है कि विविध अन्तर्राष्ट्रीय अनुभवों से कुछ सीखते हुए, हमें सार्क देशों से सहयोग करते हुए एक नए टिकाऊ विकास ढांचे के लिए अंधेरे में ही कुछ टटोलना पड़ेगा।

IV

एक नए टिकाऊ (और क्षेत्रीय) विकास ढांचे के साथ काम करने के लिए तीन आधारभूत वास्तविकताओं का ध्यान रखना जरूरी है—(क) अवसरवाद की राजनीति का 48 वर्ष पुराना अनुभव जिसकी पालना, एक ही वंश के नेतृत्व के अधीन कार्य करने वाली, चापलूस व हाँ साहब वाले सिद्धान्त वाली, कांग्रेस पार्टी द्वारा की जाती है। (ख) हाल ही में विकसित राष्ट्रीय अन्तर निर्भरता या वैश्विकवाद तथा (ग) मानव के लिए आज उत्पन्न चुनौतियां पर्यावरण का ह्रास तथा जनसंख्या वद्धि से उत्पन्न विस्फोट है।

उक्त तीन वास्तविकताएं तीन प्रकार का ही उत्तर या प्रतिक्रिया चाहती हैं। प्रथम अवसरवाद की राजनीति के विरुद्ध तात्कालिक प्रतिक्रिया, एक मध्यम कालीन व्यवस्थागत प्रतिक्रिया तथा तीसरी पर्यावरण व जनसंख्या की चुनौतियों के विरुद्ध एक दीर्घकालीन प्रतिक्रिया।

(क)

अवसरवाद की राजनीति के विरुद्ध तात्कालिक प्रतिक्रिया या जवाबदेही का तात्पर्य है कि हमारी राजनैतिक प्रक्रिया को धन व बाहुबल आधारित राजनीति से मुक्त किया जावे जो हमेशा सम्प्रदायवाद, जातिवाद तथा सस्ती लोकप्रियता के रगों में रंगी रहती है। इसमें सुधार के कदमों में निम्न वर्णित बिन्दु शामिल किए जा सकते हैं—

(i) सभी प्रकार के चुनावों का व्यय सरकार द्वारा वहन किया जावे।

(ii) सभी दलों और उम्मीदवारों द्वारा चुनावों पर कोई भी खर्चा करने पर रोक लगाई जावे।

(iii) निर्वाचित प्रतिनिधि को पुनः बुलाने का अधिकार जनता को दिया जावे।

(iv) कुल मतदान का 50 प्रतिशत मत प्राप्त करने वाले उम्मीदवार को ही सफल घोषित करने की व्यवस्था की जावे।

(v) राजनैतिक दलों को उनकी सार्वजनिक तौर पर इस स्वीकृति के द्वारा कि अपनी अपनी राजनीति को धर्म, जाति आदि से अलग रखेंगे, अपने दल के पदाधिकारियों का प्रति 2 वर्ष में खुला निर्वाचन करवाकर तथा अपने हिसाब लेखे मुख्य निर्वाचन आयोग की देखरेख में ऑडिट करवाकर जनता के प्रति उत्तरदायी बनाया जावे।

(vi) लोकसभा एवं विधानसभा सीटों की 50 प्रतिशत के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली अपनाई जाए।

(vii) जो लोग चुनाव कानून, नियमों एवं आचरण संहिता का उल्लंघन करते हैं उनके लिए कड़े न्यायिक दण्ड की व्यवस्था की जाए।

(viii) एक स्वायत्तशासी सतर्कता आयोग (लोकपाल) का गठन किया जावे, जिसे किसी भी केन्द्र या राज्य स्तर के निर्वाचित प्रतिनिधि, प्रधानमंत्री सहित, के विरुद्ध किसी आरोप की जांच करने का अधिकार हो तथा साथ ही राज्य स्तर पर ऐसे आयोगों का गठन किया जावे जिनमें पंचायत संस्थानों व स्थानीय नियमों के सदस्यों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच करने का अधिकार हो।

(xi) इस प्रकार के कानून का निर्माण किया जावे कि चुनाव लड़ने वाले सभी उम्मीदवारों के लिए, नामांकन पत्र के साथ ही अपने एवं अपने रिश्तेदारों की समस्त सम्पति का ब्यौरा प्रस्तुत करना अनिवार्य हो।

(x) न्यायविदों का एक ऐसा आयोग गठित किया जावे जो नीचे के स्तर से लगाकर सर्वोच्च स्तर तक के न्यायाधीशों के खिलाफ भ्रष्टाचार की समस्त शिकायतों की जांच कर सके।

(ख)

मध्य कालीन व्यवस्थागत प्रतिक्रिया का तात्पर्य है हमारे राष्ट्रीय ढांचे को नवीन राष्ट्रीय एवं वैश्विक वास्तविकताओं के अनुकूल बनाना। इस ढांचे के आवश्यक तत्व निम्न विवरण अनुसार हो सकते हैं—

(क) उद्देश्य : भारत एवं विश्व मे एक न्यायोचित एवं उचित सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करना, जो एक तरफ प्रकृति के अनुकूल हो तथा दूसरी तरफ जनता के हित में।

(ख) आम दृष्टिकोण : वैज्ञानिक यथार्थवाद जिसका आधार चौतरफा तथ्य हों।

(ग) सामाजिक परिप्रेक्ष्य : वैश्विकवाद एवं विवेकपूर्ण मानवतावाद।

(घ) प्रजातान्त्रिक व्यवस्था एवं लोगों को सत्ता व शक्ति प्रदान करना : सभी आन्तरिक विवादों को बातचीत के जरिए हल करना व पूर्ण संघीय एवं विकेन्द्रीकृत ढांचे की स्थापना करना जिसमें सभी प्रान्तों को स्वायत्तता दी जावे तथा भारत संघ में पंजाब को विशेष दर्जा दिया जावे। एक नई प्रणाली का विकास करके लोगों को अधिक सत्ता प्रदान करना, उन्हें सभी स्तरों पर निर्णय लेने एवं समाज में व्याप्त समस्त असमानताओं को खत्म करने में भागीदार बनाना, जैसे धनी व निर्धन की असमानता, स्त्री व पुरूष की तथा गांव व शहर की असमानता आदि।

(ड़) टिकाऊ विकास : एक तरफ पर्यावरण की गुणवत्ता का विकास करना (जैसे भूमि, पानी व हवा के प्राकृतिक स्त्रोत आदि) तथा दूसरी तरफ बाजार की तकनीक तथा राज्य आयोजना का यथेष्ट मिश्रण कर अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण करके, मानव व भौतिक संसाधनों का विकास करना।

(च) क्षेत्रीय सुरक्षा एवं विकास : वास्तविक नियन्त्रण रेखा के दोनों और नस्लीय आधार पर बने प्रत्येक क्षेत्र को स्वायत्तता प्रदान करके जम्मू-कश्मीर समस्या का त्रिपक्षीय हल निकाला जावे—यह स्वायत्तता भारत पाक संयुक्त नियन्त्रण में हो तो तथा इसे राज्य की सुरक्षा, विदेशी मामले व मुद्रा सम्बंधी मामले ही सौंपे जावें, इस प्रकार सार्क के विकास का रास्ता खोलते हुए जिसकी अपनी सामान्य प्रक्रिया में, एक मुक्त व्यापार साझा बाजार के रूप में विकसित होने की सम्भावना है जिसमें क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था एवं संयुक्त राजनैतिक संगठन होगा।

(छ) नैतिक मूल्य व्यवस्था : तर्कसंगत मानवतावादी विचारधारा तथा प्रजातान्त्रिक व्यवहार का विकास करना।

(ज) विदेशी एवं रक्षा सम्बंधी मामले : अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं मित्रता का अनुसरण करना, पड़ोसियों एवं क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था से मित्रवत सम्पर्क स्थापित

करना तथा पाकिस्तान के साथ परमाणु अस्त्र नहीं बनाने तथा इससे सम्बंधित व्यवस्था का गठन नहीं करने का संकल्प लेना।

(ग)

पर्यावरण ह्रास तथा जनसंख्या वृद्धि के विरुद्ध दीर्घकालीन प्रतिक्रिया के लिए दो व्यापक कार्ययोजनाओं की आवश्यकता है, जिनकी सफलता अन्ततोगत्वा इस बात पर निर्भर करेगी कि एक तरफ तो, लोगों विशेष कर महिलाओं एवं निर्धन लोगों को उक्त दो खतरों के गम्भीर परिणामों से किस हद तक परिचित कराया गया है और एक टिकाऊ विकास व जीवन-शैली की अत्यन्त तीव्र एवं आवश्यक जरूरत को उन्हें किस तरह समझाया गया है और दूसरी तरह वे दोनों कार्य योजनाओं की क्रियान्विति के लिए कितने प्रेरित होते हैं तथा कितनी भागीदारी सुनिश्चित करते हैं।

उक्त तथ्यों के विवेचन से यह स्पष्ट रूप से सामने आता है कि टिकाऊ विकास, प्रकृति अनुरूप तथा मानव अनुरूप प्रक्रिया, एक तरफ तो प्रकृति व मनुष्य को एक सम्मान स्तर पर लाकर रख देती है तथा दूसरी तरफ एक मानवीय, उचित एवं तर्कसंगत व्यवस्था की स्थापना करती है। पुराने प्रकृति की उपेक्षा करने वाले ढांचे को हटाकर नया स्थापित किया गया ढांचा पर्यावरण को सुधारता है एवं इसका संरक्षण करता है तथा लोगों को विशेषकर महिलाओं एवं कमजोर वर्गों को, पूर्णतया शक्ति प्रदान करता है। (08.05.95)

❋ ❋ ❋

चरार-ए-शरीफ त्रासदी त्रिपक्षीय वार्ता की आवश्यकता को दोहराती है न कि चुनाव की

I

1. कश्मीर घाटी में 14वीं शताब्दी के महान मानवतावादी सन्त हजरत शेख नूरूद्दीन नूरानी की 535 वर्ष पुरानी ऐतिहासिक दरगाह का विनाश कर देने से समूची घाटी व पूरे देश तथा साथ ही दक्षिण एशिया के समस्त देशों में एक दु:ख व क्रोध की लहर फैल गई है।

चरार-ए-शरीफ टाऊन शिप के लगभग 1000 से भी अधिक मकानों को भी नेस्तनाबूद कर दिया गया है।

2. उस महान सन्त ने सदैव शान्ति एवं निर्मलता, धार्मिक सहिष्णुता, सामाजिक एकता तथा विश्व बन्धुत्व का उपदेश दिया जो सदैव से ही मानवता के मूलभूत सिद्धान्त रहे हैं तथा उनकी आज के विश्व को अत्यन्त आवश्यकता है, लेकिन इन सिद्धान्तों का आज समस्त प्रकार के रूढ़ीवादी विचारकों (धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक आदि) द्वारा खुला विरोध और उल्लंघन किया जा रहा है। घाटी के समस्त निवासियों हिन्दुओं एवं मुसलमानों द्वारा सन्त का आदर किया जाता था अब भी किया जाता है।

3. दरगाह कश्मीर की स्वाभाविक विशिष्टता की प्रतीक थी। यह सभी कश्मीर वासियों की धरोहर थी। सभी जातियों के लोग वहां दर्शन और पूजा करने आते थे। इसका विनाश न केवल कश्मीर और भारत के लोगों लिए ही बल्कि समूचे विश्व के लिए एक असीम हानि है।

4. चरार-ए-शरीफ शहर के लोगों के दु:ख की तो कोई सीमा ही नहीं है। उनसे उनकी बेशकीमती दरगाह तथा अपनी उनकी घर गृहस्थी को छीन लिया गया, अब उनके पास रहने के लिए कोई स्थान नहीं है। उनके द्वारा पिछले लगभग एक माह से अपने रिश्तेदारों एवं निकट मित्रों के साथ रहने से उनके मित्रों व उनके स्वयं के जो थोड़े बहुत साधन थे वे भी समाप्त प्राय: हो गए हैं। केवल सरकारी प्रचार के अलावा, इन लोगों की वास्तविक इमदाद के लिए प्रशासन द्वारा कोई व्यावहारिक कदम नहीं उठाया जा रहा है।

4.(अ) पूरी घाटी में विलाप एवं दु:ख की लहर छाई हुई है। इसमें कर्फ्यू लगा दिया गया है। काम नहीं तो वेतन नहीं की सरकारी धमकी व चेतावनी के बावजूद सरकारी कर्मचारी हड़ताल पर है। आवश्यक रसद आपूर्ति की कमी हो गई है। लोग-बाग पूर्णत: अलग-थलग हो कर पराधीन जैसे हो गए हैं तथा प्रशासन को औपनिवेशक साम्राज्य की भांति देखने लगे हैं।

4.(ब) ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय सरकार ने अल्पसंख्यकों के पूजा स्थलों के खिलाफ लगातार भद्दी कार्यवाहियों से जरा सा भी सबक नहीं लिया है, उदाहरणतया स्वर्णमंदिर में 1984 के आपरेशन ब्ल्यू स्टार तथा 1988 के आपरेशन ब्लेक थण्डर, 1993 में हजरतबल आपरेशन और 1995 के चरारे शरीफ की त्रासदी। इन सभी ने अल्पसंख्यकों के अलगाव को मजबूत किया, इस प्रकार यह विनाशकारी सिद्ध हुआ है।

4. (स) चरार के खतरनाक आन्दोलन में पत्रकारों पर रोक लगाने से दरगाह पर कब्जा किए जाने के दौरान तथा दरगाह को नष्ट किए जाने के बाद तथा पत्रकारों को नगर के चारों ओर की पहाड़ियों पर से भी उसका नजारा देखने की सुविधा तक से मना करने से, हुरियत नेताओं से बातचीत कर इसका हल निकालने में असफल रहने से तथा सशस्त्र हल निकालने की राजनीति ने इस संकट को और अधिक फैलने में ही मदद की।

चरार त्रासदी के बाद, राजेश पायलट की बड़े क्रोध एवं आक्रोश भरी टिप्पणी करने से (पाकिस्तान को इस घटना के भयंकर परिणामों की धमकी देते हुए तथा पाक अधिकृत कश्मीर को खाली कराने का अधूरा कार्य बलपूर्वक कराने की धमकी देते हुए) तथा इसके ठीक बाद जाफर शरीफ द्वारा पाकिस्तान को युद्ध की धमकी देते हुए चेतावनी देने से, थोड़े दिन बाद ही प्रधानमंत्री द्वारा इन बातों का खण्डन करने के बावजूद, दक्षिण एशिया में न केवल तनाव की वृद्धि हुई है बल्कि इन बातों ने अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण को और अधिक दूषित किया है।

II

5. मानवता की एक महान दरगाह को नष्ट कर देने का कृत्य एक सर्वाधिक आपराधिक एवं शर्मनाक कृत्य है। जिन परिस्थितियों में दरगाह और कस्बे को जलाकर ध्वस्त किया गया वे भी रहस्य के घेरे में हैं, ये स्पष्टत: उजागर नहीं हुई है। जम्मू कश्मीर, भारत, पाकिस्तान और समस्त विश्व के लोगों को यह जानने का अधिकार है कि यह घृणित कार्य किसने और क्यों किया।

6. केवल मात्र आवाज जो घाटी में प्रतिध्वनित हो रही है वह यह है कि ये भारतीय सुरक्षा बलों के ही सदस्य थे जिन्होंने दरगाह और चरार-ए-शरीफ कस्बे को जलाया था।

कस्बे के निवासी, महिलाओं और बच्चों सहित चिल्ला चिल्लाकर यह कह रहे हैं कि सेना के विभागों ने रात के ग्यारह बजे दरगाह तथा आसपास के घरों पर बारूद छिड़का तथा बाद में मारक अस्त्र छोड़ कर उनमें आग लगा दी। केन्द्र सरकार तथा जम्मू कश्मीर के राज्यपाल यह दावा करते हैं कि यह कार्य पाकिस्तान के भाड़े के

सैनिकों का है। स्पष्ट रूप से, वहां के जनमत की राय तथा सरकार का अनुमान, चरार की वास्तविकता के बारे में दो विरोधाभाषी बातें हैं। वास्तव में वहां क्या घटित हुआ, इसकी जानकारी एक विश्वसनीय जांच के बाद ही हो सकती है।

7. वास्तविक सच्चाई क्या है इसे सुनिश्चित कराने का, शंकाओं तथा भ्रांतियों को स्पष्ट करने तथा न्याय का उचित तरीका यह होगा कि चरार त्रासदी की जांच एक ऐसी स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष समिति से कराई जाए जैसे संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग या गुटनिरपेक्ष आन्दोलन (NAM) अथवा पारस्परिक सहमति के किसी संगठन द्वारा, जिससे कश्मीर वासियों की प्रमुख प्रवक्ता हुरियत कान्फ्रेन्स भी सहमत हो।

8. ऐसे संकटमय समय में जबकि चरार कस्बे के लोगों को तात्कालिक मदद चाहिये, सम्पूर्ण घाटी को एक संवेदना एवं राहत का स्पर्श चाहिए। समस्त स्थिति बहुत ही विकट व विस्फोटक बन चुकी है, इस समय साधारण बुद्धि वाला व्यक्ति भी यही कहेगा कि पहले तनाव को कम किया जावे तथा बढ़ी हुई विस्फोटक स्थिति को कम किया जावे, ऐसे समय में जबकि स्थिति तनावपूर्ण एवं अस्थिर है नई दिल्ली सरकार द्वारा जम्मू कश्मीर विधान सभा के चुनाव कराने की बात पर जोर देना, केन्द्रीय सराकार के जम्मू कश्मीर की नीति के दिवालीएपन का संकेत देता है।

9. हम पिछले तीन वर्षों से लगातार नई दिल्ली सरकार के जम्मू कश्मीर में चुनाव के कार्यक्रम की बात सुन रहे हैं। केन्द्रीय गृहमंत्री तथा जम्मू कश्मीर के राज्यपाल यदाकदा बारी-बारी से उस समय-सीमा की घोषणा करते हैं जब तक कि जम्मू कश्मीर में चुनाव सम्पन्न करा दिये जाएंगे। लेकिन हर बार सरकार को एक कमजोर स्वीकारोक्ति के साथ पीछे हटना पड़ता है कि ऐसे चुनाव करवाने के लिए वहां स्थिति अनुकूल या उत्साहजनक नहीं है। इस सम्बन्ध में सरकार कम से कम 6 बार गलत साबित हो चुकी है।

क्या दरगाह गिराने के बाद आधारभूत वास्तविकता में कोई परिवर्तन आया है। तथ्य स्वयं इस सम्बन्ध में अपनी बात कहते हैं।

10. घाटी में जनता की धारणा हमेशा के मुकाबले भारत के विरुद्ध काफी ज्यादा तीव्र है। नई दिल्ली सरकार तथा भारत के पक्षधर कश्मीरी नेताओं सहित भारत के प्रमुख राजनैतिक दलों की राजनैतिक और नैतिक विश्वसनीयता, कश्मीर क्षेत्र तथा संलग्न जम्मू क्षेत्र के सीमावर्ती इलाके में भी अस्तित्व में नहीं है। इसके अलावा कश्मीर वासियों की आशाओं में भी कोई परिवर्तन नहीं है। दो प्रकार की राजनीतिक विचारधारा वाले लोगों (स्वतन्त्रता समर्थक एवं पाकिस्तान समर्थक) द्वारा विभाजित कर दी जाने तथा कभी कभी नव प्रस्फुटित नेताओं में अहम भावना के फूट पड़ने के बावजूद भी कश्मीरवासी सामान्य तौर पर भी तथा अपनी हुरियत कान्फ्रेन्स में भी

भारत विरोधी एक मात्र मंच पर एक जुट या एक राय पर कायम रहते हैं। भारत की प्रमुख धारा से विकर्षण या अलग होने की विचारधारा ने एक नया स्वरूप या स्तर हासिल किया है।

आतंकवाद की संहारक शक्ति में भारी क्षति के बावजूद अभियान व विस्तार की दृष्टि से काफी वृद्धि हुई है। आतंकवादियों की क्षेत्रीय क्षमता एवं विस्तृत जाल की जानकारी इनके जम्मू क्षेत्र डोडा, पुंछ, राजौरी तथा उधमपुर जिलों के कुछ इलाकों में विस्तार से तथा घाटी में सुरक्षित स्थिति के चलते रहने के तथ्य से मिलती है। यह अब तक सम्पूर्ण घाटी में अपनी धाक जमने के साथ साथ कश्मीरियों के व्यापक आन्दोलन के रूप में हमारे सामने हैं।

11. इस दौरान नई दिल्ली सरकार तथा इसकी प्रतिनिधि के रूप में राज्य सरकार ने अपनी निर्भरता अस्त्र शक्ति पर बढ़ाना जारी रखा है। इसके परिणाम स्वरूप सुरक्षा बल कश्मीर घाटी में अत्यधिक शक्ति का प्रयोग कर रहे हैं, आम नागरिकों पर क्रूर ज्यादतियाँ कर रहे हैं तथा मानवाधिकारों का हनन कर रहे हैं।

12. जम्मू कश्मीर में चुनाव के सम्बन्ध में स्वयं भारतीय राष्ट्रीय विचारधारा भी बड़ी भ्रामक है सत्ताधारी पार्टी जम्मू कश्मीर में चुनाव कराने का लगातार गीत गाए जा रही है जबकि अन्य प्रमुख राजनैतिक दल— भाजपा, जद तथा वाम मोर्चा आदि इस बात पर निरंतर जोर दे रहे हैं कि आज के हालात में वहाँ चुनाव कराना अनुकूल नहीं है।

13. जम्मू और कश्मीर में आम आदमी (थोड़े से स्वामीभक्त कांग्रेसियों को छोड़कर), जो कश्मीर की आधारभूत वास्तविकताओं के ज्यादा नजदीक हैं तथा जो लगातार बम विस्फोट आतंकवादी एवं आतंकवाद विरोधी संघर्ष के फलस्वरूप होने वाले झगड़े से पीड़ित है, उनमें इस समय किसी निर्वाचन प्रक्रिया के बारे में कोई खास रुचि या उत्साह नहीं है।

14. समूचे कश्मीर प्रदेश पर दृष्टि डालें तो प्रतीत होती है कि पिछले 5 वर्षों में कोई वास्तविक विकास नहीं हुआ है। विकास की राशि का एक बड़ा हिस्सा भ्रष्टाचार, अकार्यकुशलता तथा बिगड़ती हुई कानून व्यवस्था द्वारा खा लिया जाता है। कृषि और उद्यान विकास पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है। कृषि आधारित उद्योगों की पूर्णतया अनदेखी की गई है। लघु स्तरीय उद्योग बहुत ही गम्भीर समस्याओं का सामना कर रहे हैं। इनमें से कुछ उद्योग तो पहले से ही बन्द हो चुके हैं तथा कुछ बन्द होने के कगार पर है। राज्य सेवा में सभी नौकरियों में भर्ती या नियुक्ति बन्द हो गई है। कीमतें लगातार बढ़ रही है। गरीबी एवं बेरोजगारी बढ़ गई है। निर्धन लोग और अधिक निर्धन हो गए हैं। टैंटों और शिविरों में रहने वाले निर्धन विस्थापितों की समस्याओं को

हल करने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया है। तथाकथित संयुक्त योजना का वादा भी एक खोखला आश्वासन मात्र रह गया है।

15. किसी भी निर्वाचन की पूर्व शर्त या पूर्व आवश्यकता यह रही है कि लड़ने वाले उम्मीदवारों के बीच एक सर्वसम्मत चुनाव संहिता हो और निर्वाचन प्रक्रिया में शामिल होने के लिए निर्णायकों की एक सामान्य इच्छा या मूड का अस्तित्व हो। इस पूर्व शर्त की पूर्ति के बिना किसी भी निर्वाचन को सही या निष्पक्ष नहीं माना जा सकता। घाटी में, मुश्किल से ही कोई व्यक्ति, भारतीय मुख्य चुनाव आयोग के अधीन संचालित निर्वाचन प्रक्रिया को, सही प्रक्रिया मानता हो। यहां तक कि भारत के पक्षधर कश्मीरियों में से भी अधिकांश लोग, इस समय चुनाव कराने के औचित्य या उपयुक्ता के बारे में शंकित है। अर्थात् वे भी कुछ स्पष्ट धारणा रख पाने की स्थिति में नहीं है।

16. नई दिल्ली सरकार एवं हुर्रियत कान्फ्रेन्स के बीच चुनाव प्रक्रिया के नियन्त्रण और निर्वाचन विधि पर कोई समझौता हो जाने पर निर्वाचन पर सहमति सम्भव है। नई दिल्ली सरकार तो निर्वाचन प्रक्रिया के पर्यवेक्षण के लिए किसी बाहरी पर्यवेक्षक को लगाने के विचार को समग्र रूप से इन्कार या अस्वीकार करती है, पर्यवेक्षक के रूप में, किसी विदेशी भूमिका तथा निर्वाचन विधि में परिवर्तन का तो कहना ही क्या; यद्यपि नेपाल, श्रीलंका, बांग्लादेश तथा पाकिस्तान सभी ने अपने राष्ट्रीय चुनावों के पर्यवेक्षक के लिए विदेशी पर्यवेक्षक (भारतीय पर्यवेक्षक सहित) आमन्त्रित किए थे।

17. घाटी की आधारभूत वास्तविकता के, कश्मीरवासियों की शिथिलता तथा उग्रवादी संस्थाओं की आपसी एवं आन्तरिक लड़ाई के कारण, भारत के पक्ष में विकसित होने के बारे में जो सरकारी आकलन है वह मात्र वास्तविकता को बढ़ा-चढ़ा कर रखने के समान है।

18. अन्तिम, किन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि जम्मू कश्मीर समस्या की मूल प्रकृति यह है कि कानूनी तौर पर तो यह एक द्विपक्षीय समस्या है किन्तु राजनैतिक तौर पर यह एक त्रिपक्षीय समस्या है जैसा कि निम्नांकित बातों से दृष्टिगोचर होता है। 1947 के विभाजन से इसकी उत्पत्ति, संयुक्त राष्ट्र की पत्रावलियों में इस प्रकरण का अब भी विचाराधीन होना (जो जम्मू कश्मीर में अभी भी संयुक्त राष्ट्र के पर्यवेक्षकों की उपस्थिति से जाहिर है), यह ऐसा विषय है जो लगातार तीन भारत-पाक युद्धों का प्रमुख मुद्दा रहा है, 1947 के बाद पाकिस्तान के बारे में भारत, पाकिस्तान तथा नई दिल्ली सरकार एवं कश्मीर के बीच द्विपक्षीय वार्ताओं में सभी की असफलता, 1972 के शिमला-समझौते द्वारा यह स्वीकार किया जाना कि यह प्रकरण भारत

पाकिस्तान के बीच का विवाद है, अपने राजनैतिक स्तर को बदलने के लिए कश्मीर वासियों का सशस्त्र संघर्ष, जम्मू कश्मीर का विविध नस्ल वाला प्रदेश होना, विश्व के लोगों का विचार कि जम्मू कश्मीर की द्विपक्षीय समस्या का हल इसके लोगों की भागीदारी से सम्भव है, इत्यादि।

III

यह विचारणीय प्रश्न है कि इस थोपे गए निर्वाचन से क्या क्या प्रभाव उत्पन्न होंगे। प्रथम तो नई दिल्ली सरकार के राज्य में सामान्य स्थिति बहाल करने के दावे के विपरीत, ऐसी सम्भावना है कि यह कदम कश्मीरी लोगों के बहुमत के बीच नई दिल्ली का विरोध एवं शत्रुता पैदा कर देगा।

द्वितीय, इस कार्य से भारत पाकिस्तान के बीच शीतयुद्ध की स्थिति और अधिक गम्भीर हो जाएगी।

तृतीय, यह भारतीय राजनीतिक प्रक्रिया के अपराधीकरण को और अधिक मजबूत करेगी।

चतुर्थ, यह कदम आठवें सार्क शिखर सम्मेलन में लिए गए निर्णयों की क्रियान्विति में विघ्न डालेगा तथा दक्षिणी एशियाई देशों के विकास की सम्भावनाओं पर विपरीत प्रभाव डालेगा।

पंचम, इस बात की प्रबल सम्भावना है कि निर्वाचन प्रक्रिया के दौरान नांमाकन पत्रों को गम्भीरता से भरने वालों का अभाव रहेगा, उम्मीदवारों तथा उनके निकट सहयोगियों द्वारा कश्मीर घाटी व जम्मू क्षेत्र के कुछ क्षेत्रो में किसी खुले या गुप्त चुनाव प्रचार अभियान का अस्तित्व ही नहीं रहेगा (जो जम्मू कश्मीर के लोगों का उनकी नस्लीयता या एक वर्ग होने के बावजूद अरुचिकर होगा), फर्जी मतदान नई दिल्ली सरकार की प्रजातान्त्रिक प्रक्रिया तथा इसकी डगमगाती चुनावी प्रक्रिया की नई तकनीक के खोखलेपन को उजागर कर देगा तथा यह कार्य विश्व के जनमत को एक ओर झुका कर उसे पाकिस्तान के पक्ष में तथा भारत के विरुद्ध बना देगा।

षष्टम, यह कदम, चुनावी प्रक्रिया का विरोध व मुकाबला करने के लिए समस्त उग्रवादी संगठनों को एक हो जाने के लिए प्रेरित करेगा।

सप्तम्, सेना द्वारा प्रेरित यह चुनावी रणनीति, स्थिति को और अधिक उलझा देगी, ऐसी सम्भावना है कि यह एक ओर तो जम्मू एवं लद्दाख तथा दूसरी और जम्मू एवं कश्मीर घाटी के बीच के विवाद को और अधिक गहरा कर देगा, अथवा कि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच यह स्थिति विवाद को गहरा कर देगा, इस प्रकार न केवल जम्मू कश्मीर संकट ही गहरा होगा। बल्कि यह स्थिति भारत की राष्ट्रीय सैन्य रणनीति को भी क्षति पहुंचाएगी तथा परिणाम स्वरूप, ऐसा भी हो सकता है कि दोनों

ही प्रतिवादी—भारत व पाकिस्तान इससे अस्थिरता की स्थिति में चले जावें।

यह कदम न तो किसी को लाभान्वित करेगा और न कर सकता है बल्कि सभी को नुकसान पहुंचा सकता है।

VI

नई दिल्ली सरकार, जम्मू कश्मीर समस्या की आधारभूत प्रकृति तथा मूलभूत वास्तविकताओं के विपरीत, अपनी चुनावी राजनीति का अनुसरण करने के लिए क्यों अड़ी हुई है? स्पष्टत: इसका प्रारम्भिक कारण तो यह है कि सत्ताधारी दल का यह उद्देश्य है कि जम्मू कश्मीर के चुनावी विजय जो 1991 में पंजाब में हुए चुनाव के अनुरूप प्राप्त की जा सकेगी, का प्रयोग देश में अपनी भावी चुनावी विजय श्री की डींग हांकने में किया जावे तथा विदेशों में जो विरोध वाला जनमत बन गया है उसे कुछ हल्का किया जाने में उपयोग किया जावे।

इसका अर्थ स्पष्टत: यह है कि नई दिल्ली सरकार जम्मू कश्मीर में फिर एक और झूठे चुनाव का स्वांग करना चाहती है। जबकि पहले से ही स्वयं स्वीकार कर चुकी है कि घाटी में झूठे निर्वाचनों ने कश्मीरी लोगों के अलगाव में काफी योगदान दिया है।

यदि ऐसा नहीं है अर्थात् यह बात सच नहीं है तथा यदि चुनावी प्रक्रिया मूलभूत वास्तविकताओं को बदलने के लिए तथा एक गम्भीर संकट को हल करने के लिए वास्तव में एक प्रजातान्त्रिक कार्यवाही है, तो केन्द्र सरकार इस प्रक्रिया के पर्यवेक्षण के लिए विदेशी पर्यवेक्षक नियुक्त करने की मांग को क्यों अस्वीकार करती है, पाकिस्तान से इस सम्बन्ध में विचार विमर्श करने की बात क्यों टाल देती है, जिसे शिमला समझौते में जम्मू कश्मीर विवाद में एक पक्षकार माना गया है। यह कश्मीर वासियों को इस प्रजातांत्रिक प्रक्रिया में भाग लेने के लिए क्यों हकलाती है व फुसलाती है तथा उसने उस विधि को पिछले 5 वर्षों के दौरान पहले कभी क्यों नहीं क्रियान्वित किया जिस अवधि के दौरान घाटी में दोनों ही ओर से हजारों लोग मारे गए तथा सशस्त्र मुठभेड़ों के कारण कश्मीरवासी दयनीय अवस्था में पहुंच गए।

VII

यदि चुनाव नहीं, तो कश्मीर की अस्त व्यस्त स्थिति और बिगड़ी हुई समस्या को हल करने के लिए कौन से दूसरे विकल्प का अनुसरण किया जावे।

इस सम्बन्ध में एक युक्ति युक्त विकल्प तार्किक ढंग से तो, जम्मू कश्मीर से सम्बन्धित 1947 के बाद के ऐतिहासिक तथ्यों से प्रकट होना चाहिए।

प्रथम तथ्य तो यह है कि न तो भारत-पाक युद्ध, न लगातार चल रहा भारत पाक के बीच का शीत युद्ध, न नई दिल्ली सरकार का असीम सैन्य बल तथा न

कश्मीरी उग्रवाद अकेले किसी एक पक्ष की शर्तों पर कश्मीर समस्या का हल करने में सक्षम रहे हैं तथा न रहेंगे। इस प्रकार किसी एक तरफ का सशस्त्र समाधान इसकी निरर्थकता को ही जाहिर करता है।

दूसरा तथ्य है कि सभी द्विपक्षीय समझौते—चाहे वे भारत एवं पाकिस्तान के बीच हो जैसे 1947 का युद्ध-विराम, 1965 की ताशकन्द सन्धि या 1972 का शिमला समझौता चाहे नई दिल्ली और श्रीनगर के बीच हो जैसे 1952 का नेहरू अब्दुल्ला समझौता, 1975 का इन्दिरा-शेख समझौता तथा 1986 का राजीव फारूख समझौता चलने योग्य अथवा सफल साबित नहीं हुए हैं।

तीसरा तथ्य यह है कि न तो सर्वोच्च स्वायत्तता जिसका प्रावधान भारतीय संविधान के मूल अनुच्छेद 370 में है तथा न ही वह जिसका प्रावधान संशोधित अनुच्छेद में है—काम देने में सक्षम है। यह तो एक के बाद दूसरे संकट या विवाद को जन्म देती रही है—या तो भारत व पाकिस्तान के बीच, या नई दिल्ली तथा स्वायत्तता के पक्षधर कश्मीरी नेतृत्व के बीच अथवा नई दिल्ली और भारत विरोधी शक्तियों के बीच।

चौथा तथ्य यह है कि आज के विश्व की वास्तविकताओं के बीच, कोई भी देश, चाहे वह कितना ही शक्तिशाली हो, अनिच्छुक नागरिकों को अपनी सत्ता या दमन के अधीन अधिक समय तक नहीं रख सकता। यह इसीलिए है कि विश्व एक लम्बे समय तक अल्प संख्यक लोगों का सैनिक दमन तथा मानवाधिकारों का हनन न तो सहन करता है तथा न सहन कर सकता है, चूंकि स्थिति यह है कि धनी देशों सहित कोई भी देश एक छोटे से शक्ति प्रयोग की दीर्घकालीन कीमत को वहन नहीं कर सकता।

पांचवां तथ्य यह है कि जैसे कि भारत के लोगों ने जम्मू कश्मीर को भारत संघ में रखने का ढ़ढ निश्चय किया है, वैसे ही पाकिस्तान के लोगों ने जम्मू कश्मीर को अपने राष्ट्र में सम्मिलित करने का संकल्प लिया है। जम्मू कश्मीर में ही, जबकि कश्मीरी भारत के बाहर रहने का विकल्प देते हैं, वहीं डोगरा, पहाड़ी लद्दाखी इत्यादि नस्ल के लोग अपने-अपने पृथक विचार एवं आशाएं रखे हुए हैं।

छठा तथ्य यह है कि भारत व पाकिस्तान के बीच लगातार शीत युद्ध का परिणाम यह रहा है कि इसने दोनों देशों को समग्र रूप से निर्धन बना दिया है तथा वे विश्व मंच पर केवल सीमान्त खिलाड़ी के रूप में ही बच गए हैं।

सातवां तथ्य यह है कि देशो की पारस्परिक निर्भरता की नई वास्तविकता ने भारत और पाकिस्तान के भविष्य को संयुक्त एवं एक जैसा बना दिया है।

VIII

ऊपर वर्णित तथ्यों को मध्य नजर रखते हुए कहा जा सकता है कि जम्मू कश्मीर राज्य के भविष्य को सुनिश्चित करने के लिए जो एक युक्तियुक्त और चलने वाला विकल्प है व हो सकता है वह यह है कि भारत, पाकिस्तान और जम्मू कश्मीर के लोगों के बीच त्रिपक्षीय वार्ता हो। यह त्रिपक्षीय सूत्र जम्मू कश्मीर समस्या के अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय और नस्ल एवं क्षेत्रगत सभी पहलुओं के लिए अनुकूल रहेगा।

त्रिपक्षीय व्यूहरचना का मौलिक एवं केन्द्र बिन्दु यह है कि तीनों ही सम्बंधित पक्षकारों के हितों के ऊपर विचार विमर्श किया जावे तथा प्रत्येक पक्षधर को यह सन्तुष्टि दिलाई जावे कि प्रत्येक के पक्ष एवं हितों पर हर सम्भव सीमा में विचार विमर्श कर लिया गया है। त्रिपक्षीय दृष्टिकोण किसी भी पक्ष के लिए वीटो-पॉवर के विचार को समाप्त कर देता है। स्पष्टत: इसे एक और तो भारत और पाकिस्तान के हितों के सन्तुलन की आवश्यकता है तथा दूसरी ओर जम्मू-कश्मीर की आठ नस्लीय इकाइयों के हितों के समन्वय की आवश्यकता है यथा कश्मीरी, डोगरा, पठवारी, पहाड़ी (गूजर एवं बकरवाल), लद्दाखी, कारगिली, गिलगिटी तथा बाल्टी।

भारत और पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों का सन्तुलन तो जम्मू कश्मीर के समूचे राज्य पर भारत पाक का एक संयुक्त संगठन या नियन्त्रण स्थापित करके किया जा सकता है व किया जाना चाहिए, जो केवल जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा, विदेशी मामले तथा मुद्रा सम्बन्धी मामलों का संचालन करे तथा बाकी सब विषय जम्मू-कश्मीर राज्य के क्षेत्राधिकार में छोड़ दिया जावें।

जम्मू कश्मीर की विभिन्न नस्ल की क्षेत्रीय इकाइयों के हितों का समन्वय एवं संरक्षण राज्य में एक संघीय संविधान की व्यवस्था करके किया जाना चाहिए जो एक तरफ तो प्रत्येक नस्लीय क्षेत्र को अधिकतम स्वायत्तता प्रदान करे तथा जिला, खण्ड एवं ग्राम स्तर की परिषदों को और अधिक शक्तियां प्रदान करे तथा दूसरी ओर एकीकृत जम्मू-कश्मीर राज्य की स्थापना करें जिसका एक राज्याध्यक्ष हो, जिसका निर्वाचन नस्लीय क्षेत्रीय परिषदों द्वारा किया जावे, सबका एक उच्च न्यायालय हो, एक निर्वाचन आयोग हो, एक लोक सेवा आयोग हो, जिनकी नियुक्ति समस्त क्षेत्रीय नस्लीय परिषदों द्वारा की जावे तथा जिनमें समस्त नस्लों का एक एक प्रतिनिधि हो।

स्पष्ट है कि त्रिपक्षीय व्यूहरचना की विचारधारा, राज्य की स्वतन्त्रता, स्वायत्तता अथवा किसी भी देश के ढांचे में विलीन होने की अवधारणा से मेल नहीं खाती।

भारत-पाक का संयुक्त नियन्त्रक संगठन विश्व में अपने आप में एक नये ढंग का परिक्षण होगा। यह न केवल भारत, पाकिस्तान और जम्मू कश्मीर के लोगों को ही लाभान्वित करेगा बल्कि सार्क के विकास को भी एक सशक्त गति प्रदान करेगा तथा

उसे एक ऐसे टिकाऊ विकास ढांचे या मॉडल में परिवर्तित कर देगा जो प्रकृति का पक्षधर होगा तथा लोगों के हितों की रक्षा का समर्थक होगा— इस प्रकार यह विश्व के विकास की प्रक्रिया को और अधिक सशक्त बनाएगा।

त्रिपक्षीय प्रक्रिया को भली भांति एवं सफलता पूर्वक क्रियान्वित किया जा सकता है यदि नई दिल्ली एवं इस्लामाबाद की सरकारें इसे चालू करें तथा जारी रखें। लेकिन अपने भूतकाल से हतोत्साहित होकर (जैसे 1947 का तथा 1947 के बाद का शीत युद्ध) तथा अपने भविष्य के प्रति लापरवाह रहकर (जैसे देशों की बढ़ती हुई पारस्परिक निर्भरता तथा आने वाले समय में भारत एवं पाकिस्तान के परस्पर सम्बन्धित हित आदि) भारत और पाकिस्तान जो अब अवसरवाद की राजनीति से शासित है, इस प्रक्रिया को अपनाने के इच्छुक नहीं है।

त्रिपक्षीय प्रक्रिया को प्रारम्भ एवं संचालित करने की जिम्मेदारी न्याय एवं विवेक की दृष्टि से जम्मू-कश्मीर के लोगों पर आती है, जिनके वास्तविक नियन्त्रण रेखा के दोनों ओर रहने वाले नस्लीय एवं क्षेत्रीय समूहों को चाहिए कि वे त्रिपक्षीय प्रक्रिया के स्वरूप तथा जम्मू-कश्मीर की समस्या के उचित एवं न्यायपूर्ण हल पर सहमत होकर, एक संयुक्त मंच की स्थापना करें। यह मंच प्रथम तो जम्मू-कश्मीर के लोगों को त्रिपक्षीय स्वरूप के लिए प्रेरित एवं समन्वित करें द्वितीय, दोनों देशों में विद्यमान शान्ति प्रिय एवं प्रजातान्त्रिक शक्तियों एवं संगठनों से प्रगाढ़ सम्बन्ध स्थापित करें, तथा तृतीय, त्रिपक्षीय समाधान के पक्ष में अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन एकत्र करें।

जम्मू-कश्मीर के लोगों के लिए भारत और पाकिस्तान के लोगों के बीच एक योजक कड़ी या सेतु के रूप में कार्य करने के लिए आज सही एवं उचित समय है। इस प्रकार वे भारत पाक के बीच कश्मीर को लेकर होने वाले परमाणु युद्ध को टाल सकते हैं तथा दक्षिणी एशिया एवं समूचे विश्व में शान्ति, प्रजातन्त्र एवं प्रगति की प्रक्रिया को स्थायित्व प्रदान कर सकते हैं।

❋ ❋ ❋

सामान्य नागरिक संहिता पर उच्चतम न्यायालय के निर्देश स्त्री-पुरुष समानता ही वास्तविक मुद्दा

I

1. हाल ही में सुप्रीम कोर्ट की इस टिप्पणी ने जिसमें अब तक की समस्त सरकारों पर यह आरोप लगाया है कि वे संविधान के अनुच्छेद 44 के प्रावधानों को क्रियान्वित करने में पूर्णत: असफल रही है (इस अनुच्छेद में राज्य को यह कर्तव्य सौंपा गया है वह इस बात के पूर्ण प्रयास करेगा कि समस्त लोगों के लिए एक समान नागरिक संहिता लागू की जावे) तथा भारत की संघीय सरकार को समान नागरिक संहिता को लागू करने के लिए उठाए गए कदमों तथा किए गए प्रयासों के बारे में 16 अगस्त 1995 तक एक शपथ पत्र देने का निर्देश दिया है, विभिन्न वर्गों के लोगों की ओर से भिन्न भिन्न प्रतिक्रियाएं आई हैं।

कुछ लोगों का विचार है कि यह निर्देश सरकार पर पूर्णत: लागू होता है तथा अन्य लोगों का यह विश्वास है कि यह प्रावधान केवल नीति निर्देशक प्रकृति का है।

II

2. इसके संदर्भ को देखा जाए तो, यह निर्देश माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा हाल ही में एक निर्णय में दिया गया था जिसमे यह प्रतिपादित किया गया है कि हिन्दू पति द्वारा इस्लाम धर्म स्वीकार करके अपनी प्रथम शादी को भंग या तलाक किए बिना दूसरी शादी कर लेने का कृत्य अवैध है तथा ऐसा करने पर पति के विरुद्ध एक से अधिक पत्नियां रखने के जुर्म में मुकदमा चलाया जा सकता है।

3. न्यायालय ने निर्णय दिया था कि पक्षकारों पर लागू होने वाले पर्सनल लॉ के अन्तर्गत सम्पादित किया गया विवाह किसी दूसरे पर्सनल लॉ के अन्तर्गत केवल इस आधार पर भंग या निरस्त नहीं किया जा सकता कि पति या पत्नी में से किसी एक ने अपना धर्म परिवर्तित कर लिया है। न्यायालय ने यह माना है कि इस्लाम धर्म में परिवर्तित हो जाना तथा बाद में एक और शादी कर लेने मात्र से एक हिन्दू विवाह को भंग नहीं किया जा सकता जो बाकायदा हिन्दू विवाह अधिनियम के अन्तर्गत सम्पादित किया गया है तथा जब तक इस अधिनियम के अन्तर्गत निर्धारित आधारों में से किसी एक के कारण हिन्दू विवाह को भंग नहीं कर दिया जाएगा तब तक दम्पत्ति में से कोई भी द्वितीय शादी के लिए संविदा नहीं कर सकता। न्यायालय ने और आगे यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि प्रथम शादी के अस्तित्व में रहते हुए दूसरी शादी करना गैर

कानूनी होगा क्योंकि यह हिन्दू विवाह अधिनियम की अवहेलना करना होगा तथा यह कृत्य भारतीय दण्ड संहिता में परिभाषित द्विपत्नीकरण का अपराध होगा। यह निर्णय उन सभी प्रकरणों पर लागू होगा, जिनमें पूर्व के धर्म परिवर्तन के बावजूद हिन्दू विवाह विधि के अन्तर्गत सम्पादित विवाह को बाद में मुस्लिम व्यक्तिगत विधि के अन्तर्गत निरस्त कर दिया हो तथा जब तक विधि के अन्तर्गत सम्पादित प्रथम विवाह को भंग नहीं कर दिया जाएगा, धर्म परिवर्तन आधार पर दूसरा विवाह करने का अधिकार हासिल नहीं होगा।

III

4. स्पष्टत: उपरोक्त निर्णय दो मुख्य बिन्दुओं पर जोर देता है। प्रथम तो यह निर्णय केवल ऐसे विवाहों की ही मनाही करता है जिसमें पति पत्नी में एक, जो पहले से एक पत्नीवादी हिन्दू विवाह अधिनियम के अन्तर्गत विवाहित है, इस्लाम धर्म में परिवर्तित होकर, प्रथम विवाह के विधि सम्मत ढंग से निरन्तर जारी रहने के बावजूद दूसरी बार विवाह करता है। इस दृष्टिकोण से, यह निर्णय, जो द्विपत्नीकरण के लिए धर्म के व्यापक दुरुपयोग पर रोक लगाता है, सही दिशा में उठाया गया कदम है।

दूसरे, यह मुस्लिम समाज के किसी व्यक्ति को, मुस्लिम विधि के अन्तर्गत दिए गए किसी अधिकार को प्रभावित नहीं करता है जिसमें एक मुस्लिम पति को एक समय चार पत्नियां रखने का अधिकार दिया गया है। इस दृष्टि से इस निर्णय ने कोई नया आधार या सिद्धान्त नहीं दिया।

IV

5. सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश के ऊपर दृष्टिपात करें, तो इसकी मात्र सिफारिशें या निर्देशक प्रकृति इस तथ्य से प्रकट होती है कि न्यायालय किसी संवैधानिक नीति निर्देशक तत्व की क्रियान्विति पर जोर देने से दूर रहा है, और केवल मात्र साधारण तौर पर प्रधानमंत्री के माध्यम से सरकार को यह निर्देश दिया है कि वह संविधान के अनुच्छेद 44 पर एक ताजा नजर डालें अर्थात् इसका पुनरावलोकन करे।

6. न्यायमूर्ति सहाय ने अपने निर्णय में कहा है कि सरकार को भलीभांति यह सलाह दी जाएगी कि वह विधि आयोग को यह जिम्मेदारी सौपे, जो अल्पसंख्यक आयोग से परामर्श के बाद इस प्रकरण का परिक्षण करें तथा आधुनिक समय की स्त्रियों के अधिकारों की मान्यता या सिद्धान्त के आधार पर व्यापक एवं स्पष्ट व्यवस्था की रूप रेखा तैयार करे। ऐसा पहली बार नहीं हुआ कि सर्वोच्च न्यायालय ने एक समान नागरिक संहिता की आवश्यकता पर बल दिया हो। 1985 में शाह बानो में भी, एक समान नागरिक संहिता के सम्बन्ध में सरकार की निष्क्रियता पर इसी प्रकार की विचारधारा व्यक्त की थी।

V

7. हालांकि, न्यायमूर्ति कुलदीपसिंह द्वारा की गई कतिपय टिप्पणियां कि ''सिक्खों, बौद्धों और जैनों सहित हिन्दुओं ने राष्ट्रीय एकता तथा पूर्णता के लिए अपनी भावनाओं तथा उसूलों का त्याग किया है, अन्य समुदायों ने ऐसा नहीं किया है, जबकि संविधान समूचे भारतवर्ष के लिए एक समान नागरिक संहिता की स्थापना करता है।'' यथा ''जिन लोगों ने विभाजन के बाद भारत में रहना पसन्द किया है वे भली भांति जानते हैं कि भारतीय नेतागण दो या तीन राष्ट्रों के सिद्धान्त में स्थापना नहीं करते थे, तथा यह भी जानते हैं कि भारतीय गणतन्त्र में केवल एक राष्ट्र की स्थापना होनी थी, भारतीय राष्ट्र-तथा कोई भी समुदाय धर्म के आधार पर अपनी पृथक सत्ता या अस्तित्व रखने का दावा नहीं कर सकता।'' स्पष्टत: यह टिप्पणी, जो कोई कानूनी भावना प्रकट नहीं करती, कई राजनैतिक चक्कर और दांव पेच लिए हुए है। इन टिप्पणियों ने कई नाराजगी और चिन्ता पैदा की है।

VI

8. प्रथम तो उपरोक्त टिप्पणी यह गलतफहमी पैदा कर देती है कि एक समान नागरिक संहिता को अपनाना राष्ट्रीय एकता के निर्माण में एक प्रमुख घटक है। लेकिन यह बात किसी भी भांति वास्तविकता को इंगित नहीं करती। उदाहरण के तौर पर पाकिस्तान समस्त मुस्लिमों पर लागू एक समान शरियत कानून भी, बंगाली मुसलमानों तथा पश्चिमी पाकिस्तान के मुस्लिमों के बीच किसी प्रकार की राष्ट्रीय एकता की स्थापना नहीं कर पाया। क्या एक समान आपराधिक संहिता तथा लगभग 80 प्रतिशत लेन-देन व व्यवहारों के पहले से ही एक समान भारतीय कानूनों से नियन्त्रित होने से जैसे किराएदारी, सम्पत्ति के हस्तान्तरण, संविधा माल विक्रय, फेरा (विदेशी मुद्रा विनियम अधिनियम) तथा कस्टम से सम्बधित समस्त विधियां जो बिना किसी साम्प्रदायिक विधि के प्रभाव के, सभी पर समान रूप से लागू होती है और अधिक राष्ट्रीय एकता का निर्माण कर पाए हैं। क्या हिन्दुओं, सिक्खों, बौद्धों तथा जैनों के ऊपर लागू एक समान नागरिक संहिता इन सम्प्रदायों को एक दूसरे के निकट ला पाई है। इन सभी प्रश्नों का उत्तर नकारात्मक है। आज भारत में विविध सम्प्रदायों के बीच जितना मतभेद या जितनी दूरी है उतनी पहले कभी नहीं रही। यहां तक कि हिन्दु भी आपस में लड़ रहे हैं जैसा की न्यायालयों में विचारधीन प्रकरणों से स्पष्ट है समग्र राष्ट्र की स्थिति भी इससे भिन्न नहीं हो सकती। क्योंकि यह सब हमारे राष्ट्रीय ढांचे के परिणाम स्वरूप उत्पन्न स्थिति है जो एक केन्द्रीकृत आधारित शासन व्यवस्था, अपराधीकृत एवं भ्रष्ट राजनीति, अकुशल अर्थव्यवस्था तथा व्यवहार के घटिया स्तर पर आधारित है।

9. दूसरे उपरोक्त टिप्पणी एक यह विचारसूत्र भी खड़ा करती है कि कुछ सम्प्रदाय जिन्होंने समान नागरिक संहिता के हक मे अपना पर्सनल लॉ का त्याग नहीं किया है वे भारत राष्ट्र का अंग बनने योग्य नहीं है। किन्तु विदेशों पर दृष्टिपात करें तो रूस, चीन आदि कई देशों में अल्पसंख्यक वर्ग जो अपने पर्सनल लॉ से शासित होते हैं अपने राष्ट्र के अन्य समूहों के साथ महत्वपूर्ण भाग का निर्माण करते हैं।

10. तीसरे, उपरोक्त टिप्पणियां यह भावना उत्पन्न करती है कि स्त्रियों के लिए सामाजिक न्याय और मानव अधिकार का एक मात्र मुद्दा एक समान नागरिक संहिता का है अथवा स्त्रियों के प्रति हो रहे अत्याचार केवल मात्र एक समान नागरिक संहिता अपनाने से ही समाप्त किए जा सकते हैं। लेकिन तथ्य यह है कि वर्तमान में मौजूद सभी व्यक्तिगत कानून तथा अन्य सभी कानून, भारत और अन्य देशों में भी पुरुषों के पक्ष में झुके हुए हैं। एक समान नागरिक संहिता पर जोर देने का तात्पर्य है कि स्त्रियों के खिलाफ सभी बातों को ज्यों की त्यों रखते हुए एक समान नागरिक विधि का निर्माण करना।

हमें सर्व प्रथम जिसकी आवश्यकता है वह यह है कि वर्तमान व्यक्तिगत विधियों में लिंगभेद को समाप्त किया जावे। अन्यथा सरकार हम पर एक ऐसा समान कानून थोप देगी जो स्त्रियों के विरुद्ध विचारधाराओं व पूर्वाग्रहों से ओतप्रोत होगा। लेकिन स्थिति यह है कि पुरुष प्रधान विचारों से शासित होने वाली संस्थाएं, केवल मात्र एक ऐसी समान नागरिक संहिता की बात करती है जो महिलाओं को विवाह के सम्बंध में एक समान अधिकार देती है तथा और अधिक कुछ नहीं देती।

निम्नांकित कदम लिंग समानता स्थापित करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं—

(ए) पितृसत्तात्मक प्रणाली को समाप्त करके तथा माता व पिता दोनों के संयुक्त नाम वाले वंश को मान्यता देने वाले सिद्धान्त को अपना कर महिलाओं को सामाजिक आधार पर शक्तिशाली बनाना।

(बी) परिवार की समस्त चल व अचल सम्पत्ति पर पति व पत्नी दोनों के संयुक्त स्वामित्व को वैधानिक घोषित करके महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाना।

(सी) दस वर्ष तक छोटी से लेकर बड़ी राजनीतिक संस्थाओं में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण करके महिलाओं को राजनैतिक तौर पर सशक्त बनाना, इसमें से 10 प्रतिशत आरक्षण गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाली महिलाओं के लिए हो।

(डी) उचित शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुरक्षा उपलब्ध करवा के जनसंख्या नियन्त्रण तथा पर्यावरण प्रबन्धन में महिलाओं को प्रभावी भूमिका देकर, गरीबी रेखा के नीचे

वाली महिलाओं को नि:शुल्क शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुरक्षा उपलब्ध करवा के तथा विवाह की उम्र बढ़ा कर, महिलाओं को सांस्कृतिक तौर पर सशक्त बनाना।

(ई) एक पारिवारिक हिंसा व आत्याचार विरोधी अधिनियम अपना कर जिसमें वैवाहिक बलात्कार की विचारधारा शामिल हो, तथा स्त्री को वैवाहिक गृह का स्वामित्व प्रदान कर स्त्रियों को पारिवारिक स्तर पर सशक्त बनाना। वर्तमान वैवाहिक विधियों में अपनी पत्नी के यौन शोषण को दण्डनीय अपराध नहीं बनाया गया है।

VII

11. एक समान नागरिक संहिता का मुद्दा लिंग समानता के कार्यक्रम के लिए बहुत अधिक महत्व नहीं रखता। इसका तात्पर्य केवल यही है कि बहु पत्नी वाद पर रोक लगाए तथा तलाक कानून को उदार बनाए। स्त्रियों को राजनैतिक, आर्थिक, सास्कृतिक एवं पारिवारिक तौर पर सक्षम व सशक्त बनाए बिना केवल अकेला यह कानून (यानि समान नागरिक संहिता का कानून) अधिक सहायता करने वाला नहीं है जैसा कि हिन्दू विवाह अधिनियम की क्रियान्विति के 4 दशकों के अनुभव से स्पष्ट है।

12. हालांकि एक समान नागरिक संहिता का तात्पर्य एक ऐसे कदम से लिया गया है जो मुस्लिम अल्पसंख्यकों को उनकी धार्मिक पहचान से वंचित कर देगा। स्पष्टत: इसमें एक भावनात्मक स्वरूप को अपना लिया है जिसे राष्ट्रीय स्तर पर विचार विमर्श करने तथा बहुत ही सावधानीपूर्वक संभालने या संचालित करने की आवश्यकता है।

13. इस सम्बन्ध मे कोई निर्णय केवल प्रेरणा एवं प्रोत्साहन के आधार पर लिया जाना चाहिए न कि बलपूर्वक। और यह सही है कि सार्थक प्रेरणा या प्रोत्साहन के लिए उचित वातावरण की आवश्यकता होती है। कोई भी विवेकपूर्ण व्यक्ति यह स्वीकार नहीं कर सकता कि आज की स्थिति इस प्रकार के वार्तालाप या विचार विमर्श के लिए उचित है, वर्तमान स्थिति जिसे निम्नांकित घटनाओं ने दूषित कर दिया है—बाबरी मस्जिद को गिरा देना (जबकि गुरुद्वारा साहिब गंज की घटना, जो 1947 के पहले की सिक्खों और मुस्लिमों के बीच सशस्त्र लड़ाई की घटना है अभी भी धर्मान्ध पाकिस्तान में ताजा बनी हुई है), मुसलमानों से रोज यह मांग करना कि वे अपनी मातृभूमि के प्रति वफादारी या स्वामीभक्ति को साबित करे, ठाकरे की यह धमकी कि यदि कोई असामाजिक तत्व ही मुस्लिम धर्म के नाम पर किसी घोषित आपराधिक कृत्य में भाग लेता है तो समूचे सम्प्रदाय को ही समूल नष्ट कर दिया जाएगा, 1947 के बाद लगभग 22000 साम्प्रदायिक दंगों का रिकार्ड तथा उर्दू भाषा आदि के वैधानिक अधिकारों का हनन करना आदि। स्पष्ट है कि एक विस्फोटक

स्थिति जिसमें व्यक्तिगत जीवन तथा धार्मिक पहचान को असुरक्षा या खतरे की भावना अल्पसंख्यकों में व्याप्त है, किसी भावनात्मक विषय पर विचार विमर्श करने के लिए उचित अवसर या समय नहीं है।

14. एक समान नागरिक संहिता का एक मात्र आधार एक ऐसी स्थिति होनी चाहिए जिसमें समस्त अल्पसंख्यक समुदाय अपने भविष्य की सुरक्षा महसूस करे। अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित प्रत्येक मुद्दे एवं समस्या को सहमति के आधार पर हल किया जाना चाहिए। बहुसंख्यक समाज द्वारा कोई चीज थोपने से तो अल्पसंख्यक वर्ग अलग हो जाने को बाध्य होता है।

वास्तव में तो अल्पसंख्यक वर्ग में किसी सुधार आन्दोलन की शुरूआत स्वयं उस सम्प्रदाय से ही होनी चाहिए। किसी सरकारी संस्था द्वारा किसी मामले में शीघ्रता नहीं की जानी चाहिए। 20.5.95

❋ ❋ ❋

(निम्नलिखित पेपर 16 जुलाई, 1995 को इंडिया इंटरनेशनल सेन्टर, दिल्ली सेमीनार में प्रस्तुत किया गया)

दक्षिण एशिया में सहकारिता निर्माण - समस्याएं और संभावनाएं

I

1. आज विश्व के प्रत्येक भाग में क्षेत्रीय सहयोग निर्माण का सवाल एक कहावत बन चुका है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि नई उभर रही समस्याओं— उदाहरणतया, पर्यावरणीय गिरावट, अधिक जनसंख्या, गरीबी, बेरोजगारी, अल्पसंख्यक भेदभाव या नस्लीय तकलीफें, मानव अधिकारों की अवहेलना, अधिनायकवाद, उपभोगवाद, इत्यादि—ने उनके प्रबंध के लिए नई प्रणाली के निर्माण की आवश्यकताओं को पैदा कर दिया है। पुराने विकास मॉडलों से पैदा हुई समस्याओं के हल पुराने प्रशासनिक तकनीक से नहीं निकल सकते।

2. प्रबंध की नई प्रणाली तेजी से विकसित हो रहे वैज्ञानिक-तकनीकी रचनातंत्र (यानि, अन्तरिक्ष, ऊर्जा, पदार्थ, जीव-विज्ञान, साइबरनेटिक्स, इत्यादि का नया विज्ञान और तकनीकी) और इसके सामाजिक श्रम विभाजन से स्वयं जन्म ले रही है, जिसमें एक विस्तृत परिचालन क्षेत्र की आवश्यकता है जो राष्ट्रीय सीमाओं को लांघ रहा है जिसे अन्तर देशीय या क्षेत्रीय सहकारिता की आवश्यकता है। यह सहकारिता क्षेत्रीय समूहों के रूप में सामने आ रही है, जिनका निर्माण साझे बाजार, सामूहिक सुरक्षा प्रणाली या संयुक्त जल प्रबंधन योजनाओं और ऊर्जा परियोजनाओं के आधार पर हो रहा है।

3. क्षेत्रीय समूह नई उभर रही विश्व व्यवस्था का एक रूप है। काफी संख्या में क्षेत्रीय समूह—जैसे कि ई.सी., एशियान, नाफ्टा, एन्जस, एपेक, इत्यादि—विश्व के विभिन्न भागों में पहले से ही बन चुके हैं।

4. नई उभर रही विश्व व्यवस्था का दूसरा सहकारिता वाला रूप बहु-आयामी संस्थाओं—जैसे डब्ल्यू.टी.ओ., जैव-विविधता, एन.पी.टी., यू.एन.एच.आर.सी., जनसंख्या पर यू.एन. आयोग, यू.एन. और इसकी विभिन्न एंजेसियां, डब्ल्यू.बी., आई.एम.एफ., आई.एल.ओ., इत्यादि—की शक्ल में सामने आ रहा है।

5. राष्ट्रवाद का अधि-राष्ट्रवाद में रूपान्तरण का एक प्रारम्भिक रूप क्षेत्रीय समूह तथा बहु-आयामी संस्थाओं का बनना है।

6. स्पष्टतया, आज दुनिया में मुख्य रुझान एकीकृत होने का है और खास करके आर्थिक सम्बद्धता प्रधान है। विकास की बाधाओं पर पार पाने के लिए

एकीकृत होने की आवश्यकता है। राष्ट्रीय राज्य अपने आप से भिन्न-भिन्न एकीकृत प्रक्रियाओं का प्रबंधन नहीं कर सकते। आज विश्व के क्रमिक विकास में आधारभूत बाधा—विश्व की एकीकृत हो रही प्रक्रियाएं तथा राष्ट्रीय प्रबंधनों की गैर-एकीकृत प्रक्रिया के बीच का अन्तर है।

II

7. दक्षिण एशिया (7 देशों वाला क्षेत्र), बावजूद इसके कि वह भौगोलिक तौर पर सटे हुए देशों से चरित्रित है, दुनिया की प्राचीन सभ्यताओं में से एक है, प्राकृतिक संसाधनों का धनी है तथा यहां मानव जाति का पांचवां हिस्सा निवास करता है जिसका इतिहास साझा है एवं सामाजिक-नस्लीय तौर पर घनिष्ट संबंध है, क्षेत्रीय सहयोग में पिछड़ा हुआ है। इसकी 150 करोड़ आबादी है, 70 करोड़ प्रभावी उपभोक्ता हैं, दूसरे नम्बर की (अमेरिका के बाद) रेल लाइनों (कुल 92256 किलोमीटर) का जाल है, दुनिया में सबसे ज्यादा सिंचित क्षेत्र (6,70,00,000 हैक्टेयर) है, काफी बड़ी संख्या में वैज्ञानिक और तकनीकी वाले लोग हैं जो कई विकसित क्षेत्रों से भी अधिक योग्यता वाले हैं, दुनिया में इस क्षेत्र का कोई मुकाबला नहीं है। परन्तु इन सभी सकारात्मक गुणों के बावजूद अफ्रीकन सब सहारा क्षेत्र के बाद दूसरे नम्बर का सबसे गरीब क्षेत्र चला आ रहा है।

8. यह ध्यान देने योग्य है कि आज दक्षिण एशिया में सभी देश बहुत ही मुश्किल समय से गुजर रहे हैं।

9. पाकिस्तान एक संग्राम क्षेत्र का चित्र पेश करता है जहां एक तरफ सत्ताधारी पाकिस्तान पीपल्स पार्टी है और दूसरी तरफ विपक्ष की मुख्य पार्टी पाकिस्तान मुस्लिम लीग (नवाज शरीफ गुट) के बीच लड़ाई की लाईन खिंची हुई है। बेनजीर भुट्टो की कठोर लाईन के बावजूद सरकार और मोहाजिर कौमी आन्दोलन—पाकिस्तान की आर्थिक राजधानी कराची सहित—के बीच अन्तहीन खूनी संघर्ष एक मवाद भरे सड़ रहे फोड़े की तरह है।

विदेशी मामले में यह लगातार भारत के साथ एक नम्बर के दुश्मन के तौर पर बर्ताव करता है तथा जम्मू-कश्मीर समस्या इसके राष्ट्रीय एजेण्डा का मूल मुद्दा है।

10. बंगलादेश एक तरफ सत्ताधारी बंगलादेश नेशनल पार्टी (बी एन पी) तथा दूसरी तरफ मुख्य विपक्षी पार्टी अवामी लीग सहित बहु-दलीय विपक्षीय गठजोड़ के बीच तीव्र टकराहट की पहचान रखता है।

विदेशी मामलों में, भारत के साथ इसके संबंध गंगा जल के वितरण पर विवाद एवं अन्य द्विपक्षीय मुद्दों पर विवाद लिए हुए हैं, जैसा कि चकमा आदिवासी, व्यापार, साझी सीमा, भारत को पारगमन सुविधाएं, भारत में बंगलादेशी अप्रवासी, इत्यादि।

हाल ही में ढाका ने 25 साल पुरानी भारत-बंगलादेश मित्रता संधि के नवीनीकरण नहीं करने की घोषणा की है।

11. श्रीलंका में उत्तर की तरफ सरकार एवं तमिल टाइगर (एल टी टी ई) के बीच बर्बर नस्लीय युद्ध जारी है। राष्ट्रपति चन्द्रिका कुमार तुंगे के नस्लीय शांति लाने के चुनावी वादे तथा शांति वार्ता के चार दौर के बावजूद अपने राष्ट्रीय एजेण्डे के तौर पर कोलम्बो ने कोई ठोस संघीय प्रस्ताव नहीं रखा है। स्वाभाविकतया, नस्लीय संघर्ष दुबारा नवीनीकृत अति प्रतिशोधी रूप में पुनः शुरू हो गया है।

विदेशी मामलों में नई दिल्ली के साथ इसका संबंध उतार-चढाव वाला रहा है। तमिल खाड़कूपन के साथ भारत द्वारा गलत ढंग से व्यवहार करना—पहले इसे हथियार बन्द करना और उसके बाद अपने सैनिक बल भेजकर उनके साथ लड़ाई करना—भारत की निष्पक्ष छवि प्रदर्शित नहीं होती।

12. नेपाल मोटे तौर से व्यापक पैमाने की हिंसा से मुक्त है तथा पुनः राजनीतिक तौर पर चौराहे पर खड़ा है। आने वाले चुनाव में, इसे चार मुख्य विकल्पों में से चयन करना है—अत्यधिक केन्द्रीकृत कम्युनिस्ट पार्टी, जी.पी. कोइराला के नेतृत्व में बाजार समर्थक नेपाली कांग्रेस धड़ा, के.पी. भट्टाराई के नेतृत्व में केन्द्रीकरण समर्थक नेपाली कांग्रेस ग्रुप तथा राजशाही समर्थक राष्ट्रीय प्रजातंत्र पार्टी (आर पी पी)।

विदेशी मामलों में इसका विश्वास है कि नेपाल के साथ भारत का व्यवहार निष्पक्ष नहीं है। 1950 की भारत-नेपाल मित्रता संधि में भारत-नेपाल व्यापार एवं पारगमन प्रबंध, जल बंटवारा और बिजली परियोजनाएं, आदि के संबंध में भारत की नियत के बारे में गहरा संदेह है।

13. भूटान एक छोटा हिमालयी राज्य अपनी सुरक्षा एवं विकास के लिए भारत पर अत्यधिक निर्भर है। एक लाख नेपाली प्रवासियों, जिन्हें भूटान से नेपाल की ओर धकेल दिया गया है। इस गंभीर समस्या से भूटान का सामना है। इसने भूटान और नेपाल के संबंधों को खराब कर दिया है। नेपाल भारत पर जोर दे रहा है कि शरणार्थी नेपालियों की समस्या का समाधान त्रिपक्षीय बातचीत के जरिए हल करे, परन्तु भारत ने दो पड़ोसी देशों के बीच मध्यस्थता निभाने से इनकार कर दिया है।

14. मारीशिस, हिंद महासागर में तीन द्वीपों से गठित, यह काफी हद तक अपनी सुरक्षा की आवश्यकताओं के लिए भारत पर निर्भर है।

15. भारत, इस क्षेत्र का सबसे बड़ा देश, गंभीर समस्याओं से ग्रसित है—जिसकी हिंसा ग्रस्त बन चुकी इसकी राजनीतिक प्रक्रिया अपराधीकरण, साम्प्रदायिक, जातिवादी, धन और बल आधारित हो चुकी है, इसकी उत्पादन प्रक्रिया अकुशल एवं उच्च लागत

द्वारा नियंत्रित है, इसकी वितरण प्रक्रिया आर्थिक असमानता, गरीबी, बेरोजगारी आदि के प्रभाव में है तथा इसकी सांस्कृतिक प्रक्रिया अनैतिक व्यवहार का अनुसरण करने वाली एवं घटिया मानदंडों वाली है।

विदेशी मामलों में, इसके अपने अधिकतम पड़ोसियों के साथ संबंध सौहार्द से कहीं दूर है एवं कुछ मामलों में अत्यधिक दुश्मनी भरे हैं। पाकिस्तान के साथ इसके संबंध चिर स्थायी शत्रुतापूर्ण चले आ रहे हैं। बंगलादेश के साथ इसके संबंध कड़वाहट के नजदीक है। श्रीलंका और नेपाल के साथ इसके संबंध, भारत के इरादों के बारे में अत्यधिक संदेहास्पद चले आ रहे हैं। पड़ोसियों के प्रति इसकी बड़े भाई की वृत्ति ने मानवीय, लोकतांत्रिक एवं न्यायपूर्ण वैश्विक व्यवस्था स्थापित करने के बारे में इसके बड़बोलेपन की हमेशा पोल खोली है।

16. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि दक्षिण एशिया के सभी देशों को कष्टप्रद चुनौतियों से सामना है। यह चुनौती भरी स्थिति इसकी वैज्ञानिक पूंजी का पलायन (यानि, इसके वैज्ञानिक और तकनीशियनों का विकसित देशों की और पलायन) तथा विदेशी पूंजी का अपने बाजारों में प्रवेश पर हिचकिचाहट, मिलकर इसे और अधिक जटिल बना देती है।

17. उपरोक्त वर्णित परिस्थिति का निराशावादी नजरिया यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग कायम करने की मुश्किल से ही कोई गुंजाइश है। परन्तु इस प्रकार के निष्कर्ष का अर्थ केवल यह होगा कि यूरोपियन कम्युनिटी (ई.सी.) एवं एसोसियेशन आफ साउथ'ईस्ट एशियन नेशन्स (एशियन) दोनों अत्यधिक फलते-फूलते क्षेत्रीय समूहों के ऐतिहासिक अनुभवों को नजरअन्दाज किया गया है।

III

18. ई.सी. और एशियान का ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि ये दोनों क्षेत्रीय ग्रुप अपने-अपने सदस्यों के बीच पारम्परिक झगड़ों की राख से उभरे हैं। ई.सी. का उद्‌भव द्वितीय विश्व युद्ध के मलबे से हुआ एवं जहां ई.सी. के दो नेतृत्वकारी खिलाड़ियों, फ्रांस और जर्मनी के बीच सैकड़ों सालों से ऐतिहासिक दुश्मनी चलती आई थी। एशियान का प्रादुर्भाव 1960 के दशक के शुरूआत में एक ऐसे समय हुआ जब मलेशिया और इंडोनेशिया के बीच विवाद बढ़ रहा था, जिसको समय रहते जल्द ही हल कर लिया गया। इसे समझ बनाने में 10 साल का वक्त लगा।

19. इन दोनों क्षेत्रीय समूहों के क्षेत्रीय सहयोग के रास्ते ने न केवल इनके अपने द्विपक्षीय मुद्दों को हल करने के लायक बनाया बल्कि इनके अपने-अपने घरेलू मसलों—जैसे, गरीबी, बेरोजगारी, अर्द्ध बेरोजगारी, अनपढ़ता, अस्वस्थता, जीवन

स्तर में गिरावट, इत्यादि—को भी हल करने में सहायता की है। बढ़ती आर्थिक सम्पन्नता ने राजनीतिक और सांस्कृतिक मामलों के सुधार में भी सहयोग किया है। यूरोपियन समुदाय (ई.सी.) ने पिछले 45 साल में प्रति व्यक्ति आय में तीन गुना बढ़ोतरी की है। पूर्वी एशिया में सन् 1970 से 1990 के बीच गरीबी 35% के स्तर से घट कर 10% रह गई है। इसके साथ ही अन्य सामाजिक सूचकों—जैसे कि जीवन-प्रत्याशा, शिशु मृत्यु दर, प्रौढ़ शिक्षा, जनसंख्या नियंत्रण, आदि—में अत्यधिक सुधार आया है।

20. सन् 1780 के 58 साल बाद ब्रिटेन की प्रति व्यक्ति आय दुगुनी हुई थी। 1780 के 47 साल बाद अमेरिका की आय दुगुनी हुई। सन् 1880 के बाद जापान की आय दोगुनी होने में 33 वर्ष लगे। परन्तु 1970 के बाद के समय में प्रति व्यक्ति आय के दो गुना होने में इन्डोनेशिया को 17 साल लगे, दक्षिण कोरिया को 11 साल लगे जबकि चीन को केवल 10 साल ही लगे।

21. पिछले 4 या 5 सालों में बड़े विकसित देशों का सकल घरेलू उत्पाद (जी डी पी) मुश्किल से 1 प्रतिशत से 2 प्रतिशत सालाना की दर से बढ़ा है। यही संक्रमण कालीन आर्थिकताओं (यानि, भूतपूर्व सोवियत ब्लाक के देश) की दरों में वास्तव में गिरावट (नकारात्मक) आई। इसके उलट पूर्वी एशियाई आर्थिकताएं 7 प्रतिशत प्रति वर्ष से अधिक दर से आगे बढ़ी।

22. एक दशक से अधिक समय से पूर्वी एशियन देश विकसित देशों की तुलना में अधिक तेजी से विकसित हो रहे हैं। पारम्परिक अर्थशास्त्र के अनुसार वैश्विक वृद्धि का इंजिन धनी देश हैं। परन्तु अब इस धारणा को पूर्वी एशिया के सच के सामने विराम लग गया, जिसने पश्चिम के बाजार-निर्देशित मॉडल और कम्युनिस्ट केन्द्रीकृत मॉडल के उलट इसने अपने बाजार और राज्य दखलन्दाजी (दोनों के) के सम्मिश्रण से बने 'कार्यवाहक (या क्रियात्मक) मॉडल' का अनुसरण किया है।

23. पूर्वी एशिया के चमत्कार के पीछे का कारण इस तथ्य में निहित है कि इस क्षेत्र के देशों ने बाजार के साथ-साथ मानवीय संसाधनों को विकसित करते हुए अधिकतम वैश्विक पूंजी को आकर्षित करने में कामयाबी हासिल की है। आज, वैश्विक पूंजी अपने घरेलू देश में कम फायदे के बावजूद निवेश करने की पुरानी पद्धति के उलट वहां दौड़ती है जहां इसको उचित पर्यावरण मिलता है।

IV

24. पूरे विश्व में क्षेत्रीय समूहों का अनुभव सकारात्मक रहा, खास करके दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) का सन् 1985 के पहले ढाका सम्मेलन में गठित करने के लिए प्रेरित किया। परन्तु एक दशक पुरानी सार्क प्रक्रिया द्विपक्षीय

संघर्ष, विशेष तौर भारत और पाकिस्तान के बीच जम्मू-कश्मीर विवाद में फंसी हुई है। अब तक इसने मुश्किल से ही कोई ठोस परिणाम निकाला है।

25. सार्क देशों के बहुमत ने सार्क दायरे में कभी भी द्विपक्षीय मुद्दों के प्रश्न को नहीं उठाया है। परन्तु भारत इस सवाल पर लगातार कन्नी काटता रहा है।

26. क्षेत्रीय सहयोग रवैये और व्यवहार दोनों में साझेदारी का प्रतिनिधित्व करता है। इसका निर्माण टकराहट की राजनीति, जो आपस में घृणा, सैन्यीकरण, हथियारों की दौड़ एवं संघर्ष की जन्मदाता है—के जरिए नहीं किया जा सकता है। जब तक द्विपक्षीय विवादों और उससे संबंधित शीत युद्ध की राजनीति का उचित प्रबंधन नहीं किया जाता है तो सहयोग का प्रश्न केवल लफ्फाजी रह जाता है।

27. अब यह और अधिक स्पष्ट हो गया है कि जब तक सार्क के दो मुख्य सदस्यों (भारत और पाकिस्तान) के बीच जम्मू-कश्मीर विवाद का हल नहीं निकाला जाता और इसी के साथ एक तरफ भारत और दूसरी तरफ शेष बचे सार्क सदस्यों के बीच अन्य टकराहटों का हल नहीं निकाला जायेगा तब तक सार्क आगे नहीं बढ़ सकता। परन्तु इस शांति प्रक्रिया को शुरू कौन करे?

28. इस समझौताकारी (मैत्रीपूर्ण) कदम की जिम्मेदारी तार्किक तौर पर इन सभी विवादों में सबसे बड़े पक्ष एवं दक्षिण एशिया क्षेत्र में सबसे बड़ी ताकत भारत की बनती है, जिसे दक्षिण एशिया में शांति हासिल करने और इसके सार्क भागीदारों को चाहे कुछ छूट देने की कीमत पर पड़ोसियों के बीच सौहार्द भरने के पवित्र कार्य को पूरा करना पड़े। दक्षिण एशिया के देशों के बीच विशेष तौर पर और दुनिया में आम तौर पर राजनीतिक विश्वास का माहौल पैदा करने के लिए यह त्याग बिल्कुल उचित है।

V

29. जम्मू-कश्मीर समस्या पर इसके बुनियादी स्वभाव एवं जमीनी हकीकत से शुरू करना उचित रास्ता है। बुनियादी तौर पर कानून की नजर में यह एक द्विपक्षीय मुद्दा है, लेकिन राजनीति की कसौटी पर यह एक त्रिपक्षीय सवाल है। इसकी एक मुख्य जमीनी हकीकत यह है कि भारत और पाकिस्तान दोनों ने इस समस्या पर अपने-अपने राष्ट्रीय सम्मान को दांव पर लगा रखा है। और दूसरी जमीनी हकीकत यह है कि कश्मीरी भारत से अलग होने के विकल्प पर डटे हुए हैं, अन्य नस्लीय पहचानों की अपनी-अपनी आकांक्षाएं और चिन्ताएं हैं।

30. इस समस्या के बुनियादी स्वभाव एवं जमीनी हकीकत के मद्देनजर एक न्यायपूर्ण, निष्पक्ष एवं सम्भव एक समाधान है, और हो सकता है, जो भारत और

पाकिस्तान दोनों के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों में एक तरफ समन्वय बैठाता हो और दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर राज्य के सभी नस्लीय समूहों की आकांक्षाओं और चिन्ताओं को पूरा करता हो। इस सिद्धान्त के आधार पर सम्पूर्ण राज्य पर भारत-पाक सहराज्य (जो जम्मू-कश्मीर राज्य के केवल रक्षा, विदेशी मामलों और मुद्रा के संबंधों को सम्भाले) स्थापित करना उचित विकल्प है, इसके साथ ही जम्मू-कश्मीर के आठों नस्लीय क्षेत्रों को पूर्ण स्वतंत्रता हो—इस प्रकार एक तरफ भारत, पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच साझेदारी पैदा होगी तथा दूसरी तरफ सार्क के विकास के लिए रास्ता खुल जायेगा।

31. सार्क देशों के बीच अन्य सभी द्विपक्षीय मसलों को सार्क के माध्यम के जरिए निपटाया जाना चाहिए।

VI

32. अब, यह और अधिक स्पष्ट हो गया है कि अगर सार्क का प्रयोग असफल होता है तो भारत के साथ-साथ अन्य दक्षिण एशियाई देशों के लिए और कहीं जाने का रास्ता भी बन्द होगा। भारत की तीव्र इच्छा और भारी कोशिश के बावजूद एशियान, अपेक या अन्य कोई क्षेत्रीय समूह ने भारत का स्वागत नहीं किया है। यही बात सार्क के दूसरे सदस्यों पर लागू होती है। पाकिस्तान और बंगलादेश दोनों किसी इस्लामिक आर्थिक समुदाय को बनाने में—उनके द्वारा विशेष प्रयास करने के बावजूद—असफल रहे हैं। इसी तरह हिन्द महासागर व्यापारिक ब्लाक के निर्माण का भारतीय विचार अव्यवहारिक रहा है। भारत का यह एक विचार जो ऐसे देशों (जिसमें दक्षिण अफ्रिका, श्रीलंका, मारीशस, मालदीव, ओमान, सिंगापुर, इंडोनेशिया और आस्ट्रेलिया शामिल हैं)—की एकता की कल्पना करता है जिनकी भौगोलिक नजदीकी, साझा भूतकाल, साझी आर्थिक समस्याएं, समान स्तर के आर्थिक विकास, इत्यादि नहीं हैं।

33. स्पष्टतया, अगर सार्क असफल होता है तो आम तौर पर सभी सदस्य देशों और खास तौर पर भारत व पाकिस्तान के लिए नुकसानदायक परिणाम निकल सकते हैं। सामान्यतया, यह दूसरे क्षेत्रों की तुलना में समस्त दक्षिण एशियाई देशों के विकास की प्रक्रिया को रोक सकता है। खास करके, आर्थिक बिगाड़ के साथ इनकी शीत युद्ध राजनीति और तेज होते आन्तरिक नस्लीय झगड़ों की वजह से भारत और पाकिस्तान जैसे बहु-नस्लता वाले देशों को अस्थिरता की तरफ धकेल सकता है।

34. प्रत्येक बुद्धिमान व्यक्ति गंभीरता से आशा करता है कि दक्षिण एशिया के देश (खास करके भारत और पाकिस्तान) वर्तमान वास्तविकता को स्वीकार करेंगे और समय रहते उचित निष्कर्ष पर पहुंचेंगे।

VII

35. वर्तमान विश्व हालात में पुराने विकास मॉडल—यानि, पश्चिमी उदारवादी, कम्युनिस्ट और मजहबी मॉडल ने अभी तक कुछ अच्छा नहीं कर पाये हैं और अत्यधिक नाकाफी साबित हुए हैं, इससे यह साफ हो गया है कि आज विश्व को एक नये वैश्विक दिशा वाले विकास मॉडल की जरूरत है जो एक तरफ प्रकृति और मानव समुदाय के बीच और दूसरी तरफ धनवानों और गरीबों के बीच के साथ-साथ व्यक्ति और समाज में समन्वय पैदा करे।

36. इस तरह का मॉडल तीन मूल सिद्धान्तों के आधार पर स्थापित किया जाना चाहिए और किया जा सकता है।

(क) विकास का केन्द्र प्रकृति और मानव दोनों को रखा जाए।

(ख) सभी तरह के भेदभावों को समाप्त किया जाए—गरीब-अमीर, लिंग असमानता, नस्लीय-जातीय या धार्मिक भेदभाव, गांव-शहर, विकसित बनाम अविकसित देश, इत्यादि।

(ग) लोगों का (खास करके महिला ओर वंचित लोगों का) सशक्तिकरण किया जाए।

37. स्वाभाविकतया, तरह-तरह के अन्तर्राष्ट्रीय अनुभवों से सीखते हुए एक नये टिकाऊ विकास मॉडल को शक्ल देने के लिए भारत को सभी सार्क साझेदारों के सहयोग से चौतरफा अनुसंधान करना होगा।

❋ ❋ ❋

कश्मीर में अघोषित भारत-पाक युद्ध
जम्मू-कश्मीर के लोग सर्वोत्तम मध्यस्थ हो सकते हैं

I

1. 'कश्मीर में भारत और पाकिस्तान के बीच एक अघोषित युद्ध जारी है' यह वक्तव्य 21 मई 1995 को पत्रकारों के समूह के सम्मुख भारतीय सेना प्रमुख एस.आर. चौधरी ने दिया। यद्यपि भारतीय सरकारी प्रवक्ता प्राय: सीमा की वास्तविक स्थिति को कम करके बताते हैं परन्तु आज सम्पूर्ण भारत-पाक सीमा ज्वंलत बिन्दु बनी हुई है। कहीं भी, किसी भी समय कुछ भी भड़क सकता है। पिछले दो महिनों की घटनाएं भारत-पाक संबंधों में निरंतर गिरावट को दर्शा रही है और दोनों देशों के बीच कुछ गंभीर उबाल का संकेत दे रही है।

2. दो महिने पहले (2 अप्रेल, 1995) भारत के प्रधानमंत्री ने सेनापतियों की संयुक्त मिटिंग को संबोधित करते हुए पाकिस्तान की तरफ से किसी तरह के दुस्साहस के प्रति 'सचेत' रहने की चेतावनी दी।

3. 7 मई 1995 को भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा जारी की गई नई वार्षिक रिपोर्ट में कहा है कि भारत के विरुद्ध पाकिस्तान द्वारा विनाश और आतंक को अक्षुण्ण समर्थन, द्विपक्षीय वार्ता को पुन: आरम्भ करने पर इसकी अनिच्छा तथा साथ ही इसके निरन्तर नकारात्मक नजरिये ने माहौल को बिगाड़ दिया है एवं द्विपक्षीय संबंधों में अर्थपूर्ण प्रगति को रोक दिया है। इस्लामाबाद के गुप्त परमाणु हथियार निर्देशित कार्यक्रम तथा इसकी जायज रक्षात्मक जरूरतों से बढ़ कर इसके द्वारा जटिल शस्त्र एवं सैन्य तकनीक को हासलि करने पर इस रिपोर्ट ने गंभीर चिन्ता जताई है। पाकिस्तान अपनी तरफ से निरन्तर घोषणा करता रहा है कि भारत 'कश्मीर युद्ध को कराची में लड़ रहा है' तथा 'पृथ्वी मिसाइल को इस्तेमाल करने के लिए अपनी सेना को सौंपने का नई दिल्ली का निर्णय पाकिस्तान की सुरक्षा के लिए खतरा है।'

4. चरारे शरीफ दरगाह के जलाए जाने के तुरन्त बाद (12 मई, 1995), गृह राज्य मंत्री राजेश पायलेट द्वारा धमकी यदि वह (पाकिस्तान) राज्य में विनाशकारी दखलन्दाजी नहीं रोकता है तो उसे गंभीर परिणाम भुगतने होंगे एवं जम्मू-कश्मीर क्षेत्र के पाक अधिकृत हिस्से भारत में मिलाने के अधूरे काम को हमें ताकत से पूरा करना होगा। तीन दिन बाद ही रेलमंत्री जाफर शरीफ द्वारा युद्ध की चेतावनी पाकिस्तान को दी गई। उसी लहजे में प्रत्युत्तर देते हुए पाकिस्तान ने जवाब दिया कि उसकी सेना सुरक्षा की किसी भी तरह की चुनौती से निपटने के लिए पूर्णतया तैयार है।

5. मई के अन्तिम सप्ताह में भारतीय सेना की आधुनिक जरूरतों को पूरा करने के लिए राज्य सभा के कई सदस्यों ने सैन्य खर्च बढ़ाने का आग्रह किया। जसजीतसिंह, राजा मेनन, जे.डी. अग्रवाल, एल.सी.जैन, ब्रह्माचलानी, इत्यादि कई सैन्य विश्लेषकों ने भी सैन्य क्षेत्र को और अधिक राशि आवंटन करने की मांग की, चाहे इसके लिए लोगों पर होने वाले खर्च में कटौती क्यों न करनी पड़े। 24 मई, 1995 को गल्फ न्यूज ने खबर दी कि इस चालू वर्ष के स्तर को बनाए रखने के लिए अपने बजट के सैन्य आवंटन में 14 प्रतिशत की बढ़ोतरी की है। एक उच्च स्तरीय बजट पूर्व की इस्लामाबाद बैठक में यह सर्वसम्मति रही कि सुरक्षा के लिए जो बजट में आवंटन किया गया है वह सीमा पर तनावपूर्ण स्थिति के मद्देनजर अपर्याप्त है परन्तु यह भी निर्णय लिया गया कि चालू आर्थिक सीमाओं के रहते हुए सुरक्षा के लिए और अधिक राशि देना संभव नहीं है।

काफी अरसे से विश्व बैंक भारत और पाकिस्तान पर यह दबाव डालता रहा है कि वे अपना सैन्य खर्च एवं विकास से असंबंधित खर्च को कम करें।

6. 14 जून, 1995 को कुछ अखबारों ने खबर दी कि भारतीय सेना प्रधान के अनुसार सियाचीन ग्लेशियर पर भारत और पाकिस्तान की सेना के बीच झड़पें हुई हैं।

7. 19 जून, 1995 को जम्मू के दैनिक अखबार ने यह उजागर किया कि पाकिस्तान ने अपनी सैन्य टुकड़ियों को सीमा के पास तैनात किया है तथा उत्तरी कमांड के वरिष्ठ अधिकारियों के अनुसार पाकिस्तान की तरफ से किसी भी खतरे से निपटने के लिए भारतीय सेना पूर्णतया तैयार है।

8. मुश्किल से एक दिन भी ऐसा नहीं गुजरता जब जम्मू-कश्मीर सीमा के एक या दूसरी जगह पर भारत और पाकिस्तान के बीच गोलाबारी ना होती हो।

9. अन्तर्राष्ट्रीय शांति के लिए कारनेगी एनडोवमेंट ने अपनी ताजा रिपोर्ट (मई 1995) में कश्मीर पर भारत-पाकिस्तान के बीच गंभीर तनावपूर्ण संबंध होने के कारण उनके मध्य बढ़ती जा रही परमाणु हथियारों की बढ़ती हौड़ के खिलाफ चेतावनी दी है।

10. अब, अपनी हैलीफैक्स मीटिंग (22 जून 1995) के सम्पन्न होने के बाद जी-7 बैठक ने 'टकराहट की गंभीर संभावना वाली जम्मू-कश्मीर समस्या पर शांतिपूर्ण समझौते के लिए, इन्टरनेशनल हथियार नियंत्रण को समर्थन करने के लिए, परमाणु-परिसीमन संधि (एन.पी.टी.) में शामिल होने के लिए एवं बालिस्टिक मिसाइल की तैनाती की और आगे कदम बढ़ाने से रोकने के लिए या क्षेत्रीय हथियारों को उकसाने वाले किसी भी कदम को रोकने के लिए' भारत और पाकिस्तान को न्यौता दिया—इस प्रकार उपमहाद्वीप में तनाव कम करने तथा विश्वास निर्माण करने में मदद हुई है।

11. स्पष्टतया, भारत और पाकिस्तान ऐसे बिन्दु पर पहुंच गये हैं जहां मात्र एक दुर्घटना दोनों देशों को एक अन्य खूनी झड़प में धकेल सकती है—इस प्रकार वह झड़प दक्षिणी एशिया को विश्व के सबसे खतरनाक युद्धग्रस्त क्षेत्र में बदल सकती है।

II

12. यहां से भारत और पाकिस्तान किधर जाएं? उनके सामने तीन विकल्प खुले हैं, यानि (क) एक दूसरे के खिलाफ युद्ध में उतर जाएं, (ख) मौजूदा शीत युद्ध की अवस्था जारी रहे, और (ग) जम्मू-कश्मीर समस्या का राजनीतिक हल ढूंढा जाए।

A

13. पहला विकल्प एक पूर्णतया आत्मघाती प्रस्तावना है। प्रत्येक दृष्टिकोण से यह हानिकारक है।

14. तर्कसंगत तौर पर, शीत युद्ध के बाद के वैश्विक युग में देशों के बीच के विवादों से निपटने का उचित तरीका युद्ध नहीं है और ना ही हो सकता है, खास करके जब परमाणु शक्तियों सहित लगभग सभी देश विवादों एवं टकारावों के हल के लिए बातचीत और वाद विवाद के रास्ते की वकालात करने लगे हैं।

15. ऐतिहासिक तौर पर, तीन भारत-पाक युद्धों का अनुभव भारत-पाक के बीच किसी एक भी द्विपक्षीय समस्या या दोनों में से किसी एक देश की भी कोई खास समस्या को हल करने में युद्ध की तकनीक की प्रभावी भूमिका को साबित नहीं करता।

16. मानवीय दृष्टि से, चौथा भारत-पाक युद्ध का दौर इनके परमाणु आयाम के साथ यदि कभी हुआ तो दोनों देशों के लिए अनर्थकारी होगा। विशेषज्ञों के मुताबिक युद्ध के दौरान और बाद में मानव जीवन को अकल्पनीय नुकसान उठाना पड़ेगा। पिछले तीन भारत-पाक युद्धों में भारत की तरफ लगभग 10 हजार जानें गई और कमोबेश यही संख्या पाकिस्तान की तरफ रही है। दोनों तरफ के घायलों की कुल संख्या 60,000 के करीब रही है। युद्ध के दौरान और बाद में लोगों की दुख तकलीफ दोनों देशों में बहुत अधिक बढ़ी है।

17. आर्थिक तौर पर, एक नया भारत-पाक युद्ध दोनों देशों के लिए एक भयंकर माली नुकसान का कारण बनेगां ऐसे युद्ध में दोनों देशों को युद्ध को चलाने में लगने वाले खर्च के अलावा अरबों रुपयों के भौतिक संसाधनों की बर्बादी झेलनी होगी। एक विशेषज्ञ आकलन के अनुसार अकेले भारत को ऐसे युद्ध में 35000 करोड़ रुपये का मूल्य चुकाना होगा। केवल 1971 के भारत-पाक युद्ध ने भारत से 400 करोड़ रुपये वसूले थे, जबकि करोड़ों रुपयों की अन्य तरह के भौतिक नुकसान को झेलना पड़ा। दोनों देशों की विकास गतिविधियां ठप्प पड़ गई थी।

18. मानसिक तौर पर, नये भारत-पाक युद्ध से दोनों देशों के लोगों को भारी धक्का पहुंचेगा। कोई युद्ध नहीं चाहता। यहां या वहां कहीं भी युद्ध की खुमारी नहीं है। भारत और पाकिस्तान दोनों तरफ के लोग अपने बीच शांति और दोस्ती चाहते हैं। परन्तु, लोगों की इच्छाओं के उलट दोनों देशों का कट्टर नेतृत्व अपनी-अपनी पार्टियों की अवसरवादी राजनीति के साथ अपने बहुसंख्यकवादी सह अन्ध-राष्ट्रवादी मॉडल (1947 से पहले की मानसिकता वाले मॉडल) को अख्तियार करके तार्किक तौर पर शीत युद्ध, टकराव एवं कभी-कभी खुले युद्ध की तरफ बढ़ते हैं।

19. भारत की सैन्य क्षमता थोड़ी अधिक होने के कारण पाकिस्तान पर आसान जीत की उग्र राजनीतिक कल्पना वर्तमान विश्व के अनुभव को अनदेखा करती है, जिसने दर्शाया है कि एक निश्चित हालात में कमजोर पक्ष भी अत्यधिक ताकतवर विरोधी को गंभीर नुकसान पहुंचा देता है—उदाहरणतया, 1960 और 1970 के दशकों में वियतनामी छापामारों ने अमेरिका को झुका दिया, स्थानीय छापामारों के दबाव में सोमालिया से अमेरिकी सेना को हटना पड़ा, अंगोला, मोजाम्बिक, इथोपिया और अफगानिस्तान में भूतपूर्व सोवियत संघ स्थानीय विद्रोह को नियंत्रित करने में असफल रहा, शीत युद्ध के समय सैनिक महाशक्तिवाद विश्व को अपनी योजना के मुताबिक बदलने में असफल साबित हुआ, इत्यादि।

20. स्पष्टतया, तथ्य युद्ध के विकल्प के औचित्य को रद्द करते हैं। युद्ध के विकल्प की आकांक्षा करना—जिसमें आम तौर पर दुनिया के लोगों और खास तौर पर भारत-पाक के लोगों को अद्वितीय नुकसानदायक परिणाम भुगतने होंगे—जो निरा पागलपन और मानवता के खिलाफ अक्षम्य अपराध होगा तथा विशेष तौर पर इन दो देशों के लिए, जिनकी आधी आबादी भूखी रहती है, एक तिहाई बेघर हैं, 3/5 भाग अनपढ़ हैं, दसवां भाग बेरोजगार है तथा 2/5 भाग अर्द्ध बेरोजगार है।

B

21. दूसरे विकल्प (यानि, चल रहे शीत युद्ध गतिरोध की निरन्तरता) पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि भारत व पाकिस्तान दोनों पिछले 48 सालों में मुश्किल से ही कभी तनाव-मुक्त रहे हैं। 1971 के बाद से चाहे उन्होंने कोई युद्ध नहीं लड़ा है परन्तु उनके बीच युद्ध जैसे संबंध बने रहे हैं।

22. भारत-पाक के साढ़े चार दशक से अधिक समय पहले अलग होने के बाद दोनों देशों के राष्ट्रीय एजेण्डे में सैनिककरण उच्चतम आवश्यकता रही है, जिससे इन्होंने अपनी-अपनी विकास प्राथमिकताओं को दूसरे स्थान पर धकेला है तथा इनके बीच द्विपक्षीय व्यापार (व्यापारिक क्षेत्रों के अनुसार 10,000 करोड़ वार्षिक के लगभग हो सकता है) का गला घोटा है—इससे इनकी आर्थिकताओं को अत्यधिक नुकसान पहुंचा है।

23. दक्षिण एशिया में उच्च सैनिक खिलाड़ी रहते हुए तथा तीसरी दुनिया के देशों के बीच सबसे बड़े हथियारों के आयातकर्ता के तौर पर भारत व पाकिस्तान दोनों ने सैनिक साजो-सामान पर करोड़ों रुपये प्रतिवर्ष खर्च किये हैं, जिसको इन देशों के बहुत से लोगों की खुशहाली के लिए उपयोग किया जा सकता था। बढ़ते सैनिक खर्च ने दोनों देशों को अधिक से अधिक उधार (बाह्य के जैसे ही आन्तरिक कर्ज) मांगने को मजबूर किया है और इन्हें हमेशा बढ़ते वित्तीय घाटे में धकेला है। बढ़ते ब्याज को चुकाने के लिए ज्यादा से ज्यादा विदेशी और घरेलू कर्जा हासिल करने की आवश्यकता पैदा हुई है, जबकि निरन्तर भारी वित्तीय घाटे के कारण इनकी आर्थिकता महंगाई के जाल में फंसी है, इसकी आर्थिकता उच्च लागत आर्थिक इकाई वाली बनती गई। इस प्रकार एक तरफ लोगों की खरीद शक्ति पर विपरीत प्रभाव डाला तो दूसरी तरफ इनके निर्यात और आयात व्यापार (निरन्तर चल रही भुगतान संतुलन की समस्या का कारण) को घाटे में धकेला है।

24. इनकी राष्ट्रीय प्राथमिकताओं की विकृति का परिणाम ना केवल इनकी राष्ट्रीय आर्थिकताओं की बर्बादी में निकला है, बल्कि इनकी अपनी-अपनी राजनीतिक प्रक्रियाओं का अपराधीकरण भी हुआ तथा अपने मानवीय संसाधनों के विकास (शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सेवाओं और ऊपरी ढांचे में बहुत कम निवेश के कारण) की अवहेलना की है।

25. दोनों देशों का 48 साला रिकार्ड दर्शाता है कि भारत-पाक विरोध के नुकसानदायक निहितार्थ निकले हैं, जिससे भारत-पाकिस्तान दोनों की जनता के लिए अत्यधिक नकारात्मक परिणाम पैदा हुए हैं। यह विभत्स रेकार्ड—जहां एक तरफ भारत में 'राम राज्य', जहां 'सच्चाई, अहिंसा और सम्पन्नता' को स्थापित करने का अनुमानित दावा गांधीजी ने सन् 1947 से पहले किया था तो दूसरी तरफ 1947 से पहले का मुस्लिम लीग का 'पवित्र भूमि' कायम करने के दावे (कि जहां उप-महाद्वीप का मुस्लिम समुदाय सुसम्पन्नता के जीवन का आनन्द उठायेगा) का बुरी तरह असफल होना—सिद्ध करता है।

C

26. तीसरे विकल्प के संबंध में (यानि, जम्मू-कश्मीर समस्या के राजनीतिक हल को निकालना) यह देखा जा सकता है कि आज विश्व में विवादों के हल के लिए बातचीत एक सामान्य मानदंड बन गया है। शीत युद्ध के बाद के काल में विश्व के विभिन्न भागों में बहुत से संकटग्रस्त स्थानों पर उनका हल निकाला गया है, उनमें से कुछ—यानि, दक्षिण अफ्रिका, इजराइल-पैलेस्टाइन विवाद, आदि—द्विपक्षीय वार्ता के जरिए समझौता हुआ है और अन्य विवाद—यानि, कम्बोडिया, अंगोला, हैती, इत्यादि—में

बहु स्तरीय रचनातंत्र के जरिए समझौते हुए हैं। प्रत्येक समझौते में कुछ देना-कुछ लेना होता ही है। यहां तक कि शीत युद्ध के काल में बहुत झगड़ों को—उदाहरणतया, अमेरिका-वियतनाम, चीन-सोवियत संघ, चीन-वियतनाम—बातचीत के जरिए हल किया गया है।

27. भारत और पाकिस्तान दोनों ने भी अपने कुछ झगड़ों को अतीत में शांतिपूर्ण तरीके से सुलझाया है। तत्कालीन बंटवारे के बाद की समस्याओं—जनसंख्या के इधर से उधर जाने का मामला, वित्तीय मामलों, इत्यादि—को दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों के संयुक्त बैठक के द्वारा हल ढूंढा गया। सिंधु नदी जल विवाद को विश्व बैंक की मध्यस्थता से सुलझाया गया, जबकि रन-कच्छ के विवाद को अन्तर्राष्ट्रीय पंचाट अधिकरण के निर्णय के जरिए हल किया गया। 1965 का ताशकन्द समझौता सोवियत संघ की मध्यस्थता में हुआ। 1972 का शिमला समझौता द्विपक्षीय कूटनीति की देन है।

28. जम्मू-कश्मीर समस्या, एक अत्यधिक जटिल मसला होते हुए भी ऐसा मसला नही है जिसका हल ना निकाला जा सकता है। भारत और पाकिस्तान के लोग दो आम तथ्यों से वाकिफ हैं : (अ) 48 वर्षों के लम्बे शीत युद्ध के नकारात्मक नतीजे, जिसके तीन मुख्य सबब हैं (यानि (i) जम्मू-कश्मीर समस्या को दोनों देशो में से कोई भी अपनी-अपनी शर्तों पर या दूसरे की कीमत पर हल नहीं कर पाये हैं; (ii) भारत और पाकिस्तान के बीच ना खत्म होने वाली टकराहट चाहे वह 48 वर्ष पुरानी है या वर्तमान अथवा भविष्य में होगी—इन सबकी कीमत लाभ से कहीं अधिक है, तथा (iii) निरन्तर चल रहे भारत-पाक शीत युद्ध का नतीजा भारत और पाकिस्तान के और अधिक दरिद्र होने में निकला है और (ब) देशों की अन्तरनिर्भरता की नई वैश्विक वास्तविकता ने भारत और पाकिस्तान के भविष्य को साझा और साथ-साथ का बना दिया है।

III

29. जन चेतना की प्रक्रिया को अवरुद्ध करने की मुख्य रुकावट संकीर्ण राष्ट्रवाद है, जिसे दोनों देशों के मुख्य राजनीतिक दलों द्वारा काम में लिया जाता है। बहुसंख्यक राष्ट्रवाद (विभिन्न लेबलों के तहत—जैसे कि धर्म निरपेक्षवाद, समाजवाद, मंडलवाद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद या हिन्दुत्व, आदि) का झंडा उठाये हुए भारत की मुख्य धारा के राजनीतिक दल, इस पर जोर देते हैं कि जम्मू-कश्मीर से भारत का अलगाव देश के लिए बर्बादी है, जबकि सुन्नी-मुस्लिम राष्ट्रवाद (इस्लामिक गणतंत्र या अखिल इस्लामाबाद की आड़ में) का झंडा फहराते हुए पाकिस्तानी इस पर जोर देते हैं कि सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर पर नियंत्रण सुनिश्चित किये बिना पाकिस्तान अधूरा

रह जाता है। इस प्रकार 1947 के बाद के तमाम काल में कोई भी मुख्यधारा की पार्टी सत्ता में आयी हो, जम्मू-कश्मीर समस्या दोनों देशों के राष्ट्रीय एजेण्डे पर सबसे ऊपर रही है, तथा उनमें से प्रत्येक ने अपने पक्ष को सही या गलत सभी तरीकों से उचित ठहराने की कोशिश की है।

30. अतर्कसंगत स्थिति थामे हुए एक तरफ नई दिल्ली लगातार यह घोषणा करती है कि जम्मू-कश्मीर भारत संघ का अभिन्न अंग है और दूसरी तरफ 1972 के शिमला समझौते की कसम खाती है जिसके पैरा संख्या 6 में लिखा है कि जम्मू-कश्मीर एक विवाद है। भारत की मुख्यधारा से कश्मीरियों के सम्पूर्ण अलगाव की वास्तविकता को छुपाते हुए, भारत कश्मीरी खाड़कुओं को पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित एवं समर्थित आतंकवाद के रूप में पेश कर रहा है। घाटी में मानवाधिकारों का उल्लंघन करते हुए भारत अपनी सैन्य गतिविधि के कदम को धर्म निरपेक्षवाद एवं लोकतांत्रिक व्यवस्था को सुरक्षित करने के रूप में चरित्रित करता है।

31. इसी प्रकार, इस्लामाबाद अतर्कसंगतता से शुरू करते हुए एक तरफ तो शिमला समझौते (जिसमें द्विपक्षीय वार्ता के जरिए जम्मू-कश्मीर समस्या के शांतिपूर्ण हल का समाधान दिया गया है) से अपनी प्रतिबद्धता निरन्तर स्वीकार करता है, तथा 1948-49 के संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों (जो जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के लिए जनमतसंग्रह का हल देता है तथा जनमतसंग्रह से पहले पाक अधिकृत जम्मू-कश्मीर हिस्से से पाकिस्तान की फौजों के वापिस लौटने को आवश्यक मानता है) को लागू करने की मांग करता है। जम्मू-कश्मीर समस्या को बिना शर्त द्विपक्षीय वार्ता के जरिये हल करने की अपनी ही घोषणा का उल्लंघन करता है परन्तु अब वह इस तरह की वार्ता को शुरू करने के लिए कुछ पूर्व शर्तें लगाता है।

32. जब तक इस तरह का दोगलापन भारत-पाकिस्तान द्वारा अपनाया जाता रहेगा, जम्मू-कश्मीर समस्या को ईमानदारी से नहीं हल किया जा सकेगा।

IV

33. अब तक भारत और पाकिस्तान के सत्ताधारी विशिष्ट वर्ग का दोगलापन क्यों कायम रहा है इसका कारण जम्मू-कश्मीर समस्या के दो बुनियादी पहलुओं और तीन जमीनी हकीकतों के बारे में सूचना की कमी में निहित है।

34. जम्मू-कश्मीर समस्या का प्रथम आधारभूत पहलू है और बना हुआ है, कि यह एक विवादित मुद्दा है, बना हुआ है, जैसा कि भारत, पाकिस्तान और विश्व द्वारा स्वीकार किया हुआ है। इसका उद्भव 1947 के विभाजन से हुआ, पिछले 47 साल से यह भारत-पाक विवाद यू.एन. के एजेण्डे पर निरन्तर चल रहा है, सन् 1949 से ही जम्मू और श्रीनगर में यू.एन. पर्यवेक्षक मौजूद हैं, तीन भारत-पाक युद्धों में यह

मुख्य प्रश्न बना रहा है तथा 1947 के बाद की ज्यादातर भारत-पाक उच्च स्तरीय बातचीत में वाद-विवाद का एक मात्र मुद्दा रहा है, सन् 1972 के शिमला समझौते के द्वारा इसको भारत और पाकिस्तान के बीच एक द्विपक्षीय मुद्दा स्वीकार किया गया, दुनिया के लगभग सभी देशों (भारत और पाकिस्तान सहित) द्वारा इसे भारत-पाक विवाद के रूप में माना है, इत्यादि, इसे कानूनी आधार पर भारत और पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय मसला बनाते हैं। परन्तु राजनीतिक तथ्य—यानि, अपने वर्तमान राजनीतिक दर्जे को बदलने के लिए काश्मीरियों का सशस्त्र संघर्ष, जम्मू-कश्मीर के लोगों की भागीदारी के साथ इस समस्या को हल करने का विश्व के लोगों का दृष्टिकोण, जेके की बहु-नस्लीय इकाई (विभिन्न नस्लीयताओं के बीच राय-मशविरा की आवश्यकता) की सच्चाई, इत्यादि—इसे त्रिपक्षीय प्रश्न बनाते हैं।

35. जम्मू-कश्मीर समस्या का द्वितीय आधारभूत पहलू है और रहेगा, कि यह राज्य एक बहु नस्लीय क्षेत्रीय इकाई है और रहेगा, जिसमें कम से कम आठ इकाइयां हैं, यथा, घाटी में कश्मीरी समुदाय, जम्मू, कठुआ और उधमपुर जिलों के साथ-साथ डोडा और राजौरी जिलों में कुछ छितरे रूप में डोगरी समुदाय, लद्दाख में लद्दाखी, कारगिल में कारगिली, राजौरी और पुंछ जिलों तथा आजाद कश्मीर में पठवारी, गिलकित में गिलगिती, बाल्टिस्तान में बाल्टी, राजौरी और पुंछ जिलों में तथा कश्मीर घाटी के कुछ क्षेत्रों में पहाड़ी (गुज्जर और बकरवाल समुदाय) लोग हैं।

36. जम्मू-कश्मीर समस्या के संबंध में तीन जमीनी वास्तविकताओं के बारे में, पहली वास्तविकता यह है कि विश्व में सभी देश, हालांकि जम्मू-कश्मीर समस्या को भारत और पाकिस्तान के बीच एक द्विपक्षीय मसला स्वीकार करते हैं, साथ ही राज्य का भविष्य में किए जाने वाले किसी भी निपटारे (या हल) में जेके के लोगों की उसमें भागीदारी की मांग रखते हैं—इस प्रकार असल में इस समस्या को एक त्रिपक्षीय सवाल में बदल देते हैं।

37. द्वितीय जमीनी हकीकत है कि भारत-पाक स्तर पर, जहां भारत के लोग जेके को भारतीय संघ के भाग के तौर पर रखना चाहते हैं, वहीं पाकिस्तान के लोग उन्हीं की तरह (भारत के लोगों की तरह) जेके को अपने राष्ट्रीय दायरे में रखना चाहते हैं। इस सवाल पर दोनों देशों ने अपना राष्ट्रीय सम्मान दाव पर लगा रखा है और अपनी-अपनी राष्ट्रीय प्रतिष्ठा की रक्षा में कोई भी कीमत चुकाने को तैयार हैं।

38. तीसरी जमीनी हकीकत है कि राज्य के स्तर पर, जहां बहुत बड़ी संख्या में कश्मीरी भारत से अलग होना चाहते हैं, वहां अन्य नस्लीय इकाइयों को अपनी खुद की आकांक्षाएं और उद्देश्य हैं।

V

39. उपरोक्त वर्णित दो आधारभूत पहलुओं और तीन जमीनी वास्तविकताओं से कुछ निष्कर्ष निकलते हैं, जो नीचे दिये जा रहे हैं।

40. प्रथम आधारभूत पहलू (यानि, जेके समस्या, जो एक त्रिपक्षीय विवाद है) की मांग है कि सभी तीनों संबंधित पार्टियों के हितों में बराबरी के आधार पर संतुलन बैठाया जाए ताकि प्रत्येक पार्टी को संतुष्टि मिले। यह जम्मू-कश्मीर समस्या के एक पक्षीय या द्विपक्षीय हल को रद्द करता है। इस प्रकार ऐसे सभी विकल्प जो एक पक्ष या दूसरे पक्ष के प्रति पक्षपाती हों, व्यवहारिक हल नहीं बन सकते हैं।

उदाहरण के लिए एक देश में विलय का विकल्प दूसरे देश के राष्ट्रीय हितों के खिलाफ जाएगा। इससे भारत-पाक संबंधों को तनाव रहित बनाने में कोई सहायता नहीं मिलेगी। यह शीत युद्ध को जिन्दा रखेगा।

पुनः, जम्मू-कश्मीर की आजादी का विकल्प दोनों देशों की पसन्द नहीं होगी। इससे अफगानिस्तान की तरह घाटी भारत और पाकिस्तान के बीच प्रतिद्वन्द्विता का बिन्दु बन सकती है। यह इससे बड़ी शक्तियों के बीच विवादास्पद मुद्दा भी बन सकता है, जिनमें से प्रत्येक विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में अपने प्रभाव क्षेत्रों को बढ़ाने की कोशिश में लगी है।

आगे, सम्पूर्ण कश्मीर राज्य या केवल घाटी को 10 वर्ष के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ की ट्रस्टीशिप के तहत रखने का विकल्प भारत और पाकिस्तान के बीच मित्रता और सद्भाव का भाव पैदा करने और दक्षिण एशिया को कलह मुक्त क्षेत्र बनाने में कोई सहायता नहीं देगा। एक ही राजनीतिक केन्द्र के अभाव में बुनियादी तौर पर विभिन्न राजनीतिक शक्तियां जो विभिन्न सामाजिक एवं नस्लीय आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं वे सभी संयुक्त राष्ट्र संघ की ढीली-ढाली एवं अप्रभावी बल की मौजूदगी में अपनी-अपनी सर्वोच्चता हासिल करने की होड़ करने लगेंगी। इसी प्रकार, वास्तविक नियंत्रण रेखा या ट्रायस्ट मॉडल के अनुसार जम्मू-कश्मीर राज्य के विभाजन का विकल्प भारत के लिए अधिक फायदेमन्द है लेकिन काश्मीरियों और पाकिस्तान दोनों के लिए यह अस्वीकार्य है।

41. दूसरा बुनियादी पहलू (यानि, जम्मू-कश्मीर राज्य का बहु-नस्लीय इकाई होना) की आवश्यकता यह है कि सभी पहचानों की आकांक्षाओं और चिन्ताओं का बराबरी के आधार पर संतुलन बैठाया जाए ताकि वे निष्पक्षता महसूस कर सकें।

42. जम्मू-कश्मीर समस्या की तीनों जमीनी वास्तविकताएं इस तथ्यात्मक तर्क पर जोर देती हैं कि सभी पक्षों द्वारा बन्दूक की राजनीति को रद्द करते हुए जम्मू-कश्मीर

समस्या को केवल बातचीत एवं समझौते के शांतिपूर्ण तरीके के जरिए ही सुलझाया जा सकता है।

VI

43. सभी संबंधित तीनों पक्षों (जो पहले बुनियादी पहलू की मांग है) के हितों को संतुलित करने के संबंध में भारत एवं पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों को सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर राज्य पर भारत-पाक सहराज्य (जो केवल जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा, विदेशी मामले और मुद्रा के मामलों को संभालेंगे), स्थापित करके किया जाना चाहिए और किया जा सकता है। जबकि, जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों को भारत-पाक सहराज्य के तहत अधिकतम सम्भव स्वायत्तता देकर सामंजस्य बैठाया जाना चाहिए एवं बैठाया जा सकता है।

44. जम्मू-कश्मीर की भिन्न-भिन्न आकांक्षाओं एवं चिन्ताओं में समन्वय बैठाने के संबंध में (जो दूसरे बुनियादी पहलू की आवश्यकता है), राज्य का संघीय संविधान अपनाकर सामंजस्य बैठाया जाना चाहिए एवं बैठाया जा सकता है, जिसमें एक तरफ प्रत्येक नस्लीय क्षेत्र को अधिकतम संभव स्वायत्तता के साथ जिला, ब्लाक एवं गांव परिषदों को और अधिक शक्ति हस्तांतरण करने का प्रावधान किया जाए, तथा दूसरी और जम्मू-कश्मीर राज्य को एक एकल इकाई में संगठित किया जाए, जिसमें राज्य का एक साझा मुखिया होगा जिसे नस्लीय क्षेत्रीय परिषदों द्वारा चुना जायेगा एवं एक साझा उच्च न्यायालय, एक साझा चुनाव आयोग, एक साझा लोक सेवा आयोग, एक साझा पर्यावरण आयोग एवं एक साझा मानव संसाधन विकास आयोग होगा, और इन सभी की नियुक्ति नस्लीय क्षेत्रीय परिषदों द्वारा की जायेगी जिसमें प्रत्येक नस्लीयता का एक सदस्य होगा।

45. वर्तमान विश्व में भारत-पाक सहराज्य एक नये ग्लोबल निर्देशित मॉडल का एक नया प्रयोग होगा—जो यह दर्शायेगा कि विभिन्न राष्ट्रों के अलग-अलग राष्ट्रीय हितों में कैसे सामंजस्य बैठाया जा सकता है एवं विभिन्न नस्लीयताओं की भिन्न-भिन्न आकांक्षाओं और चिन्ताओं में समन्वय बैठाया जा सकता है।

VIII

46. त्रिपक्षीय शांति प्रक्रिया का सबसे उचित प्रारम्भिक बिन्दु यह है कि इसकी पहल नई दिल्ली और इस्लामाबाद दोनों के संयुक्त तत्वावधान में की जानी चाहिए, परन्तु उनकी 1947 के विभाजन वाली मानसिकता, 1947 के बाद की शीत युद्ध के प्रभुत्व वाली राजनीति तथा लोगों में कमजोर स्थिति की उनकी बाधा में जकड़े होने के कारण भारत और पाकिस्तान दोनों इस रास्ते को अपनाने लायक नहीं है।

47. इस प्रकार, परिस्थितियों ने स्वत: ही इस शांति प्रक्रिया को शुरू करने

और आगे ले जाने की जिम्मेदारी जम्मू-कश्मीर के लोगों के कन्धे पर डाल दी है।

48. त्रिपक्षीय शांति प्रक्रिया का पहला कदम होना चाहिए कि भारत की तरफ के जम्मू-कश्मीर में विभिन्न नस्लीय पहचानों के प्रतिनिधियों की आपस में निरन्तर वार्ता चलायी जाए। त्रिपक्षीय परिप्रेक्ष्य (बड़ा उद्देश्य) एवं उसकी आवश्यकताओं एवं उसके आशय पर आम सहमति हो जाने के बाद कार्यक्रम आधारित संयुक्त मंच बनाया जाना चाहिए। इस मंच को एक तरफ जम्मू-कश्मीर के लोगों को प्रेरित करने और लामबंद करने का प्रयास करना चाहिए तथा दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर के दूसरे भाग की लोकतांत्रिक शक्तियों के साथ नजदीकी एवं भाईचारे के संबंध बनाने की कोशिश करनी चाहिए। सभी पक्षों के साथ आवश्यक विचार-विमर्श एवं तैयारी के बाद संयुक्त मंच को जम्मू-कश्मीर के दोनों हिस्सों में रहने वाली सभी नस्लीय पहचानों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाया जाना चाहिए, ताकि जम्मू-कश्मीर समस्या पर एक स्वीकृत समाधान निकाला जा सके।

49. इस प्रकार का स्वीकृत समाधान ना केवल एक साझी बुनियाद पर जम्मू-कश्मीर के लोगों को एकट्ठा होने में भारी प्रोत्साहन देगा, बल्कि भारत-पाकिस्तान में सभी निष्पक्ष और न्यायप्रिय मानसिकता वाले लोगों को सक्रिय भागीदार बनायेगा तथा इसके पक्ष में अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के राजनीतिक एवं नैतिक समर्थन की गति को तेज कर देगा।

अभी तक, द्विपक्षीय या बहुपक्षीय, सभी कोशिशें चिर-स्थायी भारत-पाक गतिरोध को तोड़ने में असफल रही है। हो सकता है इतिहास ने यह कार्य जम्मू-कश्मीर के लोगों को सौंपा हो जो वर्तमान परिस्थितियों के तहत 'भारत और पाकिस्तान के बीच अघोषित युद्ध (या अप्रत्यक्ष युद्ध)' में सबसे अच्छे मध्यस्थ की भूमिका अदा कर सकते हैं। दिनांक 25.6.95

❋ ❋ ❋

अभी तक असमान और अतर्कसंगत दुनिया

1. मानव समाज 21वीं शताब्दी की दहलीज पर खड़ा है। इस शताब्दी में मानव समाज के इतिहास में बहुत बड़े बदलाव की आशा की जाती है। क्योंकि पिछले 100 साल में मनुष्य ने विज्ञान, तकनीकी और समाज विज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व विकास करके सामाजिक उन्नति की नई सम्भावनाओं को खोल दिया है।

I प्रकृति और मनुष्य के बारे में नया दृष्टिकोण

2. यह वास्तविकता के बारे में वह नई अवधारणा है जो प्रकृति और मानव के बारे में लाखों साल पुराने विश्वासों की जगह तेजी से नया दृष्टिकोण सामने ला रही है।

3. उदाहरण के लिए, परिस्थितिकी विज्ञान (Ecological Science) हमें सिखाता है कि प्रकृति पर विजय (जैसा कि मार्क्सवाद और उदारवाद जोर देते हैं) हासिल नहीं की जा सकती बल्कि उसे संरक्षित और संवर्धित करना चाहिए। यह हमें सूचित करता है कि मानव द्वारा प्राकृतिक घटनाक्रम का अति उपयोग और दुरुपयोग ने पर्यावरणीय संसाधनों—यानि वायु, जल और भूमि—को प्रदूषित और जहरीला बना दिया है जिससे हमारा ग्रह संकट ग्रस्त हो चुका है और कुछ समय बाद ही इसका परिणाम समस्त मानव जाति के विनाश और इस ग्रह के जैव-जीवन की बरबादी के रूप में निकल सकता है। यह हमें सिखाता है कि मानवीय आवश्यकताओं का प्राकृतिक संरक्षण के साथ हमेशा तालमेल कायम रखा जाना चाहिए और विभिन्न तरह के घटनाक्रमों के सहअस्तित्व की धारणा को अपनाना चाहिए।

4. अन्तरिक्ष का ज्ञान हमें सिखाता है कि हर जगह के लोगों को साझी और एक जैसी समस्याओं से सामना करना पड़ रहा है और इसीलिए सबके लिए उनका समान महत्व है। यह हमें सार्वभौमिक मानवतावाद का नजरिया प्रदान करता है जो हमसे मानव समाज के संचालनकारी उसूल के तौर पर एक तर्कसंगत मानवतावाद के दृष्टिकोण को अपनाने की मांग करता है।

5. सापेक्षतावाद का सिद्धान्त हमें पदार्थ, ऊर्जा, अन्तरिक्ष और समय के बीच अन्तरसंबंध को दर्शाता है। यह हमें बताता है कि पदार्थ और ऊर्जा एक दूसरे में रूपान्तरित किए जा सकता है तथा अन्तरिक्ष और समय निरपेक्ष नहीं है। यह सामाजिक निरपेक्षता के सिद्धान्त को रद्द करता है और इंगित करता है कि प्राकृतिक नियमों की तरह ही सामाजिक सच्चाई भी सापेक्ष और आंशिक या अपूर्ण होती है।

6. कणीय भौतिकी दर्शाती है कि प्रकाश और पदार्थ दोनों में तरंग और कण के गुण साथ-साथ विद्यमान हैं। वे पुरातन भौतिकी में वर्णित गति के निश्चयात्मक नियमों का पालन नहीं करते हैं। इसने सामाजिक निश्चितता के सिद्धान्त या ऐतिहासिक

अनिवार्यता की धारणा को छिन्न-भिन्न कर दिया है। इसने दर्शाया है कि प्रत्येक विकसित हो रही प्रक्रिया में कई संभावनाएं मौजूद होती हैं, जिनमें से बदलते शक्ति-संतुलन के मुताबिक कोई भी एक संरचना दूसरी का स्थान ले सकती है।

7. सूक्ष्म-विश्व का विज्ञान हमें पदार्थ और ऊर्जा के मूलभूत घटकों के बारे में ज्ञान प्रदान करता है। जैव-विज्ञान हमे जीवन के अनुवांशिक विशेषताओं का ज्ञान करवाता है। यह एक ऐसी खोज है जो बहुत सी बिमारियों के इलाज में प्रभावी बदलाव लायेगी। द्रव्य विज्ञान हमें बहुत से द्रव्य घटनाक्रमों के विशिष्ट गुणों से परिचित करवाता है। ये सभी विज्ञान उद्घाटित करते हैं कि अकार्बनिक और कार्बनिक प्रक्रियाओं के बीच कोई अनुल्लंघनीय विभाजन रेखा नहीं है।

8. तकनीकी की सम्पूर्ण शृंखला एक तरफ हमारी ज्ञानेन्द्रियों का विस्तार करके वास्तविकता का अधिक ठोस रूप से पता लगाने में सहायता करती है तो दूसरी तरफ हमें वास्तविकता के साथ ठीक और सटीक व्यवहार करने के प्रभावी तरीके प्रदान करती है।

9. वास्तविकता की विभिन्न प्रक्रियाओं के बारे में यह सारा विविध ज्ञान हमारी परिकल्पना करने, सोचने, विश्लेषण करने, कहने, करने और विभिन्न प्रक्रियाओं को संगठित करने के तरीको में उचित बदलाव की माँग करता है। ऐसे बदलावों के बगैर नए ज्ञान का सम्पूर्ण उपयोग संभव नहीं है।

10. अनिवार्यत: इसे एक दो तरफा मूलभूत सामाजिक तब्दीली की आवश्यकता है यानि एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच एक नए सामंजस्य की जरूरत है और दूसरी तरफ समाज और इसके सदस्य तथा एक व्यक्ति व दूसरे व्यक्ति के बीच एक नए सामंजस्य (तालमेल) की जरूरत है। यह दो तरफा समन्वय कायम किए बगैर आज मानवजाति के अस्तित्व को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता।

11. यद्यपि दो तरफा सामंजस्य कायम करना आसान नहीं है क्योंकि ऐसे मूलभूत बदलाव में गैर-सामंजस्यकारी पुराने मानदंडों की जगह नये सामंजस्यकारी मानदंडों का प्रतिस्थापन करना होता है। गैर-सामंजस्यकारी उसूल एक तरफा प्रभुत्व पर आधारित थे, यानि, प्रकृति पर समाज का प्रभुत्व, समाज का अपने सदस्य पर प्रभुत्व या इसके उलट (निरंकुश सामाजिक प्रमुखों के मामले में जो सामूहिक समाज पर एक तरफा प्रभुत्व रखते थे), अथवा कमजोर व्यक्ति पर मजबुत व्यक्ति का सवार होना। प्रकृति पर समाज के एक तरफा प्रभुत्व का कारण मानवीय अज्ञानता और लालच रहा है, जबकि सामाजिक प्रभुत्व के सभी रूपों का आधार शक्तिशाली, धनवानों और विशेष अधिकार वाले लोगों का कमजोर, गरीब और वंचित लोगों पर सर्वोच्चता की धारणा रही है।

12. दो तरफा सामंजस्य कायम करने की प्रक्रिया अन्तरसंबंधित है। जब तक समाज के भीतर सामंजस्य कायम करने कि प्रक्रिया साथ-साथ नहीं चलती तब तक प्रकृति और समाज के बीच सामंजस्य ठीक से कायम नहीं किया जा सकता। परन्तु समाज में सामंजस्य कायम करने का सवाल मूलभूत तौर पर वर्तमान अनुचित एवं गैर-न्यायिक व्यवस्था को एक उचित और न्यायिक व्यवस्था में तब्दील करने का सवाल है। नि:संदेह, ऐसा मूलभूत परिवर्तन मानव के दृष्टिकोण, तरीके और संगठन में चौ तरफा बदलाव की माँग करता है।

II गंभीर चुनौतियां और खतरनाक आशंकाएं

13. ऐसे वक्त में जब मानव समाज को प्रकृति के साथ तथा अपने अन्दर के संबंधों में तत्काल उचित बदलाव करने की आवश्यकता है, यह कई गंभीर चुनौतियों और दो अत्यधिक खतरनाक रणनीतिक चुनौतियों से सामना कर रहा है, ये सभी विश्व के विभिन्न भागों में लगातार घट रही घटनाओं पर एक या दूसरे तरीके से प्रभाव डाल रही हैं।

14. पहली गंभीर चुनौती प्रभुत्वकारी बहुसंख्यकों के खिलाफ किसी नस्ली या धार्मिक समूह के विद्रोह के रूप में अल्पसंख्यकों के संघर्षों में वृद्धि की है। 1993 के आकलन के मुताबिक लगभग 73 देश ऐसे टकरावों से प्रभावित थे। दूसरा आकलन बताता है कि दुनिया में 1992 के बाद के संघर्षों में केवल 3 संघर्ष देशों के बीच हुए जबकि बाकी सभी 79 संघर्ष देशों के अन्दर ही लड़े गए हैं।

इनमें से ज्यादातर अल्पसंख्यक संघर्ष विकासशील देशों में ही सीमित रहे हैं। 1991 की यूएनडीपी की रिपोर्ट मे दर्ज है कि ''1945 के बाद तीसरी दुनिया में 120 से ऊपर झगड़े हुए हैं जिनमें द्वितीय विश्व युद्ध से भी अधिक, यानि 2 करोड़ लोगों की मौतें हुई है।'' इस वक्त चल रहे झगड़ों मे मानव समाज को घातक प्रभावों और भारी दुख तकलीफों से गुजरना पड़ रहा है। इन विवादों में सुडान में 10 लाख, सोमालिया में 5 लाख, अफगानिस्तान में 5 लाख, बोस्निया में 2 लाख लोग मारे जा चुके हैं। अभी तक इन लम्बे खूनी संघर्षों की प्रक्रिया को अन्तिम तौर पर बन्द कर पाने की तात्कालिक संभावना नजर नहीं आती है।

15. द्वितीय गंभीर चुनौती यह हैं कि शीत-युद्ध के बाद के समय में महाशक्तियों के द्वि-ध्रुवीय संघर्ष की जगह 5 बड़ी शक्तियों (यूएस, रूस, चीन, यूरोपीय संघ और जापान) में सर्वोच्चता के लिए गर्म प्रतियोगिता ने स्थान ले लिया है। ये अपने-अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिए व्यापक और अति महत्वपूर्ण मुद्दों पर भिन्न-भिन्न रुख अपनाए हुए हैं। इस प्रतियोगिता का सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण चीन में मानवधिकारों के सवाल पर, व्यापार समस्याओं पर, बीजिंग द्वारा परमाणु विस्फोट, इत्यादि पर

अमेरिका-चीन का विवाद है। ये विवाद ताइवान के राष्ट्रपति की यूएस यात्रा से तथा यूएस नागरिक हैरी-वू की चीन में गिरफ्तारी से और अधिक तेज हुए हैं। वाशिंगटन और टोकियो के बीच लगातार चल रहा व्यापार-झगड़ा इसका एक अन्य उदारहण है। फ्रांस का ईरान के साथ व्यापार; फ्रांस के परमाणु परीक्षण और अमेरिका की वीडियो फिल्मों पर वाशिंगटन-पैरिस का तनाव; अमेरिकी कम्पनियों पर कोटा (जिसे अमेरिका अनुचित समझता है) समाप्त नहीं करने की स्थिति में अमेरिका द्वारा यूरोपियन संघ पर अपने यहाँ व्यापार स्वीकृतियों के बदले 1 अरब डालर थोपने की धमकी देना; परमाणु मसलों तथा बोस्निया और चेचन्या पर मास्को-वाशिंगटन में मतभेद; बहुत से यूरोपिय मसलों पर यूएस और यूरोपियन संघ का अलग-अलग मत होना; कुरीयल द्वीपों पर मास्को-टोक्यो का मतभेद; चीन और एशियन का स्प्रेटली द्वीपों पर मतभेद; इत्यादि ने दुनिया के माहौल को जटिल बना रखा है। सभी अत्यधिक मनमुटाव वाले मुद्दों पर यूएस मुख्य पार्टी के रूप में मौजूद रहता है और वास्तव में बड़ी 5 शक्तियों के बीच इसकी सबसे बड़ी भूमिका है। इनमें से प्रत्येक पार्टी अपने हितों को उच्चतम हद तक पूरा करने की कोशिश में लगी हुई है, इसीलिए इन बड़ी शक्तियों के बीच तनाव बढ़ने की संभावना नजर आती है।

16. पश्चिमी उदारवादी मॉडल के गिर रहे आर्थिक हालात तीसरी गंभीर चुनौती है। यह पिछले 15 वर्षों से जापान को छोड़कर सभी ओईसीडी देशों में उच्च बेरोजगारी दर और स्थिर अल्प वृद्धि दर से स्पष्ट हो जाता है। परन्तु पिछले 3 साल से जापान भी इस गिर रहे दौर में शामिल हो गया है। यूरोप में कुल मिलाकर 11.8 प्रतिशत बेरोजगारी है और ओईसीडी देशों में लगभग 8.5 प्रतिशत कार्य करने वाली शक्ति काम से वंचित है। आर्थिक गिरावट के परिणामस्वरूप अपराधों में वृद्धि हो रही है।

विकसित देशों में निरन्तर चल रही आर्थिक अवनति की तुलना में पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी एशिया की आर्थिकताएं पिछले 15 सालों से लगातार फल फूल रही है, इन देशों में सालना औसत वृद्धि दर 7 प्रतिशत चल रही है।

पारम्परिक पश्चिमी आर्थिकताओं के बारे में चल रही धारणा—कि पश्चिम विश्व आर्थिक वृद्धि का ईंजन है—अब अमान्य हो गई है, क्योंकि इसकी बढ़ती अप्रभावी भूमिका ने केवल विकसित देशों में ही नहीं बल्कि बहुत से पश्चिम निर्देशित अफ्रीकी और दक्षिण अमेरिकी आर्थिकताओं में भी नजर आती है और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात पूर्वी और दक्षिण पूर्वी एशिया में नए 'कार्यात्मक मॉडल' के उभरने से स्पष्ट होती है, जिन देशों में बाजार और राजकीय नियन्त्रण दोनों का सम्मिश्रण किया गया।

17. दुनिया में बढ़ती गरीबी और असमानता चौथी गंभीर चुनौती है। हालिया प्रकाशित विश्व विकास रिपोर्ट 1995 के मुताबिक ''एक निगम प्रशासक कारखाने के मजदूर से कम से कम 149 गुना अधिक कमाता है और दुनिया के 358 अरबपतियों के पास कूल सम्पत्ति दुनिया की जनसंख्या के 45 प्रतिशत लोगों के पास सम्पत्ति के बराबर है।

सन् 1993 में करीब 2 अरब लोग, यानि दुनिया में काम करने योग्य उम्र के आधे से अधिक लोग कम आय वाली आर्थिकताओं में रहते हैं और जिनकी वार्षिक प्रति व्यक्ति आय 695 डालर से नीचे है तथा काम करने योग्य उम्र के लगभग एक तिहाई लोग बेरोजगार हैं।

कृषि एवं खाद्य संगठन के मुताबिक भूख और कुपोषण दुनिया के लोगों के सामने उपस्थित समस्याओं में सबसे अधिक विनाशकारी समस्या बनी हुई है। 1995 की संगठन की रिपोर्ट दर्शाती है कि विकासशील दुनिया की लगभग 20 प्रतिशत जनसंख्या, यानि लगभग 78 करोड़ लोगों को अपर्याप्त भोजन मिलता है और 19 करोड़ 20 लाख से अधिक बच्चे प्रोटीन की कमी से उत्पन्न कुपोषण से पीड़ित हैं।

विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय सभाओं में दुनिया की गरीबी हटाने की बढ़ती हुई मांग के बावजूद इस संबंध में कोई ठोस कार्यवाही की योजना बनाने की संभावना बहुत कम है क्योंकि अभी दुनिया में विभिन्न आर्थिक और राजनीतिक विकृतियों और बिल्कुल भिन्न प्राथमिकताओं के चलते विभिन्न देशों के शासक हिस्सों के लिए गरीबी हटाने का मामला असंबंधित बना हुआ है।

18. अन्तर्राष्ट्रीय अपराधी गिरोह का उभरना पाँचवीं गंभीर चुनौती है। 1994 की यूएनडीपी रिपोर्ट दर्शाती है कि ऐसे गिरोह अब दुनिया के लगभग 10 खरब डालर के व्यापार को नियन्त्रित करते हैं। इसमें दवा और शस्त्र व्यापार तथा सोने की तस्करी शामिल है।

19. पर्यावरणीय गिरावट पहले नम्बर की खतरनाक रणनीतिक चुनौती बन गई है। यह समस्या मुख्यतया ग्रीन हाऊस गैसों के अधिक उत्पादन से पैदा हुई है। इन गैसों के बढ़ने का परिणाम एक तरफ ओजोन परत के क्षीण होने में निकला है। तो दूसरी तरफ सार्वभौमिक तापक्रम में बढ़ोतरी हो गई है। ओजोन परत के क्षीण होने के कारण गंभीर बिमारियां उत्पन्न हो रही हैं और दूसरी जैव-प्रजातियों में अनुवांशिक परिवर्तन पैदा होने से उन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है। ग्रीन हाऊस गैसों के बढ़ने से सूर्य की अधिक उष्मा शोषित होती है। जिससे हमारे वातावरण पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है इससे मौसम में बदलाव की पद्धति, भोजन शृंखला, बर्फ के पिघलने, समुद्र के स्तर में बढ़ोतरी, अम्ल वर्षा इत्यादि प्रभाव सामने आ रहे हैं। अगर वर्तमान पर्यावरणीय

गिरावट की दर निरन्तर कायम रहती है तो विशेषज्ञों की राय के अनुसार हमारा ग्रह लगभग 100 सालों के अन्दर जैव-प्रजातियों के रहने लायक नहीं बचेगा।

20. जनसंख्या विस्फोट दूसरी खतरनाक रणनीतिक चुनौती है। पिछले 200 सालों के दौरान विश्व की जनसंख्या 5 गुनी बढ़ गई है। यह अब 6 अरब के आंकड़े के करीब पहुँच रही है। इसकी वृद्धि दर 10 करोड़ प्रतिवर्ष है। बहुत ही जल्दी विश्व जनसंख्या हमारे ग्रह की वहनीय क्षमता को पार कर रही है। बढ़ती जनसंख्या के द्वारा प्राकृतिक स्रोतों पर किए जा रहे अतिक्रमण के कारण पृथ्वी पर प्रतिवर्ष ऊपरी सतह की 25 अरब टन मिट्टी तथा 1 करोड़ 70 लाख हैक्टेयर उष्णकटिबन्धीय जंगल नष्ट होते जा रहे हैं। दुनिया के जंगल का करीब 70 प्रतिशत भाग पहले ही साफ हो चुका है। जंगल का आवरण घटने के कारण पशु-पक्षियों की बहुत सी प्रजातियां या तो लुप्त हो रही हैं या संख्या में घट रही हैं।

21. उपरोक्त वर्णित सभी तात्कालिक गंभीर चुनौतियां और विनाशकारी रणनीतिक खतरे हमारे मानव समाज के अन्दर और मानव व प्रकृति के बीच असामंजस्य का प्रतिबिम्ब है। अनिवार्य तौर पर ये मानव समाज की असंतुलनकारी अवस्था को प्रदर्शित करती है।

22. मसले की यह अवस्था माँग करती है कि मानव समाज सामूहिक और राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर चीजों को सही करने के लिए सुनिश्चित कोशिश करें। परन्तु अभी तक ऐसी किसी भी प्रकार की प्राथमिकता न तो सार्वभौमिक एजेन्डा में है और न ही किसी देश की उत्कृट इच्छा का मुद्दा बनी है।

III मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण करने वाली दुनिया

23. मानव समाज इतने गंभीर जीवन और मौत के सवालों के बारे में उदासीन क्यों है?

24. इसका कारण बहुआयामी है। परन्तु सबसे महत्वपूर्ण यह है कि हम अभी एक ऐसी अनुचित और गैरन्यायिक सामाजिक व्यवस्था में रह रहे हैं जहाँ बड़ी मछली छोटी को खा जाती है और जहाँ शक्ति, पैसा और विशेषधिकारी ही न्याय और सच्चाई को तय करने वाले स्वीकृत मानदंडों का निमार्ण करते हैं। ऐसा कुल मिलाकर समस्त दुनिया में तथा प्रत्येक देश में होता है।

(A) विश्व स्तर पर

25. विद्यमान सामाजिक वास्तविक इस तथ्य से समझाई जा सकती है कि जब प्रत्येक अन्तर्राष्ट्रीय मंच, देश एवं व्यक्ति सर्वाधिक मताधिकार—यानि एक इकाई एक वोट को कानून के राज के मूलभूत उसूल के रूप में स्वीकार करता है—यू एन

जैसी उच्चतम विश्व संस्था को फौजी ताकत के आधार वाली 5 बड़ी शक्तियों के वीटो पावर से संचालित और नियमित करके वे बाकी बचे 180 यू एन सदस्य देशों को शून्य की भूमिका में धकेल देते हैं। इसी तरह दो अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों— अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक को कुछ धनी देशों ने वित्तीय जागीर बना रखा है जो इन संस्थाओं में दाता-संबंधित मताधिकार के उसूल के चलते अधिक मतों के अधिकार के कारण ऐसा कर रहे हैं। आगे, हालिया लगभग 180 देशों द्वारा समर्थित अप्रसार सन्धि द्वारा 5 बड़ी परमाणु शक्तियों को परमाणु हथियारों पर वास्तविक एकाधिकार दिया है। ये बड़ी शक्तियां इन विनाशक हथियारों को सम्पूर्ण समाप्त करने की तरफ बढ़ने के बजाए इन हथियारों की मारक क्षमता बढ़ाने के लिए नए परीक्षण कर रही हैं। इसके अतिरिक्त, कुछ ही विकसित देश जिनमें विश्व की एक चौथाई जनसंख्या रहती है जबकि विश्व के संसाधनों का 80 प्रतिशत उपयोग यही देश करते हैं। बाकी बचे 20 प्रतिशत संसाधनों पर 125 विकासशील देशों में निवास करने वाली विश्व जनसंख्या की तीन चौथाई आबादी निर्भर करती है। और आगे, मानव समुदाय की नारी के रूप में आधी आबादी लगातार बुरे बर्ताब और दुर्व्यहार की शिकार है।

(B) राष्ट्रीय स्तर पर

26. हालात प्रभावी अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था से ज्यादा अलग नहीं है। 155 देशों के बीच उनकी अपनी-अपनी भौतिक परिस्थिति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और सामाजिक-आर्थिक हालात के कारण विभिन्नताएं होने के बावजूद बहुत से देशों में सामाजिक जीवन की गुणवता में काफी हद तक समानता है। लगभग प्रत्येक देश (चाहे विकसित हो या विकासशील) में राजनीतिक प्रक्रिया पर धन- बल का प्रभुत्व कायम है तथा विकासशील देशों में इसके साथ-साथ बाहुबल और पुरातन मानदंडों की ताकत भी जुड़ी हुई है। आर्थिक प्रक्रिया सामान्य तौर पर गला काटू प्रतियोगिता, सट्टेबाजी और कालेधन से संचालित हो रही है। बेईमानी के मानदंड आज हर कहीं सामान्य व्यवहारिक ढंग बन गए हैं।

27. लगभग हर देश में विधिकर्ता को विशेष संसदीय विशेषधिकारों के तहत सामान्य कानूनों से निश्चित छूट प्रदान की गई है। विकासशील देशों में राजनीतिज्ञों को और विशेषकर शासक पार्टी से संबंधित राजनीतिज्ञ व्यवहार में कानून से ऊपर होते हैं। कहीं की भी न्यायपालिका लोगों के प्रति जवाबदेह नहीं है। सर्वत्र प्रभावी न्यायालय मानहानि अधिनियम इसके प्रत्येक आलोचक का मुँह बन्द करने की ताकत रखता है। सरकारी गोपनीयता अधिनियम लगभग सभी देशों में लागू है जो नौकरशाही को सभी सौदों-समझोतों को छुपाने और लोगों की उपेक्षा करने की सत्ता प्रदान करता

है। कानून निष्पादन एजेंसियों को सारे विश्व में अत्यधिक अधिकार प्रदान किए गए हैं। तीसरी दुनिया में ये एजेंसियां ऐसा व्यवहार करती है जैसे वे अपने आप में ही कानून हैं, हर जगह का कानून धनवानों और सम्पत्तिवान वर्गों के पक्ष में तथा गरीब व वंचित लोगों के खिलाफ पक्षपातपूर्ण हैं।

यह एक ऐसी दुनिया है जहाँ राजनीति, कालाधन और चापलूस संस्कृति सबसे अधिक मुनाफे वाले धन्धे बन गए हैं और स्वार्थी, झूठे तथा धोखेबाज इस क्रिया को सबसे अधिक सफलता से निष्पादित करने वाले हैं। प्रत्येक सत्ताधारी मानव संगठन, चाहे वह राष्ट्रीय है या अन्तर्राष्ट्रीय, आज की प्रभावी अनुचित और गैर-न्यायिक सामाजिक व्यवस्था के पैमानों से संचालित हैं।

28. मानव जाति के सामने मौजूद गंभीर चुनौतियों से निपटने के प्रति हमारे रुख में रुकावट का दूसरा कारण राष्ट्रीय दृष्टिकोण का माहौल है। इस दृष्टिकोण को आजकल राष्ट्रीय सरकारें और मुख्यधारा वाली पार्टी अधिक जोर-शोर से जारी रखे हुए हैं। यह राष्ट्रीय दृष्टिकोण साझे मानवीय मसलों—जैसे पर्यावरण, जनसंख्या, गरीबी, सामाजिक न्याय, अल्पसंख्यक अधिकारों, इत्यादि— पर अधिराष्ट्रीय योजनाओं से टकराता है। राष्ट्रीय प्राथमिकताएं तर्कसंगत तौर पर मानवीय एजेन्डा के अति महत्वपूर्ण विषयों से मेल नहीं बैठता है।

29. मानवजाति के सामने मौजूद साझी चुनौतियों से निपटने के प्रति हमारे रुख में बाधा का तीसरा कारण हमारा सामाजिक विकास के प्रति प्रचलित दृष्टिकोण है, इस दृष्टिकोण के तहत अपने उपभोगवादी नजरिये से भौतिक और मानवीय संसाधनों का अनुचित उपयोग और दुरुपयोग किया जाता है। ऐसा एक अनुचित और गैर-न्यायिक अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय व्यवस्था के तहत किया जाता है। जिसमें कुछ धनवान देश और प्रत्येक देश में थोड़े से धनवान लोग विश्व के प्राकृतिक संसाधनों के बड़े हिस्से को हासिल किए हुए हैं तथा मानव संसाधनों पर प्रभुत्व कायम रखे हुए हैं।

30. प्रकृति और समाज के बीच असंतुलन से निपटने के प्रति हमारे रुख में बाधा का चौथा कारण मानव को केन्द्र मानने वाला हमारा दृष्टिकोण है जिसके तहत गैर मानवीय घटनाक्रमों की कीमत पर मानवीय हितों को पूरा करने की कोशिश की जाती है। इस प्रकार से पर्यावरण को नुकसान पहुँचाया जाता है और मानव के रणनीतिक हितों को हानि पहुँचाई जाती है।

IV हमारा विकल्प

31. मानव समाज के अन्दर और समाज व प्रकृति के बीच असामंजस्य की समस्या को हल करने के लिए हम कैसे यत्न करें? इसका तर्कसंगत उत्तर है कि संबंधित प्रक्रियाओं के बीच और अन्दर सामंजस्य कायम करने का तरीका अपनाएं।

प्रत्येक स्थान और समय में किसी भी प्रक्रिया में शामिल सभी पहलुओं के हितों को संतुलित करके सामंजस्य कायम किया जा सकता है और किया जाना चाहिए।

32. एक तरफ मानव समाज में विभिन्न सामाजिक समूहों तथा दूसरी तरफ मानव समाज और प्रकृति के हितों का संतुलित करने के लिए विद्यमान गरीब विरोधी, आम-आदमी विरोधी और प्रकृति विरोधी संरचना के स्थान पर विभिन्न सुधार करके एक गरीब व आम आदमी के प्रति दोस्ताना (अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय दोनों स्तर पर) और प्रकृति के प्रति दोस्ताना मॉडल को स्थापित करने की आवश्यकता है।

(A) अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को सुधारने के लिए

(क) एक एकीकृत विश्व मानव समुदाय के नजरिए को स्वीकार करना और सामाजिक समस्याओं के हल के लिए तर्कसंगत मानवतावाद की अवधारणा को अपनाना।

(ख) संयुक्त राष्ट्र संघ की पूर्ण जनवादी आधार पर पुनः संरचना करना।

(ग) देशों के बीच सभी क्षेत्रीय विवादों को या तो द्विपक्षीय या संयुक्त राष्ट्र संघ की सहायता से शान्तिपूर्ण बातचीत के जरिए हल करना।

(घ) सभी परमाणु हथियारों और दूसरे घातक हथियारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ के नियन्त्रण में पूर्ण प्रतिबन्ध लगाने की प्रक्रिया की शुरूआत करना।

(ङ) विभिन्न देशों में नागरिक विवादों का निपटारा बातचीत से करना तथा साथ ही ऐसे विवाद से संबंधित प्रत्येक देश पर संयुक्त राष्ट्र को पूर्ण रूप से सूचित करने का दायित्व आयत करना।

(च) सभी संयुक्त राष्ट्र की सन्धियों की पालना की जाए जैसे कि मानवाधिकारों, पर्यावरण, लिंग समानता, जनसंख्या, अल्पसंख्यकों, गरीबी उन्मूलन, सामाजिक सौहार्द इत्यादि के संबंध में।

(B) राष्ट्रीय प्रणाली में सुधार के लिए

(क) विशिष्ट वर्गों के पक्ष में झुकाव को समाप्त करके संविधान और कानून को तर्कसंगत बनाना।

(ख) राज्य ढाँचे का संघीकरण करना।

(ग) सभी स्तरों पर ताकत का विकेन्द्रीकरण करना और लोगों को नीति निर्माण एवं उसे लागू करने के संबंध में अधिकार सम्पन्न बनाना।

(घ) सभी गैर जनवादी कानूनों—जैसे कि सरकारी गुप्तता अधिनियम, न्यायालय मानहानि अधिनियम, व्यवस्थापिका को विशेषधिकार, फौज को प्रदान कोर्ट मार्शल अधिकार, नजरबन्दी अधिनियमों, इत्यादि को रद्द करना।

(ङ) लोगों को सही और शीघ्र न्याय दिलवाने के लिए कानून निष्पादन और कानून व्याख्या करने वाली एजेंसियों में सुधार करना।

(च) चुनावों में धनबल और बाहुबल तथा अन्य गैर-जनवादी व्यवहारिक कार्यवाहियों की भूमिका समाप्त करने के नजरिए से चुनाव कानूनों में सुधार करना।

(छ) सूचना अधिनियम की आजादी को तस्लीम करना।

(ज) सभी तरह के प्रचार माध्यमों का प्रबन्ध एक स्वायत और जनवादी एजेन्सी के मार्फत करना।

(झ) प्रशासन को पुनः संगठित करना, जेल नियमावली में सुधार करना तथा फाँसी के दंड को समाप्त करना।

(ञ) गरीबी हटाने, काम का अधिकार, गुजारे लायक मजदूरी, घर, बुढ़ापे और पूर्ण या आंशिक विकलांगता की हालत में देखरेख, सभी को प्रारम्भिक शिक्षा, प्राथमिक चिकित्सा का प्रबन्ध, 35 घंटे का कार्य सप्ताह, बाल मजदूरी पर प्रतिबन्ध, कमजोर तबकों, खासकर महिलाओं, लिंग समानता अधिकार, नवजात शिशु और उसकी माता के स्वास्थ्य रक्षा पर विशेष ध्यान, इत्यादि संबंधी अधिकारों को प्रदान करके मानव संसाधनों का विकास करना।

(ढ) बाजार और राजकीय दखलन्दाजी का एक उचित सम्मिश्रण करते हुए आर्थिकता के सार्वभौमिकरण द्वारा भौतिक संसाधनों को विकसित करना।

(ठ) क्षेत्रीय सुरक्षा प्रणाली संगठित करना।

(ड) तर्क संगत सोच, जनवादी व्यवहार और टिकाऊ जीवन पद्धति को विकसित करना।

(ढ) औरतों को अधिकार सम्पन्न बनाकर जनसंख्या समस्या का प्रबन्ध करना, समाज का जनवादीकरण करना, पर्यावरण संरक्षण करना तथा टिकाऊ विकास एवं जीवन पद्धति अपनाना।

(C) पर्यावरण संरक्षण तथा सुधार के लिए

(क) पर्यावरण संरक्षण की समस्या तथा टिकाऊ विकास एवं जीवन पद्धति अपनाने के बारे में जनता के बीच में चेतना पैदा करना।

(ख) अनसेड (UNCED) के निरीक्षण के तहत रियो पृथ्वी सम्मेलन के समय स्वीकृत किये गए एजेन्डा-21 को लागू करना, सुनिश्चित बनाना और एक उच्च अधिकार सम्पन्न यू एन टिकाऊ विकास परिषद की स्थापना करना जो एक सार्वभौमिक सत्ता के तौर पर क्रिया करके प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों का विकास करने के लिए पर्यावरण और विकास के संबंध में मूलभूत आर्थिक सुधारों के

कानून बनाना (जैसे कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों, मुद्रा विनियम और स्टॉक मार्केट, जंगलात, प्राकृतिक संसाधनों, प्रदूषण, इत्यादि के लिए नियमावली) और उनको लागू करने की देखरेख करना।

33. आज कहीं भी उचित और न्यायिक समाज सृजित नहीं किया जा सकता अगर संबंधित लोग ऐसे समाज के सृजन की आवश्यकता के बारे में अनभिज्ञ हों। एक उचित और न्यायिक समाज केवल लोगों की चेतना की उपज है और हो सकता है जबकि किसी संविधान या संस्था के बल पर नहीं। अगर लोगों के हृदय और मस्तिष्क में निष्पक्षता और न्याय नहीं है तो कोई कानून, न्यायालय, पार्टी या प्रेस न तो एक उचित और न्यायिक समाज की सृजना कर सकते हैं और न ही उसे बचा सकते हैं। 15.9.95

❋ ❋ ❋

एक अभूतपूर्व राष्ट्रीय संकट और हमारा विकल्प

I मामले कैसे अस्तित्व में आते हैं मामलों की स्थिति क्या है?

1. सन् 1947 के बाद के राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया के पहियों ने अपना चक्कर पूरा कर लिया है। अच्छे बुरे अथवा संकटग्रस्त 48 वर्षों का सफर तय करके अन्ततोगत्वा उन्होंने हमें आज एक अभूतपूर्व संकट के मध्य ला खड़ा किया है।

राजनीति

2. हमारी राजनीति के सतत अपराधीकरण के कारण इसने ऐसा भयंकर दायरा हासिल कर लिया है जहाँ ''माफिया समूह एक समानान्तर सरकार का संचालन कर रहे हैं तथा इस प्रकार सरकारी तन्त्र को निरर्थक या बेकार साबित कर रहे हैं।'' यह अप्रिय निर्णय या अनुमान 1994 की सरकारी बोहरा कमेटी की रिपोर्ट के मूलभूत सारांश या उपसंहार का निर्माण करता है। यह एक ऐसा निर्णय है जिसे अब सरकार प्रमुख राजनैतिक दलों तथा आम जनता ने स्वीकार कर लिया है।

3. साधारण बोलचाल की भाषा में कहा जाए तो, उपरोक्त कथन या निर्णय का यह तात्पर्य है कि हमारी 48 वर्ष पुरानी राष्ट्रीय प्रक्रिया का संचालन ऐसे लोगों द्वारा किया जा रहा है जो कानून-निर्माता, कानून के कार्य पालक तथा कानून के व्याख्याकार के रूप में या तो दुष्ट खलनायक है या उनके साथ सांठ गांठ रखने वाले हैं। हमारे देश का संचालन करने वाले तत्वों तक पहुँचने का कोई रास्ता नहीं हैं। राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में जो दूसरे सामाजिक अपराध है, वे केवल अपराधीकरण के भिन्न भिन्न रूप है यथा—हिंसा, बाहुबल, भद्दापन, भ्रष्टाचार, कालाधन, तस्करी, मादक द्रव्यों का व्यापार, हवाला-व्यापार, उपद्रवी या दंगाई, पीछे से घृणा या आलोचना करने वाले आदि-आदि।

4. एक सच्चे या पवित्र प्रजातान्त्रिक प्रणाली की पहली शर्त यह है कि हमारी समस्त शक्ति एवं सत्ता कानून या विधि के अधीन हो—विधि जो समर्पित न्याय अथवा समर्पित सत्य के रूप में हो। लेकिन भारतीय प्रजातन्त्र में इस आधारभूत पूर्व-वांछनीयता की कमी है।

5. 1947 के बाद के भारत में, उन सभी लोगों ने जिन्होंने सत्ता को हथिया लिया, सत्ता का एक या दूसरे रूप में दुरुपयोग किया है। जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रारम्भ की गई धन एवं बाहुबल वाली चुनावी प्रक्रिया, जम्मू कश्मीर, पंजाब व उड़ीसा में भ्रष्ट राजनीतिज्ञों को प्रोत्साहन देना, समस्त विराधी दलों को राष्ट्र विरोधी करार देना, पेप्सू (PEPSU) एवं केरल में विपक्षी सरकार को बरखास्त कर देना, 1951 में निवारक निरोध अधिनियम को लागू करना, इन्दिरा गाँधी द्वारा 1975

में आपातकाल लागू करना, समस्त प्रकार के भ्रष्टचार को खुला प्रोत्साहन देना, अधिनायकवादी विधियां व तरीके अपनाना, संजय गांधी द्वारा गठित बदमाशों की बिग्रेड का समर्थन करना इत्यादि; राजीव गांधी द्वारा अपनी माँ की अधिकारवादी तथा भ्रष्ट विरासत को जारी रखना व उसका पोषण करना इत्यादि, वी.पी. सिंह और चन्द्रशेखर द्वारा अपने पूर्व शासकों की जोड़तोड़ वाली व धन एवं बाहुबल आधारित प्रणाली को जारी रखना इत्यादि—इन सभी का परिणाम राजनीति का अधिक से अधिक अपराधीकरण होना ही रहा है। जिसने शनैः-शनैः राजनीतिज्ञों की एक अपराधी प्रजाति को जन्म दिया और इसका पोषण किया।

6. इसके अतिरिक्त 1947 के बाद का समस्त भारतीय कानून अनेक कमियों से भरा पड़ा है। जैसे लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम एवं नियम, दल बदल विरोधी कानून, विभिन्न निवारक एवं भ्रष्टाचार विरोधी अधिनियम, परिषदों व नियमों, श्रम व भूमि सम्बंधी कानून तथा महिलाओं, बच्चों व अन्य कमजोर वर्गों सम्बन्धी कानून इत्यादि—इन कानूनों ने कार्यपालिका तथा कानून को लागू करने एवं इसकी व्याख्या करने वाली संस्थाओं को कानून को अपनी सुविधा के अनुसार मोड़ने के अवसर प्रदान किए हैं। इसका परिणाम यह रहा है कि अपराधियों को तो कानून का संरक्षण मिला है तथा आम आदमी को इस संरक्षण से वंचित रखा गया है।

(6.ए) न्याय प्रदान करने वाली धीमी व विलम्बी प्रक्रिया, न्यायालयों के समक्ष लगभग 2 करोड़ से भी अधिक प्रकरणों का बकाया व लम्बित होना, विभिन्न स्तरों पर न्यायाधीशों के खिलाफ भ्रष्टाचार, पक्षपात व अशिष्ट व्यवहार की शिकायतें आदि, इन सबने भी कानून के उल्लंघन, अपराधों में वृद्धि तथा न्यायपालिका में जनता के विश्वास की कमी में योगदान दिया है।

7. वास्तव में सन् 1947 के पहले का ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन कभी भी आधारभूत प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त अर्थात, 'कानून का सम्मान' से अलग नहीं हटा तथा इस सिद्धान्त की अवहेलना नहीं की। कोई व्यक्ति चाहे कितने ही उच्च पद पर आसीन हो, जैसे क्लाइव, वारेन हेस्टिंग्ज इत्यादि, उन्हें अपने द्वारा किए गए किसी गलत कार्य के लिए कोई माफी या संरक्षण प्राप्त नहीं था। मगर इन 48 वर्षों में हमारे स्वदेशी शासकों ने तो, हमारी स्वतन्त्रतापूर्व की विरासत को 'सत्यमेव जयते' के बैनर तले दफन कर दिया है।

(7.ए) इसका परिणाम प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्यक्ष दिखाई देने वाला है। 1947 के पहले के अनेक निर्धन व मुफलिस राजनीतिज्ञों, जिनके पास उस समय मात्र साईकिल भी नहीं थी आज उनके पास वातानुकूलित बंगले व कारें हैं। पिछले साढ़े चार दशकों के दौरान सभी प्रमुख राजनैतिक दलों ने इस बारे में बात की है कि सभी मन्त्री व विधायक आदि अपनी समस्त सम्पत्ति व आर्थिक स्थिति की घोषणा करेंगे।

लेकिन इनमें से किसी भी दल ने, विधायकों को अपनी सम्पत्ति व देनदारियों की घोषणा करने को पाबन्द करने वाले विधेयक के संसद में 8 बार प्रस्तुत होने पर भी विधिवत् पारित करने का कोई प्रयास नहीं किया। हर समय, वे दल, अपनी धन व बाहुबल वाली राजनीति से, दुष्टों या शैतानों की एक नस्ल करने व उसे पोषित करने में व्यस्त रहे।

अब तो यह बुराई कमोबेश सब तरफ प्रवेश कर चुकी है। जब कभी भी किसी अपराध का भण्डाफोड़ होता है, सरकार अपराधी को दण्ड देने की जोर-शोर से घोषणा करती है। उच्च स्तरीय विपक्षी नेता भी, अप्रत्यक्ष रूप से अपराध के ढकने की चाल या लीपापोती में सहायता प्रदान करते हैं तथा आम जनता को धोखा देते हैं, इस प्रकार अपराधों का यह खेल, अन्तहीन तरीके से निरन्तर चलता रहता है।

अर्थव्यवस्था

8. राजनैतिक अपराधीकरण के साथ ही जुड़कर, हमारे राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया का आर्थिक पहलू भी एक दयनीय दृश्य प्रस्तुत करता है। 1995 की यू एन डी पी की रिपोर्ट के अनुसार, मानव विकास सूचकांक, जिसमें जीवन की दीर्घता, साक्षरता, संयुक्त नामांकन तथा प्रति व्यक्ति वास्तविक सकल विकास उत्पाद का हिसाब रखा जाता है, 174 देशों में भारत का नम्बर 134वां है। पाकिस्तान ने भारत से बेहतर काम किया है।

लिंग अनुपात सम्बन्धी विकास सूचकांक जिसमें स्त्री पुरुषों के बीच उपलब्धियों की असमानता का ब्यौरा रखा जाता है, भारत का स्थान 130 देशों में 99वां है।

9. अष्टम् योजना आठवीं योजना (1995) की मध्यावधि समीक्षा में यह रहस्योद्घाटन किया कि उत्पादन के सेक्टर में वास्तविक वृद्धि 7.3 प्रतिशत लक्ष्य के मुकाबले केवल 4 प्रतिशत ही है। विदेशी मुद्रा की देश में आवक भी कोई स्थाई प्रकृति की नहीं है। प्रत्यक्ष विदेशी विनियोजन का भी अधिकांश भाग दिखाने का या कागजी विनियोजन है जो अस्थाई प्रकृति का है।

1991 से 1995 के दौरान मुद्रास्फीति भी सुधार के युग के पहले कर मात्रा के मुकाबले कहीं अधिक है। रोजगार सृजन भी अष्टम् योजना के लक्ष्य के मुकाबले काफी कम है। योजना के प्रारम्भ में खुले बेरोजगारों की संख्या जो 1.7 करोड़ थी वह बढ़ कर 1.87 करोड़ हो गई है।

योजना राशि के राज्यों को आवंटन के सम्बन्ध में बात करें तो योजना की वर्ष 1992-95 समग्र प्रावधान पहले के मुकाबले कम है। सामाजिक सेवा के क्षेत्र में, यथा स्वास्थ्य रक्षा, आवासीय भवन, पेयजल आवंटित राशि में कमी आई है। कृषि मे किया

गया विनियोजन भी 1990-91 के वर्ष में 4595 करोड़ रुपए से घट कर 1991-92 में 4567 करोड़ रुपए रह गया है, बिना इस बात का ध्यान रखे कि मुद्रा स्फीति हो गई है तथा रुपए की क्रयशक्ति का ह्रास हुआ है।

10. भारत के नियंत्रक एवं महालेखाकर की मई 1995 की रिपोर्ट यह बताती है कि भारत सरकार पर 31 मार्च को कुल ऋण (आन्तरिक एवं बाहरी दोनों ऋणों को मिलाते हुए) 558421 करोड़ रुपए का है। ऋणों के ब्याज के भुगतान ने ही वर्ष 1993-94 की अवधि की भारत सरकार की राजस्व प्राप्तियों का एक चौथाई तथा राज्य व्यय का एक तिहाई भाग निगल लिया है। नियन्त्रक एवं महालेखाकार की रिपोर्ट ने आगे कहा है कि सकल विकास उत्पादन का प्रतिशत वित्तीय घाटा 4.6 प्रतिशत के अनुमान को पार करके 1993-94 में 7.5 प्रतिशत तक पंहुच गया है।

जहाँ तक सार्वजनिक क्षेत्र का प्रश्न है सरकार ने सार्वजनिक उद्यमों में 2258 करोड़ रुपए और विनियोजित किए हैं जिससे मार्च 1994 के अन्त में यह कुल राशि 4416 करोड़ तक जा पंहुची है। परन्तु प्राप्त लाभ का प्रतिशत केवल 1.44 प्रतिशत है।

11. द्वितीय विश्व युद्ध के काल के बाद की अवधि में जबकि विश्व का कुल उत्पादन एवं वाणिज्य क्रमशः 5.5 गुणा व 14 गुणा तक बढ़ गया है, हमारा राष्ट्रीय उत्पादन केवल दो गुणा से कुछ ही ज्यादा बढ़ पाया है तथा विदेशी व्यापार का 2.5 प्रतिशत था घट कर केवल 0.6 प्रतिशत रह गया है। जहाँ चीन की प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष उत्पादकता की दर आज 11000 डालर है वहाँ भारत का तुलनात्मक आंकड़ा केवल मात्र 900 डालर का है। पाकिस्तान भी हमारे से आगे है जहाँ प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष की औसत उत्पादन की दर 1500 डालर है। ये तीनों देश 1947 के आसपास कमोबेश उत्पादकता के एक ही स्तर पर थे। पूर्वी और दक्षिणी पूर्वी एशियाई देशों में, लगभग 2 दशकों से औसत वार्षिक केवल 7 प्रतिशत वृद्धि दर के साथ इसको काफी पीछे छोड़ दिया है। जबकि इसने पिछले 48 वर्षों में वृद्धि दर का 4 प्रतिशत भी बहुत कम मामलों में पार किया है (यद्यपि हमारी अर्थ व्यवस्था और इन देशों की अर्थ व्यवस्थाएं 1960 के आसपास लगभग एक सी स्थिति में थी)। हांककांग और सिंगापुर की प्रति व्यक्ति आय भी हमारे से क्रमशः 30 और 13 गुणा ज्यादा है। हमारी जनसंख्या का 70 प्रतिशत भाग चूंकि अब भी कृषि पर निर्भर करता है अतः श्रम शक्ति के क्षेत्रीय निर्माण में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ है। हमारे कुल विदेशी ऋण ने 100 बिलियन डालर का आंकड़ा पार कर लिया है तथा इसके सेवा-शुल्क के रूप में हमारे निर्यात का 32 प्रतिशत और हमारे कुल केन्द्रीय गैर-आयोजन व्यय का 40 प्रतिशत खर्च हो जाता है। योजना आयोग के नवीनतम अनुमान के अनुसार हमारी जनसंख्या का 40 प्रतिशत भाग गरीबी रेखा के नीचे रहता है, 30 प्रतिशत भाग गृह

विहीन है 48 प्रतिशत भाग निरक्षर है, 5 प्रतिशत भाग बेरोजगार है तथा 40 प्रतिशत भाग अर्ध बेरोजगार है।

संस्कृति

12. हमारे राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया के सांस्कृतिक पहलू ने जीवन के हर क्षेत्र मे व्यवहार के असंदिग्ध मानदण्ड सृजित किए हैं—इसके प्रमुख गुण हैं—धन एवं बाहुबल का प्रयोग, समस्त प्रकार के आधारभूत एवं सुधार विरोधी सिद्धान्तों (धार्मिक, जातिवादी, नस्ली, आर्थिक, इत्यादि) का संरक्षण करना, धीमी गति वाली एवं निम्न कोटि की शिक्षा, कला, साहित्य एवं विज्ञान का समावेश करना, इत्यादि।

13. धन एवं बाहुबल के प्रयोग ने एक समाजविरोधी वातावरण उत्पन्न किया है जिसमें अपराधों की वृद्धि होती है (जैसा कि राजनैतिक प्रक्रिया के अपराधीकरण से स्पष्ट जाहिर होता है), भ्रष्टाचार हावी होता है (जैसा कि उच्च स्तरीय राजनैतिक घोटालों तथा धोखाधड़ियों से स्पष्ट है यथा—1949 का जीप काण्ड, 1973 का नागरवाला केस, 1986 का बोफोर्स सौदा, 1992 का बम्बई प्रतिभूति घोटाला, 1993 का सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम का गलत विनियोजन करने का काण्ड, 1994 का चीनी घोटाला काण्ड आदि तथा प्रशासन के समस्त स्तरों पर आम भ्रष्टाचार का बोलबाला इत्यादि), तथा जी हजूरी वाला अनुशासन पनपता है (जैसा कि प्रशासन, पार्टी संगठन, विशेषकर कांग्रेस, तथा दिन प्रतिदिन के सार्वजनिक जीवन में प्रचलित कार्य शैली से देखा जा सकता है)।

14. रूढ़िवादी और दकियानूसी सिद्धान्तों के संरक्षण ने साम्प्रदायिकता में वृद्धि की है विशेषकर बहुसंख्यक साम्प्रदायिकता (हिन्दुत्व) तथा जातिवाद में वृद्धि की है विशेषकर उग्र दलितों तथा पिछड़ी जातियों के उग्रवादी तत्वों में।

1947 के बाद के साम्प्रदायिक दंगे जो संख्या में 22000 के लगभग हैं, अनुसूचित जाति व जनजाति पर अत्याचार के मामले जो 5 से 6 लाख के बीच हैं तथा महिलाओं के प्रति आत्याचार के असंख्य मामले साम्प्रदायिक एवं जातिवाद की शक्ति के ही प्रतीक हैं।

15. धीमी गति वाली तथा निम्न स्तर की शिक्षा, कला, साहित्य एवं विज्ञान का परिणाम एक तरफ तो यह रहा कि प्रजातान्त्रिक वातावरण बढ़ने से रुक गया तथा दूसरी तरफ यह रहा कि स्वार्थपूर्ण व भोगवादी वातावरण या संस्कृति में वृद्धि हुई है।

विदेश नीति

16. हमारे राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया का विदेश नीति वाला पहलू जो प्रारम्भिक तौर पर शीत युद्ध काल में दोनों शक्ति धड़ों के मध्य के समान सन्तुलन की स्थिति में सोवियत रूस खेमे के साथ सम्बद्ध हो गया। इस खेमे के विखण्डन के बाद तथा

सोवियत संघ के पृथक्कीकरण के बाद, भारतीय विदेश नीति, जिस में शीत युद्ध के बाद विश्व की परिवर्तित स्थिति को स्पष्टत: समझने की कमी है, अस्पष्ट एवं अन्धकार युक्त वातावरण में इधर उधर भटक रही है—इस प्रकार विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय परिवर्तनों के प्रति सही प्रतिक्रिया व्यक्त करने में असफल रही है—यथा खाड़ी युद्ध, सोवियत रूस का विखण्डन, संयुक्त राज्य, यूरोपीय समुदाय एवं जापान के साथ व्यवहार, पूर्वी एशियन और दक्षिणपूर्वी एशियाई राज्यों एवं अन्य विकासशील देशों के संबंधित समस्याएं तथा इन सबसे सर्वोपरी दक्षिण एशियाई देशों, विशेष कर पाकिस्तान से इसके सम्बन्ध।

17. आज के समय जबकि समूचा विश्व सभी पुराने विवाद का शान्तिपूर्ण हल खोज रहा है, भारत और पाकिस्तान अब भी अपने पारस्परिक विवाद वाले मामले में, विशेषकर जम्मू कश्मीर समस्या के बारे में, अब भी मुकाबले या टकराव की राजनीति का अनुसरण करना जरूरी रखे हुए हैं। टकराव की राजनीति ने सदैव की भांति उनको सैन्यीकरण की प्रक्रिया, हथियारों की होड़ तथा युद्ध से बान्धे हुए रखा है। इस प्रकार, यह स्थिति उनके विकास की प्रक्रिया में वृद्धि का गला घोटती जा रही है अर्थात विवाद व तनाव के कारण समग्र विकास अवरुद्ध पड़ा है। तार्किक दृष्टि से, 48 वर्ष पुराने भारत-पाक विवाद को समाप्त करने की जिम्मेवारी भारत पर आती है क्योंकि भारत दक्षिण एशियाई क्षेत्र की सबसे बड़ी शक्ति है तथा 1947 के बाद की टकराव की स्थिति का मुख्य पीड़ित राष्ट्र है। लेकिन भारत की विदेश नीति जो प्रारम्भ से ही दक्षिण एशिया में अहंकारी दृष्टिकोण से प्रभावित है, इस अति महत्वपूर्ण जिम्मेदारी से सदैव बचती जा रही है।

सुरक्षा

18. हमारे राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में प्रतिरक्षा का पहलू, जिसका गुण लगातार सैनिक खर्च में वृद्धि का रहा है, हमारी अर्थ व्यवस्था को निरन्तर खाली या खोखला करने वाला रह गया है। लेकिन शीतयुद्ध के बाद की अवधि में भी, सरकार की ओर से इस विवादाग्रस्त आर्थिक विवशता या रुकावट पर कोई पुनर्विचार नहीं किया गया है। भारत अभी भी अपनी प्रतिरक्षा नीति में शीतयुद्ध की विचारधारा से नियंत्रित हो रहा है।

19. हमारी उच्च रूपरेखा वाली विदेश सह रक्षा नीति ने भारत को एक 'बड़े भ्राता' के रूप में उजागर किया है जो अपने छोटे पड़ोसियों का नेतृत्व एवं नियन्त्रण करता है। वास्तव में यही विचारधारा, हमें दो पड़ोसी राष्ट्रों से चार युद्धों में धकेलने के लिए किसी भी रूप में कम जिम्मेदार नहीं हैं—तीन युद्ध पाकिस्तान के साथ तथा एक चीन के साथ। वर्तमान में जम्मू-कश्मीर पर पाकिस्तान के साथ बढ़ते तनाव में चतुर्थ

भारत-पाक युद्ध की प्रबल सम्भावना दृष्टिगोचर होती है, जो अपने परमाणु अस्त्रों वाले पहलू के कारण भारत एवं पाकिस्तान दोनों ही देशों के लिए भयंकर खतरे का निर्माण करती है तथा विश्व में विशेषकर दक्षिण एशिया में विकास की प्रक्रिया के लिए एक बड़ी चुनौती पैदा करती है।

जनसंख्या

19(ए). हमारे राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया के जनसंख्या वाले पहलू ने तो एक गम्भीर चुनौती पैदा करती है—जो 1947 में 34.2 करोड़ से बढ़ कर अब 92 करोड़ से भी ऊपर हो गई है। विश्व के क्षेत्रफल के 2.4 प्रतिशत क्षेत्र में भारत में विश्व जनसंख्या के 16 प्रतिशत लोग रहते हैं। जनसंख्या जो प्रतिवर्ष 1.8 करोड़ की दर से बढ़ रही है, सन् 2000 तक 100 तक होने की उम्मीद की जाती है तथा सन् 2025 तक 140 करोड़ होने की सम्भावना है। पहले से अनियन्त्रित एवं आसानी से व्यवस्थित नहीं होने वाली 92 करोड़ की जनसंख्या में 50 करोड़ की वृद्धि से तो अनियन्त्रित राजनैतिक एवं सामाजिक तनाव की वृद्धि होगी।

पर्यावरण

19(बी). हमारे राष्ट्र की निर्माण के पर्यावरण सम्बंधी पहलू ने तो बहुत ही खतरनाक रूप धारण कर लिया है—परिणामत: सभी प्राकृतिक स्रोतों का निरन्तर ह्रास हुआ है।

भारत में घटिया या ह्रास हुई भूमि का क्षेत्र विश्व में सर्वाधिक है। भारत की कुल 329 मिलियन हैक्टेयर भूमि मे से 40 मिलियन हैक्टेयर पूर्णत: अनुत्पादन भूमि सहित, केवल 143 मिलियन हैक्टेयर भूमि ही कृषि योग्य है।

85 मिलियन हैक्टेयर वन भूमि का लगभग आधा अलग अलग मात्रा में प्राय: नग्न हो चुका है, इस स्थिति से विश्व के फलते फूलते पेड़ पौधों के 6 प्रतिशत भाग को खतरा पैदा हो गया है, जबकि इसके परिणाम स्वरूप भारत के छायादार वृक्षों के फैलाव का तीन चौथाई भाग पहले से ही नष्टप्राय हो चुका है। वनों के विनाश एवं सीमान्त भूमि को जोतने से अनुमानत: 6000 मिलियन टन मिट्टी का नुकसान हुआ है। पशुओं द्वारा वनों के ऊपर की चराई से भी भूमि को क्षति हुई है। वनों के नष्ट होने के साथ-साथ भूमि की जल धारणा की क्षमता भी कम होती जा रही है। इसका परिणाम यह हुआ है कि थोड़ी सी ज्यादा वर्षा होने से बाढ़ आ जाती है तथा सामान्य से कम वर्षा होने पर अकाल की स्थिति बन जाती है।

उद्योगों व कल कारखानों से बहने वाले पानी तथा शहरी मनुष्यों द्वारा पैदा किए कचरे ने बहते हुए सतही एवं भूगर्भीय जल की किस्म को भी प्रभावित किया है। उद्योग धन्धों द्वारा विषैले रसायनों के प्रयोग, मोटर गाड़ियों के धुंआ तथा थर्मल संयत्रों

द्वारा किए जा रहे वायु-प्रदूषण ने अनुमति योग्य सीमा को पार कर लिया है, इसका परिणाम यह रहा है कि स्वास्थ्य व पर्यावरण के लिए बड़े खतरे उत्पन्न हो गए हैं, पर्यावरणीय खतरों में रासायनिक वर्षा तथा अत्यधिक गर्मी आदि शामिल है। वनों की कटाई, भूमि एवं पानी का ह्रास—इन परिस्थितियों ने भारत की 75000 पशु प्रजातियों तथा 45000 पेड़ पौधों की प्रजातियों के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया है। पहले से ही कृषि में रसायनों के अत्यधिक प्रयोग ने जानवरों की कई प्रजातियों को नष्ट कर दिया है तथा मानव व पशु स्वास्थ्य के लिए कई तरह के खतरे पैदा कर दिए हैं।

पर्यावरण के ह्रास तथा अनियन्त्रित जनसंख्या ने मिलकर प्राकृतिक आपदाओं व खतरों की भयंकर जोखिम उत्पन्न कर दी है।

1947 के बाद का राष्ट्र निर्माण का ढांचा

20. सन् 1947 के बाद की हमारी राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं को देखने के बाद यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हमारे मूल नेहरूवादी ढांचे का सिद्धान्त व व्यवहार और वर्तमान में इसका परिवर्तित उदारवादी स्वरूप पूर्णत: निष्प्रभावी सिद्ध हो चुका है—न केवल 1947 के बाद की समस्याओं से निपटने में जैसे गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार इत्यादि, बल्कि इसने तो नए राष्ट्रीय खतरों को जन्म दिया है, जैसे जनसंख्या व पर्यावरण से सम्बधित समस्याग्रस्त मामले, पड़ोसी देशों के साथ युद्ध, सशस्त्र अलगाववादी आन्दोलन, राजनीति का अपराधीकरण, वित्तीय अव्यवस्था तथा व्यवहार के गिरते हुए मानदण्ड इत्यादि।

II परिस्थितियां गलत या प्रतिकूल क्यों बनी?

21. हमारे राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में बदमाशों एवं असामाजिक लोगों के वर्चस्व वाली यह विशेष परिस्थिति क्यों पैदा हुई, इसका खुलासा कैसे मिलेगा? हमारा देश भौतिक एवं सांस्कृतिक आधार पर सही ढंग से क्यों नही चल पाया? हमारे राष्ट्रीय मामलों की वर्तमान हालत के लिए कौन जिम्मेवार है।

22. इस सम्बन्ध में विभिन्न विचारधाराएं व सिद्धान्त प्रचलित हैं। ये सभी भली-भांति जाने पहचाने हैं, लेकिन वर्तमान की एवं परिवर्तनशील भारतीय एवं वैश्विक वास्तविकताओं के संदर्भ में उनका बार-बार परिक्षण किया जाना वांछनीय है।

अल्पसंख्यकवाद

23. एक विचारधारा यह है कि अल्पसंख्यकवाद या मिथ्या-धर्म निरपेक्षवाद, जिसका अर्थ अल्पसंख्यकों को खुश या संतुष्ट करने से है, हमारे राष्ट्र की अवनति का एक कारण है। अगर ऐसा है तो यह बात राष्ट्र के वर्तमान हालात से अल्पसंख्यकों की संतुष्टि से किसी न किसी रूप में परिलक्षित होनी चाहिए। लेकिन वास्तविकता यह है कि आज अल्पसंख्यक वर्ग भारतीय समाज के सर्वाधिक असंतुष्ट एवं पृथक

भाग का निर्माण करते हैं जैसा कि निम्न तथ्यों से स्पष्ट है। प्रथम तो यह है कि भारत में समस्त अलगाववादी सशस्त्र आन्दोलन (आसाम को छोड़कर) अल्पसंख्यकों द्वारा ही चलाये गए हैं, जिनमें प्रमुख है कश्मीर में कश्मीरी मुसलमानों द्वारा, खालिस्तानी समर्थक सिक्खों द्वारा पंजाब में तथा कुछ उत्तर पूर्वी राज्यों में ईसाइयों द्वारा। दूसरे, अल्पसंख्यक लोग ही, कांग्रेस के विरोधी दलों में अगली पंक्ति में है—जिसने आजादी के 48 वर्ष में से 44 वर्ष तक सत्ता पर अपना अधिकार रखा है। तीसरे, थोड़े से उच्च व सम्पन्न लोगों को छोड़कर, अल्पसंख्यक लोग ही हैं जो अनुसूचित जाति व जनजाति के साथ मिलकर भारतीय समाज के बड़े दलित वर्ग का निर्माण करते हैं।

इसके अलावा, कल्पना की किसी भी उड़ान से, अल्पसंख्यकवाद को राजनीति के अपराधीकरण अथवा आर्थिक अव्यवस्था अथवा सांस्कृतिक ह्रास का आधारभूत कारण नहीं माना जा सकता—क्योंकि ये सभी राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया के कुप्रबन्ध से उत्पन्न होते हैं।

इस्लामिक कट्टारवाद

24. दूसरी विचारधारा यह है कि इस्लामिक कट्टरवाद या 'इस्लाम ही सब कुछ है' का सिद्धान्त ही भारतीय संकट का कारण है। लेकिन इस सिद्धान्त को लागू करने की बात कि इस्लामिक कट्टरवाद भारतीय मुस्लिमों को गैर मुस्लिम राज्य के विरुद्ध भड़काता है—को इस तथ्य द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है कि आज के विश्व में कहीं भी इसलामिक कट्टरवाद राष्ट्रीय और क्षेत्रीय एकता के लिए कोई व्यावहारिक आधार साबित नहीं हुआ है। पाकिस्तान, अफगानिस्तान, मिश्र, अल्जीरिया, इरान-इराक युद्ध, इराक-कुवैत विवाद, मिश्र-सूडान विवाद, आदि के मामले इस्लामिक कट्टरवाद के विघटन के जीते जागते उदाहरण हैं। भारत में भी इसकी भूमिका ऐसी ही है।

इसके अतिरिक्त यह सही है कि हमारी प्रमुख समस्याओं—अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, आर्थिक अकार्यकुशलता, सांस्कृतिक ह्रास आदि—की जड़ों अर्थात् मूल कारण की पहचान इस्लामी कट्टरवादके मानदण्डों के आधार पर नहीं की जा सकती।

जातिवाद (मण्डलवाद)

25. एक और मुख्य विचारधारा यह है कि उच्च जाति वालों द्वारा पिछड़ी हुई एवं दलित जातियों को सामाजिक न्याय की मनाही करना ही भारतीय राष्ट्रीय संकट या क्लेश का कारण है। लेकिन अगर यह बात सही है तो उच्च जातियों में कोई आर्थिक या सांस्कृतिक पिछड़ापन नहीं होना चाहिए। लेकिन वास्तविकता यह है कि उच्च जातियों के अधिकांश लोग आर्थिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग में आते हैं। भारत के उच्च एवं अभिजात्य वर्ग में अनुमानत: उच्च जातियों के 70 प्रतिशत, अल्पसंख्यकों में से 10 प्रतिशत तथा पिछड़ी एवं दलित जातियों में से 20 प्रतिशत

लोग सम्मिलित हैं। इस विकसित एवं उच्च वर्ग के उत्थान का मूल कारण (चाहे वे किसी भी जाति या वर्ग के हों), जैसा कि आज के हालात बताते हैं, राजनैतिक एवं आर्थिक सोच और परिस्थितियों पर आधारित है।

26. एक मूल तथ्य जिसका वर्णन बार-बार किया जाना वांछनीय है, वह यह कि अनुसूचित जाति, जनजाति व पिछड़े वर्गों को विशेष अधिकार का प्रश्न (जैसे कि विधायिका एवं प्रशासनिक सेवाओं में आरक्षण) तो संसदीय राजनीति की अनिवार्यता, आम स्वतन्त्रता एवं इसकी समस्याओं से तथा बाजार आधारित अर्थव्यवस्था (प्रतिस्पर्धा, उपभोक्ता की इच्छा, सस्ता श्रम तथा इनके परिणाम) के परिणाम स्वरूप उठा है। उच्च जातिवाद के पक्षधर राजनेताओं का यह तर्क कि दलितों और पिछड़े वर्गों को विशेष अधिकार मानवतावादी विचारधारा के आधार पर दिए गए हैं, कोई सत्यता का ठोस आधार नहीं रखता क्योंकि इस तर्क ने 2500 वर्षों से चली आ रही समान दर्जे की मांग को पूरा करने में भी सफलता हासिल नहीं की। इसी भांति, तथाकथित दलितों एवं अन्य पिछड़े वर्गों के पक्षधर राजनेताओं का यह तर्क भी इन जातियों को विशेष अधिकार इन निर्धनों द्वारा संगठित होकर धमकी या चुनौती देने के परिणाम स्वरूप मिले हैं, अपनी दृढ़ता या प्रामाणिकता खो चुका है क्योंकि ये जातियां मनु ऋषि के बाद हजारों वर्षों से एकजुट या संगठित नहीं हो पाई हैं और आज के समय की इनकी एकता (जाति के रूप में) तथा इनमें जातिवादी संगठकों के कार्यक्रम भी पूर्ण रूप से संसदीय राजनीति तथा बाजार अर्थव्यवस्था पर आधारित है।

सरकार का संसदीय रूप

27. इसके बाद एक अन्य विचारधारा यह है कि सरकार का संसदीय रूप ही हमारे राष्ट्रीय संकट व बुराइयों का कारण है, पर यह विचार तथ्यों के विपरीत लगता है क्योंकि यह (संसदीय प्रणाली) ब्रिटेन में 3 शताब्दियों से सफलतापूर्वक कार्य कर रही है तथा अन्य देशों में कई दशाब्दियों से यह प्रणाली लागू है।

कुछ अन्य विचारधारा व अनुमान

28. एक विचार कि धनी व निर्धन का अन्तर (भारतीय विकास ढांचे का एक गम्भीर दोष) ही हमारे राष्ट्रीय संकट का मूलाधार है, इस बात से गलत साबित होता है कि भारतीय लोगों का ध्रुवीकरण धनी-निर्धन के आधार पर हुआ है बल्कि अन्य बातों के आधार पर हुआ है, जैसे राजनैतिक, साम्प्रदायिक, जातिवादी विचार आदि।

29. एक विचार यह है कि विदेशी प्रोत्साहन या उकसाव ही हमारे राष्ट्रीय कष्टों का आधार है, पर यह विचार इस तथ्य के कारण गलत साबित हो जाता है कि विदेशी शक्तियां चाहे कितनी भी शक्तिशाली हों वो भारत में रातनीति का

अपराधीकरण, अर्थतन्त्र में चोर-बाजारी तथा सामाजिक मूल्यों के ह्रास आदि को पैदा कर सकती।

30. यह विचार के भारत की समस्याएं इसके आधुनिकीकरण की प्रक्रिया की प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न हुई है, इस तथ्य से गलत साबित हो जाता है कि दूसरे देशों में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया (जैसे यूरोपीय और पूर्वी तथा दक्षिणी पूर्वी एशियाई देश) ने इस प्रकार की विरोधी या नकारात्मक परिस्थितियों का सामना नहीं किया जो प्रायकर गलत तरीके से आयोजित विकास प्रक्रिया से उत्पन्न होती है।

व्यवस्था या प्रणाली तथा इसकी क्रियान्विति तकनीक

31. चूंकि एक राष्ट्रीय सरकार द्वारा एक राष्ट्रीय प्रणाली या व्यवस्था का निर्माण एक संविधान के आधार पर किया जाता है, (जिसमें एक राज्य के उद्देश्य, सिद्धान्त एवं संस्थाओं का ब्यौरा होता है), इसका विनियमन एक कानूनी ढांचे के आधार पर किया जाता है तथा इसकी क्रियान्विति या संचालन, पार्टी तकनीक के आधार पर गठित सरकार द्वारा किया जाता है, यह आवश्यक है कि भारतीय संविधान के ढांचे तथा इसमें निर्दिष्ट आम दिशा एवं इसके कानूनी ढांचे के व्यापक स्वरूप तथा इसकी क्रियान्विति अंश के सिद्धान्त व व्यवहार का नजदीक से अध्ययन किया जाए।

संविधान

32. भारतीय संविधान की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें दोतरफा, दृष्टिकोण या प्रणालियां निहित है—एक तरफ तो केन्द्रीय संघ अर्थात् एक ईकाई सरकार का सिद्धान्त तथा दूसरी ओर बहुमत वाली राष्ट्रीयतावाद (अथवा धर्म निरपेक्षतावाद)। भारतीय संविधान के समूचे ढांचे की रचना इस दोतरफा दृष्टिकोण के ही अनुरूप की गई है।

33. संविधान का जो संघीय या केन्द्रीय रूप है उसने भारत-संघ को असीमित शक्तियां सौंपी हैं, जबकि संघ के निर्माता राज्यों को बहुत थोड़ी सी अधीनस्थ शक्तियां प्रदान की हैं तथा लोगों को केवल एक आधारभूत पर्यवेक्षण अधिकार मताधिकार के रूप में सौंपा हैं (जिसका प्रयोग पांच वर्ष में केवल एक बार किया जा सकता है)।

34. सरकार के तीन अंगों में जो शक्तियों का विभाजन किया गया है, उनमें कार्यपालिका की स्थिति जिसमें अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं, संवैधानिक दृष्टि से सर्वोपरि होती है। सुप्रीम कोर्ट तथा हाई कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति, पदोन्नति व स्थानातरण की इसकी शक्तियां इसे न्यायपालिका के ऊपर एक पर्याप्त वर्चस्व प्रदान करती है—तथा इस प्रकार न्यायपालिका की स्वतंत्रता का संविधान का सिद्धान्त मात्र एक औपचारिकता बन कर रह जाती है। विधायिका, जिसका गठन संबंधित केन्द्रीय दलों के नेताओं में से चुने हुए सदस्यों से होता है तथा प्रत्येक सदस्य पार्टी व्हिप को

मानने के लिए बाध्य होता है, भी बहुत कम महत्वपूर्ण भूमिका निभा पाती है—इसमें सत्ताधारी बहुमत दल के सदस्य तो राजकोष पर नियन्त्रण रखने वालों के प्रति स्वामिभक्त या वफादार होते हैं तथा सत्ता में नहीं रहने वाली अल्पमत पार्टी के सदस्य अपनी संसदीय शाखा के पदाधिकारियों के प्रति वफादार रहते हैं। इसके अलावा संघीय कार्यपालिका विभिन्न स्थितियों से संबंधित प्रावधानों के अन्तर्गत असीमित संवैधानिक शक्तियों का प्रयोग कर सकती है—जैसे आपातकालीन स्थिति, अध्यादेश जारी करने की शक्तियां, मूल अधिकरों को सीमित या उनमें कटौती करने की शक्तियां, समस्त संवैधानिक पदों पर नियुक्ति की शक्तियां, संविधान संशोधन की शक्तियां, किसी भी विधि या कानून को न्यायपालिका के क्षेत्राधिकार से बाहर करने की शक्तियां आदि।

35. संविधान का बहुमत वाला पहलू इसके तीन प्रमुख प्रावधानों के माध्यम से बहुसंख्यक समुदाय को विशेष स्तर प्रदान करता है जो इस प्रकार है—समाज के कमजोर वर्गों को विशेष अधिकार देना जिसमें अनुसूचित जाति,जनजाति तथा अन्य पिछड़ी जातियां सम्मिलित है, भारत में उत्पन्न छोटे धर्मों को बहुमत वाले धर्मों के साथ संगठित व सरंक्षित करना (जैसे बोद्ध धर्म, जैन धर्म तथा सिख धर्म आदि), तथा प्राचीन एवं आधुनिक बहुसंख्यक विचार वाली सांस्कृतिक मान्यताओं को अपनाना (जैसे राष्ट्रीय चिन्ह के नीचे मण्डूका उपनिषद के श्लोक को लिखना, संस्कृत को राष्ट्रीय भाषाओं में सम्मिलित करना, हिन्दी को भारत संघ की राज भाषा बनाना, मयूर को राष्ट्रीय पक्षी घोषित करना तथा महत्वपूर्ण सरकारी उत्सवों में पूजा व आरती जैसे पवित्र कार्यक्रमों का आयोजन करना आदि) तथा अल्पसंख्यक समुदाय को इन सब अधिकारों से वंचित किया गया है।

36. भारतीय संविधान का यह दोतरफा स्वरूप भारत की बहु धर्मावलम्बी, बहु जातिवादी, बहुभाषा वादी व बहु-क्षेत्रीयवादी प्रकृति के कतई अनुरूप नहीं है, इसे तो एक समुचित मानवतावाद से परिपूर्ण तथा पूर्ण संघीय एवं विकेन्द्रीकृत प्रणाली की आवश्यकता है।

कानूनी ढांचा

37. संघीय कार्यपालिका ने जिसमें असीमित संवैधानिक शक्तियां निहित है, संसद द्वारा पास करवा कर तथा न्यायपालिका से उसका अनुमोदन कराके एक कानूनी ढांचे का निर्माण किया जो एक पांच स्तरीय समाज का सृजन करता है, तथा प्रत्येक स्तर की एक सामाजिक स्थिति है।

38. प्रथमत: इस कानूनी ढांचे द्वारा एक विशेषधिकार प्राप्त शासक वर्ग का निर्माण किया, भारत में समस्त विधायकों व सांसदों के संसदीय विशेषाधिकार देकर,

सभी न्यायाधीशों को न्यायालय की अवमानना पर कार्यवाही की शक्तियां देकर, भारतीय प्रशासकों को सरकारी गोपनीयता अधिनियम के अन्तर्गत विशेष शक्तियां देकर जिससे वे सभी गलतियों को ढक सके तथा जनता के प्रति कतई जवाबदेह नहीं रहें, सैनिक कानून के अन्तर्गत सैन्य अधिकारियों को कोर्ट मार्शल की शक्तियाँ देकर, पुलिस और जेल संबधी विधि के अन्तर्गत कानून को क्रियान्वित करने वाले संगठनों को व्यापक अधिकार देकर; इत्यादि।

दूसरे, यह ढांचा पब्लिक और प्राइवेट लिमिटेड कम्पनियों के संचालकों, बैंकों, इन्श्योरेंश कम्पनियों, आयात-निर्यात के व्यापारियों आदि को, कम्पनियों, बैंकों, इन्श्योरेंश कम्पनियों तथा आयात-निर्यात व्यापार से संबंधित विधि के अन्तर्गत विशेष अधिकार देकर, एक आधुनिक पूंजीपति एवं उच्च आय वाले सामाजिक वर्ग का सृजन करता है।

तीसरे, यह ढांचा राज्य सेवा नियमों के अन्तर्गत समस्त भारतीय राजकीय कर्मचारियों को, उनसे संबंधित विधि के अन्तर्गत सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों एवं कामगारों को, लघु उद्योगपतियों को तथा व्यापारियों एवं भूमिपतियों को बैंक लैण्डिंग, तकनीकी तथा बाजारीय सुविधा अधिनियम व नियमों के अन्तर्गत विशेष एवं पर्याप्त आर्थिक रियासतें देकर एक बड़ा मध्यमवर्ग समाज का निर्माण करने में मदद करता है (जिसमें उच्च, मध्यम एवं निम्न) सभी आय-वर्ग होते हैं।

चतुर्थ, आपराधिक विधि में ऐसी कमियां छोड़कर, जो अपराधियों को कानूनी शिकंजे से निकलने में मदद करती है, इस ढांचे ने अपराधी वर्ग को पनपने के लिए समर्थन प्रदान किया है।

पंचम, भारतीय कानूनी ढांचा, समाज के कमजोर वर्ग, जैसे स्त्री, बच्चे, असंगठित शहरी एवं कृषि मजदूर तथा गरीब एवं आश्रित लोग, आदि के विरुद्ध एक विभेद उत्पन्न करता है जैसा कि इन वर्गों से संबंधित विशेष कानून तथा समस्त भारत के लोगों पर लागू होने वाले सामान्य कानून को देखने से स्पष्ट होता है।

39. इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत का कानूनी ढांचा, संक्षेप में कहा जाए तो कानून के समक्ष समानता के प्रजातांत्रिक के आधार भूत सिद्धान्त से एक विरोधाभास उत्पन्न करता है।

राजनैतिक दलों के सिद्धान्त एवं व्यवहार

40. संविधान के दो तरफा स्वरूप-केंन्द्रीयकरण तथा बहुसंख्यकवादी राष्ट्रवाद की आम दिशा और तर्क से मार्गदर्शन पाकर, सत्ता एवं धन की अनियन्त्रित लालसा से प्रेरित होकर तथा आम जनता की चेतन राय की चिन्ता से मुक्त रह कर भारत के प्रमुख राजनैतिक दलों ने कहने व करने की बड़ी ऊंची व चालबाजी वाली प्रणाली का

विकास कर लिया है। इस प्रणाली में यहाँ कुछ कहना व अन्य जगह कुछ और कहना, एक दिन कानून के शासक के पक्ष में बोलना तथा दूसरे दिन कानून के उपरान्त अपना विश्वास रखना, विदित है।

41. यह चालाकी भरी प्रणाली, सन् 1947 से ही जनता को अपने वश में करने के लिए प्रत्येक प्रमुख राजनैतिक दल का सिद्धान्त एवं तरीका रहा है। लेकिन, जैसी कि आज की परिस्थितियाँ है, यह धूर्त व चालबाजी वाली प्रणाली, स्वयं मिथ्या साबित होकर छिप गई है, व इससे सभी प्रकार के प्रमुख राजनैतिक दलों के नेता अपनी अधिकांश विश्वसनीयता खो चुके हैं।

सत्ताधारी दल की नीतियां

42. यह सर्वमान्य तथ्य है कि प्रत्येक सत्ताधारी दल, दलीय एवं निजी स्वार्थों से प्रेरित होकर इस प्रकार की राष्ट्रीय नीतियों का अनुसरण करती है, जो प्रथम तो इसमें राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति करती है। दूसरे जो भ्रष्ट आला कमान के निजी और सामूहिक स्वार्थ की पूर्ति करते हैं, तीसरी जो उच्च एवं मध्यम वर्गों के हितों की पूर्ति करती हैं। यह त्रिकोणीय फार्मूला, तीनों तत्वों में से किसी एक के वर्चस्व के साथ, सभी सरकारी नीतियों का निश्चय करती है। लेकिन प्राय:कर यह फार्मूला राष्ट्रीय हितों को हानि पहुँचाता है तथा कमजोर वर्गो के हितों की अनदेखी करता है।

43. उदाहरणार्थ, बहुसंख्यक धर्मनिरपेक्षवाद, सत्ताधारी दल की मदद करने के दौरान अपना साम्प्रदायिक प्रभाव बढ़ा देता है तथा अल्पसंख्यकों को राष्ट्र की मुख्य धारा से अलग कर देता है। पाकिस्तान के विरुद्ध टकराव या शीतयुद्ध की स्थिति तथा अन्य पडौसी देशों के प्रति 'बड़े भाई' वाला दृष्टिकोण जहाँ सत्ताधारी दल को एक अंधराष्ट्रवाद पर संगठित करने का नारा प्रदान करता है, वहीं रणनीतिक राष्ट्रीय हितों को क्षति पंहुचाता है।

घाटी में सशस्त्र दमन की नीति जहाँ सत्ताधारी दल को एक ठोस राष्ट्रीय स्थिति प्रदान करती है, वहीं जम्मू कश्मीर की मार्मिक समस्या के प्रति नकारात्मक परिणामों की अनदेखी करते हुए राष्ट्र को एक दीर्घकालीन क्षति प्रदान करती है।

44. इसी भांति, बजट संबंधी, प्रतिरक्षा संबंधी, उद्योग, कृषि, व्यापार, सहायक, संरचना, तथा समाज कल्याण (शिक्षा, स्वास्थ्य आदि) संबंधी नीतियां, जबकि उच्चस्तरीय राजनैतिक भ्रष्टाचार की आवश्यकता पूर्ति करती है तथा उच्च एवं मध्यम वर्ग का हित साधन करती है, कमजोर वर्ग को तो वास्तव में चिकनी-चुपड़ी बातों से ही राजी करती है।

45. इस प्रकार दलीय और व्यक्तिगत सत्ता तथा भ्रष्टाचार में लिप्त लोगों के लिए प्रोत्साहन की स्थिति ने, हमारी समस्त राष्ट्रीय नीतियों को या तो अनुत्पादक बना

दिया है या आंशिक तौर पर उत्पादक बना दिया है, तथा कोई भी नीति मुश्किल से ही फलोत्पादक सिद्ध हो पाई है।

दो तरफा कारण

46. ऊपर वर्णित तथ्य यह इंगित करते हैं कि भारत का गलत ढंग से निर्मित संवैधानिक एवं कानूनी ढांचा एक सैद्धान्तिक पहलू बनता है तथा भारत की प्रमुख राजनैतिक पार्टियों की भ्रष्ट भ्रामक नीतियां व्यवहारिक पहलू का निर्माण करती है तथा इस प्रकार हमारे राष्ट्रीय मुद्दों की वर्तमान दयनीय स्थिति के दो-तरफा कारणों का निर्माण हुआ है।

III वास्तविकता एक नई प्रणाली की मांग करती है

47. हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया की संकटग्रस्त व दयनीय स्थिति के प्रति हमारी क्या प्रतिक्रिया है तथा क्या प्रतिक्रिया होनी चाहिए।

48. विकल्पों की कोई कमी नहीं है परन्तु हमें तो एक ऐसा निश्चित विकल्प चाहिए जो भारतीय वास्तविकता के अनुरूप बैठता हो।

राष्ट्रवाद का हिन्दुकरण

49. राष्ट्र को पुनर्जीवित करने के लिए सुझाई गई विभिन्न विधियों में से एक है राष्ट्रवाद का हिन्दुकरण, अथवा जैसा कि इस विचार को प्रतिपादित करने वाले इसे परिभाषित करते हैं, हिन्दू संस्कृति पर आधारित राष्ट्रवाद की स्थापना करना। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय अनुभव यह बताता है कि न तो अकेला धर्म तथा न केवल संस्कृति ही आधुनिक राष्ट्रों की सरकार के संगठक सिद्धान्त है। इसका कारण यह है कि 2000 वर्ष पुराने, और हिन्दू धर्म के मामले में तो 4000 वर्ष पुराने धार्मिक व सामाजिक विचार व विशिष्ट मान्यताएं परिवर्तित सामाजिक परिस्थितियों में अनुकूल नहीं बैठ सकती।

50. उदाहरण के तौर पर, एक समान धर्म और एक सी संस्कृति वाले 21 अरब आबादी वाले देश, ईसाई आबादी वाले 50 यूरोपीय देश तथा बौद्ध आबादी वाले 20 पूर्वी एवं दक्षिणी पूर्वी एशियाई देश, अपने बीच परस्पर एकता का न्यूनतम आधार भी स्थापित नहीं कर सके। बल्कि इन एक समान धर्मावलम्बी राष्ट्रों में से कइयों ने तो एक दूसरे के विरुद्ध युद्ध लड़े हैं जैसे जापान बनाम चीन, दक्षिणी कोरिया बनाम उतरी कोरिया, चीन बनाम वियतनाम, इराक कुवैत, जर्मनी बनाम फ्रान्स इत्यादि।

51. इसके अलावा, कई बार एक ही धर्म के वर्चस्व वाले राष्ट्रों में भी जातिगत, भाषाई और कभी-कभी क्षेत्रीय विकास संबंधी मतभेदों को लेकर विवाद व विभाजन होते देखे गए हैं।

52. भारतीय अनुभव यह बताता है कि हिन्दू राज्य के अधीन अल्पसंख्यकों के पूजा-स्थलों की कोई पवित्रता नहीं रहेगी तथा अल्पसंख्यक विशिष्टाओं का स्थान बहुसंख्यक विशिष्टताओं द्वारा छीन लिया जाएगा तथा हिन्दुत्व को एक विशिष्ट एवं एकमात्र विश्व-संस्कृति के रूप में माना जाने लगेगा।

53. स्पष्ट है कि हिन्दू विचारधारा प्रजातान्त्रिक आधार पर संगठित भारत का निर्माण नहीं कर सकती। संक्षेप में यह नई दिल्ली की गद्दी पर कब्जा करने के लिए वोट बैंक की प्रणाली है, राष्ट्र-निर्माण की नहीं।

राष्ट्रवाद का मण्डलीकरण

54. दूसरी राष्ट्रीय विधि या उपचार के मुताबिक जातिगत इकाई (जो जन्म को ही सामाजिक पहचान का स्रोत मान कर पहचानी जाती है) को ही सामाजिक एवं सास्कृतिक तौर पर पिछड़े हुए लोगों को सामाजिक न्याय देने का मानदण्ड मानने की बात को वैध करार देकर भारतीय राष्ट्रवाद का मण्डलीकरण या जातीयकरण कर दिया जावे। मण्डलवाद की सिफारिश या पैरवी करने वाले अपनी विचारधारा की पुष्टि व समर्थन में संवैधानिक प्रावधानों तथा मण्डलीकृत आरक्षण पर उच्चतम न्यायालय के नियमों का हवाला देते हैं। लेकिन विचाराधीन प्रश्न यह है कि तथ्य क्या प्रकट करते हैं।

55. लेकिन ऐतिहासिक अनुभव यह बताता है कि सामाजिक पहचान को जन्म के आधार पर परिभाषित करने के सिद्धान्त ने सदैव असमान सामाजिक व्यवस्था या प्रणाली को जन्म दिया है। जैसे कि पैतृक राजशाही तथा पुरोहित जाति व्यवस्था जिन्होंने सदैव अपनी दैविक उत्पत्ति का दावा किया।

56. ऐतिहासिक अनुभव आगे यह भी बताता है कि पुरानी सामाजिक इकाई, जो प्राचीन वास्तविकताओं के बीच उत्पन्न हुई है, आधुनिक सामाजिक संरचना के, जो नवीन वास्तविकताओं से उत्पन्न हुई है, अनुरूप नहीं हो सकती। यही कारण कि स्वयं उच्चतम न्यायालय को भी, विशेष अधिकारों के लिए इसके उच्च वर्ग को अलग करने के लिए जातिगत ईकाई में संशोधन करना पड़ा। ऊँची जातियों के बड़े भाग में निर्धनता के साथ सामाजिक एवं सांस्कृतिक पिछड़ेपन का अस्तित्व भी नए आर्थिक राजनैतिक एवं सांस्कृतिक कानून लागू होने की बात को प्रमाणित करता है जिसके परिणाम स्वरूप नई सामाजिक इकाइयों का प्रादुर्भाव हुआ है (उद्योगपति, बड़े उद्योगपति, प्रशासक, राजनेता, छोटे कामधन्धों के कार्यकर्ता, कृषि श्रमिक तथा बहुत सी अन्य) ये इकाइयां बड़े और छोटे की तथा अधिकार प्राप्त और अल्प-अधिकार प्राप्त आदि की हैं, जो प्रचलित प्रणाली या व्यवस्था में नियमित भूमिका अदा करते हैं तथा जाति

व्यवस्था अब भी पूरक रूप से कार्यरत हैं। विशेषकर कतिपय सामाजिक मामलों में और धार्मिक उत्सवों में।

57. मण्डलवाद के मुख्य तर्क (जिसका प्रथम जन्म लोहियावाद से हुआ तथा अब भी इसका बड़ा समर्थन लोहियावाद द्वारा किया जाता है तथा अब इसे कांग्रेस (आई), कम्युनिस्टों तथा भाजपा ने अपने अग्रिम उद्देश्य के लिए धोखे से चुरा लिया है) कि जातिगत इकाइयों को ऊपर से नीचे मोड़ने या इसका विपरीत करने से यह स्थिति आज की सामाजिक अन्याय की मनाही करने की ओर प्रेरित करेगी, इस तर्क को क्रियान्विति के ऐतिहासिक अनुभव, सामाजिक न्याय के वर्तमान स्परूप तथा आज न्याय के मान्य स्वरूपों ने ही गलत सिद्ध कर दिया है।

58. अनुसूचित जाति व जनजाति के मामलों से संबंधित 48 वर्ष लम्बा भारतीय ऐतिहासिक अनुभव यह बताता है कि इन जातियों व जन जातियों को समग्र रूप से ऊपर की और उठाने के (यानि, जातियों को विपरीत करने के) बावजूद भी उनमें से केवल 3 प्रतिशत भाग ही विशेषाधिकार प्राप्त स्तर तक बढ़ पाया है (यथा सांसद, विधायक, आई.ए.एस., आई.पी.एस., अधिकारी, न्यायाधीश, पैट्रोल व गैस एजेन्सी के डीलर इत्यादि) और केवल लगभग 10 प्रतिशत विभिन्न प्रकार के मध्यम स्तर तक पहुंचा पाए हैं। बाकी लोग अभी तक भी, कमोबेश, सामाजिक सीढ़ी के प्रथम डण्डे पर ही अटके हुए हैं।

59. इसी भांति, अमेरिकन काले वर्णवाले लोगों के लिए किए गए सकारात्मक कार्यों से संबंधित कई दशाब्दियों पुराना संयुक्त राज्य अमेरिकन अनुभव यह बताता है कि मध्यम वर्ग के साथ थोड़े से विशेषाधिकार उच्च वर्ग का प्रादुर्भाव हुआ है तथा काले लोगों का बहुसंख्यक भाग अभी भी लगातार, झुग्गी झौंपड़ियों में रहते हैं तथा गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करते हैं।

60. आज सामाजिक अन्याय के रूपों में, जैसा कि प्रतिष्ठित अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा तथा अधिकांश देशों द्वारा भी स्वीकार किया गया है, विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति और आम आदमी के बीच, धनी और निर्धन के बीच, स्त्री एवं पुरुष, शहरी एवं ग्रामीण, विकसित एवं अर्धविकसित राष्ट्र, शिक्षित एवं निरक्षर और इसी प्रकार अन्य कइयों के बीच अन्तर या फर्क विद्यमान है। मार्च 1995 में आयोजित संयुक्त राष्ट्र कोपनहेगन सामाजिक शिखर सम्मेलन ने, जिस मे सभी देश और विश्व के गैर सरकार संगठनों ने भाग लिया, 3 सूत्रीय एजेण्डा अपनाया था वे हैं निर्धनता, बेरोजागारी और सामाजिक एकता—ताकि सामाजिक असन्तुलन में सुधार किया जा सके तथा एक स्वच्छ एवं सामाजिक वैश्विक व्यवस्था की ओर अग्रसर हुआ जा सके।

61. आज भारत में प्रचलित सामाजिक अन्याय के सभी रूप—लिंग की असमानता, धनी-निर्धन का अन्तर, ग्रामीण-शहरी का फर्क व धनी व दलित का

फर्क-इत्यादि सभी जातियों में अस्तित्व में है तथा लगभग 4000 जातियों में अस्तित्व में है। इससे यह प्रकट होता है कि कोई भी जाति सामाजिक न्याय की समुचित या सन्तुलित इकाई नहीं हो सकती। उच्चतम न्यायालय का उच्च वर्ग का सूत्र भी इसे आधुनिक ईकाई के रूप में नवीनीकृत नहीं कर सकता। यह केवल एक वोट बैंक निर्माण का तरीका था और अब भी यह ऐसा ही है।

62. इसके अतिरिक्त, मंडलवाद द्वारा उठाई गई मांगें—यथा आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक समानता, मुद्दे बल्कि आधुनिक मुद्दे हैं जातिवाद के नहीं। इन मांगों के बारे में विवाद उच्च और निम्न जातियों के बीच में नहीं है बल्कि प्रत्येक जाति में है तथा निम्न जातियों के बीच है। कभी कभी ये मांगे धार्मिक, जातिगत, क्षेत्रीय और भाषाई रूप ले लेती है।

63. एक दीर्घकालीन दृष्टिकोण से देखा जाए तो एक ऐसे स्वच्छ एवं न्यायोचित व्यवस्था की प्रणाली की स्थापना करके ही—जो समस्त असमानताओं को मिटाने तथा लोगों को शक्ति प्रदान करे; निम्न जातियां सहित सभी वर्गों को सामाजिक न्याय की प्राप्ति सुनिश्चित की जा सकती है।

64. एक अल्प कालीन दृष्टिकोण से कहा जाए कमजोर एवं वंचित जो निम्न जातियों में बहुसंख्या में है तथा उच्च जातियों में अल्प संख्या में है, निर्धनता के आधार पर आरक्षण फार्मूला से मदद की जानी चाहिए।

गाँधी का रामराज्य

65. भारतीय जनमत का अधिकांश भाग यह मानता है कि गाँधीवादी ढांचा हमारी सामाजिक बुराई से बचने का तरीका हो सकता है। इस ढांचे के तीन आधारभूत बिन्दु विचारणीय है।

प्रथमत:, इस ढांचे का हिन्दू मान्याताओं पर एकतरफा जोर देने की बात—जैसे रामराज्य को समाज का अन्तिम लक्ष्य मानना, गीता को मानवीय कार्यों के लिए आदर्श मानना, गाय-पूजन को मानववाद के विकास में एक योगदान मानना, जाति व्यवस्था को एक बहुत शानदार सामाजिक खोज मानना आदि—आज भारत के बहु-धार्मिक, बहु-जातीय, बहु-भाषी तथा बहु-क्षेत्रीयता की वास्तविकता में अनुकूल नहीं बैठती, दोनों ही 1947 के पूर्व के तथा बाद के भारत में। इसी कारण से यह ढांचा एक संगठित भारतीय राष्ट्रवाद का निर्माण नहीं कर सका—व इसके परिणाम स्वरूप 1947 का साम्प्रदायिक विभाजन हुआ।

दूसरे, इसके द्वारा ग्राम स्वावलम्बन और पूर्णयता परम्परागत तकनीकों पर एकतरफा जोर देना आज के अन्तरनिर्भर विश्व के विकास से संबंधित व पर्यावरण से संबंधित आवश्यकताओं से मेल नहीं खाता।

तीसरे, समग्र रूप से आधुनिक विज्ञान एवं तकनीकी से घृणा करने की बात मानव द्वारा 'परीक्षण-त्रुटि तथा सीखने' की विधि द्वारा वास्तविकता को समझने की विश्वव्यापी मानवीय प्रवृत्ति की विरोधी है।

66. हालांकि, गाँधीवाद दर्शन से अनेक समाजोपयोगी बिन्दु सीखने को मिलते हैं जैसे साध्य एवं साधन की एकरूपता, हिंसा व उग्रता से पूर्णता: परहेज, एकाग्रता या शांति की खोज, दलितों के साथ सहानुभूति आदि।

जे.पी. जैसा आन्दोलन

67. कुछ लोगों का विश्वास है कि जे.पी. जैसा आन्दोलन हमारा प्रयोजन सिद्ध कर सकता है। लेकिन जैसा कि 1975 के जे.पी. आन्दोलन से स्पष्ट है—इस आन्दोलन ने भारतीय संवैधानिक एवं कानूनी ढांचे में किसी भूलभूत परिवर्तन की मांग नहीं की। वर्तमान सामाजिक व्यवस्था की परिस्थितियों को स्वीकार करते हुए जे.पी. की 'समग्र कांति' की विचारधारा ने नैतिक मूल्यों की आवश्यकता पर बल दिया, व्यवस्था का संचालन करने वाले व्यक्तियों की किस्म में सुधार तथा एक स्वच्छ सार्वजनिक जीवन को स्थापित करना, जिसकी कार्यशैली स्वयं नेता लोग तय करें।

विभिन्न विचारधाराओं के नेताओं एवं अनुयायियों को एकजुट करके न कि राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम के आधार केवल एक कांग्रेस विरोधी सिद्धान्त के आधार पर एक नई पार्टी गठित करने की जे.पी. की रणनीति अधिक नहीं चल पाई।

नवीनीकृत नेहरूवादी ढांचा

68. अब भी कई क्षेत्रों में यह विचारधारा चल रही है कि नवीनीकृत नेहरूवादी ढांचा स्थिति में सुधार ला सकता है। लेकिन नरसिम्हा राव के नेतृत्व में इसके 4 वर्ष से चल रहे परीक्षण ने कोई आशा का संचार नहीं किया है।

राष्ट्रपति प्रणाली

69. स्थायित्व के पक्षधर राजनेताओं का एक वर्ग यह सुझाव देता है कि राष्ट्रपति प्रणाली वर्तमान संकट की स्थिति से बचने में मदद कर सकती है लेकिन तीसरे विश्व के देशों का अनुभव जहां व्यापक जागृति कम है—यह बताता है कि राष्ट्रपति शासन प्राय: बिगड़ी हुई प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में प्राय: एकछत्र या तानाशाही शासन में बदल जाता है। आज अत्याधिक केन्द्रीकरण कभी-कभी राजनैतिक विघटन की और प्रेरित करता है (उदाहरणार्थ पाकिस्तान, सोवियत संघ, युगोस्लाविया आदि) तथा कभी-कभी आर्थिक ह्रास का भी कारण बन जाता है (जैसा कुछ अफ्रीकी देशों में हुआ) संयुक्त राज्य में राष्ट्रपति प्रणाली की सफलता का आधार समग्र जानकारी रखने वाला जनमत है।

राष्ट्रीय सरकार

70. स्थायित्व के पक्षधर, विभिन्न प्रकार के राजनीतिज्ञों की ओर से दिया गया दूसरा विचार यह है कि विविध दलों से मिल कर बनी एक राष्ट्रीय सरकार, आज के मुश्किल हालात से निपट सकती है। लेकिन यह विचार इस बात की अनदेखी करता है कि विभिन्न प्रमुख राजनैतिक दलों के भिन्न भिन्न विचारणीय बिन्दु व कार्यसूची है तथा परस्पर विरोधी प्राथमिकताएं हैं तथा उनके संबंधित नेताओं के बीच अहम और प्रतिष्ठाजनित कई विवाद विद्यमान हैं—इन बातों से यह सुझाव अव्यवहारिक हो गया है।

कुछ अन्य हल

71. कांग्रेस विरोधी मोर्चे की विचारधारा को 1967, 1977 व 1990 के अनुभवों ने नकार दिया है, इस बात से कि यह पूर्णत: असम्भव है।

72. भाजपा विरोधी मोर्चे का नारा बिना किसी कार्यक्रम संबंधी आधार के, साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण को और गहरा करने की सम्भावना के साथ, हो सकता है निष्फल ही हो जावे।

पुराने सफल राष्ट्रीय ढांचे

73. पुराने दो सफल राष्ट्रीय ढांचे—एक तो पश्चिम का उदारवादी ढांचा तथा एक साम्यवादी ढांचा—यद्यपि इनमें आज के एक नए ढांचे में कार्य करने के प्रति कई नए एवं उपयोगी सबक है, पर आज ये हमारे लिए कोई अधिक उपयोग के नहीं है।

74. बाजार आधारित पश्चिमी उदारवादी प्रणाली, जिसने एक तरफ तो एक गम्भीर पर्यावरण जनित संकट उत्पन्न कर दिया है, और दूसरी तरफ एक छिन्न-भिन्न विश्व अर्थव्यवस्था का सृजन किया है (जिसमें थोड़े से अधिक अधिकार वाले देश हैं तथा बहुत से कम अधिकार वाले देश हैं) तथा हर देश में अमीरों की संख्या तथा निर्धनों की बहु संख्या है—पहले से ही संकट की राह पर चल रही है तथा क्षेत्रीय साझा बाजार, सामूहिक केन्द्रीय प्रतिरक्षा तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक संगठनों का निर्माण कर अपना पुन: निर्माण करने का प्रयास कर रही है।

75. एकाधिकारवादी साम्यवादी प्रणाली जो विनियमित विचार तथा भौतिकवादी जीवन पर निर्भर है, इसने पहले से ही असम्भव होने की बात सिद्ध कर दी है तथा अपना पुन: निर्माण करने की सोच रही है।

76. नव-निर्मित पूर्वी एशियन ढांचे ने कुछ हद तक अपना आर्थिक मूल्य व महत्व स्थापति किया है परन्तु इसने भी पर्यावरण पहलू को नकार दिया है।

77. स्वाभाविक है कि हमारे स्वयं के अनुभव सहित, विभिन्न राष्ट्रीय अनुभवों

से कुछ सीखते हुए, हमें एक नए अनुकूल ढांचे के निर्माण के लिए कठिन परिश्रम करना होगा।

हमारा विकल्प : प्रकृति एवं लोगों का पक्षधर एक ढांचा

78. भारत के नए अनुकूल ढांचे के निर्माण के लिए (जैसा कि आज प्रत्येक देश अपना स्वयं का ढांचा खोजने का प्रयास कर रहा है), तीन आधारभूत वास्तविकताओं का ध्यान रखना वांछनीय है। (अ) 48 वर्ष पुरानी अवसरवाद की राजनीति का प्रयोग सभी प्रमुख राजनैतिक दलों ने किया है। इसका परिणाम हुआ है राजनीति का अपराधीकरण (ब) देशों की परस्पर निर्भरता या विश्ववाद, जिसका प्रादुर्भाव हाल ही में हुआ है। (स) मानव जाति और हमारे ग्रह पर रहने वाले जीवों के लिए हाल ही में उठ खड़े हुए गम्भीर खतरे जैसे पर्यावरण का ह्रास तथा बढ़ती हुई जनसंख्या।

79. ये तीन वास्तविकताएं निम्न त्रिपक्षीय प्रक्रियाओं की मांग करती है—(अ) अपराध व राजनीति की धुरी या गठबन्धन को तोड़ना। (ब) सामाजिक व्यवस्था को पूर्णरूपेण संघीकृत व विकेन्द्रीकृत करना तथा (स) दो चुनौतियों—पर्यावरण ह्रास व जनसंख्या वृद्धि—का मुकबला करने के लिए समस्त स्त्रोतों को गतिमान बनाना अर्थात् काम में लेना।

(क) अपराधी व राजनेताओं का गठबन्धन तोड़ना

80. अपराधी व राजनेताओं के गठबन्धन को तोड़ने का अर्थ है कि हमारी राजनैतिक प्रक्रिया को धन व बाहुबल आधारित राजनीति से मुक्त करना, जो कभी साम्प्रदायिक, कभी जातिवाद व कभी जनप्रियता का रूप धारण कर लेती है।

इन सुधार के तरीकों में निम्नांकित को शामिल किया जा सकता है।

(1) सभी प्रकार के चुनावों के लिए सरकार की ओर से धन खर्च किया जावे।

(2) सभी दलों और उम्मीदवारों को कोई भी चुनावी खर्चा करने से रोका जाये।

(3) निर्वाचित प्रतिनिधियों को वापिस बुलाने का अधिकार दिया जावे।

(4) एक सफल उम्मीदवार के लिए मतदान का 50 प्रतिशत वोट हासिल करना अनिवार्य किया जाये।

(5) राजनैतिक दलों को उनके द्वारा सार्वजनिक तौर से यह स्वीकृति या सहमति दिलाई जाकर कि वे अपना संबंधित राजनीति को क्षेत्र, जाति इत्यादि से अलग रखेंगे—आम जनता के प्रति उत्तरदायी बनाया जाय—उनके पदाधिकारों का चुनाव हर दो वर्ष बाद कराया जाए तथा उनके खातों का आडिट मुख्य निर्वाचन आयुक्त की देखरेख में कराया जाए।

(6) लोकसभा और विधानसभा के 50 प्रतिशत सदस्यों के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली चालू की जाए।

(7) निर्वाचन कानून, नियम एवं आचार संहिता का उल्लंघन करने वालों के लिए कड़े दण्ड का प्रावधान किया जाए।

(8) एक स्वायत्तशासी सतर्कता आयोग (लोकपाल) का गठन किया जाये जिसे किसी भी केन्द्रीय या प्रादेशिक निर्वाचित प्रतिनिध, प्रधानमंत्री सहित, के विरुद्ध भ्रष्टाचार की शिकायत व आरोपों की जांच करने का अधिकार हो, इसके साथ ही एक राज्य स्तरीय आयोग भी गठित किया जावे जिसे पंचायत राज तथा स्थानीय निकाय के सदस्यों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच का अधिकार हो।

(9) ऐसे कानून का निर्माण किया जावे जिस के अन्तर्गत निर्वाचन लड़ने वाले उम्मीदावार के लिए यह आवश्यक हो कि वह नाम-निर्देशन पत्र के साथ ही अपने नाम व अपने रिश्तेदारों के नाम की सम्पत्ति की सूची प्रस्तुत करें।

(10) नीचे से लेकर सर्वोच्च स्तर के न्यायाधीशों के विरुद्ध भ्रष्टाचार की शिकायतों की जांच करने के लिए न्यायविदों का एक आयोग गठित किया जाए।

(11) कानून में सुधार किया जाए।

(12) कार्यपालिका, न्यायपालिका, विधायिका, प्रशासन, राजनैतिक दलों, मीडिया (संचार माध्यम) तथा गैर-सरकारी संगठनों के लिए आचार संहिता तैयार की जाए।

(13) लोगों को सूचना प्राप्त करने का अधिकार दिया जाए।

(14) अप्रजातान्त्रिक कानूनों को समाप्त किया जाए जैसे राजकीय गोपनीयता अधिनियम, न्यायालय की अवमानना अधिनियम, विधायको को विशेषधिकार संबंधी कानून, सेना का कोर्ट-मार्शल का अधिकार आदि।

(15) प्रशासन में राजनैतिक दखल को बन्द किया जाए।

(16) आकाशवाणी व दूरदर्शन का संचालन एक स्वायत्तशासी संगठन को सौंपा जाए।

(17) सभी नजरबन्दी कानूनों को रद्द या निरस्त किया जाए।

(18) जेल व्यवस्था में सुधार किया जाए।

(19) सभी वर्गों में गरीबी के आधार पर आरक्षण किया जाए न कि धर्म और जाति के आधार पर।

(20) अल्पसंख्यकों के विरुद्ध समस्त विभेदों को समाप्त किया जाए।

(21) सेना रहित विकास की प्रणाली का अनुसरण किया जाए।

(22) व्यापक समस्याओं को हल किया जाए—जैसे गरीबी, निरक्षरता, नि:शुल्क शिक्षा (विवेक पूर्ण सुधार के साथ), गरीबों को निशुल्क स्वास्थ्य रक्षा, आवश्यक

वस्तुएं उचित मूल्य पर उपलब्ध कराना, लिंग-समानता, उचित मजदूरी दिलाना—इन कार्यों में लोगों के संबंधित वर्ग की पूर्ण एवं सक्रिय भागीदारी हो।

(23) राज्य व सरकार को धर्म एवं जाति से अलग किया जाए।

(24) सरकारी संगठनों एवं उनके सदस्यों द्वारा कानून के शासन की मान्यता व पालना सुनिश्चित की जाए।

(25) आम जनता में समुचित मानवतावादी विचारधारा तथा प्रजाजांत्रिक व्यवहार का सृजन व विकास किया जाए तथा उन्हें एक टिकाऊ आम जीवनशैली के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

व्यवस्था का संघीकरण व विकेन्द्रीकरण

(ख) व्यवस्था का संघीकरण व विकेन्द्रीकरण

व्यवस्था का संघीकरण या विकेन्द्रीकरण का तात्पर्य है हमारे संविधान, कानून व नीतियों को नवीन वास्तविकताओं, राष्ट्रीय एवं वैश्विक के सन्दर्भ में पुनर्निर्मित करना। इस ढांचे के आवश्यक पहलू या विशेषताएं निम्न अनुसार हो सकते हैं-

(अ) उद्देश्य : भारत व विश्व में एक ऐसे उचित एवं स्वच्छ सामाजिक प्रणाली की स्थापना करना जो एक तरफ तो प्रकृति-प्रेमी हो तथा दूसरी तरफ मानव-प्रेमी हों।

(ब) आम दिशा : वैज्ञानिक वास्तविकतावाद जो चौ-तरफा तथ्यों पर आधारित हो।

(स) सामाजिक परिप्रेक्ष्य : वैश्विकवाद या तर्कसंगत मानवतावाद।

(द) जनतान्त्रिक व्यवस्था एवं लोगों को अधिकार प्रदान करना : समस्त आन्तरिक विवादों का हल बातचीत के जरिए निकालना तथा एक पूर्ण संघीय एवं समग्र रूप से विकेन्द्रीकृत ढांचे की स्थापना करना जिसमें सभी राज्यों को स्वायत्तता दी जाए तथा भारत संघ में पंजाब को एक विशिष्ट स्थान व स्तर प्रदान किया जाए। एक नया ढांचा विकसित करके जिसमें सभी स्तरों पर निर्णय लेने में लोगों की भागीदारी हो तथा समाज की समस्त असमानताओं—धनी व निर्धनों के बीच व स्त्री पुरुष के बीच—को समाप्त करके, लोगों को शक्ति प्रदान की जाए।

(य) टिकाऊ विकास : एक तरफ तो पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार करना (जैसे कि भूमि, जल व वायु के प्राकृतिक स्रोत) तथा दूसरी ओर मानव-संसाधन एवं भौतिक संसाधनों की गुणवत्ता का विकास करना, यह कार्य अर्थ व्यवस्था का बाजार तकनीक और राजकीय आयोजना का समुचित मिश्रण करने के माध्यम से अर्थ व्यवस्था का वैश्वीकरण करके किया जाना चाहिए।

(र) क्षेत्रीय सुरक्षा एवं विकास : जम्मू कश्मीर प्रकरण का क्षेत्रीय हल निकालना, प्रत्येक नस्लीय क्षेत्र को वास्तविक नियंत्रण रेखा के दोनों ओर पूर्ण स्वायत्तता

देकर संयुक्त भारत-पाक नियंत्रक संगठन के नीचे, जिसे केवल राज्य की सुरक्षा, विदेशी मामले व मुद्रा के प्रकरण सौंपे जाए, इस प्रकार सार्क के विकास के लिए रास्ता खोलना, जो यथेष्ठ अवधि में एक मुक्त व्यापार साझा क्षेत्र के रूप में विकसित होना सम्भावित है जिसके पास एक क्षेत्रीय सरुक्षा प्रणाली होगी तथा एक संघीय राजनैतिक संगठन होगा।

(ल) नैतिक मूल्य संबंधी व्यवस्था : एक विवेकपूर्ण मानवतावादी विचार-धारा तथा प्रजातांत्रिक व्यवहार को प्रोत्साहित करना।

(व) विदेशी एवं प्रतिरक्षा के मामले : अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं मित्रता का अनुसरण करना, पड़ौसी देशों के साथ एक क्षेत्रीय प्रतिरक्षा व्यवस्था का गठन करना तथा पाकिस्तान के साथ यह प्रतिज्ञा करना कि परमाणु बम या इसके परिवहन के कोई साधनों का उत्पादन नहीं किया जाएगा।

(C) पर्यावरण व जनसंख्या की चुनौतियां

81. पर्यावरण एव जनसंख्या की जुड़वा चुनौतियां का सामना करना—इसका तात्पर्य यह है कि दो विस्तृत एवं व्यापक कार्ययोजनाएं तैयार की जाए, जो तीन आधारभूत सिद्धान्तों पर आधारित हो—

(अ) आम लोगों में उपरोक्त दो चुनौतियां के गम्भीर खतरों के बारे में पूर्ण जागरूकता उत्पन्न की जाए तथा एक टिकाऊ विकास एवं जीवनशैली के लिए सर्वोच्च अनिवार्य आवश्यकता, पर जोर दिया जाए।

(ब) इन कार्य योजनाओं की क्रियान्विति में लोगों की सक्रिय भागीदारी हो।

(स) राष्ट्रीय विकास एजेण्डा में इन दो बातों को सर्वाधिक महत्वपूर्ण आइटम के रूप में शामिल किया जाए।

82. ऊपर वर्णित त्रिपक्षीय कदम उठा कर, हमारा सामाजिक ढांचा एक टिकाऊ विकास पथ पर अग्रसर हो जाता है, जो वातावरण को सुधार कर और संरक्षित करके, एक तरफ तो प्रकृति और मनुष्य को एक समान स्तर पर लाकर खड़ा कर देता है तथा दूसरी ओर व्यक्ति एवं समाज तथा एक व्यक्ति व दूसरे व्यक्ति के संबंधों का पोषण करके, लोगों को शक्ति प्रदान करता है विशेषकर महिलाओं व कमजोर वर्ग को—इस प्रकार संक्षेप में एक प्रकृति प्रेमी व मानव प्रेमी व्यवस्था का निर्माण करता है। 5.5.95

❋ ❋ ❋

मुख्य पार्टियों की साख संकट और हमारा विकल्प

1. विद्यमान अपूर्व राष्ट्रीय संकट और राजनीति के अपराधीकरण ने हमारे देश के सामने एक नई परिस्थिति पैदा कर दी है।

I जनता की उदासीन मनोदशा

2. नया परिस्थितिजन्य लक्षण है कि लोग बेईमान राजनीति से चिन्तित नजर आते हैं। यह इन तथ्यों से साबित होता है कि लोग एक तरफ विपक्ष द्वारा चलाए जा रहे आन्दोलन और नारों, जैसे गैट, नई आर्थिक नीति के खिलाफ गतिविधि, मंदिर-मस्जिद विवाद, स्वदेशी अभियान, पाकिस्तान विरोधी उन्माद आदि से उदासीन है तथा दूसरी तरफ भ्रष्टाचार और अपराध के खिलाफ आन्दोलनों (जिस पर शेषन, खैरनार और अन्यों द्वारा की गई पहल) को उनका समर्थन मिल रहा है। यह रुझान हाल ही में हुए 10 विधान सभा चुनावों से और पुख्ता होता है जो दर्शाता है कि लोग किसी भी पार्टी को विशेषरूप से नहीं चाहते। लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रत्येक मुख्य पार्टी द्वारा धूर्त योजनाओं—गरीबों के लिए सरकारी योजना, समान नागरिक संहिता आदि—के बावजूद लोगों की मनोदशा निष्क्रिय एवं रूखी है। किसी भी पार्टी को प्राथमिकता न देने का रुझान 1980 के दशक से शुरू हो गया जो 1989 तथा 1991 के आम चुनावों में प्रतिबिम्बित हुआ, अब यह और अधिक मुखरित हो गया है।

II राजनीतिक दल एक ही थैली के चट्टे-बट्टे

3. लोगों की मनोदशा उदासीन क्यों बन गई हैं? यह इसलिए है कि 1947 से बढ़ती हुई दुख और तकलीफों के तले कराहते तथा मुख्य धारा की पार्टियों की दोगली बातों और दोगला आचरण को सहते लोग उकता गए और वे सभी पार्टियों को एक ही थैली के चट्टे-बट्टे मानने लगे हैं। इसका सबूत पार्टियों के अपने उद्देश्यों, रिकार्डों और कार्यसूचियों में व्यापक समानता से मिलता है।

4. उदाहरणतया, पार्टियों के उद्देश्यों के संबंध में, प्रत्येक पार्टी ताकत और धन को किसी भी तरह हासिल करने को लालायित रहती है। हमेशा असीमित ताकत और अधिकतम दौलत प्राप्त करने में लगे रहना ही उनका एकमात्र उद्देश्य है। उनमें उनकी कार्यप्रणाली तक में कोई बड़ा फर्क नहीं है। उन सभी की कार्यप्रणाली के चार आम हथियार—अपराध, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता और जातिवाद है। फर्क सिर्फ इन चार बीमारियों में से किसी एक पर जोर देने का है। कांग्रेस ई मुख्यतया अपराध और भ्रष्टाचार (धन और बाहुबल) की राजनीति पर निर्भर करती है तथा भाजपा प्राथामिक तौर पर लड़ाकू हिन्दू साम्प्रदायिकता पर निर्भर करती है जिसे जातिवाद, अपराध और भ्रष्टाचार से अधिक मजबूती मिलती है; जबकि राष्ट्रीय मोर्चा-वाम मोर्चा गठजोड़

उत्पीड़ित लड़ाकू जातिवाद को प्रमुख तौर पर काम में लेता है जिसको अल्पसंख्यक साम्प्रदायिकता और अपराध सह भ्रष्टाचार का समर्थन मिलता है।

5. 1947 के बाद का उनका राजनीतिक रिकार्ड भी कोई अलग तस्वीर पेश नहीं करता। कांग्रेस ई की कारगुजारी काफी खराब थी तो भाजपा और रामो-वामो की कारगुजारी भी निराशाजनक ही रही। 44 साल के लम्बे कांग्रेस शासन ने लोगों के लिए दु:ख तकलीफें लाई और भारत को सर्वोच्च अपराधीकृत, भ्रष्ट, अदक्ष, घटिया क्वालिटी, गरीबी, अशिक्षित तथा रोगी समाज बना दिया। अन्य दो गठबन्धन अपने 3 वर्ष के शासन काल में मिलते-जुलते आयामों के साथ उसी रास्ते का अनुसरण किया। 1977-79 और 1989-90 के केन्द्रीय स्तर पर दो विपक्षी प्रयोग यहां तक कि उनके कार्यकाल के एक तिहाई समय से पहले ही ढह गए। विभिन्न नामों से करीब 70 सालों से विद्यमान रहे तीन गैर कांग्रेसी पार्टियों (जैसे भाजपा, जद और कम्युनिष्ट) में से कोई भी अपना राजनीतिक प्रभाव देश व्यापी फैलाने के समर्थ नहीं बना सके। कम्युनिष्ट और वाम पार्टियां (1920) के दशक से कार्यरत पश्चिमी बंगाल, केरल, त्रिपुरा और देश के कुछ हिस्सों तक सीमित है। भाजपा (जो पूर्व में जनसंघ और रा. स्व.से. संघ के रूप में विद्यमान रही) अपना प्रभाव सभी गैर हिन्दी भाषी क्षेत्रों में नहीं जमा सकी। 6 दशक तक धर्म निर्देशित राजनीति के उपदेशों के बाद 1984 के आम चुनावों में लोगों द्वारा सभी जगह भाजपा को पछाड़ा गया था जब यह मुश्किल से ही दो लोक सभा सीट ले सकी तथा 1993 में फिर यह तीन प्रान्तों में लोगों द्वारा नकारी गई जहां इसने दो साल शासन किया था। जद के नेतृत्व में राष्ट्रीय मोर्चा जो मुख्यतया विभिन्न पूर्व समाजवादी ब्राण्डों से मिलकर बना है तथा 1920 के दशक से ही काम कर रहा है, हमेशा विघटनवाद का शिकार रहा है और अपने कुछ नेताओं के मात्र व्यक्तित्व गुणों के कारण सिर्फ कुछ क्षेत्रों में अपना प्रभाव जमाए हुए हैं।

6. चार मुख्य पार्टियों के पास न तो कोई स्थिर कार्य सूची है, और न ही उनमें से कोई किसी राष्ट्रीय सवाल पर सैद्धान्तिक रुख अख्तियार करती है। कांग्रेस-ई एक तरफ उदारीकरण की नई आर्थिक नीति अपनाती है और दूसरी तरफ नेहरूवादी सरकारी नियंत्रण की आर्थिक रणनीति के प्रति निष्ठा की निरन्तर घोषणा करती है। हमेशा धर्म निरपेक्षता के दकियानुसीपन का राग अलापती है जबकि उसे 1950 से केरल में मुस्लिम लीग के गठबंधन को जारी रखने का कोई पश्चाताप नहीं। राष्ट्रीय मोर्चा-वाम और भाजपा एक दूसरे को मुख्य राष्ट्रीय चुनौती बताते है जबकि दोनों का नई आर्थिक नीति, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, आत्मनिर्भरता आदि पर एक ही कार्यक्रम है। कम्युनिष्ट और भाजपा एक दूसरे को खलनायक बताते हैं जबकि 1989 में राष्ट्रीय मोर्चे के अघोषित गठबंधन में हाथ मिलाने का उन्हें कोई पश्चापात नहीं था। भाजपा एक दिन मजबूत केन्द्र की आवश्यकता

और धारा 370 निरस्त करने की मांग करती है और अगले ही दिन प्रान्तों को व्यापक अधिकारों की बात कहती है। मजबूत केन्द्र की दिशा वाले वाम मोर्चा को संघीयवादी जनता दल के साथ मजबूत गठबंधन बनाने में कोई झिझक नहीं हैं। एक तरफ भाजपा, वाम-मोर्चा और जनता दल विदेशी पूंजी के भेदभावपूर्ण आयात की खिलाफत करते हैं और दूसरी ओर उनकी अपनी अपनी प्रांतीय सरकारें एक के बाद दूसरी विदेश यात्रा करके बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ विदेशी पूंजी के लिए सभी तरह के समझौतों की बातचीत करती है। भाजपा, वाम और जद—नेहरूवादी आर्थिक रणनीति को पूर्व में गरीब विरोधी और राष्ट्र विरोधी घोषित करते थे लेकिन नई आर्थिक नीति का बिना विकल्प दिए विरोध करके वे आज अप्रत्यक्ष तौर पर उसे ही स्वीकार कर रहे हैं जिसे वे पहले निरस्त कर चुके थे।

III जनता द्वारा बदनाम पार्टियों का पुन: स्वीकरण क्यों

7. जनता द्वारा उन्हीं बदनाम पार्टियों को पुन: स्वीकार कर लेने का कारण दो कारकों में निहित है।

8. एक है, चल रहे आम दृष्टिकोण जिसमें एक तरफ समाज में सही और गलत के भेद का मापदण्ड अवसरवादी सत्ता राजनीति का परिपेक्ष्य है और दूसरी तरफ, उपभोक्तावाद जो किसी के जीवन का प्राथमिक लक्ष्य है यानि अधिकतम हित साधन पर जोर देने की दिशा है। मुख्य पार्टियों द्वारा फैलाई जा रही चार बीमारियों और स्वहित पर जोर देने के पश्चिमी तर्कसंगतता के साथ सत्ता पूजा की सामन्ती अवधारणा है। यह दो तरफा आम परिप्रेक्ष्य एक ऐसा वातावरण पैदा करती है जिसमें सरकार को लोगों की माता-पिता, सामाजिक क्षेत्र में खर्च को सरकारी दया, शासक पार्टी को सरकार मानना, मूल्यों और सिद्धान्तों को उपदेश समझना और एक मात्र व्यक्तिगत हित ही प्राथमिकता बनते हैं। जब तक यह विकृत परिप्रेक्ष्य बदला नहीं जाता, भारतीय समाज की गति यंत्रवत चलती रहेगी, उसमें उतार-चढ़ाव, परम्परावादी मुख्य पार्टियों के भविष्य में उतार चढ़ाव का परिवर्तन करते रहेंगे।

9. जनता द्वारा उन्हीं बदनाम पार्टियां को पुन: स्वीकार करने का दूसरा कारण है कि उनकी जगह कोई भी व्यवहार्य विकल्प नहीं है। किसी व्यावहारिक चुनाव की अनुपस्थिति में लोग जैसे ही वे एक अवसरवादी पार्टी से उकता जाते हैं शीघ्र ही दूसरी की तरफ मुड़ जाते हैं और कभी कभी उनकी नई चालाकियों की धांधली में वापस उसी को चुनते हैं।

IV हमारा विकल्प

10. इस चालाकी भरी परिस्थिति से निपटना एक बहुत ही जटिल कार्य है। लेकिन यह अभी तक असंभव नहीं है। इस प्रक्रिया की शुरूआत तथा आगे बढ़ाने के

लिए तीन बातें अनिवार्य हैं। पहली आवश्यकता एक उपयुक्त कार्यसूची की है। दूसरी जरूरत अपराधियों एवं राजनीति के गठजोड़ से निपटने के लिए व्यापक संभव संयुक्त मोर्चा बनाने की है और तीसरी अनिवार्यता लेकिन सर्वोच्च महत्वपूर्ण, एक नए प्रकार के जनवादी पार्टी सह आन्दोलन बनाने की है।

(क) कार्यसूची

11. एक उपयुक्त कार्यसूची जो चल रही वास्तविकता से मेल रखती है, दो कार्यक्रम पेश करती है—एक जनवादी पार्टी सह आन्दोलन और दूसरा संयुक्त मोर्चा।

12. ये दो कार्यसूचियां इस संकलन में यथास्थान दिए हैं। सम्पूर्ण कार्यसूची अपने साररूप में, जनवादी पार्टी सह आन्दोलन के अल्पकालीन और दीर्घकालीन कार्यक्रम को निर्धारित करती है। 'अपराधियों व राजनेताओं का गठबंधन तोड़ना' शीर्षक के भाग में संयुक्त मोर्चा की कार्ययोजना का समावेश है।

(ख) संयुक्त मोर्चा

13. व्यापक संभव संयुक्त मोर्चा के निर्माण हेतु निम्नलिखित कदम उठाने की आवश्यकता है।

(क) उपयुक्त कार्य सूची का खाका बनाना।

(ख) संयुक्त मोर्चा के सभी संघटकों के बीच सहमति से बने उचित कार्यसूची और संचालन एवं संगठन के ठीक कानूनों पर आधारित संयुक्त मोर्चा का गठन करना।

(ग) लोगों को उपर्युक्त कार्य सूची पर प्रेरित एवं संगठित करना।

(घ) संयुक्त मोर्चा को किसी के द्वारा अथवा स्वभ्रम में जनता को धोखा देने के एक नए वोट बैंक मंच बनने से बचाना। इस हेतु वर्तमान लोकसभा अथवा विधान सभा चुनावों में भाग नहीं लेने तथा अगले आम चुनावों तक सिर्फ जनता को जागृत और उनकी सेवा करने का कार्य तय करना।

(ड़) संयुक्त मोर्चा के सभी संघटकों अथवा सदस्य को उनकी अपनी व्यक्तिगत अथवा ग्रुप क्षमता के अनुसार चुनावों में भाग लेने का अधिकार देना।

(ग) जनवादी पार्टी सह आन्दोलन

14. अपने कार्यक्रम और नियमों के मुताबिक एक नया जनवादी पार्टी सह आन्दोलन के निर्माण में दो आम कार्य अपनाने की आवश्यकता है। एक पार्टी मोर्चे पर तथा दूसरा लोगों के स्तर पर।

(i) पार्टी मोर्चे पर

15. ये परिस्थिति नीचे दी गई कुछ निश्चित आवश्यक पहलकदमियों की

मांग करती है।

(क) वैज्ञानिक वास्तविकतावाद अथवा तर्कसंगत मानवतावाद को आम और सामाजिक अवधारणा मानने को सुनिश्चित करना, सामूहिक तौर पर पार्टी के साथ-साथ इसके प्रत्येक सदस्य द्वारा जनवादी व्यवहार और टिकाऊ जीवन शैली को अपनाना।

(ख) प्रेरणा स्तर ऊंचा उठाकर, अवसरवादी और उपभोक्तावादी राजनीति से स्वतंत्र रहकर, सभी हिस्सों एवं प्रक्रियाओं से सीखने के लिए खुला दिमाग रखने की आदत बनाकर, पूर्व निर्धारित धारणाओं के बजाए तथ्यों से शुरूआत करने, और अधिक महत्वपूर्ण यह कि विश्लेषण के स्वनिरीक्षण का दृष्टिकोण अपनाकर तथा अपने अहम को हर मौके पर उचित तरीके से नियंत्रित करके पार्टी स्वयं और अपने प्रत्येक सदस्य का रूपान्तरण करें।

(ग) पार्टी की पूरी क्षमता उत्पादक उपयोग के लिए लगाने की भरसक कोशिश करना।

(घ) प्रत्येक सदस्य को व्यक्तिगत, पारिवारिक, पार्टी और लोगों संबंधी उसके विभिन्न दायित्वों को संतुलित करने में सहायता करना।

(ड़)पार्टी सदस्यता की गुणात्मक एवं संख्यात्मक वृद्धि के लिए ठोस योजना बनाना, इसमें इस बात पर जोर देना कि प्रत्येक सदस्य एक प्रभावी जनसंचारक की भूमिका अदा करने वाला बन सकें।

(च) नई वास्तविकता को आत्मसात करने के नजरिए से पार्टी की नीतियों, तरीकों और व्यवहारों का निरन्तर पुनरावलोकन करना।

(छ) नए ज्ञान और कलाओं को सीखने की पार्टी संस्कृति विकसित करना, कार्य रुझान का विकास करना, विद्यमान अवसरों का उपयोग करना, आलोचना की सकारात्मक प्रतिक्रिया देना, मुसीबत में पीड़ित सदस्य की तकलीफों में भागीदार बनना।

(ज) हमेशा साधन और साध्य तथा सिद्धान्त एवं व्यवहार को जोड़ने में सचेत रहना।

16. उपरोक्त वर्णित पहलकदमियां हर दृष्टि से पार्टी और इसके प्रत्येक सदस्यों को लोकतांत्रिक बनाने के समर्थ होगी।

(ii) लोगों के स्तर पर

17. तर्कसंगत मानवतावादी चेतना द्वारा लोगों में सत्ता की पूजा तथा स्वार्थपूर्ति की चेतना को बदलने के लिए बुनियादी वास्तविकता से मेल खाते निम्नलिखित कदमों को उठाने की आवश्यकता है।

एक, कोई भी जिन लोगों में काम करे वह उनकी वैचारिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थिति को आम तौर पर तथा विशेषतौर पर यदि हो तो, उनकी प्राथमिकता की समस्या को पहचाने।

दो, गांव/तहसील/ब्लाक, जिला, प्रान्त, देश तथा विश्व से संबंधित हरेक महत्वपूर्ण सवालों के प्रति नीति और दृष्टिकोण पर विचार-विमर्श में लोगों को सम्मिलित किया जाना जैसे—टिकाऊ विकास, पर्यावरण, जनसंख्या, मानवाधिकार, अल्पसंख्यकों, गरीबी, बेरोजगारी, मूल्यवृद्धि, जातीय आरक्षण, शिक्षा, महिलाओं के विषय, उद्योग, व्यवसायिक संघ, कृषि, ग्रमीण विकास, साम्प्रदायिक दंगे, जातीय उत्पीड़न, न्यायिक प्रणाली पंचायती राज, प्रचार तंत्र, कानून-निष्पादन, संवैधानिक मुद्दे, युद्ध, शीतयुद्ध, परमाणु अप्रसार संधि, गैट, बहुराष्ट्रीय कम्पनियां, संयुक्त राष्ट्र संघ, आदि पर ग्रामीण एवं शहरी सेमीनारों, ग्रुप मीटिंगों, कमरा बैठकों, सामाजिक उत्सवों, सांस्कृतिक अवसरों अथवा अन्य कोई गतिविधि की जानी चाहिए।

तीन, विभिन्न जन समूहों में विविध प्रकार की सामाजिक बीमारियों से संबंधित कारण एवं हल के विचार विमर्श में लोगों को भागीदार बनाना जैसे—राजनीति का अपराधीकरण, धन सह बाहुबल से प्रभुत्वशाली चुनाव-प्रक्रिया, भ्रष्टाचार, घोटालों, धोखे, कालाधन, तस्करी नशाखोरी, गुण्डों द्वारा लोगों को सताना, कर चोरी, सार्वजनिक सम्पति की चोरी, गैरस्वास्थ्य हालात, औरतों एवं बच्चों की पिटाई, दंभ, चापलुसी, दोगलापन आदि।

चार, विभिन्न प्रकार के रचनात्मक प्रबंध में लोगों को शरीक करना, मसलन जलसंरक्षण, भूमि क्षरण की रोकथाम, जंगलात लगाना, प्रदूषण पर रोक, साक्षरता अभियान, स्वास्थ्य सुरक्षा केन्द्र के निर्माण, गरीबों अनाथों और निस्सहाय लोगों की सहायता का प्रबंध।

पांच, पर्यावरणीय, मानवीय एवं भौतिक स्रोतों के विकास से संबंधित उनके क्षेत्र की योजनाओं के विचार-विमर्श और निर्माण में लोगों को सम्मिलित करना जैसे—पानी की आपूर्ति, शिक्षा, स्वास्थय, बिजली, यातायात, डाकसेवा, संचार, कृषि उद्योग, ग्रामीण ऋण, बाढ नियंत्रण, मरुस्थलीय, परम्परागत तकनीकों का विकास, और संबंधित सांसद, विधायक, सरकारी विभागों, तकनीशियन एवं विशेषज्ञों आदि को लोगों के साथ अन्तरक्रिया हेतु आमंत्रित करना।

छः, लोगों को परम्परागत अधिनायकवादी संस्कृति और इसके परम्परागत अधिनस्थकारी रूपों पर विचार विमर्श में शामिल करना तथा उन्हें तर्कसंगत मानवतावादी संस्कृति और एक लोकतांत्रिक व्यवहार में विकसित करना। क्षेत्रीय नृवंशीय के इतिहास एवं विकास से संबंधित राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय कला (भाषा, संगीत, नाटक,

शिल्पकला, साहित्य, विज्ञान तथा संस्कृति) पर सांस्कृतिक सम्मेलनों का आयोजन करना।

सात, मतदाता एसोसिएशन की स्थापना करके लोगों को चुनावी प्रक्रिया में सम्मिलित करना जो यदि हो तो लोगों में से ही उचित उम्मीदवार प्रस्तुत करे तथा जो व्यापक रूप से मतदाता को स्वीकार्य हो और मतदाता अपने मत का प्रयोग कार्यक्रम पर करें। कार्यक्रम में भ्रष्टाचार, राजनीति का अपराधीकरण, मानवाधिकार, उम्मीदवार की धन व सम्पत्ति की घोषणा, जन सेवा के रिकार्ड, समाज में उसके योगदान के विषय शामिल हों।

आठ, लोगों, खास करके, औरतों, गरीबों, वंचित हिस्सों, बेरोजगारों, अल्पसंख्यकों आदि को उनके झुकाव के अनुसार जन संगठनों, सांस्कृतिक इदारों, व्यवसायिक संघों आदि में संगठित करना।

नौंवा, लेकिन अतिमहत्वपूर्ण, लोगों को संवैधानिक एवं कानूनी ताकत से परिपूर्ण करने, उन्हें अंतिम नीति निर्धारण करने एवं निर्णय लेने की ताकत प्रदान करने के लिए (क) विभिन्न स्तरों जैसे—गांव, ब्लाक, जिला, प्रान्त एवं देश स्तर—पर जनमत संग्रह करने (ख) सम्पूर्ण प्रशासन को लोगों के प्रति जवाबदेह बनाने (ग) लोगों को सूचना का अधिकार प्रदान करने (घ) सरकारी गोपनीयता कानून, अदालत की अवमानना कानून, विधायी सदस्यों को विशेषकर, सेना को कोर्ट मार्शल का अधिकार, नजरबन्दी कानूनों आदि का खात्मा करना (ड़) राज्य ढांचे का संघीयकरण तथा ताकत का ऊपर से नीचे तक विकेन्द्रीयकरण और इसी तरह के प्रावधान करना।

18. ऊपर कथित उपाय पार्टी को अपना दृष्टिकोण एवं मिशन को लोगों तक ले जाने तथा उनसे जुड़ने के समर्थ बनाएगा, परिणामतः लोगों के साथ-साथ पार्टी का लोकतांत्रिकरण होगा। 10.9.95

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर समस्या
एक नए ढंग से हल करने की जरूरत

I

1. जम्मू-कश्मीर की समस्या दो नए देशों (भारत और पाकिस्तान) के जन्म के साथ ही 1947 में पैदा हुई तथा उतनी ही पुरानी है जितने ये दोनों देश। दोनों देशों में से प्रत्येक सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर पर अपना दावा पेश करते हैं।

2. यह पिछले 46 सालों से संयुक्त राष्ट्र का एजेण्डा बनी हुई है और यह शायद अपने तरह का सबसे पुराना मामला बना हुआ है। जिसकी हल होने की शुरूआत भी नहीं हो सकी।

3. पिछले 48 सालों से यह मामला भारत व पाकिस्तान के राष्ट्रीय सवालों में से मुख्य सवाल बना रहा तथा इसने दोनों देशों के बीच तनाव और विवाह पैदा किया परिणामत: दोनों के बीच तीन युद्ध हुए और सैन्यकरण का दृष्टिकोण आगे आया और मजबूत हुआ तथा यह अभी भी जारी है।

4. 1989 से कश्मीर में खाड़कूपन के उभरने से जम्मू-कश्मीर समस्या एक बार फिर विश्व की कार्यसूची में आ गई और भारत-पाक के बीच कशीदगी को और मजबूती दी।

5. इस समय जब दुनिया में विभिन्न प्रकार के क्षेत्रीय तनाव और नागरिक विवाद मौजूद हैं—(जैसे अरब-इजराईल, दक्षिण अफ्रीका में काले-गोरे, अंगोला, मोजाम्बिक, कम्बोडिया, आयरलैण्ड, पैरू, चिल्ली आदि के विवाद)—जो या तो अपने हल के नजदीक है अथवा अपने समाधान की तरफ है, जम्मू-कश्मीर की समस्या विश्व की सबसे गम्भीरतम चुनौती है। भारत-पाक के बीच सरकारी वार्ता रुक जाने और दोनों देशों की सेनाओं के आमने-सामने तैनात होने तथा हमेशा सीमा पर सैनिक मुठभेड़ होने से भारत-पाक के बीच एक और युद्ध होने की सम्भावना बढ़ गई है—इस प्रकार यह विश्व स्तर के चिन्ता का विषय बन गया है। भारत-पाक के बीच यह युद्ध अपने नाभिकीय आयामों के साथ न सिर्फ भारत और पाकिस्तान को बल्कि दक्षिण एशिया को भी नुकसान पहुंचायेगा तथा विश्व के लोगों के सामाजिक विकास पर भी चोट करेगा। इससे पहले कि यह सम्भावना वास्तविक बने और मानव जाति को एक अन्य मुश्किल में डाले यह समय है कि विश्व के सभी समझदार लोग आगे आए तथा शीतयुद्ध के इस ज्वलन्त बिन्दु को शान्त करें।

II

6. इस पर कुछ कहने की जरूरत नहीं है कि जम्मू-कश्मीर की समस्या का

समाधान नई दिल्ली और इस्लामाबाद के साथ-साथ पिछले 48 सालों से विश्व समुदाय द्वारा हल नहीं करने से कश्मीरी लोगों को खास तौर से और जम्मू-लद्दाख तथा 'आजाद कश्मीर' के लोगों को आम तौर पर नुकसान हुआ है। इसके साथ ही इसने उपमहाद्वीप और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उल्टा प्रभाव डाला है।

7. प्रान्तीय स्तर पर पिछले 6 सालों के खाड़कूपन में सुरक्षा बलों द्वारा हिरासत में मृत्यु, आगजनी और लूट में हजारों कश्मीरी मारे गए, जम्मू में कई बम विस्फोट हुए जिसमें भारी मानवीय और भौतिक नुकसान हुआ। लद्दाख भी दुखदायी स्थिति का भागीदार बना। कुछ मामलों में लड़ाकू ग्रुपों ने भी लोगों के साथ अत्याचार और दमन किया। कुल मिलाकर 48 सालों का नई दिल्ली तथा इसके स्थानीय प्रशासन का जम्मू-कश्मीर में रिकार्ड निराशाजनक ही रहा जिसमें राजनीतिज्ञ सत्ता और आर्थिक स्रोतों को हथियाने, मानवाधिकारों का उल्लंघन तथा प्रान्त के तीन क्षेत्रों में आपसी तनाव पैदा करने का क्रम चला। 1947 से 'आजाद कश्मीर' में इस्लामाबाद द्वारा ऐसा ही दुखदायी क्रम, नागरिक अधिकारों पर प्रतिबंध, उनके हिस्से के विकास फण्ड में कटौती करना, आदि रहा।

8. उपमहाद्वीपीय स्तर पर, जम्मू-कश्मीर प्रान्त पर भारत-पाक विवाद ने दोनों देशों के बीच टकराव की राजनीति को बढ़ावा दिया—उनकी संरचना के सैन्यकरण, तीन भारत-पाक युद्ध, उनके बीच द्विपक्षीय व्यापार को रोककर, आवश्यक सामाजिक विकास की उपेक्षा करके अपनी-अपनी राजनीतिक प्रक्रियाओं का अपराधीकरण, साम्प्रदायिकरण और भ्रष्टाचारी बनाकर तथा विश्व में अपना स्तर गिराकर एक औसत किनारे का खिलाड़ी बना दिया है।

9. दक्षिण एशिया स्तर पर इनसे सार्क के विकास में बाधा पैदा की जिसे एक व्यवहारिक साझा बाजार और एक साझी क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था में बदला जा सकता था।

10. विश्व स्तर पर, जम्मू-कश्मीर की समस्या हल न होने के कारण, इसने शीतयुद्ध की राजनीति, अर्थव्यवस्था का सैन्यकरण और तानाशाही प्रवृत्तियों को बढ़ावा दिया है।

III

11. जम्मू-कश्मीर समस्या इतने लम्बे समय तक बिना हल हुए क्यों रही? इसके दो प्रमुख पहलू हैं—एक, आमतौर पर अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति तथा दूसरी, खासतौर पर भारत और पाकिस्तान की राष्ट्रीय अवधारणाएं मुख्य रुकावट बनी।

12. अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के संदर्भ में बात यह है कि 44 साल के लम्बे शीत युद्ध काल (1947-89) तक विश्व दो महाशक्तियों अमेरिका तथा सोवियत यूनियन में

टकराव से प्रलक्षित था, जो किसी भी महत्वपूर्ण समस्या को चाहे संयुक्त राष्ट्र के जरिये अथवा किसी अन्य माध्यम के द्वारा हल करने की कोशिश में रोड़े अटकाते रहा था।

13. शीत युद्ध के बाद का काल, जो विवाद के मामलों में सहमति और समझौतों के रुझान को लिए हुए है, जबकि पुराने समय के कुछ काले धब्बों (जैसे, भारत-पाक क्षेत्र, पूर्व यूगोस्लाविया, रूआण्डा, सोमालिया आदि) की वसीयत साथ लाया है। संयुक्त राष्ट्र और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय इदारे (जैसे—आई.एम.एफ., विश्व बैंक, नाभिकीय अप्रसार व्यवस्था, मिसाईल नियंत्रण संस्था आदि) पर वीटो अधिकार लिए पांच शक्तियों तथा कुछ धनी देशों का नियंत्रण है, इनमें से प्रत्येक नए विश्व रुझान पर अपना प्रभाव बढ़ाना और मजबूत करने की प्रतियोगिता में हैं, इनमें इन नाजुक मामलों को हल करने की एकता तथा क्षमता की कमी है। इस अप्रासंगिक विश्व संरचना में जहां विश्व स्तर के साथ-साथ प्रत्येक देश में ताकत, धन और विशेषाधिकार के मापदण्ड ही सही गलत के बीच भेद का निर्धारण करते हैं, ये सभी अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय विवादों के न्यायिक और उचित समाधान में रुकावट तथा बाध्यकारी हैं। वर्तमान विश्व संरचना का लोकतांत्रिक आधार तथा राजनीतिक तथा आर्थिक विभेदों को खत्म करने की बुनियाद पर पुनर्संगठित करने की आवश्यकता है।

14. जहां तक भारत और पाकिस्तान की राष्ट्रीय अवधारणा का सवाल है, इनकी जड़ विभाजन के पूर्व की साम्प्रदायिक मानसिकता में है।

15. राष्ट्रीयता का भारतीय सिद्धान्त जो धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक होने का दावा करता है, दो तरफा संवैधानिक दृष्टिकोण से मार्गदर्शन लेता है, एक केन्द्रीयकृत राज्य तथा दूसरा बहुमत का प्रभुत्व। यह दृष्टिकोण एक तरफ राष्ट्रीय एकता की मजबूती, पाक विरोधी संकीर्णतावाद, भूतकालीन वैदिक संस्कृति और सभी प्रमुख सरकारी उत्सवों में बहुमतवादी मान्यताओं (पूजा, आरती आदि) पर तथा दूसरी तरफ सामाजिक संगठन का निर्माण सभी प्रकार के 'क्रीमी लेयर' के हितों की पूर्ति की बुनियाद पर करता है। इस प्रकार यह सभी वंचित लोगों खासकर अल्पसंख्यकों और सामाजिक तौर पर कमजोर तबकों के साथ मानसिक और भौतिक तौर पर भेदभाव करता है।

16. राष्ट्रवाद का पाकिस्तानी सिद्धान्त सरकारी तौर पर इस्लामिक राज्य पर खड़ा है लेकिन तथ्य यह है कि यह सुन्नी राष्ट्रवाद है जो एक तरफ सभी गैर सुन्नी अल्पसंख्यकों (शिया, अहमदिया, जिकरी, मोहाजर, ईसाई, सिख, हिन्दू आदि) के खिलाफ भेदभाव बरतता है तथा दूसरी तरफ भारत विरोधी उन्माद को पैदा करके राष्ट्रीय एकता बनाने की कोशिश करता है।

17. ये दोनों राष्ट्रवाद धनबल और भुजबल को अपने सत्ता संरचना की रक्षा करने और मजबूती प्रदान करने के लिए काम में लाते हैं।

18. अपने-अपने अप्रासंगिक राष्ट्रीय सिद्धान्तों से शुरूआत करके नई दिल्ली तथा इस्लामाबाद ने जम्मू-कश्मीर समस्या पर अपने-अपने जनमत को गलत राह दी है। नई दिल्ली जिसे सभी मुख्य पार्टियों का समर्थन है जोर देती है कि जम्मू-कश्मीर का भारत से अलग होने से देश बर्बाद हो जायेगा जबकि इस्लामाबाद जिसे सभी प्रमुख राष्ट्रीय पार्टियां साथ देती है कहता है कि पूरे जम्मू-कश्मीर पर नियंत्रण किये बिना पाकिस्तान राष्ट्र की एकता अधूरी है।

19. एक अतर्कसंगत स्थिति अख्तियार करते हुए नई दिल्ली लगातार एक तरफ तो जम्मू-कश्मीर को भारत का अभिन्न अंग घोषित करती है जबकि दूसरी तरफ 1972 के शिमला समझौते में इसे विवादित मानने की शपथ लेती है (समझौते की धारा 6 जम्मू-कश्मीर को विवाद का मामला मानती है) कश्मीरी लोगों का भारतीय मुख्य धारा से हो चुके गहरे अलगाव को छुपाते हुए नई दिल्ली कश्मीरी खाड़कूपन को पाक प्रायोजित आतंकवाद घोषित करती है। घाटी में मानवाधिकारों का उल्लंघन करते हुए वहां सैनिक कार्यवाही को लोकतांत्रिक व्यवस्था की सुरक्षा का एक कदम बताती है।

20. इसी तरह एक अतार्किक आधार से चलते हुए इस्लामाबाद एक तरफ तो लगातार शिमला समझौते में अपने आप को भागीदार मानता है (जिसमें जम्मू-कश्मीर के शांतिपूर्ण समाधान द्विपक्षीय वार्ता से हल करने का प्रावधान है) जबकि दूसरी तरफ 1948-49 के संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव (जो इस समस्या के हल हेतु जनमत संग्रह का कहता है) को लागू करने का अभियान चलाता है। अपनी पूर्व घोषणा का उल्लंघन करते हुए जिसमें इस्लामाबाद जम्मू-कश्मीर की समस्या हल करने में कोई पूर्व शर्त पेश नहीं करता था लेकिन अब बातचीत के लिए कुछ निश्चित पूर्व शर्तों को इस हेतु पेश करता है।

IV

21. इन गलत धारणाओं को मानने का प्राथमिक कारण जम्मू-कश्मीर समस्या की प्रकृति और इसकी मूल वास्तविकता के बारे में लोगों को कम जानकारी होने में निहित है।

22. इसकी प्रकृति के संदर्भ में, 1947 के बाद का सम्पूर्ण इतिहास बताता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या अन्तर्राष्ट्रीय कानूनी मान्यता के तहत भारत और पाकिस्तान के बीच एक द्विपक्षीय मामला है जबकि राजनीति के नियम और हाल ही की मूल वास्तविकता इसे भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच एक त्रिपक्षीय समस्या बनाती है।

23. मूल वास्तविकता के संदर्भ में तीन प्रमुख कारकों को गहराई से देखने की जरूरत है।

24. पहला कारक यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सभी देश जबकि जम्मू-कश्मीर समस्या को भारत व पाकिस्तान के बीच एक द्विपक्षीय विषय स्वीकार करते हैं तथा साथ ही जम्मू-कश्मीर के भविष्य का फैसला करने में यहां के लोगों को सम्मिलित करने की मांग करते हैं। इस प्रकार असली रूप में इसे त्रिपक्षीय सवाल में बदल देते हैं। यहां तक कि भारत व पाकिस्तान भी नरम तरीके से इस अन्तर्राष्ट्रीय मांग को स्वीकार करते हैं। 1948-49 का संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव भी जिसे भारत व पाकिस्तान दोनों मानते हैं जिसमें जम्मू-कश्मीर के लोगों को जनमत का अधिकार है, इसे तीन तरफा समस्या होने का संकेत देता है।

25. दूसरा कारक यह है कि भारत-पाक स्तर पर दोनों, नई दिल्ली और इस्लामाबाद, जम्मू-कश्मीर को अपने-अपने राष्ट्र का हिस्सा होने पर जोर देते हैं तथा जनमत को अपनी-अपनी इस राष्ट्रीय इज्जत की किसी भी कीमत पर रक्षा करने का उन्माद पैदा करते हैं।

26. तीसरा कारक यह है कि स्थानीय भू-राजनीतिक स्तर पर जम्मू-कश्मीर एक बहुनस्लीय-क्षेत्रीय इकाई है, जिसमें विभिन्न आकांक्षाएं, इच्छाएं सम्मिलित हैं। कश्मीरियों की भारी मात्रा भारत से अलग होने के लिए लड़ रही है जबकि अन्य पहचानें अपनी-अपनी अलग राय रखते हैं।

V

27. वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुए जम्मू-कश्मीर के भविष्य के सम्बन्ध में उचित, इच्छित तथा व्यवहार्य हल है और यही हो सकता है कि भारत, पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों के साथ त्रिपक्षीय वार्ता की रणनीति अपनाई जावे। इस त्रिपक्षीय रणनीति का मूल मुद्दा यह हो और होना चाहिए कि यह तीनों पक्षों के हितों की पूर्ति करें इनमें से प्रत्येक को संतुष्ट करें और सभी की अभिलाषा, आकांक्षा एवं हितों को विद्यमान संभावनाओं की सीमा में पूरा करे।

28. इस प्रकार त्रिपक्षीय रणनीति तीन तरफा सहमति की मांग करती है। यह (i) भारत एवं पाकिस्तान के हितों को पूरा करें। (ii) एक तरफ भारत और पाकिस्तान तथा दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों में तालमेल बैठाए। (iii) यह जम्मू-कश्मीर के आठ नस्लीय-क्षेत्रीय पहचानों यानि कश्मीरी, डोगरा, पठवारी (गुज्जर और बकरवाल), लद्दाखी, कारगिली, बाल्टी आदि के हितों के बीच सामंजस्य करें।

29. भारत और पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों की पूर्ति सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर

प्रान्त पर भारत-पाक का सह राज्य स्थापित करके हो सकता है और होना चाहिए।

30. एक तरफ भारत और पाकिस्तान तथा दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों में मेल को जम्मू-कश्मीर के रक्षा, विदेशी मामलों तथा मुद्रा को भारत-पाक सहराज्य में रखकर सुनिश्चित किया जा सकता है व किया जाना चाहिए। बाकी सभी मामले जम्मू-कश्मीर प्रान्त की सीमा के तहत छोड़ दिये जाने चाहिए।

31. जम्मू-कश्मीर की विभिन्न नस्लीय-क्षेत्रीय पहचानों के हितों में सामंजस्य हेतु जम्मू-कश्मीर प्रान्त का एक संघीय संविधान स्वीकार करके जिसमें एक तरफ प्रत्येक नस्लीय क्षेत्र को अधिकतम संभव स्वायत्तता दी जावे जिसे आगे जिला, ब्लाक तथा गांव परिषद को हस्तान्तरित करने का प्रावधान हो तथा दूसरी तरफ एक ही जम्मू-कश्मीर राज्य के दृष्टिकोण के तहत एक साझा मुखिया जो नस्लीय-क्षेत्रीय परिषदों से चुना हुआ हो, एक साझा हाईकोर्ट हो, एक साझा चुनाव आयुक्त हो, एक साझा लोक सेवा आयोग, एक साझा पर्यावरण आयुक्त हो और एक साझा मानव संसाधन विकास आयुक्त हो, ये सभी नस्लीय-क्षेत्रीय परिषदों द्वारा नियुक्त हो। प्रत्येक नस्लीय-क्षेत्रीय परिषद से एक प्रतिनिधि इन आयोगों में हो।

32. भारत-पाक सह राज्य नये ग्लोबल टिकाऊ विकास के दृष्टिकोण के तहत एक नया प्रयोग है। यह दृष्टिकोण बताता है कि अलग-अलग राष्ट्रीय हितों, विभिन्न राष्ट्रों और नस्लों की भांति-भांति आकांक्षाओं, इच्छाओं एवं विचारों के बीच सामजंस्य एवं संतुलन लोगों को ताकत का हस्तान्तरण करके किया जा सकता है एवं सभी सामाजिक विभेदता को मिटाया जा सकता है। सह राज्य न सिर्फ भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के लोगों के लिए बल्कि सार्क के विकास में भी भारी प्रेरणा का कार्य करेगा।

VI

33. स्पष्टतया त्रिपक्षीय विकल्प सभी एक पक्षीय अथवा द्विपक्षीय विकल्पों को नकार देता है। जो कि एक अथवा दूसरे पक्ष में हो सकते हैं, उचित और व्यावहारिक समाधान नहीं।

34. उदाहरण के लिए जम्मू-कश्मीर का किसी एक देश में विलय दूसरे राष्ट्र के हितों के खिलाफ जाता है। भारत-पाक तनाव को जारी रखते हुए यह शीत युद्ध की राजनीति को मजबूती देता है।

35. पुनः एक स्वतंत्र जम्मू-कश्मीर का विकल्प भारत और पाकिस्तान के बीच मित्रता की भावना पैदा नहीं कर सकता और न ही एक विवाद मुक्त दक्षिण एशिया क्षेत्र बनाने में मदद कर सकता है। यह न केवल भारत-पाक तनाव को जिन्दा रखेगा बल्कि बड़ी शक्तियों के बीच यह एक विवाद का मुद्दा बना रहेगा। एक साझा

परिप्रेक्ष्य की कमी के रहते विभिन्न नस्लीय ताकतें अफगानिस्तान की तरह सर्वोच्चता हासिल करने के लिए आपस में प्रतियोगिता करेगी।

36. अगला, विकल्प कि जम्मू-कश्मीर का विभाजन वास्तविक नियंत्रण रेखा अथवा ट्राइस्ट मॉडल जैसा कर दिया जाय, भारत के लिए अधिक लाभकारी है लेकिन इसे पाकिस्तान और कश्मीरी स्वीकार नहीं करेंगे।

37. और आगे, इस मोड़ पर जम्मू-कश्मीर में चुनाव का विकल्प न तो तर्कसंगत और न ही व्यावहारिक है। यह अतर्कसंगत है क्योंकि एक विवादित परिस्थिति में पहला कदम एक अर्थपूर्ण बातचीत है धन और बल पर आधारित चुनाव नहीं।

प्रत्येक चुनावी प्रक्रिया में पहली आवश्यकता संचालन तथा प्रक्रिया की सही देखरेख की बात पर भाग ले रही सभी पार्टियों के बीच समझौता होना चाहिए। जहां यह समझौता नहीं है, चुनावी प्रक्रिया साख खो देती है। प्रथमत: आल पार्टी हुर्रियत कान्फ्रेंस (कश्मीरी लोगों का प्रतिनिधि प्लेटफार्म) इस प्रकार की कार्यवाही को निरस्त करती है और द्वितीयत: सभी गैर कांग्रेसी मुख्य पार्टियां इस मोड़ पर चुनावों की औचित्यता पर संदेह करती है।

VII

38. त्रिपक्षीय विकल्प का सबसे उपयुक्त शुरूआती बिन्दु है कि इसकी प्रक्रिया बातचीत के रूप में दो स्तरों पर चलाई जावे—एक भारत-पाक स्तर पर और दूसरी जम्मू-कश्मीर के विभिन्न नस्लीय-क्षेत्रीय पहचानों के स्तर पर।

39. भारत-पाक स्तर पर भारत और पाकिस्तान को अनेक साझे भविष्य के विश्व दृष्टिकोण से शुरू करते हुए एवं 1947 के बाद बहुत ही दुखदायी तथा भारी कीमत चुकाने की टकरावादी भूतकाल के कटु अनुभव से सीखते हुए, उनके बीच बुनियादी सिद्धान्तों में मतभेदों को हल करने की कोशिश की जानी चाहिए। उनकी अपनी-अपनी राष्ट्रीय इज्जत और राष्ट्रीय गौरव तथा लोगों की आकांक्षाओं की रक्षा के साथ जम्मू-कश्मीर के सभी नस्लीय-क्षेत्रीय पहचानों की भी रक्षा हो।

40. प्रान्तीय स्तर पर सभी नस्लीय-क्षेत्रीय ग्रुपों को इस परिप्रेक्ष्य से शुरू करना चाहिए कि उनका भविष्य भारत पाक मित्रता तथा सहयोग में है, अपना राजनीतिक प्रोग्राम का ढांचा ऐसा बनाये जो न सिर्फ एक ही जम्मू-कश्मीर राज्य की आकांक्षा पूरी करे बल्कि दोनों देशों का आदर और वहां के लोगों के हितों को भी पूरा करे।

41. पहले प्रकार की बातचीत (यानि भारत-पाक के मध्य बातचीत) इस समय संभव नजर नहीं आती क्योंकि भारत और पाकिस्तान 1947 के विभाजन की मानसिकता से ग्रसित हैं, जो 1947 के बाद की शीत युद्ध राजनीति और उनकी वोट

बैंक अनिवार्यता इस प्रोग्राम को हाथ में लेने के समर्थ नहीं बनाता।

42. स्पष्टतया, परिस्थिति जम्मू-कश्मीर समस्या को नये तरीके से हल करने की जिम्मेवारी जम्मू-कश्मीर के लोगों पर डालती है।

43. इस संदर्भ में पहला कदम जे के प्रान्त के भारतीय हिस्से में रह रही विभिन्न नस्लीय-क्षेत्रीय पहचानों के प्रतिनिधियों के बीच जम्मू-कश्मीर समस्या की प्रकृति तथा बुनियादी वास्तविकता पर अर्थपूर्ण बातचीत करने की होनी चाहिए।

44. पहले नुक्ते पर सहमति के बाद दूसरा कदम इस बिन्दु पर सहमति के बिन्दुओं पर लोगों को संगठित एवं जाग्रत करने के लिए एक संयुक्त मोर्चा बनाने का होना चाहिए। दूसरी तरफ इसी तरह का संयुक्त मोर्चा समस्या के बुनियादी तथा वर्तमान तथ्यों के आधार पर 'आजाद कश्मीर' के लोगों के प्रतिनिधियों का भी बनाया जाना चाहिए।

45. तीसरा कदम भारत तथा पाकिस्तान दोनों देशों में संयुक्त मोर्चा के सिद्धान्तों के पक्ष में जनमत समर्थन हेतु जाग्रति अभियान चलाया जाना, होना चाहिए।

46. सभी संगठित पक्षों और उचित तैयारी के बाद चौथा कदम जम्मू-कश्मीर के दोनों हिस्सों में रहने वाले नस्लीय-क्षेत्रीय ग्रुपों के प्रतिनिधियों की कान्फ्रेंस का आयोजन किया जाना चाहिए जो जम्मू-कश्मीर समस्या का सहमति लायक समाधान निकालने का प्रयास करे।

47. पाचवां कदम इस समाधान की प्रक्रिया लागू करने में भारत, पाकिस्तान तथा दुनिया में सभी न्यायिक और उचित लोगों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

48. इस प्रकार का जनतांत्रिक प्रयास न केवल दोनों देशों में चल रहे अमानवीय प्रक्रियाओं (जो राजनीति के अपराधीकरण, असमानता और गरीबी में वृद्धि, आचरण के मापदण्ड में पतन और परमाणु युद्ध का गैर मानवीय परिप्रेक्ष्य) को रोकेगा बल्कि तर्कसंगत मानवतावादी प्रक्रियाओं (यानि प्रकृति सहयोग और लोक हित का आन्दोलन, जो लोगों को ताकत प्रदान करता है, सभी सामाजिक असमानताएं खत्म करता है और प्रकृति के संरक्षण एवं सुरक्षा करता है) को मजबूती देगी जो आज सम्पूर्ण विश्व की जरूरत है।

49. इस समय जम्मू-कश्मीर के लोगों के उठने, जाग्रत होने, जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान को नए तरीके से हल करने का बिल्कुल सही मौका है। 27.10. 1995

❋ ❋ ❋

लिंग समानता विश्व कार्यसूची का एक सर्वोच्च मुद्दा

(I) समस्या

1. मानव आबादी के आधे हिस्से से सम्बधित लिंग समानता का विषय, जिस पर इतिहास में हजारों वर्षों तक विचार करना ही वर्जित रहा; आज विश्व कार्यसूची के सर्वोच्च विषयों में से एक बन गया है। इसका सर्वोच्च विषयों में आने की वजह संयुक्त राष्ट्र या समझदार लोगों की उदारता अथवा एन.जी.ओ. जैसे कुछ स्वाभाविक लोकहितैषी गैर सरकारी संगठनों द्वारा पुरुषों का स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार के अचानक महसूस किए जाने में नहीं है। हजारों सालों तक सभी परम्परागत विचार शाखाएं; धार्मिक, सांस्कृतिक, नैतिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि ने महिलाओं के साथ दूसरे दर्जे के मानव जैसा बर्ताव किया है। ऐसा बर्ताव क्यों था? क्योंकि उस समय सामाजिक वास्तविकता इस प्रकार के परिवर्तन हेतु परिपक्व नहीं थी।

2. आज लिंग समानता की कार्यसूची बदली हूई सामाजिक वास्तविकता से पैदा हुई है जहाँ विज्ञान व तकनीकी ज्ञान के विकास को एक नये भागीदारी सामाजिक श्रम विभाजन की आवश्यकता है जो सामाजिक विकास में महिलाओं की भागीदारी पुरुषों के समान अनिवार्य बनाता है। इसीलिए महिलाओं का विषय आज मानवीय विषय बन गया है।

3. भूतकाल में, मानव इतिहास के भोजन-संग्रहण काल में वैज्ञानिक तकनीकी संरचना (वै त स) और इससे सम्बन्धित सामाजिक श्रम विभाजन मातृसत्ता की व्यवस्था के प्रचलन से चारित्रिक था यानि 'कुल माता' का शासन। उसके बाद शिकार की वै त स के उदय होने से मातृसत्ता के सामाजिक श्रम-विभाजन की जगह पितृसत्ता (यानि पिता अथवा पुरुष प्रभुत्व) ने ले ली। यही स्थिति पशुपालन तथा कृषि वै त स के सामाजिक श्रम विभाजन के तहत जारी रही। सिर्फ औद्योगिक वै त स और इससे सम्बन्धित सामाजिक श्रम विभाजन में ऐसे हालात आए कि महिलाएँ घरेलु दायरे से बाहर निकलने के समर्थ बनी और व्यापक सामाजिक क्षेत्र में प्रवेश किया। दूसरे विश्व युद्ध के बाद की वै त स और इससे जुड़े सामाजिक श्रम विभाजन ने हर क्षेत्र में स्त्रियों और पुरुषों के मध्य समान भागीदारी की मांग की।

II संयुक्त राष्ट्र की विश्व पहलकदमियाँ

4. महिलाओं को समान अधिकारों की सुनिश्चितता के उद्देश्य से पिछले 50 सालों में संयुक्त राष्ट्र ने कई पहलकदमियां की हैं। 1945 का संयुक्त राष्ट्र घोषणा-पत्र

ने स्त्री और पुरुष के मध्य समानता की उद्घोषणा की। लेकिन संयुक्त राष्ट्र को लिंग विभेदता की स्थिति के आकलन में 20 वर्ष लग गए। महिलाओं पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रायोजित पहला विश्व-सम्मेलन 1975 में मैक्सिको में आयोजित हुआ। इसने महिलाओं के लिए संयुक्त राष्ट्र दशक आरम्भ किया। महिलाओं पर दूसरा संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन 1980 में कोपेनहेगन में आयोजित हुआ, तत्पश्चात् तीसरा सम्मेलन 1985 में नैरोबी तथा चौथा 1995 पीकिंग में सम्पन्न हुआ।

5. संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा बहुत ही महत्वपूर्ण पहल 1979 में ली गई तब इससे महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभावों के उन्मूलन पर सम्मेलन— Convetion on the elimination of all form of Discrimination Against Women (CEDAW)—पारित किया। सेडा (CEDAW) का कार्यक्षेत्र और आगे विस्तृत हो गया जब संयुक्त राष्ट्र महासभा ने महिलाओं के खिलाफ हिंसा को इस प्रकार परिभाषित किया ''लिंग आधारित हिंसा का कोई कृत्य जिसका परिणाम अथवा परिणाम हो सकता है, जो महिलाओं को भौतिक, यौन सम्बन्धी अथवा मानसिक चोट या पीड़ा पहुंचाती है ऐसी कार्यवाही की धमकी भी जो चाहे निजी अथवा सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की स्वतन्त्रता या उनके अधिकारों पर प्रतिबन्ध या शर्त लगाए अथवा मजबूर करे,'' यानि इसने महिलाओं की व्यक्तिगत समस्या को समाज से सम्बन्धित समस्या में बदल दिया। सेडा आगे की तरफ एक महत्वपूर्ण कदम है, यद्यपि इस पर 41 देशों ने हस्ताक्षर नहीं किए, 6 ने हस्ताक्षर किए लेकिन अभिपुष्टि नहीं की और 43 देशों ने कुछ शर्तों के साथ अभिपुष्टि की।

6. 1993 के विएना में आयोजित संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार सम्मेलन ने महिलाओं के व्यक्तिगत अधिकारों के हनन को मानवाधिकारों का हनन माना। इसी बीच संयुक्त राष्ट्र द्वारा आयोजित कई अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुए, जैसे 1992 में पर्यावरण एव विकास पर रियो दी जेनेरियों में संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन, 1994 में जनसंख्या एवं विकास पर काहिरा में संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन और 1995 का कोपेनहेगन में सामाजिक विकास सम्मेलन जिसमें महिलाओं से सम्बन्धित सम्बोधन रहे, यद्यपि उसका प्राथमिक मुद्दा महिलाओं से सम्बन्धित नहीं था। काहिरा सम्मेलन में जनसंख्या पर सम्पूर्ण विचार-विमर्श में महिलाओं की केन्द्रीय भूमिका की आवश्यकता बताई और जनसंख्या-योजना में महिलाओं के स्वास्थ्य तथा जनन-अधिकारों की प्रमुखता को प्रतिपादित किया।

III संयुक्त राष्ट्र सम्मेलनों ने अलग-अलग मुद्दों पर जोर दिया

7. 1975 के मैक्सिको तथा 1980 के कोपेनहेगन सम्मेलनों में उत्तरी विकसित देशों की कार्यसूची की प्रमुखता थी। 1985 के नैरोबी सम्मेलन में दक्षिणी महिला

आन्दोलनों का मुद्दों—संरचनात्मक सामंजस्य, साम्यवादी एवं उत्तर साम्यवादी समाजों में सुधार, नई प्रौद्योगिकी, पर्यावरण पतन, गरीबी, सम्पत्ति-अधिकार, रोजगार, वेतन, टिकाऊ विकास, खराब काम के हालात, औरतों में बढ़ता अवैध व्यापार ने तय की। अन्य महत्वपूर्ण विषयों जैसे राजनीतिक भागीदारी, महिलाओं के विरुद्ध हिंसा (युद्धग्रस्त घरेलु हालात), जनन अधिकारों, मादा शिशु, धार्मिक रूढ़ीवाद, लिंग के व्यापार पर उत्पीड़न, नस्लवाद और नवउपनिवेशवाद आदि को भी सहभागियों ने उठाया।

8. महिलाओं पर एक के बाद दूसरा प्रत्येक संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन यह दर्शाता है कि उनमें विषयों पर जोर काफी बदल रहा है। 1975 के मैक्सिको और 1980 के कोपेनहेगन सम्मेलनों में महिलाओं के आर्थिक मसलों पर क्रियान्विति के लिए योजनाएं बनाने पर थोड़ा ध्यान दिया गया। 1985 के नैरोबी 'अग्रमुखी रणनीति' ने यद्यपि समानता के सिद्धान्त और विकास प्रक्रियाओं में महिलाओं को सम्मिलित करने को उल्लेखित किया लेकिन आर्थिक स्रोतों में लिंग समानता को दर्ज नहीं किया। पीकिंग कार्यमंच ने आर्थिक अधिकारों, सम्पत्ति अधिकारों तथा गरीबी के मामलों में लिंग विभेदता को उजागर किया। इसने सम्पति के उत्तराधिकार में समानता के सिद्धान्त को लागू किया यानि पुत्रियों और पुत्रों में समान हिस्सों की बात स्वीकार की। इसने राजनीतिक तथा आर्थिक कारकों के बीच सम्बन्ध को भी मान्यता दी।

9. 1995 का पीकिंग घोषणापत्र और कार्यमंच—जिसने महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, मानवाधिकारों और पर्यावरण तथा मादा शिशु के अधिकारों को विकसित करने के मानदण्ड तय किये। इस सम्मेलन में 190 भागीदार देशों ने इस दस्तावेज को सवानुमति से स्वीकार किया, जिसमें 31 देशों के दस्तावेज के कुछ पेराग्राफों पर अपनी शर्तें रखी और अन्य 10 देशों ने कुछ धारणाओं की व्याख्या अपने तरीके से करते हुए इसे मंजूर किया।

10. शर्तें लगाने वाले देशों में अधिकतर इस्लामिक तथा कुछ कैथोलिक देश थे। असहमति तीन पेराग्राफों तक सीमित कर दी गई तथा चौथे पर सिर्फ कुछ इस्लामी देशों ने कहा कि वे इसे स्वीकार नहीं कर सकते। दो देशों ने यौन अधिकारों और जनन अधिकारों को अलग सन्दर्भ में उल्लेखित किया तथा एक ने इसे इच्छा से सम्बन्धित बताया और गैर कानूनी गर्भपात के लिए औरतों को दण्ड नहीं देने की वकालात की। लड़के और लड़कियों को समान उत्तराधिकार पर चौथी आपति कुछ ही देशों ने की जिसमें एक नई धारा 'मादा शिशु के अधिकारों के बारे में' शामिल की गई। जिसे पहले कभी भी अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर स्वीकृत दस्तावेजों में पेश नहीं किया गया। असहमति का बड़ा हिस्सा तब हल हो गया जब मानवाधिकारों वाले अध्याय से 'लड़के-लड़कियों में फर्क करने कि दिशा अथवा उनकी स्वच्छंद जीवन शैली' के

आधार पर भेदभाव करने के विरुद्ध 'कानूनी सुरक्षा' के प्रावधान को पूर्णरूपेण हटा दिया गया।

11. प्रत्येक अन्य अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों की तरह महिलाओं की उन्नति से सम्बधित वित्तीय सवाल का, जो महिलाओं पर प्रत्येक संयुक्त राष्ट्र सम्मेलनों का सवाल भी रहा है, इस पर विकसित एवं विकासशील देशों ने अक्सर भिन्न-भिन्न स्थितियाँ अख्तियार की है। यूनीसेफ जो संयुक्त राष्ट्र के बाल कोष में से विश्व के बच्चों के कल्याण के लिए धन निर्धारित करता है, इस संगठन का कहना है कि ''इस बात की माफी नहीं दी जानी चाहिए कि विश्व 800 अरब डालर सेना पर खर्च करता रहे और महिलाओं तथा बच्चों के लिए धन उपलब्ध नहीं कराए।'' यूनीसेफ ने आकलन किया कि विश्व भर में 40 अरब डालर प्रतिवर्ष गोल्फ पर, 85 अरब डालर शराब पर, 160 अरब डालर बीयर पर, 400 अरब डालर सिगरेट पर, 250 अरब डालर विज्ञापन पर, 800 अरब डालर सेना पर और मात्र 13 अरब डालर शिशु स्वास्थ्य एवं खुराक पर तथा 6 अरब डालर प्राथमिक शिक्षा और 9 अरब डालर साफ पानी तथा मल-मूत्र निकास पर खर्च होता है।

IV विश्व की सामाजिक वास्तविकता

12. पिछले दो दशकों से विभिन्न देशों में महिलाओं की दशा सुधारने के लिए नए विधान बनाए, पुराने कानूनों को सुधारा और विकास योजनाओं की शुरूआत की, लेकिन ज्यादा कुछ हासिल नहीं हुआ है। बहुत सारे देशों में महिलाएं अभी लम्बे समय तक काम करती हैं और आदमी से कम कमाती हैं, महिलाओं का राजनीतिक और आर्थिक संस्थानों में मुश्किल से ही कोई प्रतिनिधित्व हैं, वे शिक्षा से स्वास्थ्य तक के सभी सामाजिक विकास के सूचकांकों में काफी पीछे हैं तथा जन्म से ही अशुभ मानी जाती हैं।

13. विद्यमान विश्वव्यापी सामाजिक वास्तविकता यह है कि महिलाएं मानव समाज का सबसे अधिक उत्पीड़ित हिस्सा है। वे समाज के सभी क्षेत्रों—राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक में भेदभाव की शिकार हैं।

14. 1995 की संयुक्त राष्ट्र विकास प्रोग्राम (UNDP) की विकास रिपोर्ट ने विश्व में महिलाओं की भयंकर स्थिति का रहस्योद्घाटन किया। रिपोर्ट कहती है—महिलाएं प्रत्येक वर्ष विश्व आर्थिकता में 110 खरब डालर का योगदान करती है जो विश्व के काम का दो तिहाई है लेकिन बदले में इसका मात्र 10वाँ भाग प्राप्त करती हैं, विश्व के अनपढ़ों में से दो तिहाई अनपढ़ महिलाएं और 1 करोड़ 50 लाख शरणार्थियों जो अधिकतर सशस्त्र संघर्षों के शिकार हैं; में से 80 प्रतिशत औरतें तथा बच्चे हैं। महिलाओं के साथ भेदभाव की स्थिति यहाँ तक है कि विकसित देशों में भी वे

आदमियों के बराबर नहीं है।

15. बहुत से देशों में महिलाओं के काम की अहमियत कम आंकी जाती है यह उनकी खरीद क्षमता को गिराती है और इस प्रकार उनका पहले से ही गिरे स्तर को और नीचा बनाती है। 1995 की यू.एन.डी.पी. रिपोर्ट के मुताबिक लिंग समानता के मामले में चार नोर्डिक देश सबसे ऊपर आए हैं जबकि कुछ अफ्रीकन और इस्लामी राष्ट्र सबसे ज्यादा पूर्वाग्रही हैं।

16. पीकिंग सम्मेलन में बताए गए आंकड़े भी यही कहानी कहते हैं कि 1 अरब 30 करोड़ लोग विश्व भर में निपट गरीबी जीवन यापन करते हैं जिसमें से 70 प्रतिशत महिलाएं हैं। गाँवों में निपट गरीबी में जाने वाली महिलाओं में पिछले 20 वर्षों में 50 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। वाशिंगटन स्थित पोपूलेशन एक्शन इन्टरनेशनल द्वारा 100 देशों की सर्वे के मुताबिक आधे से अधिक देशों में बच्चों में जन्म से सम्बन्धित मामलों में औरतें मृत्यु के शतप्रतिशत खतरे का सामना करती हैं। कुछ अफ्रीकी देशों में यह खतरा दुनिया की तुलना में 6 गुणा ज्यादा है। विकसित देशों में भी औरतें गरीबी की शिकार हैं। अमेरिका में 1940 में गरीबों में 40 प्रतिशत महिलाएं थी। यह संख्या 1980 में 62 प्रतिशत हो गई।

17. 1994 की संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के मुताबिक विश्व भर में एक चौथाई महिलाएं अपने ही घर में हिंसा और गाली-गलौच का शिकार होती हैं। विश्व में महिलाओं पर उनके पतियों या पुरुषों साथियों द्वारा हिंसक हमला करना आम बात है। संयुक्त राज्य अमेरिका में बलात्कार, हमले तथा सड़क दुर्घटनाओं के कारण अस्पताल में भर्ती लोगों की संख्या अन्य कारणों से भर्ती लोगों की संख्या से अधिक है। तृतीय विश्व में महिला शोषण का ग्राफ काफी ऊँचा हैं जो पाकिस्तान व चिली में 80 प्रतिशत पापुआ न्यु गिनी में 60 प्रतिशत तथा कोरिया गणराज्य में 50 प्रतिशत है। पीड़ित महिलाओं के बच्चे भी परिणामगत हानि उठाते हैं। घरेलु हिंसा की पीड़ित एक माता के गर्भपात होने की दुगुनी तथा कम भार के बच्चे के जन्म की चौगुनी सम्भावना है। उनके बच्चों द्वारा बीच में ही स्कूल छोड़ देने का अधिक अन्देशा है। परिणामत: वे उद्दण्ड बनते हैं।

V भारतीय सामाजिक वास्तविकता

18. भारत में कानूनन लिंग समानता का सवाल इसके संविधान में श्रद्धा के साथ रखा है, लेकिन सामाजिक वास्तविकता इससे बिल्कुल भिन्न हैं। वस्तुत: महिला होने के नाते उन पर अन्याय होने की घटनाएं हर साल तेजी से बढ़ रही है। महिलाओं के खिलाफ सभी तरह के भेदभावों पर 1979 के संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन का हस्ताक्षरकर्त्ता होने के बावजूद भारत में महिलाओं के खिलाफ उत्पीड़न लगातार बढ़ा है।

19. 1995 की संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की रिपोर्ट के अनुसार मानव विकास सूचचांक के आधार पर 174 देशों में से भारत का स्थान 134वां है जो चीन ओर पाकिस्तान से नीचे है। महिलाओं की स्थिति के सन्दर्भ में लिंग सम्बन्धित विकास सूचकांक (GDI) के आधार पर 130 देशों में से भारत का स्थान 99वाँ हैं। पाँच साल से कम आयु के बच्चों के वजन में भारत की स्थिति सबसे खराब है। भारत में 15 से 49 आयु वर्ग की 88 प्रतिशत महिलाओं में खून की कमी है जो विश्व में सबसे बुरी स्थिति है।

20. 1991 की जनगणना के मुताबिक भारत में महिला साक्षरता की 39.42 प्रतिशत है। भारत के संगठित क्षेत्र में कुल कामगारों का केवल 4 प्रतिशत महिलाएं हैं, बाकी महिलाएं कृषि सहित गैर संगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं।

21. राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT) के एक अध्ययन के मुताबिक भारत में लड़कों की तुलना में प्रति वर्ष 3 लाख लड़कियां ज्यादा मरती हैं और यह छ: महिलाओं की मृत्यु में एक की मौत लिंग भेदभाव एवं घोर उपेक्षा की वजह से होना आंकी गई है। भारत में हर साल 120 लाख लड़कियां जन्म लेती हैं और इनमें से 25 अपना 15वाँ जन्म दिन देखे बिना ही मर जाती हैं। देश में भ्रूण हत्या की बढ़ोतरी खतरनाक और डरा देने वाली है। इसी अध्ययन के मुताबिक भूमि पर मालिकाना हक और वंश परम्परा को पुरुषों के आधार पर चलाने की सोच के कारण ही एक तरफ उच्च जन्म दर रहती है और दूसरी तरफ लड़कियों के साथ भेदभाव होता है। आगे यह कहता है कि भारत उन कुछ देशों में है जहाँ लिंग अनुपात में महिलाओं की संख्या पुरुषों से कम है। 1991 की जनगणना में यह अनुपात 1000 पुरुषों के पीछे 929 महिलाओं का है जो 1901 के बाद निम्नतम है।

22. 1995 की यूनीसेफ रिपोर्ट कहती है कि भारत में 3 में से 1 शिशु कम भार का जन्म लेता है जो कुपोषण की निशानी है। यह कुपोषण बच्चे को माँ से मिलता है जो स्वयं कुपोषण की शिकार होती हैं। भारत अनाज के मामले में आत्मनिर्भर बनने के बावजूद कुपोषण का शिकार हैं। रिपोर्ट उल्लेख करती है कि 90 प्रतिशत नवजात शिशुओं की मृत्यु का कारण शिशु का भार 2 किलोग्राम से कम होना है। बच्चे के पैदा होने के समय कम भार का मूल कारण भौतिक-कुपोषण और खून की कमी मे निहित है तथा इसी कारण शिशु समय से पूर्व जन्म लेता है या प्रसव से पूर्व मर जाता है। 24 प्रतिशत महिलाएं 38 किलोग्राम से कम भार तथा 16 प्रतिशत महिलाएं 145 सेन्टीमीटर से कम ऊँचाई की है जिसमें जल्दी शादी का भी योगदान है। 15 से 19 आयु वर्ग में शादी हो जाती है तथा 8 प्रतिशत 19 साल से पूर्व ही बच्चे की मां बन जाती हैं।

23. पिछले कुछ दशकों से देश भर में औरतों के खिलाफ अपराध की घटनाओं मे वृद्धि हुई है। लेकिन दिल्ली सहित कुछ प्रान्तों में ये वृद्धि खतरे की घण्टी

बजा रही है।

24. गृह मन्त्रालय के राष्ट्रीय अपराध लेखा ब्यूरो द्वारा उपलब्ध कराई दिसम्बर, 1994 की जानकारी के अनुसार भारत में पिछले एक दशक में महिलाओं के विरुद्ध अपराध की घटनाओं में दुगुनी वृद्धि हुई है यथा, प्रति 6 मिनट में देश में कहीं न कहीं किसी महिला के विरुद्ध यौन अपराध होता है। प्रति 47 मिनट में एक स्त्री की अस्मत लुटती है, प्रति 44 मिनट में एक का अपहरण होता है इतने ही समय में एक स्त्री अपने पति या सम्बन्धियों की क्रूरता का शिकार बनती है तथा प्रतिदिन दहेज के 17 मामले दर्ज किये जाते हैं। महिलाओं के विरुद्ध दर्ज अपराधों की संख्या पिछले वर्ष 82818 थी।

अखिल भारतीय स्तर पर औसत अपराध की दर प्रति लाख 9.1 है जोखिम की इस सूची में पांडिचेरी सबसे ऊपर है जहाँ 760 मामले होते हैं और इसका इन्डेक्स 91.6 हैं। 3482 मामलों तथा 37.3 के इन्डेक्स के साथ दिल्ली का दूसरा स्थान है।

1993 में उत्तरप्रदेश में महिलाओं के विरुद्ध अपराध के सबसे अधिक 14048 मामले हैं, जिसके बाद महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, आन्ध्रप्रदेश तथा राजस्थान में क्रमश: 13913, 11378, 8335 तथा 7160 मामले दर्ज है।

पिछले दो दशकों यानि 1974 से 1993 तक बलात्कार की घटनाओं (2962 से 11117) में 400 प्रतिशत की तथा अपरहण एवं भगा कर ले जाने की संख्या (9980 से 11759) में 30 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

महिलाओं पर अत्याचार की अधिकांश घटनाएं ग्रामीण इलाकों में होती हैं जहाँ साक्षरता स्तर काफी निम्न है तथा महिलाएँ अपने अधिकारों के प्रति अनभिज्ञ हैं। कई पीड़ित जाति समाज से बहिष्कृत होने के डर से शिकायत दर्ज नहीं करते।

25. महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार की चल रही दयनीय स्थिति तथा उनके साथ बढ़ रहे अपराध दर्शाते हैं कि लिंग असमानता में और अधिक वृद्धि हुई है। यह पुरुषों की तुलना में महिलाओं के गिरते अनुपात से भी प्रतिबिम्बित होता है।

26. कुछ निश्चित सरकारी कार्यवाहियों—1992 में महिलाओं के लिए राष्ट्रीय आयोग के गठन, 1987 का न्यायिक सेवा प्राधिकरण कानून-के बावजूद परिस्थितियों में कोई बुनियादी परिवर्तन नहीं हुआ है। भारत की महिलाओं के अधिकारों का रिकार्ड निरन्तर एक कमजोर तस्वीर पेश करता है। जो कुछ थोड़ी सहायता जरूरतमन्द औरतों को हो रही है वह मुख्यत: कुछ स्वयं सेवी संगठनों की कोशिशों अथवा जन सेवा भावी कार्यकताओं की कार्यवाहियों से हो रही है। लेकिन इस प्रकार की सहायता में संसाधनों की कमी के कारण निरन्तरता और टिकाऊपन की कमी रहती है।

VI मुख्य बाधाएं

27. ऐसा क्यों है कि लिंग समानता की अन्तर्राष्ट्रीय मांग, संयुक्त राष्ट्र के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, कानूनों, नियमों, न्यायिक आदेशों, विकास योजनाओं की भरमार और राजनेताओं द्वारा लिंग अन्याय को जड़मूल से उखाड़ देने की अलंकारिक घोषणाओं के बावजूद महिलाओं के खिलाफ उत्पीड़न यहां तक कि एक भी देश में रुक नहीं सका है?

28. इसका मख्य कारण परम्परागत अथवा रूढ़िवादी मान्यताओं और शैलियों की हठधर्मिता में निहित है जो महिलाओं के खिलाफ पूर्वाग्रही है। हमारी दुनिया अभी तक पितृसत्तात्मक शासन (एक पुरुष प्रभुत्व वाली) व्यवस्था में रह रही है जिसमें आदिम पुरुष प्रवृत्ति वाले लक्षण हैं तथा जो महिलाओं को जीवन के हर क्षेत्र में दूसरे दर्जे की रखती हैं अभी भी जैविक और सामाजिक तौर पर महिलाएँ आदमियों की मातहत (अधीनस्थ) मानी जाती हैं। विश्व स्तर पर खासकर तीसरी दुनिया में उन्हें घरेलु कार्य के लिए उपयुक्त समझ जाता है सम्पूर्ण सामाजिक वातावरण महिलाओं के प्रतिकूल रहते एक औरत को अपना व्यवसाय अथवा व्यक्तित्व तय करने की इजाजत नहीं होती है। बच्ची की पैदाईश से ही उसे कहा जाता है कि उसका एक मात्र काम अथवा व्यवसाय घरेलु काम करना अथवा घरेलू औरत बनना है। उसे घरेलु काम के सिवा कुछ नहीं सिखाया जाता। उसे ऐसा आभास दिलाया जाता है कि उसके माता पिता का घर उसके लिए मात्र अस्थायी निवास है और जब उसकी शादी होगी तब वह वास्तविक घर को प्रस्थान करेगी। यहां तक कि विकसित देशों में भी औरतें आदमी की कनिष्ठ मानी जाती है। उनके काम का कभी-कभी कम वेतन दिया जाता है तथा उनकी रुचियों तथा पसन्दों का कम महत्व है।

29. दूसरा कारण सभी सामाजिक अधिकार यानि महत्वपूर्ण मामलों में निर्णय लेने की शक्ति आदमी के पास है।

30. भारत में, शायद अन्य देशों की तुलना में सामाजिक माहौल महिलाओं के खिलाफ ज्यादा पूर्वाग्रही हैं। बिना इसके किसी देश में जातिवाद और साम्प्रदायिकवाद की विभिन्न किस्में (यानि हिन्दुत्व, मण्डलवाद बहुमतवादी राष्ट्रवाद, आदि), राष्ट्रीय मॉडल की स्थिति अख्तियार नहीं कर सकते। विधायी व्यवस्था में अपराधियों के बचने के रास्ते खूब हैं यहाँ तक कि न्यायाधीश भी लिंग भेद से मुक्त नहीं हैं। सर्वोच्च न्यायालय के एक पूर्व न्यायाधीश जो भारत की न्यायिक व्यवस्था का मुख्य प्रतिनिधि हैं; ने कहा कि 'औरतें अपने ऑफिस छोड़ें और घर में रहें' तथा 'वे आदमियों से प्रतियोगिता नहीं करें' उन्होंने दावा किया कि 'लिंग समानता का संवैधानिक अधिकार मानवीय प्रक्रिया के विरुद्ध है क्योंकि भगवान ने आदमी और औरत को समान पैदा नहीं किया है।'

VII अवधारणाएं और पहलकदमियाँ

31. लिंग समानता का सवाल हमारे समाज के टिकाऊ विकास के लिए अति अनिवार्य जरूरत है। यह दो लिंगों में समान भागीदारी स्थापित करने का विषय है। मानव प्रजाति का एक सर्वोच्च महत्वपूर्ण विषय होने के नाते यह इस तरह मामले को चलाने की मांग करता है जो सभी जगह महिलाओं को सिद्धान्त एवं व्यवहार में समान अधिकार देवे और साथ ही आदमी और औरत में मजबूत बन्धन बनाए। इतिहास बताता है कि सिर्फ सौहादपूर्ण सम्बन्धों—जो पत्नी और पति के बीच तथा परिवार के अन्य सदस्यों के बीच प्रेम की भावना पैदा करती है—से ही मानव प्रजाति विकसित और फल-फूल सकती है। वास्तव में एक लम्बे समय से औरत-आदमी सम्बन्धों में औरत का आदमी के अधीन रहने का सम्बन्ध रहा है। इसके बावजूद इन सम्बन्धों को तनावपूर्ण अथवा 'लिंगों का युद्ध' आदि जैसे बढ़ाचढ़ा कर कहना गैर ऐतिहासिक और आर्थिकता है।

32. लिंग समानता की प्रक्रिया शुरू करने के लिए दो तरफा पहल कदमियों की आवश्यकता है—एक तरफ आदमी पर औरत की निर्भरता समाप्त करने हेतु उचित कार्यसूची का निर्माण करना एवं औरतों को सबल बनाना तथा दूसरी तरफ लोगों के अभिज्ञान में वृद्धि और उन्हें सम्मिलित करने हेतु उपयुक्त तरीके अख्तियार करना है।

(अ) महिलाओं को सबल बनाने के लिए

(I) राजनीतिक सबलता के लिए

1. पितृसत्तात्मक व्यवस्था की समाप्ति करके, अभिभावक, वंश तथा उद्गम के मामले में माता एवं पिता के संयुक्त नाम के सिद्धान्त की मान्यता स्वीकृत करना।
2. मादा शिशु का स्तर नर शिशु के बराबर पुनः स्थापित करना।
3. नीचे से ऊपर तक के सभी राजनीतिक संस्थानों (मन्त्रीमण्डल, संसद, सर्वोच्च न्यायालय आदि) में 20 वर्ष के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान महिलाओं के लिए करना इनमें 10 प्रतिशत गरीबी की रेखा से नीचे की हों।
4. महिलाओं को प्रशासनिक सेवाओं तथा शैक्षणिक संस्थानों में 30 प्रतिशत आरक्षण देना।
5. पुरुषों एवं महिलाओं की असमानता पर आधारित विद्यमान सभी कानूनों की प्रत्येक धारा, उपधारा की जांच करके सभी धर्मों के व्यक्तिगत कानूनों में लैंगिग न्याय को सम्मिलित करना।
6. इस धारणा को बदलना जो सभी जिम्मेदारियां माता पर तथा सभी अधिकार

पिता को देती है।

7. नाबालिग बच्चों को अभिरक्षण (अथवा संरक्षण) का दायित्व माता एवं पिता दोनों का हो और तलाक की स्थिति में सम्पत्ति सहित नाबालिग बच्चे का मात्र संरक्षक माता को ही बनाना।
8. सन्तानोत्पत्ति की इच्छा, सूचनाओं एवं स्वास्थ्य सेवाओं विशेषकर गर्भावस्था, मासिक धर्म एवं गर्भ निरोध से सम्बन्धित सेवाओं को सम्मिलित करते हुए महिलाओं के मानव अधिकारों को परिभाषित करना।
9. यौन हमलों, घरेलु हिंसा सहित महिलाओं के खिलाफ हिंसा से सम्बन्धित विधान बनाना।

(II) आर्थिक सबलता के लिए

1. ऐसा संवैधानिक प्रावधान स्वीकार करना जो सभी पारिवारिक सम्पत्ति, चाहे स्थायी हो अथवा अस्थायी, यानि किसी प्रतिष्ठान, बैंक, सहकारी समिति आदि की सदस्यता में पति एवं पत्नी का संयुक्त मालिकाना हक निर्दिष्ट करता हों।
2. पुत्रों एवं पुत्रियों को पुश्तैनी एवं पैतृक सम्पत्ति में समान अधिकार का कानून सुनिश्चित करना।
3. सभी देशों के कुल घरेलु उत्पाद के आकलन में महिलाओं द्वारा किया गया गैर पारिश्रमिक काम को सम्मिलित करना।
4. संयुक्त वैवाहिक सम्पति के लिए महिलाओं द्वारा घर में बिना भुगतान किए गए कार्य को, जो परिवार के अस्तित्व एवं कल्याण के लिए बराबर महत्व का है, कानून द्वारा मान्यता देना।
5. महिलाओं के लिए आर्थिक स्रोतों, अवसरों एवं विकास के लाभों का आसान एवं सुगम रास्ता प्रदान करना।
6. गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों, रोजगार पैदा करने की प्रणालियों और सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि की मजबूती के जरिए महिलाओं का आहार स्तर में सुधार करना।
7. महिलाओं की आर्थिक साख में वृद्धि के रास्ते बनाना।
8. बुढ़ापे में महिलाओं को पेन्शन एवं महिला निर्भर परिवारों, विधवाओं परित्यक्त स्त्रियों को सहायता देना। विपदाग्रस्थ महिलाओं को आवास सहायता देना।

9 घरेलु नौकरानियों को हस्तकलाओं, खिलौने बनाने, बुनाई आदि में प्रशिक्षण देना और उनके उत्पाद को बेचने की व्यवस्था करना।

10. वेश्याओं और उनके बच्चों के पुनर्वास की व्यवस्था करना।

(III) साँस्कृतिक सबलता के लिए

1. व्यवसायिक शिक्षा सहित महिला शिक्षा एवं स्वास्थय सेवा को सार्वत्रिक बनाना, पर्यावरण एवं जनसंख्या प्रबन्ध आदि में महिलाओं की भूमिका प्रभावी बनाना, गरीबी की रेखा से नीचे जीने वाली महिलाओं (जो आम तौर से गन्दी बस्तियों के मजदूरों, कृषि मजदूरों, दलितों एवं जनजातियों आदि से सम्बन्धित हैं) को मुक्त शिक्षा एवं चिकित्सा सहायता प्रदान करना।
2. पुरानी मान्यताएं और मानदण्ड बदलना जो महिलाओं की क्षमता एवं स्तर को गिराते हैं, उदाहरणतया, महिलाओं को पुरुष से हीन मानना, पुरुष ही एक मात्र जीविका चलाने वाला होता है, आदि।
3. महिलाओं का संचार माध्यम एवं समाज में वास्तविक चित्रण पेश करना।
4. घरेलु जिम्मेदारियों को पत्नी और पति को साथ-साथ निभाना।
5. शादी की आयु में वृद्धि करना।
6. परिवार नियोजन के दोषपूर्ण तरीकों—जैसे शरीर मे प्रवेश और रोपित करने वाले, आर.यू. 486 गोलियां आदि—को बदलना जो महिलाओं के स्वास्थ्य पर उलटा प्रभाव डालते हैं। महिलाओं को आवश्यक एवं उचित दवाईयां उपलब्ध कराना।
6. ग्रामीण इलाकों में पीने के स्वच्छ पानी और उचित स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया कराना सुनिश्चित कराना।
7. बच्चों को समान अधिकार एवं समान भागीदारी की गारन्टी करना, बाल श्रमिक प्रथा (अकेले भारत में ही 10 करोड़ बच्चे काम पर जाते हैं), बाल वेश्यावृति, मादा शिशु की हत्या का उन्मुलन करना एवं आवारा बच्चों की उन्नति करना।

(ब) लोगों की मनोदशा बदलने के लिए

1. सरकारी एव गैर सरकारी जन संचार माध्यमों द्वारा समानता के कार्यक्रम का प्रचार करना।
2. लिंग समानता के सिद्धान्त पर गाँव से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक की सेमीनार, मिटिंग्स, वर्कशॉप आदि का आयोजन करना।
3. उचित साहित्य का प्रकाशन करना और प्रदर्शनियों, फिल्म प्रदर्शन, नाटकों, लोक नृत्यों एवं संगीत समारोह, खेलों आदि की सांस्कृतिक गतिविधियों को संगठित करना।
4. गांव एवं शहरी वार्डो के अनुसार औरतों एवं आदमियों के संयुक्त दल द्वारा

जमीनी स्तर पर काम की योजना बनाना।

5. सभी राजनीतिक पार्टियों एवं एन जी ओ (गैर सरकारी संगठन) के कार्यक्रमों की प्राथमिकता में लिंग समानता का मुद्दा सर्वोच्च हो तथा उनकी हर गतिविधि में अनिवार्य रूप से प्रचारित करने की शर्त हो।
6. रूढ़िवादी, साम्प्रदायिकतावाद और जातिवाद का विरोध करना जो दकियानूसी और परम्परावादी गलाघोंटू मान्यताओं को मजबूती प्रदान करते हैं। बेटी, बहिन, पत्नि और मां के रूप में औरतों के त्याग की आन्तरिक शक्ति (नारी गौरव), रीति-रिवाजों के गुणगान, औरतों के आत्म बलिदान और उनके घरों तक सीमित रहने, नारी का बुनियादी चरित्र मातृत्व आदि की धारणा तथा परिवार नियोजन, एक पत्नित्व, एक पतित्व एवं मानवोचित नागरिक संहिता का परम्परावादी नैतिकता के नाम पर विरोध करने की कार्यवाही पर कारगर रोक लगाना।
7. राजनीतिज्ञ-पुलिस-अपराधी गठजोड़ को तोड़ने के लिए देशव्यापी अभियान चलाना।
8. लिंग संवेदनशीलता पर न्यायालिका, अफसरशाही, पुलिस तथा सेना के विशेष प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।
9. प्रत्येक देश में महिलाओं के लिये राष्ट्रीय आयोग की भूमिका एक ऐसे पहरेदार की तरह बनाना जो महिला समर्थक नीतियों का संचालन करे तथा महिला विरोधी नीतियों को बदलें।
10. सास और बहु के बीच सम्बन्धों को अच्छा बनाने की मुहिम हाथ में लेना।

33. ऊपर बताये गये उपाय न सिर्फ लिंग समानता के लिये बल्कि एक टिकाऊ, न्यायिक तथा स्वच्छ सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के लिये आवश्यक है। एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था जो न सिर्फ औरत-आदमी की समानता को बल्कि सामाजिक विकृतियों की सम्पूर्ण श्रृंखला, जैसे अमीर और गरीब, गांव और शहर, गौरे और कालों के बीच तथा इन सबसे ऊपर प्रकृति और मानव के बीच असमानताओं को समाप्त करने पर आधारित है। 10.11.1995

❋ ❋ ❋

व्यवस्था और अन्ध-व्यवस्था के बीच खड़ा आज का पंजाब

I एक आंशका भरी शान्ति

1. ऊपरी तौर से, आज के पंजाब में सब कुछ ठीक-ठाक और शान्ति नजर आती है, परन्तु धरातल के नीचे गहरे अन्त:स्थल में एक भयग्रस्त बेचैनी दबे रूप में व्याप्त है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि आमतौर पर लोग महसूस करते हैं कि उनके प्रान्त में व्यवस्था उचित तरीके से नहीं चल रही है।

2. राजनीति के स्तर पर पंजाब में पुलिस द्वारा संचालित डेमोक्रेसी चल रही है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मानवाधिकारों का हनन करना उसकी मुख्य विशेषता है। इसकी दूसरी विशेषता है कि पंजाब सरकार और इसका प्रशासन चरम सीमा तक भ्रष्ट हो चुका है। इसका तीसरा लक्षण है कि इसने भाई-भतीजावाद के पिछले सारे रिकार्ड तोड़ दिए हैं।

3. विकास के क्षेत्र में, भूमि-क्षय और जल-प्रदूषण का कारण इसका दुरुपयोग करना है, जबकि रसायनों एवं अन्य पदार्थों का अधिक उपयोग करने से समस्या और गम्भीर हो गई है जिससे नई-नई किस्म की मानवीय बीमारियों एवम् भूमि की घटती उत्पादकता (यानि उच्च लागत वाला उत्पादन) के लक्षण उभर कर सामने आये हैं। ढाँचागत सुधार के मसले—यानि शुद्ध पीने की आपूर्ति, ग्रामीण सड़कों का निर्माण एवं मरम्मत, ऊर्जा, टेलीफोन, परिवहन इत्यादि का प्रबन्ध—पहले की तरह ही उपेक्षित पड़े हैं। आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की कीमतें निरन्तर बढ़ रही हैं। बढ़ रही बेरोजगारी से लोग तंग हैं। निरक्षरता के उच्च स्तर और प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा का कुप्रबन्ध पहले की तरह ही कायम है। स्वास्थ्य रक्षा के हालात दिनों-दिन बिगड़ते जा रहे हैं।

4. लम्बे समय से विलम्बित पड़ी पंजाब की शिकायतों की उपेक्षा करना कम उत्तेजक नहीं है। इन शिकायतों में से प्रमुख निम्नलिखित हैं—प्रथमत: पंजाब के किसानों का यह विश्वास कि उन्हें सिचांई के लिए नदी-जल का उचित हिस्सा नहीं दिया गया है। एक और मान्यता कि पजांब की सीमा से लगते चण्डीगढ़ और अन्य पंजाबी भाषी इलाकों को गलत तरीके से गैर-पंजाबी भाषी राज्यों के साथ मिला दिया गया है। तीसरा विचार है कि पंजाब में उत्पादित की जा रही बिजली का बड़ा हिस्सा अन्य राज्यों को दे दिया जाता है, जबकि स्थानीय कृषि और उद्योगों की उपेक्षा की जा रही है। चौथा विचार कि कृषि उत्पादन के क्षेत्र में महान योगदान के बावजूद पंजाब में बड़े उद्योगों और प्रासंगिक कृषि उद्योगों के विकास के सवाल की अनदेखी की गई है।

पाँचवां अहसास है कि इसके अतिरिक्त कृषि उत्पादकों के निर्यात पर लगातर पूर्ण प्रतिबन्ध की वजह से पंजाब के किसानों को वित्तीय नुकसान उठाना पड़ रहा है।

II सिख सोच

5. पंजाब के हालात में सबसे अधिक उद्वेलित करने वाला पक्ष यह है कि सिख समुदाय में लगातार यह अहसास और अधिक बढ़ रहा है कि नई दिल्ली ने हमेशा उसके मामले में अनुचित रवैया अपनाया है।

प्रथमत: समुदाय (यानि, सिखों का बहुत बड़ा हिस्सा), महसूस करता है कि पंजाबी भाषा और पंजाबी सूबे के मामले में नई दिल्ली ने न्यायिक व्यवहार नहीं किया है। जबकि सिख समुदाय ने पंजाबी भाषा और पंजाबी सूबे को अपनी राजनैतिक पहचान के प्रतीकों के रूप में हमेशा महत्व दिया। पंजाबियों की मुख्य भाषा पंजाबी (न कि 1950 के दशक में प्रचलित पंजाबी-हिन्दी दो भाषाओं के) को दर्जा दिलाने के लिए और पंजाबी भाषा के आधार पर पंजाबी सूबा (1947 के बाद के समय में द्वि-भाषा वाले पंजाब-हरियाणा के बजाए) हासिल करने के लिए सिख समुदाय ने निरन्तर संघर्ष किया और मानवीय तथा भौतिक दोनों रूपों में भारी बलिदान दिए, यद्यपि स्वतन्त्रता के पहले के दौर में कांग्रेस के नेताओं ने ऐसे राज्य के निर्माण के वायदे किए थे। उदारहण के लिए 6 जुलाई 1946 को जवाहरलाल नेहरू ने अपनी कलकत्ता प्रेस कान्फ्रेंस में कहा ''पंजाब के बहादुर सिख विशेष महत्व पाने के अधिकारी हैं। मुझे इस बात में कोई गलती नजर नहीं आती कि उत्तर-भारत में एक इलाका या प्रबन्धा इस तरह से कायम किया जावे जिसमें सिख भी स्वतन्त्रता की प्रफुल्लता का अनुभव कर सकें।''[1] स्वतन्त्रता के बाद के 10 साल में ही बाकी सारे राज्यों का पुनर्गठन भाषा के आधार पर मुख्यतया पूर्ण कर लिया गया, परन्तु पंजाबी सूबे के निर्माण की मांग को केन्द्र लगातार 20 साल तक टालता रहा। अन्त में सिख मोर्चो के खिलाफ कई तरह के अत्याचार करने के बाद 1966 में पंजाबी सूबा बनाया गया।

द्वितीयत: सिख समुदाय की मान्यता है कि नई दिल्ली भारतीय राज्य के प्रति सिखों की देश भक्ति पर शक-सूबा करती है तथा इसने जानबूझ कर एवं अनुचित तरीके से भारतीय फौज व अन्य राजनीतिक सरकारी विभागों में सिखों के प्रतिशत को

1. स्टेटसमैन, कलकता, जुलाई 7, 1946
2. 2175 भारतीय शहीदों में 1557 या 75 प्रतिशत सिख थे। अंडमान में काले पानी की सजा भुगतने वाले 2646 भारतीयों में से 2147 या 80 प्रतिशत सिख थे। फांसी दिए गए 127 भारतीयों में 92 यानि 80 प्रतिशत सिख थे। श्री सुभाष चन्द्र बोस द्वारा कायम की गई इण्डियन नेशनल आर्मी में कुल भर्ती हुए 20000 भारतीयों में 12000 या 60 प्रतिशत सिख थे। जबकि भारत की कुल जनसंख्या में सिख आबादी सिर्फ 2 प्रतिशत है।

घटा दिया है। इस तरीके से सिखों को भारतीय राष्ट्रीय दायरे से बाहर किया है और इन तथ्यों को पूर्णतया भुला दिया गया है कि ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन द्वारा फांसी दिये जाने और सरकारी दमन के तौर पर कत्ल किए गए तथा अंडमान द्वीप पर काले पानी की सजा भुगतने वाले भारतीयों में सिखों की संख्या 75 प्रतिशत से अधिक थी।

तृतीयत: सिख समुदाय का मत है कि नई दिल्ली सिखों के हावी होने का खतरा बता कर और हिन्दू समर्थक संस्थाओं और मीडिया द्वारा हिन्दुओं को मक्कारी के साथ साम्प्रदायिक दिशा देकर पंजाब में हिन्दू-सिख सम्प्रदायों के बीच लगातार फूट डालता रहा है।

चतुर्थत: सिख समुदाय की समझ है कि पंजाब में निवास कर रहे सिखों के प्रति अपने अनुचित बर्ताव के विपरीत नई दिल्ली भारत के दूसरे हिस्सों में निवास कर रहे सिखों को प्रशासन, फौज और व्यापार में कुछ रियासतें देकर फुसलाने का प्रयास करती रही है, और इस प्रकार उनके बीच यह प्रभाव पैदा करना चाहती है कि उनके हित के साथ जुड़े रहने में ही वे सुरक्षित है।

पंचम, सिख समुदाय का मत है कि पंजाब के साथ नई दिल्ली द्वारा किए गए हर समझौते (चाहे वह नदी-जल, चण्डीगढ़ या राजीव-लोंगोवाल का समझौता हो) को केन्द्र ने जानबूझ कर भंग किया है।

छठा, सिख समुदाय का मत है कि केन्द्र द्वारा 1973 और 1978 के आनन्दपुर साहिब प्रस्ताव, जिसके मुताबिक पंजाब सहित सभी राज्यों को स्वायत्तता देने का प्रस्ताव था, केन्द्र द्वारा अन्यायपूर्ण तरीके से रद्द कर दिया गया।

सप्तम्, सिख समुदाय की सोच है कि अमृतसर के स्वर्णमन्दिर पर 'ब्ल्यु स्टार' नाम का हमला करना सिखों को हतोत्साहित करने का अच्छी तरह सोचा-समझा प्रयास था। इस हमले में गैर-सरकारी आंकड़ों के अनुसार हजारों और सरकारी आंकड़ों के अनुसार सैकड़ों लोगों ने जानें गंवाई और प्राचीन सिख साहित्य, पेंटिंग और कलाकृति तबाह हो गई।

अष्टम्, सिख समुदाय की राय है कि भारत में हुए 1984 के सिख विरोधी दंगे, नई दिल्ली द्वारा सिखों के खिलाफ बढ़ाई जा रही दुर्भावना का ही द्योतक है। इस दंगे को तत्कालीन सरकार के नेताओं ने खुले आम भड़काया था और बाद में जिन हत्यारों को बचा लिया गया, उनमें तत्कालीन केबीनेट मन्त्री एच के एल भगत एवं संसद सदस्य सज्जनकुमार (जिनका नाम न्यायाधीश नरूला कमेटी द्वारा अन्य हत्यारों के साथ लिया गया था) आदि प्रमुख नाम हैं।

नवम्, सिख समुदाय महसूस करता है कि 1947 के बाद के दौरान बहुसंख्यक पंजाबी हिन्दुओं में जमीनी वास्तविकता को नजर अन्दाज करते हुए सही ढंग से काम

नहीं किया है। उनके अनुसार पंजाबी हिन्दुओं ने लगातार नई दिल्ली की हकुमत का साथ दिया और केन्द्र के हर अनुचित कदम की अन्धी हिमायत की है। यहां तक कि इन्होंने अपनी मातृ भाषा पंजाबी को ही मानने से इन्कार किया और जनमत संग्रह के दौरान हिन्दी को ही पसन्द किया और ये अब तक भी पुरानी लकीरों पर ही चल रहे हैं।

इन सबने पंजाब में अन्तर-सामुदायिक तनावों को पैदा किया। बावजूद इस तथ्य के कि सिख और हिन्दुओं के सम्बंध हमेशा साम्प्रदायिक तनावों से मुक्त रहे हैं। यद्यपि, खालिस्तानी खाड़कुओं ने आम हिन्दुओं पर जुल्म ढाये हैं और निर्दोष सिखों पर उनसे भी ज्यादा जुल्म ढाये हैं। सिख समुदाय ने हिन्दुओं के विरुद्ध ऐसी कोई कार्यवाही नहीं की है। इसके अलावा यद्यपि, अधिकतर हिन्दू व्यापार, उद्योग, वित्त और खासकर ग्रामीण-ऋण आदि कार्यों से जुड़े हैं और ज्यादातर सिख कृषि-कार्य में संलग्न है; ऐसी स्थिति में भी दोनों समुदायों के बीच किसी तरह का गंभीर आर्थिक विरोध नहीं है।

6. उपरोक्त वर्णित विश्वासों की पुष्टि सिख समुदाय द्वारा की गई निम्न घोषणाओं से होती है—हालिया सिख समुदाय ने घोषणाएं की कि संत भिण्डरावाले, इन्दिरा गांधी के हत्यारे, जनरल वैद्य के हत्यारे और सिख उद्देश्य के लिए भारतीय सुरक्षा बलों के हाथों शहीद किए गए सभी सिख खाड़कुओं तथा बाकी बचे सिख खाड़कू सिख पंथ के भाग है। इसके उलट अकाली दल के विभिन्न धड़ों सहित पंजाब के सिखों में यह आम धारणा है कि नई दिल्ली सिख विरोधी केन्द्र है।

7. क्या पंजाब के 60 प्रतिशत निवासियों की ऐसी मानसिकता के रहते यह दावा किया जा सकता है कि पंजाब में हालात सामान्य है?

III सिख पहचान का सवाल

8. अलग सिख धार्मिक पहचान का सवाल एक ऐतिहासिक तथ्य है जो कि भूतकाल और वर्तमान में विद्यमान रहा है।

9. परम्परागत तौर पर; सिख धर्म के प्रवर्तक गुरु नानक (1469-1539) से जब पूछा गया कि आप हिन्दू हैं या मुसलमान, तो उनका जवाब था; ''न तो मैं हिन्दू हूं और न ही मुसलमान, मैं केवल मानव हूँ।'' दसवें और अन्तिम सिख गुरु गोविन्दसिंह (1666-1708), पहले व्यक्ति थे जिन्होंने प्रत्येक समर्पित सिख के लिए दो पक्षीय कर्त्तव्यों-पीरी यानि आध्यात्मिक बोध और मीरी यानि राजनैतिक सत्ता हासिल करने (छठे गुरु ने दो तलवारों को धारण किया था)—की धारणा दी। वे स्वयं अपने अनुयायियों सहित राजनैतिक सत्ता हासिल करने के लिए लड़े।

10. ऐतिहासिक तौर पर, गुरु गोविन्दसिंह के देहान्त के बाद ही उनके शिष्यों

में से एक, महान सिख जनरल बंदासिंह बहादुर, जो मुगल शासन के खिलाफ लड़ा और श्री हिन्द तथा उसके आस-पास के इलाको में पहला सिख शासन (1710-1716) स्थापित करने में सफलता पाई। सौ साल के सैनिक संघर्ष के बाद महाराजा रणजीतसिंह (1780-1839) के अधीन सिख पंजाब में स्वतंत्र राज्य की स्थापना करने के समर्थ बने।

11. 1849 में अंग्रेजों से पंजाब को हथिया लेने के बाद सिखों ने भारतीय स्वतंत्रता के उद्देश्य के लिए महान बलिदान दिये। (पैरा 5 का द्वितीय भाग देखें)

12. भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान काँग्रेसी नेताओं (गांधी, नेहरू, पटेल) ने वादे किये कि औपनिवेशी शासन की समाप्ति के बाद भारत में सिखों की पहचान सुनिश्चित होगी। जुलाई, 1947 में पंजाब विधान सभा के हिन्दू और सिख सदस्य नई दिल्ली में एकत्रित हुए और एक सर्व सहमति से प्रस्ताव पास किया, जिसमें एकीकृत भारत के विभाजन का समर्थन किया गया और सिख समुदाय के साथ विशिष्ट व्यवहार की मांग इन शब्दों में की गई—''विभाजित भारतीय पंजाब में, सिखों की न्यायिक आकांक्षाओं और अधिकारों को पूरा करने के लिए विशेष संवैधानिक मानदण्डों को अपनाना अति आवश्यक है।''

13. 1947 के बाद के समय में भी जब कभी भारत के सामने कोई संकट आया तो उस संघर्ष में सिख सदैव अग्रणी रहें।

IV पंजाब के प्रति केन्द्र का निन्दनीय व्यवहार

14. तथापि 1947 के बाद नई दिल्ली की नीति भारतीय संविधान की धारा 25 के तहत सिखों को हिन्दू समुदाय का ही अंग मानने, एक ऐसे पंजाबी भाषी राज्य में आगा-पीछा किया जिसमें हो सकता है 20 साल के लिए सिखों का राजनैतिक प्रभुत्व कायम हो सकता था, पंजाब पुनर्गठन अधिनियम 1966 के मुताबिक पंजाब को कुछ पंजाबी भाषी इलाकों से वंचित करना, 1973 एवं 1978 के आनंदपुर साहब प्रस्ताव को रद्द करने, 1984 में 'ऑपरेशन ब्ल्यु स्टार' एवं 'ऑपरेशन वुड रोज' चलाना, 1984 में सिख विरोधी दंगों को प्रोत्साहन देना इत्यादि—ने सिख समुदाय के प्रति अति निन्दनीय व्यवहार किया; इस प्रकार भारतीय नेताओं के प्रति सिख समुदाय की अपेक्षाएं चूर-चूर हो गयी और इस समुदाय का भारतीय मुख्य धारा से अलगाव हो गया। अकाल तख्त से जनवरी, 1986 में स्वतंत्र सिख राज्य की घोषणा करने और 1989 के पंजाब में लोग सभा चुनाव परिणामों (जिसमें कुल 13 सीटों में से खालिस्तानी समर्थकों ने 9 सीटें जीती) ने सिखों के अलगाव का स्पष्ट संकेत दिया था। 1992 में 12 मुख्य अकाली नेताओं द्वारा हस्ताक्षरित विज्ञप्ति (पंजाब में सिख राज्य के मसले पर सिखों के बीच जनमत संग्रह करवाने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ से हस्तक्षेप की

मांग) संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव को दी गई और संयुक्त अकाली दल अमृमसर (जिसमें बादल ग्रुप शामिल नहीं हुआ था) द्वारा मई, 1994 में तैयार किये गये घोषणा-पत्र (पंजाब के लिए महासंघीय दर्जा देने की मांग की गई और इसे मान्य नहीं करने की हालत में स्वतंत्र सिख राज्य का नारा देने के फैसले) से और अधिक अलगाव का बढ़ना जाहिर होता है।

V खाड़कूपन को लगे धक्के के कारण

15. यह सच है कि 1991-92 में खालिस्तानी खाड़कूपन को गम्भीर धक्का लगा है। परन्तु इस धक्के का मूलभूत कारण खालिस्तान के गलत सिद्धान्त और व्यवहार में निहित है न कि सिख अलगाव में किसी तरह की कमी।

16. सैद्धान्तिक तौर पर यह गलत धारणाओं वाला नारा है जो प्रथम तो पंजाबियों को धार्मिक आधार पर—हिन्दू व सिख में—और द्वितीयत: सिख समुदाय को दो भागों—एक जो भारत के दूसरे प्रान्तों में रहते हैं और दूसरे स्वतंत्र सिख राज्य की धारणा रखने वाले सिखों—में विभाजित कर देता है। तृतीयत: यह धर्म आधारित (थियोक्रेटिक) राज्य की अव्यवहारिकता के संसार व्यापी तजुर्बे को नजर अन्दाज करता है—चाहे यह तजुर्बा दक्षिण एशियाई पाकिस्तान का हो या उत्तरी अफ्रीकी सूडान का। अत: यह नारा सिख समुदाय के विशाल जनमानस में स्थान नहीं बना पाया है।

17. व्यवहारिक तौर पर खालिस्तानी खाड़कूपन को लगे धक्के के सम्बन्ध में सात मुख्य पहलु हैं—

(क) बच्चों, महिलाओं, बूढ़ों सहित निर्दोष हिन्दुओं और सिखों को अन्धा-धुंध मारने की अमानवीय रणनीति को लागू करना, यह एक ऐसी रणनीति थी जो सिख धर्म के मानवतावादी सिद्धान्त के उलट है और इसमें सही और गलत के बीच भेद करने का कोई विवेक नहीं रहा।

(ख) सिख जन-समूह को प्रेरित करने में खालिस्तानी रणनीति की असफलता।

(ग) पंजाबी हिन्दू समुदाय द्वारा इसका विरोध करना।

(घ) भारत के दूसरे भागों में निवास कर रहे सिखों द्वारा इसे रद्द करना।

(ड़) भारत और दुनिया के डेमोक्रेटिक सोच वाले लोगों से किसी किस्म का समर्थन नहीं ले पाने की कमी।

(च)विभिन्न खालिस्तानी खाड़कू-ग्रुपों के बीच अन्दरूनी और आपसी गुट-बंदी और अहमों के टकरावों से ग्रसित होना।

(छ) भारतीय सुरक्षा बलों को बड़ी भारी संख्या तैनात करना।

VI दो तरफा पंजाब समस्या

18. क्या यह कहा जा सकता है कि खालिस्तानी खाड़कूवाद को लगे धक्के के बाद पंजाब के अन्दर हालात सामान्य हो गये हैं और पंजाब अब खाड़कूवाद से रहित राज्य बन गया है? जब तक सिख समुदाय का भारत की मुख्य धारा से अलगाव में वृद्धि होना जारी रहता है तब तक सिख खाड़कूपन का आधार समाप्त नहीं हो सकता। खाड़कूपन को विपरीत या पीछे हटने के विभिन्न दौरों से गुजरना पड़ सकता है, परन्तु इसका अस्तित्व समाप्त नहीं हो सकता।

19. नई दिल्ली ने आज तक आम तौर पर पंजाबियों और खास तौर पर सिखों की लम्बे समय से इकट्ठे हो रही शिकायतों को दूर करने के लिए कोई एक आधा कदम भी नहीं उठाया है। वास्तव में नई दिल्ली की धारणा यह रही है कि खालिस्तानी खाड़कूपन पाकिस्तान द्वारा उकसाया गया है और सिख इसके विरोध में है। परन्तु दो हालिया घटनाओं ने इसकी उक्त धारणा की असंगतता को फिर से दर्शा दिया। एक घटना सितम्बर, 1995 में अमृतसर में हुई विश्व सिख सम्मेलन की घटना थी, जिसमें खालिस्तान को कायम करने की वकालात की गई। उस सम्मेलन में सारे खाड़कूपन खास करके इन्दिरा गांधी और जनरल वैद्य के कातिलों को तथा भारतीय सुरक्षा बलों के हाथों मारे गये खाड़कुओं को सम्मानित किया गया। इस सम्मेलन ने उन सारे लोगों की सूची तैयार करने के लिए कहा, जिन्होंने खालिस्तानी उद्देश्य की सेवा करते हुए अपनी जानें गंवाई हैं। इस विश्व सिख सम्मेलन में ऐसे निर्दोष लोगों के प्रति हमदर्दी का शब्द तक नहीं कहा जो एक या दूसरे विरोधी धड़े द्वारा मारे गये हैं। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य यह था कि अकाल तख्त की सर्वोच्चता को सिर्फ धार्मिक मामलों में ही नहीं बल्कि राजनैतिक मामलों में भी स्थापित किया जावे। किसी भी नेता ने, यहां तक कि बादल के धड़े वाले किसी अकाली नेता ने भी इस सम्मेलन द्वारा अख्तियार की गई लाईन पर कोई मतभेद जाहिर नहीं किया। यह सिखों में पैदा हुए अलगाव का एक और खुला संकेत है।

20. दूसरी घटना यह है कि बेअन्तसिंह की हत्या पर आम सिख जनता की प्रतिक्रिया ठंडी ही रही, जबकि हिन्दुओं की प्रतिक्रिया बहुत ही दु:ख भरी और चिंतादायी रही। इस हत्या को हिन्दू अपना निजी नुकसान समझते हैं। मानसिक तौर से यह हिन्दुओं और सिखों के बीच विभाजन का स्पष्ट संकेत है।

21. इस प्रकार, तथ्य इस बात का संकेत देते हैं कि आज के पंजाब में मुख्य मुद्दा एक दो तरफा समस्या है—एक तरफ सिख समुदाय में अलगाव के अहसास की और दूसरी तरफ सिखों और हिन्दुओं के बीच मानसिक खाई के बढ़ने की समस्या है।

VII केन्द्र की अस्थिरता की लाईन

22. यहां से प्रारम्भ कर हम कहां जायेंगे? नई दिल्ली और मुख्य धारा वाली पार्टियां जो एकात्मक और बहुसंख्यक राष्ट्रीयतावाद के नजरिये की तरफदारी करते हैं। यह एक तरफ आम तौर पर सिखों के खिलाफ दमन और भेदभाव वाली नीति चलाते हैं और दूसरी तरफ सिखों और हिन्दुओं के बीच दरार कायम रखने की नीति पर चलते आये हैं। दमन करने और फूट डालने की नीति का तजुर्बा दर्शाता है कि जहां इसने जम्मू-कश्मीर और उत्तर पूर्वी राज्यों के अन्दर नस्ली अल्पसंख्यकों में अलगाव की भावना को कायम रखा है, वहीं भारत के बाकी भागों मे इसने साम्प्रदायिकता और जातिवाद में बढ़ोतरी करके अल्पसंख्यकों और कमजोर तबकों में असुरक्षा और गरीबी में वृद्धि की है। स्पष्ट है कि ऐसी नीति जो भारत के नस्ली, धार्मिक और सांस्कृतिक भिन्नता के उलट है। यह नीति देश के अस्थिरीकरण और टुटन की तरफ ले जा रही है। इस गड़बड़ी वाले रास्ते की कोई भी डेमोक्रेटिक और तर्क संगत व्यक्ति हिमायत नहीं कर सकता।

23. पिछले दौर के अनुभव से यह भली-भांति कहा जा सकता है कि अकाली राजनीति भी स्थिति को उलझाने में ही अपना कुछ योगदान डालेगी। इसके दो पुराने संकीर्ण नारे (यानि, पंथ खतरे में है और खालसा राज में कोई मतभेद नहीं रहेगा) पहले की तरह ही भिन्न-भिन्न तरह की साम्प्रदायिकता- खालिस्तानी मसले और वोट बैंक राजनीति—को मजबूत करेंगे।

VIII पंजाब के लिए कार्यक्रम

24. पंजाब के न्यायपूर्ण और उचित हल के लिए एक ऐसे नये कार्यक्रम की जरूरत है जो सिख समुदाय की पहचान को यकीनी बनाते हुए सिखों और हिन्दुओं के बीच भाईचारे के संबंधों को मजबूत करते हुए पंजाब और भारत के विकास का रास्ता खोल दे।

(अ) सिख पहचान के लिए

1. भारतीय संघ के अन्दर ही, 1953 के पहले के जम्मू-कश्मीर की तरह पंजाब को विशेष दर्जा देने की घोषणा करके, नई दिल्ली सिख पहचान के सवाल को हल करने के लिए खालिस्तानी खाड़कुओं सहित पंजाब से संबंधित पार्टियों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन बुलाए। यह वर्तमान भारतीय संविधान के ढांचे के अन्दर बड़ी आसानी से पूरा किया जा सकता है। परन्तु यह और अच्छा रहेगा, यदि सम्पूर्ण भारत अपने आप में संघीय परिवर्तन कर ले।

2. सिख धर्म को एक स्वतन्त्र और अलग मत जानने की गारन्टी देते हुए इसकी सुरक्षा की जाए। इस आश्वासन की पुष्टि करने के लिए नई दिल्ली को चाहिए वह अपनी पिछली 'आपरेशन ब्ल्यू स्टार' की कार्यवाही पर दुख प्रकट करे।

3. पंजाब के साथ लगते राज्यों के साथ सीमा सम्बंधी विवादों को राजीव-लोगोंवाल समझौते के मुताबिक हल किया जाए।

4. पंजाब के साथ लगते राज्य हरियाणा, हिमाचल और दिल्ली में पंजाबी को दूसरी भाषा के तौर पर मन्जूर किया जाए।

5. अल्पसंख्यक आयोग और सिख धार्मिक संगठनों द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर गुरुद्वारा प्रबन्धक कानून में सुधार किया जाए।

6. खालिस्तानी खाड़कूवाद से जुड़े सभी लोगों (चाहे वे सरकारी हिरासत में हैं या अन्डरग्राउण्ड हैं) को आम माफी देने की घोषणा की जाए।

7. 1984 के सिख विरोधी दंगे में हत्याओं के लिए विभिन्न आयोगों ने जिन लोगों को दोषी बताया है, उन पर मुकदमा चलाया जाए।

(ब) सिख हिन्दु भ्रातृत्व के लिए

1. पंजाबी को उनकी मातृ-भाषा क तौर बरकरार रखा जाए।

2. भारतीय संघ के अन्दर पंजाब को विशेष दर्जा देने की मांग की जाए।

3. पंजाब की सभी समस्याओं के न्यायपूर्ण हल के लिए आवाज बुलन्द की जावे।

4. एक जांच आयोग की नियुक्ति (जैसा कि दक्षिणी अफ्रीका ने नियुक्त किया था) की जाए जो यह जांच करें कि 1980 के बाद, पंजाब संकट के दौरान कितने निर्दोष लोग मारे गये और सरकारी बलों एवं खालिस्तानी खाड़कुओं ने कानून की क्या-क्या उल्लंघना की। दोनों पक्षों द्वारा पंजाबियों के अलग-अलग समुदायों पर किए गये अत्याचारों का पता लगाने के लिए कुछ हल्कों द्वारा ऐसे आयोग के गठन की मांग की गई है।

(स) पंजाब के विकास के लिए

1. नदी जल के सवाल को सुप्रीम कोर्ट के हवाले हल किया जाये जो एक निश्चित समय में इस पर फैसला देवे। जैसा कि सभी अकाली दलों द्वारा मांग की गई है।

2. चण्डीगढ़ पंजाब को दिया जाए और इसके बदले हरियाणा को उचित मुआवजा प्रदान किया जाए।

3. थीन बांध को युद्ध स्तर पर सम्पूर्ण किया जावे।

4. पंजाब में समुचित कृषि उद्योगों और बड़े उद्योगों की स्थापना की जाए।

5. पंजाब में खेतीबाड़ी की भिन्न-भिन्न समस्याओं—जैसे कि जमीन की ताकतों में कमी, जल प्रदूषण, पानी, ऊर्जा अन्य खेतीबाड़ी के लिए आवश्यक पदार्थों की उपलब्धता, कृषि मूल्यों और वित्तीय सहायता, कृषि मालों के निर्यात, इत्यादि को गहराई से समझने के लिये एक स्वतन्त्र आयोग (जिसमें पंजाब के किसान समुदाय के प्रतिनिधि भी शामिल हों) की नियुक्ति की जाए।

6. नई दिल्ली पंजाब को आर्थिक पैकेज देने का वादा पूरा करे। यह वादा तीन प्रधानमन्त्रियों द्वारा किया गया है।

7. लोगों के मानवाधिकारों की रक्षा की जावे।

8. अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद इत्यादि के खिलाफ लड़ा जाए।

9. लोगों की तात्कालिक समस्याओं के हल के लिए उन्हें संगठित किया जाये।

आम सहमति की आवश्यकता

25. उपरोक्त कार्यक्रम नासूर बनी पंजाब समस्या के हल के लिए किसी जरूरी आम सहमति पर पहुंचने के लिये सभी इन्साफ पंसद लोगों (चाहे उनकी पार्टी कोई भी हो) के बीच विचार-विमर्श के लिए एक खाके का काम दे सकता हैं अगर हम सक्रिय नहीं हुए तो समस्या अपना ही रास्ता अख्तियार कर जायेगी।

26. पंजाब में वर्तमान शान्ति बन्दूक की नोक से थोपी गई है। खाड़कूवाद के बुनियादी कारण की तरफ बिल्कुल ही ध्यान नहीं दिया जा रहा है। पंजाब में अभी तक पुरानी गलतियों को बिल्कुल भी ठीक नहीं किया गया है और आगे तक गलतियों का क्रम निरन्तर जारी है आज का पंजाब व्यवस्था और दुर्व्यवस्था के बीचो-बीच खड़ा है। नई दिल्ली की लाईन इसको एक नई गड़बड़ी के दौर में धकेल सकती है जिसमें से निकलना शायद सम्भव ही न हो। इसलिए आज पंजाब और भारत के लिए किसी आम सहमति पर पंहुचने की सख्त आवश्यकता है।

❋ ❋ ❋

भारत के 'सत्यमेव जयते' के इम्तिहान की घड़ी

I. भारत की सामाजिक व्यवस्था गड़बड़ी में चल रही है

'सत्यमेव जयते' (यानि सच्चाई की हमेशा जीत होती है) का सार्वभौमिक कानून जिसे हमने भारतीय संविधान में हमारे आदर्श वाक्य के रूप में अंगीकार किया है, क्या इसे हम हमारे राष्ट्र में लागू करने का दावा कर सकते हैं? हमारे देश में अब जो नए हालात पैदा हुए हैं उन्हीं से यह सवाल उभरा है। खतरे की घंटियां सब दिशाओं से बज रही हैं कि हमारे संघ में प्रक्रियाएं ठीक तरीके से नहीं चल रही हैं। कार्यपालिका, विधान पालिका, न्याय पालिका, राजनैतिक पार्टियां, प्रेस और लोग—सभी के कामकाज ठीक नजर नहीं आ रहे हैं।

यहां मुश्किल से ही कोई ऐसा राष्ट्रीय संस्थान होगा जो अपने संकीर्ण हितों से ऊपर उठकर काम करता हो। हमारे देश के अधि-संख्यक लोग अपने विशिष्ट समूह या व्यक्तिगत हितों के आदि हैं। कुछ लोग जो सामाजिक या मानवीय तरीके से सोचते हैं, वे भी अपनी मनोगत और वस्तुगत बाधाओं के कारण कुछ कर नहीं पा रहे हैं।

सभी पांरपरिक और आधुनिक फॉरमूले काम नहीं आ रहे हैं। हमारे पास कोई आम सहमति पर आधारित नया राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य नहीं है जो हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया को दिशा दे सके, ना ही कोई राष्ट्रीय तरीकाकार है जो हमारी कार्यक्षमता में सुधार कर सके तथा न ही कोई मूल्य आधारित आचार संहिता है जो हमें न्याय-प्रिय और निष्पक्ष बना सके, न ही ऐसा कोई संगठन है जो किसी छोटे या मोटे राष्ट्रीय सवाल पर सर्वसम्मति पैदा कर सके।

अब हमारे सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में अनिश्चितताएं सता रही हैं। भविष्य की आशा धुमिल नजर आ रही है। स्पष्टतया यह हालात 1947 के बाद की सभी परिस्थितियों से अधिक गंभीर हैं और गुणात्मक तौर पर भारी गड़बड़ी की द्योतक है।

आज हमारे लोगों को जिस उदासी के बोध ने जकड़ लिया है, यह कोई अचानक पैदा नहीं हुई है। यह कुछ निश्चित वास्तविकताओं का फल है जो अब हमारी राष्ट्रीय प्रक्रियाओं से परिलक्षित हो रही है।

(क) राष्ट्रीय एकता को चुनौती

हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया की मुख्य हकीकत यह है कि हम एक तरफ दुनिया की सबसे बड़ी डेमोक्रेसी कायम करने का दावा करते हैं वहीं दूसरी तरफ हमारी राजनीति अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद और हिंसा जैसी पांच गंभीर

सामाजिक बुराइयों से ग्रसित हो गई है। इसलिए आज हमारे देश की एकता को गंभीर चुनौती का सामना करना पड़ रहा है।

भारतीय राजनीति के अपराधीकरण का अर्थ है कि भारतीय राजनैतिक प्रक्रिया का प्रबन्ध या तो सीधे अपराधियों द्वारा या उनके साथ मिलकर किया जा रहा है।

इस अपराधीकरण का सबसे निष्ठुर रूप यह है कि स्वयं अपराधियों ने विधान पालिका (पंचायत और स्थानीय निकायों समेत) में प्रवेश करके अथवा मुख्य बड़ी पार्टियों के उच्च पदों को हासिल करके सत्ता पर सीधी पकड़ कर ली है। एक अनुमान के मुताबिक भारतीय विधान पालिकाओं में विभिन्न तरह के संदेहास्पद तत्व शामिल हो चुके हैं जिनका अनुपात लगभग 10 प्रतिशत है।

राजनैतिक अपराधीकरण का दूसरा रूप यह है कि राजनीतिज्ञों, अपराधियों व पुलिस की धुरी सभी क्षेत्रों में बन चुकी है।

राजनीति में अपराधिकरण का तीसरा रूप यह है कि विभिन्न स्तरों पर गैर-संवैधानिक केन्द्र और सत्ता के दलाल पैदा हो गए हैं।

राजनीति में अपराधीकरण का चौथा रूप यह है कि सत्ता के गलियारे में विभिन्न स्तरों पर (खासकर के शीर्ष पर) बैठे महानुभावों द्वारा सत्ता का दुरुपयोग और कुप्रयोग किया गया है।

राजनीति के अपराधीकरण का पांचवां—परन्तु किसी भी अर्थ में कम महत्वपूर्ण नहीं—रूप यह है कि राजनीति से अवांछित फायदा प्राप्त करने के उद्देश्य से खास करके चुनावी प्रक्रिया में धन और बाहुबल का प्रयोग किया जाता है।

1947 के बाद सबसे पहले जवाहरलाल नेहरू के शासन से शुरू हुआ राजनीति का अपराधीकरण लगातार आने वाले 9 प्रधानमंत्रियों के शासनों के दौरान फलता फूलता रहा और जिसने आज अद्वितीय आयाम प्राप्त कर लिए हैं। 1994 की सरकारी बोहरा कमेटी रिपोर्ट में टिप्पणी की गई है : ''अपराधी गिरोह (माफिया) समानान्तर सरकार चला रहे हैं, राज्यतंत्र को अप्रासंगिक स्थिति में धकेल रहे हैं।'' इस रिपोर्ट में अन्य बड़े बिन्दु निम्न हैं : (1) संगठित अपराधियों ने अकूत (अकल्पनीय) धन स्रोत हासिल कर लिए हैं, जिनका उपयोग निरंतर 'सूटकेश' और 'बोरी भरे धन' के द्वारा राजनीतिज्ञों, नौकरशाहों, प्रेस के संचालकों और दूसरे प्रभावी व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित करके एक मजबूत जाल बना लिया है। इन्हीं संबंधों के सहारे ये अपराधी संघ अनियंत्रित अपराधिक गतिविधियों को चला रहे हैं। (2) ऐसे अपराधी संघ ''अपने आप में ही कानून बन गये हैं''—''आम आदमी के जीवन और सम्पति की सुरक्षा तथा प्रशासन के ठीक कर्तव्यपालन के लिए गंभीर खतरा बन गये हैं।'' (3) अपराधी संघों के ''क्रमिक बढ़ते व्यवसाय'' ने एक समानान्तर आर्थिकता खड़ी

कर दी है जो भारतीय आर्थिकता का और विशेषकर उसके निगम क्षेत्र का एक बड़ा घटक बन गया है। (4) अपराध से निपटने वाली सरकारी एजेन्सियों पर नियुक्ति, स्थानान्तरण इत्यादि द्वारा उच्च नेताओं के राजनीतिक दबाव और भ्रष्टाचार के कारण इनकी अपराध से निपटने की क्षमता घटती जा रही है और (5) इस चुनौती भरे हालात से निपटने के लिए यह आवश्यक है कि एक शीर्ष संस्था (एजेन्सी) की स्थापना की जाए जो दोषियों पर मुकदमा चलाने, उन पर ध्यान रखने आदि सभी कार्यों का समन्वय कायम कर सके।

भारतीय राजनीति की दूसरी गंभीर सामाजिक बुराई, यानि, भ्रष्टाचार का अर्थ है भारतीय राजनीतिक प्रक्रिया में फैले भ्रष्ट वातावरण का बोलबाला। हालांकि, यह बुराई 1947 के बाद की राजनीति में निरंतर जोरों पर रही है परन्तु अब इसने वर्तमान शासन के तहत पिछले सभी रिकार्ड तोड़ दिये हैं। यह सरकार अनियंत्रित लूट का प्रतीक बन गई है। एक के बाद दूसरे घोटालों-प्रतिभूति घोटाला, शुगर घोटाला, अनिवेशी षडयंत्र, चल रहा हवाला घोटाला इत्यादि—ने भारतीय राजनीति को हिला दिया है। यहां तक कि राव के 9 केबिनेट मंत्रियों ने भ्रष्टाचार के आरोपों में मंत्रिमंडल छोड़ दिया है।

तथापि भ्रष्टाचार के उपरोक्त मामले विशाल पहाड़ के केवल कण मात्र ही है। वास्तव में सभी स्तरों पर बहुत ज्यादा भ्रष्टाचार के मामले सारे राज्यों में ढके पड़े हैं। हवाला विस्फोट ने खासकर के दिखा दिया है कि भारत के उच्च स्तरीय राजनेता किस तरह भ्रष्टाचार में आकंठ तक डूबे हुए हैं।

भारतीय राजनीति की तीसरी गंभीर बुराई साम्प्रदायिकता है, इसके मायने हैं कि भारतीय राजनैतिक प्रक्रिया में आम तौर पर एक धार्मिक समुदाय की राजनीति करना एवं खासकर बहुसंख्यक यानि हिन्दुत्व की राजनीति करना साम्प्रदायिकता बनती है। भारतीय राजनैतिक प्रक्रिया के साम्प्रदायिकता (यानि समुदायों के बीच दुश्मनी एवं बदला निकालने की सनक पैदा करना) ने प्रथमत: जनता का ध्रुवीकरण साम्प्रदायिक आधार पर तेज करते हुए एक समुदाय को दूसरे समुदाय के सामने दुश्मन के रूप में खड़ा कर दिया है। यह भारतीय एकता को खोखला कर रही है। द्वितीयत: इसने साम्प्रदायिक दंगे पैदा किए हैं, जिन्होंने कानून और व्यवस्था को तबाह कर दिया है और आर्थिक प्रक्रिया को गड़बड़ा दिया है। तृतीयत: इसने भारतीय राजनीति के जनवादीकरण और आर्थिकता के उदारीकरण के रास्तों में व्यवधान डाला है। चतुर्थ आस्था और विचारों की पद्धति होने के नाते इसने प्रत्येक प्रकार की साम्प्रदायिक दिशा को अपने-अपने समर्थकों में पैदा किया है। जिससे किसी प्रक्रिया के मूल्यांकन में नजरिया आम तौर पर साम्प्रदायिक बना है। पंचम बहुसंख्यक साम्प्रदायिकतावाद ने

आक्रामक राष्ट्रवाद को उभारकर भारत-पाकिस्तान के बीच दुश्मनी पैदा कर दी है जिससे भारत-पाक में झगड़े की संभावना बढ़ रही है।

भारतीय राजनीति की चौथी गंभीर बुराई जातिवाद (यानि जाति की राजनीति) है। इसके मायने हैं कि आम तौर पर विभिन्न तरह के जातिवाद और खास तौर पर दलित और पिछड़ों के नाम का शोषण करने वाले जातिवादी राजनीतिक गुटों का भारतीय राजनीतिक प्रक्रिया में मजबूत प्रभाव हो गया है। भारतीय राजनैतिक प्रक्रिया का जातिवादीकरण (यानि अंतर्जातीय तनावों को पैदा करना) प्रथमत: लोगों के बीच परम्परागत जाति विभाजन को बनाए रखता है। इससे राष्ट्रीय एकता की प्रक्रिया कमजोर पड़ती है। द्वितीयत: यह जाति धर्म को बढ़ाती है जिससे लोगों के बीच घृणा पैदा होती है और उनका आम सामाजिक जीवन गड़बड़ा जाता है। तृतीयत: इससे जाति नेताओं के प्रति लोगों की वफादारी और पिछलग्गूपन का रूढ़िवादी व्यवहार और अधिक पनपता है। चतुर्थ: इससे प्रत्येक समस्या के प्रति जातिवादी दृष्टिकोण और रूख पनपता और मजबूत होता है।

भारतीय राजनीति की पांचवीं बुराई हिंसा है। इसके मायने हैं कि भारतीय राजनैतिक प्रक्रिया में आम तौर पर हिंसा और खास तौर पर सरकारी हिंसा बढ़ गई है। राज्य द्वारा सामाजिक समस्याओं से निपटने के लिए हिंसा का उपयोग करना ही सरकारी हिंसा का द्योतक है। आज देश में कोई भी ऐसा सामाजिक विवाद नहीं है, जिसमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सुरक्षा बलों का उपयोग न किया जा रहा हो।

गैर-सरकारी हिंसा के सम्बन्ध में स्थिति यह है कि इसका एक बड़ा भाग (चाहे यह जनता को आतंकित करने के लिए हो या अंतर गिरोह दुश्मनी निकालने में हों) माफिया गिरोह द्वारा किया जाता है। इसके आगे खाड़कू हिंसा आती है जो मुख्यतया सरकार के खिलाफ केन्द्रित होती है और कभी-कभी लोगों के खिलाफ उपयोग की जाती है। इनके बाद साम्प्रदायिक और जातिवादी हिंसा आती है। जनता के स्तर पर होने वाली हिंसा आज की हिंसाग्रस्त भारतीय राजनीति का एक बहुत छोटा हिस्सा बनती है।

इस प्रकार भारतीय राजनीतिक प्रक्रिया की गिरावट एक तरफ सभी संवैधानिक और कानूनी पहलुओं में व्यवधान डालकर कानून के राज की उचित और सहज प्रक्रिया को भंग करती है और दूसरी तरफ विद्यमान भारतीय व्यवस्था के तहत आम लोगों को मिले थोड़े बहुत राजनैतिक व आर्थिक अधिकारों से भी उनको वंचित कर देती है।

स्पष्टत: जिस समाज की राजनीति में अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद और हिंसा के लक्षण फल-फूल रहे हों, वहां किसी भी तरह की वास्तविक

आजादी और जनवाद का अस्तित्व असंभव है।

इन बुराइयों का परिणाम हमारी राजनैतिक प्रक्रिया में बिखराव और टूटन के रूप में हमारे सामने आ रहे हैं। प्रथमत: इसने मुख्य राष्ट्रीय धारा के प्रति अल्पसंख्यकों में अलगाव पैदा कर दिया है। जिन क्षेत्रों में अल्पसंख्यक बहुमत में है (उदाहरणतया पंजाब, जम्मू-कश्मीर, उत्तर पूर्वी राज्यों) वहां वे सशस्त्र संघर्ष लड़ रहे हैं। द्वितीयत: इसने विभित्र सामाजिक समूहों के बीच खाई पैदा कर दी है, जिसका परिणाम अधिक जाति व साम्प्रदायिक दंगों में निकल रहा है। और तृतीयत: इसने हमारी सामाजिक व्यवस्था के मूलभूत पहलुओं के बारे में मुख्य धारा वाली पार्टियों के बीच न्युनतम सहमति को भी भंग कर दिया है। संक्षेप में, इसने हमारे राष्ट्रीय ताने-बाने को कमजोर कर दिया है।

(ख) गैर-टिकाऊ विकास प्रक्रिया

हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया की दूसरी महत्वपूर्ण वास्तविकता है कि जहां हमारी विकास प्रक्रिया के टिकाऊ होने के बारे में शेखी बघारी जा रही है वहां दूसरी तरफ वास्तव में भारत के प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों में भारी विकृतियां परिलक्षित हो रही हैं।

भारत में प्राकृतिक विकृतियों का आशय है इसकी भूमि, जंगल और जल-स्रोतों में गिरावट, जैव-विविधता का विनाश और वायु का प्रदूषित होना। जहां तक जमीन का संबंध है, भारत की 32.9 करोड़ हैक्टेयर कुल भूमि में से मात्र 22.6 करोड़ हैक्टेयर भूमि ही खेती करने लायक है। वास्तविक जोतने वाली भूमि का क्षेत्रफल 14.3 करोड़ हैक्टेयर है, जबकि 8.5 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्रफल काफी खराब हो चुका है और 4 करोड़ हैक्टेयर पूर्णयता गैर-उपजाऊ हो चुका है। जोते जाने वाली 14.3 करोड़ हैक्टेयर भूमि में से एक तिहाई सिंचित है जबकि दो तिहाई भूमि असिंचित है।

जंगलों के संबंध में स्थिति यह है कि 8.5 करोड़ हैक्टेयर भूमि पर जंगल हैं, जिनमें से लगभग आधा क्षेत्र गैरकानूनी पेड़ों की कटाई और बढ़ते हुए मानवीय और पशुओं की जनसंख्या के दबाव से काफी हद तक जंगल विहीन (नंगा) हो गए हैं, इसने फूलों वाली प्रजातियों तथा दलदली क्षेत्र के पेड़-पौधों के लिए विनाशकारी खतरे पैदा कर दिये हैं।

जंगलों के नष्ट होने से और जंगलों की जुताई की वजह से उस भूमि में मृदा-कटाव हो रहा है। और एक अनुमान के मुताबिक 600 करोड़ टन मिट्टी का कटाव हो चुका है। चारागाह भूमि (जो कुल मिलाकर 1.3 करोड़ हैक्टेयर बनती हैं) अधिक से अधिक बंजड़ होती जा रही है, इसका एक कारण यह है कि कुछ जरूरतमंद और कुछ ताकतवर लोग चारागाह भूमि पर कब्जा करके इस भूमि को कम

करते जा रहे हैं, जिससे भारतीय पशुओं (जो शायद दुनिया में किसी भी दूसरे देश से अधिक हैं) के लिए चारागाह भूमि की कमी पड़ती जा रही है और फलस्वरूप इसमें बची-खुची भूमि और पड़ती भूमि (बंजर) में ही पशुओं की अत्यधिक चराई होती है। जिसका परिणाम भूमि का और अधिक क्षय में निकलता है।

पानी के संबंध में तथ्य यह है कि इसकी वार्षिक मात्रा एक अनुमान के मुताबिक 40 करोड़ हैक्टेयर मीटर है। इसमें से लगभग 30 करोड़ हैक्टेयर मीटर पानी मानसून के समय प्राप्त होता है। पिछले समयों में वनस्पति के आवरण के कारण मानसूनी पानी संचित हो जाता था तथा यह भू-गर्भीय जल में वृद्वि करता था और जो आगे के लिए धीरे-धीरे खेती के काम आता था। जंगलों के नष्ट होने से पानी की यह परत धीरे-धीरे लुप्त हो रही है, इससे पानी की उपलब्धता में कमी और असमानता बढ़ती जा रही है। आजकल भारी वर्षा से बाढ़ आती है और औसत से कम वर्षा से सुखा पड़ जाता है। बाढ़ों से मिट्टी का कटाव होता है जिससे नदियों और तालाबों में मिट्टी भर जाती है। बार-बार बाढ़ और सूखे के चक्र के कारण हमारे खजाने पर 1500 करोड़ रूपये का अतिरिक्त भार पड़ता है। वर्षा के पानी के अत्यधिक अपव्यय के कारण भूमिगत जल स्रोतों पर दबाव बढ़ रहा है और इससे भूमिगत जल में कमी पड़ती जा रही है।

भारत में पानी की उपलब्धता निरंतर घटती जा रही है। एक अनुमान के मुताबिक भारत में पानी की उपलब्धता में कमी आ सकती है जो वर्तमान में 2100 घनमीटर के स्तर से गिरकर सन् 2039 तक 1100 घनमीटर (यह पानी की कमी का स्तर होगा) रह जायेगा।

उद्योगों से निकले हुए अपशिष्ट पदार्थों और शहरी मानवीय मलमूत्र के साथ-साथ खेती में रसायनों के उपयोग से बहता हुआ जमीन का सतही और भूगर्भीय जल प्रदूषित होता जा रहा है।

जहरीले रसायनों का उपयोग, मोटर-गाड़ियों के धुएं और इन सबसे बढ़कर थर्मल प्लांट और कुछ अन्य उद्योगों में कोयले के उपयोग के कारण भारत में वायु का प्रदूषण बढ़ता जा रहा है।

जंगल विनाश, भूमि और पानी के गुणों में गिरावट तथा वायु प्रदूषण से भारत के जैविक संसाधनों (जिसमें 45000 पौधों और 75000 पशु प्रजातियां शामिल हैं) को गम्भीर खतरा पैदा हो गया है।

भारत की जनसंख्या का विस्फोट जो 1947 में 34.2 करोड़ से बढ़कर आज 92 करोड़ पर पहुंच गई है, यह मानवीय विकृति का एक रूप है जो हमारे लिए गंभीर खतरा पैदा कर रही है। भारत में दुनिया की 2.4 प्रतिशत जमीन है तथा इस पर विश्व

की कुल जनसंख्या की 16 प्रतिशत से अधिक आबादी निवास कर रही हैं। प्रतिवर्ष 1.8 करोड़ की वृद्धि दर से सन् 2000 तक 100 करोड़ तथा 2025 तक 140 करोड़ हो जाएगी। हमारी वर्तमान 92 करोड़ जनसंख्या में 50 करोड़ के लगभग और वृद्धि होने पर हम इसका प्रबन्ध नहीं कर पायेंगे, जिससे सामाजिक और राजनैतिक तनाव अनियंत्रित हो जायेंगे।

मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों में विकृतियों का परिणाम प्राकृतिक आपदाओं और सामाजिक तकलीफों में निकल रहा है।

(ग) अकुशल आर्थिक प्रक्रिया

हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया की तीसरी महत्वपूर्ण वास्तविकता यह है कि हमारी आर्थिकता की संतुलित वृद्धि के दावों के बावजूद इसकी उत्पादन प्रक्रिया, वित्तीय व्यवस्था और जनसंख्या की संरचनात्मक बनावट, सामाजिक क्षेत्र में भारी असंतुलन बरकरार है।

भारतीय आर्थिकता का पहला असंतुलन इसकी उत्पादन प्रक्रिया की अकुशलता में निहित है। यह उच्च उत्पादन लागत, निम्न उत्पादकता दर और इसके उत्पादों की घटिया गुणवत्ता से परिलक्षित होती है।

उत्पादन लागत के संबंध में स्थिति यह है कि जहां भारत में 1990 में पूंजी/उत्पादन का अनुपात 6/1 था, वहां विकसित देशों की अर्थव्यवस्था में यह 2.5/1 और एशियन देशों में 3/1 है। इसका अर्थ है कि जहां भारत में एक युनिट उत्पादन के लिए 6 रुपये खर्च करने होते हैं, वहां विकसित देशों में 2.5 रुपये और एशियन देशों में 3 रुपये खर्च करने पड़ते हैं।

उत्पादकता के संबंध में स्थिति यह है कि जहां चीन में प्रति वर्कर प्रति वर्ष उत्पादन दर आज 11000 डालर है, पाकिस्तान में 1500 डालर हैं वहां भारत में यह आंकड़ा 900 डालर है। 1950 के आसपास ये तीनों देश एक ही उत्पादकता के स्तर पर थे। विश्व स्तर पर दूसरे विश्व युद्ध के उपरांत कुल उत्पादन 5.5 गुना और व्यापार 14 गुना बढ़ा है, वहां हमारा राष्ट्रीय उत्पादन 2.5 गुना और व्यापार 3.3 गुना ही बढ़ा है और इस प्रकार विदेशी व्यापार में हमारा अनुपात 2.5 प्रतिशत से घटकर 0.6 प्रतिशत ही रह गया है।

हमारे उत्पादों की गुणवत्ता के संबंध में तथ्य यह है कि परंपरागत आइटमों जैसे चाय, जूट, कॉटन, कपड़ा उद्योग, जूते और कुछ खाने योग्य वस्तुओं को छोड़कर बाकी सब भारतीय मालों और वस्तुओं की गुणवत्ता का स्तर बाह्य मांग को मुश्किल से ही पूरा कर पाते है।

भारतीय आर्थिकता का द्वितीय असंतुलन हमारे कमजोर वित्तीय अनुशासन में निहित है जो हमारे उच्च वित्तीय और राजस्व घाटों से परिलक्षित होता है।

वित्तीय घाटे (यानि उधारों, अन्य देनदारियां तथा अनुमानित बजटीय घाटों का जोड़) के सम्बन्ध में स्थिति यह है कि जहां 1991 में शुरू हुई उदारीकरण की आर्थिक राजकीय व्यवस्था के तहत 1995-96 तक इस घाटे के स्तर को सकल घरेलु उत्पाद (जी.डी.पी.) के 3 प्रतिशत तक घटाने के वादे किए गए थे, परन्तु इन सुधारों के पांच वर्ष बाद आज यह घाटा बढ़कर जी.डी.पी. के 6 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया है। वित्तीय सुधार के इस अति महत्वपूर्ण बिन्दु पर असफलता हमारे घटिया प्रबंध को दर्शाती है।

राजस्व घाटा (यानि राजस्व प्राप्तियां और राजस्व खर्च का अन्तर) के संबंध में स्थिति यह है कि यह साल दर साल बढ़ता जा रहा है और अब 1993 के आंकड़े की तुलना में 2.5 गुना हो गया है। इस घाटे का दुखदायी पहलू यह है कि इसे पूरा करने के लिए उत्पादन में लगने वाली पूंजी को उपभोग में ले लिया जाता है जैसे, उत्पादन के लिए कारखाने लगाने वाली पूंजी को रक्षा खर्च व ब्याज भुगतान आदि में खर्च कर लिया जाता है। यह उधार ली गई पूंजी को मौज मस्ती में खर्च करने के समान है। किसी भी सरकार के लिए अपनी औकात से ज्यादा खर्च करना भारी गैर-जिम्मेदाराना कृत्य है।

भारतीय आर्थिकता का तीसरा असंतुलन इसकी जनसंख्या का पारंपरिक ढांचागत संरचना का पुराने स्तर पर ही जारी रहना है। हालांकि राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान 1951 में 59 प्रतिशत के स्तर से घटकर 1994 में लगभग 33 प्रतिशत रह गया है, जबकि लोगों का लगभग वही पुराना 70 प्रतिशत हिस्सा अभी भी खेती पर निर्भर चला आ रहा है।

हालांकि लगभग दो तिहाई राष्ट्रीय आय का स्रोत उद्योग और सेवा क्षेत्र बन गये हैं फिर भी इन क्षेत्रों में ग्रामीण जनसंख्या के बहुत ही थोड़े लोग इसमें मजदूरी प्राप्त कर सके हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था का चौथा असंतुलन यह है कि इसने सामाजिक क्षेत्र में बहुत घटिया प्रदर्शन किया है।

1995 की यू.एन.डी.पी. की रिपोर्ट के मुताबिक मानव विकास सूचकांक (एच.डी.आई) के आधार पर भारत का स्थान 174 देशों की सूची में 134 वां है। एच.डी.आई. वास्तविक सकल राष्ट्रीय उत्पादन में व्यक्ति का हिस्सा, आयु और साक्षरता को दर्शाता है।

लिंग संबंधी विकास सूचकांक (जी.डी.आई.) के मामले में भारत का स्थान 130 देशों में 99 वां है। जी.डी.आई आदमी और औरत के बीच समानता की उपलब्धियों को दर्शाता है।

भारतीय आर्थिकता के सामाजिक क्षेत्र की संरचना—यानि साक्षरता, जन-स्वास्थ्य, गरीबी उन्मूलन, रोजगार, आवास-सुविधा इत्यादि मामलों में—अत्यन्त दयनीय तस्वीर पेश करती है।

साक्षरता के सम्बन्ध में यद्यपि भारतीय संविधान (धारा 44) में कहा गया था कि इसके लागू होने के 10 साल के अंदर-अंदर (यानि 1960 तक) सम्पूर्ण साक्षरता हासिल कर ली जायेगी। शिक्षा पर करोड़ों रुपयों के खर्च करने के बावजूद तथा आजादी के पांच दशक बाद भी भारतीय जनसंख्या का 48 प्रतिशत भाग अभी तक अनपढ़ हैं।

जनसंख्या के सम्बन्ध में तस्वीर यह है कि भारतीय संविधान में स्वास्थ्य रक्षा पर उचित ध्यान देने का प्रावधान करने तथा सरकार द्वारा इन मामलों में जोर-जोर से किये जाने वाले प्रसार के बावजूद वास्तविक स्थिति बिल्कुल निराशाजनक है। अभी तक एक चौथाई गांव पीने के पानी की सुविधा से वंचित हैं, दो तिहाई भारतीय लोगों के लिए शौचालय सुविधा नहीं है, ग्रामीण जनसंख्या के आधे लोगों के लिए उचित स्वास्थ्य सुविधा प्राप्त नहीं है।

गरीबी उन्मूलन के सम्बन्ध में तस्वीर यह है कि सरकार द्वारा गरीबी की रेखा से नीचे लोगों का प्रतिशत 29 से घटकर 19 करने के दावे के बावजूद कुछ गैर सरकारी अनुमानों और मान्यता प्राप्त अर्थशास्त्रियों ने ऐसे लोगों की संख्या 40 प्रतिशत बताई हैं। 1993-94 के साल में योजना आयोग के मूल्यांकन के मुताबिक यह संख्या 38 प्रतिशत है।

बेरोजगारी के सम्बन्ध में हालात यह है कि हमारी जनसंख्या का 5 प्रतिशत अभी तक लगातार बेरोजगार हैं और लगभग 40 प्रतिशत जिनमें ज्यादातर ग्रामीण हैं, अल्प रोजगार प्राप्त हैं।

हमारी एक तिहाई जनसंख्या बेघरबार है जबकि लाखों लोग शहरों में फुटपाथों पर सोते हैं।

स्पष्टतया भारत जैसी आर्थिकता जो शासन करने वालों की राजनीति से संचालित हैं, यह अपने मानवीय और भौतिक संसाधनों की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता के बावजूद कमजोर रहने पर मजबूर हैं, जबकि जापान जैसे देश ने जहां घरेलु संसाधनों की भारी मात्रा में कमी के बावजूद संतुलित और उच्च कार्यक्षमता की आर्थिकता के जरिए दुनिया में सर्वोच्च स्थान हासिल कर लिया है।

(घ) अधिक सैन्यकरण लेकिन कम सुरक्षा

हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया की चौथी महत्वपूर्ण वास्तविकता यह है कि इसकी विदेश एवं सुरक्षा नीति शांति, गुट निरपेक्षता और सहयोग पर आधारित होने की शेखी बघारने के बावजूद एक तरफ पांच दक्षिण एशियाई पड़ौसी देशों के प्रति बड़े भाई वाला रवैया अख्तियार करती है और दूसरी तरफ बड़ी सैनिक और आर्थिक ताकतों के प्रति आज्ञा परायण बने रहने का दृष्टिकोण रखती है। साथ ही यह पाकिस्तान के साथ टकरावावादी और शीत युद्ध की मानसिकता बनाए रखती है और सैन्यकरण पर निर्भर करती है।

दक्षिण एशिया में बड़े भाई वाले रवैये के संबंध में स्थिति यह है कि इसके अधिकतर पड़ौसियों के साथ संबंध कटु है। बांग्लादेश के साथ ये संबंध दोस्ती के बजाए कटुता में बदल गये हैं। श्रीलंका और नेपाल, भारत के इरादों के बारे में अत्यधिक संदेह रखते हैं। भूटान और मारीशस बिना किसी उकसावे के नई दिल्ली के प्रति सावधान रहने की नीति पर चलते हैं।

बड़ी सैनिक और आर्थिक शक्तियों के प्रति इसकी आज्ञाकारिता वाले दृष्टिकोण को सीमा विवाद पर चीन के प्रति नई दिल्ली की नीति से समझा जा सकता है। इसी तरह भारत के ज्यादातर राष्ट्रीय मामलों पर अमेरिका की हमसे उलट धारणाओं के बावजूद नई दिल्ली दब्बू बनी रहती है। इसने चीन-भारत सीमा विवाद पर यथास्थिति बनाने का समझौता किया है, जो अक्टूबर 1962 में भारतीय संसद द्वारा सर्वसम्मति से पारित किये गये प्रस्ताव (जिसमें चीन द्वारा कब्जा किये गये क्षेत्रों को खाली नहीं करने की स्थिति में किसी तरह की बात नहीं करने का फैसला लिया गया था) के ठीक उलट है। यह समझौता शक्तिशाली पड़ौसी के प्रति हमारे नरम रुख को दर्शाता है। इसी तरह जम्मू-कश्मीर, खालिस्तान, भारत में मानवाधिकारों की अवहेलना के सवाल, विश्व व्यापार संगठन के समझौते में सामाजिक धाराओं को शामिल करने, इत्यादि पर नई दिल्ली की धारणाएं अमेरिका की धारणाओं के ठीक उलट होने के बावजूद चुप्पी साध लेना विश्व शक्ति के सामने इसके आत्म समर्पणकारी दृष्टिकोण को प्रदर्शित करता है।

पाकिस्तान के साथ टकरावावादी और शीत युद्ध वाला आचरण करने के सम्बन्ध में स्थिति इससे स्पष्ट हो जाती है कि यह लगातार भारत-पाक दुश्मनी का प्रचार करता रहता है और 1947 के बाद जम्मू कश्मीर मसले पर तीन भारत-पाक युद्ध करवा चुका है।

इसकी सैन्यकरण पर निर्भरता का जहां तक संबंध है, इससे स्पष्ट हो जाता है कि जहां एक तरफ 1987 के बाद समस्त संसार 4 प्रतिशत औसत दर से सैनिक खर्च

घटा रहा है, दूसरी तरफ भारत-पाकिस्तान ने इसी समय के दौरान 20 प्रतिशत सैनिक खर्च बढ़ा दिया है। सैनिकीकरण पर देशों का वार्षिक खर्च 20 बिलियन डालर पहुंच चुका है। दोनों देशों में निपट गरीबी होने के बावजूद अपने से 25 गुना अधिक धनवान सऊदी अरब से दुगुने हथियार अन्तर्राष्ट्रीय मण्डी से खरीद रहे हैं। दोनों देशों में डॉक्टरों के मुकाबले सिपाहियों की संख्या छः गुना अधिक है, जबकि हमारी रोगों से ग्रसित जनसंख्या को डॉक्टरों की अत्यधिक आवश्यकता है। अपने मामूली संसाधनों को अपने लोगों के भले में खर्च करने के बजाय ये दोनों एक दूसरे के मानवीय संसाधनों को खत्म करने के लिए खतरनाक हथियारों के उत्पादन में धन खर्च कर रहे हैं। परन्तु जितना ही ये देश सैन्यकरण पर ज्यादा खर्च कर रहे हैं, उतने ही अधिक असुरक्षित बनते जा रहे हैं। इस शताब्दी के किसी भी वक्त से उनकी असुरक्षा अब ज्यादा है। भारत की विदेश एवं सुरक्षा नीति में अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं, यथा, चेचन्या, रवांडा और इसी तरह के अन्य मसलों पर कोई स्पष्ट नजरिया नहीं है। हमारा देश घटनाओं से पीछे चल रहा है। परन्तु अभी तक शीत युद्ध की धारणाओं में आकंठ रूप से डूबा हुआ है।

(ड़) धोखाधड़ी की संस्कृति

राष्ट्रीय प्रक्रिया की पांचवीं और महत्वपूर्ण वास्तविकता यह है कि इसकी संस्कृति एक तरफ सच्चाई, शांति, अहिंसा, समानता और न्याय के सार्वभौमिक मूल्यों की तोतारटंत लगाये रहती है, वहीं दूसरी तरफ वास्तव में अनगिनत दुर्गुणों, झूठों, धोखाधड़ियों, दोगली बातों, दोगले व्यवहार और रही-सही सभी गड़बड़ियों से भरी पड़ी है, संक्षेप में यह धोखाधड़ी की संस्कृति है।

उच्च राजनैतिक स्तर पर यह धोखाधड़ी की संस्कृति कहती कुछ और है तथा करती कुछ और या कहा कुछ जाता है और व्यवहार में किया कुछ और।

उदाहरण के तौर पर ये हमेशा प्रजातंत्र की कसमें खाते हैं, जबकि व्यवहार में ऐसा तरीका अपनाते हैं जिससे अपने से भिन्न विचारों को हर तरह से दबाने की कोशिश करते साफ नजर आते हैं। प्रलोभन देकर, कपटपूर्ण तरीके से या दमन के द्वारा विरोधी विचारों को दबाये जाने की संस्कृति पैदा हो गयी है, जैसे, नेहरू द्वारा एक तरफ लोगों में सहनशीलता की जनवादी भावना हृदयंगम करने की सलाह का देते रहने और दूसरी तरफ विरोधी पार्टियों या अपने आलोचकों को राष्ट्रद्रोही, फासिस्ट या विदेशी एजेंट होने का फतवा देने से स्पष्ट हो जाती है। इन्दिरा गांधी और नरसिंहराव द्वारा जनवादी उसूलों के प्रति अपनी वचनबद्धता की घोषणा करते रहना परन्तु वास्तव में विरोधियों को तोड़ने के लिए घूसखोरी जैसे पारंपरिक चालबाजी के हथकंडे अपनाने से जाहिर हो जाती है।

पुनः जबकि सार्वजनिक तौर पर धर्म-निरपेक्षता के पालन की समस्त पुण्य घोषणाओं के बावजूद ये साम्प्रदायिक ताकतों से हमेशा गठजोड़ बनाये रखते हैं। उदाहरणतया, नेहरू और उसके उत्तराधिकारियों के वक्त कांग्रेस आई ने केरल में मुस्लिम लीग के एक ग्रुप के साथ गठजोड़ बनाये रखा; 1967-68 के दौरान सी.पी.आई. और जनसंघ ने पंजाब और बिहार में साझा मंत्रिमंडल में हिस्सेदारी की थी; केरल में सी.पी.एम. ने 20 साल तक कांग्रेस विरोधी मुस्लिम लीग के एक ग्रुप के साथ साझा मोर्चा बनाये रखा, 1977-78 में जनता सरकार को सी.पी.एम. ने समर्थन दिया था, जबकि इस सरकार में जनसंघ भी एक सहभागी पार्टी थी और इसके दो नेता लालकृष्ण आडवाणी और अटलबिहारी वाजपेयी वरिष्ठ मंत्रियों के रूप में इस सरकार में थे; 1989-90 के दौरान वी.पी. सिंह शासन में जनता दल, भाजपा के साथ सी.पी.एम. का अघोषित संयुक्त मोर्चा कायम हो गया था; इमाम बुखारी या अन्य रूढ़िवादी धार्मिक या जातिवादी नेताओं का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए जनता दल नेताओं द्वारा बेतहाशा कोशिश करना; या भाजपा के दिग्गजों-लालकृष्ण आडवाणी व अटलबिहारी वाजपेयी द्वारा 1977 के चुनावों में जामिया मस्जिद में जाकर इमाम बुखारी का अपनी पार्टी के बारे में समर्थन प्राप्त करने की कोशिश करना, इत्यादि धर्मनिरपेक्षता के ठीक उलट उदाहरण हैं, पार्टियों के आपस में गठजोड़ करने में कोई बुराई नहीं है, अगर वे किसी न्यूनतम या अधिकतम कार्यक्रम के आधार पर गठजोड़ बनाये। परन्तु बिना किसी प्रोगाम के ऐसे गठजोड़ अनैतिक और खास करके भिन्न विचारधाराओं वाली पार्टियों के बीच गठजोड़ घोर अनैतिकता और सत्तालोलुपता के उदाहरण बनते हैं।

और आगे, जबकि एक तरफ शांति और अहिंसा को हमेशा अपना उद्देश्य घोषित करते हैं और इसे अपना मूलभूत सिद्धांत बताते हैं, परंतु व्यवहार में वे हमेशा युद्ध कार्यवाही में भाग लेते हैं और सैन्यकरण के उसूल को अख्तियार करते हैं। उदाहरण के लिए, नई दिल्ली द्वारा प्रत्येक विश्व मंच पर शांति और निशस्त्रीकरण के नारों पर लगातार जोर दिया जाता है, जबकि, वास्तव में इसने अपने पड़ोसियों के साथ चार युद्ध (तीन पाकिस्तान और एक चीन के साथ) किये हैं। पुर्तगालियों के गोवा पर नियत्रंण को हटाने के लिए सैनिक कार्यवाही की गई, तथा सिक्किम से इसके शासक को हटाने के लिए भी यही किया गया तथा इसने अपनी राष्ट्रीय प्रक्रिया में सैन्य मामलों को हमेशा ही सर्वोच्च प्राथमिकता दी।

आगे, यह रोजाना भ्रष्टाचार से लड़ने की बार-बार कसमें खाने के बावजूद इसकी शैली हमेशा भ्रष्टाचार में डूबे रहने और इस पर पर्दा डालने की रही है, जैसे, सभी उच्च राजनीतिज्ञ एक स्वच्छ सार्वजनिक जीवन स्थापित करने के वादे करते हैं

और वे व्यक्तिगत तौर पर जालसाजी और धोखाधड़ी, वोट बैंक, सौदों और भ्रष्टाचारियों के बचाव में लगे रहते हैं।

और आगे, एक तरफ ये देश के लोगों को त्याग के पाठ पढ़ाते रहते हैं, जबकि दूसरी तरफ अपने व्यवहार के अनुचित तरीकों से अथाह धन इकट्ठा करते हैं। सभी अपराधी तरीकों से सत्ता हासिल करते हैं और लोगों की कीमत पर ऐशो आराम का जीवन जीते हैं।

जनता के स्तर पर धोखाधड़ी की संस्कृति ने चौतरफा अनैतिक वातावरण पैदा कर दिया है। खाद्य पदार्थों में मिलावट, कम तोल, घटिया स्तर के सामानों की सारे देश में बाढ़ आ जाना, अवैध शराब, नशाखोरी और जुआखोरी राष्ट्रीय मनोरंजन बन गये हैं। रेलवे आरक्षण, किसी नाच गाने के शो, टेस्ट मैच, किसी प्रदर्शनी, सिनेमा हॉल में टिकटों की खरीद, स्कूलों, कॉलेजों और अस्पतालों में भर्ती, पानी, बिजली और टेलीफोन के कनेक्शन लेने, राशन कार्ड या गैस सुविधा, मकान या दुकान खरीदने में काला बाजारी का प्रचलन एक आम बात है। झूठी चिटफण्ड कम्पनियां, बोगस रोजगार दफ्तरों, झूठे विश्वविद्यालयों, जालसाजी, मुद्रा व्यवसायियों, हवाला फर्मों और पासपोर्ट तथा वीजा एजेंसियों द्वारा बेरोकटोक लोगों को लूटा जा रहा है। टैक्स-चोरी, लोगों से धन निचोड़ना, तस्करी, नशीली चीजों का अवैध व्यापार करना, विदेश व्यापार में तिकड़मबाजी, विदेशी बैंकों में काले धन को स्थानान्तरित करना, बैंक धोखाधड़ियां, प्रतिभूति घोटालों, स्टॉक मार्केट की धोखाधड़ियां बड़े आराम से फल-फूल रही हैं।

(च) राष्ट्रीय सहमति का टूटना

हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया की छठी महत्वपूर्ण वास्तविकता यह है कि हाल-फिलहाल इसकी सभी तरह की राष्ट्रीय सहमतियां चाहे रणनीतिक हों या अल्पकालीन, पूर्णतया टूट चुकी हैं। पार्टियों के स्तर पर कांग्रेस आई, भाजपा, रामो-वामो में से प्रत्येक भारत की राजनीति, आर्थिकता, विदेश नीति, परमाणु हथियारों, जम्मू कश्मीर मसले इत्यादि पर तथा यहां तक कि किसी एक भी अतिमहत्वपूर्ण राष्ट्रीय मसले पर एकमत नहीं हैं और इसकी हर मुद्दों पर अलग-अलग नीतियां हैं। वास्तव में ये प्रत्येक क्षेत्र में टकरावादी रास्ते पर चल रहें हैं। इसी प्रकार बड़े-बड़े समुदायों और सामाजिक ग्रुपों के बीच में भी सहमति की कमी है। इसका अर्थ है, हमारे राजनैतिक और सामाजिक ताकतों के बीच बहुत थोड़ी मनोवैज्ञानिक एकता है। ऐसी स्थिति हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया के सहज चलन में खतरनाक रुकावट है।

(छ) एक नए ऐतिहासिक युग का उदय

हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया की 7वीं महत्वपूर्ण वास्तविकता यह है कि ऐसे वक्त में जब पृथ्वी पर एक नए युग का प्रारम्भ हो रहा है, हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया संकट में फंस गई है।

इस युग का मूलभूत पहलू यह है कि जो राष्ट्रों का समुदाय 1940 से पहले अर्द्ध-स्वतंत्र राष्ट्रीय इकाइयों के रूप में गठित था वह आज अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय इकाइयों का एकीकृत रूप अख्तियार कर चुका है। एक अन्तरनिर्भर दुनिया का अर्थ है जहां एक भाग (देश) की गरीबी दूसरे भाग (देश) की सम्पन्नता को उलटे रूप से प्रभावित करती है। इसका अर्थ है कि यह ऐसी दुनिया है जहां सभी देशों के मसले साझे बन गये हैं और प्राथमिकताएं एक जैसी हो गई हैं। इस प्रक्रिया से कोई भी देश अपने आपको और अधिक समय तक अलग-थलग नहीं रख सकता। जितना जल्दी कोई देश अपने आपको इस अनिवार्य गति का अभिन्न अंग बना लेगा, उतना ही उसके लिए अच्छा रहेगा।

यह बदलाव कोई एक या दो दशक में नहीं हुआ है, परन्तु यह एक बहुत ही लम्बी (यह मानव समाज के प्रारम्भ से ही शुरू हूई) प्रक्रिया रही है जिसने प्रत्येक नये मानवीय दौर (यानि गण, कबीला, राजाओं के राज्य, राष्ट्र इत्यादि), में गति अख्तियार कर ली है।

अपने-अपने समय के मानवीय सामाजिक समूहों के बीच निरन्तर बढ़ते एकीकरण का आधारभूत कारण हमेशा बदलते जाने वाला सामाजिक श्रम विभाजन रहा है। 1945 के बाद के सामाजिक श्रम विभाजन ने विशेष तौर पर अत्यधिक एकीकरण पैदा कर दिया है। सामाजिक श्रम विभाजन (जिसमें मानसिक और भौतिक श्रेणी के कार्य और सामाजिक जीवन के राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक इत्यादि सभी क्षेत्र शामिल होते हैं) किसी निश्चित वैज्ञानिक-तकनीकी रचनातंत्र और उस वक्त के सामाजिक ज्ञान से पैदा होता है और बदले में उसे रूपांतरित करते हुए खुद भी निरन्तर परिवर्तित होता रहता है।

शीत-युद्ध का युग समाप्त होने के बाद अन्तरनिर्भर राष्ट्रों के समुदाय की नई पुनः संरचना एक तीन तरफा प्रक्रिया के द्वारा चल रही है। प्रथमतः एक के बाद दूसरे नए अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे डब्ल्यू टी ओ, पर्यावरण आयोग, एन.पी.टी. समूह गरीबी निवारण पर जनसंख्या आयोग, और इसी तरह के अन्य संगठनों (विश्वव्यापी मीडिया दिग्गज, ट्रांसनेशनल कम्पनियों के गठजोड़, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा बाजारों इत्यादि) का उदय हो रहा है। द्वितीयतः नए क्षेत्रीय समुहों (कैरीबियन समुदाय, पूर्वी अफ्रीकन सहयोग संघ इत्यादि) का दुनिया के प्रत्येक क्षेत्र में गठन हो रहा है, जबकि पुराने

क्षेत्रीय संगठन (युरोपीय समुदाय, नाफ्टा, एपेक, एशियान, सार्क इत्यादि) और अधिक मजबूत हो रहे हैं। तृतीयत: विभिन्न बहुजातीय देशों में जो क्रमश: अपनी नस्ली, सांस्कृतिक या भाषाई पहचानों की समस्याओं को ठीक हल नहीं कर पा रहे हैं, वे देश भी अपने आपको दूसरे तरीके से गांव की तरह गठित हो रही सार्वभौमिक व्यवस्था (ग्लोबल विलेज) के साथ सक्रियता से जोड़ रहे हैं (उदारणतया, भूतपूर्व सोवियत धड़े की वर्तमान 27 इकाइयां)।

स्पष्टतया, यह तीन तरफा पुन: संरचना की प्रक्रिया मुख्य तौर पर सार्वभौमिक (ग्लोबलाइजेशन) की प्रक्रिया को मजबूत कर रही है तो दूसरी तरफ राष्ट्रीय राज्यों की सम्प्रभुता को कम कर रही है। इससे एक तरफ उत्पादन, वित्त, व्यापार, संचार इत्यादि की पुन: संरचना के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीयकरण हो रहा है तो दूसरी तरफ राष्ट्रों के टुकड़े हो रहे हैं क्योंकि अल्पसंख्यक समुदायों को बहुसंख्यकवाद पर चलने वाले शासकों (अल्पमत पर बहुमत के शासन वाला राष्ट्रीय डेमोक्रेसी का पारम्परिक उसूल का आधार) द्वारा समान अधिकारों से वंचित किया जाता है और किया जा रहा है।

यह भी सम्भव है कि मिश्रित राष्ट्रों को (जिनमें कनाडा जैसा जनवादी देश शामिल हो सकता है) भी देर-सबेर अलगाववादी चुनौतियां मिल सकती है। सी.आई.ए. ने हाल में भारत-पाकिस्तान सहित 16 देशों को इसी श्रेणी में रखा है। बहुत सारे समुदाय जैसे कुर्द, बास्क, तमिल, तिब्बती इत्यादि ने अपने-अपने देशों का निर्माण करने के लिए लड़ाइयां चालू कर रखी हैं। हो सकता है एक दिन गैर प्रवासी हंगेरियन, तुर्की, ग्रीक, चीनी, भारतीय भी इसी रास्ते को अख्तियार कर लें। आज ग्लोबल परिप्रेक्ष्य अपनाना अति आवश्यक है। यही देशों की अस्थिरीकरण और प्रभावी विकास की समस्या का हल करने का रास्ता और सुरक्षा कवच साबित हो सकता है।

नई विश्व वास्तविकता को भारत द्वारा बहुत कम और बहुत देरी से प्रत्युत्तर दिया जा रहा है।

दुनिया एकीकरण की तरफ बढ़ रही है। इसने पर्यावरणीय, जनसंख्या संबंधी, लिंग समानता, गरीबी-उन्मूलन, साझा बाजार संबंधी नई समस्याओं को उजागर किया है। इन समस्याओं को हल करने की क्षमता राष्ट्रीय राज्यों में नहीं है। पुराने तीनों राष्ट्रीय मॉडल—पश्चिमी उदारवादी, कम्युनिस्ट और मिश्रित व्यवस्था—लगभग नकारा साबित हो चुके है। इसी तरह सभी शीत युद्ध काल के टकरावावाद पर आधारित दृष्टिकोण—यानि उत्तर-दक्षिण विभाजन, सभ्यताओं का टकराव, पूर्व बनाम पश्चिम, नई विश्व व्यवस्था के लिए पश्चिम को केन्द्र मानने की धारणा— आज के विश्व में खरे नहीं उतरते हैं। इसीलिए आज एक नए मॉडल की खोज व निर्माण की आवश्यकता है।

ग्लोबलाइजेशन की नई प्रक्रिया का दूसरा पहलू विकसित देशों की आर्थिकताओं

की गिरावट है। पिछले दो दशकों में विकसित देशों यहां तक जापान तक को भी धीमी वृद्धि दर, बढ़ती बेरोजगारी (यूरोपिय समुदाय में 11 प्रतिशत से अधिक बेरोजगारी) तथा मन्दी के दौर ने जकड़ लिया है। इन आर्थिकताओं में सुझाए जाने वाले पारम्परिक आर्थिक उपाय—यानि बजट संतुलन और ब्याज दरों को कम करके वृद्धि और रोजगार को बढ़ाने या ब्याज दरों को बढ़ाकर और मुद्रा की आपूर्ति घटाकर महंगाई पर नियंत्रण करना इत्यादि—नकारा साबित हो चुके हैं। इसका अर्थ है कि पारम्परिक अर्थशास्त्र द्वारा बाजार, निजीकरण, उत्पादकता और लाभ को उच्चतम स्तर तक बढ़ाने पर ध्यान केन्द्रित रखने तथा मानवीय संसाधनों की अवहेलना करने का दृष्टिकोण अब बेअसर हो गया है।

ग्लोबलाइजेशन की नई प्रक्रिया का एक और पहलू यह है कि पूर्वी एशियाई आर्थिक व्यवस्थाओं ने चमत्कारिक आर्थिक कारगुजारी दिखाई है। तीन दशक पहले पूर्व एशियाई देश विश्व के किसी भी कमजोर क्षेत्र के समान ही गरीब देश थे, परन्तु इसी समयावधि के दौरान इन्होंने आर्थिक चमत्कार कर दिखाए हैं। इन देशों की वृद्धि यूरोप, दक्षिण अमेरिका और दक्षिण एशिया के देशों की तुलना में तीन गुना अधिक, जबकि अफ्रीका के सब सहारा क्षेत्र से पांच गुना अधिक थी। जापान, दक्षिण कोरिया, ताईवान, हांगकांग, सिंगापुर की प्रति व्यक्ति आय चार गुना और मलेशिया, थाईलैंड, इण्डोनेशिया की आय तीन गुना बढ़ गई है। चीन और वियतमान की वृद्धि दर दो गुनी और कई बार तीन गुनी तक बढ़ी है। पूर्वी यूरोपीय देशों ने प्रत्येक सामाजिक क्षेत्र में नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। आज पूर्वी एशिया दुनिया की आर्थिक वृद्धि का केन्द्र बन गया है।

ग्लोबलाइजेशन की नई प्रक्रिया के संबंध में कष्टदायक पहलू यह है कि एक तरफ नई और पुरानी समस्याओं के बोझ तले यह व्यवस्था दबी जा रही है तो दूसरी तरफ हमारी इस धरती पर निवास कर रहे जैव जगत को दो सबसे अधिक खतरनाक चुनौतियों—यानि पर्यावरणीय असंतुलन और जनसंख्या विस्फोट—से गम्भीर खतरा पैदा हो गया है। इन समस्याओं को पिछली एक शताब्दी में मनुष्य ने ही पैदा किया है।

कुल मिलाकर उपरोक्त वर्णित तथ्य दर्शाते हैं कि देश की सभी कमजोरियां तीव्र गति से बढ़ रही है। जितनी अधिक कमजोरियां बढ़ेंगी उतनी ही अधिक स्थिरता में कमी आयेगी और देश की एकता कमजोर पड़ती जायेगी।

II. भारत की सामाजिक व्यवस्था में गड़बड़ी के कारण

आज हमारे देश और इसके 95 करोड़ लोगों को अनिश्चितता और निराशा की बातें नहीं बल्कि एक सटीक अवधारणा की जरूरत है जो इस गड़बड़ी के कारण को स्पष्ट कर सके।

ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि आम तौर पर चीजों की गलत कार्यप्रणाली या गड़बड़ परिस्थितियों के पीछे उस वक्त मौजूद सामाजिक वास्तविकताओं (चाहे वह अवधारणा, कार्य पद्धति, संगठन या कोई अन्य सामाजिक घटनाक्रम के बारे में हो) से तालमेल नहीं बैठ पाने का ही नतीजा होता है। ऐसा ही मामला हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया के संकट का है।

1947 से पहले गांधीवादी राष्ट्रवाद और 1947 के बाद नेहरूवादी मॉडल ठीक काम नहीं कर सके, इसका मुख्य कारण भारत की बहु-जातीय, बहु सांस्कृतिक, बहु धार्मिक और बहु भाषाई वास्तविकता के साथ इन दोनों का तालमेल नहीं बैठ पाने में निहित है। यह मूलभूत भारतीय वास्तविकता एक ऐसी उचित और न्यायिक सामाजिक व्यवस्था की मांग करती है जिसमें सभी तरह के सामाजिक समूहों और वंचित हिस्सों को राजनैतिक सत्ता, आर्थिक संसाधनों, सुरक्षा तंत्र, राष्ट्रीय मान्यताओं, मानव अधिकारों इत्यादि सभी क्षेत्रों में बराबर के अधिकार दिये जावें। 1947 से पहले गांधीवादी राष्ट्रवाद और 1947 के बाद नेहरूवादी मॉडल ने इन समूहों के ऊपरी तबके को दायरे में ले लिया परन्तु इन समूहों के आम लोगों की आकांक्षाओं को पूरा नहीं किया। ये दोनों मॉडल जिन मूलभूत अवधारणाओं पर कार्य कर रहे थे उसका नतीजा एक न एक दिन बर्बादी में निकलना ही था, पहले सिद्धांत की असफलता 1947 में हो गई, दूसरे सिद्धांत की हार हवाला विस्फोट के बाद से शुरू हो चुकी थी।

1947 के पहले की सभी पार्टियों (मुस्लिम लीग को छोड़कर) ने गांधीवाद को भारतीय राष्ट्रवाद के रूप में मान्यता दी थी, जबकि नेहरूवादी मॉडल के धर्म-निरपेक्षतावाद, गुटनिरपेक्षता, सार्वजनिक क्षेत्र की अवधारणा के बारे में भारत की 1947 के बाद की सभी पार्टियों ने 1989 के बाद जाहिरा तौर पर सहमति बनाए रखी और उस पर चलती रही हैं। 1989 के बाद ही भाजपा ने स्पष्ट तौर पर अपने आपको हिन्दुत्व के साथ जोड़ लिया तथा समाजवादियों और कम्युनिस्टों ने (मार्क्सवादी तर्क के कमजोर होने के बाद) मंडलवाद के पीछे शरण ले ली।

(क) 1947 के पहले का गांधीवादी राष्ट्रवाद

हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया का पुनर्मूल्यांकन दर्शाता है कि किसी वास्तविक एजेण्डा के आधार पर राष्ट्रीय सम्बद्धता हासिल करने में इसके सिद्धान्त और व्यवहार निरन्तर असफल रहे हैं। 1947 से पहले गांधीवादी राष्ट्रवाद ने भारतीय लोगों को अपने एजेण्डा (बहुसंख्यक राष्ट्रवाद के आधार पर एकताबद्ध रखने की दिशा) के आधार पर एकताबद्ध करने के लिए 'हिन्दू-मुस्लिम-सिख और इसाई की एकता अमर रहे'[1]

1. यह एकता का नारा जिसमें सभी समुदायों के लिए समान अधिकारों को सुनिश्चित करते हुए राष्ट्र निर्माण का कोई ठोस प्रोग्राम नहीं है। यह केवल बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक ग्रुपों की एकता का परिचायक नारा है।

का नारा दिया। इस सिद्धांत के काम करने का तरीका एक व्यक्ति के हाथ में, या उच्च स्तर पर सत्ता केन्द्रित करना रहा है। उदाहरणतया कांग्रेस द्वारा 1919-21, 1930-34, 1942-44 और इसी तरह कई बार विभिन्न जन आंदोलनों की बागडोर अकेले गांधीजी को सौंपी, जिसमें गांधीजी ने तानाशाह की तरह आंदोलनों को शुरू व बंद करने के फैसले अकेले ही लिए।

गांधीवादी एजेण्डा के तहत भारत में विभिन्न जातियों और समुदायों को देश की एकता का आधार बनाने पर हमेशा से जोर दिया गया। इसने मुश्किल से ही कोई संवैधानिक, कानूनी, आर्थिक, सांस्कृतिक, विदेश, सुरक्षा संबंधी इत्यादि किसी ठोस मसले को उठाया हो, जिस पर भिन्न-भिन्न सामाजिक समूहों के लोग गोलबंद हो सकते और उन मसलों को मुख्य आधार बिन्दु बना सकते। हिन्दू, मानवतावाद के दर्शन से मार्गदर्शन पाकर गांधीवादी एजेण्डा कुछ आम हिन्दू मानवतावादी नारों—यानि सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह (सच्च का आग्रह), इत्यादि—तक ही सीमित रहा है। इस प्रकार अस्पष्ट और संदिग्ध गांधीवादी एजेण्डा (कार्यक्रम) अल्पसंख्यकों के हितों से मेल नहीं बैठा सका। इसने केवल बहुसंख्यकों के उद्देश्य का प्रतिनिधित्व किया। यह अल्पसंख्यकों को अपनी तरफ नहीं खींच सका। जिन्ना के नेतृत्व में मुस्लिम लीग ने गांधी के बहुसंख्यक समर्थक विचारों पर हमला करते हुए भारतीय मुसलमानों को पवित्र इस्लाम के एजेण्डे पर एकताबद्ध करने में कामयाबी हासिल कर ली। परिणामस्वरूप साम्प्रदायिक विचारधाराओं और तरीकाकारों का प्रचलन इतना अधिक बढ़ गया कि इन्होंने 1947 में भारत का विभाजन कर दिया।

(ख) 1947 के बाद का नेहरूवादी मॉडल

1947 के बाद नेहरूवादी मॉडल तीन मुख्य धाराओं को समेटे हुए हैं, यानि, (क) गांधीवादी बहुसंख्यक राष्ट्रवाद और सत्ता के केन्द्रीकरण का इसका तरीका, (ख) ब्रिटिश संसदीय राजनैतिक प्रणाली और (ग) समाजवादी आर्थिक योजना—यद्यपि इसमें उपनिवेशी मॉडल की तुलना में कई प्रगतिशील पहलू होते हुए भी कई मूलभूत कमजोरियां थी जिनकी वजह से यह मॉडल काम नहीं कर सका और निष्फल हो गया। इस मॉडल के सर्वांगीण पहलुओं पर हमें गहराई से नजर डालने की आवश्यकता है।

प्रथमत: भारतीय संविधान का मुख्य पहलू दो तरफा दृष्टिकोण से परिलक्षित होता है, यानि एक तरफ केन्द्रीकृत (एकात्मक) संघ का दृष्टिकोण और दूसरी तरफ बहुसंख्यक राष्ट्रवाद (या धर्मनिपेक्षतावाद) का दृष्टिकोण, यह भारत की बहु आयामी वास्तविकता के साथ मेल नहीं खा पाया है। यहां की बहुआयामी वास्तविकता मांग करती है कि इसे ऐसे पूर्ण संघीय, विकेन्द्रीकृत मानवतावादी व्यवस्था (जो बहुसंख्यक

और अल्पसंख्यक से बराबर का व्यवहार करे) का निर्माण किया जाय। इस भारतीय वास्तविकता के ठीक उलट भारतीय संविधान का सत्ता को केन्द्रीकृत करने वाला पहलू भारतीय राज्य को अत्यधिक शक्ति प्रदान करता है। भारत की कार्यपालिका को विशेष तौर पर अधिक अधिकार दिये गये हैं। जबकि भारतीय संघ के राज्यों को कुछ सहायक अधिकार प्रदान किये गये हैं और जनता को केवल 5 साल में एक वोट देने का मूलभूत निरीक्षणात्मक अधिकार ही दिया गया है। बहुसंख्यकवादी संवैधानिक पहलू एक तरफ बहुसंख्यक समुदाय के लिए भावनात्मक रियायतें (जैसे अ.जा.अ.ज. जाति और पिछड़ी जाति को विशेष अधिकार देना, भारत में जन्मे धार्मिक विश्वासों, यानि बुद्ध, जैन और सिख धर्म को हिन्दू धर्म का ही अंग मानना और प्राचीन एवं वर्तमान बहुसंख्यक मान्यताओं को अंगीकार करना) प्रदान करता है। जबकि दूसरी तरफ अल्पसंख्यकों को ऐसी कोई भी भावनात्मक रियायत प्रदान नहीं करता और साथ ही सेवाओं, आर्थिक रियायतों, भाषा इत्यादि के मामलों में उनके खिलाफ भेदभाव करता है।

द्वितीयत:, यह संवैधानिक दृष्टिकोण, ब्रिटिश संसदीय टकरावावादी प्रणाली से जुड़ कर हमारी राजनीति में तीव्र राजनैतिक विरोध के तत्व शामिल कर देता है। इसी दृष्टिकोण ने लोगों के सभी हिस्सों में उचित या अनुचित किसी भी तरीके से सत्ता हासिल करने की मनोदशा तैयार कर दी है।

तृतीयत:, भारत के कानूनी ढांचे में विधायकों, सांसदों, जजों, नौकरशाहों, फौज और पुलिस को सत्ता और सुविधा के विशेष अधिकार प्रदान किए गए हैं। आधुनिक पूंजी के मालिकों और उच्च आय वाली सामाजिक श्रेणी को विशेष आर्थिक और वित्तीय अधिकार प्रदान किए गए हैं। मध्यम वर्ग की बड़ी श्रेणी को आर्थिक रियायतें दी गई हैं और अवांछित तत्वों को कानून के फंदे से बचने के लिए चोर दरवाजे भी रखे हैं। यह सिद्धांत कानून के सामने सबकी समानता के आधारभूत जनवादी उसूल के खिलाफ है तथा सामाजिक न्याय के मूलभूत उसूल की अवहेलना करता है। यह सभी कमजोर वर्गों से भेदभाव करता है—जैसे महिलाओं, बच्चों, असंगठित शहरी और कृषि मजदूरों एवं निर्बल, गरीब और निर्भर व्यक्तियों के संबंध में बने हुए कानूनों से स्पष्ट हो जाता है, जबकि इन वर्गों के खिलाफ उच्च वर्गो को कानून में संरक्षण प्राप्त है। इसीलिए इस कानूनी ढ़ाचे में सत्ता के दलाल, सम्पत्तिवान और भ्रष्ट लोग जो चाहें वह बड़े ही धड़ल्ले के साथ गड़बड़ी कर देते हैं। ऐसी व्यवस्था में अच्छे लोग निरुत्साहित होते हैं और झूठे लोगों को बढ़ावा मिलता है।

चतुर्थ, भारतीय सरकार संवैधानिक और कानूनी तौर पर लोगों के प्रति जवाबदेह नहीं है और निरंकुश तरीके से काम करती है। इसके लिए यह अपने तीन राजकीय

संगठनों—कार्यपालिका, विधानपालिका और न्यायपालिका—के द्वारा भारतीय राज्य की केन्द्रीकृत सत्ता का संचालन करती है।

पंचम, टकरावावादी या शीत युद्ध निर्देशित 1947 के बाद की नेहरूवादी विदेश नीति ने अनुभवहीन भारतीय अर्थव्यवस्था पर असहनीय वित्तीय भार डाले हैं, जिससे इसके सभी असंतुलन तीव्र हुए हैं और यह एक संकट से दूसरे संकट में धकेली गई है।

षष्टम, सभी पार्टियों के उच्च नेता उचित या अनुचित किसी भी तरीके से सत्ता हासिल करने को अपना उद्देश्य बनाए हुए हैं। ये नेता आम तौर पर बेईमान राजनैतिक तरीके अख्तियार करते हैं तथा धन बल या भुजबल के साथ-साथ धोखाधड़ी और जालसाजी को आधार बना सत्ता प्राप्त करते हैं। अपने चुनावी खर्च का झूठा हिसाब-किताब प्रदान करके विधायी जीवन की शुरूआत करते हैं। ये लोग सन्देहास्पद स्रोतों से काला धन प्राप्त करने में कोई शंका महसूस नहीं करते हैं। माफिया गिरोहों के साथ गुप्त और गंदे समझौते करते हैं। आम जनता की धार्मिक और जातीय भावनाओं का नाजायाज फायदा उठाते हैं और लोगों से झूठे वायदे करते हैं। पार्टियों को तोड़ते हैं और गढ़ते हैं तथा 'आयाराम गया राम' की राजनीति का अनुसरण करते हैं।

सप्तम, एक बहुत बड़ी संख्या ऐसे ईमानदार राजनीतिज्ञों, सरकारी कर्मचारियों तथा आम लोगों की है जो हर तरह से और हर कीमत पर अपने आपको भ्रष्टाचार से दूर रखते हैं और वर्तमान में प्रचलित सामाजिक माहौल से प्रभावित नहीं होने देते हैं। ये लोग अपराधीकरण या भ्रष्टाचार के प्रति किसी तरह की घृणा का अहसास नहीं करवाते हैं और अवांछित तत्वों (राजनैतिक अथवा गैर राजनैतिक) के खिलाफ आवाज उठाने में हिचकिचाते हैं।

अष्टम, भारतीय मीडिया की भूमिका मिली-जुली है। इसमें सरकारी इलेक्ट्रोनिक मीडिया शासक धड़े द्वारा निर्देशित होता है जो वास्तविकता की तस्वीर को बढ़ा-चढ़ा कर पेश करता है जहां तक गैर सरकारी प्रेस मीडिया का संबंध है, इसके अधिकतर संवाददाता लोगों के मामलों को ऊंचा उठाते हैं और व्यवस्था की कमजोरियों को उजागर करके राष्ट्रीय हितों की सेवा करते हैं, जबकि कुछ निहित स्वार्थवश और दोषपूर्ण संवैधानिक दृष्टिकोण एवं कानूनी ढांचे के समर्थक होने के कारण आम तौर पर शासक समूह का ही समर्थन करते हैं और वर्तमान दौर की प्रचलित बेईमान राजनीति को बढ़ावा देते हैं और वे जनता के प्रति जवाबदेह नहीं हैं।

नवम्, सत्ता हथियाने एवं तिकड़मबाजी वाले परिप्रेक्ष्य से भारतीय जनता की मनोदशा ग्रसित हो चुकी है तथा साथ ही जनता का आम चेतना का स्तर भी नीचा है, अत: ऐसी दशा में बहुआयामी व्यवस्थागत कमजोरियों पर जनता का प्रभावपूर्ण नियंत्रण नहीं है।

दशम् 1945 के बाद देशों के बीच उभरी अन्तरनिर्भरता वाली नई विश्व-वास्तविकता ने अन्तरमुखी और टकरावादी नेहरूवादी मॉडल को दिन-प्रतिदिन अधिक से अधिक गैर-प्रभावी बनाते हुए आज इसे पूर्णतया अप्रासंगिक बना दिया है।

ग्यारहवां, 1989 के बाद के दो राष्ट्रीय मॉडल—भाजपा का हिन्दुत्व जो भारतीय राज्य का आक्रामक हिन्दुत्वकरण करना चाहता है और रामो-वामो का मण्डलवाद, जो भारतीय राज्य को खाड़कू जातिवाद के आधार पर गठित करना चाहता है। रामो-वामो जन्म पर आधारित जातिवादी इकाई को सामाजिक न्याय प्रदान करने का आधार बनाते हुए दलित और पिछड़ी जातियों को न्याय देने का उसूल अपनाकर राष्ट्रीय प्रक्रिया में साम्प्रदायिकरण, जातिवादीकरण को बढ़ावा देता है और परिणामस्वरूप अपराधिकरण को और अधिक गति मिली है।

(ग) भारतीय ऐतिहासिक अनुभव

गांधीवादी राष्ट्रवाद और नेहरूवादी मॉडल का आधार (इसी तरह आर.एस.एस. और भाजपा के हिन्दुत्व की दिशा) प्राचीन भारत को मानव सभ्यता का उच्चतम रूप मानने वाला एक जैसा ऐतिहासिक दृष्टिकोण है। इसके मुताबिक प्राचीन सभ्यता का सही उच्चतम रूप मानवीय सभ्यता की अन्तिम मंजिल हो सकती है तथा इसी मंजिल तक मानवीय सभ्यता पुनः विकसित हो सकती है। इसलिए इन दोनों सिद्धांतों के मुताबिक जो कुछ हम करते हैं वह सही है और जो दूसरे करते हैं वह गलत है।

ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि भारतीय राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों की तरह महान मनुष्य समुदाय का एक अंग है। यद्यपि, आज विश्व समुदाय की प्रत्येक राष्ट्रीय इकाई का विकास उसके निश्चित भू-सामाजिक हालातों में हुआ है और विभिन्न सामाजिक समुदायों और ग्रुपों के लोगों ने एक दूसरे को सीखने-सिखाने और लेने व देने के उसूल पर चलते हुए विकास पाया है। प्रत्येक देश ने चाहे वह छोटा है या बड़ा विश्व सभ्यता में योगदान किया है और बदले में बराबर हिस्सा प्राप्त किया है। भारत भी विश्व का एक अंग होने के नाते इस आम नियम का अपवाद नहीं हो सकता, इसने विश्व को काफी कुछ दिया है और बदले में बहुत कुछ पाया है।

इसके वर्तमान ढांचे में भारत की अवधारणा न तो किसी भौगोलिक पहलू और न ही किसी सांस्कृतिक, धार्मिक या नस्ली घटनाक्रम का परिणाम है, न ही यह किसी धर्म ग्रंथ में उल्लेख का परिणाम है, क्योंकि खुद पारम्परिक धर्म ग्रंथों के अन्दर एक भी शब्द ऐसा नहीं है जो भारत का द्योतक हो। प्राचीन ग्रंथों में उपयोग की गई शब्दावली—ब्रह्मवर्त, आर्यवर्त, भारतवर्ष, मध्यदेश, उत्तरपथ, अपरांत, पूर्व देश, दक्षिणपथ—किसी भारत देश की अभिव्यक्ति नहीं करती है। इस प्रकार भारत न तो कोई ईश्वर प्रदत्त व्यवस्था है, न ही किसी विशिष्ट संस्कृति का मूर्त रूप है।

एक भारत की अवधारणा न तो एक दिन का काम है न ही कुछ दशकों का बल्कि यह शनैः शनैः शताब्दियों के दौरान उपजा है। भारत सभी पूर्वजों—चाहे वे यहां के मूल निवासी हों या बाहर से आये हों—ने इसके निर्माण में योगदान दिया। इसे आदिम मानवों के छोटे-छोटे समूहों से विकसित करके वर्तमान राष्ट्रत्व के स्तर तक पहुंचाया। एक निश्चित निरन्तरता के साथ इस भूखण्ड पर निवास करने वाली अनगिनत पीढ़ियों ने दृढ़ मेहनत करते हुए इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाया। यह दावा करना हास्यास्पद होगा कि हमारे पूर्वज भी हमारी तरह ही सोचते थे। यद्यपि, शब्दों, सजीव चित्रणों, रिवाजों के द्वारा अभी तक हजारों साल बाद भी हम उनसे स्पष्ट तौर पर जुड़े हुए हैं।

यह तो केवल 1757 से 1947 तक का युग था जब कुछ निश्चित भू-सामाजिक हालात (वस्तुगत और मनोगत दोनों तरह के) पैदा हुए और उभरे, जब इतिहास में पहली बार भारतीय राष्ट्रवाद के उभरने के लिए वैचारिक, प्रणालीगत और संगठनात्मक उसूलों ने शक्ल अख्तियार की। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन की वस्तुगत वास्तविकता ने ही भारतीय लोगों की मानसिक एकता की आवश्यकता को पैदा किया। पश्चिमी राष्ट्रीय तर्कसंगतता से सीखकर भारतीयों ने अपने आपको राष्ट्रीय आधारों पर संगठित करना शुरू किया। परन्तु उनके इस रास्ते में पारम्परिक अन्धराष्ट्रवादी ऐतिहासिक दृष्टिकोणों की बेड़ियों ने हमेशा ही बाधा डाली है।

(घ) हमें अपनी गलतियों पर ध्यान देने की जरूरत है

अपराधों में वृद्धि, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद और हिंसा, मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों का कुप्रबन्ध, अकुशल आर्थिकता, शीत युद्ध निर्देशित विदेश नीति, धोखाधड़ी की संस्कृति, राष्ट्रीय सहमति का टूटना, नई ऊभर रही विश्व वास्तविकता की अवहेलना, जैसी हमारी खुद की बुराईयों के लिए मात्र पाकिस्तान, अल्पसंख्यवाद, मुस्लिम रूढ़िवाद, उच्च जातिवाद, ब्रिटिश संसदीय प्रणाली, आधुनिकीकरण, सार्वजनिक क्षेत्र इत्यादि पर दोष लगाने का तरीका गंभीर सामाजिक समस्याओं को हल करने का तरीका नहीं है। यह तो वास्तविकता को, सच्चाई को झूठ में बदलने का रास्ता है।

III. भारत की सामाजिक व्यवस्था को ठीक करने का कार्यक्रम

निश्चित ही, भारत के सामने कोई संकट खड़ा नही हो सकता अगर हम खुद अपने लिए संकट खड़ा न करें। हमारी अधिकतर ऐतिहासिक रुकावटें आधुनिक, मध्यकालीन या प्राचीन हमने खुद ही पैदा की है। मुश्किल से कुछ ही ऐसी रुकावटें रही हैं जिनके लिए कुछ बाहरी पहलू जिम्मेदार हो सकते हैं।

(क) पुराने फार्मूले काम नहीं आयेंगे

निश्चित ही भारत इस चौतरफा संकट से मुक्त हो सकता है। अगर यहाँ पर 3 प्रतियोगी राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय धाराओं—यानि काँग्रेस आई का नरम हिन्दुवाद (या बहुसंख्यक पक्षीय धर्मनिरपेक्षतावाद) और नरम मंडलवाद, भाजपा का आक्रामक हिन्दुत्व और रामो-वामो का खाड़कू दलित जातिवाद—में से सभी पुराने पड़ चुके सामाजिक सिद्धांत असफल सिद्ध हो चुके हैं और परिणामस्वरूप ये हमें एक संकट से दूसरे संकट में धकेल रहे हैं। ये सभी सिद्धांत टकराव से विकास करने की सामाजिक प्रणाली पर चल रहे हैं इसीलिए आज के अन्तरनिर्भर राष्ट्रों वाली दुनिया की सहमति पर आधारित विकास की अवधारणा को पूरा नहीं कर सकते हैं।

नि:संदेह, भारत एक संकट मुक्त और एक अच्छी सामाजिक इकाई बन सकता है, अगर यह दो तरफा वास्तविकता पर आधारित पुनर्निर्माण के कार्यक्रम को अपना ले। इसके लिए एक तरफ सभी वर्तमान राष्ट्रीय चुनौतियों को समुचित प्रत्युत्तर दे और दूसरी तरफ ग्लोबलाइजेशन के नए युग से उत्पन्न हुए सभी ग्लोबल मसलों को उचित ढंग से हल करने का रास्ता अपनाए। निश्चित तौर पर, हमारे सभी पारम्परिक विकल्प — जैसे गांधीवादी राम राज्य, जे.पी. की सम्पूर्ण क्रांति, पुनरुज्जीवित गांधीवादी मॉडल, राष्ट्रपति प्रणाली, राष्ट्रीय सरकार, भाजपा विरोधी मोर्चा, कांग्रेस विरोधी गठबंधन, इत्यादि—इन संकटों को हल नहीं कर सकते हैं, जिनको तीन प्रचलित राष्ट्रीय मॉडलों ने उत्पन्न किया है और न ही ये मॉडल ग्लोबलाइजेशन के नए युग की सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।

यह निश्चित है कि विश्व में मान्यता प्राप्त पुराने राष्ट्रीय सिद्धांतों—बाजार निर्देशित पश्चिमी उदारवाद, सार्वजनिक क्षेत्र समर्थक कम्युनिस्ट और मिश्रित किस्म—आज अपनी उपयोगिता खो चुके हैं। उपर्युक्त सभी द्वारा पूर्व में सकारात्मक भूमिका अदा करने के बावजूद अब ये गिरावट की तरफ हैं और उनके द्वारा उत्पन्न की गई नई चुनौतियों—पर्यावरण प्रदूषण, जनसंख्या विस्फोट, आर्थिक, राजनीतिक सांस्कृतिक विकृतियों, इत्यादि—का सामना करने में सक्षम नहीं हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि नई आवश्यकता के लिए किसी उचित उदाहरण की अनुपस्थिति में सभी राष्ट्र इन्हीं पुराने मॉडलों के बीच झूल रहे हैं, परन्तु किसी को भी रास्ता नहीं मिल रहा है। हर एक कुछ नए की खोजबीन कर रहा है।

इसीलिए, हम पुनर्निर्माण के नए कार्यक्रम के लिए किसी भी घरेलू या दुनिया को स्वीकृत फारमूलों को नहीं अपना सकते हैं। हमें एक तरफ सभी पुराने घरेलू या बाहरी अनुभवों से सीखना चाहिए तो दूसरी तरफ सीखो और कोशिश करो का वैज्ञानिक तरीका अपनाकर नई खोज करनी चाहिए।

(ख) भारत का नया पुनर्गठन कार्यक्रम

नए पुनर्गठन कार्यक्रम का प्रारम्भिक बिन्दु इसके दो तरफा मूलभूत उसूलों—लक्ष्य और इसको हासिल करने के मार्ग—की पहचान करना है। साध्य और साधन के तौर पर दोनों समान महत्व रखते हैं और अभिन्न रूप से एक दूसरे पर अन्तरनिर्भर हैं।

समाजशास्त्रीय तौर पर, एक निश्चित सामाजिक इकाई का लक्ष्य अपने निश्चित सामाजिक श्रम विभाजन से पैदा हो रहे सम्पूर्ण सामाजिक प्राकृतिक हितों को पूरा करना है जबकि इस उद्देश्य की रक्षा करने, उसे स्थाई तौर पर हासिल करने और उसे आगे बढ़ाने के तरीके इसके मार्ग का निर्माण करते हैं।

इस भूमिका से प्रारम्भ करते हुए किसी भी अन्य देश की तरह भारत का दीर्घकालीन लक्ष्य एक ग्लोबल मानव समाज की स्थापना करना होना चाहिए, जिसकी घटक इकाइयां पुन: संगठित क्षेत्रीय समुदाय होने चाहिए।

एक तरफ अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्य के बतौर भारत का पुनर्गठन करने का तो दूसरी तरफ कदम-ब-कदम दक्षिण एशिया में अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्यों का एक क्षेत्रीय समुदाय का निर्माण करने का अल्पकालीन लक्ष्य होना चाहिए।

इन दोनों दौरों में जनवादी सहमति कायम हुए लोगों को शक्तिशाली बनाने का रास्ता ही उपर्युक्त साध्यों को हासिल करने का साधन होना चाहिए

ऐसे समाज के निर्माण के लिए निम्नलिखित मुख्य आवश्यक तत्व (सिद्धांत) शामिल किए जा सकते हैं—

किसी भी अन्य दूसरी सामाजिक इकाई की तरह ही एक अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्य का प्रथम आवश्यक तत्व भी उसकी सोच की प्रणाली का नेतृत्वकारी उसूल, जो दूनिया को देखने के तरीके का द्योतक होता है और किसी भी समस्या के गलत और सही के बीच भेद करने के तरीके को निर्दिष्ट करता है। स्पष्टतया, यह वैज्ञानिक वास्तविकतावाद या तर्कसंगत मानवतावाद के अलावा कुछ नहीं हो सकता।

इस दृष्टिकोण के अनुसार मानव समाज (प्रकृति की सार्वभौम प्रक्रिया का एक अंग) का अस्तित्व, गति और परिवर्तन दो तरफा अन्तरक्रिया, यानि एक तरफ प्रकृति के संगठन (जिसमें विभिन्न प्राकृतिक प्रक्रियाओं के बीच अन्तरक्रिया शामिल है) और मनुष्य जाति के संगठन के बीच तथा दूसरी तरफ मानवीय सामाजिक संगठन के अपने अन्दर विद्यमान इसकी विभिन्न सामाजिक इकाइयों (एक व्यक्ति की सामाजिक इकाई सहित) के बीच अन्तरक्रिया से होता है।

इस प्रकार, तर्कसंगत मानवतावाद का नजरिया एक तरफ प्रकृति और मनुष्य के बीच के संबंध को तथा दूसरी तरफ मनुष्य और मनुष्य के बीच संबंध को तर्कसंगत बनाता है।

अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्यों का दूसरा आवश्यक तत्व विश्व शांति है। सामाजिक समन्वय के बिना एकता, विकास या उन्नति सम्भव नहीं है। राष्ट्रों के बीच सामंजस्य केवल न्याय और उचित व्यवहार के द्वारा कायम किया जा सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय न्याय और उचित व्यवहार को प्रोत्साहित करने के लिए भारत को एक समतावादी विश्व व्यवस्था की स्थापना की कोशिश करनी होगी, जहां संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में आजकल विद्यमान सामाजिक असमानताओं और सभी विशेष अधिकारों को समाप्त करवा कर इन संगठनों को विश्व के लोगों के प्रति जवाबदेह बनाना होगा। भारत को पाकिस्तान के प्रति शीत युद्ध वाले दृष्टिकोण को तत्काल छोड़ देना चाहिए। जम्मू कश्मीर समस्या को भारत, पाकिस्तान और जम्मू कश्मीर के लोगों के बीच त्रिपक्षीय वार्ता के जरिए हल कर लेना चाहिए। त्रिपक्षीय बातचीत का आधार एक ठोस प्रस्ताव होना चाहिए जिसमें एक तरफ सुरक्षा, विदेशी मामले और मुद्रा के मामलों को भारत-पाक के साझे नियंत्रण के तहत रखकर, यानि कश्मीर पर भारत-पाक सहराज्य कायम करके और दूसरी तरफ नियंत्रण रेखा के दोनों तरफ इस राज्य में रहने वाली सभी क्षेत्रीय नस्ली पहचानों को पूर्ण स्वायत्तता का दर्जा देकर इस समस्या को हल करना चाहिए। जम्मू कश्मीर की समस्या हल करने के बाद भारत और पाकिस्तान दोनों को अपने वार्षिक सैनिक खर्च में 50 प्रतिशत की कमी कर देनी चाहिए।

अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्य का तीसरा आवश्यक तत्व मानव संसाधनों की उत्तम गुणवत्ता उत्पन्न करना है जो एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के हितों को संतुलित करे तथा दूसरी तरफ व्यक्ति और समाज के हितों एवं एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के हितों से तालमेल कायम करे। यह काम स्वयं लोगों के जिम्मे सौंपने से अच्छा और कोई तरीका नहीं हो सकता है अत: इसके लिए प्रथमत: लोगों को अधिक अधिकार प्रदान करना खासकर महिलाओं और वंचित हिस्सों को, द्वितीयत:, सभी विकास प्रक्रियाओं के प्रबन्ध में लोगों को शामिल करना, तृतीयत:, गरीब-अमीर, लिंग असमानता, ग्रामीण-शहरी, शिक्षित-अनपढ़ इत्यादि सभी तरह की सामाजिक असमानताओं को हटाना और चतुर्थ, प्रशासन को लोगों के प्रति जवाबदेह बनाना। इसके लिए ऐसे मूलभूत बदलाव की आवश्यकता है जिसमें संसदीय जनवाद (इसमें लोगों द्वारा राजनैतिक पार्टियों को ताकत प्रदान कर दी जाती है) की जगह लोगों की भागीदारी वाला ऐसा जनवाद कायम किया जाए जिसमें लोग खुद सीधे शासन चलाने वाले बन सके। भागीदारी वाला जनवाद ही लोगों की पूरी क्षमता को काम में लेने वाला सबसे अधिक प्रभावी तरीका हो सकता है। स्पष्टतया, संसदीय जनवाद से भागीदारी वाले जनवाद में बदलने की जटिल प्रक्रिया को धीरे-धीरे ही आगे बढ़ाया जा सकता है जो लम्बा समय लेगी।

अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्य का चौथा आवश्यक तत्व यह है कि लोगों की सभी न्यायिक जातीय, भाषाई, सांस्कृतिक और क्षेत्रीय आकांक्षाओं को संतुष्ट करने के लिए संघीय आधार पर भारत के पुनर्गठन की सामाजिक पुन: संरचना के लिए लोगों को प्रोत्साहित करना। संघीयकरण के तहत सुरक्षा, विदेश संबंधी मामले, मुद्रा, संचार इत्यादि मसले केन्द्र के पास होंगे।

केन्द्रीयकरण ने पहले ही काफी विखण्डकारी प्रवृत्तियों को पैदा किया है। इसने पहले ही भारत को काफी हद तक नुकसान पहुंचा दिया है। इसके और आगे जारी रहने के गंभीर परिणाम निकल सकते हैं।

अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्य का पांचवां आवश्यक तत्व है कि विकास की एक ऐसी नई प्रणाली अपनाई जाए जो टिकाऊ हो। टिकाऊ विकास की नई प्रणाली में लोगों को खासकर महिलाओं को शामिल करना है और साथ ही उनको जनसंख्या नियंत्रण और वर्तमान पर्यावरण शुद्धता का दायित्व सौंपते हुए भविष्य में मानव समाज और प्रकृति के बीच संतुलन बनाए रखने का जिम्मा लेने को प्रोत्साहित करना है। सभी सरकारी एजेंसियों और तकनीकी विशेषज्ञों को इसमें निश्चित सार्वजनिक तंत्र के एक अंग के तौर पर कार्य करना होगा।

अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्य का छठा आवश्यक तत्व है एक नई नैतिकता वाली संस्कृति को अख्तियार करना। यह नैतिकता, किसी के निजी हितों को उच्चतम हद तक पूरा करने की पश्चिमी उदारवादी और कम्युनिस्ट नैतिकता (जिसमें सामाजिक हितों को उच्चतम हद तक पूरा करने की कम्युनिस्ट कल्पना भी शामिल है) के ठीक उलट एक ऐसे नए सामाजिक मूल्यों वाली नैतिकता अपनाने पर जोर दे जिसमें ऐसे व्यक्तित्व का विकास हो जो अपने निजी हितों के साथ अपने परिवार, अपनी पार्टी या ग्रुप, अपने समाज या राष्ट्र, अपनी प्रजाति (मानव) और सम्पूर्ण प्रकृति के हितों से तर्कसंगत तालमेल कायम करे। सत्ता की भूख और अति उपभोक्तावाद की चल रही नैतिकता समाज में भ्रष्टाचार और अपराधीकरण के मजबूत प्रेरक तत्व हैं। चल रही नैतिकता सामाजिक न्याय और बराबरी के उसूलों खिलाफ हैं।

अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय मॉडल के लिए सातवां आवश्यक तत्व है कि राजकीय प्लानिंग और बाजार तत्रं का न्यायिक मेल-मिलाप करते हुए इनकी आर्थिकताओं को विश्व आर्थिकता से जोड़ना यानि उसका ग्लोबलाइजेशन करना। ऐसी आर्थिकता के तीन उद्देश्य होते हैं—पर्यावरणीय संतुलन बैठाना, उत्पादकता को उच्चतम सीमा तक बढ़ाना और सामाजिक बराबरी सुनिश्चित करना।

उपरोक्त वर्णित पुनर्गठन कार्यक्रम कई आवश्यक घटकों से मिलकर बना है। ये सभी घटक आपस में एक दूसरे से इतने अधिक जुड़े हुए हैं कि इनमें से किसी एक को

पूरी तरह लागू नहीं किया जा सकता, जब तक कि बाकी घटकों को इसके साथ जोड़ा न जाए। उदाहरण के लिए, लोगों को अधिक अधिकार देना अति महत्वपूर्ण है परन्तु यह काम तभी पूर हो सकता है जब इसे शांति की नीति के साथ जोड़ कर लागू किया जाए। पाकिस्तान के खिलाफ शीत युद्ध के हालात में यह केवल कागजों पर लागू किया जा सकता है वास्तव में नहीं।

(ग) लोगों को प्रेरित करने की समस्या

भारत के पुनर्गठन कार्यक्रम के संबंध में सबसे कठिन समस्या यह सवाल है कि इसको व्यवहार में कैसे उतारा जाए। स्पष्टतया, इसका तरीका लोगों को इस कार्यक्रम पर प्रेरित करने में निहित है।

लोगों को प्ररित करने के लिए तीन बातें करना जरूरी है—(1) विभिन्न पहलकदमियों द्वारा इसे प्रचारित करना (2) विभिन्न कार्य शिविरों के द्वारा लोगों को इस पर वाद-विवाद में शामिल करना और (3) विद्यमान हालातों में जितना सम्भव हो, उस सीमा में व्यावहारिक तौर पर लागू करने के लिए लोगों को तैयार करना।

उपरोक्त तीन पहलकदमियों को लोगों के सामने मौजूद तात्कालिक कार्यक्रम से हमेशा जोड़ा जाना चाहिए।

आज राष्ट्र के परिदृश्य में चुनाव का कार्यक्रम प्रमुख है। और कल, चुनाव के बाद का दृश्यपटल लोगों का ध्यान अपनी ओर खींच लेगा। दोनों ही मौकों को भारत के पुनर्गठन कार्यक्रम पर लोगों के साथ विचार-विमर्श के लिए समुचित उपयोग किया जाना चाहिए और किया जा सकता है।

(घ) आने वाले आम चुनाव

हवाला विस्फोट के पहले ही राजनैतिक विश्लेषकों का यह विचार था कि भारत के आने वाले लोक सभा चुनावों में कोई भी अकेली पार्टी बहुमत हासिल करने और अपनी सरकार गठित करने की स्थिति में नहीं पहुंच पायेगी।

राजनैतिक समीक्षकों की इस भविष्यवाणी का आधार यह था कि इन्होंने यह आभास कर लिया था कि तीन राष्ट्रीय विकल्पों—यानि कांग्रेस ई, भाजपा व रामो-वामो गठजोड़—की चालकी भरी राजनीति से जनता का मोहभंग हो चुका है और जनता इन सबको एक जैसे पंख वाली चिड़िया समझने लगे हैं।

इन पार्टियों के प्रति जन असंतोष अचानक नहीं पैदा हुआ है। 1947 के बाद के समय में यह असंतोष तमाम उलट फेर के बावजूद लगातार धीरे-धीरे बढ़ता रहा है। इन सब नमूनों को व्यावहारिक तौर पर जांचने-परखने के बाद हालिया सालों में लोगों

ने यह महसूस कर लिया है कि इन पार्टियों के कार्यक्रमों, प्राथमिकताओं और तरीकों में कोई आधारभूत अन्तर नहीं है। अगर कांग्रेस (आई) का रिकार्ड काफी बुरा है तो भाजपा और रामो-वामो गठजोड़ का रिकार्ड भी किसी भी तरीके से भिन्न नहीं है। यद्यपि कांग्रेस के 45 साल के शासन में कुछ अच्छी बातें हुई हैं और अधिक बुरी बातें हुई है जबकि दूसरे दो गठजोड़ अपने 3 साल के प्रशासनिक प्रबन्ध के दौर में अपने आपको एक भी मामले में कांग्रेस से बेहतर कारगुजारी वाले साबित नहीं कर सके।

हवाला वृत्तांत, तीन राष्ट्रीय ट्रेडमार्का पार्टियों के तथाकथित जन सेवकों की गिरावट की गहराई को दर्शाता है और युगों पुरानी कहावत की याद दिलाता है कि 'बाड़ खेत को खा रही है'। इसने त्रिशंकु संसद की भविष्यवाणी को और अधिक मजबूत किया है।

इस प्रकार लोगों द्वारा किसी भी पार्टी को तरजीह नहीं देना 1980 के दशक के अन्त से शुरू हो गया था जिसका इजहार 1989 और 1991 के आम चुनावों में हुआ, जो अब और अधिक स्पष्ट रूप में सामने आ गया है। बेईमान राजनीति के प्रति लोगों की चिन्ता और अधिक बढ़ गई है। यह इस तथ्य से प्रमाणित होता है कि उच्च स्तर पर भ्रष्टाचार के प्रति जनता की मौन प्रतिक्रिया के बावजूद लोगों में राजनीति की साख इतनी गिर गई है कि वे इसे अपराधियों और भ्रष्टाचारी लोगों का धंधा समझने लगे हैं।

परन्तु तीन मुख्याधारा वाली पार्टियों में से प्रत्येक यह आशा करती है कि जनता उनकी पार्टी के पक्ष में चमत्कारी समर्थन करने जा रही है।

11वां आम चुनाव ऐसे वक्त में हो रहा है जब भारत 21वीं शताब्दी की दहलीज पर खड़ा है और इस वक्त प्रत्येक देश यह कोशिश कर रहा है कि वह अपने आपको ग्लोबल आर्थिकता और राजनीति के साथ जोड़ ले।

इसलिए आज भारत को एक स्पष्ट दृष्टिकोण और अपने स्वच्छ मार्ग की आवश्यकता है। परंतु कांग्रेस आई भारतीय आर्थिकता का सार्वभौमिकरण (ग्लोबलाईजेशन) करने के लिए चाणक्य का समाजशास्त्र (चालबाजी की राजनीति) भेंट कर रही है। भाजपा ने भारतीय संस्कृति में एकरूपता लाने के लिए हिन्दुत्व का समाजशास्त्र पेश कर रखा है और रामो-वामो भारतीय लोगों को सामाजिक न्याय प्रदान करने के नाम पर औंधा किया हुआ मनुवाद लिए खड़ा है। ये शताब्दियों पुराने समाजशास्त्र, जो अपने समय की सामाजिक वास्तविकताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, आज हमारे समय की प्रवृत्ति और समस्याओं के प्रति बिल्कुल अप्रासंगिक हो गए हैं और मेल नहीं खाते हैं। स्पष्टतया, किसी दृष्टिकोण और इसके मार्ग के बिना हालात अत्यधिक डरावने बन गए हैं।

पिछले कई चुनावों की तरह ही आने वाले चुनावों में भी अभिभूत करने वाला कोई मूल विषय नहीं है। किसी अर्थपूर्ण विषय-वस्तु की अनुपस्थिति ने इस समय चुनावों के जोश-खरोश से जनता को वंचित कर दिया है। इन चुनावों के वक्त जनता किसी भी उद्देश्यपूर्ण वाद-विवाद और उमंग से अलग एक वियोग जैसी परिस्थिति में है।

कांग्रेस आई के स्थायित्व की मूल विषय-वस्तु का अर्थ है कि एक ऐसी सरकार जिसने अपने आपको भ्रष्टाचार और अपराधीकरण की राजनीति के बल पर 5 साल तक शासन में टिकाए रखा। परंतु इस सच्चाई को कौन नकार सकता है कि इस तरह का स्थायित्व दीर्घकाल में स्वंय देश के टूटने के हालात पैदा कर देगा।

भाजपा की अभिन्नता और एकरूपता की मूल विषय वस्तु अल्पसंख्यकों के पारम्परिक विश्वासों और मूल्यों को ताकत से दबाने का है। यह दृष्टिकोण विविधता में एकरूपता के प्राकृतिक नियम की अवहेलना करता है।

रामो-वामो की जाति आधारित न्याय और समानता वाली विषय-वस्तु केवल एक नए तरह की विशेष अधिकार प्राप्त श्रेणी पैदा करने की घिसीपिटी पुरानी युक्ति ही है (उदाहरण के लिए, पुराने दलित राजाओं ने अपने आपको सूरजवंशी और चन्द्रवंशी राजाओं में तब्दील कर लिया था, समाजवादी देशों में सर्वहारा नेताओं ने अपने आपको ही स्थाई शासक बना लिया, आजकल कांशीराम, मुलायमसिंह और लालू यादव जैसी किस्में पंच सितारा होटलों में राजनीति कर रहे हैं, जबकि दलित और पिछड़े गंदगी और गरीबी के दलदल में फंसे हुए हैं)।

सभी तरह की झूठी, भ्रमित और अस्पष्ट विषय-वस्तु खतरनाक घटनाक्रम है, जिनका अंत हमेशा अराजकता और अव्यवस्था में होता है, जो लोगों से बहुत भारी कीमत वसूल करती है।

इस चुनाव में अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि मतदाताओं के सामने कोई वास्तविक पसंद मौजूद नहीं है। मुख्यधारा की सभी पार्टियों और उनके नेताओं पर जनता का बराबर अविश्वास है, जिनका केवल मात्र उद्देश्य राजनीतिक सत्ता में विशेषाधिकार का आन्नद लेना और जालसाजी, धूर्तता और कपटपूर्ण तरीकों से गैर-कानूनी सम्पत्ति हासिल करना है। समस्त राजनीतिक कबीला गिरावट का शिकार हो चुका है और कोई विकल्प नजर नहीं आता है।

लोगों द्वारा पुनः इन्हीं साख गिर चुकी पार्टियों को स्वीकार किए जाने का कारण दो पहलुओं में निहित है। एक कारण प्रचलित बेईमान राजनीति और अति उपभोगवाद (यानि दूसरों की कीमत पर अपने व्यक्तिगत हितों को अधिकतम हद तक

पूरा करना) का वातावरण है जो सही और गलत के बीच के अन्तर को विकृत कर देता है । दूसरा कारण व्यावहारिक विकल्प की गैर मौजूदगी है।

ऐसे जटिल हालात से निपटने के लिए सात कदमों की आवश्यकता है—

प्रथम, भारत की विद्यमान भ्रष्ट और पतित सामाजिक व्यवस्था के विकल्प के तौर पर भारत के पुनर्निर्माण के कार्यक्रम को लोकप्रिय बनाना।

द्वितीय, इस तथ्य पर जोर देना कि एक भ्रष्ट और पतित सामाजिक व्यवस्था के तहत आम चुनावों से भारत के लोगों को कुछ मामूली फायदे के अलावा अधिक फायदा नहीं हो सकता है। यह देश में हुए पिछले 10 चुनावों से सिद्ध हो चुका है।

तृतीय, इस बिन्दु पर जोर देना चाहिए कि तीन राष्ट्रीय गठजोड़ों के अपने-अपने कार्यक्रम भारत और उसके लोगों के हितों के खिलाफ हैं।

चतुर्थ, बड़ी राष्ट्रीय पार्टियों की बेईमान राजनीति और धनबल तथा भुजबल निर्देशित तरीकों को जनता में स्पष्ट करना चाहिए।

पचंम, लोगों को सूचित करना चाहिए कि चुनावी प्रक्रिया को कैसे धनबल और भुजबल से मुक्त किया जा सकता है।

षष्ठम, लोगों से अपील की जानी चाहिए कि वे मूल्य आधारित राजनीति और जीवन शैली को अपनाएं तथा अपराधीकृत राजनीति एवं भ्रष्ट राजनीतिज्ञों के पीछे नहीं दौड़ें।

सप्तम, लोगों से प्रार्थना करनी चाहिए कि वे अपने वोट डालने का पैमाना ईमानदारी, सच्चाई, उसूली नजरिए और लोगों की सेवा करने को बनाएं। इस पैमाने को आधार मानते हुए प्रथम प्राथमिकता पर महिलाओं और इसके बाद क्रमशः बुद्धिमान, गरीब, वंचित और अल्पसंख्यक उम्मीदवारों को तरजीह देनी चाहिए।

IV. वर्तमान हालात का तकाजा

वर्तमान अनिश्चित हालात इसके भूतकाल से पैदा हुए हैं। चुनाव इसकी मूल प्रकृति को प्रभावित करने नहीं जा रहे हैं। क्योंकि चुनाव केवल राजनीतिक शक्तियों के संतुलन की मोटी स्थिति को इंगित करने का साधन मात्र है।

प्रत्येक चीज अपने स्वयं (अंदरूनी और बाह्य दोनों पहलुओं सहित) के तर्क के अनुसार विकसित होती है। वर्तमान में चल रही भारतीय राष्ट्रीय प्रक्रिया का तर्क दर्शाता है कि चाहे चुनावों का परिणाम कुछ भी हो, चुनावों के बाद का परिदृश्य चुनावों के पहले के परिदृश्य से अधिक गर्म रूप धारण करने जा रहा है।

खाड़कूपन, अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, घोटालों और गड़बड़ियों, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, रूढ़िवाद, मानव अधिकारों की अवहेलना, महिलाओं और बच्चों से दुर्व्यवहार,

अल्पसंख्यकों से भेदभाव, कानून और व्यवस्था को दूषित करना, बजटीय संकट, मूल्य वृद्धि, विदेशी विनिमय और ऋण संकट, बेरोजगारी, गरीबी, जल विवादों, पर्यावरणीय संकटों, भारत-पाक तनाव, हथियारों की दौड़, परमाणु हथियारों का मसला, और इसी तरह की अन्य समस्याएं अपने विभिन्न रूपों एवं आकारों में आने वाले समय में भारत को हिलाने जा रही हैं।

सभी सकारात्मक राष्ट्रीय ताकतों का यह कर्तव्य बनता है कि आने वाली इन चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए तैयार हो जाएं। उनके दृष्टिकोण की तर्कसंगत्तता मांग करती है कि वे विद्यमान मामलों की दशा और उनकी अगली खतरनाक दिशा पर गहराई से नजर डालें और इसी क्षण भारत के नए पुनर्निर्माण के कार्यक्रम (एजेण्डा) के पक्ष में लोगों को संगठित करना शुरू कर दें तथा आने वाली उथल-पुथल के लिए तैयार हो जाएं। 10.02.96

❋ ❋ ❋

राजनैतिक अवसरवाद के दो स्वरूप
हिन्दुत्व राजनीति बनाम झूठी धर्मनिरपेक्ष राजनीति

I. लोगों की राय

1. हमारे देश में हाल ही में सम्पन्न हुए लोकसभा चुनावों में दिए गए जनादेश के अर्थ और उसके उत्तरदायित्व के सम्बन्ध में एक विचार-विमर्श चल रहा है। यह विचार-विमर्श मुख्यत: दो विरोधी राजनैतिक खेमों तक सीमित है। एक तरफ तो संयुक्त मोर्चा एवं कांग्रेस आई समर्थक हैं तथा दूसरी तरफ भाजपा के सहयोगी हैं। कई निर्दलीय या गैर पार्टी भी वैचारिक कलह में इस तरफ या उस तरफ सम्मिलित हुए हैं।

2. संयुक्त मोर्चा के समर्थक एवं कांग्रेस के समर्थक तत्व सोचते हैं कि यह धर्म-निरपेक्षवाद के समर्थक में एक जनादेश है तथा भाजपा के समर्थक यह सोचते हैं कि यह उनके पक्ष में जनादेश है। लेकिन कतिपय तथ्य वास्तविक कहानी बयान करते हैं।

प्रथम, चुनाव किसी एक मुद्दे पर नहीं लड़े गए थे, जैसे राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय अथवा सैद्धान्तिक। धर्म-निरपेक्षवाद अथवा हिन्दुत्व का प्रश्न, इस अभियान के प्रमुख नारों के रूप में कतई सामने नहीं आया, हाँ, इतना जरूर हो सकता है कि किसी व्यक्ति विशेष द्वारा कुछ स्थानों पर धर्म-निरपेक्षता या हिन्दुत्व के कार्ड का प्रयोग किया गया है।

द्वितीय, कांग्रेस-आई ने लोगों से, केवल नरसिंहराव सरकार की उपलब्धियों के आधार पर ही जनादेश प्राप्त किया। अन्य दो प्रमुख विरोधी संगठनों—भाजपा एवं संयुक्त मोर्चा राष्ट्रीय मोर्चा के प्रमुख केन्द्र-बिन्दु थे राव सरकार की विफलताएं तथा कांग्रेसवाद का विरोध। कांग्रेस आई एक एवं अन्यों के मुकाबले में खड़ी हुई यानि एक तरफ तो भाजपा एवं इसके क्षेत्रीय सहयोगी दल दूसरी ओर रामो-वामो तथा इनके क्षेत्रीय सहयोगी दल। कई ऐसी निर्वाचन क्षेत्रों में जहां तीनों का अस्तित्व विद्यमान था, इनके बीच त्रिकोणीय संघर्ष हुआ।

तृतीय, मतदाता ने किसी भी एक पार्टी के लिए अपनी पसन्दगी जाहिर नहीं की है। उसने न तो किसी एक पार्टी को पूरा एवं निर्णायक जनादेश दिया है तथा न ही किसी एक पार्टी को पूर्णत: अस्वीकार किया है। उसने निर्णायक तौर पर किसी एक विचारधारा, राजनीति, अर्थव्यवस्था, संस्कृति अथवा नेता को स्वीकार नहीं किया है, वह वर्तमान में विद्यमान किसी भी एक प्रणाली या ढांचे से संतुष्ट नहीं है।

चौथे, एक मात्र संदेश जो मतदाताओं की राय से प्राप्त होता है वह यह कि सभी

राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय दल, एक सर्वसम्मत कार्यक्रम के आधार पर एक सर्वदलीय साझा सरकार के रूप में कार्य करे।

पांचवें, साझा राजनीति विभिन्न राजनैतिक विचारधाराओं का एक समझौता है यह एक पार्टी द्वारा दूसरी पार्टी पर अपनी शर्तें थोपने का निषेध करती है, यह राजनीतिक छूआ-छूत के सिद्धान्त को भी अस्वीकार करती है, दो राजनैतिक संगठनों द्वारा तीसरे धड़े के विपरीत संगठित करने को भी नकारती है। पार्टी विभाजन जो आज के सदंर्भ में बेउसूलीपन ही हो सकता है, किसी की भी कोई मदद नहीं करेगा।

3. जनादेश का गलत मूल्यांकन करने का लघुकालीन कारण तीनों मुख्य राजनीतिक धड़ों की अवसरवादी राजनीति में निहित है जबकि बुनियादी कारण भारत एवं विश्व की मूलभूत वास्तविकता के बारे में उनका अपना गलत विश्लेषण है।

4. जनादेश को गलत दृष्टिकोण का अवश्यम्भावी परिणाम गलत क्रिया एवं प्रतिक्रिया करने में निकलना था। जनादेश को, जिसने एक ओर तो, राष्ट्र के स्तर पर सभी विवादास्पद मुद्दों को एक आम राय के आधार पर हल करने तथा एक व्यापक जन कल्याणकारी कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करने का आदेश दिया, विशेषकर निर्धनों, कमजोर वर्गों एवं अल्पसंख्यकों के लिए, तथा दूसरी ओर, विश्व स्तर पर, जो जनादेश समस्त देशों विशेषकर पड़ौसी राष्ट्रों के बीच मित्रता एवं सहयोग की प्रक्रिया निर्धारित करता है, इसके उलट देश के भीतर तथा बाहर वही पुरानी संघर्ष की राजनीतिक प्रणाली ही सदा की भांति व्यवहार में जारी रही।

5. अवसरवादी राजनीति तथा तनाववादी रास्ते ने देश को पहले ही बड़ी भारी हानि पहुँचाई है। इस विधि ने भारत में एक संविधान होने के बावजूद भी देश में कतिपय विपरीत एवं प्रतिकूल परिस्थितियां उत्पन्न करने में अपना योगदान दिया है, यथा—पर्यावरण एवं जनसंख्या सम्बन्धी समस्याओं में वृद्धि करने में, भारतीय गणतन्त्र को विश्व में एक सर्वाधिक हिंसा-सम्भावित इकाई के रूप में परिवर्तित करने में जहां की राजनैतिक प्रक्रिया की विशेषताएं हैं अपराधीकरण, साम्प्रदायिकता, जातिवाद एवं भ्रष्टाचार, यहां पर स्थित कानून के शासन को केवल मात्र औपचारिकता में बदलने में, इस देश की आर्थिक प्रगति एवं आर्थिक सुदृढ़ता का गला घोंटने में, यहां के आचरण एवं व्यवहार के मानदण्डों के स्तर को नीचे गिराने में, सैन्यकरण को इस देश की राष्ट्रीय प्राथमिकता बनाने में, परमाणु अस्त्रों के प्रयोग के विकल्प को खुला रखने की आवश्यकता उत्पन्न करने में, इस देश का स्तर केवल मात्र विश्व के एक सीमान्त राजनैतिक एवं आर्थिक खिलाड़ी के रूप मे बनाए रखने में, इस देश को विश्व का निर्धनतम देश बनाने में जहां की जनसंख्या का 2/5 भाग पूर्णत: निर्धन है, 48 प्रतिशत निरक्षर है, 1/3 भाग गृहविहीन है, 1/10 बेरोजगार है तथा 1/3 अर्द्ध बेरोजगार है,

और इस प्रकार विभिन्न बातों में। लेकिन इस प्रणाली के हानिकारक परिणामों के बावजूद, प्रमुख राजनैतिक दल इस खतरनाक रास्ते को छोड़ने को तैयार नहीं है।

6. चुनावों के बाद के परिप्रेक्ष्य में, इन दलों ने व्यापक जनादेश का अर्थ केवल मात्र अपने दल के हित में लगा कर, व्यापक जनादेश की भावना को तोड़ने-मरोड़ने का हर सम्भव प्रयास किया।

7. जब चुनाव परिणामों का सामान्य रुख सामने आने लगा तो कई वरिष्ठ राजनेताओं ने राष्ट्रपति महोदय के समक्ष यह सुझाव रखा था कि लोकसभा द्वारा एक राष्ट्रीय सरकार का गठन किया जावे, किन्तु इस विचार को इन दलों द्वारा सक्रिय समर्थन नहीं मिला।

8. जब राष्ट्रपति प्रधानमंत्री पद का हक रखने वाले व्यक्ति को सरकार बनाने का निमंत्रण देने की प्रक्रिया पर संवैधानिक विशषज्ञों से विचार विमर्श ही कर रहे थे, भाजपा ने तो सार्वजनिक बयान जारी कर दिया कि यदि उन्हें लोकसभा में बहुमत दल के रूप में सरकार गठित करने के अधिकार से वंचित रखा जाता है जो वह व्यापक संघर्ष करेगी।

9. जब राष्ट्रपति ने नियमानुसार, लोकसभा में बहुमत वाले दल को सरकार गठित करने के लिए आंमत्रित किया तो इस कार्य को रामो-वामो द्वारा एक जल्दबाजी में उठाया गया एवं पक्षपातपूर्ण कदम बताया।

10. जब मंत्रीमण्डल (सरकार) के गठन हेतु संयुक्त मोर्चा को कांग्रेस द्वारा समर्थन देने की सूचना का पत्र राष्ट्रपति के पास विलम्ब से पहुंचा तो रामो-वामो द्वारा इसे कांग्रेस आई अध्यक्ष नरसिंहराव के द्वारा भाजपा को अप्रत्यक्ष रूप से सहायता प्रदान करने की साजिश करार दिया गया।

11. उस समय जबकि हालात राजनैतिक बदलाव के चल रहे थे, कांग्रेस आई ने यह विचार रखा कि संयुक्त मोर्चा के नेतृत्व में एक साझा सरकार का गठन किया जावे, क्योंकि वे बहुमत वाली पार्टी के नेता है लेकिन जब वाजपेयी सरकार ने सत्ता सम्भाल ली तथा जब नरसिंहराव और अधिक घोटालों मे उलझ गये, जैसे—झारखण्ड मुक्ति मोर्चा काण्ड तथा यूरिया घोटाला काण्ड इत्यादि—तब कांग्रेस आई ने एक नवीन रणनीति तैयार की वह थी संयुक्त मोर्चा सरकार को बाहर से समर्थन देने की घोषणा करना—इस उद्देश्य से कि पहले तो वाजपेयी सरकार का पतन हो तथा बाद में संयुक्त मोर्चा सरकार का अपने चिन्ताओं से पतन हो जाने—इस प्रकार यह दल कांग्रेस आई के पुराने सिद्धान्त एवं मान्यता पर जोर दे सके कि केवल मात्र कांग्रेस आई का शासन ही स्थायित्व की गारन्टी दे सकता है।

12. जब चुनाव के बाद की स्थिति, मतगणना पूरी होकर अंतिम चुनाव

परिणाम की घोषणा के साथ स्पष्ट हुई—तो इसके बाद प्रथम तो वाजपेयी मंत्रीमण्डल के गठन व बाद में इसके पतन की घटना घटी तथा बाद में देवगौड़ा सरकार के गठन की घटना घटित हुई। इन दोनों ही सरकारों के प्रारम्भिक अभिलेख अर्थात् कार्यक्रमों से, हमें इनकी संरचना एवं समाजशास्त्र, दोनों ही व्यक्तिगत एवं सामूहिक को समझने के लिए कुछ महत्वपूर्ण मार्गदर्शन-सूत्र प्राप्त होते हैं।

II. 13 दिन की भाजपा सरकार

13. नई दिल्ली में अल्पकाल वाली भाजपा सरकार के गठन का प्रसंग बहुत ही अल्प अवधि का था। इसके 13 दिन के शासन के दौरान, पूरे भारत वर्ष में जिस एक मात्र राजनैतिक मुद्दे की चर्चा थी, वह यह था कि यह अल्पकाल सरकार लोकसभा में विश्वास मत हासिल कर पाएगी अथवा नहीं। जब कि भारत के अधिकांश लोगों की यह विचारधारा थी कि इस सरकार को गिराने से कोई दैविक चमत्कार ही बचा सकता है इस स्थिति में भाजपा के उच्च स्तरीय नेतागण इस बात में गहन विश्वास प्रकट कर रहे थे कि वे न केवल लोकसभा में शक्ति परिक्षण में जीतेंगे बल्कि इस बात का भी विश्वास प्रकट कर रहे थे कि वे पूरे पाँच वर्ष तक सत्ता में बने रहेंगे।

14. बाद मे आने वाली वास्तविकताओं ने हालांकि भाजपा के आशावाद की पुष्टि नहीं की। जैसा की अनुमान था, संयुक्त विपक्षीय मोर्चा के प्रहार ने वाजपेयी सरकार को सत्ता से पदच्युत होने को बाध्य कर दिया। भाजपा अपने विविध दलों के विपक्षीयों के बीच किसी प्रकार की राजनैतिक एवं व्यक्तिगत फूट या मतभेद का कोई लाभ लेने में असफल रही। आश्चर्य की बात तो यह थी कि, भाजपा अपने स्वयं के व सहयोगी दलों के अतिरिक्त लोकसभा के किसी भी कोने से न्यूनतम सम्भव सहयोग भी नहीं प्राप्त कर सकीं।

15. भाजपा ने इस स्थिति के बारे में यह स्पष्टीकरण दिया कि यह रामा-वामो द्वारा कांग्रेस आई के साथ गठबंधन करके रची गई एक साजिश थी। लेकिन यह स्पष्टीकरण पूर्व में भाजपा द्वारा दिए गए इस तर्क को अधिलांघिक कर देता है कि वे सत्ता मे बने रहेंगे तथा देश को स्थाई एवं सक्षम सरकार प्रदान करेंगे। प्रथम बिन्दु लोकसभा निर्वाचन के परिणामों की घोषणा के बाद भाजपा द्वारा सार्वजनिक तौर पर सांसदों में से एक काफी बड़ी संख्या अपने वर्तमान संगठन से अलग होकर भाजपा संसदीय दल के साथ शामिल हो जाएंगे। लेकिन यह बात तो परी कथा की तरह काल्पनिक साबित हुई। इसके अतिरिक्त बीच के समय में भाजपा के नेताओं ने इस बात की डूंगी पीटना चालू किया कि अनेक क्षेत्रीय दल वाजपेयी सरकार को समर्थन देंगे। लेकिन यह बात भी उनके प्रतिकूल गई। अन्तिम चरण में उन्होंने यह बात कहना

शुरू किया कि बहुत से गैर-भाजपाई सांसद विश्वास प्रस्ताव पर मत विभाजन के समय अनुपस्थित रहेंगे। लेकिन यह बात भी झूठी कहानी साबित हुई।

16. ऊपर वर्णित समस्त तथ्य यह इंगित करते हैं कि भाजपा नेताओं को गलत तथ्यों पर आधारित आशावाद का एक मात्र विवेकपूर्ण स्पष्टीकरण यह है कि उनका यह विश्वास था कि स त्ता एवं धन का लालच, उनके विचार से प्रत्येक समस्या का समाधान होता है, यहां तक कि काफी बड़ी संख्या में सांसदों को उनके खेमे में मिलाने में भी यही बात मदद करेगी। लेकिन चूंकि हवाला काण्ड के संदर्भ में भारतीय नेताओं का चरित्र भारतीयों एवं विश्व के लोगों की नजरों में संदेहास्पद बन चुका था, यह किसी भी व्यक्ति के लिए असम्भव था कि सत्ता के लिए पैसे का खेल खेला जाए अर्थात् धन का लेन-देन किया जाए। अन्यथा, यदि कोई उन 13 दिनों के दौरान घटी घटनाओं को बारीकी से देखें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि भाजपा सत्ता में रहने के लिए कुछ भी करने को तैयार थी।

17. क्या ऊपर वर्णित घटना सत्मार्ग से हटने की कोई घटना थी, या एक पृथ्कीकृत या दुर्घटनावश घटी घटना थी, हमें उन 13 दिनों की सत्ता के दौरान भाजपा की विचारधारा, उसके द्वारा उठाए गए कदमों तथा उसे मिले समर्थन, सभी के बारे में विस्तार से चर्चा करनी चाहिए।

18. प्रथम तो, भाजपा का यह स्पष्टीकरण कि लोकसभा चुनाव के परिणाम भाजपा के पक्ष में एक जनादेश था, तथ्यों पर आधारित नहीं था— वास्तविकता यह है कि भाजपा को कुल मतदान का केवल 23.9 प्रतिशत वोट ही प्राप्त हुए तथा कुल सीटों के एक तिहाई से भी कम सीटें मिलीं जिन 543 सीटों पर चुनाव लड़ा गया उनमें से 161 सीटें ही भाजपा को मिलीं। यह बात तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर रखने वाली है—यह केवल मात्र राष्ट्रपति के निमन्त्रण को स्वीकार कर लेने की बात को समर्थन देने के लिए ही था।

19. दूसरे, विपरीत परिस्थितियों में भी भाजपा द्वारा अल्पमत सरकार के गठन की बात को किसी मानदण्ड में समर्थन नहीं दिया जा सकता अर्थात् इसे किसी भान्ति उचित नहीं ठहराया जा सकता। विपक्षी दलों की तो क्या कहें, भाजपा सरकार ने पद की शपथ लेने से पूर्व अपने सहयोगी दलों से भी विचार-विमर्श नहीं किया—जैसे समता पार्टी, हरियाणा विकास पार्टी तथा संयुक्त अकाली दल, इत्यादि। वास्तविक तथ्यों (अर्थात् नई लोकसभा के गठन की स्थिति) की मांग यह थी कि सरकार का गठन करने की जिम्मेदारी या बीड़ा उठाने के पहले वाजपेयी को कम से कम साधारण बहुमत वाली साझां सरकार के गठन की सम्भावनाओं पर विचार करना चाहिए था अथवा एक बोझिल या अस्पष्ट वातावरण में एक अल्पमत सरकार के गठन के लिए

इंकार कर देना चाहिए था। लेकिन एक सही एवं उचित मार्ग अपनाने के बजाय भाजपा ने भ्रष्ट एवं गलत तरीके से यह घोषणा की कि जब वह एक बार सत्ता में आ जाएगी, तो विभिन्न राजनैतिक विचारों वाले सांसद भी उनकी पार्टी की ओर भागेंगे, लेकिन यह अनुमान भी गलत एवं अवास्तविक साबित हुआ।

20. तीसरे, मंत्रीमण्डल के गठन के मामले में भी, भाजपाा ने अपने साम्प्रदायिक सिद्धान्त के अनुरूप ही कार्य किया तथा जनता द्वारा दिए गए जनादेश के बहुमत की अवहेलना की। 12 सदस्यों वाले मंत्रीमण्डल में वर्चस्व राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की कट्टरवादी शाखा का ही था। राष्ट्रीय सहमति की अपनी अपील के बावजूद उसे अपने दायरे से बाहर का कोई गैर दलीय प्रजातांत्रिक व्यक्तिगत मंत्रीमण्डल टीम में शामिल करने को नहीं मिला, सिवाय राम जेठमलानी के जो भाजपा के ही पुराने हमसफर हैं।

21. चतुर्थ, सिकन्दर बख्त को गृहमन्त्री का पद देने से इंकार करना तथा बाद में यह महत्वपूर्ण एवं संवेदनशील पद मुरलीमनोहर जोशी को दिया जाना, जो पार्टी में ही एक महत्वपूर्ण व्यक्तित्व हैं, यह इंगित करता है कि भाजपा उदार एवं अल्पसंख्यक जनमत का सम्मान नहीं करती है।

22. पांचवें, भाजपा द्वारा तैयार किए गए राष्ट्रपति के अभिभाषण में न तो देश की समस्याओं का कोई व्यापक विश्लेषण था और न ही इसमें राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के समाधान के लिए इसमें किसी सुझाव को ही शामिल किया गया था। इसमें केवल मात्र वही बातें थी जो प्राय: कांग्रेस आई द्वारा प्रतिवर्ष दोहराई जाती रही हैं। इसमें जो अन्तर वाला विशिष्ट व एक मात्र बिन्दु वह था सैन्यकरण एवं परमाणु अस्त्रों के निर्माण पर जोर देने वाला। समग्र रूप से पार्टी के सिद्धान्तों से हटकर जो बात थी वह समन्वय या सहमति निर्माण की नहीं थी बल्कि केवल मात्र अवसरवाद की थी। इसने केवल भाजपा के कार्यक्रम की अप्रासंगिकता का ही संकेत दिया।

23. छठे, जहां तक मंत्रियों की कार्यशैली का प्रश्न है, उनमें से प्रत्येक मंत्री, यह समझने की कोशिश करने की बजाय कि वह कैसे जनता की तीव्र एवं ज्वलंत समस्याओं के प्रति उत्तरदायी हो सकते हैं या किस प्रकार एक अन्तिम सरकार की संवैधानिक एवं कानूनी मर्यादाओं के भीतर रहते हुए, गरीबों एवं दलितों को कुछ राहत करके उनके दु:ख-दर्द को कम कर सकते हैं—वह तो दिन प्रतिदिन एक आधारभूत नीति की घोषणा कर रहे थे, जबकि विश्वास मत हासिल करने के पूर्व इस प्रकार की घोषणा करना राजनैतिक चरित्र या सम्यक व्यवहार से घटिया दर्जे का कार्य था।

24. सातवें, जब भाजपा किसी भी लोकसभा सदस्य को अपनी ओर आकर्षित करने में सफल नहीं हुई, तो उसने यह धमकी देना चालू कर दिया कि यदि उनकी सरकार को विश्वास मत हासिल नहीं हुआ तो नए सिरे से निर्वाचन करवाना पड़ेगा।

25. आठवें, विश्वास मत पर हुई बहस के दौरान, वाजपेयी ने एक ओर तो एक सर्वदलीय सहमति के सिद्धान्त पर जोर दिया तथा दूसरी ओर यह घोषणा की कि यदि एक बार भाजपा लोकसभा में बहुमत हासिल कर देती है तो वह तुरन्त अपनी मौलिक अर्थात् आधारभूत नीतियों को लागू करेगी, जैसे कि अयोध्या में ध्वस्त बाबरी मस्जिद के स्थान पर राम मन्दिर का निर्माण, एक समान नागरिक संहिता का निर्माण तथा अनुच्छेद 370 की समाप्ति इत्यादि। यह दोहरा मानदण्ड केवल मात्र उनका पाखण्ड या छलावापूर्ण व्यवहार को ही दर्शाता है, और कुछ नहीं।

26. नवम्, आम नागरिकों के लिए कुछ भी ठोस कार्य न करते हुए, वाजपेयी सरकार ने उस समय, जबकि वह लोकसभा में विश्वास मत हासिल कर रही थी, शीघ्रता में आहूत मंत्रीमण्डल की बैठक में, एनरॉन प्रोजेक्ट के परिवर्तित स्वरूप को स्वीकृति देकर तो सभी प्रशासनिक सीमाओं एवं नैतिकता के बन्धनों का उल्लंघन किया।

27. दशम्, लोकसभा में स्वयं द्वारा प्रस्तुत विश्वास मत पर बहस करते हुए, दो अवसरों, अन्ततोगत्वा, वाजपेयी दो प्रमुख बिन्दुओं पर टिके रहे। एक तो यह कि विपक्षी दल मिथ्या धर्म-निरपेक्षवाद के नाम पर उसकी उचित एवं सही मानदण्डों व मान्यताओं पर आधारित सरकार को गिराने के लिए एकजुट हो रहे थे तथा दूसरा बिन्दु यह था कि उनकी पार्टी ने आवश्यक समर्थन जुटाने के लिए कोई सौदेबाजी नहीं की थी। वाजपेयी का प्रथम बिन्दु तो उन्हीं लोगों के खिलाफ एक आरोप लगाने के समान था, जिसको कि वे अपने विश्वासमत का समर्थन करने की अपील कर रहे थे। दूसरा बिन्दु आत्म-प्रशंसा का एक प्रमाण-पत्र मात्र था। दोनों ही बिन्दु उनके प्रस्ताव की गुणवत्ता के औचित्य को बताने वाले तर्क के सम्बन्ध में बहुत ही कम प्रासंगिक थे।

एक विवेकपूर्ण तर्क की तो यह मांग थी कि वाजपेयी कम से कम यह स्पष्टीकरण देते कि उन्होंने एक अल्पमत सरकार के गठन के लिए राष्ट्रपति के निमन्त्रण को क्यों स्वीकार कर लिया, इस निमन्त्रण को स्वीकार करते समय आवश्यक समर्थन प्राप्त करने का उनका क्या तात्पर्य था तथा यह भी स्पष्ट करना था कि किस प्रकार यह उनकी पार्टी द्वारा सत्ता हथियाने का एक प्रयास नहीं था। इसके अलावा, वाजपेयी को यह भी स्पष्ट करना था कि भाजपा आम सहमति की प्रणाली का किस प्रकार आकलन कर रही थी तथा उनकी सरकार ने मूल्यों पर आधारित राजनीति को कायम रखने के लिए क्या किया तथा उनकी सरकार को क्यों निरन्तर चालू रखा जाना उचित था, तथा वह भारत की भावी प्रमुख समस्याओं का हल करने के लिए क्या-क्या प्रस्ताव प्रस्तुत कर रहे थे? वाजपेयी ने प्राय: ऐसे बिन्दु उठाए जो वास्तव में प्रमुख मुद्दे नहीं थे तथा विश्वासमत से सम्बन्धित वास्तविक मुद्दो एवं राष्ट्र के समक्ष मुंह बाए खड़ी गम्भीर समस्याओं के बारे में उन्होंने कुछ नहीं कहा।

28. अल्पकालीन अस्तित्व वाली वाजपेयी सरकार का परीक्षण, सिद्धान्तहीन राजनीति का एक और उदाहरण प्रस्तुत करता है जहां एक राजनैतिक दल जो सिद्धान्तों एवं विशिष्ट व पवित्र मानदण्डों की शपथ से बन्धा हुआ है, केवल मात्र आधारभूत सिद्धान्तों का भी परित्याग कर देता है (जैसा कि भाजपा द्वारा तैयार किए गए राष्ट्रपति के अभिभाषण तथा वाजपेयी द्वारा लोकसभा में दिए गए दो भाषणों से स्पष्ट है) जाहिर तौर पर यह तथ्य भारतीय राजनैतिक प्रक्रिया में किसी अनुकूल परिस्थिति या विशिष्ट हितकारी बिन्दु की संरचना नहीं करता। यह न तो भाजपा के लिए लाभदायक था न भारतीय राजनैतिक परिदृश्य के लिए हितकारी था।

III. संयुक्त मोर्चा गठबन्धन के 21 दिन

29. यह सरकार कितने समय तक अस्तित्व में रहेगी ? यह प्रमुख प्रश्न 1 जून, 1996 से भारत के लोगों के मस्तिष्क में घूम रहा है, जबकि राष्ट्रपति द्वारा देवगौड़ा के नेतृत्व वाले संयुक्त मोर्चा गठबन्धन को सत्ता का भार सौंपा गया। इस गठबन्धन के निर्माता विश्वास के साथ यह भविष्यवाणी करते हैं कि यह सरकार 5 वर्ष तक अवश्य टिकेगी।

30. इसमें कोई शक नहीं कि संख्या का खेल इस विचारधारा का समर्थन करता है लेकिन संख्या का पहलू तो एक परिवर्तनीय पहलू है, जिसमें विविध एवं भिन्न सिद्धान्तों, कार्यक्रमों व प्राथमिकताओं इत्यादि के आदान-प्रदान के कारण सतत परिवर्तन होते रहते हैं जिसका अन्ततोगत्वा यह परिणाम होता है कि पुराने समीकरण टूट जाते हैं तथा नए समीकरण निर्मित हो जाते हैं।

31. अपने सभी सदस्यों की संख्या को एकजुट रखने के लिए संयुक्त मोर्चा गठबन्धन को एक जादुई सूत्र की आवश्यकता है। क्योंकि इसके निर्माता घटक किसी सिद्धान्त या कार्यक्रम के आधार पर एकजुट या संगठित नहीं हैं—वे तो केवल मात्र दो बिन्दुओं के कार्यक्रम पर संगठित हैं—प्रथम है भाजपा को सत्ता से दूर रखो तथा दूसरा है कुर्सी को हथिया लो। प्रथम बिन्दु तो दूसरे बिन्दु अर्थात् सत्ता हथियाने के लक्ष्य को प्राप्त करने का साधन मात्र था।

32. भाजपा विरोधी ताकतों के बीच, धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्त पर आधारित एकता का संयुक्त मोर्चा का नारा तो चुनाव के बाद का एक विचार था जो केवल मात्र इसलिए प्रस्फुटित हुआ कि लोकसभा में सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभर कर आने के बाद भी भाजपा को सरकार बनाने से रोका जा सके। मोर्चा सरकार का न्यूनतम साझा कार्यक्रम तो सत्ता सम्भालने के बाद तैयार किया गया था।

33. चूंकि इसकी प्रेरणा का स्रोत केवल सत्ता प्राप्ति था तथा अब चूंकि सबसे बड़ी अड़चन को हटाया जा चुका है (अर्थात् भाजपा को सत्ता से अलग करना), अब

जिस सर्वाधिक गम्भीर समस्या का सामना मोर्चा सरकार को करना पड़ रहा है वह है इसके निर्माता घटकों में एकता स्थापित करने का बिन्दु। मोर्चा के नेता इस समस्या को भाजपा के भय को जीवित रख कर हल करना चाहते हैं। लेकिन मोर्चा सरकार के सदस्य सत्ता एवं निर्णय लेने की शक्ति में पूर्ण भागीदारी हासिल करने की कल्पना करते हैं।

34. जहां तक सत्ता में भागीदारी का प्रश्न है, विशेषकर राज्यों की सत्ता में, यह एक बहुत ज्यादा उलझा हुआ प्रश्न है, जिसमें कई इच्छुक समूह शामिल हैं, संख्या में उतने ही जितने कि एक राज्य विशेष में राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक संगठन या समूह विद्यमान हैं। यह प्रश्न वहां पर कम समस्या वाला है जहां पर कि भागीदारों का एकता ध्येय विद्यमान है। लेकिन जहां कहीं भी (निजी स्वार्थ सहित) भिन्न भिन्न विचारधारा विद्यमान हैं। यह बिन्दु सर्वाधिक मुश्किल प्रश्न बन कर रह जाता है तथा यह तथ्य है कि संयुक्त मोर्चा इस मुश्किल वाली श्रेणी में ही वर्गीकृत होता है, जिसमें न केवल बहुत से राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण विद्यमान हैं बल्कि अहम व महत्वाकांक्षा भरे घटक एवं दृष्टिकोण भी इसमें विद्यमान है।

35. भारत में साझा राजनीति का इतिहास कोई विशेष उत्साहवर्धक नहीं चल रहा है। सन् 1977 के बाद की अवधि में, नई दिल्ली में गठित चार साझा सरकारों में से प्रत्येक सरकार कमजोर एवं अस्थाई साबित हुई अर्थात् 1977-79 में गठित जनता पार्टी सरकार (जो वास्तव में एक साझा सरकार थी क्योंकि जनता पार्टी में 5 राजनैतिक घटक सम्मिलित थे), 1979-80 की चरणसिंह के नेतृत्व वाली साझा सरकार जिसे बाहर से समर्थन प्राप्त था, 1989-90 का संयुक्त मोर्चा गठबन्धन जिसे बाहर से भाजपा एवं सीपीएम समर्थन प्राप्त था, तथा 1990-91 की चनद्रशेखर सरकार जो बाहर से कांग्रेस आई द्वारा समर्थित थी।

36. साझा राजनीति के अस्थायित्व का तात्कालिक कारण तो इसके घटकों में सत्ता में सर्वाधिक भागीदारी एवं जनता में आम प्रभाव के लिए भागदौड़ या प्रतियोगिता का होना ही रहा है। मूल या आन्तरिक कारण इस तथ्य का विद्यमान होना था कि वे सभी साझा सरकारें एक तरफ तो किसी न किसी अन्य पार्टी के विरुद्ध एकजुट या संगठित थी तथा दूसरी तरफ येनकेन प्रकारेण सत्ता हथियाने के लिए संगठित या एकजुट थी। प्रथम एवं तृतीय साझा सरकार तो कांग्रेस विरोधी विचारधारा पर आधारित थी, जबकि द्वितीय एवं चतुर्थ साझा सरकारें जिनका उद्देश्य केवल मात्र विपक्षी दलों को तितर बितर करने का था। इनमें से किसी भी साझा सरकार ने किसी कार्यक्रम या सिद्धान्त पर आधारित किसी कार्य को प्रारम्भ नहीं किया। बंगाल एवं केरल में साम्यवादी दल एवं कांग्रेस आई के नेतृत्व वाली साझा सरकारों का अनुभव

अधिक टिकाऊ होने का रहा है क्योंकि वे एक सिद्धान्त एवं विचारधारा पर आधारित थी।

37. संयुक्त मोर्चा गठबन्धन कमोबेश उसी स्थिति वाला प्रतीत होता है, जैसे कि केन्द्र में चार पूर्व साझा गठबन्धन रहे हैं। भूतकाल के अनुभव के परिप्रेक्ष्य में देखें तो इसका काम मात्र इसकी पूर्ववर्ती सरकारों से बेहतर नहीं हो सकता। इसके तीन सप्ताह की अवधि की कार्यप्रणाली, इसकी कार्यविधि एवं सफलता के आकलन के लिए पर्याप्त तो नहीं है। परन्तु इस अवधि में संयुक्त मोर्चा द्वारा उठाए गए मुख्य कदम एवं उत्तरदायित्व की भावना इस बात का संकेत देते हैं कि हवा किस ओर बह रही है।

(क) प्रारम्भिक तौर पर यह कहा जा सकता है कि संयुक्त मोर्चा सरकार ने अपना कार्य इस तथ्य को तोड़ मरोड़ कर प्रारम्भ किया कि हाल ही में सम्पन्न चुनावों में 75 प्रतिशत जनमत धर्मनिरपेक्षवाद एवं धर्मनिरपेक्ष ताकतों के पक्ष में था तथा जनता ने भाजपा की साम्प्रदायिक राजनीति को पूर्णत: नकार दिया था (जबकिा भाजपा लोकसभा में सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभर कर सामने आई थी)।

(ख) इसके बाद, इसने वास्तविक तथ्यों को गलत तरीके से प्रस्तुत किया, अनिवार्यता की राजनीति के सिद्धान्त को प्रतिपादित करके, जिसके अनुसार सभी पुराने एवं नए सिद्धान्तों का आज की ताजा स्थिति के अनुसार समायोजन किया जाना होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार इसने कांग्रेस आई के अपने मूल्यांकन को संबोधित कर इसे प्रतिक्रिवादी ताकत के बजाए धर्मनिरपेक्ष ताकत मान लिया।

(ग) इसके अलावा मोर्चा के मुख्य नेता वी.पी. सिंह ने यह घोषणा कर दी कि कांग्रेस आई जल्दी ही टूट जाएगी तथा सांसदों का एक बड़ा समूह राष्ट्रीय मोर्चा में शामिल हो जाएगा।

(घ) बाद में इसने यह घोषणा की कि कांग्रेस आई के साथ कोई भी समझौता या गठबन्धन केवल तभी सम्भव होगा जबकि नरसिंहराव को पार्टी के नेता पद से हटाया जाएगा। लेकिन बाद में उन्होंने इस कथन को इस प्रकार संशोधित किया कि उनका सम्बन्ध या उद्देश्य तो कांग्रेस आई सहित सभी धर्मनिरपेक्ष ताकतों में एकता कायम करने का है तथा यह मुद्दा उनसे सम्बन्धित नहीं है कि कांग्रेस आई का नेतृत्व कौन करता है, जो मुद्दा केवल मात्र इस पार्टी से ही सम्बन्ध रखता है।

(ड़) जब भाजपा ने लोकसभा में मुख्य या सबसे बड़े दल के रूप में सरकार बनाने का दावा प्रस्तुत किया तथा कांग्रेस आई ने भी साम्प्रदायिक ताकतों से गठबन्धन की भाषा में बात करना शुरू किया, तो वी.पी. सिंह ने अपने पुराने वाले इस कथन को भूलकर कि नरसिंहराव सांसदों की खरीद के लिए धन का प्रयोग करेंगे, यह कहने लग गए कि कांग्रेस आई तथा रामो-वामो में निकट गठबन्धन की आवश्यकता है। इस

एकता को मजबूत करने के लिए संयुक्त मोर्चा के नवनिर्वाचित नेता देवगौड़ा नरसिंहराव के पास गए तथा संयुक्त मोर्चा की सरकार के गठन के लिए उनका आशीर्वाद प्राप्त किया।

(च) संयुक्त मोर्चा के नेता के चुनाव का प्रश्न कई दिनों तक हल नहीं किया जा सका। जब प्रत्येक विचार या प्रस्ताव परिपक्व होने में असफल हो गया तो, देवगौड़ा के नाम पर चार दलों (रामो-वामो, टीडीपी, डीएमके तथा टीएमसी) के नेताओं के बीच आम समझौता हुआ तथा उसके बाद ही अन्य दलों को विश्वास में लिया गया।

(छ) जब भारत के राष्ट्रपति ने लोकसभा में सबसे बड़े दल का नेता होने की स्थिति में वाजपेयी को सरकार बनाने हेतु आमन्त्रित किया तथा जब कांग्रेस आई द्वारा संयुक्त मोर्चा को समर्थन देने का पत्र राष्ट्रपति के पास कुछ देर से पंहुचा तो संयुक्त मोर्चा ने राष्ट्रपति एवं कांग्रेस आई दोनों पर यह आरोप लगाया कि उन्होंने भाजपा को सत्ता में लाने की एक साजिश रची है।

(ज) वाजपेयी द्वारा प्रस्तुत विश्वास मत पर बहस के दौरान, संयुक्त मोर्चा का मुख्य मुद्दा भाजपा की हिन्दुत्व की विचारधारा तथा इसमें साम्प्रदायिक कार्यक्रम को उजागर करना ही था तथा कांग्रेस आई तथा रामो-वामो के 50 वर्ष पुराने धर्मनिरपेक्षवाद के सिद्धान्त पर आधारित कार्य प्रणाली के खतरनाक परिणामों के बारे में पूर्ण चुप्पी साधी गई।

(झ) संयुक्त मोर्चा द्वारा प्रस्तुत विश्वास मत में न्यूनतम साझा कार्यक्रम के प्रस्तुत करने के साथ, प्रधानमंत्री ने सरकार की राष्ट्रीय प्राथमिकताओं का कोई उल्लेख नहीं किया।

(ञ) देवगौड़ा सरकार ने विश्वासमत हासिल करने के बाद, उसकी पार्टी ने जो सबसे पहला काम किया था वह रामकृष्ण हेगड़े को पार्टी से निष्कासित करना जो जनता दल एवं राष्ट्रीय मोर्चा के संस्थापक थे।

(ट) इसके एक दिन बाद ही दूरदर्शन के न्यूज बुलेटिन 'न्यूज टू नाइट' को छिपा लिया गया जिसमें रामकृष्ण हेगड़े द्वारा प्रेस को दिए गए साक्षात्कार के कुछ अंश शामिल थे।

(ठ) अब प्रशासनिक खर्च एवं पीएसयू के खर्चों में कमी को लेकर वित्त मंत्री एवं वामपंथी दलों में एक नया ही विवाद उठ खड़ा हुआ है।

(ड) पिछले कुछ दिनों के दौरान, नरसिंहराव के परस्पर विरोधी बयानों ने, जिनमें एक ओर तो देवगौड़ा सरकार को समर्थन देने की बात को दोहराया है तथा दूसरी ओर पार्टी कार्यकताओं को दूसरे आम चुनाव के लिए तैयार रहने को कहा है,

साझा सरकार की राजनैतिक अस्थिरता के बारे में एक सूत्र की स्थापना की है।

(ढ) ऊपर वर्णित तथ्य यह बताते हैं कि रामो-वामो (इसमें शामिल दलों) का चुनाव पश्चात् का व्यवहार, विशेषकर इसका कांग्रेस आई एवं नरसिंहराव की ओर 100 प्रतिशत झुकाव की विचारधारा तो पूर्णत: सिद्धान्तहीन है। हेगड़े का निष्कासन तथा दूरदर्शन के पूर्व निर्धारित न्यूज बुलेटिन को निरस्त करना, इस बात का संकेत देता है कि जो दल संयुक्त मोर्चा में शामिल है वो अपने संगठनात्मक ढांचे तथा कार्यशैली दोनों के हिसाब से अलोकतांत्रिक है। ये सब बातें रामो-वामो द्वारा समर्पित उग्र कट्टर जातिवाद के परिप्रेक्ष्य से उत्पन्न हुई है।

अभी तक तो, साझा सरकार राजनैतिक स्वरूप के बारे में किसी भी आम सहमति तक पहुंचने में असमर्थ रही है। विभिन्न प्रकार के राजनैतिक स्वरूपों के रहते, सभी 14 दलों मे भी समन्वय स्थापित करना एक कठिन और दुष्कर कार्य है लेकिन तथ्य यह है कि यह स्वार्थों का गठबन्धन है न कि राजनैतिक सिद्धान्तों का। इस प्रकार का गठबन्धन तो केवल सत्ता के स्वरूप से ही मार्गदर्शित होता है।

प्रधानमंत्री देवगौड़ा यह सोचते हैं कि ईश्वर की इच्छा एवं आशीर्वाद से यह कार्य सम्पन्न होगा।

क्या भारत जैसे देश का प्रबन्ध एक तदर्थ या अस्थाई प्रणाली से चलाया जा सकता है? क्या सत्ता की राजनीति के अनुसरण से भारत की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है? क्या भारत के लाखों भूखे, गृहविहीन एवं दलित लोगों को बनावटी सरलता या भोलेपन का राग अलाप कर संतुष्ट किया जा सकता है?

आज इन प्रश्नों का उत्तर किसी के पास नहीं है। लेकिन समय-चक्र एक निश्चित समय पर इनका उत्तर उपलब्ध कराएगा।

❋ ❋ ❋

1996 का चुनावी जनमत एक नई संघीय प्रक्रिया की शुरूआत करता है

I

1. भारत में तथा अन्य कहीं भी, प्रत्येक निर्वाचन, शक्तियों के राजनैतिक सन्तुलन या समीकरण में कुछ न कुछ परिवर्तन लेकर आता है। ऐसा परिवर्तन अपनी विशिष्ट विशेषता के साथ या तो संरचनात्मक हो सकता है, अथात् जो राजनैतिक स्वरूप या राजनैतिक प्रणाली से सम्बन्धित हो सकता है, अथवा ऐसा परिवर्तन मूलभूत हो सकता है जो राजनीति के सार, गुण एवं ठोस रचना से सम्बन्धित होता है। जबकि भारत में 1996 से पूर्व हुए प्रथम 10 चुनाव प्रथम वर्ग मे आते हैं किन्तु ग्यारहवां चुनाव अपनी एक विशिष्ट श्रेणी का निर्माण करता है।

2. उक्त दोनों श्रेणियों का अन्तर इस तथ्य में निहित है कि पूर्व के चुनावों में तो कांग्रेस को सर्वोच्च स्थान प्राप्त हुआ था या तो प्रधान सत्ताधारी पार्टी के रूप में अथवा प्रथम पार्टी के रूप में, लेकिन इस बार कांग्रेस ने ये दोनों ही विशिष्टताएं खो दी हैं। निर्वाचकों ने अपनी पसन्द या प्राथमिकता का बहुत थोड़ा सा ही संकेत दिया है। उन्होंने न तो किसी विशेष पार्टी कार्यक्रम के लिए अपना विकल्प दिया है तथा न किसी विशेष करिश्माई या चमत्कारी नेता के लिए कोई विकल्प दिया है। इसके अलावा किसी भी राष्ट्रीय, क्षेत्रीय एवं विदेशी मुद्दे ने इसकी विचारधारा को प्रभावित नहीं किया है जबकि इन्होंने कांग्रेस की रटी-रटाई भाषा या तकियाकलाम स्थायित्व एवं प्रगति को नकार दिया है, इसने भाजपा की परिवर्तन के साथ स्थायित्व की धारणा को भी स्वीकार नहीं किया है तथा रामो-वामो की सामाजिक न्याय के सिद्धान्त की प्रभावशाली भाषा को भी अस्वीकार कर दिया है, कुछ स्थानों पर यहां तक कि भ्रष्ट, आपराधिक एवं संदेहास्पद तत्व भी अन्दर प्रवेश करने में सफल हो गए हैं, जबकि नैतिक मूल्यों पर जोर देने वालों को भी कड़ा प्रहार कर बाहर कर दिया गया है।

3. कुछ लोगों का यह मानना है कि यह धर्मनिरपेक्षवाद के पक्ष में तथा हिन्दुत्व अर्थात् भाजपा के खिलाफ एक जनमत है। लेकिन किसी भी एक दल ने धर्मनिरपेक्षवाद के सिद्धान्त अथवा हिन्दुत्व विरोधी मुद्दे पर आधारित होकर चुनाव नहीं लड़ा। तथाकथित धर्म-निरपेक्ष दलों (रामो-वामो व कांग्रेस आई) ने तो एक दूसरे के विरुद्ध चुनाव लड़ा था।

4. स्पष्टत: इसे धर्मनिरपेक्षवाद के पक्ष में आम जनादेश कह कर पुकारना तो तथ्यों को तोड़ने मरोड़ने के समान है, धर्मनिरपेक्षवाद (जिसका कांग्रेस के लिए तात्पर्य है भ्रष्टाचार तथा धोखाधड़ी या जालसाजी के माध्यम से सत्ता व धन प्राप्त करने की

लालसा, भाजपा के लिए इसका तात्पर्य है अच्छे या बुरे साधनों द्वारा भारतीय राजनीति का साम्प्रदायीकरण तथा रामो-वामो के लिए इसका अर्थ है भारतीय राजनीति का सभी प्रकार के संदिग्ध एवं चालबाजी के माध्यमों द्वारा जातिकरण करना) तथा न इसे हिन्दुत्व के पक्ष में जनादेश कहा जा सकता जिसका अर्थ है सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के छद्मवेश में एक धार्मिक कट्टरवादी सिद्धान्त तथा न इसे मण्डलवादी मार्क्सवादी सामाजिक न्याय के पक्ष में एक जनादेश कहा जा सकता है जिसका अर्थ है लालूवाद या एक प्रकार का सुरजीतवाद।

5. एक तरफ तो भाजपा को इसे अपने हक में जनादेश बताने तथा संयुक्त मोर्चा का कांग्रेस आई द्वारा इसे धर्म-निरपेक्षवादी ताकतों के हक में एक जनादेश कहने का एक ही प्रेरक स्रोत था और वह था लोगों को धोखा देना तथा सत्ता को हथिया लेना। दोनों ही एक गन्दे खेल में लिप्त हुए। भाजपा की चालबाजी असफल हुई तथा संयुक्त मोर्चा व कांग्रेस आई की धोखेबाजी सफल रही। भाजपा के इस आरोप का कोई आधार नहीं था कि उनकी सरकार संयुक्त मोर्चा एवं कांग्रेस आई के गठबन्धन की शिकार हुई क्योंकि भाजपा सरकार भी उतनी ही अवैधानिक थी जितनी कि गठबन्धन सरकार। कांग्रेस आई की रणनीति यह रही है पहले भाजपा सरकार को गिराया जाए तथा फिर संयुक्त मोर्चा सरकार को इसके अपने ही विरोधाभासों के बोझ से दबकर गिरने दिया जाए तथा इस प्रकार भारतीय जनता के समक्ष यह साबित किया जाए कि केवल मात्र कांग्रेस आई ही एक स्थाई या टिकाऊ सरकार दे सकती है।

6. इस प्रकार संयुक्त मोर्चा-कांग्रेस आई का गठबन्धन न तो ऐसी अति आवश्यक आज्ञा या आवश्यकता थी तथा न यह अनिवार्यता की राजनीति थी, मगर यह तो एक गन्दा या अपवित्र गठबन्धन था जो अपने अपने उद्देश्य या स्वार्थों की पूर्ति के लिए बनाया गया था, तथा ऐसी ही स्थिति भाजपा द्वारा रचे गए षड़यन्त्र की थी, जिसके अधीन काफी संख्या में अच्छे कांग्रेसी अपनी पार्टी को छोड़कर इसमें शामिल होने वाले थे।

7. उपरोक्त तथ्य यह प्रकट करते हैं कि 1996 का निर्वाचन एक विशिष्ट अर्थात् एक प्रकार का जनादेश प्रदर्शित करता है। इस जनमत या जनादेश की विशेषता यह है कि मतदाता राजनीति के सभी वर्तमान स्वरूपों से असंतुष्ट है—चाहे वह चाणक्यवाद हो, हिन्दुत्ववाद हो, चाहे मण्डलवाद हो। वह एक नवीन ढांचे या स्वरूप को चाहता है। लेकिन वह इसके बारे में स्पष्ट नहीं है। इसके अलावा उसके पास कोई विकल्प भी नहीं लगातार परम्परागत विचारधाराओं के दायरे में भटक रहा है।

8. इस आश्चर्यजनक जनादेश के परिप्रेक्ष्य में जो केवल मात्र सही अर्थ निकाला जा सकता है वह यह है कि सभी दल एक साथ मिलकर कार्य करें। इस कार्य

के लिए यह आवश्यक है कि एक सामान्य कार्यक्रम के आधार पर एक सर्वदलीय सरकार का गठन किया जावे। इस कार्य-योजना मे सभी प्रकार की विचारधाराओं को बाहर या पृथक् रखा जाना वाछंनीय है किसी को भी एक विशिष्ट व्यक्ति या पार्टी के रूप में स्वीकार नहीं किया जाये। सभी प्रकार के निर्णय एक आम सहमति से किए जावें व कभी कभी मतदान के द्वारा बहुमत से किए जावें। जो कोई भी दल अपने सैद्धान्तिक आधारों पर इस सरकार में शामिल नहीं होना चाहें वे इसे बाहर से समर्थन दे सकते हैं या तटस्थ रह सकते हैं तथा अपने निर्णय प्रत्येक मुद्दे के आधार पर ले सकते हैं।

II

9. ग्यारहवां लोकसभा जनमत की मुख्य विशेषता यह है कि यह जनमत केन्द्रीकृत राष्ट्रीयवाद (अथात् कट्टर सर्व भारतीयवाद), बहुमत वादी धर्मनिरपेक्षवाद तथा विवादग्रस्त सामाजिक न्याय की निरर्थकता की बढ़ती हुए प्रक्रिया की शुरूआत का संकेत देता है। यह निष्कर्य या सारांश तीन तथ्यों के आधार पर सामने आता है, जो इस प्रकार है—

(अ)

10. प्रथमत:, निर्वाचकों ने एक मात्र सर्व भारतीय पार्टी, कांग्रेस और इसकी केन्द्रीकृत राष्ट्रीयवाद तथा बहुमतवादी धर्मनिरपेक्षवाद की राजनीति को स्पष्टत: नकार दिया। यद्यपि पहले भी नवम् व दशम् लोकसभा चुनावों में भी कांग्रेस आई स्पष्ट बहुमत प्राप्त करने में असफल रही थी, फिर भी इन दोनों चुनावों में लोगों ने इसके पक्ष में देश भर में अपनी प्रथम पसन्द के रूप में वोट दिया था। इस बार केवल थोड़े से क्षेत्रों ने इसके लिए अपनी पसन्द जाहिर की थी। यहां पर एक दूसरा विचारणीय बिन्दु यह है कि 1947 के बाद भाजपा के केन्द्रीकृत पुनर्गठन तथा साम्प्रदायिक विरोधी के बावजूद तथा साम्यवादियों के 'प्रजातांत्रिक केन्द्रवाद' तथा 'सर्वहारा या दलित वर्ग को न्याय' के सिद्धान्त के बावजूद कोई भी अन्य मुख्य राजनैतिक दल अखिल भारतीय स्वरूप को प्राप्त नहीं कर सका।

(ब)

11. दूसरे, निर्वाचन स्पष्ट रूप से कांग्रेस आई तथा अन्य प्रमुख राजनैतिक दलों के क्षेत्रीयकरण को प्रदर्शित करता है तथा क्षेत्रीय संगठनों के तुलनात्मक रूप से बढ़ते हुए प्रभाव को इंगित करता है। उदाहरण के लिए कांग्रेस आई आज थोड़े से सीमावर्ती प्रदेशों के अलावा केवल 4 बड़े राज्यों पर नियन्त्रण रखता है—उड़ीसा, मध्य प्रदेश, पंजाब तथा हिमाचल प्रदेश। पंजाब एवं मध्य प्रदेश के आगामी विधान सभा चुनावों में यह दोनों ही राज्यों में पराजित हो सकती है, जैसा कि हाल ही के

लोकसभा निर्वाचन के आंकड़ों से स्पष्ट है। इसी भांति भाजपा का केवल तीन राज्यों में वर्चस्व है—गुजरात, राजस्थान तथा देहली। महाराष्ट्र एवं हरियाणा में यह (भाजपा) सत्ताधारी गठबन्धन में केवल मात्र यहां के क्षेत्रीय सहयोगियों की कनिष्ठ या सहायक पार्टी के रूप में विद्यमान है—शिवसेना तथा हरियाणा विकास पार्टी—जिनमें से प्रत्येक के अपने पृथक व स्वतन्त्र कार्यक्रम हैं। राजस्थान व गुजरात में भाजपा के घटते प्रभाव के कारण यह सम्भव है कि यह आगामी विधान सभा चुनावों में इन दोनों ही राज्यों को हाथ से खो बैठे। उत्तर प्रदेश के आगामी विधान सभा चुनावों में भाजपा बहुमत प्राप्त कर सकती है, परन्तु अपनी शक्ति या प्रभाव के बलबूते पर नहीं बल्कि तभी जबकि बसपा सत्ताधारी संयुक्त मोर्चा के घटकों के साथ मिल कर संयुक्त मोर्चा या गठबन्धन नहीं बनाए। वाम मोर्चा की सरकार एक लम्बे समय से केवल 3 राज्यों तक सीमित रही है—बंगाल, केरल एवं त्रिपुरा में—जबकि जनता दल की सत्ता केवल कर्नाटक तथा बिहार तक सीमित है। रामो-वामो सरकार का कामकाज इस बार मानदण्ड से काफी घटिया स्तर का है। और ऐसा सम्भव नहीं लगता कि यह आगे आने वाले समय में इसमें सुधार करेगा—विशेषकर ज्योति बसु के राजनीति से संन्यास लेने के बाद तथा देवगौड़ा सरकार के पतन के बाद। प्रमुख दलों की तुलना में, क्षेत्रीय दल आज सात राज्यों में प्रमुख स्थान धारण करती है—तमिलनाडू में डीएमके आन्ध्र में तेलगुदेशम पार्टी, आसाम में असम गण परिषद्, पंजाब में शिरोमणि अकाली दल (बादल), हरियाणा में हरियाणा विकास पार्टी तथा महाराष्ट्र में शिवसेना। इसके अलावा बीसियों दल हैं जो विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत हैं- जैसे बोडोलैण्ड पार्टी एवं अल्फा आसाम में, त्रिपुरा सहित उत्तरी पूर्वी राज्यों में विभिन्न उग्रवादी दल, बिहार, उड़ीसा व बंगाल में झारखण्ड पार्टी, सिक्किम में सिक्किम डेमोक्रेटिक फ्रंट, हरियाणा में सपा, उत्तर प्रदेश में सपा व बसपा, महाराष्ट्र में आर.पी.आई. इत्यादि। परिकल्पना की स्थिति तक पहुंचने के लिए दलों के क्षेत्रीयकरण की प्रक्रिया को अभी कई प्रकार के उतार चढावों से होकर गुजरना है।

(स)

12. तीसरे, प्रमुख राजनैतिक दलों के सम्बन्धित चुनावी अभियान में किसी-राष्ट्रीय मुद्दे का प्रायःकर अभाव रहा हैं (राजनैतिक, आर्थिक या सांस्कृतिक) इस प्रकार, चुनाव-अभियान की विषय वस्तु का निर्माण मुख्यतः क्षेत्रीय मुद्दों ने ही किया। उदाहरण के तौर पर केरल में कांग्रेस आई ने मद्यनिषेध को अपना प्रमुख चुनावी मुद्दा बनाया, जबकि वाम मोर्चा प्रजातांत्रिक मोर्चा सरकार की असफलताओं पर केन्द्रित रहा। तमिलनाडू में डीएमके तथा टीएमसी ने जनता को अपने पक्ष में करने के लिए जयललिता के दोषों अर्थात् अयोग्यताओं को ही अपना लक्ष्य बनाया। आन्ध्र प्रदेश में तेलगुदेशम पार्टी की दोनों शाखाओं ने एन.टी. रामाराव के उत्तराधिकार के

तुरूप को लेकर चुनाव लड़ने का प्रयास किया। उड़ीसा में जे.बी. पटनायक द्वारा की गई जोड़तोड़ तथा बीजू पटनायक के विरुद्ध लगाए गए भ्रष्टाचार के आरोपों ने ही परिणाम को सुनिश्चित किया। बंगाल में ज्योति बसु के करिश्मा ने सीपीएम के पक्ष में कार्य किया हालांकि कुछ कम प्रभाव के साथ। आसाम में असम गण परिषद् कांग्रेस आई के भ्रष्टाचार एवं अकार्यकुशल प्रशासनिक इतिहास के कारण लाभ में रही। उत्तर प्रदेश एवं बिहार में निर्वाचन को सम्बन्धित दलों द्वारा जातीय युद्ध में बदल दिया गया था। मध्य प्रदेश मे कांग्रेस आई के विभिन्न धड़ों द्वारा परस्पर टांगखिंचाई ने अप्रत्यक्ष रूप से भाजपा की सहायता की। गुजरात में भाजपा एवं कांग्रेस आई दोनों ने एक दूसरे की स्थानीय कमजोरियों से लाभ उठाया। महाराष्ट्र में भाजपा शिवसेना गठबन्धन ने मुख्यतः कांग्रेस आई के भ्रष्टाचार एवं धड़ेबाजी (आपसी फूट) को भुनाया अथात् इससे लाभ उठाया। राजस्थान में भाजपा एवं कांग्रेस आई ने अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जातीय, साम्प्रदायिक एवं प्रभावशाली हथियारों का प्रयोग किया। हरियाणा में भजनलाल विरोधी लहर ने भाजपा-हविपा गठन्बधन को लाभान्वित किया। पंजाब में पुनः कांग्रेस के भ्रष्टाचार, भाई भतीजावाद एवं धड़ेबन्दी ने इसके भाग्य का फैसला किया। हिमाचल प्रदेश में चुनाव लड़ने वाले दो मुख्य दलों—कांग्रेस आई तथा भाजपा के बीच भ्रष्टाचार के परस्पर आरोपों को लेकर चली तथा परिणाम तुलनात्मक रूप से अधिक धूर्त ठग अर्थात् कांग्रेस आई के पक्ष में रहा। जम्मू कश्मीर में प्रमुख राजनैतिक दलों के पक्ष में राज्यपाल के प्रशासन द्वारा परम्परागत खेल पुनः दोहराया गया।

III

13. ग्यारहवां लोकसभा चुनाव की दूसरी विशेषता यह है कि यह एक सर्वसम्मत कार्यक्रम एवं नीति पर आधारित सर्वदलीय गठबन्धन की मांग करता है तथा इस कार्यक्रम में चुनावी घोषणा पत्रों में घोषित कार्यक्रम शामिल नहीं होंगे परन्तु आम जनता द्वारा तैयार किए गए कार्यक्रम शामिल होंगे, ऊपर से नीचे प्रत्येक स्तर पर सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना तथा जनता को शक्तिशाली बनाना, राजनैतिक प्रक्रिया से भ्रष्टाचार, जातिवाद अपराधीकरण एवं हिंसा का उन्मूलन या समाप्ति करना, आर्थिक प्रक्रिया से वित्तीय एवं उत्पादन सम्बन्धी असन्तुलनों, कार्यकुशलता तथा चोर बाजारी को समाप्त करना, व्यवहार के सन्देहपूर्ण मानदण्डों को समूल नष्ट करना, भूमि, जल, वन, मानव-संसाधन, परिरचना तथा विशेषकर शिक्षा एवं चिकित्सा सुविधा का विकास करना, सभी के लिए शुद्ध जल, शौचालय, आवास, भोजन तथा वस्त्र की व्यवस्था करना, इत्यादि।

उपरोक्त कार्यक्रम से सैद्धान्तिक मुद्दों कों पृथक् रखा जाना चाहिए। कार्यक्रम नीति से सम्बन्धित सभी मुद्दों का निर्णय आम सहमति से किया जाना चाहिए। किसी

अनिर्णय की स्थिति में बहुमत का निर्णय ही सर्वोपरि होना चाहिए। यदि सैद्धान्तिक आधारों अथवा किन्हीं कार्यक्रम या नीतिगत मुद्दों पर बहुमत के निर्णय से मतभेद के आधार पर कोई पार्टी ऐसे सर्वदलीय गठबन्धन से पृथक रहना चाहे तो उसे इसकी अनुमति दी जानी चाहिए। इस पार्टी को विरोधी या शत्रु पार्टी नहीं माना जाना चाहिए तथा इसे सहमति वाले मुद्दों पर बाहर से सहयोग करने हेतु निवेदन किया जाना चाहिए।

यह जनादेश किसी पार्टी के विरुद्ध गठबन्धन के लिए नहीं है, जैसे कि वर्तमान संयुक्त मोर्चा गठबन्धन भाजपा, समता पार्टी, अकाली दल एवं हरियाणा विकास पार्टी के विरुद्ध है, विरोध वाला गठबन्धन राष्ट्रीय एकता के सूत्रपात के बजाय, हमारी सामाजिक जीवन में लगातार एवं स्थाई मतभेद व फूट ही पैदा करेगा।

IV

14. ग्यारहवां लोकसभा जनमत की तीसरी प्रमुख विशेषता है, न केवल सभी प्रतिनिधि संसदीय दलों तथा संसद में विभिन्न विभेदक मुद्दों पर आम-सहमति की स्थापना करना, बल्कि भारतीय समाज, दक्षिणी एशिया तथा अन्ततोगत्वा पूरे विश्व में सहमति की स्थापना करना।

भारतीय समाज में आम सहमति की स्थापना सभी प्रमुख विवादों एवं असन्तोषों को हल करके ही किया जा सकता है—जैसे कि बावरी मस्जिद, ऑपरेशन ब्ल्यू स्टार, 1984 के सिख विरोधी दंगे, कश्मीरी विस्थापित, उत्तराखण्ड, बोडोलैंड, झारखण्ड, तेलंगाना, विदर्भ, कावेरी नदी के जल का तमिलनाडू व कर्नाटक के बीच बंटवारा, पंजाब की विशिष्ट समस्याएं (जैसे) इस राज्य को विशेष दर्जा दिया जाना, नदियों के जल में इसका उचित भाग, चण्डीगढ़ इत्यादि, समस्त प्रकार के आरक्षण निर्धनता व आर्थिक आधार पर हो, सामाजिक न्याय सुनिश्चित किया जावे, जातिगत आरक्षण के माध्यम से नहीं बल्कि हमारे समाज में व्याप्त भेद या अन्तर को धीरे-धीरे समाप्त करके (जैसे गरीब-अमीर, शहरी-ग्रामीण, लिंग विभेद, शिक्षित-अशिक्षित, विकसित-अविकसित आदि का भेद)।

15. दक्षिणी एशिया में आम सहमति की स्थापना, दक्षिणी एशियाई पड़ौसी देशों के प्रति विवाद तथा तनाव की विदेश नीति को छोड़ कर तथा उनके बीच के सभी विवादों का हल करके ही की जा सकती है। इस कार्य हेतु मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता है, अर्थात् वर्तमान शीत युद्ध की विदेश नीति तथा हमेशा बढ़ने वाली सैन्यीकृत रक्षा नीति को एक शांतिपूर्ण नीति में परिवर्तन करना होगा तथा किसी विवाद को बातचीत के जरिए हल किया जाना चाहिए। इस प्रकार के कदम में पहली आवश्यकता तो यह है कि जम्मू कश्मीर समस्या को भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू कश्मीर के लोगों के बीच त्रिपक्षीय वार्ता के जरिए हल किया जाए। इसकी मूलभूत

प्रकृति तथा आधारभूत वास्तविकताओं को देखा जाए तो जम्मू कश्मीर समस्या का समुचित निष्पक्ष एवं व्यावहारिक हल यह है जिसमें भारत, पाकिस्तान तथा जम्मू कश्मीर के लोग तीनों का ही हित-साधन होता हो। इस सिद्धान्त को आधार मानते हुए एक उचित विकल्प तो यह है कि इस राज्य पर पाक अधिकृत कश्मीर सहित, भारत-पाक की संयुक्त सत्ता कायम कर दी जावे। यह संयुक्त सत्ता केवल जम्मू कश्मीर से सम्बन्धित विषयों को संचालित करेगी जैसे इसके विदेशी मामले, रक्षा एवं मुद्रा तथा बाकी सब मामले जम्मू-कश्मीर राज्य की सरकार के अधिकार क्षेत्र में रखे जाएंगे, जो स्वयं को एक संघीय इकाई के रूप में पुनर्गठित करेगी, तथा अपने सभी 8 जातिगत क्षेत्रों को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान करेगी। जम्मू कश्मीर पर यह आम सहमति दोनों देशों को इस बात के लिए सक्षम बना देगी कि वे परमाणु अस्त्रों के विकल्प को अस्वीकार कर दें तथा सीटी-बीटी संधि पर इस परन्तुक या शर्त के साथ हस्ताक्षर कर दें कि 5 परमाणु राष्ट्रों के पास जितने भी परमाणु हथियार हैं उन्हें संधि पर हस्ताक्षर करने के 20 वर्ष के भीतर-भीतर नष्ट कर दिया जाएगा। इसी भांति दूसरी दक्षिण-एशियाई समस्याओं व विवादों को भी बातचीत के जरिए हल किया जावे जैसे कि गंगा जल के बंटवारे पर भारत-बगंला देश का विवाद, चकमा शरणार्थी व्यापार, संयुक्त सीमाएं, एक दूसरे देश में आवास की समस्याएं, भारत व श्रीलंका का एक दूसरे के समुद्रों में मछली पकड़ने का विवाद, व्यापारिक मामले आदि, व्यापार व आवागमन व्यवस्थाओं पर भारत व नेपाल के मतभेद इत्यादि।

16. विश्व स्तर की आम सहमति का निर्माण यह मांग करके किया जा सकता है कि संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन, वीटो-पॉवर समाप्त करने के आधार पर किया जाए, सभी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के समस्त सदस्यों को एक समान अधिकार प्रदान किए जावें तथा सभी क्षेत्रीय विवाद आपसी बातचीत व विचार-विर्मश के माध्यम से ही हल किए जावें।

V

17. केन्द्रीकृत राष्ट्रीयवाद तथा प्रमुख राजनैतिक दलों में क्षेत्रीयवाद की बढ़ती हुई निरर्थकता का प्रादुर्भाव कोई विकसित स्थिति नहीं है। इसका अल्पकालिक कारण तो 1947 के बाद के नेहरूवादी मॉडल का घटिया प्रदर्शन है, जिसके परिणाम स्वरूप चढ़ाव कम व उतार अर्थात् अवनति ज्यादा हुई है, इसने कुछ थोड़े से लोगों के भाग्य को बदला है परन्तु बहुतों के भाग्य को बदलने से इन्कार कर दिया, और इस प्रकार भारत के लोगों की आकांक्षाएं पूरी करने में असफल रहा। संक्षेप में, इस प्रणाली ने हमारे राजनैतिक जीवन में अपराधीकरण, साम्प्रदायीकरण, जातिवाद, भ्रष्टाचार व हिंसा को जन्म दिया है, अस्थाई विकास किया है, असंन्तुलित वित्तीय एवं अकार्यकुशल अर्थव्यवस्था की स्थापना की, विवाद तथा शीत युद्ध पर आधारित विदेश नीति एवं

सैन्य नीति प्रदान की, व्यवहार के मानदण्डों का अवमूल्यन किया तथा इतिहास के तथ्यों को गलत समझने की भावना विकसित की, इन सबने भारतीय लोगों के व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों प्रकार के विकास में रुकावट पैदा की।

18. मूलत: उपरोक्त प्रक्रिया का प्रादुर्भाव आधुनिक भारत की समाधान न करने की आधारभूत प्रकृति से हुआ, अर्थात् इसकी विविध प्रकार की जातीय, सांस्कृतिक, भाषायी, धार्मिक व क्षेत्रीय प्रकृति, जिनका जन्म ब्रिटिश शासन के दौरान भारत के एक राष्ट्र के रूप में निर्माण की प्रक्रिया के दौरान हुआ। यह विविध रूपों वाली वास्तविकता एक लम्बे समय से बिना समाधान के पड़ी है तथा ब्रिटिश शासकों की फूट डालो राज करो की नीति से इसमें वृद्धि ही हुई है। सन् 1947 के पूर्व को गांधीवादी राष्ट्रवाद ने जिसकी विशेषता थी सुधारवादी हिन्दू मानववाद, बहुसंख्यक एवं अल्पसंख्यकों के हितों को संतुलित करने के बजाय, मुस्लिम अल्पसंख्यकों द्वारा राष्ट्रीय मुख्य धारा से और अधिक पृथक होने की स्थिति में वृद्धि की, जिसका परिणाम हुआ 1947 में भारत का साम्प्रादायिक विभाजन।

19. यद्यपि 1947 के विभाजन से यह हल्की जरूर पड़ी, लेकिन विविध रूपों वाली भारतीय वास्तविकता 1947 के बाद के भारत में भी कार्यशील रही। 1947 के बाद का नेहरूवादी स्वरूप भी इस वास्तविकता के लिए नकारात्मक उत्तर था जिसकी विशेषताएं थी केन्द्रीकृत राष्ट्रवाद, बहुसंख्यक धर्मनिरपेक्षवाद, एक दलीय सत्ता, व्यक्तिपूजा, राजनीति आधारित अर्थव्यवस्था, ढुलमुल विदेश एवं रक्षा नीति, व्यवहार के संदिग्ध मानदण्ड तथा इन सबसे सर्वोपरि एक पाक विरोधी रुख (जो भारतीय राष्ट्रवाद की प्रमुख प्रवृत्ति थी), यह स्वरूप भारतीय लोगों की आकांक्षाएं पूरी करने में विफल रहा तथा भारत में एक राष्ट्रीय पहचान की भावना स्थापित करने में भी असफल रहा।

VI

20. केन्द्रीकृत राष्ट्रवाद तथा प्रमुख राजनैतिक दलों के क्षेत्रीयकरण की बढ़ती हुई निरर्थकता की प्रक्रिया के प्रारम्भ होने के कुछ प्रभाव दृष्टिगत होते हैं। जिसमें से प्रमुख इस प्रकार हैं—

21. एक तो यह है कि यह भारतीय राजनीति, दलों एवं कार्यक्रम के संघीयकरण की प्रक्रिया की शुरूआत का संकेत देती है।

22. दूसरा यह है कि अब से अर्थात् आज के बाद सभी राष्ट्रीय दलों को केवल थोथे वायदे करने के अतिरिक्त केन्द्र-राज्य सम्बन्धों की पुनर्स्थापना अर्थात् पुनर्संशोधन के लिए कुछ ठोस एवं व्यावहारिक कदम उठाने पड़ेंगे।

तीसरा प्रभाव यह है कि यह प्रमुख राष्ट्रीय दलों की प्रदेश कमेटियों के लिए

आवश्यक कर देगा कि वे अपने सम्बन्धित राज्य विशेष के राजनैतिक हालात के आधार पर, कार्य करने की अपनी स्वयं की एक विधि या प्रणाली अपनाने के अधिकार की मांग करे।

23. चतुर्थ प्रभाव यह है कि क्षेत्रीय दलों द्वारा शासित कुछ सरकारें अपनी बढ़ती हुई ऋणग्रस्तता के कारण समस्त क्षेत्रीय प्राकृतिक व वित्तीय संसाधनों पर पूर्ण नियन्त्रण की मांग कर सकती है।

VII

24. यह संघीयकरण या संयुक्तीकरण की प्रक्रिया कुछ वस्तुगत रुकावटें या विवशताओं का सामना करने को बाध्य है।

प्रथमत:, देवगौड़ा सरकार की एक ओर तो केन्द्रीयवाद से ओतप्रोत कांग्रेस आई तथा दूसरी ओर वामपंथी दलों पर निर्भरता सदैव ही संघीयकरण या संयुक्तीकरण की प्रक्रिया के विकास में एक प्रमुख रुकावट है।

द्वितीयत:, उच्च स्तरीय नौकरशाही, सशस्त्र बल, प्रशासनिक ढांचा, वित्तीय तन्त्र, राजकीय केन्द्रीय परियोजना आदि का केन्द्रीकृत स्वरूप एवं व्यवहार अर्थात् कार्यप्रणाली भी संघीयकरण के निर्बाध रूप से कार्य करने के मार्ग में एक रुकावट है।

तीसरे, देवगौड़ा की स्थिति में स्थायित्व तथा उसकी सरकार पर उसके भागीदारों के दबाव में कमी की स्थिति, उसकी आज उपलब्ध संवैधानिक एवं कानूनी सत्ता को अपने ही पास रखने की इच्छा में और अधिक वृद्धि कर सकती है।

चतुर्थ, भाजपा, एक भंयकर या उग्र विरोधी गुट के रूप में सदैव संघीयकरण के रास्ते में कई प्रकार के रोड़े अर्थात् बाधाएं उत्पन्न करेगा।

पांचवें, अभी इस समय राजनैतिक दलों के क्षेत्रीयकरण की प्रक्रिया की कोई शक्तिशाली प्रवृत्ति विद्यमान नहीं है, यह प्रक्रिया आगामी लोकसभा चुनावों में रुक सकती है। और चुनावों मे भाजपा सर्वाधिक शक्तिशाली दल के रूप में उभर कर सामने आ सकती है। इस प्रकार की सम्भावना केवल तभी बढ़ सकती है जब कि भाजपा भारतीय लोगों के समक्ष अपना पक्ष इस प्रकार अर्थात् इस तात्पर्य को सामने रखने में सफल हो जाती है कि इसमें सरकार बनाने के वैधिक अधिकार को जातिवादी एवं अल्पसंख्यकवादी अवसरवादियों (रामो-वामो) तथा भ्रष्टाचार के अवसरवादी संगठन (कांग्रेस आई) के कपटपूर्ण गठबन्धन के कारण गलत ढंग से छीन लिया गया तथा इसके अलावा भाजपा की जीत इस प्रकार भी हो सकती है यदि संयुक्त मोर्चा सरकार ऐसी कोई भयंकर भूल कर दे, जो यह अपने अवसरवादी स्वरूप के कारण अवश्य करेगी। लेकिन यदि भारत के लोग एक बार भी हिन्दुत्व (जो सब प्रकार की एकरूपता पर जोर देता है) के अनुभव से गुजरते हैं (जो थोड़ी अवधि का ही होना

सम्भावित है), इससे ऐसी सम्भावना बनती है कि भारतीय राजनीति, दलों एवं कार्यक्रम के क्षेत्रीयकरण की रुकी हुई प्रक्रिया को एक अत्यधिक अर्थात् भयंकर प्रोत्साहन या गति मिल जाएगी।

VIII

25. हालांकि जो तत्व संघीयकरण की प्रक्रिया के अनुकुल है वे सामाजिक महत्व के बीच रुकावटें डालने वाले तत्वों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। ये तत्व वास्तव में प्रत्येक राष्ट्र के लिए अति आवश्यक हैं विशेषकर चीन, भारत, सं.रा. अमेरिका, रसिया, इण्डोनेशिया, पाकिस्तान, नाइजिरिया आदि जैसे बड़े राष्ट्रों के लिए।

26. प्रथम आवश्यक तत्व है कि प्रत्येक राष्ट्र आज के समय की दो सर्वाधिक गम्भीर चुनौतियों का प्रभावशाली हल अवश्य करता है; वे हैं पर्यावरण का प्रदूषण तथा आबादी की वृद्धि; ये दोनों ही जैविक अस्तित्व के लिए खतरा उत्पन्न करते हैं। साधारण भाषा में कहा जाए तो इसका तात्पर्य है एक ओर तो पर्यावरणजनित प्रदूषण या गन्दगी को हटाना जो मानव द्वारा प्राकृतिक स्रोतों के दुरुपयोग से पैदा होते हैं जैसे वन, पानी, हवा इत्यादि तथा दूसरी ओर लोगों का एक टिकाऊ विकास द्वारा जीवन स्तर सुधार करके आबादी वृद्धि की ऊंची दर को नियन्त्रित करना तथा टिकाऊ विकास विशेषकर यह मांग करता है कि मनुष्य में भेद या अन्तर को मिटाया जाए जैसे के धनी-निर्धन, शहरी-ग्रामीण लैंगिक असमानता, शिक्षित-अशिक्षित, विकसित व विकासशील, इत्यादि।

27. स्पष्ट है कि इस कार्य के लिए सभी लोगों की भागीदारी की आवश्यकता पड़ेगी, जिसके लिए आगे चल कर, चलने योग्य एवं प्रबन्ध कर पाने योग्य, स्व-प्रबन्ध में प्रशासनिक राज्यों की स्थापना की आवश्यकता पड़ेगी, जिसमें वे लोग शामिल होंगे जिनके बीच अधिक एकता लाने वाली सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भाषायी सादृश्यता अर्थात् एकरूपता होगी। इस कार्य के लिए बड़े राज्यों को ऐसी छोटी इकाइयों में पुनर्गठित करने की आवश्यकता होगी, जिनके राष्ट्रीय, क्षेत्रीय या विश्व समुदाय द्वारा तैयार की गई योजना के अनुसार अपने प्राकृतिक एवं मानव संसाधनों के प्रबन्ध हेतु समस्त अधिकार होंगे। धीरे-धीरे ऐसी स्वप्रबन्धित प्रशासनिक इकाइयां पूर्ण राज्यों का दर्जा प्राप्त कर लेंगी तथा क्षेत्रीय समुदाय की सदस्यता हेतु पात्र बन जाएगी।

28. दूसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता यह है कि वैश्विकरण की प्रक्रिया एवं इसका कार्यक्रम यह मांग करता है कि संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन एक प्रभावशाली वैश्विक प्रबन्ध केन्द्र के रूप में किया जाए, जो एक तरफ तो पूर्णत: प्रजातांत्रिक सिद्धान्तों पर आधारित हो तथा इसमें समान अधिकार वाले सदस्य शामिल हो, जो

किसी के लिए वीटो जैसे विशेष अधिकारों से मुक्त हो, तथा दूसरी ओर क्षेत्रीय समुदायों का गठन किया जावे जैसे सार्क, एशियान, ईसी, नेफ्ता इत्याद, जिनमें क्षेत्र का प्रत्येक राष्ट्र, सदस्य के रूप में शामिल हो तथा सामान्य क्षेत्रीय समस्याओं को हल करने के लिए कार्य करें जैसे साझा बाजार, सुरक्षा व्यवस्था, पर्यावरण, जनसंख्या तथा मानवाधिकार, इत्यादि।

29. इस पूर्णतया प्रजातांत्रिक व्यवस्था में एक बड़े देश को जैसे भारत या चीन, को भी वैसे ही अधिकार प्राप्त होंगे जो एक छोटे देश को जैसे भूटान और मालदीव को अर्थात् केवल एक वोट का अधिकार। छोटे राष्ट्रों की तुलना में कई गुणा जनसंख्या होने के बावजूद भी एक बड़े देश को एक देश एक वोट के अधिकार से न केवल महत्वपूर्ण राजनैतिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों पर वोट देने के अधिकार में हानि होगी बल्कि विश्व में इस देश को अपने व्यापार, वित्त तथा पदार्थों के संसाधनों के अपने हिस्से में भी कमी आएगी। यही स्थिति बड़े राष्ट्रों को क्षेत्रीय संगठनों में नियन्त्रित अर्थात् नियमित करेगी अर्थात् उन्हें ऐसी ही स्थिति का सामना करना पड़ेगा। यह स्थिति अनिवार्य रूप से बड़े से बड़े देशों को छोटे एवं स्वतन्त्र राज्यों के रूप में पुनर्गठित करने को बाध्य करेगी जो स्वयं किसी क्षेत्रीय संगठन या विश्व संगठन के सदस्य बनने को पात्र अर्थात् सक्षम होंगे। अनिवार्यत: बड़े राष्ट्र या तो अपने को छोटे छोटे राज्यों के संघों के रूप में परिवर्तित कर लेंगे या एक राष्ट्रीय सत्ता के रूप में फुफकारते रहेंगे।

30. तीसरी आवश्यकता यह है कि वैश्वीकरण की प्रक्रिया प्रत्येक देश से यह मांग करती है कि वहां एक कार्यकुशल एवं सक्षम अर्थव्यवस्था को संगठित किया जावे। यह बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के नवीनतम अनुभव के अनुरूप हो सकता है जो बड़ी इकाइयों को छोटी इकाइयों में पुनर्गठित कर अधिक लाभदायक परिणाम प्राप्त कर रही है—इन छोटी इकाइयों को स्वतन्त्र रूप से निर्णय के अधिकार है, यह उपलिब्ध छोटे एवं कामचलाऊ क्षेत्रों के गठन से मिली है जो अपने को उपलब्ध समस्त मानव एवं भौतिक संसाधनों की समग्र स्थाई योग्यता या क्षमता का पूरा सदुपयोग करने में सक्षम है।

31. भारत इतिहास की एक सर्वाधिक मानक या प्रामाणिक स्थिति या चरण में प्रवेश कर रहा है जिसमें दीर्घकालीन परिवर्तन होना सम्भावित है। आज के भारत के लिए दो वस्तुएं आवश्यक हैं—संघीयकरण तथा भागीदारी वाला प्रजातन्त्र। दोनों का ही उद्देश्य केन्द्रीकृत भारतीय राजनीति का प्रजातन्त्रीकरण करना होगा, जो आज भारत की बहुआयामी आधारभूत सामाजिक वास्तविकता तथा बढ़ती हुई वैश्विक प्रवृत्ति की तुलना में असंगत या बेमेल है।

32. संघीयकरण (वर्तमान भारतीय स्वरूप वाला नहीं) का सही तात्पर्य है सम्प्रभुता सम्पन्न राज्यों द्वारा एक ऐसे संघ का निर्माण जहां वे राज्य अपने कुछ अधिकार संघ को सौंप देते हैं तथा बाकी शेष अपने पास रखते हैं। परम्परागत भाषा में कहा जाए तो संघ (अर्थात् संघीय केन्द्र सरकार) ने सर्वोच्च शक्तियों का प्रयोग व उपयोग किया है तथा आज की नवीन उभरती स्थिति में संघ एवं राज्यों को अपने पारस्परिक सम्बन्धों को लेकर एक समान अधिकार होने चाहिए।

33. भागीदारी वाले प्रजातन्त्र को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि यह एक कानून का शासन है जिसके अधीन लोग-बाग अर्थात् जनता सर्वाधिक सम्भव शक्तियों का प्रयोग करती है, न केवल चुनावों के समय (जैसी कि स्थिति आज के पश्चिमी संसदीय प्रजातन्त्र में अथवा अमेरिकन अध्यक्षीय प्रणाली में है), लेकिन सभी समयों पर एवं सभी सामाजिक क्षेत्रों में। जबकि संसदीय एवं अध्यक्षीय प्रणालीयों में जनता अधिकारों का प्रयोग अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से करती है अर्थात् राजनैतिक दलों के माध्यम से, जबकि भागीदारी प्रणाली में, लोगों को कुछ शक्तियों का प्रयोग तो सीधे ही करने का अधिकार होना चाहिए तथा कुछ अप्रत्यक्ष रूप से अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से, जो इस बात के लिए बाध्य होंगे कि वे एक निश्चित अवधि के भीतर अपने कार्यकलापों का लेखाजोखा जनता को देंगे (प्राथमिकता के तौर पर इलेक्ट्रोनिक संचार माध्यमों के जरिये)।

इसके अलावा विशिष्ट कानून के अन्तर्गत जनता को यह अधिकार होना चाहिए कि वह अपने निर्वाचित प्रतिनिधि को किसी भी समय वापिस बुला सके।

सभी मूलभूत मुद्दों पर अन्तिम निर्णय जनता द्वारा लिया जाना चाहिए वह जनमत संग्रह द्वारा हो अथवा आत्मनिर्णय द्वारा।

34. भारत जैसे विशाल देश का प्रबन्ध एवं संचालन, लोगों की विचारधारा एवं जीवन शैली में तेजी से हो रहे परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में, एक केन्द्र से नहीं किया जा सकता। इसे एक प्रजातांत्रिक पुनर्गठन की प्रक्रिया से गुजरना आवश्यक या वांछनीय है तथा इससे बचाव का कोई तरीका नहीं है। यह (भारत) इस परिवर्तन को सामान्य तरीके से अर्थात् शांति से लाता है या अशांति से या कलहकारी तरीके से लाता है—यह इस बात पर निर्भर करता है कि यह आज की स्थिति में किस प्रकार व्यवहार करता है, जिस स्थिति में प्रत्येक दल तथा राजनेता को जनता के द्वारा ली गई परीक्षा के दौर से गुजरना पड़ता है। यदि परम्परागत ताकतें एक खाई या सीमा के घेरे में रहती है (जैसे कि वे अभी हैं), तो सामाजिक उपद्रव या क्रांति की सम्भावनाएं प्रबल बन जाती हैं। नवीन प्रजातांत्रिक शक्तियों के उभरने की स्थिति में सामाजिक परिवर्तन सामान्य एवं शांतिपूर्ण तरीके से हो सकता है।

❋ ❋ ❋

कुछ महत्वपूर्ण तथ्य

1996 के लोकसभा परिणाम : कुल परिदृश्य

चुनाव हुए	=	543	परिणाम घोषित	=	543
भाजपा	=	161	समता पार्टी	=	8
कांग्रेस	=	140	शि.अ.द.	=	8
जद	=	46	बसपा	=	11
माकपा	=	32	कांग्रेस (ति)	=	4
भाकपा	=	12	अगप	=	5
तमका	=	20	हविपा	=	3
डीमके	=	17	अभाफाव	=	3
टीडी	=	16	आरएसपी	=	5
शिव सेना	=	16	स्वतंत्र	=	7
समाजवादी पार्टी	=	17	अन्य	=	12

प्रांतो में स्थिति

1. हिमाचल	–	सीटें 4	कांग्रेस 4
2. पंजाब	–	सीटें 13	कांग्रेस 2, शिअद 8, बसपा 3
3. हरियाणा	–	सीटें 10	कांग्रेस 2, भाजपा 4, हविपा 3, स्वतंत्र 1
4. राजस्थान	–	सीटें 25	कांग्रेस 12,भाजपा 12, कांग्रेस (ति) 1
5. गुजरात	–	सीटें 26	कांग्रेस 10, भाजपा 16
6. महाराष्ट्र	–	सीटें 48	कांग्रेस 15, भाजपा 17, शिवसेना 16
7. गोआ	–	सीटें 2	एमजीपी 1, स्वतंत्र 1
8. कर्नाटक	–	सीटें 28	कांग्रेस 5, भाजपा 6, जद 16 अन्य 1
9. जे.के.	–	सीटें 6	कांग्रेस 4, जद 1
10. दिल्ली	–	सीटें 7	कांग्रेस 2, भाजपा 5
11. एम.पी.	–	सीटें 40	कांग्रेस 8, भाजपा 27, बीएसपी 2, एआईआईटीसी 1, एमपीवीसी 1, स्वतन्त्र 1
12. आंन्ध्र प्रदेश	–	सीटें 42	कांग्रेस 22, भाजपा/माकपा 3, टीडीपी 16 अन्य 1
13. तमिलनाडु	–	सीटें 39	टीएमसी 20, डीएमके 17, भाकपा 2

14. केरल – सीटें 20 कांग्रेस 7, माकपा 5, भाकपा 2, जद 1, स्वतन्त्र व अन्य 5
15. उत्तर प्रदेश – सीटें 85 कांग्रेस 5, भाजपा 52, सपा 16, बीएसपी 6 एआईआईसीटी 2, जद 2, अन्य 2
16. सिक्किम – सीटें 1 एसडीएफ 1
17. बिहार – सीटें 54 भाजपा 18, भाकपा 3, कांग्रेस 2, जद 22, समता पार्टी 6 एसपी 1, जेएमएम (एस) 1, स्वतन्त्र 1
18. उड़िसा – सीटें 21 कांग्रेस 16, जद 4, समता पार्टी 1
19. अरूणाचल – सीटें 2 स्वतंत्र 2
20. मेघालय – सीटें 2 कांग्रेस 1, स्वतन्त्र 1
21. प. बंगाल – सीटें 42 कांग्रेस 9, माकपा 23, भाकपा 3, अन्य 7
22. नागालैण्ड – सीटें 1 कांग्रेस 1
23. मिजोरम – सीटें 1 कांग्रेस 1
24. मणीपुर – सीटें 2 कांग्रेस 2
25. त्रिपुरा – सीटें 2 माकपा 2

केन्द्रशासित प्रदेश

1. अण्डमान – सीटें 1 कांग्रेस 1
2. चण्डीगढ़ – सीटें 1 भाजपा 1
3. दादर नागर हवेली – सीटें 1 कांग्रेस 1
4. लक्षद्वीप – सीटें 1 कांग्रेस 1
5. पाण्डीचेरी – सीटें 1 कांग्रेस 1
6. आसाम – सीटें 14 कांग्रेस 5, अगप 5, भाजपा 1, माकपा 1, स्वतंत्र व अन्य 2
7. दमन एण्ड दीव – सीटें 1 कांग्रेस 1

40 प्रतिशत भारतीय मतदाताओं ने कभी भी अपने मताधिकार का प्रयोग नहीं किया

लगभग 40 प्रतिशत भारतीय मतदाताओं ने कभी भी अपने लोकतांत्रिक अधिकारों का प्रयोग नहीं किया तथा सरकार इन मतों की अल्पसंख्या से ही बनी।

चुनाव का वर्ष	मतदान का प्रतिशत	चुनाव का वर्ष	मतदान का प्रतिशत
1952	61.2	1977	60.5
1962	55	1984	64

1967	61.3	1989	62
1971	55.3	1991	61

टाइम्स ऑफ इडिण्या 3.5.96 पेज 7

प्रति व्यक्ति आय

आज भारत की प्रति व्यक्ति आय अमेंरिका के 47वें भाग, आस्ट्रेलिया के 38वें इंग्लैण्ड के 25वें तथा जापान के 29वें भाग के बराबर है।

हिन्दुस्तान टाइम्स 22.2.96 पेज 13

गरीबी में वृद्धि

सरकारी सांख्यकी का अनुमान है कि उत्पादन में वृद्धि है, लेकिन गरीबी की रेखा से नीचे जीवन जाने वाले परिवारों में कमी होने के बजाए वृद्धि हुई है। उदाहरण के लिए 1987-88 में गरीबी की रेखा से नीचे जाने वाले परिवारों का प्रतिशत 33 था जबकि आज यह 49.61 प्रतिशत है।

भारत 10 सर्वोच्च भ्रष्ट देशों की सूची में

भारत विश्व के 10 सर्वोच्च भ्रष्ट देशों की सूची में 7वें स्थान पर है इस सूची में इण्डोनेशिया, चीन तथा पाकिस्तान ऊपर है। यह बात ट्रांसपेरेन्स इन्टरनेशनल, एक जर्मन गैर सरकारी संस्था ने की।

हिन्दुस्तान टाइम्स 5.5.96 पेज 15

हालिया घोटाले

क्र.सं.	घोटाले	उजागर हुआ	लगभग राशि रुपयों में
1.	हर्षद मेहता द्वारा दी गई रकम	1991	1 करोड़
2.	प्रतिभूति घोटाला	1992	5000 करोड़
3.	गोल्ड स्टार स्टील एण्ड एल्होय	1992	2 करोड़
4.	पी एस यू निवेश	1992	10,000 करोड़
5.	शक्कर घोटाला	1994	638 करोड़
6.	हवाला काण्ड	1996	65 करोड़
7.	जे एम एम भुगतान	1996	3.5 करोड़
8.	मकानों का घोटाला	1996	200 करोड़
9.	चारा घोटाला	1995	600 करोड़
10.	यूरिया घोटाला	1996	133 करोड़

(स्रोत : ट्रिब्यून लाइब्रेरी)

बेरोजगारी

बेरोजगारी का नया पंजीकरण और नियुक्तियां

अप्रेल-दिसम्बर, 1995 के दौरान बेरोजगारी के नए पंजीकरण का 3.5 प्रतिशत से भी कम नियुक्तियां हुई, यह दिखाता है कि भारत की बेरोजगारी को निकट भविष्य में नियंत्रित नहीं किया जा सकता।

सन्	बेरोजगारों की पंजीकरण सं. (000 में)	सन्	नए बेरोजगारों का पंजीकरण (000 में)	नियुक्तियां मिली (000 में)	नए पंजीकरण पर नियुक्तियों का प्रतिशत
दिस.94	36,692	अप्रेल-दिस.94	4,639	157.7	3.36
दिस.95	36,742	अप्रेल-दिस.95	4,616	160	3.47

रोजगार कार्यालयों में पंजीकरण की संख्या

(जनवरी से दिसम्बर, 1995 तक, 000 में)

जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रेल	मई	जून
36,737	36,696	36,635	36,538	36,414	36,565
जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर
36,973	37,165	37,284	37,294	37,224	36,742

टाइम्स ऑफ इण्डिया 12.6.96 और 14.6.96

नया बाहरी कर्ज सेवाओं का भुगतान

अप्रेल-फरवरी, 1995-96 (करोड़ रुपयों में)

बाहरी कर्ज के मूल भुगतान तथा ब्याज के रूप में भारत बाहरी सहायता में प्राप्त राशि से अधिक चुकाता है। वर्ष 1995-96 के प्रथम इग्यारह महिनों के आकड़े बताते हैं कि बाहरी भुगतान 2713 करोड़ रुपये था, यह 1994-95 की इसी अवधि से 50 प्रतिशत था।

वर्ष	कुल प्राप्तियां	कर्ज भुगतान		कुल	सकल बाहरी भुगतान
		मूल	ब्याज		
1994-95	7,696	5,368	4,154	9,522	1,826
1995-96	7,957	6,298	4,372	10,670	2,713

स्रोत : मासिक आर्थिक रपट, अप्रेल 1996, टाइम्स ऑफ इण्डिया 16.6.96

भारत में प्रत्यक्ष बाहरी निवेश

विभिन्न विदेशी निवेशकों द्वारा भारत में पूंजी निवेश की स्वीकृतियां

देश	निवेश (मिलियन रुपयों में)	देश	निवेश (मिलियन रुपयों में)
अमेरिका	15421.7	थाईलैण्ड	23490.1
इजरायल	41484.7	जर्मनी	22128.5
इंग्लैण्ड	37975.1	आस्ट्रेलिया	19972.4
जापान	28355.3	हालैण्ड	16477.8
मारीशियश	24674.7	स्वीट्जरलैण्ड	15098.4

स्रोत : एस आई ए न्यूज लेटर, मार्च 1996 और एस आई ए, यू एन आई

भारत में विदेशी समझौतों की स्वीकृतियां

वर्ष	1991	1992	1993	1994	1995	1996
कुल विदेशी समझौते (तकनीकी+निवेश संबंधि)	950	1520	1476	1854	2337	197
विदेशी निवेश (अरब रुपयों में)	5.3	38.9	88.6	141.9	320.7	6.9

टाइम्स ऑफ इण्डिया 4.5.96 पेज 14

विभिन्न क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश

अगस्त 91 जनवरी 1996 तक (मिलियन रुपयों में)

क्षेत्र	राशि	क्षेत्र	राशि
टेक्सटाईल (डाई, प्रिटिंग सहित)	15741.14	सेवा क्षेत्र	32834.46
होटल एवं पर्यटन	19053.22	रसायन (फिर्टिलाईजर के अलावा)	36627.53
खाद्य संसाधन उद्योग	23504.53	धातुकर्मी उद्योग	41025.03
विद्युत उपयंत्र	28751.44	ईधन	117072.94
यातायात उद्योग	29797.01	संचार	182775.05

स्रोत : एस आई ए न्यूज लेटर फरवरी '96, टाइम्स ऑफ इण्डिया 13.5..96 पेज 18

भारत का व्यापार घाटा 4.538 अरब डालर तक बढ़ा

1995-96 के दौरान निर्यात 21.4 प्रतिशत की वृद्धि तक टिके नहीं रह सके 1994-95 की तुलना में व्यापार घाटा दुगुना से अधिक हुआ है। यह इसलिए कि आयात 20 प्रतिशत से अधिक बढ़ गया है तथा यह एक उच्च आधार स्तर पर है।

वर्ष	निर्यात (अरब डालर में)	वर्ष	आयात (अरब डालर में)	वर्ष	व्यापार संतुलन (अरब डालर में)
1993-94	22.17	1993-94	23.21	1993-94	-1.04
1994-95	26.22	1994-95	28.25	1994-95	-2.03
1995-96	31.63	1995-96	36.37	1995-96	-4.54

भारत के विदेशी मुद्रा भण्डार में कमी

प्रतिवर्ष 2843 मिलियन डालर

दिनांक एवं वर्ष	विदेशी मुद्रा सम्पदा मिलियन डालर में	सोना	एस डी आर	कुल
17 मार्च 1996	17076	4520	26	21622
10 मार्च 1996	17271	4520	70	21861
19 मार्च 1996	19948	4481	36	24465

स्रोत : वाणिज्य मंत्रालय और रॉयटर, टाइम्स ऑफ इण्डिया 28.5.96 पेज 17

नेहरू से देवगौड़ा तक भारत के प्रधानमंत्री

1. जवाहरलाल नेहरू (15.8.47-27.5.64), 2. लाल बहादुर शास्त्री (9.6.64-11.1.66), 3. इन्दिरा गांधी (24.1.66-24.3.77), 4. मोरारजी देसाई (24.3.77-28.7.79), 5. चरणसिंह (28.7.79-14.1.80),6. इन्दिरा गांधी (14.1.80-31.10.84),7. राजीव गांधी (31.10.84-1.12.89),8. वी. पी. सिंह(2.12.89-7.11.90),9. चन्द्रशेखर(10.11.90-21.6.91),10. पी. वी. नरसिंहराव (21.6.91-16.5.96),11. अटल बिहारी वाजपेयी (16.5.96-28.5.96),12. एच.डी. देवगौड़ा (1.6.96)

विश्व अनाज उत्पादन में कमी

खाद्य एवं कृषि संगठन के मुताबिक 1995-96 में अनाज आपूर्ति में गड़बड़ी होगी, इसने कहा कि विश्व अनाज उत्पादन 1993 मिलियन टन, जो पिछले वर्ष से 19 मिलियन टन या एक प्रतिशत कम हुआ है।

इसके मुताबिक इस वर्ष अनाज उत्पादन 1995-96 में आवश्यक उपभोग की पूर्ति नहीं कर सकेगा।

78 करोड़ लोग अल्पपोषित

संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ ए ओ) के विशेषज्ञों के अनुसार विकासशील विश्व जनसंख्या का लगभग 20 प्रतिशत को अपर्याप्त भोजन

मिलता है।

इनकी सही-सही कुल संख्या मापना असंभव है, ऐसा पाया गया है कि 78 करोड़ से अधिक लोग अपर्याप्त भोजन में जी रहे हैं तथा 19 करोड़ 20 लाख बच्चे प्रोटीन की कमी (प्रोटीन एनर्जी मेलन्यूट्रीशन) का शिकार है।

अन्तर्राष्ट्रीय शरणाथियों की संख्या दुगुनी हुई

रेड क्रास के अनुसार यदि हालिया रुझान जारी रहे तो अगले दस वर्षो में विश्व के कई स्थानों पर चल रहे झगड़ों के कारण पलायन कर जाने वाले लोगों की संख्या दुगुनी हो जायेगी।

रेड क्रास की अन्तर्राष्ट्रीय फेडरेशन की प्रकाशित रिपोर्ट कहती है कि 1985 में 22 मिलियन शरणार्थी पलायन कर गए लोग थे। 1995 में इनकी संख्या 37 मिलियन थी।

1995 सर्वोच्च गर्म वर्ष था

वर्ल्ड-वॉच संस्था ने अपनी हालिया रिपोर्ट में कहा है कि पिछला साल विश्व के लिखित इतिहास के तमाम वर्षों में सबसे गर्म था।

इसके परिणाम स्वरूप इसने चेतावनी दी कि अनाज उत्पादन में कमी होगी जिससे महंगाई बढ़ेगी।

आने वाले दिन खतरनाक

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू एच ओ) ने चेतावनी दी है कि ''हम छूत की (संक्रामक) बीमारियों के विश्व संकट के किनारे पर खड़े हैं।''

10 बीमारियां सबसे ज्यादा घातक

लगभग 17 मिलियन लोग 1995 में छूत की बीमारियों से मरे।

क्र.सं.	बीमारी का नाम	मरने वालों की संख्या
1.	न्यूमोनिया तथा श्वास संबंधी अन्य संक्रामक रोग	4.4 मिलियन
2.	क्षय रोग से	3.1 मिलियन
3.	शीत ज्वर (मलेशिया)	2.1 मिलियन
4.	अतिसार जैसे-कॉलेरा (हैजा), टाइफाइड (आंत्र ज्वर), डॉयसेंटरी (रक्तातिसार)	3.1 मिलियन
5.	हेपेटिटिस (यकृत शोध) बी	1.1 मिलियन

6.	एड्स	1.1 मिलियन
7.	मिसल्स (खसरा)	1.0 मिलियन
8.	नव प्रसव टेटेनस (धनुस्तम्भ)	0.4 मिलियन
9.	हुपिंग कफ (कुकर खांसी)	0.355 मिलियन
10.	इन्टेस्टीनल वार्म्स (आंत्र कीड़े)	0.135 मिलियन

गरीबी और बेरोजगारी बढ़ेगी : आई एल ओ

संयुक्त राष्ट्र की एक रपट के अनुसार निपट गरीबी में रहने वाले शहरी निवासियों की संख्या इस शताब्दी के अन्त में 1 अरब हो जायेगी जो 1990 में 40 करोड़ थी।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आई एल ओ) द्वारा प्रकाशित रपट में कहा कि सरकारों को शहरी गरीबों को रोजगार देने की कुछ और अधिक कोशिश करनी चाहिए, अन्यथा इसने चेनावनी दी कि भीड़, बीमारी, भूख तथा अपराध की समस्या अनियंत्रित सीमा में पहुंच जायेगी।

अफ्रीका में शहरी गरीबों की संख्या सबसे ज्यादा 41 प्रतिशत थी, जबकि एशिया के शहरों में 23 प्रतिशत लोग गरीबी में रह रहे थे। लातिनी अमेरिका में ये कुल 34 प्रतिशत थे। आई एल ओ ने यह तथ्य 1988 से लिए थे। रपट में कहा है कि आने वाले कुछ वर्षों में ग्रामीण नवयुवकों का सपरिवार शहरों में निवास करने से यह संख्या बढेगी।

''सन् 2000 तक विश्व की आधी मानवता शहरों में रहेगी और काम करेगी इसमें विकासशील देशों का बड़ा हिस्सा रहेगा।''

दैनिक विश्व मुद्रा-व्यापार

ए की इन्टरनेशनल बैंक ऑफ थ्रसडे ने आंकलन किया है कि विश्व मुद्रा बाजार द्वारा 12 खरब 60 अरब डालर का प्रतिदिन कारोबार किया जाता है।

टाइम्स ऑफ इण्डिया 2.6.96 पेज 20

विश्व व्यापार में टी एन सी का प्रभुत्व : अंकटाड

व्यापार एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (अंकटाड) के मुताबिक 40,000 पार राष्ट्रीय निगमों (टी एन सीज) से संबंद्ध 2,50,000 कम्पनियों का ग्लोबल व्यापार में 50 खरब डालर की वृद्धि हुई है।

पिछले साल 230 अरब डालर एफ डी आई न सिर्फ बड़ी पार निगमों से

बल्कि विकसित तथा विकासशील देशों में कार्यरत तुलनात्मक छोटी फर्मों से भी आया है।

जबकि विकसित देशों पर आधारित 100 सबसे बड़ी पार राष्ट्रीय निगम में एफ डी आई का 15 प्रतिशत अब विकासशील दुनिया से पैदा होता है।

बड़ी पार राष्ट्रीय निगम बहुत सारे देशों में अन्तर्राष्ट्रीय निवेश को बाजार तक पहुंचाने के लिए ही नहीं बल्कि उत्पादन के बेहतर कारकों, जैसे सस्ते मजदूर स्रोतों के कारण बढ़ा रही है।

पार राष्ट्रीय निगमों के निवेश से सरकारों को होने वाले लाभ के कारण सरकारों ने उन्हें मान्यता देना शुरू किया है। अंकटाड के डाटा के अनुसार 1991 से 1994 तक राष्ट्रीय एफ डी आई कानूनों और निगमों में 373 परिवर्तन हुए हैं जिनमें 368 मजदूरों से सम्बन्धित थे।

पार राष्ट्रीय निगमों की फर्मो के भीतरी व्यापार अंकटाड के मुताबिक विश्व आयात-निर्यात का एक बड़ा कारक बन गया है। पार राष्ट्रीय निगमों की अन्तर्राष्ट्रीय उत्पादन प्रणाली अकेले मालों और सेवाओं के प्रवाह के लिए एक आन्तरिक बाजार का निर्माण करती है, एक ऐसा बाजार जिसमें मुख्य निगम और उससे सम्बद्ध फर्मे विशेषाधिकार रखती हैं।

इस बाजार का विश्वव्यापी आकार 1993 में अनुमान लगाया जो 16 खरब डालर या लगभग विश्व व्यापार का एक तिहाई था।

इस रिपोर्ट में कहा गया है कि फमों के भीतर व्यापार का यह बाजार पिछले दशक में दुगुना से अधिक हो गया और यह लगातार वृद्धि कर रहा है। इसके साथ ही पार राष्ट्रीय निगमों की फर्मो के बीच व्यापार भी विश्व व्यापार का लगभग दूसरा एक तिहाई भाग है।

अमेरिका प्रतियोगिता में सर्वोच्च : भारत का 38वां स्थान

ग्लोबल सर्वे के मुताबिक एशियन शक्ति केन्द्रों सिंगापुर, हांगकांग और जापान के बाद अमेरिका विश्व प्रतियोगिता में आगे है।

स्वीट्जरलैण्ड और जर्मनी 9वें और 10वें स्थान पर हैं जबकि ब्रिटेन और फ्रांस 19वें व 20वें स्थान पर हैं।

लासन्न आधारित इन्टरनेशनल इन्स्टीट्यूट फॉर मेनेजमेन्ट डवलमेन्ट (आई आई एम डी) द्वारा प्रकाशित रपट में 45 देशों की सूची में भारत का 38 वां स्थान है।

सबसे बड़ी दस अमेरिकी कम्पनियां

1995	स्थान 1994	कम्पनी	राजस्व (मिलियन डालर में)	लाभ (मिलियन डालर में)	सम्पदा (मिलियन डालर में)
1	1	जनरल मोटर्स	168,829	6,881	217,123
2	2	फोर्ड मोटर	137,137	4,139	243,283
3	3	एक्सॉन	110,009	6,470	91,296
4	4	वाल-मार्ट	93,627	2,740	37,871
5	5	एटी एण्ड टी	79,609	139	88,884
6	6	आई बी एम	71,609	4,178	80,292
7	7	जी ई	70,028	6,523	228,035
8	8	मोबिल	66,724	2,376	42,138
9	9	क्रिस्सलर	53,195	2,025	53,756
10	10	फिलिक मोरिस	53,139	5,450	53,811

सबसे ज्यादा सहायता देने वालों में जापान पहला और अमेरिका चौथा

ओ ई सी डी (26 देशों से गठित) सहायता लेने वाले

1995	1994	1995 के दौरान सबसे ज्यादा मददगार
59 अरब डालर 20 सालों में न्यूनतम	59.2 अरब डालर	जापान 14.5 अरब डालर फ्रांस 8.4 अरब डालर जर्मनी 7.5 अरब डालर अमेरिका 7.3 अरब डालर

समुद्र पार उधार के सहयोग में अमेरिका ने सबसे ज्यादा कमी की है। उसका सहायता स्तर तेजी से 25 प्रतिशत घटा है (90 के दशक की शुरूआत में इसका सहयोग सबसे ज्यादा था)

इकोनॉमिक टाइम्स 20.6.96 पेज 7

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर विधान सभा निर्वाचन तथ्य स्वयं अपनी गाथा सुनाते हैं

I

1. पूरे नौ वर्ष के अन्तराल के बाद नई दिल्ली सरकार ने यह महसूस किया कि जम्मू कश्मीर में विधान सभा चुनाव कराया जाना ही एक मात्र कदम है जिसे शीघ्र उठाया जाना चाहिए। इस कदम को उचित ठहराने वाले बहुत से कारण हमारे सामने हैं। लेकिन उनमें से तीन बहुत ही महत्वपूर्ण अर्थात् या आधारभूत कारण हैं। ये संक्षेप में इस प्रकार है—

(अ) प्रथम तो यह कि हाल ही में जम्मू-कश्मीर में जो लोकसभा चुनाव हुए उन्होंने यह आभास दिया कि घाटी में हालात सामान्य होते जा रहे हैं तथा साथ ही पाक द्वारा प्रेरित उग्रवाद के प्रति एक अरुचि तथा उनकी एक सामान्य राजनैतिक प्रणाली के बीच लौटने की इच्छा का भी आभास दिया। (ब) जम्मू-कश्मीर में चल रही उलझन या समस्या का सर्वाधिक विवेकपूर्ण हल या उपाय विधान सभा चुनाव ही है। तथा (स) यह कि चुनाव जम्मू कश्मीर एवं भारतीय राष्ट्र के हितों का पोषण करेगा अर्थात् उनके हित में रहेगा।

2. अति विशिष्ट दावों या मांगों के लिए विशेष गवाही या सबूतों की आवश्यकता पड़ती है लेकिन ऊपर तथ्य एवं स्वीकृति में ऐसी किसी चीज की कमी है। अत: इस विश्वास या मान्यता के औचित्य का निर्धारण करने के लिए हमें कुछ तथ्यों का अवलोकन करना पड़ेगा।

II

3. प्रथम तर्क के बारे में विचार करें (अर्थात् हाल ही में जम्मू-कश्मीर में सम्पन्न चुनावों से निकाले गए सारांश पर सोचें) तो निम्न 5 बिन्दु विशेषत: हमारे समक्ष आते हैं--—

प्रथम बिन्दु तो यह है कि हाल में इस प्रदेश में हुए लोक सभा चुनावों की विश्वसनीयता अर्थात् निष्पक्षता पर न केवल समूचे विदेशी मीडिया और भारतीय प्रेस के एक बड़े भाग द्वारा बल्कि नई दिल्ली सरकार के प्रमुख घटकों द्वारा भी प्रश्नचिह्न लगाया गया था। केन्द्रीय गृह मंत्री ने, जो भारतीय शासन में दूसरे नम्बर पर हैं, इन चुनावों को संदेहास्पद प्रकृति का बताया था। फारूक अब्दुल्ला ने, जो जम्मू-कश्मीर में एक प्रमुख भारत समर्थक राजनीतिज्ञ हैं, इन चुनावों को बनावटी एवं पक्षपातपूर्ण बताया है। भीमसिंह, जो भारत सरकार के जम्मू-कश्मीर के मामले में एक गैर सरकारी प्रतिनिधि हैं, उन्होंने इसे धोखेबाजीपूर्ण बताया है। भाजपा के एक मजबूत

नेता श्री ऋषिकुमार कौशल ने इसे अनुचित एवं गलत कहकर पुकारा है। यहां तक कि सरकार समर्थक उग्रवादियों ने इसे झूठा कहकर परिभाषित किया है।

दूसरा बिन्दु यह है कि घाटी में सामान्य स्थिति की बहाली के विचार को स्वयं नई दिल्ली सरकार ने विरोधाभास में डाल दिया है। केवल एक पखवाड़ा पहले ही स्वयं प्रधानमंत्री ने राज्य सभा में यह बयान दिया था कि लोकसभा चुनावों की अवधि के बाद कश्मीर घाटी में उग्रवादी हिंसा में वृद्धि हुई है। इस बयान के साथ ही, इस वर्ष जुलाई माह में जारी की गई भारतीय गृह मन्त्रालय की रिपोर्ट में कहा गया कि वर्ष 1996 में उग्रवादियों एवं सुरक्षा संगठनों के सदस्यों सहित, पूर्व वर्ष 1989 से 1994 के बीच की तुलना में अधिक लोग मारे गये तथा 1996 वर्ष के प्रथम 6 महिनों में मौतों की संख्या 1995 की इसी अवधि से कहीं अधिक है। संयुक्त मोर्चा सरकार के गठन के बाद 2.5 माह की अवधि में ही यह संख्या 600 से अधिक है, के जीवन समाप्त किए गए तथा सैकड़ों मकान जला दिये गए। केवल 12 अगस्त, 1996 के दिन 39 मनुष्यों को मौत के घाट उतार दिया गया।

तीसरा बिन्दु यह है कि कश्मीर वासियों की वर्तमान में चल रहे उग्रवाद के विरुद्ध अरुचि तथा अनिच्छा का जो अनुमान या मान्यता है, उसकी पुष्टि लोक सभा निर्वाचन के बाद घाटी के लोगों के व्यवहार से नहीं होती, विशेष कर 15 अगस्त 1996 (भारत के स्वतंत्रता दिवस) पर किए गये व्यवहार से।

चौथा बिन्दु यह है कि सशस्त्र बल लोगों को कुछ समय के लिए उनकी इच्छा या भावनाओं के विरुद्ध भी कुछ करने को मजबूर कर सकते हैं। लेकिन वे ऐसा हमेशा नहीं कर सकते। सुरक्षा बलों के पास किसी विशेष परिस्थिति में लोगों को दबाने की शक्ति है। लेकिन वे किसी भी परिस्थिति में लोगों के दिल दिमाग की भावना को नहीं बदल सकते हैं अर्थात् उनकी मानसिकता में कोई परिवर्तन नहीं ला सकते हैं।

पांचवां बिन्दु यह है कि कश्मीर समस्या का कोई सशस्त्र हल निकालने की प्रवृत्ति के बढ़ने का यह आशय नहीं लिखा जा सकता है कि कश्मीर वासियों के दृष्टिकोण में कोई परिवर्तन हो रहा है। दृष्टिकोण का परिवर्तन तो वैचारिक-राजनैतिक साधनों से होता है न कि दमन की प्रणाली से।

III

4. द्वितीय नम्बर के तर्क (यह कि जम्मू-कश्मीर की समस्या के लिए विधानसभा चुनाव सर्वाधिक विवेकपूर्ण कार्यवाही है) पर विचार करें तो प्रमुख विवादास्पद मुद्दा जो ध्यान में रखा जाना है वह यह है कि नई दिल्ली द्वारा जम्मू-कश्मीर में जारी रखी जा रही मिथ्या रणनीति (अथात् चुनावों की नाटक की भांति मिथ्या व्यवस्था, जैसा कि इसे वर्तमान केन्द्रीय गृह मंत्री तथा अन्य नई दिल्ली सरकार के

पक्षधर उच्च-स्तरीय नेताओं द्वारा इसे कहकर पुकारा गया है) उन्हीं पुराने नतीजों तक पहुंचने वाली है, जो नतीजे जम्मू-कश्मीर में 1951 से 1987 के बीच सम्पन्न पुराने 8 मिथ्या विधान सभा चुनावों के सामने आए थे (सम्भवत: 1977 के चुनावों को छोड़कर)।

5. भारत के उच्च स्तरीय नेताओं के समूह तथा प्रेस व मीडिया के बड़े दिग्गजों द्वारा पूर्व में ही यह मान लिया गया था कि जम्मू-कश्मीर के लोगों को स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष चुनावों से वंचित रखना तथा प्रजातांत्रिक प्रक्रिया में शीघ्रता करना ही, कश्मीर के अलगाववाद के उत्पन्न होने तथा घाटी में सशस्त्र उग्रवाद के फैलने का एक प्रमुख कारण रहा है तथा इस प्रकार भारत के हितों को क्षति पंहुची है। लेकिन इन सभी लोगों ने, हाल ही के जम्मू-कश्मीर में सम्पन्न लोकसभा चुनावों में उसी पुरानी छल-कपटपूर्ण चुनावी प्रक्रिया दोहराने तथा आगामी अर्थात् निकटवर्ती विधान सभा चुनावों में भी इसी पुनरावृत्ति विचार रखने के बिन्दु पर, चुप्पी साधे रखना ही पसन्द किया है अर्थात् इस कपटपूर्ण प्रक्रिया पर एक शब्द भी बोलना उचित नहीं समझा है। भारत के राजनैतिक एवं मीडिया क्षेत्रों में इस प्रकार का दम्भपूर्ण या धृष्ट एवं घटिया किस्म का व्यवहार कोई आश्चर्य की बात नहीं है। लेकिन सर्वाधिक चिन्तनीय तो जम्मू-कश्मीर में किए जा रहे झूठे चुनावी नाटक पर उन लोगों द्वारा चुप्पी साध लेना है जो उचित एवं विवेकपूर्ण कार्य, प्रजातन्त्र, मानवाधिकार, सामाजिक न्याय, स्त्री-पुरुष समानता, अल्पसंख्यकों के अधिकार तथा भारत-पाक मैत्री में विश्वास करते हैं।

6. झूठे कदम व कृत्य किसी व्यक्ति को अस्थाई लाभ पहुंचा सकते हैं, परन्तु दीर्घकाल में अर्थात् भविष्य में ये राष्ट्रीय, क्षेत्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक हितों को क्षति पहुंचाते हैं। यह एक ऐतिहासिक सबक है, चाहे पुराना हो या हाल ही का हो (जैसे कि यू.एस.ए. में रिचर्ड निक्सन, पाकिस्तान में जुल्फिकार अली भुट्टो तथा बांग्ला देश में खालिदा जिया के मामले)।

7. नि:सन्देह तथा जैसी कि पूरे विश्व में मान्यता है, निर्वाचन लोगों की अपेक्षाओं तथा भावनाओं को सुनिश्चित करने का सर्वाधिक प्रभावी एवं वांछनीय तरीका है। लेकिन इस प्रकार का निर्वाचन एक स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष मतदान की मांग करता है, जिसे निर्वाचन, संचालन एवं पर्यवेक्षण संस्थाओं (जैसे निर्वाचन नियम, आचार संहिता एवं पर्यवेक्षक एवं नियंत्रण करने वाले अधिकारी, कर्मचारी इत्यादि) तथा उस निर्वाचन की शर्तों एवं उद्देश्यों के बीच एक आम सहमति अर्थात् समन्वय से ही सुनिश्चित किया जा सकता है (अर्थात् आया कि चुनाव संविधान-निर्माण के उद्देश्य से हो रहा है, विधायी कार्यों के लिए हो रहा है, सरकार के गठन के लिए हो रहा है, किसी एक मुद्दे पर जनमत प्राप्त करने के लिए हो रहा है अथवा कतिपय लोगों का भविष्य निर्धारित करने के लिए हो रहा है, इत्यादि) इस प्रकार की चुनावी प्रक्रिया को

ही आज संयुक्त राष्ट्र एवं सभी देशों द्वारा मानक या स्तरीय चुनावी प्रक्रिया के रूप में मान्यता दी जाती है। लेकिन इस प्रकार का मतदान (जिसमें पहले सभी दलों के बीच बातचीत एवं विचार-विर्मश की आवश्यकता है) सेना द्वारा निर्देशित एवं नियंत्रित चुनावी प्रक्रिया के चलते नहीं कराया जा सकता।

8. जम्मू-कश्मीर में नई दिल्ली के चुनावी प्रक्रिया के 49 वर्ष के लम्बे अनुभव ने यह साबित कर दिया है कि न तो अपने समर्थक नेताओं को आर्थिक सहायता देना न सैनिक शक्ति का प्रयोग करना तथा न ही फर्जी मतदान में जम्मू-कश्मीर में काम किया। जितना अधिक इस प्रक्रिया ने छलकपट या चालबाजियों को अपनाया है उतना ही अधिक इसने घाटी में अपने ध्येय को खो दिया है।

IV

9. जब तीसरे तर्क पर आते हैं (जो यह है कि विधान सभा चुनावों से जम्मू-कश्मीर के लोगों तथा भारतीय राष्ट्र दोनों के हितों की रक्षा होगी), तो कुछ बिन्दुओं अर्थात् दृष्टांतों पर विचार किया जाना वांछनीय हो जाता है।

10. प्रथम बिन्दु तो यह है कि यदि जिस प्रकार के विधान सभा निर्वाचन नई दिल्ली सरकार द्वारा कराए गए हैं यदि वे जनहित के पोषक या संदेशवाहक हैं तो 1996 से पूर्व के 8 विधान सभा चुनाव घाटी को एक सामाजिक स्वर्ग में बदल चुके होते, जहां वे लोग शांति, स्थायित्व एवं सम्पन्नता से भरा हुआ जीवन जी रहे होते। लेकिन वास्तविक स्थिति यह है कि भौगोलिक एवं प्राकृतिक रूप से सम्पन्न एवं समृद्ध भूमि को विधान सभा चुनावों ने सामाजिक नरक में बदल डाला।

11. दूसरा विचारणीय बिन्दु यह है कि 1947 के बाद के 11 आम चुनावों के बावजूद भी (जो सामान्यत: स्वतन्त्र तो थे परन्तु संदिग्ध राजनीति के कारण निष्पक्ष नहीं थे), भारत को अब भी एक सभ्य समाज के रूप में परिवर्तित होना है जहां सामाजिक बुराई, धूर्तता, अपराध व हिंसा, अकुशलता आदि कम से कम हो तथा सामाजिक अच्छाई, सद्गुण, नैतिकता, पुण्य, उदारता, दया एवं सहृदयता, कुशलता, योग्यता आदि अधिक से अधिक हो। यद्यपि अनेक भारतीयों ने विज्ञान, कला, संस्कृति, आर्थिक विज्ञान एवं राजनीति आदि में विशिष्ट ऊंचाइयों को छुआ है, उन्होंने अपनी प्रणाली में उचित तरीकों को अपनाया है, प्रसन्नचित्त एवं सुखी परिवारों का गठन किया है तथा इस प्रकार वर्तमान भारत के निर्माण में योगदान दिया है, लेकिन तब भी सामूहिक इकाई के रूप में भारत आज विश्व के देशों में सर्वाधिक अपराधी, भ्रष्ट, साम्प्रदायिक, जातिवादी, अकार्यकुशल एवं दोगले व्यवहार वाला देश माना जाता है।

12. 1947 के बाद की अवधि में जो कुछ अच्छा या प्रतिकूल देखने को मिलता है वह 90 करोड़ सामान्य लोगों के परिश्रम की वजह से है, जबकि भारत की

सामाजिक, संवैधानिक एवं विधिक प्रणाली, इसके तथाकथित मुख्य ढांचे या स्वरूप (बहुसंख्यकवादी, धर्मनिरपेक्षवादी, नेहरूवादी ढांचा, गरीब विरोधी समाजवाद, हिन्दुत्ववाद, मण्डलवाद, मार्क्सवादी आर्थिक आधारभूत ढांचा इत्यादि), तथा प्रमुख दलों एवं नेताओं की माफिया राजनीति ने तो इस देश के लिए अनेक कष्ट एवं समस्याएं उत्पन्न की हैं तथा अब इस खतरे या विनाश के कगार पर धकेल रहे हैं, जिसके परिणामों के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता।

13. भारत का आम आदमी ही भारतीय राष्ट्र की प्रेरणादायक शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है वरना भारतीय सामाजिक ढांचा तथा इसके राजनैतिक कर्ता-धर्ता तो राष्ट्र विरोधी भावना के प्रमुख आश्रयदाता या पोषक है।

14. तीसरा बिन्दु ऐतिहासिक अनुभव से सम्बन्धित है जो यह बताता है कि एक सामाजिक समुदाय या समूह (चाहे वह राष्ट्रीय हो, क्षेत्रीय हो या वैश्विक हो) सत्य, न्याय व निष्पक्षता आदि की पालना करके ही सभ्य एवं मजबूत बन सकता है न कि झूठ, छलकपट व धोखेबाजी का सहारा लेकर तथा न दूसरे लोगों का दमन करके।

V

15. इतिहास मानवता के तीन मुख्य सबक सिखाता है। वे हैं—(क) भूतकाल की घटनाओं से सही सीख लेना, (ख) वर्तमान सामाजिक वास्तविकता के आधार पर आगे बढ़ना तथा (ग) अपनी दृष्टि को नवीन विकसित हो रही सामाजिक वास्तवकिता पर टिकाना।

16. भारतीय इतिहास के 1947 के बाद के इतिहास का अध्ययन करने पर कोई व्यक्ति एक ही सबक या सारांश निकाल सकता है कि भारत-पाकिस्तान की टकराव की स्थिति (अर्थात् शीत युद्ध), न केवल भारत व पाकिस्तान के लिए ही हानिकारक है बल्कि समूचे दक्षिणी एशियाई क्षेत्र तथा पूरे विश्व के लिए भी हानिकारक है। जितना जल्दी इसके बदले शांति स्थापित की जाए, उतना ही सभी सम्बन्धित पक्षों के लिए अच्छा रहेगा।

भारत-पाक टकराव का प्रमुख केन्द्र बिन्दु कश्मीर राज्य का मुद्दा है (जैसा कि शिमला समझौते के अनुच्छेद 6 में लिखा हुआ है) इस समस्या का हल केवल भारत पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच एक त्रिपक्षीय वार्ता के माध्यम से ही हो सकता है जो सभी पक्षों की रक्षा करता है—जैसे जम्मू-कश्मीर के लिए एक तरफ तो रक्षा, विदेशी मामले तथा मुद्रा के सम्बन्ध में भारत-पाक की एक साझा सरकार बनाने का प्रस्ताव तथा दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर को अर्द्ध-स्वतन्त्रता का प्रस्ताव जिसमें 8 जातिगत क्षेत्रों में से प्रत्येक को पूर्ण स्वायत्तता से, जो एक निर्वाचित राज्यपाल, हाई कोर्ट, निर्वाचन आयोग, मानवाधिकार आयोग, पर्यावरण आयोग की स्थापना के साथ

हो। एक मात्र त्रिपक्षीय हल ही भारतीय राष्ट्र, पाकिस्तानी राष्ट्र तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों के हित में है।

17. भारत की वर्तमान सामाजिक वास्तविकता को देखें तो हम पाते हैं कि भारत की प्रमुख समस्या इसकी सामाजिक प्रणाली का समग्र ह्रास होना है। आज इस प्रणाली की पूर्णतया प्रजातंत्र के ऊपर आधारित पुनर्निर्माण की आवश्यकता है जिसमें निम्नांकित आधारभूत विशेषताएं होनी आवश्यक हैं—एक विवेकपूर्ण मानववादी दृष्टिकोण, वैश्विक न्याय के सिद्धान्तों का गठन, प्रणाली एवं मान्यता, एक उचित वैश्विक व्यवस्था, एक उचित एक समान व पारदर्शी भारतीय प्रणाली, लोगों को शक्ति सौंपना, स्त्री पुरुष समानता, सामाजिक न्याय, मानव-अधिकार, निर्धनता व बेरोजगारी का उन्मूलन, मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का टिकाऊ विकास, व्यवहार के मूल्य आधारित मानदण्ड तथा इसी प्रकार की सब बातें।

18. उभरती हुई सामाजिक वास्तविकता की पहचान करें, तो हम पाते हैं कि इसकी मुख्य विशेषता है एक समान मुद्दों एवं एक समान प्राथमिकताओं के सम्बन्ध में विश्व के देशों की परस्पर निर्भरता। कोई भी देश इस अभियान या स्थिति से अपने को पृथक करके काम नहीं चला सकता। जितना जल्दी इस आवश्यक एवं अटालनीय प्रक्रिया का अभिन्न अंग अपने को बनाया जाए उतना ही अच्छा होगा। इस सीमा से आगे बढ़ते हुए किसी अन्य देश की भांति ही भारत का लक्ष्य एक वैश्विक मानव समाज की स्थापना का होना चाहिए, इसकी प्रथम क्षेत्रीय इकाई के रूप में सार्क (दक्षेस) जैसे संगठन का गठन करना चाहिए।

VI

19. ऊपर वर्णित तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए, इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक पार्टी का यह मत है कि वर्तमान परिस्थितियों में, जब तक पहले जम्मू-कश्मीर समस्या से जुड़े सभी पक्षों के बीच एक उचित एवं खुलासा बातचीत नहीं हो जाती, तब तक विधानसभा चुनाव कोई लाभदायक एवं सार्थक कवायद नहीं हो सकती। इसी कारण यह पार्टी इस चुनाव में कोई उम्मीदवार खड़ा नहीं कर रही है। हालांकि लोगों को अपनी यह विचारधारा स्पष्ट करने व समझाने के लिए यह पार्टी चुनावी प्रक्रिया में अपने आप को पूर्णरूपेण शामिल करेगी। (16-8-1996)

(श्रीनगर से प्रकाशित दैनिक 'ग्रेटर कश्मीर' के 7-9-96 के अंक में प्रकाशित)

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर में विधान सभा निर्वाचन जब तक त्रिपक्षीय वार्ता नहीं हो जाती कोई भी उचित प्रजातांत्रिक प्रक्रिया सम्भव नहीं है

I

1. आधी शताब्दी की अवधि इतिहास की कोई छोटी अवधि नहीं होती। नई दिल्ली सरकार के लिए जम्मू-कश्मीर के लोगों के विशेषकर कश्मीर घाटी के लोगों को, भारत संघ के साथ रहने के फायदे समझा कर अपनी योग्यता साबित करने के लिए, समाजशास्त्र के हिसाब से भी यह एक पर्याप्त अवधि थी। राज्य में वास्तविक तौर पर जनता का शासन कायम करने के लिए यह अवधि पूर्णतया सम्भावना के दायरे में थी, जहां लोगबाग भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 के अन्तर्गत एक विशेष स्तर का आन्नद ले सकते थे। जम्मू-कश्मीर राज्य में तो बहुत बड़ी धनराशि पिछले 50 वर्षों में खर्च की गई वह लोगों के जीवन स्तर को बदलने व उसे बेहतर बनाने के लिए पर्याप्त था (काश कि उनका सदुपयोग सही दिशा में होता)।

2. आज का सामाजिक यथार्थ हालांकि यह है कि कश्मीर वासी प्रजातन्त्र एवं विकास के नेहरूवादी ढांचे से इतने ऊब चुके हैं कि वे नई दिल्ली सरकार को अपनी सारी माया व तन्त्र समेट लेने व उन्हें अपने भाग्य भरोसे छोड़ देने के लिए कह रहे हैं।

3. इस प्रकार की घटना के बारे में कुछ भी विशिष्ट बात नहीं है। पिछले 5 दशकों के दौरान कतिपय छोटी अवधियों को अपवाद स्परूप छोड़ कर, कश्मीर घाटी के लोग उन स्थानीय सामन्तों के भारी भरकम जूतों तले कराहते रहे, जिन्हें छल कपटपूर्ण निर्वाचनों के माध्यम से केन्द्र द्वारा उन पर थोपा गया। विकास हेतु निर्धारित धनराशि का एक बड़ा भाग भ्रष्टाचार, अकार्यकुशलता एवं गिरती हुई कानून व्यवस्था द्वारा निगल लिया गया। कीमतें लगातार बढ़ती गई। निर्धनता एवं बेरोजगारी बढ़ती गई। असमानता और अधिक विस्तृत होती गई। गरीब लोग और अधिक गरीब बनते गए। मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता जैसे—पानी, बिजली, सड़कें, शिक्षा, स्वास्थ्य व सफाई व्यवस्था इत्यादि भी अस्त व्यस्त हो गई अर्थात् गड़बड़ा गई। यह सब बातें आम तौर पर समूची घाटी में तथा विशेष कर श्रीनगर में हुए ह्रास एवं विनाश से प्रभावित होती है।

4. आज, कश्मीरवासी अपने इतिहास का सर्वाधिक बुरा समय देख रहे हैं, जहां प्रतिदिन उनके जाति, वंश के औसतन 10 व्यक्ति दफनाए जाते हैं।

II

5. त्रुटि या खराबी कहां स्थित है? इस मूलभूत प्रश्न की ओर न जाकर, नई दिल्ली सरकार ने तो एक साधारण-सा रास्ता अपना लिया वह है उग्रवाद को बढ़ावा देकर अथवा भाड़े के एजेन्टों द्वारा एक छद्म युद्ध प्रारम्भ करवा कर जम्मू-कश्मीर के समृद्धिशाली एवं उन्नति की ओर अग्रसर राजनैतिक एवं आर्थिक प्रक्रिया को अस्थिर करने या समाप्त करने के लिए पाकिस्तान पर दोषारोपण करना। कोई भी व्यक्ति इस बात से इंकार नहीं करेगा कि इस्लामाबाद सरकार कश्मीर में उग्रवाद को ठीक उसी की भांति मदद कर रही है व बढ़ावा दे रही है, जिस भांति नई दिल्ली सरकार बांग्लादेश के चकमा जनजाति उग्रवाद के सम्बन्ध में कर रही है यह पाकिस्तान में मुजाहिद व शिया उग्रवाद के मामले में कर रही है, अथवा जिस भांति पहले इसने श्रीलंका को तत्कालीन उभरते हुए तमिल आंतकवाद के सम्बन्ध में किया था। हकीकत में, आपसी सम्बन्धों की इस षड़यन्त्रकारी विधि की जड़े संकीर्ण राष्ट्रवाद की भावना में गड़ी हुई है, जिसका प्रतिनिधित्व पहले उपनिवेशवादी ताकतों के रूप में होता था तथा अब इस सिद्धान्त को कतिपय शीतयुद्ध के समर्थक देश मान्यता देते हैं। लेकिन यथार्थ के इस स्वरूप को अपने कष्टों के स्रोत के रूप में देखने का अर्थ है कष्टों के मूल कारण को छिपाना अर्थात् अपनी स्वयं की अक्षमता या अयोग्यता को छिपाना, जो कष्टों या समस्याओं का मूल कारण है।

6. आज दुनिया में यदि कोई देश अपने लोगों में एकता स्थापित नहीं कर सकता या अपने विभिन्न संवैधानिक प्रदेशों का एकीकरण नहीं कर सकता, व्यापक निर्धनता एवं बेराजगारी को समाप्त नहीं कर सकता, अथवा लोगों के जीवन-स्तर को ऊंचा नहीं उठा सकता, तो यह बात विदेशी कारणों के बजाय, आन्तरिक कमियों के कारण अधिक होगी जैसे दूरदृष्टि का अभाव, दोषपूर्ण दृष्टिकोण तथा इसकी राजनीति, राजनैतिक दलों व नेताओं तथा प्रबन्ध एवं संगठन की घटिया प्रणाली।

7. यदि नई दिल्ली सरकार सोद्देश्य या स्थूल दृष्टि से जम्मू कश्मीर समस्या के मुख्य बिन्दु या सारांश को तलाश करने की कोशिश करती, तो वह पाती कि इस समस्या का मूलाधार तो 1947 का साम्प्रदायिक विभाजन है, तथा इसका अल्पकालिक कारण नई दिल्ली का बाहरी मामलों में (विशेषकर पाकिस्तान के विरुद्ध निर्दिष्ट) शीतयुद्ध की राजनीति में विश्वास करने वाला तथा आन्तरिक सम्बन्धों के मामले में संघर्षवादी साम्प्रदायिकता एवं जातिगत राजनीति तथा एक धनी समर्थक अर्थ व्यवस्था में विश्वास करने वाला केन्द्रीकृत बहुसंख्यकवादी राष्ट्रवाद ही है। पीछे मुड़कर, यदि कोई विभाजन के कारणों में गहराई से झांके अर्थात् उनका अन्वेषण करे तो वह निश्चय कर पाएगा अर्थात् खोज कर पाएगा कि यही बहुसंख्यकवादी राष्ट्रवाद, जिसका प्रतिनिधित्व उस समय गांधीवादी हिन्दू मानववाद के द्वारा होता था, संयुक्त भारत में

हिन्दू-मुस्लिम समस्या से निपटने में असफल रहा तथा पहले तो इसने जिन्ना के नेतृत्व वाले सर्व-इस्लामिक राष्ट्रवाद को जन्म दिया तथा बाद में इसने भारत के विभाजन की स्थिति उत्पन्न कर दी।

III

8. अपनी पिछली गलतियों से सबक सीखने से इंकार करते हुए नई दिल्ली सरकार ने पुनः जम्मू-कश्मीर में एक जोड़तोड़ वाले चुनाव के माध्यम से अपनी तथाकथित प्रजातांत्रिक प्रक्रिया को लागू करने के छद्मजाल का पुराना खेल खलने की प्रवृत्ति अपना ली है। लेकिन यह निर्वाचन पहले के सभी चुनावों की तुलना में बहुत जल्दी ही एक झूठा एवं असफल नाटक सिद्ध होने वाला है। अगर ऐसा नहीं है तथा वर्तमान में चल रही चुनावी प्रक्रिया वास्तव में एक प्रजातांत्रिक कदम है, तो इसने चुनावी प्रक्रिया का पर्यवेक्षण विदेशी पर्यवेक्षकों को सौंपने से क्यों मना कर दिया, इसने हुर्रियत कांफ्रेंस के साथ बातचीत की अनदेखी कर दी जो घाटी के राजनैतिक दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करती है तथा क्यों राजनीति एवं इसके खिलाड़ियों की वही पुरानी जोड़ी को प्रस्तुत कर दिया।

9. निर्वाचन, कतिपय गूढ़ एवं जटिल समस्याओं के हल के लिए एक प्रभावोत्पादक तरीका है। परन्तु एक विश्वसनीस निर्वाचन की शर्तों, नियमों, आचार, संहिता एवं पर्यवेक्षक अधिकारी के बारे में निर्वाचन लड़ने वाले दलों के बीच परस्पर आम सहमति विद्यमान हो। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि निर्वाचकों की निर्वाचन प्रक्रिया में भाग लेने की सामान्य इच्छा या सहमति प्राप्त की जावे। एक थोपा हुआ निर्वाचन अपनी पवित्रता को खो देता है तथा शांति की पुनर्स्थापना तथा प्रजातांत्रिक प्रक्रिया की शुरूआत में कोई मदद नहीं करता।

10. 1947 के बाद की वास्तविकताएं या यथार्थ जो जम्मू-कश्मीर की समस्या से जुड़े हैं, इस बात की आवश्यकता उत्पन्न करते हैं कि जम्मू-कश्मीर में वैध एवं सही निर्वाचन कराने के पहले सम्बन्धित पक्षों की एक वार्ता करवाई जावे। संक्षेप में, ये वास्तविकताएं इस प्रकार है—

पहली, सभी प्रकार की स्वायत्तताएं जैसे 1953 के पहले की सर्वोच्च स्वायत्तता तथा 1975 के बाद की सीमित या नियंत्रित स्वायत्तता असफल रही है अर्थात् इनसे कोई लाभ नहीं हुआ, इनका परिणाम तो यह रहा कि एक के बाद एक संकट या विवाद उत्पन्न होता रहा या तो भारत एवं पाकिस्तान के बीच या नई दिल्ली सरकार व स्वायत्तता समर्थक कश्मीरी नेतृत्व के बीच या नई दिल्ली सरकार व भारत विरोधी ताकतों के बीच।

दूसरी, सभी प्रकार के द्विपक्षीय समझौते या वार्ताएं चाहे वे भारत और

पाकिस्तान के बीच हो (जैसे 1947 का युद्ध समझौते, 1965 की ताशकंद सन्धि, 1972 का शिमला समझौता) या चाहे वे भारत व श्रीनगर के बीच हो (जैसे 1952 का नेहरू-अब्दुल्ला समझौता, 1954 का संविधान लागू करने का आदेश, 1971 की इन्दिरा-शेख घोषणा, 1986 का राजीव-फारूख समझौता इत्यादि) पूर्णत: नाकामयाब व नहीं चलने योग्य साबित हुए।

तीसरे, बन्दूक की राजनीति जम्मू-कश्मीर समस्या का हल नहीं हो सकती, जैसा कि तीन भारत पाक युद्धों, भारत पाक के बीच लगातार चल रहे शीत युद्ध, भारत की विशाल सैन्य शक्ति तथा कश्मीर में चल रहे आतंकवाद से सिद्ध होता है।

चौथे, जम्मू कश्मीर को लेकर भारत पाक के बीच चल रहा एक सतत शीत युद्ध दक्षिणी एशिया में परमाणु युद्ध होने का गम्भीर खतरा प्रस्तुत करता है।

पांचवें, नई दिल्ली एवं इस्लामाबाद दोनों ही की सरकारों ने जम्मू-कश्मीर के मुद्दे को अपने राष्ट्रीय अस्तित्व का प्रश्न बना लिया है तथा दोनों ही इस प्रश्न को अपने हक में हल कराने के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार है।

छठे, जम्मू-कश्मीर में राजनैतिक स्थिति यह है कि जबकि कश्मीरी लोग, जिन्होंने लगभग 50 हजार मानव जीवन की बलि दी है तथा बहुत बड़ा भौतिक एवं आर्थिक नुकसान उठाया है। भारत के बाहर रहने का विकल्प देना चाहते हैं तथा डोगरा, पहाड़ी, लद्दाखी इत्यादि जाति के लोगों के अपने-अपने विकल्प एवं लक्ष्य हैं।

सातवें, आज की विश्व राजनीति के सन्दर्भ में तथ्य यह है कि कोई भी देश चाहे वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, लोगों की इच्छा के विरुद्ध उन्हें लम्बे समय तक अपने अधीन नहीं रख सकता। विश्व एक लम्बे समय तक किसी प्रदेश के लोगों का सैनिक दमन तथा मानवाधिकारों का हनन, सहन नहीं कर सकता।

आठवें, आज के विश्व के आर्थिक परिपेक्ष्य पर दृष्टिपात करें तो पायेंगे कि आर्थिक प्रक्रिया अत्यधिक प्रतिस्पर्द्धा वाली बन चुकी है तथा आज किसी भी देश के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह किसी प्रदेश पर बलपूर्वक कब्जा किए जाने की आर्थिक कीमत एक लम्बे समय तक वहन करता रहे।

नवम्, देशों की परस्पर निर्भरता ही हाल ही में उत्पन्न वास्तविकता ने भारत व पाकिस्तान के भविष्य को एक समान व एक साथ बना दिया है। अगर वे इस सामाजिक आवश्यकता का असम्मान करते हैं अर्थात् नकारते हैं तो सम्भव है उन्हें इसके भयंकर परिणाम भुगतने पड़े।

11. ऊपर वर्णित वास्तविकताओं पर एक नजर डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि जम्मू-कश्मीर राज्य के उज्वल भविष्य के निर्धारण के लिए, उचित एवं योग्य

विकल्प यह होगा कि भारत, पाकिस्तान व कश्मीरी लोगों के बीच एक त्रिपक्षीय वार्ता की रणनीति अपनाई जावे। त्रिपक्षीय वार्ता का आधारभूत या केन्दीय बिन्दु तीनों के हितों का संतुलन होना चाहिए।

12. स्पष्ट है कि त्रिपक्षीय विकल्प समस्त एकपक्षीय एवं द्विपक्षीय हलों को निरस्त करके सर्वोपरि स्थान पर रहेगा जैसे किसी एक देश के साथ जुड़ाव, एक स्वतंत्र जम्मू-कश्मीर राज्य, जम्मू कश्मीर का विभाजन, एक पक्ष की तरफ से निर्वाचन कराना इत्यादि, ये सभी विवाद एवं संघर्ष की राजनीति उत्पन्न करते हैं तथा भारत-पाक के बीच तनाव को कायम रखते हैं तथा इस प्रकार न केवल भारत एवं पाकिस्तान की बल्कि समूचे दक्षिण एशियाई क्षेत्र एवं सारे विश्व की प्रगति एवं समृद्धि को अस्त व्यस्त करते हैं।

13. यूं तो, सभी सम्बन्धित पक्षों के बीच वार्ता के सभी प्रयास सफल रहेंगे। लेकिन त्रिपक्षीय विकल्प का अधिक उचित प्रारम्भिक बिन्दु होगा दो स्तरों पर बातचीत की शुरूआत कराना प्रथम भारत-पाक के स्तर पर दूसरी जम्मू-कश्मीर की विभिन्न जातीय एवं क्षेत्रीय इकाइयों के स्तर पर, पहले भारत की तरफ बाद में पाकिस्तान की तरफ तथा उसके बाद दोनों के साथ।

14. एक विवेकपूर्ण, उचित एवं टिकाऊ या सम्मानित हल यह हो सकता है कि जम्मू-कश्मीर के ऊपर भारत-पाक का संयुक्त प्रशासन स्थापित किया जाए (जो राज्य के विदेशी मामले, रक्षा एवं मुद्रा को नियंत्रित व संचालित करें) तथा जम्मू-कश्मीर को एक अर्ध स्वायत्तता या अर्ध स्वतंत्रता का स्तर प्रदान किया जावे (जिसमें प्रत्येक 8 जातीय एवं क्षेत्रीय इकाइयों को सर्वाधिक स्वायत्तता हो)।

15. इस विकल्प को खोजने एवं लागू करने की जिम्मेदारी प्रजातंत्र में विश्वास करने वालों तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों पर भी आती है, जो एक आम सहमति पर आधारित प्रस्ताव तैयार करके, भारत व पाकिस्तान के बीच जम्मू-कश्मीर समस्या का एक विवेकपूर्ण एवं व्यावहारिक हल ढूंढ़ सकते हैं।

16. जम्मू-कश्मीर में आम सहमति पर आधारित प्रस्ताव, सम्भवत: कश्मीर के हल पर भारत के तीन मुख्य राष्ट्रीय ढांचों जिनका प्रतिनिधित्व राजनैतिक पार्टियां कांग्रेस, भाजपा तथा राष्ट्रीय मोर्चा वाम मोर्चा के द्वारा किया जाता है, के बीच एक आम समझौता करने में भी सहायता करेगा। (8.9.96)

श्रीनगर से प्रकाशित 'देनिक ग्रेटर कश्मीर' के 10.9.96 के अंक में प्रकाशित)

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर विधान सभा चुनाव
वही पुराना राग
पुरानी मदिरा नई बोतल में

I

1. विज्ञान एवं इतिहास यह बताते हैं कि विश्व में कोई भी वस्तु शुद्ध निरपेक्ष नहीं होती है। समाज एवं प्रकृति में प्रत्येक वस्तु एक दूसरे से सम्बद्ध होती है। क्योंकि वह वस्तु एक स्थिति विशेष से जुड़ी होती है जैसे एक विशेष स्थान व विशेष समय। जब किसी स्थिति में परिवर्तन होता है तो इससे सम्बन्धित सभी वस्तुओं में बदलाव आता है। निर्वाचन का गुण भी इस सम्बद्धता या सापेक्षता से मुक्त या पृथक् नहीं है।

2. सापेक्षता का यह सिद्धान्त या नियम जम्मू-कश्मीर के निर्वाचन पर क्या लागू होता है? इसका उद्देश्य यह जानना है कि क्या जम्मू-कश्मीर के चुनाव विवेकपूर्ण है? क्या जम्मू-कश्मीर की स्थिति विशेष के अनुरूप है?

3. निर्वाचन का अन्तर्राष्ट्रीय अनुभव यह बताता है कि एक उचित, विवेकपूर्ण एवं भावनात्मक या अर्थपूर्ण निर्वाचन चार शर्तों की मांग करता है जो इस प्रकार है—

(क) उस स्थिति विशेष में निर्वाचन एक सामाजिक आवश्यकता हो;

(ख) निर्वाचन कराने वाली सरकार की प्रेरणा अर्थात् भावना शुद्ध हो;

(ग) उस निर्वाचन में भाग लेने की लोगों की आम इच्छा या राय हो; तथा

(घ) चुनाव की शर्तें, नियम तथा कानून व संहिता तथा निर्वाचन के पर्यवेक्षक प्राधिकार के बारे में विशेष राजनैतिक शक्तियों में एक आम सहमति हो।

II

4. प्रथम शर्त पर दृष्टिकोण करें, जो यह है कि निर्वाचन एक विशेष परिस्थिति में सामाजिक आवश्यकता हो, तो पाते हैं कि वर्तमान में जम्मू-कश्मीर में, विशेषकर कश्मीर घाटी में जो हालात हैं वे बहुत ही खराब हैं। घाटी में आतंकवादियों एवं भारतीय सशस्त्र बलों के बीच 7 वर्ष से चल रही लड़ाई या मुकाबले तथा सम्पूर्ण सामाजिक ढांचे के अस्त व्यस्त हो जाने के कारण जम्मू-कश्मीर में मानव-जीवन की हालत बड़ी दयनीय हो गई है, विशेषकर कश्मीर वासियों की (अप्रवासी सहित), जिनका प्रतिदिन मृत्यु व विनाश से सामना होता है (विनाश जिसने पहले ही हजारों जिन्दगियों तथा करोड़ों रुपये की सम्पत्ति को लील लिया है तथा हजारों लोगों को जेल के सलाखों के पीछे बन्द करवा दिया है) तथा विशेष बात यह है कि किसी भी तरफ

से उनके प्रति सहानुभूति का एक शब्द भी प्राप्त नहीं होता है।

5. घाटी में सशस्त्र संघर्ष के साथ ही सम्बन्धित, भारत व पाकिस्तान के बीच जम्मू-कश्मीर राज्य को लेकर बढ़ता शीत युद्ध भी, परमाणु आयुधों के साथ एक नए भारत-पाक युद्ध के खतरे की आशंका को बढ़ावा दे रहा है, अर्थात् शीतयुद्ध के बढ़ने के कारण परमाणु युद्ध की आशंका बढ़ती नजर आती है।

6. स्पष्ट है कि जम्मू-कश्मीर के लोगों की आज की सामाजिक आवश्यकता सेना द्वारा संचालित चुनावी प्रक्रिया न होकर एक शांतिपूर्ण प्रक्रिया की शुरूआत करना है, एक समरूप या समान कार्यक्रम के साथ, जो एक तरफ तो जम्मू-कश्मीर में लड़ने वाले दलों के बीच तथा दूसरी ओर भारत व पाकिस्तान के बीच कोई बिना शर्त बातचीत या सुलह की व्यवस्था करने में मदद करे जो अन्ततोगत्वा सामाजिक स्थायित्व का मार्ग प्रशस्त करें न केवल जम्मू-कश्मीर में बल्कि भारत पाकिस्तान व दक्षिण एशिया में भी।

III

7. निर्वाचन की दूसरी शर्त की ओर मुड़ें, तो तीन मौलिक या आधारभूत प्रेरक तत्वों का अध्ययन करना आवश्यक है, जो हैं—सामान्य विचारधारा, दृष्टिकोणगत सिद्धान्त तथा कार्य प्रणाली—ताकि हम निर्वाचन कराने वाली सरकार की प्रेरणा के औचित्य को समझ सकें।

(अ)

8. जहां तक नई दिल्ली सरकार तथा भारत की तीन प्रमुख पार्टियां (कांग्रेस, भाजपा व रामो-वामो) की सामान्य विचारधारा का प्रश्न है, जम्मू-कश्मीर के बारे में यह विचारधारा सदैव दोगली नीति वाली रही है। एक तरफ तो वे जम्मू-कश्मीर के मामले की घरेलू अर्थात् आन्तरिक स्तर पर समाप्ति का राग अलापते हैं तथा जम्मू-कश्मीर राज्य को भारत का अभिन्न अंग मानते हुए इस मुद्दे को अंतिम तौर पर निर्णित मानते हैं, तथा दूसरी वे प्रत्येक अन्तर्राष्ट्रीय विचार मंच पर तथा प्रत्येक विदेशी राजनायिक तथा मीडिया के व्यक्ति के सामने हमेशा यह बात दोहराते हैं कि भारत व पाकिस्तान के बीच जम्मू-कश्मीर समस्या का द्विपक्षीय हल होना चाहिए।

9. दिसम्बर 1993 में भारतीय संसद ने एक निर्विरोध प्रस्ताव इस आशय का पारित किया कि जम्मू-कश्मीर राज्य भारत का अभिन्न अंग है तथा इस पर कोई बातचीत नहीं की जा सकती। लेकिन इस संसदीय आदेश की अवहेलना अन्य किसी व्यक्ति द्वारा नहीं बल्कि दो भारतीय प्रधानमंत्रियों द्वारा ही की गई पहले तो नरसिम्हाराव द्वारा तथा बाद में देवगौड़ा द्वारा—इन दोनों ने ही पाकिस्तान के प्रधानमंत्री को लिखा कि जम्मू-कश्मीर के मुद्दे पर बातचीत की जाए। पहले से ही 1972 के शिमला समझौते

के अन्तर्गत नई दिल्ली सरकार जम्मू-कश्मीर की समस्या को पाकिस्तान के साथ द्विपक्षीय तौर पर हल करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर वचनबद्ध है। इसके पहले ही भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र के समक्ष जम्मू-कश्मीर राज्य की विवादाग्रस्त स्थिति को स्वीकार किया था, तथा आज भी संयुक्त राष्ट्र के पर्यवेक्षक, जम्मू-कश्मीर के अन्दर युद्ध विराम लाइन के दोनों ओर रहना जारी रखे हुए हैं।

10. हालांकि, दोहरी या दोगली नीति के बावजूद भी, नई दिल्ली सरकार एवं भारत की तीन प्रमुख पार्टियों ने भी विचारधारा के प्रथम भाग को (यह राष्ट्रीय मान्यता या विचारधारा कि जम्मू-कश्मीर भारत का एक अभिन्न अंग है तथा यह मुद्दा अंतिम तौर पर ही निर्णित है) भारत के ऐसे राष्ट्रवाद या राष्ट्र प्रेम की कसौटी बना रखा है मानो केवल मात्र वो ही राष्ट्र के हितों की रक्षा कर सकता है।

(ब)

11. अपने राष्ट्र भक्ति के सिद्धान्त द्वारा मार्ग दर्शन प्राप्त करते हुए, नई दिल्ली सरकार एवं इसकी तीन प्रमुख पार्टियां तीन दृष्टिकोण (या सिद्धान्त) अपनाती हैं अर्थात् लागू करती हैं। ये तीनों सिद्धान्त इस प्रकार है—(क) सभी मामलों में एक पाक विरोधी भावना को मान्यता देना (भाजपा द्वारा प्रत्यक्ष या खुले रूप में तथा तथाकथित धर्मनिरपेक्षवादियों द्वारा गुप्त या परिवर्तित रूप से जैसे कांग्रेसी, समाजवादी, मण्डलवादी एवं साम्यवादी इत्यादि) क्योंकि उनके मतानुसार, पाकिस्तान चूंकि जम्मू-कश्मीर में प्रमुख प्रतियोगी या विरोधी है, अत: वह हमारा प्रमुख शत्रु है, (ख) नई दिल्ली एवं जम्मू-कश्मीर सरकार के पाकिस्तान के प्रति कड़े रुख तथा कश्मीर घाटी, डोडा, राजौरी, तथा पुंछ के प्रति कठोर नीति का समर्थन करना, तथा (ग) इन प्रदेशों में भारतीय सेनाओं द्वारा किए जा रहे दमनपूर्ण कार्यों का अंधा समर्थन।

12. जो कोई भी इन तीन सिद्धान्तों का अनादर करता है या इनमें विश्वास नहीं करता तो उसे देशद्रोही अर्थात् राष्ट्रीय हितों के प्रति विश्वासघाती माना जाता है।

(स)

इस देशभक्ति के सिद्धान्त तथा दृष्टिकोण से सम्बन्धित सिद्धान्तों के अनुरूप ही नई दिल्ली सरकार तथा जम्मू-कश्मीर में इसकी दो पार्टियों की कार्यप्रणाली भी तोड़ वाली तथा कपटपूर्ण रही है।

यह सब घटनाओं एवं तथ्यों की एक शृंखला से स्पष्ट है, जैसे राज्य के संवैधानिक स्वायत्त स्तर को कम या सीमित करना, सभी निर्वाचनों को कपटपूर्वक सम्पन्न कराना, विभिन्न क्षेत्रों व पक्षों के बीच फूट या मतभेद उत्पन्न करना जैसे कश्मीर एवं जम्मू, मुस्लिम एवं गैर मुस्लिम, कश्मीर एवं लद्दाख, सुन्नी एवं शिया,

गुज्जर एवं गैर-गुज्जर आदि के बीच, राज्य में व्यापक तौर पर फैले राजनैतिक एवं प्रशासनिक भ्रष्टाचार को बढ़ाना व छिपाने की कोशिश करना, घाटी में प्रत्येक उभरते हुए राजनेता से उनके अधीन या नियंत्रण में रहने की मांग करना इत्यादि।

हाल ही की ताजा घटनाएं, जैसे सरकार द्वारा घाटी में तैनात अन्तर्राष्ट्रीय रेड क्रॉस के व्यक्तियों को यह कहना कि वे विधानसभा चुनाव समाप्त होते ही राज्य से बाहर चले जाएंगे, एमनेस्टी इन्टरनेशनल की राज्य में आने की प्रार्थना को अस्वीकार कर देना, जम्मू-कश्मीर में निर्वाचन प्रक्रिया का पर्यवेक्षण विदेशी पर्यवेक्षकों को सौंपने से इंकार कर देना (जैसा कि प्राय:कर अनेक राष्ट्रों द्वारा अपने राष्ट्रीय निर्वाचन के दौरान किया जाता है तथा हाल ही में इस विधि का अनुसरण नेपाल, बांग्लादेश तथा पाकिस्तान द्वारा किया गया था), ये बातें भी सरकार की गुपचुप व रहस्यमयी कार्यप्रणाली को प्रदर्शित करती है।

13. स्पष्ट है कि ऊपर वर्णित तथ्य नई दिल्ली सरकार तथा जम्मू-कश्मीर विधान सभा निर्वाचन से सम्बन्धित प्रमुख राजनैतिक दलों की प्रेरक विश्वासपात्रता या सद्भावना के पक्ष में या तारीफ में कुछ नहीं बोलने अर्थात् उनकी प्रशंसा नहीं करते।

IV

14. जब तीसरी शर्त पर विचार करते हैं (अर्थात् चुनाव में भाग लेने के लिए लोगों की आम इच्छा या सहमति), तो निम्नांकित तथ्यों पर गहराई से विचार-विमर्श आवश्यक है।

15. घाटी के लोगों तथा डोडा, पुंछ, राजौरी तथा कारगिल आदि भागों के लोगों का सामान्य दृष्टिकोण भारत के विपरीत है, क्योंकि ये सभी लोग भारत को अपने कष्टों का मूल कारण मानते हैं। यहां तक की मो. फारूख भी नई दिल्ली सरकार से अपनी पृथक् स्थिति रखने के लिए, किसी अखिल भारतीय पार्टी से प्रत्यक्ष जुड़ाव की स्थिति को टालते रहे हैं, राष्ट्रीय दलों से अपने निकट सम्पर्क के बावजूद भी।

पाकिस्तान ने भी विश्वसनीयता खो दी है। लोगों की अधिकांश संख्या, किसी के प्रति आत्म समर्पण करने के विरोधी हैं या पूर्ण स्वतंत्रता के पक्षधर हैं।

16. उपरोक्त क्षेत्रों के लोगों की चुनावों के प्रति आम विचारधारा बड़ी तीव्र एवं उद्विग्न या प्रतिकूल ही है। लोगबाग चुनाव को एक सैनिक कार्यवाही ही मानते हैं। चुनाव से भी तनाव में कोई कमी या राहत नहीं मिलती। दैनिक मौतों की संख्या ने पिछले 7 वर्षों के रिकार्ड को भी तोड़ दिया है। कर्मचारियों एवं छात्रों की 38 दिन लम्बी हड़ताल शिक्षित या बुद्धिजीवी वर्ग की विचारधारा एवं भावना या मन:स्थिति को प्रकट करती है। कोई भी उम्मीदवार या उसके समर्थक बन्दूकों से लैस ब्लैक कैट कमाण्डो की सुरक्षा के बिना चल फिर नहीं सकते।

17. पिछले 7 वर्षों में, लोगों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति बहुत ज्यादा खराब हुई है। कई लोगों ने जान माल का भयंकर नुकसान उठाया है। किसी ने भी इस तरफ कोई विशेष ध्यान नहीं दिया है। अब सभी की एक आम इच्छा है कि वर्तमान में चल रही दयनीय सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को एक बेहतर स्थिति में परिवर्तित किया जाए।

18. आज शांति की स्थापना का मुद्दा सम्पूर्ण राज्य के लोगों, विशेषकर कश्मीर घाटी के लोगों के कार्यक्रम का प्रमुख हिस्सा या विषय बन गया है लेकिन लोग बाग शांति की स्थापना पुराने ढंग से नहीं बल्कि एक नए आधार से चाहते हैं। आखिर उन्होंने परम्परागत सड़ी गली स्थिति की पुनर्स्थापना के लिए तो अपने हजारों भाई-बहिनों की जानें न्यौछावर नहीं की, भयंकर कष्ट नहीं सहे तथा धन सम्पत्ति का नुकसान इसके लिए तो नहीं सहा। निश्चित है कि वे बिगड़ी हुई व्यवस्था एवं इसके संचालकों की पुनर्स्थापना के लिए पुराने ढंग से मिथ्या चुनावों की पुनरावृत्ति नहीं चाहते, जिनका संचालन अब सेना के निर्देशों में किया जाता है।

19. जहां तक भावी आकांक्षाओं का प्रश्न है, लोग बाग अपने वर्तमान आन्दोलन के बारे में भ्रमित एवं आशंकित है। न तो उनका विश्वास नई दिल्ली सरकार द्वारा किए गए वादों में हैं तथा न नेशनल कांफ्रेंस के कार्यक्रम में है। नेशनल कांफ्रेंस तथा कांग्रेस आई दोनों का पिछला रिकार्ड गलत या अनुचित रहा है। यह किसी प्रकार के विश्वास को नहीं जाग्रत करता।

V

20. जब निर्वाचन की चौथी शर्त पर दृष्टिपात करते हैं (जो यह है कि चुनावों के विभिन्न पहलुओं पर चुनाव लड़ने वाले विभिन्न दलों में एक आम सहमति होनी चाहिए), तो यह स्पष्ट है कि जब तक इस शर्त की पालना या पूर्ति नहीं होती, तब तक राजनैतिक एवं सैनिक दबाव के नीचे कराए गये चुनावों को न तो स्वीकार किया जा सकता तथा न उन पर विश्वास किया जा सकता। न्याय यह मांग करता है कि एक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए, नई दिल्ली सरकार को आम सहमति विकसित करने के लिए, जम्मू-कश्मीर में कार्यरत सभी प्रकार की राजनैतिक शक्तियों के साथ बातचीत करने का कदम उठाना चाहिए था। एक मात्र राजनैतिक शक्ति जो आज कश्मीर घाटी तथा राज्य के कुछ अन्य भागों में अपनी महत्ता या विशिष्ट स्थिति रखती है वह है हुर्रियत कांफ्रेंस जो 30 से भी अधिक कश्मीरी संगठनों का एक संयुक्त मोर्चा है। इस पार्टी की भागीदारी के बिना आयोजित निर्वाचनों को कोई लोकप्रियता या जन समर्थन नहीं मिल सकता। केवल मात्र एक पार्टी के आधार पर कराए गए चुनावों में निष्पक्षता एवं न्याय की कमी होती है।

21. उपरोक्त विश्लेषण से तीन आधारभूत तथ्य हमारे समक्ष आते हैं। प्रथम यह कि नई दिल्ली सरकार तथा इसके तीन प्रमुख राजनैतिक दल आधुनिक वैश्विक अनुभव से भी कुछ सीखने अर्थात् सबक लेने से इंकार कर देते हैं, जो यह कहता है कि एक ऐसे प्रदेश को, जहां के लोग बाग पिछले 7 वर्ष से एक सैनिक संघर्ष को सहन करते आए हैं (नई दिल्ली सरकार की राय में एक छद्म युद्ध) अपने हजारों प्रिय परिजनों के प्राण न्यौछावर करते आए हैं तथा भंयकर आर्थिक क्षति सहन कर चुके हैं, उस प्रदेश में चुनाव लड़ने वाले पक्षों से बातचीत करने की ही आवश्यकता है।

दूसरे, वे इस सामान्य धारणा या विचार से इंकार करते हैं कि बन्दूकों की लड़ाई तभी बन्द हो सकती है जब लड़ने वाले पक्ष शांतिपूर्ण तरीका अर्थात् शांति का कार्यक्रम अपनावे तथा संघर्ष का रास्ता त्यागे। केवल एक पक्ष की शर्तों पर थोपा गया चुनाव, जो दूसरे पक्ष की हार का संकेत देता है वह शांति की प्रक्रिया की शुरूआत नहीं कर सकता। यह केवल कमजोर पक्ष में एक बदले की भावना की उत्पत्ति व विकास करता है।

तीसरे, वे अर्थात् जम्मू-कश्मीर के लोग अपनी उसी पुरानी वैचारिक-राजनैतिक धारणा पर कायम रहते हैं जो 1947 से ही उनकी मुख्य विचारधारा थी (अर्थात् चुनाव उनमें कोई वैचारिक परिवर्तन नहीं लाते) इस प्रकार वे स्पष्टत: प्रकट करते हैं कि वर्तमान में चल रहे विधान सभा चुनाव वही पुरानी राग अलापने वाले हैं अर्थात् पुरानी शराब को नई बोतलों में भर कर रख देने के समान है जिसमें नवीनतम या सुधार के नाम पर कुछ भी नहीं। (13-9-96)

(श्रीनगर से प्रकाशित दैनिक 'ग्रेटर कश्मीर' के 17.9.96 के अंक में प्रकाशित)

❋ ❋ ❋

न तो बन्दूक तथा न ही कपटपूर्ण निर्वाचन जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के लिए सही कदम हो सकते हैं

I

1. सामाजिक विज्ञान अर्थात् समाजशास्त्र यह बताता है कि कोई भी मानवीय समस्या इससे सम्बन्धित सामाजिक वास्तविकताओं पर उचित ढंग से विचार किए बिना अर्थात् उन पर समुचित ध्यान दिए बिना नहीं सुलझाई जा सकती। आधी अधूरी सामाजिक तकनीकियों का अन्त हमेशा असफलताओं में होता है। जब किसी भी प्रकरण के सम्बन्ध में इस सामाजिक नियम की पालना की जाती है इस प्रकरण की सामाजिक रुकावटें हमारे सामने आती हैं चाहे वह 300 वर्ष पुराना दक्षिण अफ्रीका का जातीय अलगाव का प्रकरण हो, या 50 वर्ष पुराना फिलिस्तीन का मुद्दा हो।

2. जम्मू-कश्मीर की 50 वर्ष की समस्या थकाने एवं उबाने वाली एवं धीमी प्रक्रिया ने सभी प्रकार की सामाजिक प्रणालियों को नकार दिया अर्थात् असफल कर दिया। इसका मुख्य कारण इस तथ्य में निहित है कि इसके दो प्रमुख पक्षों भारत व पाकिस्तान में से प्रत्येक ने इसे अपनी शर्तों पर अर्थात् अपने ढंग से बिना किन्हीं सामाजिक वास्तविकताओं की परवाह किए, हथियारों के माध्यम से हल करने का प्रयास किया। इसी कारण से इस समस्या को हल करने के लिए अपनाई गई अनेक सामाजिक विधियां अब तक कामयाब नहीं हो पाई जैसे 1948-56 तक का संयुक्त राष्ट्र का सक्रिय रूप से भागीदार होना, विभिन्न अवसरों पर तटस्थता आंदोलन, यूरोपीय संघ, दक्षिणी-पूर्वी एशियाई देशो के संगठन, तेल आयात देशों, सार्क तथा अनेक अन्य देशों द्वारा किए गए प्रयास, 50 वर्ष पुराना भारत-पाक मुकाबला या संघर्ष, 3 भारत-पाक युद्ध, नई दिल्ली व श्रीनगर के मध्य की अनेक वार्ताएं व समझौते, 1972 का शिमला समझौता, 8 विधान सभा निर्वाचन, वर्तमान में चल रहा आंतकवाद इत्यादि।

II

3. 1947 के भारत पाक विभाजन के साथ जन्म लेकर तथा राज्य का दो तिहाई भाग भारत के नियंत्रण में तथा एक तिहाई भाग पाकिस्तान के अधीन होने के साथ (1947 के प्रथम भारत-पाक युद्ध के परिणामस्वरूप) जम्मू-कश्मीर की समस्या भारत एवं पाकिस्तान के बीच संघर्ष या विवाद का अहम् मुद्दा या केन्द्र बिन्दु है जो उनके राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम का स्वरूप निर्धारित करता है, उनसे सम्बन्धित आंतरिक एवं बाहरी प्राथमिकताओं को निर्धारित करता है, तथा उनसे

सम्बन्धित राष्ट्रवाद की प्रमुख सीमाओं या ढांचे को परिभाषित करता है परिणामत: जम्मू-कश्मीर का मुद्दा दोनों ही देशों के लिए राष्ट्रीय प्रतिष्ठा का मुद्दा बन गया है तथा दोनों ही देश अपनी राष्ट्रीय प्रतिष्ठा या सम्मान की रक्षा के लिए कोई भी बलिदान देने को तैयार है।

4. विवाद के प्रारम्भ से ही दोनों में से प्रत्येक ने विवाद के समाधान के माध्यम के रूप में बन्दूक की राजनीति को अपना लिया। 5 दशाब्दियों के तीव्र शीत युद्ध जिसके दौरान 3 युद्ध हुए तथा एक लम्बी हथियारों की दौड़ ने उक्त दोनों देशों की कमजोर अर्थ व्यवस्था पर एक भारी आर्थिक वजन डाला है, उनकी प्रगति को अस्त व्यस्त कर दिया है तथा उन्हें विश्व के सीमान्त देश अर्थात् निर्धनतम देशों की श्रेणी में ला खड़ा किया है। एशिया एवं लेटिन अमेरिका के बहुत से देशों ने, जो 1947 में कामोबेश इन्हीं दो देशों के समान स्थिति में थे, आज इन दोनों देशों को बहुत पीछे छोड़ दिया है। अत: इन दोनों देशों में चल रही राजनैतिक प्रक्रिया की पहचान या विशेषताएं—सम्प्रदायवाद, जातिवाद, भ्रष्टाचार, हिंसा आदि की रह गई है। इनकी आर्थिक प्रक्रिया अकार्यकुशलता, उत्पादन की घटिया किस्म एवं ऊंची लागत से नियंत्रित हो रही है तथा इनकी सांस्कृतिक प्रक्रिया की पहचान दोहरी बातें तथा संदिग्ध व्यवहार बन गई है। यदि दोनों देश अपने वर्तमान खतरनाक रास्ते से पीछे नहीं हटते हैं तो सम्भावना है कि उन्हें अस्थिरता की स्थिति का सामना करना पड़ेगा।

5. दोनों देशों के कब्जे व नियंत्रण वाले जम्मू-कश्मीर के सम्बन्धित भाग में से जो भाग भारत के नियंत्रण में है वह भौगोलिक, जातीय, आर्थिक एवं राजनैतिक दृष्टिकोणों से राज्य में एक महत्वपूर्ण भाग का गठन करता है। भारत हर कीमत पर अपने नियंत्रण वाले भूभाग को अपने पास रखना चाहता है, जबकि पाकिस्तान ने भी इस समस्या का हल अपने पक्ष में करने का दृढ़ निश्चय कर रखा है। प्रत्येक देश पूरे राज्य पर अपना दावा करता है तथा एक दूसरे के अधिकार से इंकार करता है। इस्लामाबाद सरकार का दावा भारत के साम्प्रदायिक विभाजन तथा जम्मू-कश्मीर राज्य की मुस्लिम बाहुल्य विशेषता पर आधारित है। नई दिल्ली सरकार ब्रिटिश सरकार के भारत स्वतंत्रता अधिनियम के द्वारा निर्धारित विधि से तत्कालीन जम्मू-कश्मीर के महाराजा द्वारा हस्ताक्षरित सत्ता सौंपने के दस्तावेज के आधार पर जम्मू-कश्मीर राज्य पर अपना अधिकार या दावा जताती है। दोनों ही देश किसी अन्य तीसरे विकल्प को स्वीकार करने से इंकार करते हैं। वर्तमान समय में, जबकि भारत शिमला समझौते के अधीन एक द्विपक्षीय हल की बात करता है, पाकिस्तान संयुक्त राष्ट्र के निर्णयों के आधार पर या किसी तीसरे पक्ष की मध्यस्तता के आधार पर समझौते या फैसले की मांग करता है।

6. आधुनिक ऐतिहासिक अनुभव इस बात का संकेत देता है कि शीतयुद्ध के बाद के काल में हथियार और हिंसा किसी भी समस्या का समाधान उपलब्ध नहीं कराते। यद्यपि जिसकी लाठी उसकी भैंस अर्थात् समर्थ को ही सत्ता होती है, का राजनैतिक सिद्धान्त ही शीतयुद्ध काल की समाप्ति तक सामान्य नियम के रूप में रहा है (1987 के आसपास), तथा इस सिद्धान्त का सामाजिक प्रक्रिया के मध्य प्रयोग यहां वहां यदा कदा होता रहता है (जैसे हाल ही का इराक पर संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रक्षेपास्त्रों से हमला), तथापि, वार्ता, बातचीत एवं परस्पर विचार-विमर्श का तरीका ही दिन प्रतिदिन प्रचलित विधि के रूप में सामने आ रहा है। समूचे विश्व में बिना शर्त वार्ताएं तथा शांति समझौते, सशस्त्र संघर्षों का स्थान ले रहे हैं। भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर भी अन्तर्राष्ट्रीय जगत की शांति की प्रवृत्ति से अपने को एक लम्बे समय तक अलग नही रख सकते।

7. युद्ध विराम रेखा के दोनों ही ओर रहने वाले लोग अपनी अपनी सम्बन्धित नियंत्रक सरकारों के कार्यकलापों से असंतुष्ट हैं। जबकि पाकिस्तान की तरफ रहने वाले लोगों का असंतोष तो अब भी एक निश्चित सीमा में अर्थात् नियंत्रण में है, भारत की ओर रहने वाले लोगों का असंतोष विशेष कर कश्मीर घाटी में रहने वाले लोगों का असंतोष तो सशस्त्र संघर्ष के रूप में परिवर्तित हो चुका है। इस प्रकार भारत की तरफ का भाग, भारत-पाक संघर्ष तथा विश्व के ध्यानाकर्षण का केन्द्र बिन्दु बन चुका है।

III

8. वह प्रारम्भ की ही बात है कि महात्मा गांधी ने कश्मीर घाटी में आशा की किरण देखी। तभी से यह प्रचलित मुहावरा कि कश्मीर ही भारतीय धर्मनिरपेक्षवाद की पोषण स्थली है, भारतीय राष्ट्रवाद का प्रमुख सांकेतिक शब्द बन गया था। इस बात ने तार्किक रूप से इस भ्रम या झूठे विश्वास को जन्म दिया कि धर्मनिरपेक्षवादी (भारत के पक्षधर) कश्मीरी कोई गलत कार्य नहीं कर सकते, अत: वे सभी मामला में सम्पूर्ण समर्थन के पात्र है। अनियंत्रित शक्ति या सत्ता ने अपने ही तर्क या विश्वास का पोषण किया। भ्रष्टाचार, अकार्यकुशलता, चालबाजी, छलपकट इत्यादि बातें सामान्य हो गई। अव्यवस्था या अराजकता के बढ़ने के साथ साथ राज्य को जो स्वायत्तता प्रदान की गई थी उसे राष्ट्रीय हित का बहाना बता कर धीरे धीरे कम किया गया।

9. लगभग 40 वर्षों तक (1947-1987) नई दिल्ली सरकार तथा इसके स्थानीय सहयोगी राज्य में विशेष कर कश्मीर घाटी में विनाश या विध्वंस करते रहे। कभी कभी इसका विरोध भी होता परन्तु किसी ने इसको गम्भीरता से नहीं लिया, एक परम्परागत मिथ्या से पूर्वाग्रहित होकर कि कश्मीर वासियों में सत्ता के खिलाफ बगावत करने की बुद्धि व क्षमता ही नहीं है।

10. 4 शताब्दी तक के लम्बे एक गलत खेल का परिणाम यह हुआ कि कश्मीर वासियों में नई दिल्ली सरकार के लिए एक अलगाव व विकर्षण की भावना उत्पन्न हो गई जिसने कश्मीर को उग्रवाद के पनपाने वाली धरती बना दिया। यह तथ्य पुन: इस ऐतिहासिक तथ्य की पुष्टि करता है कि जब कोई सामाजिक प्रणाली अविश्वसनीय तथा अवैध बन जाती है तो बन्दूकें काम में आने वाली लग जाती हैं, चाहे इनका शिकार कोई भी बने।

11. सात वर्ष से, आतंकवाद ने कश्मीर घाटी व जम्मू क्षेत्र के कुछ भाग को हिला कर रख दिया है। नई दिल्ली सरकार की गोली का जवाब गोली से, की नीति ने मानवाधिकार हनन पर जोर देने तथा कश्मीर वासियों को आंतकित करने की प्रणाली ने कश्मीर राज्य के अलगाव को ही बढ़ावा दिया है।

12. इन सब वर्षों में चूंकि सभी उच्च स्तरीय राजनेता घाटी से बाहर चले गये हैं, सुरक्षा बल ही प्रबन्धक की भूमिका भी निभा रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप समग्र रूप से सामाजिक ह्रास या पतन हुआ है।

13. जम्मू-कश्मीर राज्य में एक दीर्घ कष्टप्रद स्थिति की यह मांग थी कि नई दिल्ली सरकार को कुछ ऐसे कदम उठाने चाहिए जिनसे आम जनता में विश्वास कायम हो सके। ये कदम ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस के साथ बिना शर्त वार्ताओं के रूप में हो सकते थे तथा सभी के साथ लद्दाख एवं जम्मू के अन्य वर्गों के लोगों के साथ इसी भांति की वार्ताएं आयोजित करने के कदम भी हो सकते हैं तथा राज्य प्रशासन में आमूल चूल परिवर्तन तथा ऐसी आम समस्याओं की ओर ध्यान देना जो लम्बे समय से अनदेखी पड़ी थी, आदि भी इन कदमों का भाग हो सकते हैं। लेकिन ऐसे कदम उठाने के बजाय नई दिल्ली सरकार तो तुरन्त ही विधान सभा निर्वाचन कराने की ओर अग्रसर हो गई।

14. हाल ही में सशस्त्र संघर्ष के विश्वव्यापी अनुभव से तो यही संकेत मिलता है कि प्रत्येक समझौते या फैसले का प्रारम्भिक बिन्दु सम्बन्धित पक्षों में वार्ता की प्रक्रिया का ही होता है। चुनाव या किसी स्थाई हल का मार्ग तो विवाद रखने वाले पक्षों में किसी समझौते के बाद ही प्रशस्त होता है। अत: जम्मू-कश्मीर की सामाजिक वास्तविकता की तीव्र आवश्यकता यही है कि परस्पर विरोधी ताकतों के बीच वार्ता आयोजित की जावे।

IV

15. विधान सभा निर्वाचन नई दिल्ली सरकार की ओर से कश्मीर में 7 वर्ष से चल रहे आतंकवाद का प्रथम राजनैतिक उत्तर है। यह किसी एक ही पक्ष की शर्तों पर समस्या का हल प्राप्त करने का एक और प्रयास है। चुनावी प्रक्रिया या कवायद का

मुख्य मुद्दा यह है कि घाटी में सामान्य स्थिति की पुनर्स्थापना के बारे में विश्व जनमत को धोखे में रखा जाए। इसका दूसरा उद्देश्य यह है कि राज्य के लोकप्रिय नेताओं को निर्वाचित प्रतिनिधियों के रूप में उभार कर कश्मीर वासियों में एक निरुत्साह की भावना का संचार करना। इसके अलावा नई दिल्ली सरकार पाकिस्तान के जनमत को भी हतोत्साहित करना चाहती है, यह प्रदर्शित करके कि पाकिस्तान द्वारा आतंकवाद को समर्थन देने के बावजूद इसका निर्वाचन विरोधी कार्यक्रम जम्मू-कश्मीर में सफल नहीं हो पाया। इसके अतिरिक्त यह भारतीय जनता के समक्ष यह बताना चाहती है कि नई दिल्ली सरकार पाकिस्तान सरकार द्वारा चलाए गए छद्म युद्ध को जीत रही है। इन हालात में यह स्पष्ट है कि इस प्रकार के निर्वाचन जम्मू-कश्मीर समस्या की आधारभूत एवं प्रमुख वास्तविकताओं की अनदेखी करता है।

16. क्या वर्तमान में जम्मू-कश्मीर राज्य में चल रहे विधान सभा निर्वाचन एक प्रजातांत्रिक प्रक्रिया के रूप में होंगे? इसके प्रथम चरण की समाप्ति को देखें तो निम्नांकित बिन्दु विचार विमर्श के योग्य दिखाई देते हैं—

प्रथम तो यह कि राज्य में एक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव के लिए वांछित हालात व शर्तें अस्तित्व में नहीं हैं। एक आदर्श या अनुकूल कानून व्यवस्था की स्थिति गायब है अर्थात् अस्तित्व में नहीं है। तीन तरफ से बन्दूकों की धमकी व खतरा अर्थात् सरकार समर्थित उग्रवादियों, सुरक्षा बलों तथा आतंकवादियों की ओर से इस स्थिति ने जनमत की एक स्वतंत्र अभिव्यक्ति को पूर्णतया असम्भव बना दिया है। चुनाव के प्रति आम अनिच्छा या अरूचि से स्पष्ट है कि एक उचित भावनात्मक वातावरण की भी अभी कमी है। स्वयं नई दिल्ली सरकार की निर्वाचन नीति या सिद्धान्त भी सामान्य ह्रास और थकावट पर आधारित है न कि जनता के दिल दिमाग में किसी परिवर्तन पर, जिनमें चुनावी सक्रियता की भयंकर कमी है। इस प्रक्रिया में भाग लेने हेतु लोगों को प्रेरित करने के लिए कुछ भी नवीन कार्य नहीं हुआ है। अलग थलग हुए लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन एक वार्ता व विचार विमर्श वाले वैचारिक राजनैतिक कार्यक्रम से ही आ सकता है।

द्वितीय, नई दिल्ली सरकार ने ऐसा एक भी कदम नहीं उठाया जिसके आधार पर चुनावी प्रक्रिया को एक विश्वसनीय प्रक्रिया माना जा सके। निर्वाचन से सम्बन्धित नई दिल्ली सरकार के लगभग सभी निर्णय अनिश्चित अर्थात् चुनौती योग्य तथा संदेहयुक्त है, यथा ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेस से बातचीत को टालना, सरकार समर्थक उग्रवादियों को आतंक व भय फैलाने की अनुमति देना, कभी कभी तो नई दिल्ली सरकार की सहयोगी पार्टियों के समर्थकों को भी परेशान करना, निर्वाचन एक ऐसे समय पर करवाना जबकि आतंकवाद व हिंसा का स्तर 7 वर्ष की अवधि में किसी भी

अन्य समय की तुलना में अधिक बढ़ा हुआ है, हजारों लोगों को बिना मुकदमा चलाए जेलों में बन्द कर देना, मतदाताओं को अपनी इच्छा या भावना के अनुरूप कार्य नहीं करने देना (अर्थात् वोट देना या नहीं देना व किसे देना यह भी वे अपनी इच्छा से नहीं कर सकते), एक ही प्रकार की विचारधारा वाले तक ही मुकाबले को सीमित करके मतदाताओं की उम्मीदवार की पसन्द या चुनाव की आजादी को सीमित करना, ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस को अपना चुनाव विरोधी अभियान चलाने से रोकना, चुनावी प्रक्रिया के पर्यवेक्षण व नियंत्रण के लिए विदेशी पर्यवेक्षकों को नियुक्त करने से इंकार करना, एमनेस्टी इंटरनेशनल के प्रतिनिधियों को राज्य में प्रवेश की अनुमति देने से इंकार करना, चुनावी प्रक्रिया के पूरा होने तक रेड क्रॉस के प्रतिनिधियों को भी राज्य से बाहर चले जाने का निर्देश देना, दोषपूर्ण मतदाता सूची के आधार पर निर्वाचन कराना, तथा ऐसी ही अन्य अनेक बातें।

तीसरा बिन्दु यह है कि जिस ढंग से निर्वाचन का प्रथम चरण पूरा करवाया गया है उस निर्वाचन को एक संदेहयुक्त प्रक्रिया साबित कर दिया है। मिथ्या मतदान, बूथों पर कब्जा करने, सरकार समर्थित उग्रवादियों द्वारा शक्ति का प्रयोग तथा अन्य अनेक अनियमितताओं के आरोप पहले से ही नेशनल कांफ्रेंस, जनता दल, पेंथर पार्टी आदि द्वारा लगाए जा चुके हैं।

V

17. क्या चुनाव के बाद आने वाले समय में स्थितियां बदल कर बेहतर हो जाएंगी?

18. वर्तमान सामाजिक संकेतक ऐसा कोई संकेत नहीं देते कि किसी भी सामाजिक क्षेत्र में कोई उपयोगी या महत्वपूर्ण होगा।

शांति स्थापना के क्षेत्र पर विचार करें तो ऐसा लगता है कि चुनावों के बाद नई दिल्ली सरकार के समक्ष आई अनिश्चितताएं तथा घाटी में स्थित भयंकर चुनौतियां वर्तमान में चल रहे भारत-पाक तनाव को कम करने की अनुमति नहीं देंगे तथा न राज्य में सामान्य स्थिति की बहाली हो पाएगी, विशेषकर कश्मीर घाटी में जहां तनाव एवं आतंकवाद के बोझ से दबी होने की स्थिति विद्यमान है।

जहां तक प्रजातंत्र एवं विकास का प्रश्न है, यह सही है कि अविश्वनीय, बिना कार्यसूची व बिना किसी मुद्दे को लेकर कराया गया निर्वाचन सुरक्षा बलों की सहायता से निर्वाचित सरकार जिसका कोई व्यापक जनाधार नहीं तथा जो सदैव आतंकवादियों के भय एवं धमकी के नीचे काम करती है। लोगों को एक प्रजातांत्रिक शासन नहीं दे पाएगी। जब तक सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम के अन्तर्गत सेना के पास सत्ता रहती है तब तक प्रजातांत्रिक संस्थाओं की पुनर्स्थापना एक

काल्पनिक या स्वप्न की बात ही रह जाती है। आज चल रही खराब कानून व्यवस्था तथा लोगों की लगातार अलगाव की स्थिति में इस बात की बहुत कम सम्भावना है कि प्रशासन को चुश्त बनाया जा सके, भ्रष्टाचार के स्तर को कम किया जा सके, अकार्यकुशलता में सुधार किया जा सके, विकास के कार्य किए जा सकें, निर्धनता व बेरोजगारी को कम किया जा सके तथा शरणार्थियों (राज्य से बाहर जाने वालों) की समस्या से निपटा जा सके इत्यादि।

जहां तक जम्मू-कश्मीर में 1953 से पूर्व की स्थिति की बहाली या पुनर्स्थापना का प्रश्न है, यह कोई आसान या सरल प्रकरण नहीं है। भारत की स्थिति के बारे में कुछ भी स्पष्ट नहीं है। कोई नहीं कह सकता कि संयुक्त मोर्चा सरकार कब तक चलेगी। जिस रूप में इसकी संरचना हुई है, देवगौड़ा सरकार कश्मीर की स्वायत्तता के सम्बन्ध में कांग्रेसी विचारधारा के परे जाने की हिम्मत नहीं कर सकती। जो यह 1975 के इन्दिरा शेख समझौते की स्थिति जिसका प्रसंग कुछ माह पूर्व नरसिंव्हा राव सरकार द्वारा किया गया था। इसके अतिरिक्त कश्मीर में स्वायत्तता की मात्रा या सीमा के बारे में कोई हल या निश्चय करने के लिए संसद के दो तिहाई बहुमत की आवश्यकता पड़ेगी, जो भाजपा एवं इसके सहयोगी दलों के विरोध के सामने बहुत ही कठिन कार्य हैं। इसी भांति जम्मू कश्मीर में 1953 के पूर्व की स्वायत्तता के मुद्दे पर भी जम्मू-कश्मीर विधान सभा में दो तिहाई बहुमत से कोई निर्णय करवा लेना भी उतना ही दुष्कर कार्य सिद्ध हो सकता है। आज की स्थिति में तो जम्मू-कश्मीर में सन् 1953 के पूर्व की स्थिति बहाल होने की सम्भावना बहुत दूर ही नजर आती है। अधिक से अधिक जो नई दिल्ली सरकार अब कर सकती है वह है 1975 की स्थिति बहाल करना। चाहे थोड़े से लोग कोई भी मांग करें, घाटी के लोगों का बहुमत, समस्या का कोई समुचित एवं स्थाई हल या स्थाई समझौता चाहते है न की स्वायत्तता जैसे अस्थाई या लघु निर्णय।

19. समग्र प्रक्रिया के सर्वेक्षण एवं अध्ययन के बाद हम देख सकते हैं तथा यह अभिमत प्रकट कर सकते हैं कि न तो कोई ठोस घटक उत्पन्न हुआ है तथा न ऐसे किसी घटक के विकसित होने की सम्भावना है जो लोगों की घृणा या अलगाव को समाप्त कर सके और आतंकवाद या सैन्यवाद को कम कर सके।

20. जम्मू-कश्मीर के हालात में कोई सुधार की सम्भावना क्यों नहीं है, इसका प्रमुख कारण तीन तथ्यों में निहित है।

(क) जम्मू-कश्मीर का चुनाव जम्मू-कश्मीर की मूलभूत एवं सच्ची वास्तविकताओं के अनुरूप नहीं है। (जिसमें लोगों की आकांक्षाएं भी शामिल है)।

(ख) भारत सरकार की केन्द्रीकृत नीति जिसका प्रादुर्भाव भारतीय संविधान

की केन्द्रीयकरण की विशेषता तथा भारत के प्रमुख राजनैतिक दलों के बहुसंख्यकवादी राष्ट्रवादी दृष्टिकोण से हुआ है जिसका कश्मीरवासियों के स्वराज्य के दृष्टिकोण या आकांक्षा के बीच काफी मतभेद एवं विवाद है।

(ग) नई दिल्ली सरकार का लगातार 50 वर्षों से जम्मू-कश्मीर में मिथ्या एवं कपटपूर्ण निर्वाचन कराने का अप्रजातांत्रिक रिकॉर्ड तथा जम्मू-कश्मीर पर शक्ति एवं धोखेबाजीपूर्ण साधनों से शासन करने का रिकॉर्ड जिसे इस बार चुनावों में सेना के पर्यवेक्षक एवं बन्दूक के प्रयोग द्वारा और अधिक सशक्त बनाया गया, वह यह प्रदर्शित करता है कि भविष्य में होने वाले चुनाव पूर्व में हुए चुनावों की तुलना में अधिक झूठे एवं धोखेबाजी पूर्ण हो सकते हैं।

VI

21. क्या जम्मू कश्मीर के निर्वाचन को विवेकहीन या अन्यायपूर्ण कहना भारत विरोधी या राष्ट्रवाद विरोधी या देशप्रेम विरोधी बात है? नहीं। भारत विरोधी बात का अर्थ तो है कि किसी न किसी रूप में भारत को कमजोर करना।

22. भारत को आज कमजोर करने वाली तो आज की प्रचलित राजनीति है, अर्थात् धन एवं बाहुबल, घोटाले, भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, साम्प्रदायिकता, अकार्यकुशलता तथा दोगले व्यवहार आदि की राजनीति।

23. इस राजनीति का सूत्रधार या संचालक कौन है? वह और कोई नहीं, केवल मात्र वर्तमान समय के उच्च स्तरीय नेता हैं जो भारत के शासन एवं यहां के प्रमुख राजनैतिक दलों का संचालन करते हैं। इनमें से बहुत से विभिन्न काण्डों एवं घोटालों में शामिल हैं तथा अन्य उनके साथ एक ही दल में सलग्न हैं जो कभी-कभी उनके (घोटालों में शरीक नेताओं के) सुरक्षा कवच का काम करते हैं अर्थात् उनके बचाव के कदम उठाते हैं या उनके पक्ष में बयानबाजी करते हैं।

24. पुन: राजनेताओं का एक समूह है जो भारत को कमजोर कर रहे हैं, जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में ऐसी नीति का निर्धारण करके या समर्थन करके जिसके अनुसार झूठे व कपटपूर्ण चुनाव होते हैं, मानवाधिकारों का हनन होता है (जैसे हिरासत में मौतें, झूठी मुठभेड़, बलात्कार, सम्पत्ति की आगजनी इत्यादि), अर्ध सैनिक शासन की स्थापना तथा मानव एवं भौतिक संसाधनों को नष्ट करना, सामान्यत: जम्मू-कश्मीर में तथा विशेषत: कश्मीर घाटी में।

25. इसके अतिरिक्त, राजनीतिज्ञों का वही समूह है जिसने भारत को कमजोर किया संघर्ष व टकराव वाली विदेश नीति अपना कर जिसने 1947 से 1971 तक 24 वर्ष में भारत को अपने पड़ोसियों के साथ 4 बड़े युद्धों में शामिल होने को विवश किया (शायद यह रिकॉर्ड था जो विश्व के किसी भी विकासशील देश द्वारा तोड़ा नहीं जा

सका) तथा भारत व सभी दक्षिणी एशियाई देशों के सम्बन्धों में एक कटुता या कड़वाहट का मिश्रण कर दिया।

26. इसके और आगे चले तो राजनीतिज्ञों का यह वही समूह है जिनकी गलत नीतियों ने भारत को विश्व के एक सर्वाधिक हिंसक, भ्रष्ट, अकार्यकुशल, तथा दोहरे मुखौटे वाले देश के रूप में बदल दिया।

27. आज राजनीतिज्ञों के इसी समूह द्वारा निर्मित किए गए व पुराने पड़ गए भारतीय राष्ट्रवाद के ढांचे (नवीनीकृत नेहरूवाद, हिन्दुत्व एवं मण्डलवाद) को एवं नवीन वैश्विक प्रकृति वाले राष्ट्रवाद के रूप में परिवर्तित या पुनर्स्थापित करने की आवश्यकता है (अथवा परस्पर निर्भर राष्ट्रवाद या विवेकपूर्ण मानववादी राष्ट्रवाद) जो प्रकृति समर्थक एवं मानव समर्थक दृष्टिकोण अपना कर पाकिस्तान के साथ सहयोग एवं मित्रता की नीति का अनुकरण करें तथा जम्मू-कश्मीर समस्या का एक त्रिपक्षीय हल तलाश करें, तथा इस प्रकार शांति की आधारशिला स्थापित करें, तथा न केवल भारत व पाकिस्तान में बल्कि समूचे दक्षिणी एशिया में प्रजातंत्र एवं टिकाऊ विकास की स्थापना करें। (16-9-96)

(श्रीनगर से प्रकाशित दैनिक 'ग्रेटर कश्मीर' के 18.9.96 के अंक में प्रकाशित)

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर विधान सभा निर्वाचन मतदान एवं गोलियां एक साथ चल रहे हैं

I

1. प्रजातंत्र का विज्ञान यह मानता है कि मतदान एवं गोलियां एक साथ नहीं चल सकती। लेकिन जम्मू-कश्मीर के विधान सभा निर्वाचन के दोनों चरणों में यह देखने को मिलता है कि दोनों (मतदान एवं बन्दूक) एक साथ हाथ में हाथ मिलाए चल रही हैं तथा बन्दूकें इसका नेतृत्व कर रही हैं।

2. घाटी में सम्पूर्ण चुनावी प्रक्रिया प्रारम्भ से अन्त तक बन्दूकों से ही नियंत्रित हो रही है। बन्दूक का डर निर्वाचकों को निर्वाचन की घोषणा के दिन से लेकर मतदान के दिन तक भयभीत करता रहता है। मतदाता को बलपूर्वक मतदान बूथ तक ले जाया जाता है। उसे मतदान के लिए बाध्य किया जाता है। सुरक्षा बल भी मतदान के पर्याप्त प्रतिशत को सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी लेते हैं।

3. कोई उम्मीदवार अपनी उच्च अर्थात् विशेष सुरक्षा वाले निवास स्थान से केवल अपने विशिष्ट सुरक्षा दस्ते की सुरक्षा में ही बाहर आते हैं। वह केवल बुलेट प्रुफ वाहन में ही आता है। बन्दूक की सुरक्षा के बिना उनके लिए अपना नामांकन पत्र भरकर दाखिल करना व नाम वापिस लेना, दोनों ही कार्य असम्भव होते हैं, चुनाव से सम्बन्धित कार्यकलाप करना तथा यहां तक कि शांति से सोना भी असम्भव होता है। उसके जनसम्पर्क अभियान में किसी सार्वजनिक मीटिंग में श्रोतागण की संख्या से सुरक्षाकर्मियों की संख्या ज्यादा होती है।

4. किसी उम्मीदवार के समर्थक व कार्यकर्ता चुनाव प्रचार का कार्य अपने सिर व मुंह ढक कर करते हैं तथा केवल उनकी आंखें ही नकाब में से झांकती है। कार्यकर्ता चुनाव का प्रचार केवल मोटर वाहनों के जुलूसों से ही करते हैं जिनमें साधारण व्यक्तियों की तुलना में बन्दूकधारी ही अधिक होते हैं।

5. निर्वाचन अधिकारी भी सुरक्षा बलों की सुरक्षा के अधीन रहते हैं। मतदान केन्द्रों को भी पूर्णत: सुरक्षा के अधीन रखा जाता है उनकी पूर्ण किलेबन्दी की जाती है।

6. निर्वाचन आयोग, निर्वाचक, उम्मीदवार व उनके कार्यकर्ता एवं समर्थक, निर्वाचन अधिकारी एवं मतदान अधिकारी व स्टाफ सहित, से सम्बन्धित सम्पूर्ण चुनावी प्रक्रिया का प्रबन्ध सुरक्षा बलों की जिम्मेदारी में होता है।

7. विदेशी मीडिया तथा नई दिल्ली से प्रकाशित कुछ पत्रों के अनुसार मतदाताओं का प्रतिशत बहुत कम होता है। लेकिन सरकार ने 50 प्रतिशत मतदान का

दावा किया है। हालांकि वास्तविकता यह है कि घाटी के लोग तो इस समूचे अभियान में सबसे कम रुचि रखते हैं। मतदान कतई उनकी प्रथम प्राथमिकता नहीं है। लेकिन यदि उन्हें मतदान के लिए बाध्य किया जाता है, तो बैलट पेपर को खराब करने के लिए वे एक से अधिक उम्मीदवार के पक्ष में मतदान कर देते हैं। यदि इन विकल्पों का प्रयोग नहीं कर पाते हैं तथा उन्हें वैध तरीके से मतदान करने हेतु मजबूर किया जाता है तो उनकी तीसरी पसन्द है नेशनल कांफ्रेस।

8. नई दिल्ली सरकार समर्थक दलों के उम्मीदवारों तथा उनके समर्थकों को ही अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता उपलब्ध है। इसके विकल्प का या विरोधी दृष्टिकोण जो ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस द्वारा अपनाया गया है, सभी तरीकों से दबा दिया जाता है।

9. ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस तथा घाटी में अन्य छोटे-छोटे राजनैतिक दलों ने निर्वाचन के प्रथम दो चरणों के दौरान सुरक्षा बलों पर मतदाता को भयभीत करने व लुभाने के व्यापक आरोप लगाए हैं। घाटी के लोगों ने प्रत्येक चरण में 2-2 रोज के बन्द देखे हैं तथा निर्वाचन के दिन मतदान का भयंकर एवं व्यापक विरोध भी देखा है। राज्य सरकार के कर्मचारी 38 दिन की आम हड़ताल पर है। चुनावी प्रक्रिया के प्रारम्भ से ही दैनिक मौतों का औसत लगभग 10 प्रतिदिन चल रहा है।

10. इसके बावजूद भी प्रशासन इस बात पर जोर देता है कि निर्वाचन के लिए स्थिति पूर्णत: अनुकूल है क्योंकि लोग बाग वर्तमान में चल रही सैन्य कार्यवाही व आतंकवाद से ऊब चुके हैं तथा राष्ट्र की प्रमुख धारा से जुड़ना चाहते हैं अर्थात् भारत के साथ जुड़ने को तैयार है तथा प्रशासन इस बात का दावा भी करता है कि समस्त प्रतिकूल बातों या अनियमितताओं के बावजूद मतदान का ऊंचा प्रतिशत यह प्रदशित करता है कि चुनावों की प्रकृति स्वतंत्र एवं निष्पक्ष है।

11. जनता की आम धारणा है कि निर्वाचन की सही वास्तविकता या सच्चाई तभी देखी जा सकती है जबकि सरकार सुरक्षा बलों को वापिस लेवे, सरकार-समर्थक आतंकवादियों को हथियार विहीन करे तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 लगाया जाना बन्द किया जावे।

12. हालांकि, सुरक्षा बलों को इस तथ्य के बारे में स्मरण कराने की आवश्यकता है कि मतदान प्रक्रिया में उनका शामिल होना पूर्णत: असंवैधानिक एवं अवैध है तथा राष्ट्रीय हितों के विपरित है।

II

13. सम्पूर्ण चुनावी प्रक्रिया कैसे पूरी होगी। हमें अंतिम उत्तर तो कुछ दिन बाद प्राप्त होगा। लेकिन चुनावी प्रक्रिया के मध्य में भी, जम्मू-कश्मीर निर्वाचन के पक्ष में

बहुत ज्यादा हल्ला करने वाले भी चुनावी अनियमितताओं के गम्भीर आरोप लगा चुके हैं।

14. पेन्थर्स पार्टी के प्रदेश अध्यक्ष श्री भीमसिंह, श्रीनगर में 13 सितम्बर को निर्वाचन आयोग के समक्ष राज्य प्रशासन के पक्षतापूर्ण एवं विभेदात्मक रवैये के खिलाफ धरने पर बैठे तथा पुरजोर शब्दों में कहा कि जम्मू-कश्मीर के निर्वाचन एवं अन्य मामले एक धोखा एवं प्रजातंत्र के नाम पर एक कलंक है। पुन: दिनांक 16 सितम्बर 1996 को, श्री भीमसिंह ने जम्मू क्षेत्र के 6 विधान सभा निर्वाचन क्षेत्रों के 100 मतदान केन्द्रों पर हुए मतदान को निरस्त करने की मांग की।

15. बसपा के प्रदेश अध्यक्ष एवं भद्रवाह निर्वाचन क्षेत्र से उम्मीदवार श्री अब्दुल रहमान ने दिनांक 15 सितम्बर 1996 को प्रेस के सामने दिए गए एक बयान में बताया कि जहां तक सुरक्षा प्रबन्ध एवं मतदाता सूचियों का सम्बन्ध है, जम्मू-कश्मीर का निर्वाचन स्वतंत्र एवं निष्पक्ष नहीं था तथा मात्र धोखा एवं औपचारिकता नजर आता था।

16. नेशनल कांफ्रेंस के प्रवक्ता श्री शैफूद्दीन सोज ने 19 सितम्बर 1996 को आयोजित अपनी प्रेस कांफ्रेंस में बारामूला में सोनावटी निर्वाचन क्षेत्र तथा कूपवाड़ा में कुछ अन्य विधान सभा क्षेत्रों में कुछ गड़बड़ व छल कपट का आरोप लगाया था। उन्होंने साथ ही यह भी कहा कि नेशनल कांफ्रेंस एक ऐसे निर्वाचन में भाग नहीं ले सकती जो निष्पक्ष नहीं हो।

17. दिनांक 16 सितम्बर 1996 को जम्मू-कश्मीर में जनता दल के निर्वाचन प्रभारी श्री मनोज जादव तथा राज्य के जनता दल नेताओं ने व्यापक गड़बड़ी एवं छल कपट का आरोप लगाया विशेषकर नागरोटा एवं पूरी जम्मू में। पेन्थर्स पार्टी के नेता श्री उदयचन्द तथा पीपुल्स वेलफेयर एसोसियेशन के अध्यक्ष सुनील डिम्पर ने भी गड़बड़ी के आरोप लगाए। कांग्रेस (आई) के नेता श्री रणजीतसिंह ने गांधी नगर निर्वाचन क्षेत्र में गड़बड़ी की शिकायत की। सी.पी.एम. ने मढ विधान सभा क्षेत्र तथा भाजपा ने विजापुर क्षेत्र में गड़बड़ी के आरोप लगाए।

18. आशा की जाती है कि निर्वाचन का अंतिम चरण जम्मू-कश्मीर में चल रहे तथाकथित स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव की वास्तविकता या सच्चाई के बारे में कुछ और तथ्य उजागर करेगा।

III

19. क्या चुनावों के बाद की सरकार सही तौर पर काम करेगी? तर्कशास्त्र की यह मान्यता है कि कोई व्यक्ति वही वस्तु काटता है, जो वह बोता है। एक ऐसी सरकार जो जाली एवं कपटपूर्ण निर्वाचन के बाद गठित होती है वह कोई वैध सरकार

नहीं हो सकती, जिसके अपने पृथक नियम होते हैं तथा जो गलत कार्यों में शरीक होती हैं। यद्यपि आने वाली घटनाओं के स्वरूप के बारे में आज कुछ भी कहना सम्भव नहीं है, परन्तु प्रत्येक परिस्थिति संकेतक उस समय की विकास प्रक्रिया की सामान्य प्रवृत्ति के बारे में संकेत अवश्य देते हैं। इस प्रकार जहां तक निर्वाचन के बाद भी सरकार के सम्बन्ध है, नीचे वर्णित 6 बिन्दु हमें उस भावी प्रक्रिया के स्वरूप का कुछ संकेत देते हैं—

20. इन संकेतकों में से एक तो है भारत के गृहमंत्री का हाल ही में दिया गया बयान जो इस प्रकार है—''मंत्री होने का कोई अर्थ या लाभ नहीं है। अपराधी, राजनेता, पुलिसमैन तथा नौकरशाही के बीच जो अपवित्र सम्बन्ध या गठबन्धन है उसे समाप्त करने के लिए हम कुछ नहीं कर सकते। हम मंत्री गण कुल मिला कर जो काम कर सकते हैं वह है कुछ कानून पारित करवा देना जिन्हें कतई लागू नहीं किया जा सकता। मैं देखता हूं कि देश में समस्याओं का कोई अन्त नहीं हैं, क्योंकि समाज के सभी वर्गों में अपराधी मौजूद हैं।'' स्पष्ट है कि आज की परिस्थितियों में एक गृहमंत्री की असमर्थता वास्तव में एक चिन्तनीय विषय है।

21. भारत के राष्ट्रीय मुद्दों या कार्यों की इतनी दयनीय स्थिति का मूल कारण किसमें निहित है? संक्षेप में कहा जाए तो यह कारण भारत की प्रभुत्ववादी व्यवस्था में स्थित है। यह प्रणाली भारतीय राष्ट्र के निर्माण के लिए एक केन्द्रीकृत बहुसंख्यकवादी, राष्ट्रवादी आंतरिक नीति तथा एक अभिमानी व विनम्रताहीन विदेश नीति की पालना करती है (जिसमें पाकिस्तान के साथ शीतयुद्ध तथा छोटे पड़ौसी देशों के साथ बड़े भाई के समान व्यवहार करना निहित है) इस प्रकार के संवैधानिक एवं ढांचागत या व्यवस्थागत दृष्टिकोण ने जिसकी विशिष्टता दो परम्परागत अतार्किक मानदण्ड है (एक है; साध्य साधनों के औचित्य को सिद्ध करता है तथा दूसरा है, जिसकी लाठी उसकी भैंस), ने अपराधीकृत एवं भ्रष्ट राजनीति, राजनैतिक पार्टियां एवं राजनेताओं को जन्म दिया है। करीब करीब ऐसी ही स्थिति भारत के जुड़वां भाई अर्थात् पाकिस्तान की है।

22. यही वह स्वरूप या परिस्थिति है जिसने शक्ति या सत्ता के लिए असीम लालच के लिए एक आम प्रेरणा का सृजन किया है, गलत राष्ट्रीय प्राथमिकताओं पर जोर दिया है तथा करना कुछ व कहना कुछ की दोहरी नीति को विकसित किया है, यही परिस्थिति देश के लिए खतरे या विनाश को उत्पन्न कर रही है। पिछले 5 दशकों के दौरान यह परिस्थिति या स्वरूप इतना मजबूत बन गया है कि स्वयं गृहमंत्री भी कुछ करने में असमर्थ या प्रभावहीन हैं इसके सिवा कि वह स्वयं को इस परिस्थिति के अनुकूल बनाले। एक उच्च कोटि के व्यक्तित्व वाले शेख अब्दुल्ला भी इस प्रभुत्वकारी

प्रणाली और इसकी व्यवहार में लाने वालों के आघात या आक्रमण से जम्मू-कश्मीर की वैध एवं संवैधानिक स्वायत्तता की स्थिति या स्तर की रक्षा करने में पूर्णत: असमर्थ रहे। किसी भी व्यक्ति के लिए इस खाई से घिरी अर्थात् अभेद्य सामाजिक तकनीक पर प्रहार करना या उसे भेद देना बहुत ही मुश्किल है (सिवाय इसके कि एक विवेकपूर्ण आम जनआंदोलन प्रारम्भ किया जाय)। इससे यह जाहिर होता है कि स्वायत्तता का कार्यक्रम या सपना अन्ततोगत्वा एक मृगतृष्णा ही साबित हो सकता है।

23. दूसरा संकेतक सीमा सुरक्षा बल के महानिदेशक द्वारा हाल ही में दिया गया बयान है जिसमें जोर देकर यह बात कही गई है कि विधिवत निर्वाचित सरकार की स्थापना से कश्मीर में सुरक्षा बलों की तैनाती पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। इस कथन से इस बात का संकेत मिलता है कि सुरक्षा बल ही घाटी में कानून व्यवस्था को संचालित करते रहेंगे तथा नागरिक प्रशासन को दूसरे नम्बर पर धकेल देंगे अर्थात् कम महत्व की स्थिति में ला देंगे। इस प्रकार, लोगों को प्रत्येक वैध आंदोलन या कार्यों में परेशान किया जाता रहेगा।

24. तीसरा संकेतक है—सुरक्षा बलों एवं नागरिक प्रशासन द्वारा सरकार समर्थक उग्रवादियों को संरक्षण देना जारी रखना। नेशनल कांफ्रेंस की इस धमकी या चेतावनी के बावजूद भी कि यदि सरकार समर्थक उग्रवादियों को नियंत्रित नहीं किया गया तो उन्हें चुनाव में भाग लेने के अपने निर्णय पर पुनर्विचार करना पड़ेगा तथा निर्वाचन प्रक्रिया के दौरान बंदूकधारियों के प्रयोग पर चुनाव आयोग की चिन्ता के बावजूद भी राज्य सरकार ने इस सम्बन्ध में कुछ नहीं किया। इसका तात्पर्य यह है कि जब तक कानून व्यवस्था को संचालित करने की जिम्मेदारी सुरक्षा बलों के पास जारी रहेगी तब तक सरकार समर्थक उग्रवादी पूर्णत: आजाद एवं अनियंत्रित बने रहेंगे तथा लोगों को जबरन लूटते रहेंगे।

25. चौथा संकेतक है राज्य के तीन भागों में सत्ता का एक समान बंटवारा अर्थात् तीनों की समान भागीदारी। परन्तु किसी ने भी इस व्यवस्था के स्वरूप की रूपरेखा का ब्यौरा तैयार नहीं किया है। लेकिन यदि भूतकाल से ही मार्गदर्शन लिया गया तो यह बात भी एक कोरा वादा या झूठा आश्वासन बन कर रह जाएगी।

26. पांचवां संकेतक यह है कि जबकि समूचा विश्व अपने विवाद के मुद्दों को बातचीत के जरिए हल करने में लगा हुआ है, भारत व पाकिस्तान टकराव या संघर्ष के रास्ते पर जम कर बैठे हुए हैं अर्थात् संघर्ष के लिए अड़े हुए हैं। टकराव की राजनीति ने उनकी अर्थ व्यवस्था के सैन्यकरण को प्रेरित किया है, उनके सीमित वित्तीय साधनों पर बड़ा वजन या भार डाला है तथा इस प्रकार विकास सम्बन्धी उनकी आवश्यकताओं का गला घोंट दिया है। भारत-पाक के बीच का तनाव जम्मू-कश्मीर

की स्थिति को प्रभावित करता रहेगा।

27. छठा संकेतक यह है कि चूंकि नई दिल्ली सरकार ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस तथा आतंकवाद या सैन्यवाद के प्रति अपनी सभी दलों की सहमति पर आधारित एक कठोर कानून व्यवस्था की नीति को बिल्कुल ही शिथिल नहीं करने जा रही हैं, नवनिर्वाचित सरकार इस नीति को क्रियान्वित करने का प्रमुख माध्यम बन जाएगी। स्वाभाविक है कि यह स्थिति राज्य सरकार को तो केन्द्र सरकार के एक आग बुझाने वाले इंजन के रूप में बदल देगी तथा इसकी स्वयं की नीतियों एवं कार्यक्रमों का गला घोंटकर उन्हें नष्ट कर देगी।

28. ऊपर वर्णित सभी संकेतक हमें एक ही उपसंहार या सारांश की ओर ले जाते हैं। वह यह है कि नवनिर्वाचित राज्य सरकार इधर-उधर कोई छोटे मोटे परिवर्तन करने में ही सक्षम रहेगी। परन्तु इस बात की कोई सम्भावना नहीं है कि वह शांति, प्रजातन्त्र, विकास, निर्धनता, बेरोजगारी अन्त-क्षेत्रीय समस्याओं के समाधान, सामान्यतया राज्य में तथा विशेषत: घाटी में सन् 1953 के पूर्व की स्वायत्तता की बहाली के सम्बन्ध में कोई बड़ा या महत्वपूर्ण परिवर्तन कर पाएगी। शुरू शुरू में चाहे वह कैसी ही या कितनी ही चमक प्रदर्शित करे, बाद में जाकर वहीं हां में हां मिलाने वाली परम्परागत शैली अपना लेगी, जो 1947 के बाद राज्य में प्रत्येक सरकार द्वारा अपनाई गई थी।

IV

29. क्या किया जाना चाहिए? केवल मात्र जो एक उचित रास्ता या कदम हो सकता है वह यह है कि नए तौर पर उत्पन्न स्थिति से आगे बढ़ा जाए।

30. आज आम तौर पर समूचे जम्मू-कश्मीर में तथा विशेष तौर पर कश्मीर घाटी में लोगबाग बड़ी मुश्किलों का सामना कर रहे हैं। पिछले सात वर्षों में उनके कष्टों एवं दुखों में बड़ी भारी वृद्धि हुई है।

हत्याएं, झूठी मुठभेड़, मौतें, बलात्कार, मारपीट, धरपकड़, दबाना या दमन करना, निर्धनता, बेरोजगारी, मूल्य वृद्धि, भ्रष्टाचार तथा बढ़ते अपराध आदि बातों ने सामाजिक जीवन को असहनीयत एवं दुष्कर बना दिया है। लोग बाग एक सम्मानजनक शांति की स्थापना के लिए चिन्तित है क्योंकि एक मात्र वही सम्मानजनक सामान्य स्थिति की बहाली कर सकती है। यह एक सर्वाधिक वांछनीय एवं अत्यावश्यक वस्तु है जिसकी उन्हें आवश्यकता है। लेकिन इस परीक्षा एवं कष्ट या दुख की घड़ी में कहीं से भी कोई सहायता या सहानुभूति का शब्द या संकेत प्राप्त नहीं हो रहा है।

31. नई दिल्ली सरकार तो इस स्थिति का ज्यादा से ज्यादा लाभ उठाना चाहती है। यह कश्मीर के लोगों पर अपने ही कार्यक्रम अर्थात् एक थोपे हुए निर्वाचन के

माध्यम से एक अपमानजनक शांति स्थापित करने का भरसक प्रयास कर रही है।

32. नि:सन्देह, प्रजातांत्रिक निर्वाचन की राजनीति, एक उच्च कोटि की अनुकूल या सकारात्मक सामाजिक स्थिति होती है। लेकिन यह तभी कामयाब हो सकती है जबकि यह सभी सम्बन्धित पक्षों के बीच एक राजनैतिक सहमति पर आधारित हो। नई दिल्ली सरकार की चुनाव की राजनीति तो एक दुष्प्रेरित या थोपी हुई कार्यवाही है, जिसका क्रियान्वयन इसके धोखेबाज एवं कपटपूर्ण नियमों के माध्यम से होता है।

33. पुराने समय में जब कि सही व गलत का निर्णय शारीरिक शक्ति प्रदर्शन द्वारा होता था, किसी एक पक्ष की शर्तों पर स्थापित शांति एक उचित कदम माना जाता था। लेकिन आज जब सही या गलत का निर्णय झूठे सच्चे तर्कों द्वारा होता है, इकतरफा शांति को एक पक्षतापूर्ण या गलत कार्य माना जाता है।

34. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि आज की अर्थात् वर्तमान परिस्थिति यह मांग करती है कि कश्मीर के लोगों की नवीन उत्पन्न सामाजिक आवश्यकता की उचित ढंग से पूर्ति की जाए तथा इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए हमें उचित उत्तरदायी कदम की आवश्यकता यह है कि परिवर्तित जनभावना या जनमत के पास शांति स्थापना का एक समुचित कार्यक्रम हो, तो एक तरफ तो लोगों की तात्कालिक सामाजिक, आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करे तथा दूसरी ओर उन्हें अपने मौलिक राजनैतिक लक्ष्य की ओर अग्रसर या गतिमान करे—इस प्रकार लोगों के अल्पकालीक एवं दीर्घकालीन लक्ष्यों या उद्देश्यों को समेकित करें। (20-9-96)

(श्रीनगर से प्रकाशित 'ग्रेटर कश्मीर' दैनिक के 24.9.96 के अंक में प्रकाशित)

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर समस्या सामाजिक यथार्थ, एक शांति की राजनीति की मांग करता है

I

1. राजनीति विज्ञान के अनुसार शांति की राजनीति के सिद्धान्त का तात्पर्य है एक ऐसी राजनीति जिसका क्रियान्वयन शांतिपूर्ण तरीकों से होता है। यह एक ऐसी प्रणाली है जो मतभेद विरोध को भी सहन करने की बात पर आधारित है। यह राजनीति सभी प्रकार के मतभेदों का हल विवेकपूर्ण वाद-विवाद व विचार-विमर्श, संगोष्ठी, या वार्तालाप आदि के माध्यम से निकालती है। राजनीति का संक्षेप में अर्थ है प्रशासन की प्रणाली (अथवा सरकार या सत्ता का स्परूप तथा शांति एव सार्वजनिक एकता या शांतिपूर्ण वातावरण का नाम है जो हिंसक संघर्ष से मुक्त होती है। शांति की राजनीति असली प्रजातंत्र या जनता के शासन की प्रक्रिया का एक अंग होती है।)

2. शांति की राजनीति की स्थिति, बन्दूक की राजनीति (या युद्ध, शीत युद्ध या टकराव की राजनीति) से मूलत: भिन्न होती है। जिसकी विशेषता है किसी भी मतभेद को सहन नहीं कर पाना। यह (बन्दूक की राजनीति) किसी समस्या का हल बाहुबल से खोजना चाहती है जैसे दबाव, शीत युद्ध (या टकराव), संघर्ष, अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग, युद्ध इत्यादि। बन्दूक की राजनीति तो प्रभुत्ववादी शासन की प्रक्रिया (जिसका पुराना स्वरूप है जातिवाद, जनजाति वाद, अधिनायकवादी एकतन्त्र तथा वर्तमान स्वरूप है प्रभुत्ववादी प्रजातन्त्र तथा सेना द्वारा नियन्त्रित प्रजातन्त्र इत्यादि), का एक भाग है जो इस बात में विश्वास करती है कि सभी एक सिद्धान्त या मानदण्ड में विश्वास करें।

3. शांति की राजनीति की आवश्यकता, जम्मू-कश्मीर की वर्तमान सामाजिक वास्तविकता, जो विशेषकर कश्मीर घाटी में स्थित है, से उत्पन्न होती है, जहाँ बन्दूक की राजनीति लोगों को बिना किसी छूट के परेशान कर रही है। बन्दूक की राजनीति ने घाटी में सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया है जहाँ सरकार राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक, सभी तरीकों से जनता को दबाने के लिए हिंसा का माध्यम बन कर कार्य कर रही है—जिसने समूची घाटी को एक नरक में बदल दिया है।

4. बन्दूक की राजनीति जम्मू-कश्मीर में कोई नवीन या हाल ही में उत्पन्न स्थिति नहीं है। इसका प्रादुर्भाव यहां लगभग 50 वर्ष पूर्व, 1947 के बाद की भारत व पाकिस्तान की बन्दूक की राजनीति के द्वारा हुआ था। तभी से, यह कतिपय उतार-चढ़ाव

के साथ बिना किसी छूट या सहानूभुति के लोगों को पीस रही है अर्थात् उनका दमन कर रही है। नई दिल्ली सरकार के प्रत्यक्ष शासन के कारण, नई दिल्ली की सरकार की बन्दूक की राजनीति ही, इस राज्य में ऐसी राजनीति का प्रमुख माध्यम या साधन है। 1947 के बाद नई दिल्ली में गठित सरकार ने अपनी बन्दूक की राजनीति के सिद्धान्तों या आदेशों से पूर्ण समर्थन या अनुरूपता की सदैव मांग की है। जिन्होंने भी इसका विरोध किया उन्हें तत्काल जाना पड़ा है।

5. कश्मीर में व्याप्त आतंकवाद तो नई दिल्ली सरकार की बन्दूक की राजनीति की एक प्रतिक्रिया मात्र है। यद्यपि यह आतंकवाद पाकिस्तान से समर्थित था, परन्तु हकीकत में नई दिल्ली के केन्द्रीकृत बहुसंख्यकवादी राष्ट्रवाद (अर्थात् एक ऐसा राष्ट्र जो सत्ता के केन्द्रीकरण तथा बहुसंख्यक लोगों के हित का पक्षधर हो) के विरुद्ध कश्मीरी लोगों का एक सामान्य घृणा, अरुचि अर्थात् अलगाव की उपज है।

II

6. इतिहास की ओर मुड़कर देखें तो ज्ञात होता है कि बन्दूक की राजनीति सन् 1947 में मात्र भारत व पाकिस्तान दो राष्ट्रों के निर्माण के ठीक बाद एक दम नहीं उत्पन्न हो गई थी। यह तो कांग्रेस (अर्थात् केन्द्रीकृत धर्मनिरपेक्ष लेकिन हकीकत में बहुसंख्यकवादी राष्ट्रवाद) तथा मुस्लिम लीग (अर्थात् भारतीय सर्व मुस्लिमवाद) के बीच की टकराव की राजनीति के कारण उत्पन्न हुई। इस धर्म-आधारित राजनीति ने अपने आप को सामुदायिक हिंसा के रूप में प्रकट या प्रदर्शित किया जिसके परिणामस्वरूप एक लम्बे समय तक मनुष्यों की हत्याएं तथा सम्पत्ति का विनाश होते रहे तथा अन्ततोगत्वा 1947 में भारत का साम्प्रदायिक विभाजन हुआ। 1947 के बाद के वर्षों में पुरानी साम्प्रदायिक राजनीति ने भारत व पाकिस्तान की शीत युद्ध की राजनीति का रूप ले लिया है जिसके बीच दोनों ही देशों का अल्पसंख्यक समुदाय बड़े भारी वजन के नीचे दब कर कराह रहा है।

7. वास्तविकता यह है कि 1947 के बाद की अवधि के दौरान एवं पाकिस्तान के राष्ट्रवाद का तर्क बड़ा अनुचित एवं अविवेकपूर्ण साबित हुआ है। इस्लामाबाद के तर्क का अनौचित्य या अविवेकपूर्ण तो 1971 में सिद्ध हो गया था जब बांगला देश के प्रादुर्भाव ने यह बता दिया था कि इस्लाम पाकिस्तान के एक रहने का कोई अच्छा कारण नहीं था। भारत के धर्म निरपेक्ष तर्क का अनौचित्य 1980 के दशक में साबित हो गया था जब भारत सरकार बावरी मस्जिद एवं स्वर्ण मंदिर से सीधे टकराव की स्थिति में आ गई थी और अब बौद्ध गया मंदिर के साथ टकराव की स्थिति में है, इसी टकराव के बाद अल्पसंख्यकों के उग्रवादी संगठनों को हथियार उठाने पड़े जैसे कश्मीर में कश्मीरियों द्वारा, पंजाब में खालिस्तानियों द्वारा, नागालैण्ड, मिजोरम तथा कुछ अन्य पूर्वी राज्यों में ईसाइयों द्वारा।

8. भारत पाकिस्तान की टकराव की राजनीति ने, अपने युद्धों, व्यापार की समाप्ति तथा सैन्यकरण एवं हथियारों की होड़ पर असहनीय अर्थात् अत्यधिक खर्च जैसे कुप्रभावों के साथ, तथा दोनों देशों के राष्ट्रीय कार्यक्रम एवं प्राथमिकता और विकास की प्रक्रिया को अस्त व्यस्त कर दिया है उनकी निर्धनता, बेरोजगारी महंगाई, निरक्षरता एवं बिमारी आदि समस्याओं को और गहरा कर दिया है तथा जन हितों पर कुठाराघात किया है।

9. यद्यपि, शीतयुद्ध के बाद की अवधि में, समूचे विश्व में, टकराव की राजनीति का स्थान शांति की राजनीति ने ले लिया है, विभिन्न सशस्त्र युद्धों को शांतिपूर्ण वार्ता की प्रक्रिया में परिवर्तित करते हुए परन्तु भारत एवं पाकिस्तान अब भी इस गंदी राजनीति का अनुसरण कर रहे हैं। शीत युद्ध के बाद के काल का प्रादुर्भाव एक परस्पर निर्भर विश्व की सामाजिक आवश्यकताओं के आधार पर हुआ है जिसका स्वयं का विकास या जन्म एक नवीन सामाजिक श्रम विभाजन की मांगों से हुआ है। श्रम विभाजन जो अतंरिक्ष, प्राणीजगत, भौतिक पदार्थ, ऊर्जा, सूचना आदि के नवीन वैज्ञानिक तकनीकी एवं सामाजिक ज्ञान की उपज है।

10. चूंकि 1947 के बाद के भारत पाक टकराव या तनाव का मुख्य मुद्दा जम्मू-कश्मीर की समस्या ही है, अत: इसी राज्य (जम्मू-कश्मीर) के लोगबाग ही इस गंदे खेल के सभी कुप्रभावों से मुख्य रूप से पीड़ित होने वाले हैं।

III

11. स्वाभाविक है पिछले 50 वर्षों से जम्मू-कश्मीर के लोगों के सामने जो एक मात्र प्रश्न है वह यह है कि क्या किया जाना चाहिए? इस प्रश्न ने विभिन्न समयों पर विविध सामाजिक सूत्रों के माध्यम से अपना उत्तर प्राप्त किया जैसे 1947 का भारत पाकिस्तान के बीच का युद्ध विराम समझौता, 1948 से 1950 के बीच में संयुक्त राष्ट्र द्वारा लिए गए निर्णय या प्रस्ताव तथा उठाए गए कदम, 1953 के पूर्व की स्वायत्तता, 1965 का ताशकंद समझौता, 1972 का शिमला समझौता, 1975 का इन्दिरा-शेख समझौता तथा 1992 के बाद के भारत-पाक वार्ताओं के विभिन्न दौर इत्यादि। लेकिन इनमें से कोई भी सूत्र या फार्मूला प्रारम्भिक और सफल नहीं रहा। और हम लोग पुन: एक चौराहे पर पहुंच गए हैं।

12. जहां तक अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य का प्रश्न है, इस मोर्चे पर पूर्णत: चुप्पी दिखाई देती है। जम्मू-कश्मीर समस्या को पृथ्वी पर वर्तमान मे विद्यमान शीत-युद्ध का सर्वाधिक गम्भीर कारण या केन्द्र मानने के बिन्दु पर सहमति होने के बावजूद भी, विश्व के विभिन्न संगठनों अथवा पाकिस्तान के अलावा अन्य देशों में कोई भी जम्मू-कश्मीर समस्या पर कोई कदम उठाने की मंशा नहीं रखता, यह स्पष्टत: दिखाई देता है।

13. जहां तक भारतीय परिप्रेक्ष्य का प्रश्न है, भाजपा के अनुच्छेद 370 को समाप्त करने के उपाय से लेकर आजादी में कमी करने के धर्मनिरपेक्षवादियों के तरीके तक सभी राष्ट्रभक्ति के सिद्धान्त, इस आधारभूत राष्ट्रवादी विचार पर पूर्णत: एकमत हैं कि पाकिस्तान भारत का प्रमुख शत्रु है तथा इसे हर तरीके से पराजित किया जाना चाहिए, मुख्यत: कश्मीर के लोगों को येनकेन प्रकारेण अपने हक में करके और इस प्रकार पाकिस्तान द्वारा शांतिपूर्वक पृथक हो जाने के हालात पैदा करके।

14. भारत में जो प्रजातांत्रिक तत्व या विचारक हैं, वे समझौता वार्ताओं के आयोजन द्वारा भारत-पाक मैत्री एवं सहयोग स्थापित करने की आवश्यकता पर बल देने के सकारात्मक सोच के बावजूद जम्मू-कश्मीर समस्या के केन्द्र बिन्दु या अहम मुद्दे पर ध्यान नहीं देते हैं तथा इस बिन्दु को अपनी कार्यसूची में सबसे अन्त में रखते हैं—इस प्रकार समझौते वाली स्थिति को एक संकीर्ण राष्ट्रभक्ति की विचारधारा के नजदीक ले जाते हैं।

15. जहां तक पाकिस्तान के परिप्रेक्ष्य का प्रश्न है, वहां पर पाकिस्तानी पीपुल्स पार्टी के उदारवादी सिद्धान्त से लेकर जमात-ए-इस्लामी के उग्रवादी सिद्धान्त तक, पाकिस्तान के विविध राष्ट्रीय संगठनों में एक बात पर आम सहमति है कि अपने प्रमुख शत्रु भारत को पराजित कर हर कीमत पर जम्मू कश्मीर राज्य का आधिपत्य हासिल किया जावे तथा ऐसा किए बिना पाकिस्तान शांति से नहीं रह सकता तथा न कोई प्रगति कर सकता। पाकिस्तान के प्रजातन्त्रवादी भी भारत के प्रजातंत्रवादियों के समान ही विचारधारा रखते हैं (अर्थात् भारत पाक सहयोग की तो बात करते हैं परन्तु समस्या के मूल बिन्दु पर ध्यान नहीं देते)।

16. जहां तक जम्मू-कश्मीर के परिप्रेक्ष्य का प्रश्न है वहां भाजपा के भारत के साथ संयुक्तीकरण के सिद्धान्त से लेकर नेशनल कांफ्रेंस के अधिकतम स्वायत्तता के सिद्धान्त तक विविध राष्ट्रवादी विचारधाराएं पाक विरोधी मंच पर आकर एकमत हो जाती है।

17. ऊपर वर्णित उग्र एवं झनझनाते सिद्धान्तों के अस्तित्व मे रहने के बावजूद भी, भारत पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर में सकारात्मक सोच वाली ऐसी ताकतें या शक्तियां हैं जो जम्मू-कश्मीर समस्या के एक प्रजातांत्रिक हल की पक्षधर होने के साथ, अलग अलग मोर्चों पर कार्य करना जारी रखे हुए हैं। इससे इस बात की आवश्यकता उत्पन्न होती है कि इन सब शक्तियों के लिए सामान्य या सामूहिक मंच की स्थापना की जावे।

IV

18. ऊपर वर्णित तथ्य यह मांग करते हैं अर्थात् यह प्रकट करते हैं कि भारत-पाक टकराव के बादलों के घुटते हुए तूफान के बीच तथा सकारात्मक ताकतों

की संगठनात्मक कमजोरी के रहते, जम्मू-कश्मीर मुद्दे को सही दिशा देने की जिम्मेदारी या उत्तरदायितत्व, जम्मू-कश्मीर के प्रजातांत्रिक संगठनों पर आता है, जिनको विचारधारा एवं कार्यक्रम का एक सही स्वरूप तैयार करके सही एवं सकारात्मक संगठनों एवं ताकतों में एकता स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए; न केवल जम्मू-कश्मीर राज्य में बल्कि भारत, पाकिस्तान व समूचे दक्षिण एशिया में।

19. ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस (शाबिर शाह सहित) ने, भारत व पाकिस्तान से जम्मू-कश्मीर समस्या को एक शांतिपूर्ण तरीके से त्रिपक्षीय आधार पर हल करने की मांग करके एक बड़ा सकारात्मक कदम उठाया है। अब भी इसे कई अन्य रणनीतिगत मुद्दों को हल करना है।

V

20. समस्त प्रजातांत्रिक आंदोलनों का अन्तर्राष्ट्रीय अनुभव यह बताता है कि सभी आधारभूत बिन्दुओं पर स्पष्ट धारणा या विचारधारा रखते हुए, एक सही दिशा में उठाए गए कदम अर्थात् किए गए कार्य को ही अन्ततोगत्वा सफलता मिलती है। एक गलत भ्रमित एवं अस्पष्ट कदम जो गलत सिद्धान्त एवं मापदण्ड प्रदान करता है, हमेशा असफलता को प्राप्त होता है।

21. जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में भी सही कदम आवश्यक तौर पर जम्मू-कश्मीर की समस्या के विविध दायरों अर्थात् विविध रूपों के सही एवं वास्तविक अध्ययन से प्रारम्भ होना चाहिए।

22. जहां तक जम्मू-कश्मीर समस्या के मूल या आधारभूत स्वरूप का प्रश्न है, संयुक्त राष्ट्र तथा भारत एवं पाकिस्तान सहित दुनिया के समस्त देश यह स्वीकार करते हैं कि वैधानिक तौर पर यह भारत एवं पाकिस्तान के बीच एक द्विपक्षीय विवाद है जिसे जम्मू-कश्मीर के लोगों की भागीदारी से सुलझाया जा सकता है। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की वास्तविक नीति, चातुर्य एवं व्यवहारिकता के अर्थों में इसे एक त्रिपक्षीय मुद्दा मानता है और यही जम्मू-कश्मीर समस्या का आधारभूत तथ्य है।

23. संयुक्त राष्ट्र और विश्व के अन्य किसी भी देश ने किसी भी समय या स्थान पर जम्मू-कश्मीर की समस्या के साथ जम्मू-कश्मीर या कश्मीर के लोगों के आत्म निर्णय के अधिकार के शामिल होने के विचार का समर्थन नहीं किया है।

24. एक समय (1948 से 50 के बीच) यह सुझाव दिया था कि दोनों विकल्पों के सम्बन्ध में जम्मू-कश्मीर के लोगों की राय को सुनिश्चित करने का एक तरीका जनमत सग्रंह हो सकता है। अर्थात् यह सुनिश्चित करने के लिए आया कि वे भारत के साथ मिलना चाहते हैं अथवा पाकिस्तान के साथ। संयुक्त राष्ट्र संघ और भारत व पाकिस्तान सहित अन्य किसी भी देश ने पिछले 49 वर्षों के दौरान, इस मुद्दे

पर किसी भी तीसरे विकल्प को स्वीकृति प्रदान नहीं की है। हालांकि पूरे विश्व समुदाय ने हमेशा यह विचारधारा अपनाई है कि भारत एवं पाकिस्तान, को जम्मू-कश्मीर के बारे में ऐसा कोई भी समझौता करने का हक है जो परस्पर दोनों को स्वीकार्य हो। आज भी न तो भारत और न पाकिस्तान, किसी तीसरे विकल्प पर सहमत होते हैं। जनमत संग्रह की प्रणाली को भारत तो पूर्णत: अस्वीकार करता है। जबकि पाकिस्तान आज भी इसे केवल दो विकल्पों के साथ स्वीकार करता है। लगभग एक वर्ष पूर्व, पाकिस्तान की प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो स्वयं ने यह कहा है कि जम्मू-कश्मीर के लोगों को कोई तीसरा विकल्प देने का अर्थ है इस प्रदेश को भारत को सौंप देना।

25. आत्म निर्णय, जनमत संग्रह एवं त्रिपक्षीयवाद—इन तीनों का एक समान अर्थ नहीं होता है। तीनों में ही भिन्न प्रकार के सिद्धान्त अन्तर्विष्ट है। संक्षेप में कहा जाय तो आत्म निर्णय का अधिकार तो एक राष्ट्र, राष्ट्रीयता या समुदाय की विशेषता रखने वाले लोगों का अपना भविष्य निर्धारित करने का एक स्वाभाविक या अन्तर्निहित अधिकार है। इस विशेषता वाले लोग (जम्मू-कश्मीर वासी) अपने आप को एक राज्य के रूप में संगठित तो नहीं कर पाए हैं परन्तु ऐसा करने के लिए उनकी तीव्र आकांक्षा है।

26. जनमत संग्रह और त्रिपक्षीयवाद स्वाभाविक या अन्तर्निहित अधिकार नहीं है। जनमत संग्रह तो एक देश के लोगों को संविधान या कानून द्वारा स्वीकृत एक प्रत्यक्ष मताधिकार है जो जनमत संग्रह कराने वाली सत्ता के द्वारा उन्हें दिए किसी विकल्प के पक्ष या विपक्ष में प्रस्तुत किया जाता है। जब संयुक्त राष्ट्र, सम्बन्धित पक्षों की सहमति से किन्हीं लोगों को जनमत संग्रह का अधिकार देता है, जो इसका अर्थ यह नहीं है कि वह आत्मनिर्णय के अधिकार में बदल जाए ऐसे मामले में भी लोगों को मताधिकार तो होता है, लेकिन संदर्भित विकल्प के बारे में अंतिम निर्णय लेने का अधिकार जनमत-संग्रह कराने वाली सत्ता का होता है।

27. त्रिपक्षवाद का केवल एक ही अर्थ है कि तीन पक्ष का होना। इसको जम्मू-कश्मीर के मुद्दे पर लागू किया जाये तो, इसका तात्पर्य यह होता है कि इस समस्या में भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के लोग, तीनों का समावेश या सरोकार है। किसी राजनैतिक विवाद में, सभी सम्बन्धित पक्षों को सामान्यत: एक समान माना जाता है तथा किसी को भी कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होता है।

28. इस प्रकार स्पष्ट है कि आत्म-निर्णय का बिन्दु कोई विवाद नहीं है लेकिन किसी राज्य विशेष के लोगों का अपना भविष्य निर्धारित करने तथा अपना स्वयं का राज्य कायम रखने का एक स्वाभाविक या अन्तर्निहित अधिकार है। जनमत-संग्रह तो सिर्फ एक प्राप्त किया गया मताधिकार है जिसका प्रयोग जनमत-संग्रह कराने वाली

सरकार द्वारा निर्धारित किसी मुद्दे के सम्बन्ध में, उसके पक्ष या विपक्ष में प्रयुक्त किया जाता है, तथा त्रिपक्षवाद एक ऐसे मुद्दे की ओर संकेत करता है जिसके तीन समान पक्ष होते हैं तथा किसी भी एक पक्ष को कोई विशेष अधिकार नहीं होता है।

VI

29. जब जम्मू-कश्मीर की समस्या के विभिन्न दायरों एवं स्वरूपों पर आते हैं, तो तथ्य निम्नांकित चित्र हमारे समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

30. जहां तक विश्व में स्थित आधारभूत वास्तविकता या सच्चाई का प्रश्न है, ऐसी कोई संभावना नहीं है कि जम्मू-कश्मीर की समस्या पर तत्काल कोई नया कदम उठाया जाए, ऐसा तभी संभव है जबकि या तो राज्य के सभी क्षेत्रों को सम्मिलित करते हुए कोई राज्यव्यापी शांतिपूर्ण प्रजातान्त्रिक आन्दोलन या निकट भविष्य का कोई भारत-पाक संघर्ष विश्व समुदाय को सक्रिय होने के लिए मजबूर करे।

31. जहाँ तक उपमहाद्वीपीय आधारभूत वास्तविकता या सच्चाई का प्रश्न है भारत और पाकिस्तान दोनों ही, जो शीत-युद्ध की स्थिति से अन्धे हो रहे है, जो शीत युद्धेत्तर काल में भी लम्बी अवधि के शीतयुद्ध के घातक परिणामों से बेखबर है तथा सार्क समुदायों में इन दो देशों के एक समान भविष्य के बारे में लापरवाह हैं, वे अभी जम्मू-कश्मीर के ऊपर उनकी स्थाई तनाव की स्थिति को तोड़ने के लिए कोई नया कदम उठाने में असमर्थ या अयोग्य है।

32. जहाँ तक जम्मू-कश्मीर की आधारभूत वास्तविकता या सच्चाई का प्रश्न है, जम्मू-कश्मीर राज्य तो एक अनेकता वाली इकाई है जिसका गठन विविध भांति की विचारधाराओं एवं आकांक्षाओं वाले 8 जातिगत क्षेत्रीय इकाइयों से मिलकर हुआ है तथा वहां एक ऐसे राज्यव्यापी या राज्य स्तरीय प्रजातान्त्रिक संगठन की कमी है जो इन सभी क्षेत्रीय इकाइयों का प्रतिनिधित्व करता हो।

33. जम्मू-कश्मीर समस्या के ऊपर वर्णित स्वरूप एवं इसके विभिन्न दायरों को लेकर आगे बढें तो यह आवश्यक है कि एक सही कदम या सही विचारधारा, निम्नाकिंत बिन्दुओं पर यथार्थवादी या वास्तविकता आधारित दृष्टिकोण अपनाए अर्थात् इन बिन्दुओं की वास्तविकता की धारणा को अवधारित करें।

(क) लक्ष्य

34. जहां तक लक्ष्य का प्रश्न है, यह जम्मू-कश्मीर समस्या के मूलभूत स्वरूप या गुण के अनुरूप होना चाहिए और इसका मूल स्वरूप है इसका त्रिपक्षीय होना। इसे और अधिक स्पष्ट या विशिष्ट बनाने के लिए, लक्ष्य में दो भाग समाविष्ट हो सकते है—एक दीर्घकालीन और दूसरा अल्पकालीन।

35. त्रिपक्षीय सिद्धान्त के अनुभव एक विवेकपूर्ण एवं सम्भव होने योग्य

दीर्घकालीन लक्ष्य, तो वह होना चाहिए जो तीनों सम्बधित पक्षों के हितों से मेल खाता हो, तथा जो प्रत्येक पक्ष को यह सन्तुष्टि दे सके कि उनकी आकांक्षाओं एवं हितों की हर सम्भव सीमा में रक्षा की गई है।

36. भारत एवं पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों को, जम्मू-कश्मीर राज्य पर भारत-पाक की एक संयुक्त सत्ता स्थापित करके संतुलित किया जाना चाहिए।

37. एक तरफ भारत व पाकिस्तान की संयुक्त सरकार को जम्मू-कश्मीर की रक्षा, विदेशी मामले तथा मुद्रा के विषय सौंपकर तथा दूसरी ओर अन्य समस्त मामले जम्मू-कश्मीर के क्षेत्राधिकार में दिए जाकर अर्थात् उसे एक अर्ध-स्वतंत्र स्तर प्रदान किया जाकर, एक तरफ तो भारत व पाकिस्तान के हितों तथा दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों को संतुलित किया जा सकता है।

38. जम्मू-कश्मीर राज्य के लिए एक संघीय संविधान अपना कर इसकी विविध जातीय एवं क्षेत्रीय इकाइयों के हितों की पूर्ति की जानी चाहिए, एक ऐसा संविधान जो प्रत्येक जातीय क्षेत्र को सर्वाधिक सम्भव स्वायत्तता प्रदान करें तथा इसमें ऐसा भी प्रावधान हो जिसके अन्तर्गत जिला खण्ड एवं ग्राम स्तरीय परिषदों को भी और अधिक अधिकार अभिहस्तान्तरित किए जा सके।

39. जम्मू-कश्मीर राज्य की एक संघीय विशेषता को एक सामान्य राज्याध्यक्ष, एक उच्च न्यायालय, एक निर्वाचन आयोग, एक पर्यावरण आयोग तथा एक मानवाधिकार आयोग की स्थापना करके कायम रखा जा सकता है—जिन सभी की नियुक्ति जातीय-क्षेत्रीय परिषदों द्वारा की जाए तथा जिनमें प्रत्येक क्षेत्र का एक प्रतिनिधि हो।

40. स्वतंत्र रहने, किसी एक देश के साथ मिल जाने अथवा दो देशों के वास्तविक नियंत्रण के आधार पर राज्य के विभाजन के जो विकल्प हैं वे जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय स्वरूप से मेल नहीं खाते।

41. एक विवेकपूर्ण अल्पकालीन लक्ष्य यह होना चाहिए कि भारत व पाकिस्तान के बीच चौथे युद्ध को टाला जावे तथा राज्य के विभिन्न जातीय समूहों के बीच जम्मू-कश्मीर प्रदेश की अपनी संरचना व संगठन के बारे में एक आम सहमति स्थापित की जावे।

(ख) मार्ग

42. दोनों ही प्रकार के लक्ष्यों (दीर्घकालीन एवं अल्पकालीन) के अनुरूप, यह आवश्यक है कि सभी परिस्थितियों के अधीन जम्मू-कश्मीर की समस्या सुलझाने के लिए एक शांतिपूर्ण मार्ग अपनाया जावे।

(ग) व्यूह रचना या कार्यविधि

43. लक्ष्य और लक्ष्य तक पंहुचने के मार्ग के अनुसार, इस व्यूह रचना में निम्नांकित सिद्धान्तों को शामिल करना आवश्यक हैं। वे सभी लोग जो इसके कार्यक्रम से सहमत होते हैं, राजनैतिक शक्ति की संरचना करते हैं। विभिन्न जातिगत एवं क्षेत्रीय समूह आधारभूत शक्तियों का निर्माण करते हैं। भारत एवं पाकिस्तान की वे प्रजातांत्रिक ताकतें जो त्रिपक्षीय विकल्प की पक्षधर हैं, वे इसके प्रबल समर्थक समूह का निर्माण करती है तथा शांति से प्रेम रखने वाली अन्तर्राष्ट्रीय ताकतों में भी, जो जम्मू-कश्मीर समस्या का एक शांतिपूर्ण हल चाहते हैं, इससे सहानूभूति रखने वाले लोग ही शामिल हैं। उन सब लोगों में जो जम्मू-कश्मीर की समस्या को एक सैनिक मुद्दा मानते हैं तथा इसके सैनिक हल का विकल्प देते हैं, निर्दोष लोगों की हत्याएं करते हैं, जनता पर अत्याचार या जुल्म ढाते हैं तथा मावनाधिकारों का हनन करते हैं, उनमें वे लोग शामिल हैं जो जम्मू-कश्मीर के शत्रु या विरोधी हैं।

(घ) संगठन

44. इसके लक्ष्य, मार्ग एवं व्यूह रचना के अनुरूप ही, यह आवश्यक है कि एक संघीय प्रकार का बड़ा संगठन हो, अथवा राज्य स्तर का एक मोर्चा हो जिसकी इकाइयां प्रत्येक जातीय क्षेत्र में हो—क्षेत्रीय स्तर से ग्राम स्तर तक।

45. वर्तमान समय में, जम्मू-कश्मीर की समस्या के शांतिपूर्ण हल के लिए चल रहा प्रजातांत्रिक आंदोलन, जो इसके स्वरूप के अनुसार वाछंनीय है, सही ढंग से संगठित एवं संचालित नहीं है। आज घाटी में प्रजातांत्रिक आंदोलन को जिसे भरपूर जन समर्थन प्राप्त है, बाहर की बजाय अन्दर ही अन्दर अधिक चुनौतियां एवं सकटों का सामना करना पड़ रहा है। घाटी में चल रहे प्रजातांत्रिक आंदोलन में लोगों की भागीदारी नहीं होने के परिणाम स्वरूप आम जनता में एक भ्रांति या भ्रम उत्पन्न हुआ है जिससे विभिन्न प्रकार के समाज विरोधी तत्वों को एक उपजाऊ धरती मिली है अर्थात् उन्हें पनपने के लिए अनुकूल परिस्थितियां मिली हैं। एक समान या सामान्य कार्यक्रम के आधार पर गठित राज्य स्तरीय संगठन का अभाव आज के प्रजातांत्रिक आंदोलन की प्रमुख कमजोरी है जिसने घाटी में भी प्रजातांत्रिक आंदोलन को प्रभावित किया है।

(ड़) एक शांतिपूर्ण राजनैतिक प्रक्रिया

46. इसके आधारभूत सिद्धान्तों जैसे लक्ष्य, मार्ग, व्यूह रचना तथा संगठन का अनुगमन करते हुए, यह आवश्यक है कि एक शांतिपूर्ण राजनैतिक प्रक्रिया की शुरूआत की जाए जो समस्त लोगों को अपने दायरे में समेट सके।

47. राजनैतिक सतह पर, इसे (सही दिशा में उठाए कदम को) लोगों को इसकी कार्यसूची के आधार पर प्रेरित करना होगा ताकि भारत पाकिस्तान व समूचे विश्व के अच्छे एवं निष्पक्ष विचारों वाले लोगों का समर्थन सुनिश्चित किया जा सके, तथा मानव अधिकारों की रक्षा की जा सके तथा इस कार्यक्रम के एक महत्वपूर्ण भाग के रूप में सामाजिक सुरक्षा को सुनिश्चित कर सके।

48. आर्थिक क्षेत्र में, इसे लोगों को अपनी दिन प्रतिदिन की मांगों की पूर्ति के लिए सक्रिय बनाना चाहिए।

49. संस्कृति के क्षेत्र में, विभिन्न प्रकार की मानव-संस्कृति का स्वागत व विकास करते हुए इसे प्रत्येक जातीय संस्कृति की एक विवेकपूर्ण आधार पर तरक्की का समर्थन एवं प्रबन्धन करना चाहिए।

(च) सैन्यकरण एवं उग्रवाद के प्रश्न पर

50. युद्ध विराम के समझौते पर पहुंचने के लिए नई दिल्ली सरकार द्वारा उग्रवादियों के साथ एक बिना शर्त वार्ता की शुरूआत करने की मांग करना अति आवश्यक है तथा इसके पहले सुरक्षा बलों को बैरकों में भेजना, सशस्त्र बल विशेष अधिनियम की समाप्ति तथा बिना किसी ठोस आरोप के बन्दी बनाए गए लोगों की रिहाई करने की मांग करना भी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त इस बात की मांग करना भी आवश्यक है कि नई दिल्ली सरकार उग्रवादियों साथ वार्ता के साथ ही साथ जम्मू-कश्मीर समस्या पर त्रिपक्षीय वार्ता प्रारम्भ करने के लिए भी आवश्यक कदम उठाए।

VIII

51. भारत और पाकिस्तान में तेजी से होने वाले ह्रास या अवनति की स्थिति में आज जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय हल में ही, जम्मू कश्मीर, भारत पाकिस्तान व दक्षिण एशिया के अन्य देशों में शांति, प्रजातंत्र तथा प्रगति की सामान्य प्रक्रिया की शुरूआत करने की चाबी निहित है अर्थात् यह सब कार्य त्रिपक्षीय हल से ही सम्भव है, क्योंकि यह ऐसे हालात पैदा करेगा जिससे क्षेत्रीय तनाव समाप्त होगा, हथियारों की होड़ समाप्त होगी, प्रजातांत्रिक संस्थाएं मजबूत या सशक्त बनेगी, आर्थिक विकास को गति व पोषण मिलेगा, पर्यावरण का सुधार होगा तथा भ्रष्टाचार, तस्करी, साम्प्रदायिकता, अपराध व हिंसा आदि में कमी या गिरावट आएगी। (26.9.96)

श्रीनगर से प्रकाशित दैनिक 'ग्रेटर कश्मीर' के 4.10.96 के अंक में प्रकाशित)

❋ ❋ ❋

ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस को आई.डी.पी. द्वारा विचार-विमर्श के लिए दिया गया द्वितीय आलेख

I

1. जम्मू कश्मीर में लोकसभा चुनाव के बाद के हालात ने इसके पीड़ित एवं दुखी लोगों को कोई तात्कालिक सहायता प्रदान नहीं की है। जहां पूरे प्रदेश के लोगों के दुख, कष्ट एवं कठिनाइयां बढ़ी है, कश्मीरी लोगों के दुखों की तो कोई सीमा ही नहीं है। तथाकथित शांतिपूर्ण निर्वाचन के बाद घाटी में हत्याओं, हिरासत में हुई मौतों, बलात्कार, आगजनी, मारपीट, बन्दी बनाने व जलील करने की घटनाओं की दर दुगुनी हो गई है। कश्मीर के जलने एवं कश्मीर वासियों का खून बहने का आकार दुगुना हो गया है।

2. सरकार, ऐसी स्थिति पैदा होने का दोष पाक समर्थित उग्रवाद पर डालती है। लेकिन केन्द्र सरकार के नवनियुक्त गृह राज्य मंत्री ने केवल एक सप्ताह पूर्व ही, इसके लिए सरकार समर्थित उग्रवादियों को जिम्मेदार ठहराया है, जिन्होंने उनके विचार से लोगों के जीवन को बहुत ज्यादा दुखमय बना दिया है।

3. चुनावों के पहले का यह सरकारी दावा कि जब कश्मीर घाटी एक बार चुनावी प्रक्रिया से गुजर जाएगी, तो अशांत क्षितिज पर शांति के सूर्य का उदय हो जाएगा तथा सभी प्रकार की मुश्किलें दूर हो जाएगी, अपने आप में असफल हो गया है।

4. यह सही है कि आज के हमारे समय में चुनाव क्लिष्ट या उलझी हुई समस्याओं अथवा विवादों को हल करने का सर्वाधिक एवं प्रभावी तरीका है। लेकिन यह (चुनाव) एक ऐसा खेल है जिसे सही ढंग से तभी खेला जा सकता है जबकि खिलाड़ियों के बीच खेल के नियमों के बारे में आम सहमति हो। शासक वर्ग या सत्ता की ओर से शासित वर्ग पर, ताकत के जरिए थोपा गया चुनाव तो तानाशाही के समान है, न कि कमजोर पक्ष की ओर से स्वतंत्र एवं निष्पक्ष अभिव्यक्ति का परिचायक। केवल एक दल या एक पक्ष की शर्तों या नियमों के आधार पर कराया गया चुनाव तो मात्र एक औपचारिकता है।

5. भारत के राजनैतिक एवं मीडिया दिग्गजों की यह विचारधारा कि कश्मीर घाटी और उससे जुड़े हुए डोडा जिले में, जिन्होंने 4 सीटें कांग्रेस (आई) को व एक एक सीट जनता दल व भाजपा को दी है; केवल मात्र बल प्रयोग या उत्पीड़न के आधार पर 40 प्रतिशत मतदान नहीं कराया जा सकता—केवल पूर्वाग्रह वाला एवं एकपक्षीय राष्ट्रीय परिदृश्य को ही प्रदर्शित करती है। क्योंकि यह विचारधारा जम्मू-कश्मीर में निर्वाचन के पिछले अनुभव की अनदेखी करती है, जहां कि लगभग

8 दिखावटी निर्वाचन का आयोजन करीब 60 प्रतिशत मतदान के साथ किया गया। इसी प्रकार की जोड़तोड़ वाली चुनावी प्रक्रिया विश्व के अन्य भागों में भी अपनाई गई (उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका के अधीन रहे दक्षिणी वियतनाम में)।

6. पहले, भारतीय राजनैतिक या मीडिया के बड़े विचारकों ने जम्मू-कश्मीर में लोकसभा निर्वाचन के संदेहजनक या शंकाप्रद स्वरूप की अनदेखी की थी, जैसा कि आरोप नेशनल कांफ्रेस, पैंथर्स पार्टी, जनता दल, भाजपा आदि के नेताओं तथा असंख्य अन्य सम्बन्धित लोगों द्वारा लगाया गया था। लेकिन अब जबकि केन्द्रीय गृह मंत्री ने भी इन चुनावों की संदेहास्पद प्रवृत्ति को स्वीकार कर लिया है, इनके सही एवं निष्पक्ष होने से सम्बन्धित सभी सिद्धान्त अमान्य ठहरते हैं।

7. सामान्य बुद्धि या विवेक यह कहता है कि हाल ही में सम्पन्न हुए लोकसभा चुनावों में कश्मीर वासियों की भागीदारी पर विचार करते समय, एक आवश्यक एवं उचित प्रश्न जो वास्तविकता को देखने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है, वह यह था कि ऐसे क्या नए तथ्य प्रकट हुए जो कश्मीर वासियों के अलगाव को समाप्त कर सकते तथा उन्हें स्थापना या सुदृढ़ीकरण की पक्षधर पार्टियों के पक्ष में, विशेषकर भाजपा के पक्ष में, मतदान करने को प्रेरित कर सकते?

8. यदि नाटकीय ढंग से संचालित किए गए निर्वाचन ही स्थाई हल होते तो जम्मू कश्मीर समस्या का समाधान हो जाता। लेकिन भारत के प्रमुख राजनीतिज्ञों एवं उच्च स्तर के लेखकों एवं विचारकों ने हमेशा ही राष्ट्रीय एकता के नाम पर इस ऐतिहासिक तथ्य या सच्चाई की अनदेखी की है, राष्ट्रीय एकता जिसकी रक्षा उनके विचार से केवल भारत के पक्ष में मतदान से ही की जा सकती है, वह चाहे वैध माध्यमों से हो या अवैध माध्यमों से। तथा केवल इस राष्ट्रवाद के मिथ्या विचार के घेरे के अन्तर्गत ही यह हुआ कि जम्मू-कश्मीर में विधान सभा चुनावों की घोषणा कर दी गई है।

9. यह जरूरी है कि आज विश्व का प्रत्येक देश अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने की ही बात सोचता है। लेकिन अनुभव यह बताता है कि किसी देश के हितों की पूर्ति सत्य, न्याय एवं निष्पक्षता की रक्षा करके ही की जा सकती है। समूचे इतिहास के परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि झूठ एवं चालबाजी या फरेब ने सदैव ही सामाजिक समुदायों को हानि पहुंचाई है।

II

10. जम्मू-कश्मीर की समस्या, जो 1947 के विभाजन की दुखान्तिका से उत्पन्न हुई है तथा जो दोनों ही देशों, भारत व पाकिस्तान से विभिन्न रूपों में एक ऊंची कीमत वसूल कर रही है (जैसे 5 दशाब्दी लम्बा शीत युद्ध, 3 सशस्त्र युद्ध, सैन्यीकरण, आपसी व्यापार के बन्द होने से होने वाला नुकसान, आर्थिक विकास के लिए साधनों

की कमी, इत्यादि) तथा जो कश्मीर के लोगों पर भी एक भारी बोझ डाल रही है, इस समस्या ने अब तक के सभी समाधानों को नकार दिया है। इसका प्रमुख कारण है इसके मौलिक स्वरूप व आधारभूत वास्तविकता की अवमानना करना।

11. जम्मू-कश्मीर समस्या का मौलिक स्वरूप, जैसा कि संयुक्त राष्ट्र एवं भारत व पाकिस्तान सहित सभी देशों ने स्वीकार किया है, वह यह है कि यह समस्या भारत एवं पाकिस्तान के बीच एक द्विपक्षीय विवाद है जिसका हल किया जाना है तथा किया जा सकता है—केवल मात्र जम्मू-कश्मीर के लोगों की भागीदारी से। कहने का तात्पर्य है कि यह एक त्रिपक्षीय विवाद या मुद्दा है।

12. जहां तक विश्व स्तरीय आधारभूत वास्तविकता या सच्चाई का प्रश्न है, जबकि विकास की अन्तर्राष्ट्रीय प्रक्रिया को पूरे विश्व में फैले विवाद व तनाव के बिन्दुओं को समाप्त करते हुए एक वास्तविक शांति की आवश्यकता है, संयुक्त राष्ट्र संघ इतना कमजोर है कि वह इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकता तथा शक्तिशाली राष्ट्र केवल मात्र अपने हितों की पूर्ति करने में इतने तल्लीन या व्यस्त हैं कि वे अपने व्यक्तिगत लाभ की पूर्ति के अलावा सही या गलत में कोई भेद नहीं करते। विकासशील देश अपनी सीमाओं से परे कोई भी कदम उठाने का भार वहन नहीं कर सकते।

13. जहां तक उपमहाद्वीपीय वास्तविकता या सच्चाई का प्रश्न है, दोनों ही भारत व पाकिस्तान जो 1947 की अपनी घटनाओं व विचारधाराओं से बाधित है, अपने देशों के सामान्य या एक समान तथा शीत युद्धोत्तर काल में भी युद्ध के अस्थिरता लाने वाले परिणामों को देख सकने में असफल हो रहे हैं।

14. जहां तक जम्मू-कश्मीर की वास्तविकता या सच्चाई का प्रश्न है, इसकी दो विशेषताएं पूर्णत: स्पष्ट है।

प्रथत तो यह है कि जम्मू-कश्मीर एक बहुल इकाई है, जिसमें विविध प्रकार की विचारधाओं एवं आकांक्षाओं वाली 8 जातीय क्षेत्रीय इकाइयां हैं। कहने का तात्पर्य है कि जम्मू-कश्मीर न तो एक राष्ट्र है तथा न एक सामाजिक समुदाय है।

दूसरी यह है कि जम्मू-कश्मीर की समस्या के शांतिपूर्ण हल के लिए चलाया गया प्रजातांत्रिक आंदोलन उतना पूर्णरूपेण संगठित नहीं है, जितना कि इस उलझी हुई स्थिति के लिए आवश्यक है। घाटी में चलाए जा रहे प्रजातांत्रिक आंदोलन को जिसे लगभग समूचा जन समर्थन प्राप्त है, बाहर के बजाय भीतर ही भीतर अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। घाटी में चल रहे आंदोलन में लोगों की भागीदारी नहीं होने के परिणामस्वरूप आम जनता में एक निष्क्रियता एवं भ्रांति व्याप्त हो गई है, जिसने विभिन्न प्रकार के असामाजिक तत्वों की गतिविधियों के संचालन के लिए बहुत अच्छा आधार उपलब्ध करा दिया है। आज घाटी में चल रहे प्रजातांत्रिक आंदोलन की मुख्य कमजोरी यह है कि एक ऐसे राज्य स्तरीय संगठन की कमी है

जिसका गठन एक सामान्य कार्यक्रम के आधार पर किया गया हो, तथा इस कमजोरी ने घाटी में चल रहे प्रजातांत्रिक आंदोलन को भी प्रभावित किया है।

III

15. जम्मू-कश्मीर समस्या एवं आधारभूत वास्तविकताओं के ऊपर वर्णित स्वरूपों को लेकर आगे बढ़े तो यह मानना होगा कि जम्मू-कश्मीर की समस्या के शांतिपूर्ण हल के लिए सर्वाधिक आवश्यक एवं तात्कालीन आवश्यकता यह है कि एक यथार्थवादी कार्यक्रम को अपनाया जाए जिसमें निम्नांकित 5 आधारभूत या मौलिक तत्व सम्मिलित हों—

(1) एक स्पष्ट लक्ष्य हो—अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन दोनों ही।

अल्पकालीन तो यह कि एक चतुर्थ भारत-पाक युद्ध को टालने के लिए तथा विभिन्न जातिगत समुदायों के बीच जम्मू-कश्मीर के भावी स्वरूप या संरचना के बारे में एक आम सहमति उत्पन्न करने के लिए किया जावे।

दीर्घकालीन लक्ष्य—यह होना चाहिए कि एक अर्ध-स्वतंत्र जम्मू-कश्मीर राज्य की स्थापना की जाए या तो भारत-पाक या सार्क की संयुक्त सत्ता के अधीन जो पूर्णत: संघीय प्रणाली पर आधारित हो तथा सभी जातीय क्षेत्रों को एक समान स्वायत्तता प्रदान करता हो। (जो केवल मात्र जम्मू-कश्मीर की रक्षा, विदेशी मामलों व मुद्रा के लिए जिम्मेदार हो)।

आत्म-निर्णय, जनमत संग्रह एवं त्रिपक्षीयवाद का सिद्धान्त तो किसी लक्ष्य की प्राप्ति के साधन मात्र है तथा किसी लक्ष्य को प्रकट नहीं करते हैं।

आत्म-निर्णय का अधिकार तथा त्रिपक्षीयवाद का सिद्धान्त पूर्णत: भिन्न विचारधाराएं हैं। जबकि पहली तो एक जाति या समुदाय विशेष को समग्र हक प्रदान करती है जबकि दूसरी विचारधारा तीनों पक्षों को एक समान अधिकार प्रदान करती है।

जम्मू-कश्मीर राज्य को धार्मिक आधार पर संगठित करने का विचार, जम्मू-कश्मीर के बहुलवादी स्वरूप तथा वैश्विक मानव समाज के मानदण्डों से न तो मेल खाता है तथा न कभी मेल खा सकता है।

(2) एक स्पष्ट एवं श्रेष्ठ मार्ग अपनाया जाए—सभी परिस्थितियों में जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के लिए शांतिपूर्ण तरीका ही अपनाया जाए।

(3) इसके लक्ष्य एवं मार्ग के अनुरूप एक मजबूत रणनीति या व्यूह रचना अपनाई जावे जिसमें निम्न बिन्दु सम्मिलित हों—

(अ) तीनों पक्षों के हितों में संतुलन या समन्वय कायम किया जाए जैसे-

(i) भारत एवं पाकिस्तान के राष्ट्रीय हित, (ii) एक तरफ तो भारत व पाकिस्तान के हित तथा दूसरी ओर जम्मू-कश्मीर के लोगों के हित, (iii) जम्मू-कश्मीर की समस्त जातीय क्षेत्रीय इकाइयों के हित।

(ब) इस कार्यक्रम से सहमत होने वाले लोगों को इसकी राजनैतिक शक्तियों के रूप में माना जावे; विभिन्न जातीय क्षेत्रीय समूहों को इसकी आधारभूत शक्तियों के रूप में स्वीकार किया जावे; भारत एवं पाकिस्तान की प्रजातांत्रिक ताकतों को जो त्रिपक्षीय विकल्प को सक्रिय समर्थकों के रूप में समर्थन देते हैं तथा जो अन्तर्राष्ट्रीय शांतिप्रिय ताकतें जो जम्मू-कश्मीर समस्या का शांतिपूर्ण हल चाहती है, को इस कार्यक्रम के प्रति सहानुभूति रखने वालों के रूप में मान्यता दी जावे।

(स) उन लोगों को इस कार्यक्रम का विरोधी या दुश्मन माना जावे जो जम्मू-कश्मीर समस्या को एक सैनिक मुद्दा मानते हैं तथा एक सैनिक हल का विकल्प स्वीकार करते हैं, निर्दोष लोगों की हत्याएं करते हैं, जनता पर जुल्म या अत्याचार ढाते हैं तथा मानवाधिकारों का हनन करते हैं।

(4) राज्य स्तर पर एक संघीय स्वरूप का संगठन या मोर्चा स्थापित करना, जिसकी इकाइयां क्षेत्रीय स्तर से लेकर ग्राम स्तर तक, प्रत्येक जातिगत क्षेत्र में हो।

(5) एक शांतिपूर्ण राजनैतिक प्रक्रिया स्थापित की जाए जो समस्त लोगों को अपने दायरे में समेटे। राजनैतिक सतह या क्षेत्र में इसके कार्यक्रम के आधार पर समस्त लोगों को प्रेरित किया जाए विशेषकर लक्ष्य, मार्ग एवं व्यूह रचना के बारे में तथा भारत, पाकिस्तान व विश्व के समस्त निष्पक्ष विचारधारा वाले लोगों की इस कार्यक्रम के समर्थन में भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए संघर्ष किया जावे। मानवाधिकारों की रक्षा करना तथा सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करने के विषय को इस कार्यक्रम का प्रमुख भाग बनाया जावे।

आर्थिक क्षेत्र में, लोगों को इस बात के लिए सक्रिय या गतिशील बनाया जावे कि वे अपनी दिन प्रतिदिन की समस्याओं का निराकरण कर सके। सांस्कृतिक क्षेत्र में, विभिन्न प्रकार की मानव संस्कृतियों का स्वागत व विकास करते हुए प्रत्येक जातिगत संस्कृति का राष्ट्रीय स्तर पर समर्थन किया जावे तथा उनकी समृद्धि अर्थात् विकास की व्यवस्था की जावे।

IV

16. भारत एवं पाकिस्तान में तेजी से हो रहे राजनैतिक एवं आर्थिक ह्रास की स्थिति में लम्बे समय से पीड़ा या कष्ट भुगत रहा जम्मू-कश्मीर प्रदेश, जो आज विश्व का सर्वाधिक संवेदनशील बिन्दु है, यदि शांतिप्रिय एवं प्रजातांत्रिक शाक्तियों ने सही ढंग से व्यवहार अर्थात् उचित ढंग से कार्यवाही नहीं की तो एक परमाणु दुखांतिका के रूप में विकसित हो सकती है, जिसके कारण उपमहाद्वीप में व्यापक विनाश हो सकता है तथा विश्व के विकास की प्रक्रिया में गम्भीर अवरोध उत्पन्न हो सकता है। (30.7.96)

❋ ❋ ❋

ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस को विचार-विमर्श के लिए भेजा गया इन्टरनेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी का तृतीय आलेख

1. घाटी के लोगों की सहनशक्ति या विपत्तियों का सामना करने की शक्ति में भारी गिरावट आई है। यह पिछले कुछ वर्षों के दौरान जनता की विरोध करने वाली शक्ति के गिरते स्तर के स्पष्ट है। उदाहरण के लिए 1990 के आसपास कभी कभी 10 लाख लोग सामूहिक रूप से गोलियों का सामना कर सकने जैसी खिलाफत की शक्ति रखते थे किन्तु 1996 के लोक सभा निर्वाचन के दिनों के पहले की अवधि में यह शक्ति सिमट कर कुछ सौ ही लोगों की राजनैतिक भीड़ के स्तर तक ही रह गई थी अर्थात् अब विरोध प्रकट करने के लिए सामूहिक तौर पर एकत्र होने की शक्ति भी कश्मीरवासियों में नहीं रही है, अथवा घाटी में केवल परम्परागत पार्टियों की ही भीड़ दिखाई देती है जो कश्मीर रक्षा की स्थापना की पक्षधर हैं अथवा अभी जनता की नेशनल कांफ्रेंस के प्रति सद्भावना या सहानुभूति प्रकट करने के हावभाव व चिह्न दिखाई देते हैं।

2. आम जनता की हिम्मत या हौंसले में इस गिरावट का आन्तरिक कारण हमेशा व हर जगह यह रहा है कि वहां एक स्पष्ट राजनैतिक पंक्ति या संरचना की कमी है जो हाथ में लिए गए आंदोलन के परिदृश्य, सिद्धान्त या सन्दर्भ, मार्ग, व्यूह रचना, नीति एवं संगठन को इंगित करता हो। जब तक लोगों को एक सही राजनैतिक संरचना द्वारा प्रेरित नहीं किया जाता तथा एक वांछनीय राजनैतिक प्रक्रिया में उनको सम्मिलित नहीं किया जाता, वे अपनी समस्या के स्वरूप या दायरे के बारे में तथा आंदोलन के सकारात्मक या नकारात्मक पहलुओं से पूर्णत: अनभिज्ञ रहते हैं। इस प्रकार की स्थिति में आम जनता शीघ्रता ये बदलने वाली घटनाओं या परिस्थिति के साथ कदम से कदम मिला कर नहीं चल सकी। तेजी से घटने वाली घटनाएं, जिन्हें दुश्मनों या विरोधियों की तीक्ष्ण एवं चतुराईपूर्ण विधियों ने उलझा दिया (जैसे पाखण्डी या दिखावटी सेना की स्थापना, विभिन्न प्रकार के प्रलोभन एवं रियायतें, लोकसभा का चुनाव, परम्परागत स्थापना की पक्षधर पार्टियों का दिखाई देना या प्रकट होना, आर्थिक पैकेज कार्यक्रम की घोषणाएं, वृहद स्वायत्तता के वादे, इत्यादि), जनता पर नियंत्रण स्थापित करने लगी, तथा लोगों की उनके आंदोलन की जीत की ऊंची आशाओं तथा उनकी राजनैतिक नेतृत्व की परिपक्वता को धक्का या आघात पंहुचाने लगी।

3. ऐसा दिखाई दे सकता है कि ऊपर वर्णित स्थिति का स्पष्ट कारण बढ़ा

हुआ सरकारी नियंत्रण या दमन है, जिसके साथ पाखण्डी या दिखावटी सैन्यकरण को जोड़ दिया गया है (अर्थात् सरकार द्वारा प्रायोजित उग्रवाद ने नियंत्रण में वृद्धि की है) लेकिन वास्तव में सरकारी नियंत्रण में वृद्धि तो केवल मात्र सरकार द्वारा सैनिक व्यूह रचना को सघन बनाने का तरीका है ताकि जनता के हतोस्साहित होने की प्रक्रिया को कम किया जा सके अर्थात् जनता के हौंसले को पुनर्जीवित किया जा सके।

4. सरकार ने जनता की भावना या विचारधारा में शनैः शनैः होने वाले परिवर्तन का पूरा फायदा उठाया है। जोड़तोड़ वाले चुनावों की परम्परागत प्रणाली को पुनर्जीवित करके इसने लोकसभा चुनाव करवा के प्रथम स्तर की जीत तो हासिल करली है तथा अब आगामी विधान सभा चुनावों में दूसरे स्तर की जीत हासिल करने की तैयारी कर रही है।

5. इस प्रकार वर्तमान समय में, जन आंदोलन को दो बड़ी गम्भीर चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जिनका सम्भावित स्वरूप विकास के अगले चरण को निर्धारित करेगा। प्रथम मुद्दा तो यह है कि आगामी विधान सभा चुनावों से किस प्रकार निपटा जावे तथा दूसरा यह मुद्दा है कि जनता के अन्दर उत्साह या हौसले का पुनः संचार कैसे किया जावे। दोनों ही बिन्दु परस्पर जुड़े हुए हैं जिन्हें पृथक नहीं देखा जा सकता।

6. ऊपर वर्णित परस्पर सम्बन्धित या जुड़वां चुनौतियों का सामना करने के लिए निम्नांकित कदम उपयोगी या कारगर हो सकते हैं—

(क) विभिन्न तरीकों द्वारा चाहे वे मौखिक हों या लिखित, आम जनता को प्रेरित या प्रभावित करने के लिए एक वास्तविकतावादी राजनैतिक विचारधारा या सिद्धान्त का निर्माण किया जावे। इस विचारधारा को वाद विवाद, सम्मेलन, सार्वजनिक बैठकों, सदन के भीतर की बैठकों, पर्चों, पोस्टरों आदि के माध्यम से इस सिद्धान्त को विचार-विमर्श के लिए आम जनता के बीच फैंकना। ऐसे प्रयास किए जाने चाहिए कि इस अभियान में लोगों के सभी वर्ग हिस्सा लेवें।

(ख) उन लोगों की रिहाई के लिए एक आंदोलन या संघर्ष छेड़ा जावे जिनके विरुद्ध कोई मुकदमे या आरोप नहीं है।

(ग) अलफरान द्वारा विदेशी लोगों को बन्धक बनाए जाने के मामले की जांच करने के लिए एक गैर सरकारी जांच आयोग का गठन किया जावे।

(घ) एक गैर सरकारी न्यायिक आयोग की स्थापना की जावे, जो सभी प्रकार के मानवाधिकार हनन के मामलों की जांच करें, मुख्यतः हिरासत में हुई मौतों सहित सुरक्षा बलों द्वारा जान बूझकर की गई हत्याएं प्रमुख हैं।

(ड़) एक स्वतंत्र आयोग का गठन करना जो हाल ही में हुई नेपाली एवं

बिहारी श्रमिकों, राजस्थानी पर्यटकों तथा डोडा के गद्दियों की हत्याओं की जांच करें।

(च) मानवाधिकारों पर गोष्ठियां की जावे, जिनका आयोजन वकीलों, प्रोफेसरों तथा लेखकों आदि के द्वारा किया जावे तथा जिनमें भारत एवं पाकिस्तान सहित समस्त सार्क देशों के मानवाधिकार आयोगों के सदस्य, वकीलों, प्रोफेसरों तथा बुद्धिजीवियों को आमंत्रित किया जावे।

(छ) जम्मू-कश्मीर के विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को जम्मू-कश्मीर समस्या के शांतिपूर्ण हल के प्रति सचेत व सक्रिय करने की एक योजना का निर्माण किया जावे।

(ज) इस मुद्दे की व्यापक अर्थात् पूर्णरूपेण जांच करना कि घाटी के लोगों का झुकाव आज के समय सामान्य राजनैतिक स्थिति को बहाल करने की ओर है। और यदि ऐसा है तो कतिपय अच्छे एवं सिद्धान्तवादी लोगों का एक स्वतंत्र मंच कायम किया जावे जो एक ठोस कार्यक्रम को लेकर विधानसभा चुनाव लड़े तथा चुनाव के बाद के समय में इस कार्यक्रम के आधार पर ही कार्य करें।

(झ) विशेषकर कश्मीर घाटी के लोगों तथा सामान्यतः पूरे प्रदेश के लोगों (विशेषकर निर्धन एवं दलित वर्गों) से सम्बन्धित सामाजिक आर्थिक मुद्दों की एक विस्तृत सूची जारी की जावे तथा इन समस्याओं के निराकरण की विधियां खोजी जावे।

(ञ) भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच शांतिपूर्ण त्रिपक्षीय हल पर जनमत सग्रंह का संचालन या आयोजन किए जाने के लिए राज्य स्तरीय व राज्यव्यापी शर्तों का निर्माण किया जावे। (4.8.96)

❋ ❋ ❋

सार्क मानवाधिकार चार्टर के अन्तर्गत पीड़ित मानव-समूहों के अधिकारों की रक्षा

—इकबाल ए. अंसारी

सार्क देशों में प्रत्येक देश में धार्मिक-सांस्कृतिक विविधता होने के कारण तथा सीमाओं के पार इसकी निरतंरता के कारण, सीमाएं जो पिछली 5 दशाब्दियों की छोटी-सी अवधि में पहले निर्धारित की गई तथा फिर पुर्निर्धारित की गई, यह आवश्यक बाध्यता है कि लोगों का एक से दूसरे देश में आना जाना अर्थात् आवागमन हो (शरण लेने के लिए)। ये लोग शरणार्थी हो सकते हैं जैसे चकमा, बौद्धधर्मी, बंगलादेश के आर्थिक रूप से दरिद्र शरणार्थी, ये काम की खोज में निकले व्यक्ति या टूटे हुए परिवारों के सदस्य हो सकते हैं, अथवा बंगलादेश के बिहारी मुसलमानों की तरह दुर्गति अर्थात् खराब स्थिति वाले लोग हो सकते हैं। ऐसे में, जिस वस्तु की आवश्यकता है, वह है ऐसे कदमों या उपायों की एक श्रृंखला जो इस प्रकार के व्यक्तियों को मानवाधिकार के मानदण्डों तथा मानवीय कानूनों के दायरे में ला सकें, जिसके अभाव में इन लोगों को केवल 'घुसपैठिया' माना जाएगा तथा इन्हें दुश्मन के रूप में देखा जाएगा जो राष्ट्रीय सुरक्षा व अर्थ व्यवस्था के लिए घातक या खतरनाक माने जाते हैं। विदेशी या परदेशी जन समूह कभी-कभी लोगों में उनके खिलाफ विरोध या क्रूरता जाग्रत कर सकते हैं। हो सकता है कानून को लागू करने वाला तंत्र भी उनके साथ व्यवहार करने में निर्धारित प्रक्रिया से हट जावें। भारतीय नागरिकों के समूहों तथा बंगलादेश व पाकिस्तान के जन समूहों में भाषाई एवं सांस्कृतिक एकरूपता होने के कारण, विदेशी लोगों की पहचान में यह जोखिम निहित है कि हम हमारे स्वयं के नागरिकों पर ही शंका करते तथा उन्हीं पर यह साबित करने का भार डाल दें कि वे भारतीय हैं। अन्तर्राज्यीय या अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों व लड़ाई या विवाद की स्थिति में, विदेशी लोगों से यह भयंकर डर या घृणा, जरूरी तौर पर भारतवर्ष के अन्दर हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों को प्रभावित करती है एवं उन्हें तीव्र या उत्तेजित करती है।

ऐसा किसी भी सूरत में नहीं हो सकता कि बंगलादेश के निर्धन शरणार्थियों को अपनी इच्छा से भारत में बसने दिया जाए या उनका स्वागत किया जावे, अथवा भारत के परिवारों से बिछड़े हुए लोगों को पाकिस्तान में बसने दिया जाए या निर्धारित समय से अधिक ठहरने दिया जावे। आज आवश्यकता इस बात की है कि राजनीति से प्रेरित घुसपैठ से पृथक करते हुए, लोगों के इस प्रकार के स्वाभाविक आवागमन को मानवाधिकारों के मानदण्डों व कानूनों के अन्तर्गत लाया जावे। इसके लिए इस बात की

आवश्यकता होगी कि यात्रा सम्बन्धी दस्तावेजों, कार्य-अनुमति के दस्तावेज, देशान्तरवास, अभ्यस्तीकरण, मूल देश में लौटने का अधिकार तथा अवैध एवं अवांछनीय घुसपैठियों की पहचान करने की प्रक्रिया के सम्बन्ध में अधिक मानवीय अर्थात् मानवोचित कानून की संरचना की जावे।

इस कार्य हेतु न केवल शरणार्थियों के लिए एक सार्क क्षेत्रीय लेख पत्र की आवश्यकता है बल्कि एक सार्क मानवाधिकार संगठन या संस्थान की आवश्यकता है जो सभी प्रकार के पीड़ित समूहों को मानवाधिकार प्रदान करें जैसे अल्पसंख्यक, विस्थापित, देशान्तरवासी, शरणार्थी, नि:सहाय या बेसहारा लोग तथा विघटित या टूटे हुए परिवारों के लोग इत्यादि।

14/1703 मुजम्मिल मंजिल,
दोधपुर - अलीगढ़ 202 001
सेक्रेट्री जनरल
माइनोरिटिज काउन्सिल ऑफ इण्डिया

❋ ❋ ❋

ऑल पार्टी हुर्रियत कान्फ्रेंस को आई.डी.पी. द्वारा दिया गया प्रथम आलेख

I

1. अब यह स्पष्ट प्रतीत होती है कि घाटी में जम्मू-कश्मीर समस्या के लिए चलाये जा रहे जन आंदोलन के हौसले के स्तर में कमी आई है, जैसा कि तथ्य बताते हैं। निश्चय ही यह मामला उन सभी लोगों से सम्बन्धित है और होना चाहिए जो इस लम्बी उलझन भरी समस्या का न्यायिक और उचित समाधान चाहते हैं।

2. किसी भी जटिल जन आंदोलन में उतार-चढ़ाव आना असामान्य घटनाक्रम नहीं है यह प्रतिपक्ष के अधिक मजबूत होने की वजह से अथवा जन आंदोलन द्वारा की गई कार्यनीतिक गलतियों के कारण होता है।

3. कार्यनीतिक उतार-चढ़ाव मात्र कुछ समय के हैं अथवा विशिष्ट पक्षों को नुकसान पहुंचाते हैं। प्रत्येक पक्ष के लिए यह जरूरी है कि उनके अस्थायी नुकसान की भरपाई समय के भीतर कर लें। किसी भी पक्ष को लगातार कार्यनीतिक आघात उसकी रणनीतिक हार की ओर ले जाते हैं।

4. बहरहाल, लोगों के हौसले में गिरावट का ग्राफ एक रणनीतिक सवाल है। क्योंकि किसी भी मुकाबले में लोग ही हार-जीत का फैसला करने वाले होते हैं अत: किसी विशिष्ट संघर्ष में लोगों का हौसला अन्य साधन से अधिक महत्वपूर्ण है।

5. किसी भी आंदोलन में लोगों का हौसला दीर्घकालीन रणनीति और इसके लागू करने से सम्बन्धित है, जो समस्या से सम्बन्धित वास्तविक परिप्रेक्ष्य पर आधारित है।

6. एक सही रणनीति और उसे ठीक से लागू करना जन आंदोलन को उपयुक्त पहलकदमियां लेने और किसी विशेष अवस्था में ठीक प्रतिक्रिया व्यक्त करने के समर्थ बनाता है। यह समय पर की जाने वाली क्रियाएं प्रतिक्रियाएं लोगों के हौसले को ऊंचा उठाने और उन्हें मजबूती प्रदान करती है तथा अपने उद्देश्य में विजयी होने का जन विश्वास पैदा करती है।

7. वास्तविकता के बारे में, एक अस्पष्ट अथवा हवाई समझ और इससे जुड़ी अनुपयुक्त रणनीति हमेशा लोगों को निरुत्साहित करती है, परिणामत: अन्तिम हार की ओर ले जाती है।

8. इसलिए, किसी जन आंदोलन को सफलता की ओर ले जाने के लिए इसकी मूलभूत जमीनी वास्तविकता इसकी कार्यसूची और इसकी रणनीति की एक

उचित समझ की आवश्यकता है—जो इसके उद्देश्य, शक्तियों की भूमिका, काम के तरीकों और संगठन के स्वरूप को अभिव्यक्त करे, एक लम्बे चलने वाले संघर्ष में (यहां इसका प्रतिपक्ष बहुत ही मतबूत है), इसकी कार्यनीतिक रणनीति और इसको लागू करने के तरीकों को हर क्षण बदलती परिस्थिति और मोड़-घुमाव में लगातार जांचने की जरूरत है।

II

9. जम्मू-कश्मीर सवाल के रणनीतिक पहलुओं की ओर की मुड़ें तो निम्नलिखित नुक्ते उन लोगों के विचार-विमर्श एवं एक सहमति की लाईन पर पहुंचने में मदद कर सकते हैं जो विशिष्ट सवाल का सौहार्दपूर्ण समाधान चाहते हैं।

10. इसकी मूलभूत वास्तविकता के सम्बन्ध में यह कि जम्मू-कश्मीर समस्या एक त्रिपक्षीय सवाल है जिसमें भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोग सम्मिलित हैं। ऐसा इसलिए है कि सभी देश जबकि मौखिक तौर पर इस समस्या को भारत और पाकिस्तान के बीच स्वीकार करते हैं, उसी वक्त इसके समाधान में जम्मू-कश्मीर के लोगों को सम्मिलित करने की मांग करते हैं।

इस प्रकार वास्तविक रूप से वे इसे त्रिपक्षीय में बदल देते हैं। 1948-49 का संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव भी जम्मू-कश्मीर के लोगों को भारत या पाकिस्तान में राज्य के विलय के सवाल को जनमत संग्रह द्वारा हल करने का अधिकार देता है—अप्रत्यक्ष तौर पर इसकी त्रिपक्षीय प्रकृति को स्वीकारता है यहां तक कि भारत और पाकिस्तान भी यद्यपि मौन रूप में इस अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को मानते हैं।

11. इसकी जमीनी वास्तविकता के बारे में तीन तथ्यों को गहराई से देखने की आवश्यकता है—

(अ) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर - जबकि सभी जम्मू-कश्मीर प्रांत की समस्या को विवाद का मुद्दा मानते हैं लेकिन कोई भी विश्व संस्था-संयुक्त राष्ट्र और इसकी एजेंसियां, गुटनिरपेक्ष आंदोलन, इस्लामिक देशों का संगठन आदि—इस समय इसके समाधान के लिए कोई भी पहल करने को तैयार नहीं है न ही कोई भी देश (पाकिस्तान का छोड़कर) इस समस्या को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उठाने अथवा मध्यस्थता की पहल करने को तैयार हैं।

(ब) भारत-पाक स्तर पर - नई दिल्ली और इस्लामाबाद दोनों अपनी राष्ट्रीय प्रतिष्ठा जम्मू-कश्मीर को अपने राष्ट्र का भाग होने पर लगा रखी है और एक ऐसा राष्ट्रीय उन्माद पैदा किया है जो किसी भी कीमत पर अपनी इस राष्ट्रीय इज्जत को बचाये।

(स) स्थानीय भू-राजनीतिक स्तर पर - जम्मू-कश्मीर प्रांत ऐतिहासिक तौर पर एक बहुजाजीय-बहुक्षेत्रीय इकाई है, जो विभिन्न जातीय आकांक्षाओं से प्रलक्षित है। जबकि कश्मीरियों का बहुमत भारत से अलग होने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। अन्य पहचानें अपने अलग-अलग विकल्प रखती हैं।

III

12. इसके रणनीतिक उद्देश्य के सम्बन्ध में जम्मू-कश्मीर समस्या की मूलभूत और जमीनी वास्तविकता मांग करती है कि इसका एक तर्कसंगत वांछित और व्याहारिक हल है और हो सकता है कि वो तीन तरफ की संतुष्टि को अपने में समाहित कर ले। वो हैं—(अ) भारत और पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों को संतुलित करें, (ब) एक तरफ भारत पाकिस्तान के हितों को पूरा करे दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों की पूर्ति करे, (स) जम्मू-कश्मीर की आठों जातीय-क्षेत्रीय पहचानों के हितों के बीच सामंजस्य बैठाए, जैसे—कश्मीरी, डोगरा, पठवारी, पहाड़ी (गुज्जर, बकरवाल आदि), लद्दाखी, कारगिली, गिलगिटि, बाल्टी आदि।

13. भारत व पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों को सम्पूर्ण जे.के. स्टेट पर भारत-पाक का संयुक्त महासंघ स्थापित करके संतुलित किया जाना चाहिए और किया जा सकता है।

14. एक तरफ भारत व पाकिस्तान के हितों और दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों की पूर्ति, जम्मू-कश्मीर के रक्षा, विदेशी मामलों और मुद्रा को भारत-पाक महासंघ के हवाले करने तथा बाकी मामले जम्मू-कश्मीर प्रान्त के अधीन करके सुनिश्चित किया जा सकता है और किया जाना चाहिए।

15. जम्मू-कश्मीर की विभिन्न जातीय-क्षेत्रीय पहचानों के हितों में सामंजस्य जम्मू-कश्मीर का एक संघीय संविधान अपनाकर—जिसमें एक तरफ प्रत्येक जातीय-क्षेत्रीय सम्प्रदाय को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता दी जाये, जिसे जिला, ब्लॉक और गांव तक विकेन्द्रित की जावे तथा दूसरी तरफ एक ही जम्मू-कश्मीर प्रान्त हो, जिसका एक ही साझा मुखिया हो, जिसका चुनाव जातीय-क्षेत्रीय परिषदों द्वारा किया जावे, एक साझा हाईकोर्ट, एक साझा चुनाव आयोग, एक साझा लोक सेवा आयोग, पर्यावरण आयोग, मानव संसाधन विकास आयोग हो जिनकी नियुक्ति जातीय-क्षेत्रीय परिषदों द्वारा हो—की जा सकती है और की जानी चाहिए।

IV

16. इसके विभिन्न शक्तियों के सम्बन्ध में यह है कि सभी जो जम्मू-कश्मीर समस्या की मूलभूत तथा जमीनी वास्तविकता पर सहमति रखते हों, इसकी राजनैतिक

शक्तियां हैं। विभिन्न जातीय-क्षेत्रीय ग्रुप बुनियादी शक्तियों का गठन करते हैं जिनका अधिकतम सम्भव संगठन पर आंदोलन की सफलता और असफलता निर्भर करती है। भारत और पाकिस्तान में वो सभी जो इसके त्रिपक्षीय कारण को मानते हैं, इसके सक्रिय समर्थक बनते हैं। वो विश्व की ताकतों जो इनका शांतिपूर्ण समाधान चाहते हैं हमदर्द की श्रेणी में आते हैं। वो ताकतें जो जम्मू-कश्मीर समस्या को एक सैनिक मामला चारित्रित करते हैं और इसका सैनिक समाधान चाहते हैं, वो निर्दोष लोगों को मारते हैं, लोगों पर जुल्म ढाते हैं और मानवाधिकार का हनन करते हैं और वे इस जन आंदोलन के विरोधी बनते हैं।

V

17. इसके काम के तरीके के सम्बन्ध में यह है कि जन आंदोलन का रास्ता जो इसके राजनीतिक उद्देश्य से मेल खाता हो वह एक शांतिपूर्ण होना चाहिए और है। चल रही खाड़कू और सरकारी खाड़कू के बीच बन्दूक की राजनीति केवल तभी अप्रासंगिक हो सकती है जब प्रांत में एक मजबूत लोकतांत्रिक आंदोलन पैदा हो, जो सभी जातीय-क्षेत्रीय पहचानों को शामिल करे। इस प्रकार के आंदोलन के बनने तक उचित आधार पर युद्ध विराम करने की कोशिश की जानी चाहिए। उन सभी की व्यक्तिगत और भौतिक सुरक्षा की गारण्टी हो जो नई दिल्ली और श्रीनगर के जंगली उत्पीड़न के मुकाबले में जबरदस्ती खाड़कू बने।

VI

18. संगठन के गठन के सम्बन्ध में, जन आंदोलन का रणनीतिक उद्देश्य, प्रेरक शक्तियां और काम करने के तरीके मांग करते हैं कि इसका संगठनात्मक ढांचा प्रांतीय स्तर पर एक राजनीतिक फ्रंट होना चाहिए, जिसका प्रत्येक जातीय-क्षेत्रीय रिजन में गांव स्तर तक इकाइयां हो। यह फ्रंट (जिसे 'जम्मू कश्मीर समस्या का त्रिपक्षीय शांतिपूर्ण समाधान का फ्रंट' कहा जा सकता है या इनके संगठनकर्ताओं द्वारा और कोई उचित नाम दिया जा सकता है)। सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर के लोगों को अपने प्रभाव तले लाये। इसकी शुरूआत भारतीय जम्मू-कश्मीर के विभिन्न जातीय-क्षेत्रीय प्रतिनिधियों के बीच जम्मू-कश्मीर समस्या की प्रकृति और इसकी जमीनी वास्तविकताओं पर अर्थपूर्ण वार्ता की शुरूआत करके की जा सकती है। अगली बार इसी तरह बातचीत 'आजाद कश्मीर' के लोगों के प्रतिनिधियों में भी आयोजित की जा सकती है। फिर, भारत और पाकिस्तान में इसके त्रिपक्षीय फार्मूले पर जन समर्थन हासिल किया जा सकता है, आगे सभी सम्बन्धित पक्षों से विचार-विमर्श के बाद और उचित तैयारी से दोनों तरफ के जम्मू-कश्मीर की सभी जातीय-क्षेत्रीय पहचानों के प्रतिनिधियों का

सम्मेलन आयोजित हो सकता है जो जम्मू-कश्मीर समस्या का सर्वमान्य समाधान निकाले और आगे यह भारत-पाकिस्तान तथा दुनिया में न्यायिक और उचित समझ के लोगों को सर्वमान्य समाधान लागू करने की प्रक्रिया को सुनिश्चित बनाने में सम्मिलित कर सकता है। यह सब करते समय फ्रंट मानवाधिकारों की रक्षा और उनकी तात्कालीन समस्याओं के समाधान के लिए लोगों को निरन्तर संगठित करेगा।

VII

19. भारत और पाकिस्तान के साथ-साथ प्रांत की तेजी से बदलती परिस्थितियों में यदि शांतिप्रिय और लोकतांत्रिक ताकतें सही तरीके से क्रिया और प्रतिक्रिया नहीं करती है तो जम्मू-कश्मीर की हाईवोल्टेज ज्वाला भारत-पाक युद्ध में बदल सकती है, जिसका परिणाम जम्मू-कश्मीर सहित सम्पूर्ण उप महाद्वीप के पतन में होगा। (20.5.96)

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर में लोकसभा चुनाव ना तो स्वतन्त्र और ना ही निष्पक्ष

I

1. ऐसा नजर आता है कि नई दिल्ली ने इतिहास से सबक नहीं लेने की कसम खा रखी है, जो ऐतिहासिक अनुभव की अनदेखी करते हैं वे कहीं के नहीं रहते हैं, यह इतिहास का कानून है।

2. एक आधुनिक ऐतिहासिक सच्चाई यह है कि आजकल किसी भी जगह स्वतन्त्र और निष्पक्ष चुनाव नहीं करवाये जाने पर, ऐसा करने वालों को आखिरकार बुरा नतीजा स्वयं भुगतना पड़ता है। रिचर्ड निक्सन (यू एस ए), जुल्फिकार अली भुट्टो (पाकिस्तान), बेगम खालिदा जिया (बंग्लादेश) और अन्य कई चालबाजों को अपनी ही चुनावी बेइमानियों का उल्टा शिकार होना पड़ा।

3. भारत में भी बहुत से डेमाक्रेट लोग प्रेस और यहां तक कि बड़ी राजनीतिक पार्टियां यह स्वीकार कर चुकी हैं कि जम्मू-कश्मीर में 1996 से पहले पिछले आठ चुनावों में से सात चुनावों (1977 के एक चुनाव को छोड़कर जिसमें बेईमानी कम हुई थी) में जो बेईमानी की गई उसी का बुरा परिणाम हमें कश्मीरियों के अलगाववाद और उग्रवाद के रूप में सहन करना पड़ रहा है।

II

4. ग्यारहवीं लोकसभा चुनावों में नई दिल्ली ने कैसा व्यवहार किया है? क्या इसमें उन चुनावों में जम्मू-कश्मीर के पिछले चुनावों से अलग व्यवहार किया है? आओ, तथ्यों की छानबीन करते हैं।

5. नई दिल्ली के मुताबिक घाटी में पाकिस्तान ने 'अप्रत्यक्ष युद्ध' छेड़ रखा है। स्पष्टतया 'अप्रत्यक्ष युद्ध' का चुनाव न तो कोई जवाब है और न ही जवाब हो सकता है। परन्तु, अगर हम तथ्य के लिए इसे स्वीकार कर भी लें तो क्या इसने तर्कसंगत रास्ता अपनाया है?

6. तर्कसंगत की मांग के मुताबिक नई दिल्ली को सबसे पहले सभी मुख्य धारा वाली पार्टियों की मीटिंग बुलाकर जम्मू-कश्मीर के सवाल पर एक आम सहमति कायम करनी चाहिए थी। द्वितीयत: और अच्छा रहता अगर यह ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस के साथ किन्हीं शर्तों पर सहमति कायम कर लेती और इसका चुनावों में भाग लेना सुनिश्चित करवाने के लिए किसी निरीक्षक एजेंसी के सवाल पर भी सहमति बना लेती। तृतीयत: चुनावों की साख बनाने के लिए इसको जम्मू-कश्मीर की चुनावी प्रक्रिया के पर्यवेक्षण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय पर्यवेक्षकों को निमंत्रित करना

चाहिए था। ऐसे पर्यवेक्षकों को निमंत्रित करना कोई अनोखी या गलत बात नहीं है, क्योंकि इससे किसी भी देश की सार्वभौमिकता पर उल्टा असर नहीं पड़ता है। यहां तक कि कुछ विकसित देश भी इस व्यवहार को अपनाते हैं। दक्षिण एशिया में पाकिस्तान, नेपाल, श्रीलंका और बंग्लादेश ने अपने-अपने हालिया चुनावों में इस रास्ते को अख्तियार किया।

7. नई दिल्ली ने इनमें से किसी भी कदम को नहीं उठाया है। उसके बजाय इसने न केवल मुख्य धारा वाली पार्टियों की बातों पर ध्यान दिया बल्कि महत्वपूर्ण क्षेत्रीय पार्टियों की भी अनदेखी की है। इसका परिणाम यह निकला कि नेशनल कांफ्रेंस ने भी चुनावों में भाग नहीं लेने का फैसला लिया, क्योंकि उसकी राय में घाटी में स्वतन्त्र और निष्पक्ष चुनाव नहीं करवाये जा सकते। सी पी आई (एम) और सी पी आई की राज्य इकाइयों ने भी यही रास्ता अख्तियार किया। भाजपा और जनता दल कश्मीर चुनावों में चुनावों के लिए हालात को अत्यधिक प्रतिकूल मानते हुए भी बड़े बेमन से उस समय अपनी अपनी स्थानीय इकाइयों को चुनाव में उतारने को तैयार हुए जब शासक पार्टी ने इसे राष्ट्रीय हित का सवाल बना दिया। यहां तक कि जम्मू-कश्मीर कांफ्रेंस की आधी इकाई (असंतुष्ट ग्रुप) जो यही विचार रखता था, पूरे समय निष्क्रिय बनी रही।

III

8. चुनावों के दौरान नई दिल्ली ने पहला कदम सरकार समर्थक बन्दूकधारियों (जो सुरक्षा बलों के संरक्षक के नीचे गतिविधियों करते हैं) के माध्यम से आम लोगों को भयभीत किया। आम लोगों पर भय का शासन कायम करने के लिए घाटी के सभी जिलों में हुर्रियत कांफ्रेंस के नेताओं सहित राजनतिक नेताओं पर हमले किये गये।

9. चुनावों का बाकायदा एलान होने के बाद सरकार समर्थक खाड़कुओं ने अवामी लीग नाम से अपना खुद का संगठन खड़ा कर लिया और चुनावों में अपने उम्मीदवार खड़े कर दिये। उन्होंने लोगों को यह धमकी देना शुरू कर दिया कि या तो वे उन्हें वोट दें अन्यथा उसका परिणाम भुगतने के लिए तैयार हो जाएं। उन्होंने न केवल अपने विरोधियों का कत्ल किया और लोगों को पीटा बल्कि कांग्रेस के अगुआ उम्मीदवारों की सभाओं पर बम भी फैंके। इन घटनाओं से सबसे पहले गुलाम रसूल कार (कांग्रेस का राज्य अध्यक्ष और बारामुला क्षेत्र से लोकसभा चुनाव के लिए पार्टी के उम्मीदवार) ने चुनावी मुकाबले से हटने की धमकी देते हुए नेशनल कांफ्रेंस के अध्यक्ष फारूक अब्दुल्ला की लोकसभा चुनावों से अपनी पार्टी को अलग रखने की नीति को बुद्धिमतापूर्ण बताया। कुछ दिनों ताज मोहइद्दीन (राज्य कांग्रेस के महासचिव और अनंतनाग लोकसभा सीट से पार्टी के उम्मीदवार) ने सार्वजनिक तौर पर एलान

किया कि सरकार समर्थक खाड़कुओं पर नियंत्रण नहीं किया गया तो वह आत्मदाह कर लेगा। यहां तक कि कुछ हारे हुए वरिष्ठ खाड़कुओं (जिन्होंने नई दिल्ली सरकार से वार्तालाप शुरू की थी) ने भी वार्तालाप के बाद में सरकार समर्थक खाड़कुओं को निहत्था करने की मांग उठाई थी।

10. अप्रेल के मध्य में, रेड क्रॉस की अन्तर्राष्ट्रीय समिति (जो घाटी में दो साल से कार्य कर रही थी) को कुछ दिनो में घाटी छोड़ने का कहा गया जबकि लोकसभा चुनाव के बाद वापिस आने की आज्ञा दी गई।

11. अप्रेल के तीसरे सप्ताह से, घाटी की सम्पूर्ण प्रेस ने अपने ऊपर प्रशासन और खाड़कुओं द्वारा जो शर्तें थोपी गईं उनके विरोध में अपने सभी प्रकाशन रोक देने का फैसला ले लिया। तब से लेकर अन्तिम चुनाव तक कश्मीर क्षेत्र हर तरह के अखबार से वंचित रहा।

12. क्रमबद्ध चुनावों के वास्तविक तीन दिनों में क्या हुआ, यह सम्पूर्ण विदेशी माध्यमों और यहां तक कि बहुत से भारतीयों द्वारा किये गये वर्णन और तथ्यों से उजागर हो जाता है। कुछ को छोड़कर घाटी के लगभग सभी क्षेत्रों के लोगों ने इल्जाम लगाया है कि सुरक्षा बलों ने हमें वोट डालने के लिए मजबूर किया है। सुरक्षा बलों का दुरुपयोग करने के अलावा बहुत से गैर वोटरों और खरीदे हुए लोगों ने कई बार फर्जी मतदान किया। लोकसभा क्षेत्र में मतदान से एक दिन पहले हुर्रियत कांफ्रेंस के नेताओं को घरों में नजरबन्द कर दिया गया। सुरक्षा बलों ने एक दर्जन से अधिक स्थानों पर श्रीनगर शहर और बड़गांव जिले में प्रदर्शनकारियों को तीतर-बितर करने के लिए ताकत का इस्तेमाल किया, कई जगहों पर खाड़कुओं ने सुरक्षा बलों पर हमले किये। ग्रामीण क्षेत्र लगभग सुरक्षा बलों के निगरानी घेरे (क्रेक डाउन) में थे। प्रेस के लोगों की सुरक्षा बलों ने बेइज्जती की और उनके खिलाफ बल प्रयोग भी किया। चुनाव के बाद सम्पूर्ण प्रेस ने राज्य के मुख्य सचिव द्वारा बुलाई गयी प्रेस कांफ्रेंस का बहिष्कार किया। बाद में, सरकार ने विदेशी और सरकारी माध्यमों दोनों द्वारा लगाये गये इल्जामों की एक न्यायिक जांच बैठाने का आदेश किया। अनंतनाग लोकसभा क्षेत्र के वोटों की गिनती के समय सुरक्षा बलों द्वारा एक स्वतंत्र उम्मीदवार के पांच पोलिंग एजेंटों को निर्दयी तरीके से गोली मार देने की घटना, एक ऐसी घटना है जिसकी शायद दुनिया भर के चुनावी घटनाक्रम में कोई उदाहरण नहीं मिलता है।

13. चुनाव आयोग ने राज्य में लोकसभा के चुनाव कुल मिलाकर शांतिपूर्ण होने पर संतोष व्यक्त किया है। गर्वनर कृष्णाराव ने जम्मू-कश्मीर के लोगों का स्वेच्छा से चुनावों में भाग लेने के लिए धन्यवाद किया। नई दिल्ली (जहां पिछले एक पखवाड़े में तीन सरकारें बदली हैं) ने राज्य लोकसभा चुनावों को भारतीय प्रजातंत्र की

भारी जीत बताया है और इसे पाकिस्तान की शर्मनाक हार के रूप में चित्रित किया है और आगे आने वाले दिनों में राज्य विधान सभा के चुनाव करवाने की घोषणा की है।

14. यद्यपि विभिन्न सरकारी एजेंसियां अपने आपको राज्य में सहज चुनाव करवा पाने में सफल होने की बधाइयां दे रही हैं। और गैर कांग्रेस आदि पार्टियों के उच्च नेता चुनाव परिणामों पर बुद्धिमतापूर्ण चुप्पी साधे हुए हैं जबकि सभी पार्टियों के हारे हुए उम्मीदवार अपने अपने लोकसभा क्षेत्रों में बड़े स्तर पर धोखाधड़ी और फर्जी मतदान के इल्जाम लगा रहे हैं।

15. विभिन्न क्षेत्रीय पार्टियों ने चुनावी प्रक्रिया की अधिक तीव्र आलोचना की है। नेशनल कांफ्रेंस ने इन चुनावों को न तो स्वतंत्र और ना ही निष्पक्ष बताया है और मांग की है कि सभी तरह की धांधलियों की जांच की जाए। पैन्थर पार्टी ने चुनावों को धोखाधड़ी बताया है। यहां तक कि भाजपा के एक नेता ऋषि कुमार कौशल ने इनको गैर न्यायिक बताया।

VI

16. नई दिल्ली ने भले ही जम्मू-कश्मीर में लोक सभा चुनावों का नाटक करके दुनिया के सामने घाटी में शांति कायम करने का दावा कार्यनीतिक तौर प्रदर्शित किया है। परन्तु इसने कश्मीरियों की नजर में भारत के नैतिक कद और रणनीतिक स्थिति को ओर अधिक नुकसान पहुंचाया है। इससे कश्मीरियों का यह विचार और अधिक पक्का हुआ है कि नई दिल्ली के जनवादी नारों के शोरगुल के बावजूद अभी तक यह सरकार अपनी पुरानी आदतों को बदलने और हमें प्रारम्भिक मानवीय अधिकार भी देने को तैयार नहीं है। आम कश्मीरी यह अनुभव करता है कि जम्मू-कश्मीर के लोकसभा चुनावों के मंचन से नई दिल्ली की सरकार हमें हार का अहसास करवाने का प्रयास कर रही है।

17. आज के वक्त में आंतरिक और बाहरी सभी तरह के अनुभव दर्शाते हैं कि अनुचित और गैर न्यायिक तरीके से चीजों को चलाने की कोशिश करने वाले के उद्देश्य को हर कहीं नुकसान ही पहुंचता है। दक्षिण वियतनाम में वहां के लोगों द्वारा 30 साल के प्रतिरोध युद्ध (पहले 1946 से 56 तक फ्रांस के खिलाफ) और 1956 से 1975 तक अमेरिकन ताकतों ने समय-समय पर फर्जी मतदान करवाया परन्तु इससे इन ताकतों का उद्देश्य पूरा नहीं हुआ। अन्याय से लोगों को कुछ समय के लिए दबाया जा सकता है परन्तु उन्हें सदा के लिए जीता नहीं जा सकता है।

VII

18. न्याय मांग करता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या की मूलभूत प्रकृति (यानि एक त्रिपक्षीय विवाद के रूप में) और इसकी जमीनी हकीकत (यानि इसके तीनों

पक्षों की भिन्न-भिन्न धारणाएं) के मुताबिक इस राजनीतिक गुत्थी का एक तर्कसंगत, उचित और वास्तविक हल यह है कि भारत और पाकिस्तान दोनों जम्मू-कश्मीर के विदेशी मामलों, सुरक्षा और मुद्रा का प्रबध साझे तौर पर करने पर सहमत हों जबकि बाकी सारी सम्प्रभुता राज्य में निहित हो और इसके प्रत्येक नश्ली क्षेत्र को उच्चतम सम्भव स्वायत्तता हासिल हो।

इस तरह का प्रबंध पिछले 50 साल से भारत-पाक के बीच शीत युद्ध को समाप्त कर सकेगा, जो कि इस समय में तीन बार सशस्त्र युद्ध कर चुके हैं। इससे ऐतिहासिक और सांस्कृतिक तौर पर जुड़े इन दोनों पड़ौसी देश एक दूसरे के नजदीक आ सकेंगे और इस महाद्वीप में शांति और विकास की एक नई प्रक्रिया शुरू हो जाएगी। इससे टिकाऊ विकास के मॉडल का नया प्रयोग होगा। यह प्रयोग दर्शायेगा कि कैसे परस्पर विरोधी लगने वाले राष्ट्रीय हितों में मेल बैठाया जा सकता है और विभिन्न नस्लीय आकांक्षाओं और इच्छाओं को लोगों का अधिक ताकत सौंपकर और सामाजिक असमानताओं को दूर करके, संतुलित किया जा सकता है।

❋ ❋ ❋

आज मानव समाज किस तरह का व्यवहार कर रहा है

I

1. आज हमारा संसार कैसी आकृति ले रहा है, अथवा मानव समाज आज किस तरह का व्यवहार कर रहा है? इस प्रश्न के अध्ययन करने की तात्कालिक जरूरत है क्योंकि अन्तरिक्ष तकनीकी युग में कोई भी सामाजिक समस्या बिना वैश्विक संदर्भ के उचित तरीके से अध्ययन नहीं की जा सकती।

2. विकास की वैश्विक प्रक्रिया को गौर से देखें तो यह दो तरफा गति दर्शाती है। एक तरफ तो यह शांति, प्रजातंत्र (यानि लोक राज) व आर्थिक विकास, मानवीय संस्कृति की तरफ एवं वैश्विक स्तर पर पर्यावरण पतन एवं बढ़ती हुई जनसंख्या की समस्या का हल करने की कोशिश की तरफ आम गति दर्शाती है और दूसरी तरफ यह उलझन, तनाव व उथल-पुथल की तरफ भटकाव दर्शाती है।

II

3. अमेरिकन और पूर्व सोवियत संघ के नेतृत्व के दो ताकत ब्लाक, शीत युद्ध (या तनाववादी युग) के बाद से विश्व प्रक्रिया की ओर कदम-ब-कदम मजबूती से आगे बढ़ रहे हैं जो निम्नलिखित सूचकांकों से देखा जा सकता है।

प्रथमत: वैश्विक सेना खर्च में लगातार कमी आ रही है, यह 36 प्रतिशत कम हुआ। 1987 में 15 खरब डालर से 1994 में 84 खरब डालर गिर गया है। दुनिया की सशस्त्र सेना की संख्या में भी इसी दौरान कमी आई है सिर्फ 1993-94 में इस संख्या में 10 लाख की कमी आई।

द्वितीयत:, क्षेत्रीय झगड़ों (फिलीस्तिनी-इजरायल) के समाधान और नागरिक तनावों (जैसे कम्बोडिया, दक्षिण अफ्रीका, अंगोला, मोजाम्बिक, अल सल्वाडोर, हैती तथा अभी-अभी फिलीपिन्स और चेचन्या) के समाधान के कारण विश्व सुरक्षा में बहुत अधिक सुधार हुआ है। इन सभी शांति प्रक्रियाओं ने विश्व स्थिरता प्राप्त करने में मदद की है।

तृतीयत:, कई निशस्त्रीकरण उपायों जैसे एन.पी.टी., सी.टी.बी.टी., रायायनिक हथियारों के प्रयोग पर रोक, प्रक्षेपात्र विरोधी राज व्यवस्था, अमेरीका और रसिया के आणविक भण्डारों में कमी तथा यूक्रेन, कजागिस्तान आदि में परमाणिक हथियारों का विनाश, विश्वशांति की तरफ अग्रिम कदम है। इस तथ्य के होते हुए कि उनमें से कुछ (एन.पी.टी., सी.टी.बी.टी. की तरफ) प्रकृति से भेदभावपूर्ण है तथा पूर्ण सही नहीं है।

चतुर्थत:, क्षेत्रीय स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्रों (जैसे एशियन, ई.सी. एपेक, नाफ्ता इत्यादि), क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्थाओं तथा बहुपक्षीय वैश्विक संगठनों (उदाहरणत:

डब्ल्यू.टी.ओ.) के उद्विकास ने वैश्विक शांति प्रक्रिया को पक्का किया है।

पंचमत:, जनता नये तरीके से समझने लग गई है कि शांति पूर्ण तरीका आज ज्यादा फलदायी बन गया है और सैनिक तरीकों से ज्यादा वांछनीय है।

III

4. वैश्विक प्रजातांत्रिक प्रक्रिया का और फैलाव हुआ है तथा इन पिछले आठ सालों से ज्यादा गहराई भी आई है।

प्रथमत:, कई देशों में तानाशाही, अर्द्ध सैनिक और एक पार्टी शासन से बहुपार्टी संसदीय सरकार की व्यवस्था की तरफ तेज संक्रमण हुआ है। आज करीब-करीब पूरा यूरोप (पूर्व सोवियत संघ, मध्य एशियन प्रजातंत्रों के अलावा), एशिया (अफगानिस्तान-बह्मा को छोड़कर) और दक्षिण अमेरिका (क्यूबा और एक दो देशों को छोड़कर) ने बहुपार्टी शासन व्यवस्था को अपना लिया है। 54 में से 45 अफ्रीकी देशों ने संसदीय प्रणाली में परिवर्तन किया है। सिर्फ मध्य-पूर्व और अफ्रीका के कुछ राज्यों में अभी तक प्रजातांत्रिक परिवर्तन हो रहा है।

द्वितीयत:, चुनौतीपूर्ण विश्व सामाजिक विषयों पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा लगातार ली जा रही पहलकदमियों से ग्लोबल प्रजातांत्रिक प्रक्रिया को आगे बल मिला है। ये विषय गरीबी, बेकारी, सामाजिक एकता, लिंग समानता और मानवीय आवास के हैं।

मार्च 1995 की कोपन हेगन संयुक्त राष्ट्र सामाजिक बैठक ने विश्व स्तर पर गरीबी, बेकारी और सामाजिक एकता को हल करने पर जोर दिया।

महिलाओं पर सितम्बर 1995 की संयुक्त राष्ट्र की पीकिंग कांफ्रेंस ने पूर्ण लिंग समानता का एजेण्डा स्वीकार किया, इसे विरासत की सम्पत्ति में (बेटी और बेटों में बराबर हिस्सेदार) लागू करना और राजनीतिक और आर्थिक कारकों में सम्बन्ध होने की मान्यता दी।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रायोजित (1976 की वेन्कूअर) आवास प्रथम और (1996 की स्तानबुल) आवास द्वितीय सम्मेलनों ने प्रत्येक राज्य के लिये आवास को बुनियादी मानवाधिकार की उचित प्राथमिकता देने पर जोर दिया। यद्यपि आवास द्वितीय का मूलभूत मानवाधिकारों पर जोर कुछ हद तक नरम था।

तृतीयत:, एक तरफ क्षेत्रीय स्तर पर पराराष्ट्रीय इदारों के गठन और दूसरी तरफ विश्व स्तर पर ग्लोबल प्रजातांत्रिक प्रक्रियाओं को प्रोत्साहन का रुझान पैदा हुआ है। पहले प्रकार के इदारों में यूरोपियन कम्युनिटी, नाफ्टा मरकोसर, करेबियन समुदाय, अरब लीग, ओ.आई.सी., पश्चिम अफ्रीकन समुदाय, सार्क, एशियन, एपेक, पूर्व सोवियत गणराज्यों का राष्ट्र मण्डल, सेण्ट्रल एशियन आर्थिक संघ आदि हैं जबकि ग्लोबल पराराष्ट्रीय संगठनों में, डब्ल्यू.टी.ओ., एन.पी.टी. रिजाइम, प्रक्षेपात्र नियंत्रण पद्धति, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (मानव

संसाधन सम्बन्धित), संयुक्त राष्ट्र आबादी आयोग, अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा बाजार, वैश्विक संचार व्यवस्था, अन्तर्राष्ट्रीय विमानन प्राधिकरण, वैश्विक बैकिंग और मौद्रिक व्यवस्था इत्यादि है।

हालांकि हर देश में यथास्थितिवादी अपनी राष्ट्रीय सम्प्रभुताओं के क्षरण के खिलाफ जोरदार हंगामा कर रहे हैं। मगर वे इन अन्तर्राष्ट्रीय आवश्यकताओं का खुलकर मुकाबला करने के लिए बहुत मुश्किलात पाते हैं।

इन पराराष्ट्रीय संस्थाओं का गठन यह सूचित करता है कि अभी देश सीमाविहीन राष्ट्र की तरफ बढ़ रहे हैं।

चतुर्थत:, मानवाधिकार आंदोलन (जिसमें सशस्त्र सेनाओं, नृवंशीय अल्पसंख्यकों के अधिकार और वंचित समूह शामिल हैं) का फैलाव ने विश्व स्तर पर प्रजातंत्र के अर्थ और क्षेत्र को बढ़ा दिया है।

पंचमत:, स्त्रियों और बच्चों के अधिकार के आंदोलन ने उदारीकरण और सारे क्षेत्रों में पारदर्शिता व खुलापन तथा जनता के जानने के अधिकार, भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन ने प्रजातंत्र के अर्थ को और अधिक गहरा बनाया है।

षष्ठमत:, अल्पसंख्यक के संघर्ष जो या तो नृवंशीय रूप में है या धार्मिक झगड़ों के रूप में है, जो प्रभुत्वशाली बहुसंख्यकों के खिलाफ है उसमें प्रगति हुई है। 1993 के अनुमानों के अनुसार करीब 73 देश इस तरह के झगड़ों से प्रभावित थे जबकि ज्यादातर ये विकासशील देशों में ही सीमित रहे। अमेरिका और कुछ अन्य देश अल्पसंख्यक झगड़ों को वैश्विक आतंकवाद की श्रेणी में गिनते हैं (जिसके अन्दर नशीले पदार्थों का व्यापार, मुद्रा जालसाजी, शस्त्र तस्करी और अन्य इसी तरह के कृत्य जो अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों का उल्लंघन है) शामिल है। मगर वास्तव में ये संघर्ष प्रकृति से राजनैतिक है और इनका आधार अल्पसंख्यकों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार और उनका उत्पीड़न है, इनका मुख्य उद्देश्य अल्पसंख्यकों के लिए प्रजातांत्रिक अधिकार प्राप्त करना है। तानाशाही व्यवस्था जो वास्तव में अल्पसंख्यकों का उत्पीड़न है, ने पहले से सामाजिक टुकड़ों में बंटे रसिया और युगोस्लाविया में विघटन किया है, अमेरिका के एक विश्लेषण के अनुसार 16 तानाशाही देश जो बहुनृवंशीय है, वे नृवंशीय विस्फोट की श्रृंखला में खड़े हैं जिसमें हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों शामिल हैं।

IV

5. वैश्विक आर्थिक प्रक्रिया द्रुत गति से आगे बढ़ी है प्रथमत: आर्थिक उदारवादी प्रक्रिया जो करीब-करीब सब देशों ने शुरू की है जिसमें व्यापार पर प्रतिबंध में शिथिलता और पूंजी, मजदूरी और सामान के आवागमन में ढिलाई ने वैश्विक आर्थिक एकीकरण को मजबूत किया है।

द्वितीयत:, डब्ल्यू.टी.ओ. के गठन जिसने अपने पूर्वज गैट से अधिक अधिकार लिए हैं उसने, वैश्विक आर्थिक एकता का मजबूत केन्द्र स्थापित किया है।

तृतीयत:, आई.एम.एफ. और वर्ल्ड बैक ने अपने एक पक्षीय बाजारोन्मुख सोच के बावजूद भी अपने आर्थिक मदद से जरूरतमंद सदस्य देशों को आर्थिक मदद से व उनके तात्कालिक पक्ष (हालांकि देरी से) जो गरीबी समाप्ति के विवाद पर, भ्रष्टाचार उन्मूलन, पीने का पानी की आपूर्ति, पर्यावरण शुद्धता, जनसंख्या नियंत्रण, गरीब देशों के ऋण में कमी, मानवाधिकारों की दशा, सामाजिक न्याय इत्यादि ने भी वैश्विक आर्थिक एकता में योगदान दिया है।

चतुर्थत:, महत्वपूर्ण विश्वव्यापी आर्थिक रुझान (क) पूर्व और दक्षिण पूर्व एशियन अर्थव्यवस्थाओं का उद्‌भव जो वैश्विक आर्थिक प्रगति के वाहक हैं जिन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक कार्यक्रम को तय किया है। इस तरह से उन्होंने अर्थशास्त्र की शास्त्रीय पद्धतियों (उदाहरणत: मुक्त बाजार, समाजवाद, साम्यवाद इत्यादि) को छिन्न-भिन्न कर दिया है।

(ख) अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के पुनर्भरण में इन विकसित देशों के रूपान्तरण ने एक कारक के रूप में कार्य किया है।

(ग) विकसित देशों (अपने सारे तकनीकी विकास के बावजूद) के आर्थिक संकट जो निम्न विकास दर के चलते व बेरोजगारी के बढ़ने से उन्होंने अपने ही तरीके से दुनिया को बदलने के प्रयास को झटका दिया है, इसने भी, वैश्विक आर्थिक एकता को जबरदस्त मदद की है।

V

6. बहुपक्षीय विश्वशांति की प्रक्रिया, प्रजातंत्र, आर्थिक प्रगति के मजबूत होने से एवं इसके नई तकनीकी आविष्कारों को जोड़कर देखें तो वैश्विक मानव संस्कृति के विकास में योगदान दिया है हालांकि इनका हिंसा, यौन शोषण पर अत्यधिक दबाव है। फिर भी वर्तमान विभिन्न संस्कृतियों के अच्छे गुणों को एकाकार दिया है। वैश्विक प्रचार तंत्र (इलेक्ट्रोनिक और समाचार पत्र दोनों), ग्लोबल दूर-संचार और यातायात ने विभिन्न प्रकार की कला, साहित्य, कानून संगीत, नाच, वास्तुकला, रीति-रिवाज, जीने के ढंगों को तेजी से भूमण्डलीकृत कर दिया है।

VI

7. विश्व व्यापी आंदोलन जो पर्यावरण प्रदूषण और बढ़ती हुई जनसंख्या के खिलाफ संघर्ष कर रहा है, उसने विकास की बहुमुखीय वैश्विक प्रक्रिया में भारी प्रोत्साहन प्राप्त किया है। प्रथमत:, जो वैज्ञानिक तकनीकी व सामाजिक ज्ञान का उद्‌भव हुआ है उसने इन दो समस्याओं के संबंध में वैश्विक एकता की चेतना को

बढाया है एवं द्वितीयत: संयुक्त राष्ट्र संघ में भी उपयुक्त पहल इनके संबंध में ली है तथा इनकों रणनीतिक वैश्विक खतरों के रूप में संबोधित किया है। 1992 की रियो पृथ्वी सम्मेलन व 1994 का जनसंख्या पर काहिरा सम्मेलन है, ये दो महत्वपूर्ण संयुक्त राष्ट्र के क्रियापलाप इस संबंध में है।

VII

8. ये सकारात्मक विकास अचानक प्रस्फुटन नहीं है, ये मानव की क्रियाएं एवं प्रतिक्रियाएं हैं जो उनकी सामाजिक जरूरतों के मुताबिक है, जो स्वयं अन्तर निर्भर विश्व की सामाजिक वास्तविकताओं से पैदा हुई है तथा जिनका स्वयं प्रादुर्भाव नई वैज्ञानिक सामाजिक जानकारी से पैदा हुई है जो नए सामाजिक श्रम विभाजन के द्वारा उद्भव हुई है और जिनके लिए वृहद कार्यकारी क्षेत्र चाहिए जो राष्ट्रीय सीमाओं को पार करे तथा राष्ट्रों से आपस में सहकार मांगे। सामाजिक सहयोग की मानवीय जरूरत बहुमुखीय वैश्विक प्रक्रियाएं शांति, प्रजातंत्र, आर्थिक विकास, मानवीय संस्कृति पैदा कर रही है तथा विश्वव्यापी आंदोलन, पर्यावरण-प्रदूषण तथा जनसंख्या विस्फोट को रोकने के लिए साझा सामान्य-व्यापार, सामूहिक प्रतिरक्षा प्रणाली, एक रूप संस्कृति तथा पानी, बिजली और अन्य प्राकृतिक उत्पादों के संयुक्त प्रबंध की योजनाओं को भी पैदा कर रही है।

VIII

9. मानव समाज के विकास के सकारात्मक रुझान को पैदा करते हुए भी बहुआयामी वैश्विक प्रक्रिया को कई तरह की गम्भीर चुनौतियां का सामना करना पड़ रहा है जो या तो पुराने राष्ट्रीय महत्व के अवशेष है (उदाहरणत: पर्यावरण प्रदुषण, अल्पसंख्यकों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार इत्यादि) या उस मॉडल के सिद्धान्त और व्यवहार के अभी तक जारी रहने से पैदा हुई है। जहां कहीं भी इन चुनौतियों का उचित प्रबंधन हुआ वहां सकारात्मक नतीजे निकले हैं। जहां उनको अच्छी तरह से प्रबंधित नहीं किया तो उसने सब जगह तकलीफों की तरफ ले गया है। संक्षिप्त में ये चुनौतियां हैं।

प्रथमत:, शीत युद्ध एवं महाशक्तियों के तनाव समाप्त होने के बाद पांच बड़ी ताकतों (यानि अमेरिका, यूरोपीय समुदाय, जापान, चीन और रूस) ने 'शक्ति संतुलन' के राष्ट्रीय सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए, विश्व पर अपने-अपने राष्ट्र की सर्वोच्चता कायम करने की प्रतिस्पर्धा में लग गए हैं। इस मामले में उन्होंने नए युग द्वारा पैदा हुए आपसी हितों के तथ्य की अवहेलना की है।

चीन में मानवाधिकारों के प्रश्न को लेकर अमेरिका-चीन के बीच मतभेद आपसी व्यापार समस्याएं, ताईवान के साथ अमेरिका के संबंध, अमेरिका-जापान व्यापार विवाद, क्यूबा, ईरान, लिबिया के मामलों पर अमेरिका एवं यूरोपीय समुदाय

के बीच रूस की सीमा तक नाटो के विस्तार, अमेरिका एवं रूस के बीच रूस के परमाणु मामलों पर मतभेद, मास्को-टोकियो के बीच क्युरियल द्वीप के बारे में मतभेद, चीन और एसीयन देशों के बीच में छोटे-छोटे द्वीपों को लेकर उलझने, ये सब दुनिया की जटिल तस्वीर पेश करते हैं।

द्वितीयत:, वर्तमान विश्व में अमेरिका एक मात्र विश्व शक्ति होने के कारण विश्व की स्वयंभू पुलिस के रूप में कार्य करता है। (उदाहरणत: इराक के ऊपर अभी-अभी प्रक्षेपात्र से हमला) यह बहु ध्रुवीय विश्व की वास्तविकता के खिलाफ एक ध्रुवीय विश्व स्थापित करना चाहता है, यह उन सब राष्ट्रों के साथ जो उसके विश्व दृष्टिकोण से सहमत नहीं होते उनके साथ परेशान करने वाली व्यूहरचना का प्रयोग करता है। उदाहरण के लिए क्यूबा, ईरान, सीरिया, लिबिया, सुडान इत्यादि देशों को इसने पहले तो धूर्त विज्ञापित किया और उसके बाद में इन देशों के खिलाफ आर्थिक प्रतिबंध की धमकी और भयभीत करने के लिए सारे दूसरे राष्ट्रों से समर्थन मांगा। इस तरह से उपरोक्त पदों से स्पष्ट है कि अमेरिका एक मुख्य पक्ष है और पांच बड़ों में सबसे बड़ा है।

तृतीयत:, दुनिया के कई देशों में गरीबी की स्थिति एक अभेद्य वैश्विक समस्या बनी हुई है। 1996 के विश्व बैंक प्रतिवेदन के अनुसार गरीबों की संख्या (जो 1 डालर प्रतिदिन से कम में निर्वाह करते हैं) 1987 में 1.3 बिलियन से घटकर 1993 में 1.23 बिलियन हो गई। हालांकि विकासशील देशों में पिछले 25 सालों में औसत आमदनी करीब दुगुनी हो गई मगर विश्व की पूर्ण जनसंख्या के अनुपात में गरीबी कम हुई है। विकासशील विश्व के 90 प्रतिशत दक्षिण एशिया, उपसहारा अफ्रीका, इण्डोनेशिया, ब्राजील और ग्रामीण चीन में रहते हैं। आर्थिक प्रगति से ज्यादा से ज्यादा फायदा उठाने के लिए जो प्रतिवेदन आया है, उसमें छ: महत्वपूर्ण क्षेत्रों को प्रदर्शित किया गया है, जिससे ज्यादा से ज्यादा फायदा उठाया जा सके। जिसमें मजदूर सघन विकास जो वृहद आधार पर एवं इसके लिए सामुदायिक खर्चे का जो ढांचा है तथा जो राज व्यवस्था है वह इसे प्रदान करे तथा यह देखें कि गरीबों को उधार मिल सके, जमीन मिल सके, गरीबों की जमीन में उत्पादकता बढ़ सके तथा उनको इस तरह से मदद की जाए कि व्यापार की अर्थव्यवस्था में भाग ले सके तथा गरीबों के साथ भेदभाव कम हो; गरीबों के स्वास्थ्य एवं शिक्षा में निवेश किया जावे जिससे उनके द्वारा अर्थव्यवस्था के विकास में भागीदारी के मौकों को बढ़ाया जा सके। ये सब प्रयास शामिल हैं।

चतुर्थत:, वर्तमान स्थिति (क) जहां पर मुट्ठी भर विकसित देश जिनके अन्दर सिर्फ विश्व की चौथाई जनसंख्या रहती है और दुनिया के संसाधनों का 80 प्रतिशत उपभोग कर लेते हैं इससे विश्व में असमानता है और 20 प्रतिशत साधन बाकी विश्व

के लिए जिसमें पूरे विश्व की 3/4 जनसंख्या 125 विकासशील देशों में रहती है। (ख) गरीब और अमीर के बीच में हर देश में बहुत बड़ी खाई विशेषत: विकासशील देशों में और (ग) लिंग-विभेद जिसके जरिए 50 प्रतिशत आबादी का मानवाधिकार से वंचित किया जाता है जो भी बहुत ज्वलन्त वैश्विक बिन्दु है।

पंचमत:, मुजरिमों के अन्तर्राष्ट्रीय गिरोह पैदा हो रहे हैं वह विश्व के लिए नई पैदा हो रही चुनौती है। इस तरह के गिरोह करीब 500 बिलियन पौण्ड आपराधिक कृत्यों से हस्तान्तरण करते हैं या पूरे विश्व की जी.डी.पी. (यानि 25000 बिलियन) का 2 प्रतिशत, यह बात आई.एम.एफ. के अभी-अभी किये हुए सर्वे से साबित हुई है। यह आपराधिक हस्तान्तरण मुद्रा उन लोगों को मदद करती है जो किसी विशेष देश में गैरकानूनी तरीके से धन कमाते हैं और ऋणात्मक रूप से ये घरेलु और अन्तर्राष्ट्रीय संसाधनों के वितरण को प्रभावित करते हैं और समष्टी अर्थशास्त्र को भी प्रभावित करती है।

षष्ठत:, (अ) संयुक्त राष्ट्र में 5 परमाणु हथियार युक्त बड़ी ताकतों को विशेष वीटो अधिकार का अस्तित्व (ब) वैश्विक वित्तीय संस्थानों जैसे आई.एम.एफ. और विश्व बैंक में वोट का अधिकार उनके वित्तीय भाग के आधार पर होने का अस्तित्व तथा पांच वीटो वाले राज्य के पास में आणविक हथियारों का एकाधिकार निहित होना। ये सब अति अन्यायपूर्ण प्रतिमान हैं जिन्होंने पूरी दुनिया में एक इकाई एक वोट के विश्व मताधिकार के नियम का भी उल्लंघन किया है।

सप्तमत:, मौद्रिक शक्ति का प्रादुर्भाव और इसके क्रियात्मक रूपों (उदाहरण के तौर पर राजनीतिक भ्रष्टाचार, घूसखोरी, सट्टा बाजारी, काला धन इत्यादि) जो करीब करीब हरेक देश चाहे वह विकसित है या विकासशील, में हैं तथा धन और बाहुबल का प्रभुत्व के साथ में पुराने समय से स्थापित इसी तरह के क्रियाकलापों जो विकासशील देशों में है यह मानव समाज के लिए खतरा है जब तक कि इन गलत मापदण्डों को समाप्त नहीं किया जाता मानव समाज पूर्ण गति से विकास नहीं कर सकता।

IX

10. ये विश्व की वास्तविकताएं हैं, इनके प्रति हम किस तरह से प्रतिक्रिया करें? तार्किक उत्तर तो यह है कि हम द्विपक्षीय एकीकृत सामाजिक प्रक्रिया को अपनाएं जो एक तरफ तो सही को अपनाए और दूसरी तरफ गलत का बहिष्कार करें।

11. एक सही सामाजिक प्रक्रिया जो अपने सिद्धान्त, व्यवहार और संगठन के साथ एक तरफ प्रकृति और समाज के हितों का संतुलन करे और दूसरी तरफ समाज के अन्दर अन्तरनिहित विभिन्न सामाजिक इकाइयां (यानि समाज और दूसरी सामाजिक

संस्थानों के बीच, व्यक्ति और समाज के बीच, सामाजिक संस्थाओं और व्यक्तियों के बीच और एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति) के बीच के हितों का संतुलन करे, जो वर्तमान विश्व की वास्तविकता के अनुरूप है, जो इस बात के लिए स्थापित है कि वर्तमान खराब विश्व व्यवस्था का संक्रमण विवेकपूर्ण, शांतिपूर्ण और न्यायपूर्ण व्यवस्था में हो।

12. गलत भी सामाजिक प्रक्रिया है, अपने विशिष्ट सिद्धान्त, व्यवहार और संगठन के साथ जो विशेषाधिकार आधारित समाज को या तो पैदा करते हैं या चलायमान रखते हैं तथा मुट्ठी भर लोगों के स्वार्थों को साधते हैं और बहुसंख्यक के हितों को टालते हैं। इसका स्पष्टत: परिणाम होगा कि जो विशेषाधिकार युक्त लोग प्रकृति के संसाधनों पर अतिक्रमण करेंगे और इस तरह से हमारी पृथ्वी का प्राकृतिक सामाजिक संतुलन को विकृत करेंगे।

13. स्पष्ट रूप से ये पारम्परिक और वर्तमान सामाजिक 'सत्य' जो ताकत के सिद्धान्त पर और बेईमानीपूर्ण व्यवहार पर आधारित है और अभी शीतयुद्ध की समाप्ति पर पूरे इतिहास में काम किया, अब अनुपयोगी होने की ओर हैं। इस तरह के पारम्परिक सत्यों के अन्दर 'जिसकी लाठी उसकी भैंस', 'साध्य, साधन की पवित्रता स्थापित करता है', 'युद्ध और प्यार में हर चीज जायज है' आदि। इन्हीं 'सत्यों' के आधुनिक रूपान्तरण निम्न हैं—राष्ट्रीय प्रभुत्ववाद, अधिनायकत्ववाद, केन्द्रवाद, आतंक का संतुलन, वर्गयुद्ध, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, उत्तर बनाम दक्षिण, दक्षिण-दक्षिण एकता, इत्यादि।

14. अनुचित विश्व व्यवस्था को न्यायप्रिय विश्व व्यवस्था में कैसे बदला जाए, पिछड़ा हुआ विश्व अग्रिम लोगों के समकक्ष कैसे हो? आज यह प्रश्न न तो ताकत से हल किया जा सकता है न खैरात से। पुरातन समय में तथा औद्योगिक युग में शासक वर्ग बहुरूपीय ताकत का इस्तेमाल सम्पदा पैदा करने में इस्तेमाल करते थे और कमजोर साधारणतया इसको भाग्य समझकर शांति से समर्पण कर देते थे। नए विश्व समाज में मानव संसाधन की सृजनशीलता और ज्ञान एवं व्यक्तिगत आदमी मूल्य बढाता है और सम्पदा पैदा करते हैं। विकसित मानव संसाधन की सामाजिक जरूरत ही अपने आप में पूरे विश्व के अन्यायपूर्ण नियमों, क्रियाकलापों को समाप्त करेगी। इसी तरीके से गरीबों का स्तर ऊँचा करेगी और शक्तिवरों का स्तर नीचा करेगी ताकि दोनों समान हो जाए। मगर यहाँ पर भी मानव-मानवीय होशियारी एक धूमकेतू पैदा करेगी।

अगर कोई देश आज पिछड़ा हुआ रहता है तो वह अपने प्रबंधीय कमजोरियों के कारण ऐसा है न कि संसाधनों की कमी के कारण या बाहरी दबाव के कारण। पूर्व और दक्षिण-पूर्व देशों के उदाहरण इस तथ्य को सत्यापित करते हैं। राष्ट्रीय असमानताएं और व्यक्तिगत सामाजिक असमानताएं, मुक्त मदद लेने से समाप्त नहीं होगी बल्कि

लोगों का सृजनशील और कुशल बनाने से होगी। कमजोर सामाजिक समुदायों की जिन्दगी अन्ततः उनके स्वयं के कौशल और संसाधन को विकसित करने से ही बदलेगी और इस दौरान उन लोगों को इस संक्रमणकाल में सामाजिक मदद दी जानी चाहिए।

15. उपर्युक्त तथ्यों के बाद यह आवश्यक है कि वर्तमान विश्व व्यवस्था को विद्यमान वास्तविकताओं से मेल खाते हुए कदम-ब-कदम एक पूर्ण प्रजातांत्रिक व्यवस्था में एक तर्क संगत और व्यवहार्य कार्यसूची के आधार पर एवं सर्वसम्मत अवधारणा के जरिए बदला जाए। सुधार के तरीकों में यह हो सकते हैं।

(क) सामाजिक समस्याओं को हल करते वक्त एक ही मानव समुदाय और तर्कसंगत मानववाद को एक बुनियादी अवधारणा के तौर पर स्वीकारना।

(ख) संयुक्त राष्ट्र और अन्य विश्व संस्थानों की पुनर्संरचना पूर्णतया प्रजातांत्रिक आधारों पर स्पष्ट समय सीमा में हो।

(ग) देशों के बीच क्षेत्रीय विवादों को शांतिपूर्ण बातचीत के जरिए द्विपक्षीय अथवा संयुक्त राष्ट्र की मदद से हल करना।

(घ) विभिन्न देशों के नागरिक झगड़े संवाद के जरिए हल हो जिसमें हर देश का यह दायित्व हो कि संयुक्त राष्ट्र को पूर्ण सूचनाएँ प्रदान करे।

(ड़) निशस्त्रीकरण की प्रक्रिया की पहल करना जिसमें समस्त आणविक हथियारों पर निषेध हो तथा समयबद्ध कार्यक्रम हो और इस संक्रमण काल में इन सारे हथियारों का नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र के पास रहे।

(च) मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों को विकसित किया जावे, जिसमें संयुक्त राष्ट्र की संविदाओं की पूर्ण पालना सुनिश्चित हो, जैसे मानवाधिकार, पर्यावरण, जनसंख्या, स्त्री-पुरुष समानता, अल्पसंख्यक, गरीबी, बेकारी, बच्चे, सामाजिक एकरूपता, और इसी तरह से सब चीजें शामिल हों।

(छ) एक विश्व आर्थिक परिषद की स्थापना संयुक्त राष्ट्र की प्रणाली के अन्दर ही हो, जो विश्व आर्थिक प्रणाली का सरलीकरण करे, जिसमें पार राष्ट्रीय निगम के लिए संहिता बनाना भी शामिल हो।

(ज) संयुक्त राष्ट्र आयोजित विश्व शिखर सम्मेलन एक संहिता बनाएं जो विश्व की सारी प्रजातांत्रिक संस्थाओं के द्वारा हर स्तर पर अनुपालित हो।

16. वाजिब और न्यायपूर्ण विश्व व्यवस्था तभी पैदा होगी जबकि विश्व के लोग सामाजिक बदलाव के लिए चेतनशील हों। लोगों के मस्तिष्क संज्ञान के रूपान्तरण के बिना समाज के अन्दर नई चीज घटित नहीं हो सकती। 10-10-96

❋ ❋ ❋

भारत के संकट की घड़ी

I

1. क्या भारत मानव समुदाय के साथ चल रहा है? भारत अपने स्वतंत्रता के 50 वर्षों बाद कहां खड़ा है? इसके पिछले पांच दशकों का रिकार्ड क्या रहा है जब विश्व में बहुत ही ज्यादा महत्व के कई सामाजिक परिवर्तन हुए है जैसे उपनिवेशवाद का टूटना, साम्यवादी धड़े का ढहना, पश्चिमी समुदाय का नीचे उतरना, विश्व आर्थिक विकास में एशियान और पूर्वी एशिया के देशों का शक्तिशाली कारक के रूप में उभरना।

II

2. जब भारत स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती मनाने की तैयारी कर रहा है, तब देश के भविष्य के बारे में लोगों का विश्वास संदेह, शक तथा डर के लिबास में ढका हुआ है। कोई भी निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि देश कहां जा रहा है। लोगों के अविश्वास का केन्द्रीय बिन्दु यह आम धारणा है कि भारत सामूहिक रूप से एक द्वितीय दर्जे का देश बन गया है।

यद्यपि भारतीय व्यक्तिगत रूप से विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट हैं।

3. भारत के द्वितीय दर्जे का देश होना इससे स्पष्ट है कि हम किसी में भी अव्वल नहीं है। उदाहरण के लिए सदैव झगड़े में रहे श्री लंका ने हमारे मुकाबले अपने नागरिकों को अच्छे जीने के हालात सुनिश्चित किए हैं। भारत से कभी बहुत ही पिछड़े रहे और 1960 के दशक में सैनिक चुनातियों के बावजूद थाईलैण्ड की हमारे से ज्यादा प्रति व्यक्ति आय है। 30 वर्षों तक गृह युद्ध और अमेरिका की बम वर्षा से नष्ट हुए वियतनाम हम से ज्यादा विश्वपूंजी को आकर्षित करता है। एक समय भारत जैसा ही पिछड़े चीन की उत्पादकता दर 11000 डालर प्रति वर्ष प्रति मजदूर है जबकि हमारी केवल 900 डालर तक सीमित है। यहां तक कि पाकिस्तान भी हमसे आगे है जिसकी प्रति वर्ष प्रति मजदूर उत्पादकता दर 1500 डालर है। हांगकांग जो 1950 में हमारे कलकत्ता शहर के बराबर था अब वह हमसे 30 गुणा ज्यादा प्रति व्यक्ति आय तक पहुंच गया है। छोटा सा सिंगापुर भारत से 35 गुणा ज्यादा पर्यटकों को आकर्षित करता है इसके बावजूद कि भारत की संस्कृति और भौगोलिक विविधता सिंगापुर से बहुत ज्यादा समृद्ध है। छोटे-छोटे देश जैसे अर्जेनटिना, सउदी अरबिया, नाईजिरिया, क्यूबा आदि हमारे 92 करोड़ के भारत देश से ज्यादा ओलम्पिक मेडल जीते हैं। हमने 30 वर्षों बाद केवल एक कांस्य पदक जीता है।

III

4. चौतरफा भारतीय परिस्थितियां जनता में अपने भविष्य के बारे में आम दु:खदाई चिन्ता को और मजबूत करती है। यह देश गम्भीर संकट की जकड़ में खड़ा है। प्रजातांत्रिक संस्थाओं में उलझन भरी स्थितियां मौजूद हैं। हर स्तर पर नैतिक मूल्य छिन्न-भिन्न हैं। कार्यपालिका और विधायिका सुन्न स्थिति में है। इस समय न्यायपालिका और पत्रकारिता ने राजनीतिज्ञों को जमानत देने में कोताही की है।

5. देवगौड़ा सरकार को चारों तरफ से मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है। शासन करने वाला संयुक्त मोर्चा जिन तत्वों से संगठित हुआ है उनकी समान विचारधारा नहीं है और विपरीत दिशाओं में एक-दूसरे को खींचते हैं। प्रधानमंत्री उस दल से वास्ता रखते हैं जिसका मुखिया विभिन्न घोटालों में गहराई तक उलझा हुआ है। जिसके एक के बाद दूसरा नेता संगठन छोड़ रहा है। उदाहरण के लिए (हैगड़े, मेनका, इरा सेजहियान, मुफ्ती सैयद, जयपाल रेड्डी आदि) वह उस राज्य से वास्ता रखते हैं जहां की सरकार लगातार सिरदर्द पैदा किये जा रही है (उदाहरण के लिए नदी जल विवाद, जो दो पड़ौसियों आन्ध्र व तमिलनाडु के साथ है) सरकार मुख्य आधारशिला यानि कांग्रेस एक के बाद दूसरा घोटाला खुलने से ज्यादा से ज्यादा बदनाम हो रही है।

6. मुख्य विरोधी पार्टी भाजपा में भी हर स्तर पर समस्याओं का भार है। वाजपेयी ने अभी ताजा प्रेस साक्षात्कार में यह स्वीकारोक्ति की है कि यह दल गुटबन्दी की शिकार है तथा विरोधाभासी खिंचाव और दबाव से ग्रस्त है तथा रणनीतिक रूप से दिशाहीन है। यह उन राज्यों में विशेष रूप से तकलीफ में रही है जहां यह शासन कर रही है यानि गुजरात, महाराष्ट्र, दिल्ली, राजस्थान इत्यादि। इसका लोकसभा में उपनेता जसवंतसिंह करवंचना का दोषी था तथा एक कांग्रेस आई एम.एल.ए. ने दिनांक 31.8.96 को बताया कि किस तरह से एक बेनामी सम्पत्ति की अवाप्ति और उसके रिकार्ड में आपराधिक हेराफेरी की।

7. इस तरह की तरल स्थिति में सामाजिक स्थायित्व निकट भविष्य में कैसे हो सकता है ऐसा कौन सोच सकता है।

IV

8. भारत की सबसे बड़ी असफलता क्या हुई? यह उसके द्वारा मानवीय व प्राकृतिक संसाधनों के विकास को नजरअंदाज करने में हुई।

(अ)

9. स्वतंत्रता के पांच दशाब्दी के बाद भी मानव संसाधन के विकास के अव्यव एक निराशाजनक स्थिति पैदा करते हैं। अभी तक आधा भारत निरक्षर है, 2/5 गरीबी

की रेखा के नीचे है, 1/4 भाग बिना पीने योग्य पानी की सुविधा के है, 3/4 भाग बिना उचित शौचालय के हैं, 2/5 बिना उचित चिकित्सकीय सुविधा के है, 1/3 भाग बिना मकान के हैं और 1/20 पूर्ण बेरोजगार हैं तथा 2/5 भाग अल्प रोजगार हैं।

10. 40 साल के लम्बे गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के बावजूद भी जो 8 पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान रहा, गरीबी के बारे में कोई भी आधिकारिक आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। विभिन्न अनुमानों के अनुसार गरीबी की रेखा के नीचे का प्रतिशत 25 से 40 प्रतिशत के बीच है।

11. 1966 की यू.एन.डी.पी. रिपोर्ट कहती है कि दक्षिण एशिया में भारत पाकिस्तान, बांगलादेश, नेपाल और भूटान की कुल आबादी के 20 प्रतिशत लोग अत्यन्त गरीबी की स्थिति में रहते हैं और 62 प्रतिशत से भी ज्यादा लोग उन परिस्थितियों में रहते हैं जो उनके भविष्य को विपरीत तरीके से प्रभावित कर सकते हैं। यह रिपोर्ट भारत को 174 कुल देशों में 135वें नम्बर पर स्थान देती है। जो पाकिस्तान से भी 2 नम्बर कम है।

12. पिछले 50 सालों में 57 करोड़ 80 लाख जनसंख्या की बढ़ोतरी ने भी कई तरह के गम्भीर सामाजिक तनावों को जन्म दिया है। (34 करोड़ 20 लाख 1947 में व आज 92 करोड़ हैं)।

(ब)

13. प्राकृतिक संसाधनों की स्थिति यानि जमीन, जंगल, पानी, जैव विविधता, प्रदूषण की स्थिति भी मानव से अलग नहीं है।

14. कुल पैदावार क्षेत्र यानि 22 करोड़ 60 लाख हैक्टेयर में से 37 प्रतिशत स्तरहीन हो गया है। जिसमें से 45 प्रतिशत तो बिल्कुल अनुत्पादक हो गया है भारत वन क्षेत्र में से आधा नंगा हो चुका है उसका परिणाम हुआ है कि करोड़ों टन मिट्टी बह गई है। पानी का जमाव, शार्पा और तेज बारिश के पानी से भी जो बकाया जोतने योग्य जमीन बची है उसको और नुकसान पहुंचा रहा है।

15. पानी की उपलब्धता भी लगातार कम हो रही है जिसका कारण बारिश के पानी का दुरुपयोग तथा भूजल पर अत्यधिक दबाव तथा दोहन है। पहले से ही चल रही गांवों और कस्बों में पानी की कमी खतरे का सूचक हो गई है। पानी की गुणवत्ता (चाहे बहता पानी, भूजल अथवा भूमि सतह पर हो) में लगातार गिरावट आ रही है।

16. जहरीले रसायनों का प्रयोग, मोटरों का परिवहन और कोयले का थर्मल प्लांटों में उपयोग और अन्य उद्योगों में प्रयोग हवा में और अधिक प्रदूषण बढ़ाता जा रहा है।

17. जंगलविहीनता, जमीन और पानी के स्तर में गिरावट व हवा में प्रदूषण ने भारत के जैविक संसाधन को भी खतरा पैदा कर दिया है। इनमें 45000 पादप और 75000 पशु पक्षी प्रजातियां शामिल हैं।

V

18. भारत की दूसरी सबसे बड़ी असफलता इसके राजनैतिक दलों व राजनीतिज्ञों के स्तरहीन होने की है। सत्ता की भूख, पैसे बटोरने, अपराधीकरण और किसी भी तरीके से काम निकालने की माफिया तकनीकी का प्रयोग आधारित राजनीति एक आपराधिक उद्योग बन गई है जो उन ऊंचे घाघ राजनीतिज्ञों द्वारा चलाई जा रही है। जो अपने आप को गांधी-नेहरू के वारिश कहते हैं तथा सत्यमेव जयते का लेबल लगाये हुए हैं।

19. वर्तमान साल के सिर्फ प्रथम नौ माहों में वृहत् राजनैतिक घोटालों के कई मामले उजागर हुए हैं। जिनमें से कुछ निम्न हैं—

(क) हवाला काण्ड (65 करोड़ रुपये), (ख) झारखण्ड मुक्ति मोर्चा रिश्वत काण्ड (3.5 करोड़), (ग) मकान आवंटन घोटाला (200 करोड़), (घ) यूरिया घोटाला (133 करोड़), (ड़) सुखराम का गैरेकानूनी धन रखने का मामला (3.5 करोड़), (च) पैट्रोल एवं गैस एजेंसियों के आवंटन में अनियमितताएं, (छ) बिहार में 1000 करोड़ का डामर घोटाला, (ज) बिहार में चारा व वर्दी का करोड़ों रुपयो का घोटाला आदि।

20. पिछले साल बोहरा कमेटी की रिपोर्ट ने कहा कि ''माफिया समानान्तर सरकार चला रहे हैं और राज्य रूपी संस्था को असंगतता की तरफ धकेल रहा है।'' बाद में रमेशचन्द्र कमेटी ने बोहरा कमेटी के नतीजों को तस्दीक किया।

21. लेकिन राजनीतिक आपराधिक मुद्रा व्यापार हमारे देश में एक नई घटना नहीं है। यह फलती फूलती रही है तथा अत्यधिक लाभ वाला धंधा शुरू से हो रहा है। जो निम्नलिखित उदाहरणों से देखा जा सकता है—

(क) 1950 का जीप घोटाला (216 करोड़ रुपये) जिसमें कृष्णा मेनन मुख्य रूप से संदेह में थे। (ख) 1956 में सराजुद्दीन का मामला जिसमें के.डी. मालवीय के खिलाफ सम्पत्ति पर गलत कब्जे का आरोप था। (ग) 1958 मुन्ध्रा मामला जो एल. आई.सी. को बोगस शेयर बेचने का था। (घ) 1971 में नागरवाला 60 लाख का स्टेट बैंक धोखाधड़ी मामला। (ड़) 1981 में एच.डी.डब्ल्यू. पनडुब्बी ठेका। (च) 1982 का ए.आर. अंतुले द्वारा सीमेंट घोटाला। (छ) 1983 में चुरहट लॉटरी काण्ड जिसमें अर्जुनसिंह मुख्य रूप से संदेहास्पद थे। (ज) 1987 फेयर फैक्स मामले में फेरा का उल्लंघन। (झ) 1987 में बोफोर्स तोप सौदा घोटाला 1600 करोड़ रुपये का।

22. उपर्युक्त सूची में सिर्फ कुछ नाम हैं जो आज जनता की जानकारी वाले मामले हैं। अभी तक 1947 के बाद भ्रष्टाचार के मामले जो अभी तक छिपे हुए हैं वे हजारों में हो सकते हैं। कई उदाहरण दिये जा सकते हैं जिसने भारतीय राज व्यवस्था को बीमार बना दिया। ज्यादा चतुर मुद्रा हड़पू राजनीतिज्ञ तो बिल्कुल छूट गये हैं क्योंकि उन्होंने अपनी कमाई विदेशों में भेज दी।

23. 1951 में शासकीय गौरवाला कमेटी ने लिखा था ''गम्भीर लांछन विशिष्ट प्रकृति के उन सरकार के मंत्री पदों को सुशोभित करने वाले लोगों पर जिम्मेदार पार्टियों द्वारा लगाए गये हैं, इस तरह के लांछन कई मौकों पर विधायिका में बहस के विषय रहे हैं। पूरा दल व पूरा मंत्रीपरिषद इन आपराधिक मंत्रियों को बचाने के लिए आगे आए तथा जो बहसें हुई वे या तो अधूरी रही या मतशक्ति से उनके पक्ष में समाप्त की.... जनता यह महसूस करती है कि प्रभावशाली व्यक्ति हमेशा सजा से बच जाते हैं।'' यह उद्धरण स्वयं अपने बारे में बोलता है। यह उन शुरूआती समय के बारे में बताता है जो भारतीय सम्भ्रांतों के अनुसार भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के समय के हैं। जो 'प्रजातांत्रिक गुणों' के 'गुरु' थे।

VI

24. भारत की तीसरी बड़ी असफलता इसका अकुशल आर्थिक प्रक्रिया रही है जो गुणात्मक और संख्यात्मक दोनों रूपों में उत्पादन की ज्यादा लागत, कम उत्पादकता, खराब गुणवत्ता, पुरानी व वातावरण विरोधी तकनीकी तथा मौद्रिक अनुत्पादनहीनता से चरितार्थ होती है।

25. यह गम्भीर मुसीबत है लगातार उच्च मौद्रिक घाटा जो कई सालों से हो रहा है, इसने इसकी कुल घरेलु उत्पाद (जी.डी.पी.) की विकास दर को मंद किया है क्योंकि जितना मौद्रिक घाटा बढ़ेगा उतनी ही मौद्रिक विकास दर कम होगी एवं क्योंकि जितनी अधिक विकास दर होगी उतना कम मौद्रिक घाटा होगा। विकास के स्रोत सबसे ज्यादा मौद्रिक घाटे से प्रताड़ित हुए हैं। वे राष्ट्रीय बचत एवं घरेलु विनियोजन हैं। यह लागत और मुद्रा की उपलब्धता और वास्तविक विनियम दर और अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा को भी प्रभावित करता है। ऐसा आई.एम.एफ. अध्ययन कहता है। आज भारत का मौद्रिक घाटा इसके कुल घरेलु उत्पाद के 10 प्रतिशत के बराबर है जो बहुत बड़ा आंकड़ा है।

26. विश्व बैंक के अनुसार भारत आंतरिक कर्ज जाल के किनारे पर खड़ा है। 1994-95 में भारत का कर्ज और ब्याज कुल जमा 106000 करोड़ था जिसके मुकाबले भारत की कुल कमाई 89000 करोड़ थी। इसी तरह से 1995-96 में भारत सरकार की कुल कमाई 110000 करोड़ थी जिसके खिलाफ ऋण और ब्याज

123000 करोड़ था। सरकार की उधार व कर्ज ने इस साल में अभी तक 117000 करोड़ का आंकड़ा छू लिया है।

27. भारत की अर्थ व्यवस्था की स्थिति पूर्ण रूप से खराब है अब जाहिरा तौर पर मंदी अनुभव हो रही है तथा विशेषज्ञों के अनुसार मंदी की प्रबल सम्भावना है।

VII

28. भारत की चौथी असफलता इसके विदेश व सुरक्षा नीति की रही है जिसका दोगला व्यवहार तथा प्रभुत्वशाली स्थितियां स्थापित करने के उद्देश्य से दुतरफा रही है। (अ) पड़ौसी देशों के साथ बड़े भाई की तरह का व्यवहार तथा (ब) बड़ी सैनिक व आर्थिक शक्तियों के साथ कनिष्ठ भागीदार की तरह रहा है। खास तौर पर अमेरिका के साथ।

29. सैनिक रूप से भारत विकासशील देशों में सबसे प्रमुख हथियार खरीददार रहा है। इसने 1947 से 1971 तक 24 साल के छोटे से समय के दरम्यान अपने पड़ौसियों से चार लड़ाइयां लड़ी हैं। आज भी दक्षिण एशिया पूरी दुनिया में सबसे ज्यादा खतरनाक क्षेत्र है।

VIII

30. भारत की पांचवीं बड़ी असफलता उसके व्यवहार के मापदण्डों का पतन है। सन्देहास्पद राजनीति, अकुशल अर्थ व्यवस्था, प्रभुत्ववादी रक्षा व्यवस्था व विदेश नीति के साथ संलग्न होकर यह एक तरफ तो सत्य, अहिंसा, शांति, प्रजातंत्र, विकास, समानता और न्याय की कसम खाता और दूसरी तरफ यह अपराध, फर्जीवाड़ा, उस्तादगी, दोगलापन और हिंसा में संलग्न है तथा सब तरह के बदमाशों को संरक्षण देता है। यह सब तरह के पुरातनवादी, जातिवादी, साम्प्रदायिकता को संरक्षण देता है और इस तरह का आमना-सामना करने का वातावरण पैदा करता है जो साम्प्रदायिक एवं जातिवादी झगड़ों में परिणित होते हैं।

IX

31. जाहिरा तौर पर हमारे देश की स्थिति जहां हमारे सामाजिक जीवन का हर पक्ष उल्टा दिखाई देता है। एक अवसादपूर्ण चित्र प्रस्तुत करता है।

32. हालांकि न्यायपालिका और पत्रकारिता ने चल रहे राजनैतिक संकट में सकारात्मक भूमिका अदा की है फिर भी इन दो संस्थाओं के द्वारा लगातार ऐसा करने की सोचना बहुत ज्यादा होगा जिसमें माफिया राजनीतिज्ञों को बहुत ढीलेपन से अकसर व्यवहार किया है। यह राजनैतिक संकट स्वयं राजनीतिज्ञों के परस्पर विरोधी राजनीतिक स्वार्थ का ही नतीजा है। इस बार ईमानदार कनिष्ठ न्यायधीशों ने कई मुकदमों में

कानूनी आधार लेकर जमानत देने में मदद नहीं की। पत्रकारिता ने आधे मन से व्यवहार किया।

क्या राजनीतिज्ञों की अनविज्ञा यह बताती है कि इस देश में कानून का शासन है? यह परिस्थिति का सकारात्मक चिह्न दर्शाती है। लेकिन कुछ ताजे संकेत- प्रधानमंत्री का भारत के मुख्य न्यायाधिपति से आधी रात को मिलना, कानून मंत्री का सी.बी.आई. को लेकर उसके वकील को पत्र लिखना कि वे नरसिंहराव की जमानत याचिका का विरोध नहीं करे तथा सर्वोच्च न्यायालय का ताजा निर्णय जिसमें नरसिंहराव का न्यायालय में पेश होने की छूट दी। नरसिंहराव की अनविज्ञा के लिए न्यायालय परिसर को बदलना, सी.बी.आई. के डायरेक्टर का बिहार घोटाले के बारे में क्रियाकलाप इत्यादि, भी इस बात में संदेह पैदा करते हैं कि कानून अपना काम करेगा।

X

33. हमारे राष्ट्रीय तकलीफों के लिए कई तरह के बहाने लिये जाते हैं। भारत की विशालता, विविधता, विभिन्नता, अल्पसंख्यकवाद, ऊंची जाति का प्रभुत्व (यानि दलित और पिछड़ी जातियों को समान अधिकार का निषेध) या अमीर-गरीब की खाई व साम्राज्यवादी षड़यंत्र इत्यादि और भी इसके कारण आम तौर पर बहाने हैं जो किसी भी क्षेत्र में हमारी दक्षता की कमी और पतन के कारण को स्पष्ट करने के लिए उद्धरित किये जाते हैं लेकिन इनमें से काई भी वास्तविकता के परिक्षण में टिकता नहीं है।

प्रथम वास्तविकता यह है कि न तो मानव संसाधन और प्राकृतिक संसाधनों की उपेक्षा, न माफिया राजनीति, न अकुशल अर्थव्यवस्था, दोगली विदेश व रक्षा नीति, न पतित व्यवहार के मापदण्ड, न तो हमारी विशालता के कारण, न विविधता के कारण हम पर आरोपित हुए हैं और न ही हम पर किसी बाहरी ताकत द्वारा थोपे गये हैं। ये सब हमारे खुद के सृजन हैं—राष्ट्रीय मॉडल के और इनके सृजनकर्ताओं और नेताओं के द्वारा पैदा किये हुए हैं।

XI

34. अल्पसंख्यकवाद के समर्थकों को कई बार विभिन्न राज्यों द्वारा जांच में रखा गया और यहां तक केन्द्र के द्वारा भी परिक्षण पर रखे गये। मगर उनके पास कुछ भी नया देने को नहीं हैं। अलावा गये बीते पहले से परिक्षण किये हुए और अपनाये हुए धार्मिक और साम्प्रदायिक मॉडल के, जो नेहरू वादी मॉडल के बुनियादी सिद्धान्तों से अलग नहीं यानि केन्द्रीयकृत राज्य व्यवस्था राजनीति द्वारा चलित अर्थव्यवस्था, सार्वजनिक उपक्रम, व्यवहार के संदेहास्पद मापदण्ड खास तौर से वोट बैंक राजनीति। पाकिस्तान विरोधी विदेश नीति और सैनिक शक्ति को लगातार मजबूत किया जाना।

35. इसी तरह का हश्र ऊंची जाति के प्रभुत्व और साम्राज्यवादी षडयंत्र के प्रतीपादकों का है। मण्डलवाद का सिद्धान्त और व्यवहार जो जातीय आधारित बदला लेने का जाति न्याय पर आधारित है। निम्न तीन तथ्यों के द्वारा बकवास साबित हुआ है—

पहला पचास सालों के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन जाति आरक्षण का लम्बा अनुभव जिसने इन जातियों के सिर्फ 15 प्रतिशत जनसंख्या को फायदा पहुंचाया है जिसने उनको ऊपरी और मध्य स्तर के अन्दर प्रवेश कराया है। जबकि 85 प्रतिशत लोग उस सीढ़ी के नीचे के स्तर पर वैसे के वैसे हैं। दूसरा, 1990 के मण्डलीकरण प्रक्रिया के बाद का व्यवहार जो वो का वो तीन मुख्य मॉडल जैसा ही है। जो बताता है कि दलित एवं पिछड़े जातियों के लोगों की परिस्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है और उनके राजनीतिज्ञ वैसा ही व्यवहार और वैसा ही मानदण्ड अपना रहे हैं जैसा ऊंची जातियों के सत्ता के दलाल मानदण्ड अपनाते थे। तीसरा, मण्डलीकृत सामाजिक न्याय एवं समानता की स्थिति और दलित एवं पिछड़ा वर्ग की बिहार, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, कर्नाटक और कुछ हद तक केरल एवं त्रिपुरा में स्थिति मुंह बोलती है।

36. यह पक्की बात है कि कोई भी पुराने सूत्र काम नहीं करेंगे। नए कार्यक्रम को अपनाने की जरूरत है जो पिछले अनुभव से सीख लें जो नई वास्तविकता पर आधारित हो तथा राष्ट्रीय और वैश्विक हो। नई वैश्विक वास्तविकताएं राष्ट्रों की अन्तरनिर्भरता है जिसका जरिया विभिन्न तकनीक एवं सामाजिक प्रक्रियाएं है तथा राष्ट्रीय सामाजिक वास्तविकता भारतीय समाज की विविधता है। ये दोनों वास्तविकताएं दोतरफा उत्तर मांगती है। पहला तात्कालीक उत्तर जो हमारे आपराधिक राजनीतिज्ञों से हमारी राजनीति को मुक्त करें तथा दूसरा दूरगामी उत्तर हो कि हम अपने भारत के अन्तरनिर्भर राज्य के रूप में पुनर्गठित करें।

XII

37. अपराधी राजनीतिज्ञों के गठजोड़ तोड़ने का मतलब हैं हमारी राजनीतिक प्रक्रिया को धन एवं गुण्डाशक्ति पर आधारित राजनीति से मुक्त करना। जो कभी साम्प्रदायिक तो कभी जातिवादी और सस्ती लोकप्रियता का रंग लिये होती है। सुधार के उपायों में निम्नलिखित हो सकते हैं—

(i) सभी प्रकार के चुनाव सरकारी खर्च पर हो।

(ii) सभी पार्टियों और उम्मीदवारों पर किसी भी प्रकार के चुनावी खर्च पर प्रतिबन्ध हो।

(iii) वापिस बुलाने का अधिकार हो।

(iv) सफल उम्मीदवार के लिए कुल वैध मतों का 50 प्रतिशत से अधिक होना जरूरी हो।

(v) पार्टियों को लोगों के प्रति जवाबदेही बनाना इसके लिए सभी पार्टियां सार्वजनिक तौर पर अपनी राजनीति का सम्बन्ध धर्म, जाति आदि से तोड़ने की घोषणा करे। वे अपने पदाधिकारियों का चुनाव हर दो साल में करे तथा अपना हिसाब-किताब की जांच मुख्य चुनाव आयुक्त द्वारा करवायें।

(vi) लोकसभा एवं विधानसभा की 50 प्रतिशत सीटों के लिए समानुपातिक प्रणाली शुरू की जाये।

(vii) चुनाव कानून, नियम और संहिता तोड़ने वालों के खिलाफ सख्त कानूनी प्रावधान हो।

(viii) स्वायत्त निगरानी आयोग (लोकपाल) का गठन हो जो प्रधानमंत्री सहित किसी भी केन्द्रीय अथवा प्रांत के चुने हुए प्रतिनिधियों के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच कर सके। साथ ही ऐसा आयोग प्रांतीय स्तर पर हो जो पंचायत एवं स्थानीय संस्थाओं के खिलाफ भ्रष्टाचार के मामलों की जांच करें।

(ix) सभी उम्मीदवारों के लिए अपने नाम निर्देशन पत्र के साथ ही स्वयं एवं अपने रिश्तेदारों की सम्पत्ति का ब्यौरा देने का प्रावधान कानूनी रूप से अनिर्वाय हो।

(10) न्यायविदों का एक आयोग हो जो नीचे से लेकर सर्वोच्च पदों के जजों के खिलाफ भ्रष्टाचार के मामलों की जांच-पड़ताल करें।

(xi) कानून में सूधार हो।

(xii) कार्यपालिका, न्यायपालिका, व्यवस्थापिका, प्रशासन, पार्टियों, रेडियो, दूरदर्शन, समाचार-पत्रों तथा गैर सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) के लिए आचार संहिता का निर्माण हो।

(xiii) लोगों को सूचना का अधिकार हो।

(xiv) सभी गैरलोकतांत्रिक कानून जैसे सरकारी गोपनीयता कानून, अदालत की अवमानना कानून, जनप्रतिनियों को विशेषाधिकार, सेनाओं को कोर्ट मार्शल का अधिकार, निरस्त हो।

(xv) प्रशासन में राजनीतिक हस्तक्षेप पर रोक हो।

(xvi) रेडियो एवं दूरदर्शन का संचालन एक स्वायत्त संस्था को सौंपा जाये।

(xvii) सभी निरोधक कानूनों को मंसूख किया जाये।

(xviii) जेलों का सुधार हो।

(xix) सभी प्रकार के आरक्षण का आधार गरीबी हो, जाति और धर्म नहीं।

(xx) अल्पसंख्यकों के साथ सभी प्रकार के भेदभावों को समाप्त किया जाये।

(xxi) गैर सैनिक विकास रणनीति को प्रोत्साहन हो।

(xxii) गरीबी, अशिक्षा, तर्कसंगत दिशा की मुफ्त शिक्षा और गरीबों को चिकित्सा सहायता, आवश्यक वस्तुओं को उचित मूल्य पर देना, स्त्री-पुरुष समानता, जीने लायक मजदूरी आदि, जैसी जनसमस्याओं को सम्बन्धित लोगों की सक्रिय भागीदारी से हल करना हो।

(xxiii) राज्य का धर्म और जाति से सम्बन्ध विच्छेद करना।

(xxiv) राज्य की सभी संस्थाओं एवं उनके सदस्यों के लिए कानून के राज की पालना को सुनिश्चित करना।

(xxv) तर्कसंगत मानवीय सोच और लोकतांत्रिक व्यवहार लोगों में पैदा करना एवं टिकाऊ लोकजीवन को प्रोत्साहन देना।

XIII

38. एक अन्तनिर्भर राज्य के रूप में भारत के पुनर्गठन करने का दीर्घकालीन प्रत्यु त्तर का अर्थ है हमारे मॉडल को वैश्विक एवं राष्ट्रीय नयी वास्तविकताओं के अनुसार बनाना। इस मॉडल के आवश्यक तत्व निम्नलिखित हो सकते हैं—

(क) **आम अवधारणा**-चौतरफा तथ्यों पर आधारित वैज्ञानिक वास्तविकतावाद

(ख) **सामाजिक अवधारणा**-अन्तर्राष्ट्रीय अथवा तर्कसंगत मानवतावाद

(ग) **सामाजिक उद्देश्य**-भारत में एक न्यायिक और उचित सामाजिक व्यवस्था कायम करना तथा दुनिया एक तरफ प्रकृति अनुकूल और दूसरी तरफ लोक हितैषी हो।

(घ) **लोकतांत्रिक व्यवस्था और लोगों का शक्तिकरण**

(i) सभी आंतरिक विवादों को बातचीत से हल करना।

(ii) सभी प्रांतों को अधिकतम स्वायत्तता देकर और पंजाब, नागालैण्ड, मिजोरम एव उत्तर-पूर्व क्षेत्र के कुछ अन्य प्रांतों को भारतीय संघ में विशेषाधिकार के साथ भारत में पूर्ण संघीयकरण लागू करना।

(iii) ऊपर से लेकर नीचे तक शक्ति का कदम-ब-कदम विकेन्द्रीकरण करना।

(iv) झारखण्ड, विदर्भ, तैलंगाना, उत्तराखण्ड, गोरखालैण्ड, छतीसगढ़ आदि क्षेत्रों में जहां लोग लम्बे समय से मांग कर रहे हैं नये प्रांतों का गठन करना।

(v) सभी कार्यालयों को खुला और पारदर्शी बना कर लोगों के प्रति जवाबदेही

बनाना।

(vi) नीचे से लगाकर उच्चतम स्तर तक कदम-ब-कदम लोगों को निर्णय लेने की प्रक्रिया में सम्मिलित करना।

(vii) लोगों के सम्पूर्ण लोकतांत्रिक एवं मानवीय अधिकारों को सुनिश्चत करना।

(viii) सभी प्रकार के सामाजिक विभेदों, उदाहरणत: अमीर-गरीब, लिंग असमानता, शहरी-ग्रामीण, शिक्षित-अशिक्षित, जातीय, नृवंशीय या धार्मिक और विकसित-अल्पविकसित देशों के भेदों को मिटाकर धीरे-धीरे सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करना।

(ड़) **टिकाऊ विकास—**

(i) पर्यावरण की गुणवता को सुधारना (यानि, जंगल भूमि, पानी, हवा आदि)।

(ii) भौतिक संसाधनों का टिकाऊ उपयोग बनाना तथा इस संदर्भ में एक कार्य योजना तैयार करना।

(iii) प्रभावी जनसंख्या नियंत्रण के साथ मानव संसाधनों को एक कार्य योजना के जरिये विकास करना।

(iv) भौतिक एवं मानवीय संसाधनों के विकास की कार्य योजना को लागू करने के लिए लोगों को प्ररित एवं सम्मिलित करना।

(v) प्रदूषण मुक्त प्रकृति अनुकूल एवं मानव हितैषी तकनीकी अपनाना।

(vi) भारतीय आर्थिकता का ग्लोबलाईजेशन करना और बाजार व्यवस्था एवं सरकारी योजना के न्यायिक समिश्रण द्वारा इसकी उत्पादकता को बढ़ाना।

(vii) निगम क्षेत्र की संरचना का लोकतांत्रिककरण करना और पार राष्ट्रीय निगमों (टी.एन.सी.) के लिए संहिता लागू करना।

(viii) एक उचित मजदूरी (वेतन) प्रणाली को लागू करके धीरे-धीरे एक समान आर्थिक वितरण प्रणाली सुनिश्चित करना।

(च) **क्षेत्रीय सुरक्षा एवं विकास—**

(i) त्रिपक्षीय वार्ता के जरिये एक तरफ जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक सहराज्य (जिसे प्रान्त के विदेश, रक्षा और मुद्रा के मामले सम्मिलित हो), स्थापित करना तथा दूसरी तरफ बाकी सभी मामले जम्मू-कश्मीर प्रान्त के पास इसकी आठों नृवंशीय-क्षेत्रीय पहचानों की पूर्ण स्वायत्तता के साथ, अधिकतम स्वायत्तता में हो।

(ii) पड़ौसी देश के साथ सभी विवादों को समाप्त किया जाए।

(iii) सार्क के विकास के लिए ऐसे उपाय करना जिससे यह एक साझा मुक्त व्यापार क्षेत्र बने, क्षेत्रीय सुरक्षा प्रणाली तथा एक मित्रवत राजनीतिक संघ बने।

(छ) **नैतिक मूल्य :** तर्कसंगत मानववादी सोच और लोकतांत्रिक व्यवहार को ऊँचा उठाना।

(ज) **विदेशी और सुरक्षा के मामले—**

(i) सभी देशों के साथ अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं मित्रता कायम करना।

(ii) एक इकाई एक वोट के आधार पर संयुक्त राष्ट्र एवं इसकी सभी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के पुर्नगठन हेतु कदम ब कदम मांग करना।

(iii) सभी आणविक हथियारों का पूर्ण विनाश एक सुनिश्चित समय में करना और इस संक्रमण काल में इनका नियन्त्रण (न सिर्फ भौतिक बल्कि संचालन) का अधिकार संयुक्त राष्ट्र के पास हो।

39. उपर्युक्त बताए गए उपाय एक तरफ हमें प्रकृति और समाज के हितों को संतुलित करने के योग्य बनायेंगे और दूसरी तरफ समाज के भीतर समाज एवं व्यक्ति के बीच, एक सामाजिक संस्था और अन्य सामाजिक संस्थाओं के बीच, सामाजिक संस्था एवं व्यक्ति के बीच तथा एक व्यक्ति का अन्य व्यक्ति के बीच के हितों को संतुलित करने के समर्थ बनायेंगे।

❋ ❋ ❋

आई.डी.पी. की ग्यारहवीं कांग्रेस

I

1. आई.डी.पी. की ग्यारहवीं कांग्रेस बीकानेर (राजस्थान) में 18 से 21 अक्टूबर 1996 को आयोजित की गई। इसमें जम्मू-कश्मीर, पंजाब, राजस्थान, उड़ीसा तथा बिहार से 158 डेलीगेटों एवं पर्यवेक्षकों ने भाग लिया, इनमें महिलाओं का प्रतिनिधित्व 10 प्रतिशत था। नेपाल आई.डी.पी. का डेलीगेशन भ्रातृत्व ग्रुप के रूप में शामिल हुआ। समाजवादी जन परिषद के नेता किशन पटनायक और कश्मीर पर जन पहल के संयोजक भवानी एकलव्य ने मेहमानों के रूप में भागीदारी की। इस कांग्रेस में हरियाणा, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, गुजरात तथा आन्ध्रा की पार्टी इकाइयों का प्रतिनिधित्व नहीं रहा।

II

2. कांग्रेस ने अपना एजेण्डा निम्नलिखित क्रम में स्वीकार किया—

(क) अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय परिस्थिति

(ख) पार्टी की संगठनात्मक लाईन एवं जन लाईन

(ग) भारत के अन्य हिस्सों में पार्टी का विस्तार

(घ) नाभा कांग्रेस के फैसलों (क्या फैसले थे तथा उन्हें कैसे पूरा किया) की रोशनी में केन्द्रीय एवं प्रान्तों की रिपोर्ट

(ड़) 1 फरवरी, 1997 के पंजाब चुनाव

(च) जम्मू कश्मीर की विधान सभा चुनाव की रिपोर्ट

(छ) 1997 के मध्यावधि चुनाव की सम्भावना

(3) 4 दिनों में कांग्रेस ने कुल 10 बैठकें कीं।

III

4. पहले दिन दो बैठकें हुई। इसमें अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के बारे में प्रस्तुत दस्तावेज पर विचार-विमर्श हुआ। विभिन्न वक्ताओं ने निम्मलिखित नुक्ते उभारे—

(क) हमेशा समस्या का विश्लेषण सही और गलत की खोज करने के दृष्टिकोण से करना चाहिए। सामाजिक घटनाक्रमों में किसी प्रक्रिया के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों को समझने पर जोर दिया जाना चाहिए।

(ख) सामाजिक सकारात्मक वह है जो विद्यमान सामाजिक वास्तविकताओं और उसकी दिशा से मेल खाती हो। पुराने पड़ चुके सामाजिक परिप्रेक्ष्य से जुड़ी विद्यमान सामाजिक वास्तविकता अपनी प्रासंगिकता खो रही है अथवा खो चुकी है परिणामत: ये सामाजिक नकारात्मक बनती है।

⋆ ज्ञान और कौशल दोनों महत्वपूर्ण है। सिद्धान्त और व्यवहार का उचित मेल हमारी उत्पादकता बढ़ाता है।

⋆ साधन और साध्य को हमेशा जोड़ा जाना चाहिए।

⋆ 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की धारणा अप्रासंगिक बनती जा रही है।

⋆ हमारी सामाजिक व्यवस्था जो प्रकृति और समाज के साथ गैर अनुरूपता की अवधारणा लिए है, इसे बदलने की आवश्यकता है।

⋆ स्वयं को बदले बिना विश्व को बदलने की बात एक तरफा है।

⋆ सत्य बहुआयामी है।

(ग) आई.डी.पी. तर्कसंगत मानवतावाद, भूमण्डलीकरण, पार राष्ट्रीय क्षेत्रीयवाद, अन्तरनिर्भर राष्ट्रवाद आदि को नए उभर रहे भूमण्डलीकृत सामाजिक जीवन की वास्तविकता मानता है।

⋆ 1945 में संयुक्त राष्ट्र का उभरना उस समय की सामाजिक जरूरत थी। आगे के दशकों की मांग नए सामाजिक आधार पर उसकी पुनर्संरचना करने की है।

⋆ नई सामाजिक वास्तविकताओं का उत्तर पुराने नुश्कों से देने से सामाजिक बीमारियां पैदा होती है।

⋆ विश्व के विकास की प्रक्रिया सकारात्मक दिशा में कुछ इधर-उधर की नकारात्मक घटनाओं के साथ बढ़ रही है।

⋆ दुनिया कदम-ब-कदम सीमाविहीन दुनिया की तरफ बढ़ रही है।

IV

5. अगले दिन कांग्रेस ने राष्ट्रीय परिस्थिति वाले दस्तावेज को हाथ में लिया, भागीदारों ने दो बैठकों में इस पर बारीकी से विचार-विमर्श किया। इस बहस में निम्नलिखित नुक्ते आगे आए—

(क) समाज दो तरफा अन्तरक्रिया से आगे बढ़ता है। वह है एक तरफ प्रकृति और समाज के बीच और दूसरी तरफ समाज के भीतर विभिन्न इकाइयों (यानि समाज और व्यक्ति के बीच, प्रत्येक सामाजिक संस्था और समाज के बीच, सामाजिक संस्था और व्यक्ति के बीच, व्यक्ति और अन्यों) के बीच अन्तरक्रिया।

(ख) आई.डी.पी. की आम अवधारणा वास्तविकतावाद है, जबकि इसका सामाजिक परिप्रेक्ष्य तर्कसंगत मानवतावाद है। मानवतावाद अकेला बिना तर्कसंगतता के वर्तमान आम वास्तविकता से निपटने के लिए अधूरा है।

(ग) प्रकृति, समाज पर क्रिया-प्रतिक्रिया विभिन्न प्रक्रियाओं पर्यावरण, वैज्ञानिक धारणाओं और तकनीकी औजारों द्वारा करती है। ये सभी समाज से इन तीनों

प्रक्रियाओं द्वारा पैदा किए गए विशिष्ट श्रम विभाजन की मांग करते हैं। समाज प्रकृति पर क्रिया-प्रतिक्रिया श्रम विभाजन की विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा करता है।

(घ) हाल ही के प्रकृति-सामाजिक क्रिया-प्रतिक्रिया ने सामाजिक जीवन को भूमण्डलीकृत कर दिया है।

(ड़) भूमण्डलीकृत समाज अधिकतम लोकतांत्रिकरण या लोगों को ताकत हस्तान्तरित किये बिना सही ढंग से संगठित नहीं किया जा सकता।

(च) वर्तमान लोकतंत्र को सर्वसम्मति पर आधारित होना चाहिए, सर्वसम्मत अवधारणा एक तरफ प्रकृति के हितों के अनुकूल तथा दूसरी तरफ समाज के हितों की पूर्ति हेतु सर्वोत्तम उचित रास्ता है।

(छ) दुनिया में सर्वसम्मत आधारित नियम सम्मिलित किये जाने के लिए यह आवश्यक है कि समाज वाजिब एवं न्यायोचित सिद्धान्तों पर आधारित हो जो दुनिया में सभी असमान सामाजिक कारकों—अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष, ग्रामीण-शहरी, शिक्षित-अशिक्षित, विकसित-अविकसित देशों इत्यादि को मिटा कर समानता लाए।

(ज) आज मानव जाति के समक्ष प्रस्तुत चुनौतियों को हल करने के लिए तनावपूर्ण कार्यशैली का रास्ता उचित नहीं है।

(झ) वर्तमान सामाजिक वास्तविकताएं दिखाती हैं कि पार्टी आधारित लोकतंत्र नयी पैदा हुई सामाजिक जरूरतों—लोगों को ताकत का हस्तानान्तरण, टिकाऊ विकास, जो एक तरफ मानव संसाधनों के विकास की आवश्यकता है तथा दूसरी तरफ भौतिक संसाधनों के विकास की जरूरत बताता है—को पूरा नहीं कर सकता। यह बदले में पार्टी आधारित लोकतांत्रिक मॉडल की जगह लोगों पर आधारित संरचना चाहता है। एक ऐसी संरचना जो लोगों को निर्णय लेने की ताकत देता है न कि ताकत पार्टियों को हस्तांतरित करें। लोगों को ताकत का हस्तांतरण और पार्टियों से ताकत छीनने की प्रक्रिया धीरे-धीरे क्रमिक चलेगी जिसमें कई साल लगेंगे।

(ञ) लोगों को ताकत का हस्तांतरण का मतलब उनका मानसिक के साथ-साथ भौतिक विकास करना या उनको राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से सबल बनाना है। पर्यावरण, स्त्री-पुरुष समानता, जनसंख्या नियंत्रण, परमाणु हथियारों के विनाश, गरीबी उम्मूलन, मानवाधिकारों आदि पर पहले से चल रहे आंदोलन लोगों को सबल बनाने की प्रक्रिया की तरफ कदम है।

(ट) अधिनायकवाद, स्वतंत्र बाजारवाद, केन्द्रीयकृत राज्य योजना, अति उपभोक्तावाद इत्यादि सभी एकतरफा है और नयी सामाजिक जरूरतों की रोशनी में इनकों तार्किक बनाने की आवश्यकता है।

(ठ) भारत की सबसे बड़ी गलती मानवीय एवं भौतिक संसाधनों के विकास

की उपेक्षा करना है। यह उपेक्षा इसके बहुमतवादी राष्ट्रवाद, केन्द्रीयकृत सामाजिक व्यवस्था, बाहुबल और धनबल पर आधारित राजनीति, अदक्ष आर्थिक कार्यशैली और धूर्ततापूर्ण व्यवहार के मानदण्ड की दोषपूर्ण धारणा का नतीजा है।

(ड) जब अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति सकारात्मक बन रही है तब भारत की तस्वीर निराशाजनक है जो राजनीति के अपराधीकरण, कमजोर आर्थिक कारगुजारी और पतित व्यवहार के मानदण्ड से चरित्रित होती है।

(ढ) भारतीय समाज के सामने प्रस्तुत चुनौतियां जैसे सामाजिक बिखराव, जम्मू-कश्मीर और अन्य जगहों पर लड़ाकूपन, बढ़ रही असमानताएं, सामाजिक हिंसा, भ्रष्टाचार आदि का उचित जवाब के लिए व्यापकता आधारित जन आंदोलन की जरूरत है। एक लोकतांत्रिक आंदोलन जो सभी गरीब, वंचित और कमजोर तबकों को शामिल करें, आज पहला मुख्य कार्य है।

6. तीसरी बैठक रात 9 से 12 बजे तक चली जिसमें दस्तावेज के प्रत्येक पैरा का अध्ययन किया गया।

V

7. तीसरे दिन कांग्रेस ने तीन बैठकें की।

8. पहली बैठक में (क) दो दस्तावेज, अन्तर्राष्ट्रीय और सामाजिक परिस्थिति के बारे में उठाये गये सवालों को संकलित किया (ख) केन्द्रीय एवं प्रांतों की रिपोर्ट को सुना गया और उन पर बहस की गई तथा (ग) पार्टी निर्माण एवं जन संगठन के विषय पर विचार-विमर्श हुआ।

9. दोपहर की बैठक में (क) दो दस्तावेजों को पढ़ने एवं बहस में उठे सवालों को हल किया गया और सदन द्वारा दोनों दस्तावेजों को पारित किया गया। (ख) पार्टी निर्माण और जन संगठन के विषय को लिया गया। इनमें वक्ताओं ने निम्नलिखित बिन्दुओं पर जोर दिया—

(क) सभी स्तरों पर पहल और जांच पड़ताल की कमी।

(ख) सभी सदस्यों की वैचारिक, व्यावहारिक और संगठनात्मक चेतना की गहराई होने की आवश्यकता।

(ग) पार्टी में ट्रेड यूनियनवाद की नई समझ को पैदा करने की जरूरत ।

(घ) पार्टी पत्रिका पर उचित विचार-विमर्श एवं इसको फैलाने के महत्व की उपेक्षा।

(ड़) पुराने सदस्यों के विकास एवं नये भर्ती करने की नासमझी।

(च) सदस्यों की समस्याओं के प्रति ध्यान नहीं देना और उनकी पूरी क्षमता का पूर्ण उपयोग नहीं लेना।

10. रात की बैठक में 9 बजे से रात 12 बजे तक दो सवालों पर ध्यान दिया गया (क) महिला संगठन बनाने के बारे में (ख) जम्मू-कश्मीर के विधान सभा चुनावों की रिपोर्ट। महिला संगठन बनाने के बारे में चार नुक्तों को तय किया गया।

(अ) प्रत्येक स्टेट यूनिट को हमारी सभी महिला सदस्यों और हमदर्दों को पार्टी प्रोग्राम और संविधान की बुनियाद पर चेतन करने का काम हाथ में लेना चाहिए।

(ब) इसे सभी महिला सदस्यों और हमदर्दों की एक स्टेट कांफ्रेस आयोजित की जानी चाहिए।

(स) प्रत्येक पार्टी इकाई नीचे से लेकर उच्च स्तर तक अपनी स्थिति के अनुसार महिला सदस्यों एवं हमदर्दों के जरिये महिला संगठन बनाने का कार्य करना चाहिए।

(द) महिला संगठन गैर सरकारी संगठन जैसा हो या स्वतंत्र यह आगे विचार-विमर्श का विषय है।

VI

11. 21 अक्टूबर, 1996 को मात्र एक बैठक हुई। पार्टी निर्माण एवं जन संगठन का मसला विभिन्न दृष्टिकोणों से विमर्श हुआ। इसमें निम्नलिखित बिन्दु उभरे—सदस्यों की विभिन्न सामाजिक प्रक्रियाओं के बारे में अध्ययन की कमी, इकाइयों का अपने सदस्यों एवं हमदर्दों के लिए ठोस कामों को निकालने की कमी, जन समस्याओं की उपेक्षा, लोगों को जन समस्याओं पर संगठित करना एवं उनकी आम जन चेतना को ऊंचा उठाना, संचार माध्यम की उपेक्षा, पार्टी निर्माण एवं जन संगठन बनाने के काम को कम आंकना।

12. निम्नलिखित सैद्धान्तिक बिन्दुओं ने विशिष्टता हासिल की—

(क) सिद्धान्त, व्यवहार और संगठन एक ही प्रक्रिया के तीन तत्व हैं, वे एक ही एकीकृत सम्पूर्ण का निर्माण करते हैं और इसे कोई भी एक तत्व अन्य दो से अलग नहीं किया जा सकता।

(ख) अमेरिका की विश्व पुलिस की तरह की कार्यशैली उसके प्रभुत्व के सिद्धान्त से निकटता से जुड़ी है।

(ग) कांग्रेस का केन्द्रीयतावाद उसके रूढ़िवादी बहुमतवादी राष्ट्रवाद से निकला है।

(घ) हमारी पार्टी के मानदण्ड तनाव शैथल्य, बातचीत और समझौते, सर्वसम्मत, आत्म विवेचनात्मक आचार, उचित अहम प्रबन्ध आदि हमारे आम सिद्धान्त तर्कसंगत मानवतावाद सह वैज्ञानिक वास्तविकतावाद से निकले हैं।

(ड़) वर्तमान सामाजिक वास्तविकता को दृष्टिपात करते वक्त यह जरूरी है

कि सामाजिक ताकतों का विश्लेषण ऐसे करें कि कौनसी ताकत ऊपर की तरफ जा रही है। साथ-साथ यह देखें कि कौनसी ताकत नीचे की तरफ जा रही है। प्रक्रिया समय ले सकती है लेकिन उभरते और पतन की ओर जाते सामाजिक रुझानों के पहचान की आवश्यकता है, उभरते सामाजिक रुझानो का पक्ष पोषण होना चाहिए। जबकि पतन की ओर जाने वाले रुझानों को छोड़ा जाना चाहिए। प्रासंगिकता और अप्रासंगिकता विकसित और कमजोर हो रहे सामाजिक रुझानों से जुड़ी है।

(च) सदस्यों द्वारा की गई गलतियों को बढ़ाना नहीं चाहिए और हमेशा वैचारिक राजनैतिक साधनों द्वारा उनका उपचार किया जाना चाहिए।

(छ) हमारी कमजोर कारगुजारी का क्या कारण है? इसका कारण निम्नलिखित में से एक हो सकता है। या तो हमारा सामाजिक सिद्धान्त दोषपूर्ण है या सिद्धान्त के बारे में हमारी समझ हवाई है और हमने कार्यकलाप और संगठन की एक ऐसी शैली अपना ली है जो सिद्धान्त से मेल नहीं खाती। आइये, इस प्रस्तावना का तथ्यों की बुनियाद पर जांच करें, एक मुख्य (यानि तथ्य) यह रहा है कि हमारे निर्णयों और इनको लागू करने के बीच न पाटने वाली खाई है। हमारा आत्मविवेचन का आधार तर्कसंगतवाद होना चाहिए और इसका सिद्धान्त उपयोगितावाद (परिणामवाद) या 'कला की संभावना' और दोहरा मानदण्ड नहीं होना चाहिए।

13. लोकतांत्रिक प्रक्रिया को दो तरफा काम अपना कर तेज किया जा सकता है एक चेतन पार्टी का निर्माण करके और लोगों का जनतांत्रिक संगठन बनाकर। यह मुख्य काम एक लगातार व्यवहार और एक गहरी सैद्धान्तिक, व्यावहारिक और संगठनात्मक ज्ञान की मांग करता है।

14. प्रत्येक काम को करने के लिए कुछ प्रारम्भिक तैयारियों की जरूरत होती है किसी नये काम काम की शुरूआत की यह आवश्यकता है कि हम उसकी प्रारम्भिक तैयारियों को समझें।

15. हमारी आम आदत में हवा में किला बनाने की है यानि बड़ा निर्णय लेने की है जबकि करते बहुत ही कम।

16. अनिवार्य है कि हम हमारे बुनियादी आचरण के कथन का कड़ाई से पालन करें कि हमारी सोच को कहने से और कहने को करने से जोड़ें। और शायद हमारे सिद्धान्त, व्यवहार और संगठनात्मक कमजोरियों का यही बुनियादी कारण है।

❋ ❋ ❋

पंजाब विधानसभा चुनावों के बारे में आई.डी.पी. का नजरिया

I

1. पंजाब विधानसभा चुनाव की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। चुनाव सामाजिक जिन्दगी को प्रभावित करने और उसे बदलने के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होने के कारण ही किसी चुनावी प्रतिक्रिया से पहले गंभीर सोच-विचार की मांग करता है। इसलिए हमारी पार्टी लोगों के प्रति हमारी जिम्मेवारियों और जवाबदेही को समझते हुए इन चुनावों के बारे में सोच-विचार के लिए निम्नलिखित नुक्ते पेश करती है।

II

2. पहला नुक्ता यह है कि भारत की आजादी की 50 साला प्रक्रिया के बाद आज पंजाब कहां खड़ा है?

3. इस बात से कोई मना नहीं कर सकता कि इन पांच दशकों में कभी भी आज जैसी गंभीर समस्याओं का सामना नहीं किया है। और पंजाब को दरपेश समस्याओं ने पहले कभी भी आज जितना गंभीर रूप धारण नहीं किया। ना केवल 1947 के वक्त की समस्याएं (साम्प्रदायिकता, जातिवाद, महिला उत्पीड़न, गैर-बराबरी, बेघरबारता, बेरोजगारी, कीमतों में इजाफा, रिश्वतखोरी, भाई-भतीजावाद, आदि) वैसे की वैसे कायम है जबकि इनके साथ कुछ (जैसे कि भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, महंगाई, जैसे आटा, दाल, खाने वाले तेल, चीनी, नमक, दवाइयां, महिला उत्पीड़न, आदि) समस्याएं बहुत गंभीर रूप धारण कर चुकी है। इसके साथ ही कुछ नई समस्याओं (जैसे कि खाड़कूवाद, सरकारी खाड़कूवाद, मानवाधिकारों का उल्लंघन, काला धन, उच्च स्तर पर राजनीतिक भ्रष्टाचार, गंभीर घोटाले, आदि) ने इस सूची को और अधिक बड़ा कर दिया है।

4. विकास के क्षेत्र में नुकसानदायक कृषि नीति की वजह से जल प्रदूषित हो गया है, जमीन में गिरावट आई है, जमीन की उत्पादकता घटी है और नई मानवीय बीमारियां बढ़ गई हैं। नुकसानदायक बुनियादी ढांचे की नीति के चलते, पीने वाले पानी और बिजली, सड़कों के बनने, टेलीफोन एवं परिवहन के प्रबंध में बिगाड़ कर दिया है। नुकसानदायक औद्योगिक नीति ने खेती आधारित उद्योगों तथा बड़े उद्योगों के विकास को नजरअन्दाज किया है। नुकसानदायक आर्थिक नीति ने महंगाई, बेरोजगारी, गरीबी, गैर-बराबरी, आदि समस्याओं को भयानक हद तक बढ़ा दिया है। सामाजिक सेवाओं संबंधी नुकसानदायक नीति के साक्षरता, स्वास्थ्य सेवाओं, अशक्तता, वंचितपन,आदि मामलों को बिगाड़ दिया है। इसके अलावा केन्द्र की भेदभावपूर्ण नीति

ने पंजाब को नदी जल, पंजाब में पैदा की जा रही बिजली, पंजाबी भाषा वाले इलाके तथा चंडीगढ़, इसकी खेती उत्पादन का निर्यात, 7 सालों में खाड़कूवाद विरोधी मुहिम पर हुए खर्चे के कारण बढ़े कर्जे को माफ करने के वादे से केन्द्र का पीछे हटना, आदि मामले और अधिक बिगड़े हैं।

5. राजनीतिक प्रक्रिया में धनबल और बाहुबल आधारित साम्प्रदायिक एवं जातिवादी राजनीति ने पंजाब को पूरी तरह भ्रष्ट, अपराध-निर्देशित, हिंसक एवं पुलिस राज [जहां सी बी आई की जांच के मुताबिक कार्यकारिणी (नौकरशाही समेत शासक समूह) ने 2097 व्यक्तियों को निष्ठुर तरीके से कत्ल किया और उनका संस्कार कर दिया गया] के चंगुल में धकेल दिया है।

6. सामाजिक स्तर पर केन्द्रीकृत एवं एकाधिकारवादी नीति ने सिख भाईचारे के अन्दर यह भावना पैदा कर दी है कि केन्द्र की तरफ से उनके साथ इन्साफ नहीं किया गया और यह भी कि पंजाबी हिन्दुओं की बहुसंख्या ने या तो केन्द्र की बेइन्साफी के प्रति अन्ध समर्थन किया है या इनके प्रति चुप्पी साधे रखी है। यही राष्ट्रीय नीति है जिसने आज भी रिस रहे एक दशक लम्बे खालिस्तानी खाड़कूवाद एवं सरकारी खाड़कूवाद को जन्म दिया। इसने पंजाब के अन्दर 50 हजार मानवीय जानों को बलि चढ़ाया और करोड़ों रुपयों की जायदाद को नुकसान पहुंचाया है। सबसे बुरी बात यह है कि इसने पंजाब के दोनों मुख्य भाईचारों के बीच भावनात्मक तनाव पैदा कर दिया है। यह सच्चाई है कि इतिहास में सिख-हिन्दू भाईचारा साम्प्रदायिक तनाव से मुक्त रहा है। पिछले समय पर नजर डालें तो पता लगता है कि उस समय की राष्ट्रीय पार्टियों द्वारा अपनाये गये गलत राष्ट्रीय मॉडल की बदौलत उपजी साम्प्रदायिक त्रासदी ने सन् 1947 के विभाजन के समय 5 लाख से ज्यादा पंजाबियों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा था।

III

7. दूसरा नुक्ता यह है कि पंजाबियों की 1947 के बाद की मुसीबतों का जिम्मेवार कौन है?

8. 50 वर्षों का अनुभव दर्शाता है कि इसकी जिम्मेवारी नई दिल्ली के केन्द्रीकृत, एकाधिकारवादी प्रणाली तथा बहुसंख्यक राष्ट्रवाद की नीति है जिसका प्रतिनिधित्व—नेहरूवादी समाजवाद, हिन्दुत्व, मंडलवादी (चाहे यह दलित ट्रेड मार्का, ओबीसी मार्का या कम्युनिस्ट ब्रांड हो) इत्यादि बे-उसूले मॉडल—कर रहे हैं। आजादी के बाद की घटनाओं ने दर्शाया है कि अल्पसंख्यक साम्प्रदायिक राजनीति जैसे कि पंथक राजनीति ने ना तो सिख समुदाय के हितों की और ना ही समूचे पंजाबियों के हितों की सेवा की है। पंथक राजनीति में पंथक धड़ों को एकजुट रखने का गुण भी

मौजूद नहीं है जिससे वे अपने विरोधियों के खिलाफ साझा मोर्चा बनाने की बजाए खुद आपस में ही लड़ते रहते हैं। जब तक उपरोक्त मॉडल की नुमाइन्दगी करने वाली राष्ट्रीय और क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियां देश की राजनीतिक प्रक्रिया पर हावी रहेगी और राजसत्ता पर कब्जा कर रखेगी तब तक चल रही समस्याएं पंजाबी लोगों को दुख देती रहेगी।

IV

9. तीसरा नुक्ता है कि किया क्या जाए?

10. 11 लोक सभा चुनावों और पिछले सभी विधानसभा चुनावों का अनुभव सिखाता है कि केन्द्रवादी, एकाधिकारवादी, बहुसंख्यक राष्ट्रवाद, साम्प्रदायिक और जातिवादी नजरिया रखने वाली सभी पार्टियों को रद्द किया जाए। इन पार्टियों ने धनबल और बाहुबल के साथ-साथ अपराधीकृत एवं बेउसूले मापदंडों से राजनीतिक ताकत का उपयोग अपने फायदे के लिए करके हमेशा लोगों के साथ ठगी की है। मौजूदा समय की भारत की अपराधीकृत राजनीतिक प्रक्रिया और पंजाब की बिगड़ी राजनीतिक व्यवस्था को सिर्फ मूल्य आधारित चुनाव प्रक्रिया में ढाल कर सुधारा जा सकता है और लोगों के हितों की पूर्ति तभी की जा सकती है जब वोट ऐसे उम्मीदवार को डाला जाए जो अपनी पार्टी से ऊपर उठ कर सच्चाई का पल्ला पकड़े और सिद्धान्तों पर पहरा देते हुए लोक-पक्षी तरीके अपनाए। इस पैमाने पर चलते हुए वोट डालते समय तर्कसंगत उम्मीदवारों को प्राथमिकता दी जाए। यह और भी अच्छा रहेगा कि अगर ऐसा उम्मीदवार महिला, गरीब, दबे-कुचले या अल्पसंख्यक तबके से हो तो उसी का समर्थन किया जाए।

11. लगातार अनुभव ने दिखाया है कि एकाधिकारवादी राष्ट्रवाद, बेउसूली राजनीति तथा भ्रष्ट राजनीतिक अगुवाओं का समर्थन पंजाब में अस्थिरता पैदा करेगा और इसको नये राजनीतिक संकट में धकेल देगा।

12. इन चुनावों में आई.डी.पी. सिर्फ एक हल्के (बरनाला) में ही अपना उम्मीदवार खड़ा कर रही है। ऐसा इसलिए किया जा रहा क्योंकि हम समझते हैं कि पंजाब के अलग-अलग इलाके के लोगों की सेवा में आज तक संगठन बहुत कुछ कर नहीं पाया है।

13. आई डी पी की चुनावी मुहिम पंजाब के संबंध में इसके आम प्रोग्राम तथा लोगों के भिन्न-भिन्न तबकों (मजदूरों, किसानों, महिलाओं, बच्चों, विद्यार्थियों, नौजवानों, बूढ़ों, विधवाओं, अनाथों, नौकरीपेशा लोगों, भूमिहीनों, उद्योगपतियों, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति, शरणार्थियों, बेघरबारों, भूखे लोगों, भूमिदारों और बेसहारा लोगों, इत्यादि) की हालत बेहतर करने के लिए उनकी विशेष मांगों पर आधारित है।

पंजाब के प्रति पार्टी का आम प्रोग्राम नीचे दिया जा रहा है जबकि अलग-अलग तबकों को विशेष मांगों वाले संबंधित परचे अलग-अलग इश्तिहारों एवं परचों के माध्यम से लोगों तक पहुंचाये जायेंगे।

14. आम प्रोग्राम में नीचे लिखे बुनियादी मुद्दे शामिल हैं—

(क) पहला बुनियादी मुद्दा पंजाबी एकता का है जो कि तर्कसंगत मानवतावादी नजरिए से दुनिया में बस रहे 20 करोड़ पंजाबी लोगों की एकता पर आधारित है।

(ख) दूसरा बुनियादी मुद्दा पंजाब को भारत में विशेष दर्जा देने का है। विशेष दर्जा जम्मू-कश्मीर को 1952 में दी गई स्वयात्तता की तर्ज पर आधारित हो जिसमें कुछ विभागों को छोड़कर बाकी बची सभी ताकतें राज्य के पास होती हैं। यह स्वयात्तता (आटोनेमी) भारत को महासंघीय आधार पर पुनरजीवित करने की मांग करती है। यह विशेष दर्जा जहां एक तरफ सिख पहचान, हिन्दू सुरक्षा, पंजाबियों की भावनात्मक एकता एवं गांव से लेकर राज्य स्तर तक ताकतों के विकेन्द्रीकरण के सवालों को हल करेगा तो दूसरी तरफ पंजाब को अपनी खेतीबाड़ी को विश्व मंडी से जोड़ने, खेती आधारित उद्योगों को प्रोत्साहित करने, मानवीय संसाधनों को विकसित करने और इसके लोगों के लिए एक नया खुशहाली भरे युग के निर्माण का आधार तैयार होगा।

(ग) तीसरा बुनियादी मुद्दा टिकाऊ विकास (सस्टेनेबल डेवलपमेंट) का है, जिसका निशाना मौजूदा गैर-टिकाऊ नीतियों की जगह उचित नीतियों को अपनाते हुए मानवीय एवं कुदरती संसाधनों को विकसित करना है। यह टिकाऊ विकास मुख्य तौर पर बाजार रचनातंत्र के माध्यम से भौतिक साधनों का विकास करना तथा राजकीय दखलन्दाजी (जिससे कि गरीबी, बेरोजगारी, अनपढ़ता, बीमारियों तथा कमजोर मूलभूत ढांचा, खास करके ग्रामीण क्षेत्र में, इत्यादि की स्थिति सुधारने पर ध्यान केन्द्रित करेगी) के माध्यम से मानवीय स्रोतों का विकास करना।

(घ) चौथा बुनियादी मुद्दा लोगों को ताकतवर बनाने का है। यह लोगों के सामाजिक ज्ञान को विकसित करने में सहायता करना जिससे उनकी राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के संबंध में फैसला लेने में संभव हद तक भागीदारी कायम की जा सके।

(ड़) पांचवां बुनियादी मुद्दा कानून के राज की पक्की स्थापना करने का है जो कि हर स्तर पर सत्ता के दुरुपयोग और कुप्रयोग को रोकेगा।

(च) छठा बुनियादी नुक्ता है कि हर घर से कम से कम एक सदस्य को रोजगार देकर इनको गरीबी की रेखा के ऊपर उठाया जा सके और गैर बराबरी, बेरोजगारी, अनपढ़ता, बीमारियों आदि को घटाया जा सके।

(छ) सातवां बुनियादी मुद्दा रिश्वतखोरी के खात्मे का है। यह भ्रष्ट व्यक्तियों और भ्रष्ट व्यवहार के विरुद्ध कानूनी तथा जन रुकावटों से संभव हो सकता है।

(ज) आठवां परन्तु बहुत ही महत्वपूर्ण बुनियादी मुद्दा सब तरह के राजनीतिक टकरावों की जगह शांति की राजनीति को अपनाना आज ऐतिहासिक जरूरत है। शांति की यह राजनीति (संसार, दक्षिणी एशियाई क्षेत्र, राष्ट्रीय, पंजाब) सभी जगह अपनाने की जरूरत है। आज की दुनिया में शांति की राजनीति के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

अंत में आई डी पी पंजाब के समस्त वोटरों से अपील करती है कि वह हिंसा, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, अस्थिरता, लूट, भ्रष्टाचार, स्कैंडल, महिला उत्पीड़न, गरीबी, बेरोजगारी, महंगाई, बेघरबारता एवं इससे भी ज्यादा पर्यावरणीय प्रदूषण तथा बढ़ रही आबादी, आदि समस्याओं के हल के लिए पार्टी संबंधों से ऊपर उठ कर योग्य उम्मीदवारों को वोट डालें। दिनांक 8.1.1197

भारत के जनवादीकरण के लिए आई डी पी का एजेण्डा (कार्यक्रम)

हमारे राष्ट्रीय मसलों की वर्तमान अस्त-व्यस्त स्थिति हमसे दो तरफा प्रत्युत्तर की मांग करती है—यानि, एक तरफ हमारी राजनीतिक प्रक्रिया को विधि-विरोधी राजनीति (माफिया राजनीति) से मुक्त करने का अल्पकालीन प्रत्युत्तर देना और दूसरी तरफ भारत के पुनरगठन की दीर्घकालीन योजना बनाना।

अल्पकालीन एजेण्डा

1. हर प्रकार का चुनाव सरकारी खर्च पर हो।

2. समस्त पार्टियों के उम्मीदवारों पर किसी भी तरह के चुनावी खर्च पर पाबन्दी हो।

3. वोटरों को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों को वापिस बुलाने का अधिकार हो।

4. डाले गये वोटों का 50 प्रतिशत से अधिक वोट प्राप्त करना जीतने वाले उम्मीदवार के लिए जरूरी हो।

5. पार्टियों को लोगों के प्रति जवाबदेह बनाने के लिए उनको जनता के सामने अपनी-अपनी राजनीति को धर्म, जाति, आदि से अलग करने का हल्फ लेना, पार्टियों के पदाधिकारियों की हर दो साल बाद चुनाव करवाना एवं मुख्य चुनाव आयोग की निगरानी मे उनके खातों का लेखा-जोखा करवाना आवश्यक है।

6. लोक सभा और विधानसभाओं की 50 प्रतिशत सीटों के लिए अनुपातिक प्रतिनिधित्व चुनाव प्रणाली शुरू करना।

7. चुनाव कानून, नियम और आचार संहिता का उल्लंघन करने वालों के लिए सख्त कानूनी सजा की व्यवस्था करना।

8. एक आजाद लोकपाल स्थापित करना जिसके पास किसी भी स्तर के (केन्द्रीय और प्रान्तीय) जनता के प्रतिनिधियों (समेत प्रधानमंत्री) के खिलाफ भ्रष्टाचार के दोषों की जांच करने के अधिकार हो, इसके साथ ही इसी तरह का एक प्रान्तीय लोकपाल स्थापित करना जिसके पास पंचायत, म्युनिशपैलिटी, आदि के सदस्यों के खिलाफ भ्रष्टाचार के दोषों की जांच के अधिकार हों।

9. चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार की तरफ से अपनी और अपने रिश्तेदारों की जायदाद संबंधी घोषणा उनके नामांकन पत्रों के साथ दाखिल करने का कानून बनाना।

10. निचले पद से ऊपरी पद तक के न्यायाधीशों के खिलाफ भ्रष्टाचार की सभी शिकायतों की जांच के लिए कानूनी विशेषज्ञों का एक आयोग स्थापित करना।

11. कानूनों में सुधार करना।

12. कार्यकारिणी, न्यायपालिका, विधानपालिका, प्रशासन, पार्टियों, मीडिया एवं गैर सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) के लिए एक आचरण संहिता तैयार करना।

13. लोगों को सूचना प्राप्त करने का अधिकार देना।

14. सरकारी गुप्तता अधिनियम, न्यायालय अवमानना कानून, एम.पी./एम.एल.ए. के सारे विशेषाधिकार कानून, फौज में कोर्ट मार्शल करने के अधिकार, आदि सारे गैर लोकतांत्रिक कानूनों को खत्म करना।

15. प्रशासन में राजनीतिक दखलन्दाजी खत्म करना।

16. रेडियो और टी वी प्रसारण को एक स्वायत्त इदारे के हवाले करना।

17. सभी नजरबन्दी कानूनों को निरस्त करना।

18. जेल प्रबंध को सुधारना।

19. सारी श्रेणियों का आरक्षण गरीबी के आधार पर करना, ना कि धर्म या जाति के आधार पर।

20. अल्पसंख्यकों के खिलाफ सभी किस्म के भेदभाव को खत्म करना।

21. एक गैर-सैनिक विकास रणनीति अख्तियार करना।

22. गरीबी, अनपढ़ता, मुफ्त शिक्षा (तर्कसंगत दृष्टिकोण वाली), गरीबों के लिए स्वास्थ्य सुविधा, रियायती दरों पर जरूरी चीजें मुहैया करवाना, महिला-पुरुष समानता, जीवन निर्वाह योग्य मजदूरी, आदि जन-समस्याओं का निपटारा संबंधित वर्गों के लोगों की भागीदारी के साथ करना।

23. राज्य को धर्म और जाति से अलग करना।

24. राज्य की सभी एजेन्सियों एवं उनके सदस्यों को कानून के राज की अनुपालना करना यकीनी बनाना।

25. लोगों में तर्कसंगत मानवतावादी सोच और लोकतांत्रिक व्यवहार पैदा करना तथा एक सस्टेनेबल जीवन शैली को प्रोत्साहित करना।

आई.डी.पी. का दीर्घकालीन कार्यक्रम : इसका उद्देश्य भारत के वर्तमान पार्टी नेतृत्व वाली संसदीय व्यवस्था को जन नेतृत्व वाली लोकतांत्रिक व्यवस्था में तब्दील करना है।

महिला-पुरुष संबंधों पर आई.डी.पी. का दृष्टिकोण

मानव प्रजाति के विकास के लिए महिला-पुरुष संबंधों का सवाल अति महत्वपूर्ण मुद्दा है। हजारों साल तक मानव समाज में महिलाओं के साथ द्वितीय दर्जे के मानव जैसा व्यवहार किया गया। परन्तु आज मानवता इस निर्णय पर पहुंची है कि जब तक लिंग समानता कायम नहीं की जाती और पुरुष व महिला दोनों के बराबर अधिकार सुनिश्चित नहीं किये जाते तब तक मानव प्रजाति आगे विकास नहीं कर सकती। इसलिए, वर्तमान सामाजिक आवश्यकता मांग करती है कि सभी क्षेत्रों में महिलाओं का सशक्तिकरण किया जाए।

(i) महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए

1. किसी भी कुल, पीढ़ी और वंशावली की पहचान माता व पिता दोनों के संयुक्त नाम से रखने से उसूल को अपनाकर पितृसत्तात्मक व्यवस्था का खात्मा किया जाए।

2. लड़के और लड़की का बराबर दर्जा बहाल करना।

3. महिलाओं के लिए ऊपर से लेकर नीचे तक समस्त राजनीतिक संस्थाओं (समेत मंत्रीमंडल, संसद, उच्चतम न्यायालय, इत्यादि) में 20 साल के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण करना जिसमें से 10 प्रतिशत गरीबी की रेखा से नीचे वाली महिलाओं के लिए निश्चित करना।

4. महिलाओं के लिए प्रशासनिक सेवाओं तथा शैक्षणिक संस्थाओं में विद्यार्थी के तौर पर 30 प्रतिशत आरक्षण दिया जाए।

5. महिला और पुरुष के बीच गैर-बराबरी वाले सभी विद्यमान कानूनों को बदलना तथा सभी धार्मिक निजी कानूनों को न्यायपूर्ण बनाकर लिंग समानता कायम करना।

6. सारी जिम्मेवारी मां पर और सारे अधिकार पिता को देने वाली धारणाओं को बदलना।

7. मां और बाप दोनों को छोटे बच्चे के संरक्षक मानते हुए उनके एक दूसरे से अलग होने की सूरत में छोटे बच्चे के निजीत्व और सम्पत्ति दोनों दृष्टि से मां को ही संरक्षक माना जाए।

8. संतान उत्पत्ति संबंधी इच्छा, सूचना और स्वास्थ्य सेवाओं संबंधी (खासकर बच्चे की पैदाइश, माहवारी और गर्भ निरोधक) मसलों पर महिलाओं के मानवाधिकारों को परिभाषित किया जाए।

9 महिलाओं पर यौन हमले तथा हिंसा (घरेलू हिंसा सहित) के विरुद्ध समुचित कानून बनाना।

(ii) आर्थिक सशक्तिकरण के लिए

1. एक ऐसी कानूनी व्यवस्था कायम करना जो घर की सारी चल और अचल सम्पत्ति (कभी भी उद्योग, बैंक, कॉआपरेटिव सोसायटी, आदि की सदस्यता सहित) के ऊपर पति व पत्नी की साझी मिल्कियत को सुनिश्चित करना।

2. बेटे और बेटी को पैतृक और माता-पिता की सम्पत्ति में कानूनी तौर पर बराबर के अधिकार दिलाना।

3. सारे देशों की कुल पैदावार (GDP) में महिलाओं के घरेलू काम को गिनती में लाना।

4. साझी वैवाहिक सम्पत्ति के संबंध में महिलाओं द्वारा घर में किये जाने वाले कार्यों (जिनका मूल्य नहीं आंका जाता) को परिवार के जीवनयापन और कल्याण के लिए बराबर महत्व का स्वीकार करने को कानूनी मान्यता देना।

5. महिलाओं की आर्थिक संसाधनों, अवसरों और विकास के लाभों तक आसान पहुंच कायम करना।

6. गरीबी हटाओ प्रोग्राम, रोजगार बढ़ाओं स्कीमों तथा सार्वजनिक वितरण प्रणाली, इत्यादि को मजबूत करते हुए महिलाओं में पौष्टिकता के स्तर को सुधारना।

7. महिलाओं की ऋण प्राप्त करने की पहुंच को बढ़ाना।

8. महिलाओं को बुढ़ापा पेन्शन देना, महिला पर आधारित परिवारों एवं विधवाओं तथा घर से निकाली गई महिलाओं या असहाय महिलाओं को विशेष सहायता देना।

9. दस्तकारी, खिलौना निर्माण, बुनाई इत्यादि में लगी महिलाओं को ट्रेनिंग देना और उनके माल को बेचने का प्रबंध करना।

10. वैश्यावृत्ति में पड़ी महिलाओं और उनके बच्चों का पुनरवास करना।

(iii) सांस्कृतिक सशक्तिकरण के लिए

1. सर्वव्यापक महिला शिक्षा (समेत तकनीकी शिक्षा), स्वास्थ्य रक्षा, पर्यावरणीय रक्षा तथा आबादी प्रबंध में महिलाओं की असरदायक भूमिका कायम करना तथा गरीबी की रेखा के नीचे वाली महिलाओं (आम तौर पर सफाई कर्मचारियों, भूमिहीनों, दलित कबीलों में से) को मुफ्त शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करना।

2. पुराने मापदंडों और मूल्य व्यवस्था जो महिलाओं की क्षमता और दर्जे को कम करके आंकता है (उदाहरणतया, पुरुष से महिला को कमजोर समझना और पुरुष को ही कमाने वाला समझना)—ऐसी समझ को बदलना।

3. मीडिया और समाज में महिलाओं की वास्तविक तस्वीर पेश करना।

4. घर की जिम्मेदारी पति और पत्नी द्वारा एक साथ निभाना।

5. विवाह की उम्र बढ़ाना।

6. परिवार नियोजन के नुकसानदायक तरीके बदलना—जैसे कि टीकाकरण तथा कॉपर-टी, माला-डी, इत्यादि जैसी गोलियों का उपयोग बन्द करना जो महिलाओं के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती हैं तथा इनकी जगह जरूरी और उचित दवाइयां मुहैया करवाना।

7. ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के साफ पानी और उचित स्वास्थ्य सुविधाओं की पूर्ति सुनिश्चित करना।

8. बच्चों की बराबर हिस्सेदारी और बराबर के अधिकार को मान्यता देकर बाल मजदूरी (अकेले भारत में 10 करोड़ बच्चे), बाल वैश्यावृत्ति, कन्या-शिशुहत्या का खात्मा करना तथा बेघरबार बच्चों का विकास यकीनी बनाना।

❋ ❋ ❋

गरीबी, बेघरबार, विकलांग, शरणार्थी, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति तथा सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों, स्वास्थ्य सुविधाओं तथा जनसंख्या नियंत्रण के संबंध में

आई.डी.पी. का प्रोग्राम

गरीबी–गरीब की मूलभूत आवश्यकताओं को मौलिक अधिकार मानना तथा गरीबी उन्मूलन को पहली सामाजिक प्राथमिकता स्वीकार करना, मुफ्त शिक्षा मुहैया करवाना (विशेषकर महिलाओं को), शुद्ध पीने का पानी और सफाई व्यवस्था करना, घर की सुविधा, आवश्यक परिवार नियोजन सेवाएं, इत्यादि की सुविधा गरीबी की रेखा से नीचे वाले लोगों के लिए करना। महिलाओं, अल्पसंख्यकों और अन्य कमजोर तबकों को संस्थागत सुविधाएं उपलब्ध करवाना। गरीबी की रेखा के नीचे लोगों को आधे मूल्य पर आवश्यक चीजें मुहैया करवाई जाए। गरीबी की रेखा के नीचे वाले लोगों को प्राथमिकता देते हुए प्रत्येक परिवार के कम से कम एक सदस्य को रोजगार प्रदान करना। 60 वर्ष से ऊपर के बुजुर्गों के लिए सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान करना, इत्यादि।

बेघरबार–गंदी बस्ती वासियों तथा ऐसे लोग जो घर खरीदने की हैसियत नहीं रखते—इन सभी को सहकारी हाउसिंग सोसायटियों के माध्यम से घर प्रदान करना।

विकलांग (मानसिक और शारीरिक दोनों तौर पर)–सामाजिक विशेषज्ञों के साथ-साथ विकलांगों के प्रतिनिधियों से गठित कमेटियों की सिफारिश के आधार पर विकलांगों की समस्त समस्याओं का मूल्यांकन करके उन्हें हल करने के लिए व्यापक कानून व्यवस्था लागू की जाए।

शरणार्थी–जो लोग अपने घरों से अनियंत्रित हालातों (जैसे-भूकम्पों, अकालों, सरकारी विकास की स्कीमों या सुरक्षा कारणों, इत्यादि) के चलते उजड़ गये हैं उन्हें तत्काल राहत के साथ-साथ उनके पुनरवास का उचित प्रबंध करना।

अनुसूचित जाति–अनुसूचित जाति की सभी सामाजिक दुश्वारियों का खात्मा करना। इन जातियों का राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास उनके लिए आवश्यक ऐतिहासिक, वैज्ञानिक और सामाजिक ज्ञान में बढ़ोतरी के माध्यम से मानसिक ज्ञान में बढ़ोतरी करके पूरा किया जाए तथा उनके सामाजिक और आर्थिक हालातों को नई कृषि, औद्योगिक तथा श्रम नीतियों से सुधारा जाए।

अनुसूचित जनजाति–पंजाब में अनुसूचित जनजाति (अगर थोड़ी बहुत है तो) के संवैधानिक और कानूनी अधिकारों को सुनिश्चित करते हुए उन्हें राज्य के कोष से मुफ्त शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान की जाए।

धार्मिक और सांस्कृतिक अल्पसंख्यक–धार्मिक और सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के सभी उचित अधिकारों को सुनिश्चित करना, जिसमें इस उसूल की पालना की जाए कि किसी भी अल्पसंख्यक समुदाय के निजी कानूनों में उनकी राय के खिलाफ कोई तब्दीली नहीं की जाए।

स्वास्थ्य सुविधाएं–लोगों के लिए अच्छी स्वास्थ्य सुविधाएं सुनिश्चित करने के लिए आम आदमी की पहुंच अच्छी चिकित्सा और मातृत्व सेवाओं की स्थापना करके पूरी की जाए। इसके लिए सभी महामारियों—जैसे मलेरिया, हैजा, इत्यादि को विशेष स्वास्थ्य सुविधा से निर्मूल किया जाए और स्वास्थ्य निवारक व्यवस्था पर विशेष जोर देकर (यानि, साफ पीने के पानी का प्रबंध, सफाई को सुनिश्चित करके और ग्रामीण क्षेत्रों में टीकाकरण करके तथा सस्ती दवाई और चिकित्सा सुविधा देकर) अच्छा स्वास्थ्य कायम किया जाए।

जनसंख्या नियंत्रण–जनसंख्या वृद्धि तर्कसंगत सीमा में लाने के लिए गरीबी हटाना, गैर-टिकाऊ जीवन जांच में सुधार करना तथा संसाधनों का उचित तरीके से उपयोग करके, महिला के दर्जे में सुधार करके, लिंग समानता स्थापित करके, बाल मजदूरी रोककर, मानवीय संसाधनों के विकास पर जोर देकर (खासकर महिलाओं), जनसंख्या नियंत्रण मुहिम के लिए सभी को मुफ्त शिक्षा (खासकरके लड़कियों को) दी जाए तथा जनसंख्या नियंत्रण के लिए दबाव वाले सभी तरीकों को समाप्त किया जाए।

❋ ❋ ❋

पंजाब में खेतीबाड़ी तथा छोटे, मध्यम और धनी किसानों एवं ग्रामीण विकास के संबंध में आई डी पी का दृष्टिकोण

1. कृषि पंजाब की आर्थिकता का अत्यधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र है और भारतीय खाद्य आपूर्ति व्यवस्था का बड़ा स्रोत है। परन्तु आज पंजाब की कृषि गंभीर संकट की जकड़ में है।

2. इन समस्याओं में, जमीन की गिरावट, पानी की मात्रा का घटना, प्रति व्यक्ति भूमि और पानी के साधनों का कम होना, मौजूदा कृषि प्रणाली से होती आमदनी का घटना, छोटे और मध्यम किसानों की खेती की अव्यवहारिकता, खासतौर पर धनी किसानों द्वारा बाहरी मजदूरों के बल पर स्थानीय पढ़े-लिखे और अनपढ़ किसान वर्ग को बड़े स्तर पर बेरोजगार करना।

3. इस तरह पंजाब के कृषि संकट के मुख्य तौर पर दो पक्षीय कारण है। (क) पर्यावरण और उत्पादकता (ख) सामाजिक गैर-बराबरी।

4. इस संकट का बुनियादी कारण खेतीबाड़ी का रासायनिक प्रणाली पर आधारित होना है। बड़ी गिनती में छोटी व सीमान्त खेती मालिकी इसमें और बढ़ोतरी करती है। खेती का रासायनीकरण, उर्वरकों, कीटनाशकों और नदीननाशक दवाइयों के ज्यादा इस्तेमाल (जो ज्यादा पानी की मांग करते हैं) द्वारा तात्कालिक तौर पर पैदावार बढ़ाने वाले रुझान ने खेतीबाड़ी को दीर्घकालीन नुकसान पहुंचाया है। जमीन की ऊपर वाली सतह के खराब होने के कारण भूमि का क्षय हुआ है और पानी का स्तर नीचे जा रहा है। इसको जैविक पदार्थ प्रणाली में तब्दील करने की जरूरत है। जैविक पदार्थ जमीन को संरध्र बनाने में सहायक होते हैं जिसमें पानी को संजोये रखने की ज्यादा ताकत होती है जो कि सूखे के समय भी सहायक होती है। संरध्र जमीन, जैविक खादें, फसलों का कचरा एवं और अधिक जैविक पदार्थों को तोड़ने के लिए ऑक्सीजन प्रदान करती है। जैसे-जैसे पंजाब की खेती का रासायनीकरण हो रहा है वैसे-वैसे जमीन के जैविक पदार्थ में कमी आ रही है। इससे पौधे रासायनिक खादों से प्राप्त गैर-जैविक नाइट्रोजन का शोषण करने में असमर्थ होते जा रहे हैं। इसलिए पंजाब की कृषि को उतनी ही पैदावार लेने के लिए 1970 के मुकाबले आज रासायनिक उर्वरकों की दुगुनी मात्रा का उपयोग करना पड़ रहा है और अमेरिका की खेती में सन् 1950 के मुकाबले उतनी ही उपज लेने के लिए 5 गुना अधिक उर्वरकों का उपयोग करना पड़ रहा है।

इसलिए जमीन और जल स्रोतों में गिरावट एवं पर्यावरण के प्रदूषण ने पंजाब की खेती की लागत-कीमत को दुगुना कर दिया है। परिणामस्वरूप फसलों का मौजूदा तरीका पैदावार की दर को लगातार कम कर रहा है जो कि छोटी एवं सीमान्त किसानी को गैर-व्यावहारिक बना रहा है। इस तरह एक तरफ पारिवारिक मेहनत को (खासकरके बड़े फार्मों में) मजदूरी की मेहनत में तब्दील करके बेरोजगारी को बढ़ा रही है और दूसरी तरफ स्वास्थ्य के लिए नये खतरे उत्पन्न कर रहा है।

पंजाब के कृषि संकट का हल यह है कि मौजूदा रासायनिक आधारित कृषि की जगह एक नई टिकाऊ विकासमय प्रणाली अपनाई जाए। ऐसा करने के लिए त्रिपक्षीय कार्य करने की जरूरत है जो कि—(i) पर्यावरणीय संतुलन को पुनः बहाल करना, (ii) धीरे-धीरे रासायनिक खेती को जैविक खेती में तब्दील करना, (iii) कृषि क्षेत्र में सामाजिक बराबरी स्थापित करना।

जंगलों को पुनः बहाल करके, फालतू जमीन को विकसित करके, बंजर जमीन को पुनः उपजाऊ बनाकर, सेम वाली जमीन ठीक करके, पानी का उचित प्रबंध करके, नदियों और दरियाओं में आने वाले बाढ़ के पानी का उपयोग करके और जमीन के अन्दर के पानी को बचाकर पर्यावरणीय समस्या से निपटा जा सकता है।

इस समस्या से निपटने के लिए कार्बन-डाई-आक्साइड और दूसरी ग्रीन हाउस गैसों (जो कि मुख्य तौर पर पेट्रोलियम पदार्थों से चलने वाली गाड़ियों और कोयले के उपयोग से चलने वाले उद्योगों से पैदा होती है) को कम करना। ईंधन और ऊर्जा के विकल्प वाले साधन पैदा करना, प्रदूषण रोकने वाले तरीकों को अख्तियार करना, जीवाश्म ईंधन वाले साधनों का उचित उपयोग करना, पर्यावरणीय तौर पर हितैषी तकनीक व वस्तुओं को विकसित करना और सब स्तरों पर ज्यादा से ज्यादा निर्णयकारी ताकत लोगों को प्रदान करना जरूरी है।

रासायनिक खेती को धीरे-धीरे जैविक खेती में बदलने के लिए निम्नलिखित कदम उठाने जरूरी है—

(क) पर्यावरण हितैषी तकनीक के विकास द्वारा पंजाब में कृषि अनुसंधान प्रणाली को और अधिक सुधारना।

(ख) संघनी-जुड़वी खेती प्रणाली का विकास किया जाए, जैसे कि एम.एस. स्वामीनाथन के खोज केन्द्र, मद्रास की तरफ से सुझाव दिया गया है जिसके बहुत सारे पहलू हैं (ये सब अपने विकास के लिए अन्तरसंबंधित है-जैसे कि मछली पालन वाले पानी से चावल की सिंचाई करना, कई मिलते-जुलते तरीकों से पैदा की जाने वाली दूसरी फसलों, सब्जियों, फलों वाले वृक्ष, मुर्गी पालन, दोगले पशु, मक्खी पालन आदि तरीके—अलग-अलग किस्म की भूमि मिल्यिकत के अनुसार उचित मेल करके

अपनाना चाहिए), यही एक ऐसा रास्ता है जो खुराक और जीवनयापन की गारंटी दे सकता है।

(ग) टिकाऊ कृषि प्रणाली की तरफ तब्दीली के लिए दूसरे देशों द्वारा विकसित किये गये नये मॉडलों के बारे में जानकारी प्राप्त करना।

(घ) कृषि क्षेत्र के लिए आवश्यक कर्जे मुहैया करवाना और पूंजी लागत की प्रभावी दर को सुनिश्चित करना।

(ड़) छोटे, गरीब व दरम्याने खेती मालिकों को मुफ्त और बड़े किसानों को सस्ती दर पर पानी व बिजली की आपूर्ति करना।

(च) खेती और दूसरे क्षेत्रों में संतुलित व्यापारिक संबंध कायम करना।

(छ) खेती को उद्योग का दर्जा देना।

(ज) कदम-ब-कदम भारतीय योजना के अनुसार पंजाब की खेती को विश्व मंडी से जोड़ना, जैसे कि शुरू में खेती निर्यात में पंजाब का हिस्सा 15 प्रतिशत से बढ़ाकर 30 प्रतिशत करना, जब तक कि यह पूर्ण रूप से विश्व मंडी के साथ जुड़ नहीं जाती।

9. कृषि क्षेत्र में बराबरी कायम करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाये जायें—

(i) बहुत बड़ा प्रोग्राम बनाते हुए बड़ी गिनती वाले छोटे और सीमान्त किसानों की कृषि को व्यवहारिक बनाने वास्ते मदद करने के लिए अकेले तौर पर या साझे रूप में उनके साधनों (खेती, पूंजी, लागतों और पैदावार आदि) को जुटाने के लिए ऐसी सहकारी सोसायटियों का निर्माण किया जाए जो पूर्ण रूप से सुधरे हुए सहकारी-लोकतांत्रिक नियमों पर आधारित हो।

(ii) सभी ग्रामीण बेरोजगारों को जंगल लगाने, अतिरिक्त जमीन को विकसित करने, बंजर जमीन को उपजाऊ बनाने, सेम से जमीन की रक्षा करने और खेती आधारित छोटे उद्योगों और अलग-अलग किस्म के बुनियादी ढांचे को खड़ा करने के लिए रोजगार दिया जाए।

(iii) कम से कम उजरतों को प्रभावशाली प्रणाली जिसमें उजरतों को उत्पादन (अदा करने की क्षमता) के साथ जोड़ा जाए। इसको यकीनी बनाकर खेती मजदूरों और ग्रामीण मजदूरों के हकों की सुरक्षा की जाए। बढ़ रहे खेती मुनाफे में से मजदूरों को उचित हिस्सा मिलना यकीनी बनाया जाए।

(ग्रामीण मजदूरों के विस्तृत अधिकारों के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए ग्रामीण और शहरी मजदूरों का मांग पत्र पढ़ा जाए)

ग्रामीण विकास

(अ) प्रत्येक गांव में शिक्षा और चिकित्सा सुविधा दी जाए; (ब) प्रत्येक गांव को साफ पीने का पानी, स्कूल, अस्पताल, सड़क से जोड़ना, बिजली, परिवहन, टेलीफोन, बैंक सुविधा प्रदान की जाए; (स) गांव में कुटीर उद्योग एवं कृषि आधारित छोटे उद्योग (जैसे डेयरी फार्म, मुर्गी पालन, मछली पालन, मधुमक्खी पालन, दस्तकारी, हथ-करघा, सामाजिक जंगलात, इत्यादि) लगाना, सामुदायिक संसाधनों (जैसे, सड़कें, छोटी सिंचाई परियोजनाएं, अनाज दाने भंडारण सुविधाएं, इत्यादि) को विकसित करना; और परम्परागत ग्रामीण तकनीकी (यानि, कुम्हारी, बुनाई, कताई, लुहारी, इलाज के पारम्परिक तरीके (जैसे दाई का काम) इत्यादि को आवश्यक सहायता मुहैया करवाना; (द) कृषि विकास को तेज करना तथा गरीबों में मजदूरी की कुशलता को सुधारना; (य) गरीब और भूमिहीन किसानों को किसी लाभदायक धन्धे के लिए सस्ते ऋण की आपूर्ति का प्रबंध करना, गरीबों की जमीन की कुर्की रोकना या उनकी दुखदायी आवश्यकताओं को पूरा करना, ऋण निपटारा बोर्डों के माध्यम से सभी गरीबों के पुराने ऋण निरस्त करना; (र) लोक अदालतों और ग्राम पंचायतों के माध्यम से ग्रामीण मुकदमों या झगड़ों (भूमि, पानी, ऋण, पुराने पारिवारिक विवादों, इत्यादि) के भार को कम करना; (ल) प्रभावी भूमि सुधार लागू करना; (व) बढ़ती सामाजिक बुराइयों के खिलाफ सामाजिक सुधार आन्दोलन संगठित करना—जैसे बढ़ती शराबखोरी और अन्य मादक पदार्थों व नशों के खिलाफ एवं बढ़ते दहेज और शादी खर्च इत्यादि के खिलाफ सुधार आन्दोलन चलाना।

❋ ❋ ❋

शहरी मूलभूत ढांचे, बेरोजगारों, विद्यार्थियों, नौजवानों, प्रशासनिक सेवाओं, सैन्य बलों, पूर्व-सैनिकों तथा व्यापार और उद्योग के लिए आई. डी.पी. का प्रोग्राम

शहरी बुनियादी ढांचा-वर्तमान असंतुष्टिजनक नागरिक सेवाओं के प्रबंध को—जैसे, पीने के साफ पानी, सफाई, सीवरेज, बिजली, शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाएं, सड़कों, परिवहन, इत्यादि—सुधारना। मोटर-गाड़ियों और कोयले की खपत करने वाले उद्योगों द्वारा लगातार पैदा किये जा रहे प्रदूषण पर काबू पाने के लिए प्रभावी कदम उठाए जाए, पर्यावरण के सुधार के लिए पेड़-पौधे लगाये जाएं, निराश्रित लोगों के लिए रात्रि पनाहगाह का प्रबंध करना और गंदी बस्तियों के लिए उचित नागरिक सुविधाएं (जब तक उनके पुनरवास का प्रबंध नहीं होता) प्रदान करना, आवश्यक चीजों की उचित आपूर्ति सुनिश्चित करना, बच्चों के खेल और आकर्षण केन्द्रों का उचित प्रबंध करना, इत्यादि।

बेरोजगारी-समस्त सरकारी क्षेत्र की नौकरियों के लिए कानून की मांग के मुताबिक निष्पक्ष और वाजिब तरीके से भर्ती ली जाए। समस्त शहरी और ग्रामीण बेरोजगारों को रोजगार दिलाने के लिए बुनियादी प्राकृतिक संसाधनों को सुधारना—जैसे, जमीन, पानी, जंगल, हवा की शुद्धता के लिए एक आम योजना बनाना, जिसके तहत जंगल लगाना, खराब जमीन को ठीक करना, बंजर हुई जमीन को पुनः उपजाऊ बनाना, सेम वाली जमीन को सुधारना, प्रभावी जल प्रबंधन करना, प्रदूषण नियंत्रण, खेती आधारित उद्योग, घरेलू कुटीर उद्योग, स्व-रोजगार तथा बड़े उद्योग आदि के लिए अलग-अलग तरह की योजनाएं बनाना।

विद्यार्थियों के लिए-शैक्षिक पाठ्यक्रम से सभी पुराने पड़ चुके, अवैज्ञानिक और दकियानूसी विचारों को हटाकर वैज्ञानिक, तर्कसंगत और लोकतांत्रिक शिक्षा व्यवस्था को संगठित किया जाए, विश्वविद्यालय स्तर तक मुफ्त शिक्षा तथा सैकण्डरी स्तर तक सभी के लिए अनिवार्य शिक्षा सुनिश्चित की जाए, शिक्षा को व्यावसायिक बनाया जाए, विद्यार्थियों के लिए लाइब्रेरियों, प्रयोगशालाओं, होस्टलों, सांस्कृतिक और सामाजिक गतिविधियों, खेलों, परिवहन साधनों, इत्यादि सुविधाओं का समुचित प्रबंध करना, गरीब विद्यार्थियों को मुफ्त चिकित्सा सुविधा प्रदान करना, काम के अधिकार की गारण्टी देना तथा जब तक रोजगार ना मिले तब तक रोजगार भत्ता देना, विश्वविद्यालयों को पूर्ण स्वायत्तता देना जिसमें किसी तरह की राजकीय दखलन्दाजी

नहीं हो तथा शैक्षणिक संस्थानों में पुलिस का दखल बन्द करना, सभी अध्यापकों और विद्यार्थियों (18 वर्ष से ऊपर उम्र वालों) को संगठन बनाने और राजनीतिक एसोसियेशन गठित करने का अधिकार देना, विद्यार्थियों को दंडित करने और स्कूल व कॉलेज के शिक्षकों को भर्ती करने और निकालने के प्रशासनिक अधिकारों के सभी नियमों को रद्द करना, जाति आधारित आरक्षण की जगह गरीबी के रेखा के नीचे वाले लोगों को सभी तरह का आरक्षण प्रदान करना, शैक्षणिक संस्थाओं में भ्रष्टाचार और नौकरशाही को समाप्त करना तथा सैकण्डरी स्तर तक की सभी शैक्षणिक संस्थाओं का प्रबंध अभिभावकों और शिक्षकों के चुने हुए संयुक्त निकायों द्वारा करना जबकि उच्च शैक्षणिक संस्थाओं का प्रबंध शिक्षकों, स्टाफ सदस्यों एवं विद्यार्थियों के चुने हुए संयुक्त निकाय द्वारा करना शामिल है।

नौजवानों के लिए-नौजवानों के मानसिक विकास, शारीरिक विकास तथा उनको रोजगार संबंधी ज्ञान मुहैया करवाने के लिए अलग-अलग ग्रामीण और शहरी इलाकों में नौजवान केन्द्र कायम किये जाएं।

प्रशासकीय सेवाओं के संबंध में-जीवनयापन के लिए आवश्यक उजरत के सिद्धान्त को लागू किया जाए और सामाजिक बीमा, भविष्य निधि, पेंशन या ग्रेच्यूटी, गृह निर्माण, चिकित्सा फंड अथवा अन्य सुविधाओं का उचित प्रबंध सुनिश्चित किया जाए। नियुक्तियों, तरक्की तथा सेवा शर्तों के लिए कर्मचारी यूनियनों और एसोसियेशन के साथ सहमति से उचित नियम बनाए जाएं। सरकारी कर्मचारियों को राजनीतिक गतिविधियों में हिस्सा लेने तथा सभी चुनी जाने वाली संस्थाओं के चुनाव में खड़े होने सहित सभी लोकतांत्रिक अधिकार दिये जाएं।

सैनिक बलों (नीम फौजी बलों सहित) के बारे में-वेतन, मकान, बच्चों की शिक्षा, आदि मामलों में सैनिक बलों के सदस्यों का उचित जीवन स्तर सुनिश्चित किया जाए। मारे जाने वाले या अपाहिज हुए सैनिकों के परिवारों का विशेष ख्याल रखा जाए तथा सैनिक बलों को ट्रेड यूनियन बनाने के अधिकार दिये जाएं।

पूर्व-सैनिकों के बारे में-पूर्व-सैनिकों और उनके परिवारों की भलाई के लिए अलग-अलग कदम उठाए जाएं।

व्यापार और उद्योग के लिए-सैल्स टैक्स, चुंगी और अन्य राज्य स्तरीय टैक्सों की जगह वैट (वेल्यु एडेड टैक्स) लगाया जाए, इंस्पेक्टर राज खत्म किया जाए, टैक्स के लायक आय की वर्तमान सीमा में बढ़ोतरी की जाए, पूंजी, तकनीकी और मंडी की जरूरतों को पूरा किया जाए तथा बिजली व कच्चे माल की उचित आपूर्ति सुनिश्चित की जाए।

* * *

बरनाला के लोग इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक पार्टी और उसके उम्मीदवार को वोट क्यों डालें

I

1. आई.डी.पी. एक वैज्ञानिक-तर्कसंगत दिशा वाले मानवीय समाज के निर्माण के लिए प्रयत्नशील है। इसका निशाना सामाजिक विकास को उस हद तक पहुंचाना है जहां मनुष्य वैचारिक और भौतिक दोनों पक्षों तथा व्यक्तिगत एवं सामूहिक तौर पर तरक्की करेगा।

II

2. पंजाब में उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति कैसे हो सकती है?

इसकी प्रक्रिया सात पक्षीय कार्यक्रमों के माध्यम से प्रारम्भ की जा सकती है।

(i) पहला, यह है कि आई.डी.पी. मूल्य आधारित उसूली राजनीति अपनाती है। यह टकराव की जगह आम सहमति एवं शांति की नीति पर चलती है। जबकि कांग्रेस, भाजपा, जनता दल, सी.पी.एम., सी.पी.आई., बसपा एवं सारे अकाली ग्रुप काले धन तथा बाहुबल के आधार पर माफिया (विधि विरोधी) राजनीति चला रहे हैं।

(ii) दूसरा, यह है कि आई.डी.पी. की राजनीति पंजाबी एकता कायम करने की दिशा लेती है, जो कि सिख, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि पंजाबियों की एकता कायम करने के उसूल पर आधारित है, जबकि अलग-अलग अकाली धड़ों का सिखों की एकता का खोखला भरमाने वाला नारा है, जिन्होंने 1947 के बाद (समस्त सिख समुदाय की एकता की तो बात ही क्या) अलग-अलग अकाली धड़ों के बीच भी एकता कायम नहीं करवा पाये। इसी तरह भाजपा और कांग्रेस हिन्दू बहुसंख्यक राष्ट्रवाद, बसपा दलितवाद, जनता, सी.पी.आई., सी.पी.एम. मंडलवाद (या सर्वहारावाद) की राजनीतिक अपनाते हैं।

(iii) तृतीय, आई.डी.पी. की राजनीति पंजाब को विशेष अधिकार देने की है। जिसमें सिख पहचान, हिन्दू सुरक्षा, पंजाबी एकता और राज्य मे गांव स्तर तक ताकतों के बंटवारे का सवाल हल होगा तथा पंजाब की तरक्की का राह खुलेगा, जबकि खालिस्तान की राजनीति ना केवल पंजाब में रह रहे हिन्दू-सिखों में फूट डालेगी बल्कि पंजाब में रह रहे सिखों तथा भारत के अन्य भागों में रह रहे सिखों में भी फूट डालती है। अकाली दलों की ज्यादा अधिकारों की राजनीति एक तरफ राज की बची-खुची ताकतें केन्द्र को सौंपती है तो दूसरी तरफ नीचे के ग्रामीण स्तर तक के लोगों को किसी तरह की ताकत प्रदान करती है। इसी तरह ही कांग्रेस, भाजपा, जनता दल, सी.पी.आई., सी.पी.एम., बसपा सारी ताकत केन्द्र को देने की समर्थक हैं जिससे

इनका तानाशाही शासन बदस्तूर जारी रह सके।

(iv) चतुर्थ, आई.डी.पी. की आर्थिक नीति टिकाऊ विकास की है, जिसमें पंजाब के लिए पर्यावरण समर्थक (या जैविक) और अधिक उत्पादक तथा सामाजिक बराबरी वाले कृषि मॉडल की जरूरत है जबकि इसके उलट कांग्रेस-आई, भाजपा, जनता दल, सी.पी.एम., सी.पी.आई. और बसपा रासायनिक आधारित कृषि पद्धति की समर्थक हैं जो आज पंजाब के मानवीय और भौतिक संसाधनों को नुकसान पहुंचा रही है।

(v) पंचम, आई.डी.पी. की नीति कानून के राज के अधीन अमीर-गरीब के बीच, महिला-पुरुष के बीच तथा ग्रामीण व शहरी के बीच खाई को कम करते हुए ताकत को सामूहिक तौर पर लोगों के हाथों में सौंपना है। जबकि दूसरी पार्टियां संसदीय लोकतंत्र, समाजवाद, हिंदूवाद, मंडलवाद, आदि के परदे के नीचे सारी ताकत अपने या अपने नेताओं के हाथों में समेट लेती है।

(vi) षष्टम, आई.डी.पी. की नीति एक परिवार के कम से कम एक सदस्य को रोजगार देने की पहल करती है। इस तरह गरीबी कम करने में मदद मिलेगी। जबकि दूसरी पार्टियां बेरोजगारी और गरीबी हटाने के महज झूठे झांसे ही देती है।

(vii) सप्तम, भ्रष्टाचार के खिलाफ आई.डी.पी. ने मुहिम छेड़ रखी है। जिसको दूसरी राजनीतिक पार्टियों ने जिन्दगी जीने का तरीकाकार बना रखा है।

III

3. चुनाव के बाद के समय में पंजाब संबंधी आई.डी.पी. की उपरोक्त लाईन बरनाला विधान सभा हल्के में लागू कैसे की जायेगी? चुनाव नतीजा भले ही कुछ भी हो, आई.डी.पी. के संविधान की धारा 11(क) के अधीन इसका उम्मीदवार लोगों के प्रति जवाबदेह रहने के लिए नीचे लिखे कदम लेने के वचन देती है।

(अ) बरनाला में पार्टी आफिस खोला जायेगा, जहां पर कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छानुसार आसानी से उम्मीदवार को मिल सकेगा।

(ब) हर छः महीने बाद उम्मीदवार अपने काम की लिखित रिपोर्ट जारी करेगा।

(स) हर दो साल बाद अपनी जायदाद का ब्यौरा लोगों के सामने पेश करेगा।

(द) एक पद सिर्फ दो सत्र तक ही रख सकेगा।

(य) जब तक वोटरों को अपने चुने हुए उम्मीदवार को वापिस बुलाने का कानूनी अधिकार नहीं मिल जाता उस समय तक चुने जाने की हालत में आई.डी.पी. का उम्मीदवार वोटरों के दो तिहाई हिस्से द्वारा लिखित मांग करने पर विधान सभा सदस्यता से इस्तीफा दे देगा।

(र) बरनाला विधान सभा हल्के के विकास के लिए लोगों के सहयोग से योजना तैयार की जायेगी और इसकी पूर्ति के लिए हर संभव कोशिश की जायेगी।

(ल) लोगों की जायज व्यक्तिगत समस्याओं के हल के लिए संभव कोशिश की जायेगी।

IV

4. आई.डी.पी. का उम्मीदवार उपरोक्त बताये गये प्रोग्राम अनुसार ईमानदारी से चलेगा, इस बात की क्या गारंटी है? मघरसिंह कुलरियां की 49 साला जिन्दगी का रिकार्ड इसकी जमानत भरता है।

5. 1948 में जन्मे श्री मघरसिंह कुलरियां ने पंजाब यूनिवर्सिटी से 1973 में बी. ए. पास किया। विद्यार्थी जीवन के दौरान यह सामाजिक तौर पर सक्रिय रहे। 1972 की मोगा विद्यार्थी आन्दोलन के दौरान इनको जेल भी जाना पड़ा। 1973 में लोकल बॉडी सेवा की अधीन पंचायत सेक्रेटरी के तौर पर नौकरी की, परन्तु जल्दी ही नौजवान भारत सभा की अगुवाई अधीन चले 'चूल्हा-किला' टैक्स विरोधी आन्दोलन के दौरान जेल में जाने के कारण नौकरी छोड़ दी। अंत में सरकार को आन्दोलनकारियों की मांगें माननी पड़ी।

1975 में इंदिरा की सरकार की तरफ से इमरजेंसी लगाने के पहले दिन ही गिरफ्तार करके इनको जेल भेज दिया तथा फरवरी 1977 में इमरजेंसी के खात्मे के बाद ही रिहा किया गया। रिहाई के तुरन्त बाद इनकी अगुवाई में नौजवान भारत सभा ने बाढ़ पीड़ितों को राहत दिलवाने के लिए 1977-78 में संघर्ष छेड़ दिया। इसके परिणामस्वरूप प्रशासन को लोगों को भूमि कर तथा वाणिज्यिक कर माफ करना पड़ा एवं सहकारी कर्जों की वसूली को एक साल पीछे धकेलना पड़ा।

1980-81 में बढ़े हुए बस किराये के विरुद्ध आन्दोलन में इन्होंने पूरे जोर से भाग लिया। इनके विरुद्ध मुकदमा भी बनाया गया जिसे बाद में रद्द कर दिया गया।

6. 1986 में आई.डी.पी. के बनने से लेकर इन्होंने तर्कसंगत मानवतावाद के सिद्धान्त को तन्मयता के साथ थामा हुआ है और पार्टी के अन्दर अगुवा पोजीशन पर काम करते आ रहे हैं। पार्टी के फैसले के अनुसार ये पिछले समय से शहीद भगतसिंह नगर बरनाला में अपने एक छोटे से मकान में रह रहे हैं। इनका अपने गांव की 4 एकड़ जमीन तथा भैंसों का दूध ही गुजारे का साधन है। घर की जिम्मेवारी इनकी पत्नी गमदूर कौर संभालती है और ये खुद सामाजिक कामों में लगे रहते हैं।

V

7. क्या वोटरों को अपनी वोट जीतने वाले उम्मीदवार या राज कर रही पार्टी के उम्मीदवार को डालनी चाहिए? पिछली 11 लोकसभा एवं विधान सभा चुनावों में लोगों ने उपरोक्त बेउसूले फार्मूलों पर चढ़कर वोट डालने का 50 साला रिकार्ड दर्शाता है कि कैसे इस व्यवहार ने बेउसूले राजनीतिज्ञों को अति लाभ पहुंचाया है जिन्होंने लोगों को निचोड़ कर, सार्वजनिक फंड डकार कर करोड़ों रुपये बनाये तथा 10 साल लम्बे सरकारी दहशतगर्दी तथा खाड़कूवाद को जन्म देकर पंजाबियों से 50 हजार मानवीय

जानों की आहूति ले ली है।

8. क्या कमजोर उम्मीदवार को डाली गई वोट बेकार जाती है? यह भ्रष्ट राजनीतिक पार्टियों द्वारा फैलाया गया कोरा झूठ है। तथ्य दर्शाते हैं कि अकेले व्यक्ति, ईमानदार अधिकारी, जैसे कि शेषन, न्यायाधीश कुलदीपसिंह, न्यायाधिपति जे.एस. वर्मा, खरनार आदि ने ही लोगों के लिए काफी कुछ किया है।

9. लोगों द्वारा लिए गये उसूली स्टैंड ने लोगों के दीर्घकालीन हितों की सेवा की है, उदाहरणतया 1977 में जब लोगों ने रायबरेली सीट पर इंदिरा गांधी को लोक सभा सीट पर हराया, जिससे इंदिरा गांधी के तानाशाह राज का खात्मा हुआ।

10. अब हम ऐसी मंजिल पर पहुंच रहे हैं जहां हमारी सामाजिक जरूरत को पूरी तरह के लिए पूर्ण जनवादीकरण की जरूरत है। ऐसा राजनीतिज्ञों को ना केवल चुनाव के वक्त 15 दिन की मुहिम के दौरान ही बल्कि सम्पूर्ण सामाजिक प्रक्रिया में लोगों के प्रति जवाबदेह बनाकर ही पूरा किया जा सकता है। इस तरह करके उन्हें (राजनीतिज्ञों को) सदा के लिए प्राप्त ताकत को समाप्त किया जा सकता है। यह वर्तमान पार्टी अगुवाई वाले लोकतंत्र को लोगों की भागीदारी वाले लोकतंत्र में तब्दिली करके ही संभव हो सकता है। जिसमें सभी महत्वपूर्ण मुद्दों पर लोगों की आवाज प्रभावी होती है और पार्टियों को लोगों के अनुसार सोचना व व्यवहार करना पड़ता है।

11. लोगों की सामाजिक ताकत बढ़ाने के उसूल पर चलते हुए पार्टी समझती है कि पूरी सामाजिक तब्दीली के लिए अभी समय लगेगा। इसलिए सारे स्तरों पर (खासकर निचले स्तरों पर) यह प्रक्रिया शुरू की जानी चाहिए। इसकी शुरूआत लोगों को उनकी तात्कालिक तथा दीर्घकालीन समस्याओं संबंधी अलग-अलग किस्म की सरगर्मियों में शामिल करके शुरू की जा सकती है। लोगों के साथ अन्तरक्रिया करने के लिए अलग-अलग पार्टियों के प्रतिनिधियों, संबंधित विधायकों और अफसरों को बुलाया जाना चाहिए। इस किस्म की अन्तरक्रिया से अलग-अलग किस्म के सामाजिक ग्रुपों के चेतना का स्तर ऊंचा करने में सहायता मिलेगी। इन मीटिंगों में उनकी फौरी तथा बुनियादी समस्याओं के हल की निशानदेही करनी चाहिए। समस्याओं को सुलझाने के लिए अलग-अलग किस्म के राजनीतिज्ञों के बीच आम राय कायम करनी चाहिए तथा प्रशासन पर जन समस्याओं पर ध्यान देने के लिए दबाव बनाना चाहिए। इस तरह से लोगों की भागीदारी वाली व्यवस्था की नींव डाली जा सकती है।

12. आई.डी.पी. के उम्मीदवार मघरसिंह कुलरियां उपरोक्त जिम्मेवारी को हर जगह (समेत विधान सभा में अगर वे जीतते हैं तो) व्यवहार में लागू करने की कोशिश करेंगे। हमारी चुनावी मुहिम का ढंग-तरीका—पैदल, साइकिल, स्कूटर मार्च सहित प्रत्येक वोटर के घर-घर जाकर अपील करना है—यह हमारे कार्यकर्ताओं की पार्टी के मूल्य आधारित राजनीति के प्रति वचनबद्धता को दर्शाता है। दिनांक 25-1-97

❋ ❋ ❋

शहरी और ग्रामीण मजदूरों के लिए आई.डी.पी. का प्रोग्राम

ग्रामीण तथा शहरी मजदूर तबके हमारे समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिनका पंजाब के विकास में अहम योगदान है। उनके विकास के लिए आई.डी.पी. निम्नलिखित प्रोग्राम पेश करती है।

शहरी मजदूरों के बारे में

1. भारतीय संविधान की धारा 43-ए को लागू करने की मांग करना, जो भारतीय राज्य को निर्देश देती है कि वह औद्योगिक संस्थानों, प्रतिष्ठानों या अन्य संगठनों के प्रबंध में मजदूरों की भागीदारी को पक्का करने वाले उचित कदम उठाये। ऐसा करने के लिए दोहरे उसूल का पालन करें। एक तरफ इनके प्रबंधक मंडल में मजदूरों का एक तिहाई प्रतिनिधित्व लागू करे और दूसरी तरफ इसके लिए ऐसे बोर्ड में चुने जाने वाले मजदूर सदस्य के लिए वोटरों के 50 प्रतिशत वोट हासिल करने का प्रावधान लागू करे।

2. एक उचित मजदूर नीति बनाने की मांग करना जो एक तरफ उत्पादकता को ध्यान में रखे और दूसरी तरफ यह यकीनी बनाए कि मजदूरों के साथ उचित व्यवहार हो। जहां तक उत्पादकता का संबंध है स्थिति काफी दयनीय है, उदाहरण के तौर पर जब चीन की उत्पादकता प्रति मजदूर सालाना 11000 डालर है तब उसके समानान्तर भारत की प्रति मजदूर उत्पादकता सिर्फ 900 डालर सालाना है जबकि पाकिस्तान की 1500 डालर है। इसलिए जरूरी है कि भारत सरकार, उद्योग एवं मजदूर उचित साधनों से उत्पादकता को बढ़ाने के लिए आम सहमति वाली पहुंच अपनाने पर जोर दें।

संगठित मजदूरों के संबंध में उनको छंटनी नीति की मुख्य समस्या से सामना है और पब्लिक सेक्टर में (तीन से चार लाख मानवीय मजदूर शक्ति समेत) ज्यादा मजदूर है।

हर कोई कहता है कि इस समस्या का उचित हल होना चाहिए। स्पष्टत: एक उचित हल सिर्फ वही हो सकता है जो एक तरफ उद्योग की जरूरत को पूरा करे। परन्तु सरकार द्वारा इस मामले में कोई स्पष्ट नीति पेश नहीं की गई है, यानि इसने स्पष्ट नहीं किया कि छटनी किस तरह की जायेगी और छटनी किये गये मजदूरों का क्या प्रबंध किया जायेगा। अगर उनकी खलासी ही करनी है तो उनको मुआवजा देने का पैमाना क्या होगा। अगर उनको पुन: समायोजित करना है तो उनकी समायोजना कहां संभव होगी जबकि सम्पूर्ण तौर पर आर्थिकता में विकास रुका हुआ है। अगर

उनको नये उद्योगों में पुन: रोजगार देना है तो सरकार ने अभी तक नये उद्योगों की निशानदेही नहीं की है। अगर मजदूरों को अपनी स्व-रोजगार स्कीमें शुरू करनी है तो सरकार उनको क्या मदद देगी। आज तक इन सवालों का तसल्लीबख्श जवाब नहीं दिया गया है। उदारीकरण मजदूरों के लिए दुखदायी प्रक्रिया नहीं बननी चाहिए। जैसा कि कुछ लोगों का अनुमान है कि इससे 10 करोड़ बेरोजगारों में 1 करोड़ हाथ और जुड़ जायेंगे।

देश में बेरोजगारी और अतिरिक्त मजदूरों की समस्या को उठाते हुए भारत-अमरीकी कार्यप्रणाली कि मजूदरी पर लगाओ और निकाल दो—वाली प्रणाली को नहीं अपना सकता है और ना ही यह कम्युनिस्ट प्रणाली को जो शासक पार्टियों की राजनीतिक जरूरतों के लिए उद्योगों में ज्यादा मजदूरों को झेलती है एवं मजदूरों को सब किस्म की जवाबदेही से मुक्त करती है। जापानी एवं अन्य प्रशान्त एशियाई देशों के मॉडलों को देखते हुए भारत को अपना रचनातंत्र विकसित करना चाहिए जो मजदूरों की नौकरी यकीनी बनाए परन्तु उच्च मजदूर उत्पादकता और कारोबार के प्रति वचनबद्धता की मांग करे।

उपरोक्त तथ्यों की रोशनी में सरकार को इन दो उसूलों को अपनी छटनी नीति का आधार बनाना चाहिए। एक यह कि जिन पब्लिक सेक्टर इदारों को बन्द करना चाहती है उनके मामले में सरकार को यह स्पष्ट करना चाहिए कि वह किन शर्तों पर मजदूरों की सहकारी सोसायटियों को इन उद्योगों को सौंपेगी। और दूसरी यह नीति कि छटनी की हालत में मजदूरों के वेतन का 100 गुना मुआवजा उनको मिलना चाहिए।

नये औद्योगिक संबंधों के बारे में बिल (जो नये कानून के तौर पर लागू किया जाना है) मजदूरों की छटनी करने की इजाजत देता है। पहले ही भारत में हर साल लाखों मानवीय कार्य दिवस गवाए जा रहे हैं। इसके मुकाबले सिंगापुर में दो सप्ताह प्रति वर्ष गवाए जाते हैं। ये चकरा देने वाले तथ्य भी मांग करते हैं कि हर मजदूर कानून का उद्देश्य कामगारों और प्रबंधन बोर्ड में उसूल आधारित गर्मजोशी वाले संबंध कायम करना होना चाहिए।

3. भारत में औद्योगिक दुर्घटनाओं पर नियंत्रण के लिए उचित सुरक्षा ढंगों और उनको सही तरीके से लागू करने की मांग करनी चाहिए। सुरक्षा के कमजोर हालातों और मजदूरों की कम चेतना से मिलकर बड़े भयानक नतीजे लाती है। भारत में औद्योगिक दुर्घटनाओं से मौतों की दर 1 लाख के पीछे 14 है, जो कि जापान, ब्रतानिया और अमरीका से 5 या 7 गुना ज्यादा है। भारत में मौतों की गिनती और भी ज्यादा है क्योंकि हजारों गैर-रजिस्टर्ड औद्योगिक इकाइयों में होने वाली मौतों की रिपोर्ट ही नहीं होती है। विश्व स्तर पर हर तीन मिनट में एक मजदूर दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है। जबकि

हर साल 1करोड़ मजदूर हादसों के शिकार होते हैं तथा इतने ही बिमारियों के शिकार होकर मर जाते हैं।

4. हर उद्योग या ट्रेड में यूनियनों की बहुलता को समाप्त करने के लिए हर इदारे में एक इकाई एक यूनियन के दाखले की मांग करना।

5. ऊंचे और नीचे पदों में सारे भत्तों को मिलाकर सात गुना से ज्यादा फर्क नहीं होना चाहिए तथा साथ ही सबके लिए एक जैसी वर्दी होना एवं एक ही साझी कैन्टीन और शौच सुविधा होने की मांग करना।

6. किसी नस्ल, धर्म, जाति या लिंग का भेद किए बिना बराबर काम के लिए बराबर वेतन देने की मांग करना।

7. 35 घंटे प्रति सप्ताह निर्धारित करने की मांग करना।

8. मजदूर विरोधी सभी धाराओं को खत्म करना तथा वेतन रोकना, जबरी कटौती योजना, छंटनी तथा यूनियन के सदस्यों की बरखास्तगी, तालाबंदी, मजदूरों से अलग यूनियन से छिपकर समझौता करने की प्रवृत्ति पर रोक लगाना।

9. अब 16 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को काम पर लगाने पर रोक लगाना। 16 से 20 वर्ष की उम्र वाले किशारों के लिए काम के घंटे 4 तक सीमित करना।

10. महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक उद्योग में उनकी नियुक्ति पर रोक लगानी तथा उनको 4 महीने के वेतन सहित प्रसूता छुट्टी देने की मांग करना।

11. छोटे बच्चों के लिए नर्सरी कायम करना तथा बच्चों को दूध पिलाने वाली महिलाओं को हर तीन घंटे बाद आधे घंटे की छुट्टी देना और इन माताओं का कार्य दिवस 6 घंटे करने की मांग करना।

12. मजदूरों को हर प्रकार की असमर्थताओं (खराब स्वास्थ्य, बुढ़ापा, दुर्घटना आदि) तथा बेरोजगारी के खिलाफ पूर्ण बीमा देने की मांग करना।

13. उन मालिकों के खिलाफ कार्यवाही करना जो जी.पी.एफ., ई.एस.आई. आदि की सुविधाओं एवं सुरक्षा नियमों का उल्लंघन करते हैं।

14. गैर-मान्यता प्राप्त मजदूर बस्तियों में बिजली, पानी एवं दूसरी नागरिक सुविधाएं प्रदान करके मजदूरों की गंदी बस्तियों का सुधार करना और थोड़े समय में ही हर मजदूर परिवार को उचित मकान की सहूलियत मुहैया करवाना।

15. राज्य एवं जिला स्तर पर मजदूर-निरीक्षक दफ्तर कायम करना जिनको अपनी-अपनी सीमा के अन्दर सारे कामगार-कानून लागू करने का अधिकार हो।

16. सब प्रकार के औद्योगिक विवादों को निश्चित समय में निपटाने के लिए उद्योग की सभी इकाइयों पर मजदूर कोर्टों की स्थापना की जाए जिसमें मालिकों और मजदूरों के प्रतिनिधियों की बराबर संख्या हो।

17. मजदूरों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए मजदूरों की पहलकदमी एवं खोजी प्रवृत्ति को उपयोग में लेना तथा कार्य-भार की स्थिति में मजदूरों के हितों की रक्षा करना।

II. कृषि कामगार

1. गैर-संगठित मजदूरों के मसलों को केन्द्र स्तर पर व्यापक कानून बनाकर हल करने की मांग करना।

2. खेतिहर मजदूरों—जो संख्या में 10 करोड़ हैं और भारत की कुल श्रम शक्ति का 25 प्रतिशत हिस्सा बनता है—से संबंधित कानूनों को प्रभावशाली ढंग से लागू करने की मांग करना।

3. खेतिहार मजदूरों की तात्कालिक समस्या उनकी वैधानिक तौर पर निम्नतम मजदूरी हासिल करने की मुशकलियात है एवं लम्बे समय की बेरोजगारी तथा अर्द्ध बेरोजगारी (खेत मजदूरों को एक साल में 160 दिन ही मजदूरी मिलती है) भी है।

पहली समस्या को कम से कम उजरत संबंधी कानून को असरदायक ढंग से लागू करने के लिए समुचित ढंग-तरीके अपनाने चाहिए। दूसरे कानून जैसे ठेकेदारी संबंधी लेबर कानूनों, बंधुआ मजदूरों संबंधी कानूनों, प्रवासी मजदूरों संबंधी कानूनों को असरदायक ढंग से लागू करना चाहिए।

दूसरी समस्या के लिए दो कदम उठाने की जरूरत है। (क) कृषि जहां एक फसली है और बड़ी श्रम शक्ति को काम नहीं दे सकती है, उसे दो फसली या हो सके तो तीन फसली बनाने की आवश्यकता है। (ख) खेतिहर मजदूरों के एक हिस्से को कारखानों में काम लगाया जाए।

ग्रामीण गरीब

1. ग्रामीण गरीबों को संगठित करना—जो भारत के गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले लोगों का तीन चौथाई भाग बनते हैं—ताकि ये अपने आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक हकों को हासिल कर सकें। इनके रास्ते में मुख्य रुकावटें हैं—गरीबों की राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मामलों में धनवानों पर निर्भरता होना; नौकरशाही के ज्यादातर अफसरों की भूमिका भ्रष्टाचार और दमन आधारित होना; तथा विद्यमान कमजोर कानूनों को भी लागू नहीं करना। इन रुकावटों को दूर करने के लिए तथा गरीब लोगों का संगठन बनाने के लिए अनुकूल हालात पैदा करने के लिए कुछ सहायक कदम उठाये जाने चाहिए।

(क) ग्रामीण गरीबों की सामाजिक चेतना का स्तर ऊंचा उठाना (समेत उनके संवैधानिक अधिकारों, कानूनों एवं ग्रामीण गरीब पक्षीय सरकारी स्कीमों के बारे में

जागरुक करना)।

(ख) उनको मुफ्त शिक्षा, चिकित्सा, जच्चा-बच्चा संभाल, पीने लायक पानी मुहैया करवाना।

(ग) उनको परिवार नियोजन की जरूरत और शराब तथा अन्य सामाजिक बुराइयों से दूर रहने के लिए सहमत करना।

(घ) भूमि सुधारों को असरदार ढंग से लागू करना।

(ड़) चारागाह-जंगल तथा सरकारी जमीन जैसी साझी जायदाद पर उनके हक बहाल करना।

(च) उनको विकास के फायदे मिलें, इसको सुनिश्चित करवाना।

(छ) उनको कम ब्याज पर आवश्यक ऋण मुहैया करवाना।

(ज) रोजगार गारंटी वाली योजनाओं को शुरू करवाना, जिसमें निम्नतम मजदूरी अवश्य मिले (खास करके जंगलों की रक्षा के लिए भूमि सेना संगठित करना)।

(झ) मुफ्त कानूनी सहायता, गांव में घर की सहूलियत, बुढ़ापा पेंशन तथा ग्रुप बीमा के माध्यम से सामाजिक सुरक्षा मुहैया करवाना।

(ञ) खेती से संबंधित झगड़ों के हल के लिए न्यायिक मशीनरी का निर्माण करवाना।

(ट) ग्रामीण मजदूरों को ऊपर उठाने के लिए ग्रामीण मजदूर भलाई बोर्ड की स्थापना करवाना।

(ठ) ग्रामीण मजदूरों से संबंधित कानूनों को ठीक ढंग से लागू करवाने के लिए योग्य मशीनरी का निर्माण करवाना।

❋ ❋ ❋

(यह पेपर दिसम्बर 28, 1996 को जयपुर सेमीनार में पढ़ा गया)

भारत की राष्ट्रीय प्रक्रिया एक अनिश्चित भविष्य की तरफ

1. जैसा बोयेगा, वैसा काटेगा—यह पुरानी कहावत मानव इतिहास के विकास के आम नियम का सार-संक्षेप है। संयोग या इत्तफाक कभी-कभी इस नियम को भंग करते (उदाहरणतया, ओलावृष्टि से फसल नष्ट होने का संयोग) हैं। परन्तु साधारणतया यह नियम हर कहीं और हर समय प्रमुखता पर रहता है।

2. इसलिए आज हमारे देश में जो कुछ हो रहा है वह ना तो आकाश से टपका है और ना ही शून्य से पैदा हुआ है। यह ना तो अचानक फूटा है और ना ही अकारण पैदा हुआ है। अनुभव दर्शाता है कि प्रत्येक घटनाक्रम (चाहे वह प्राकृतिक हो या सामाजिक) अपनी विशिष्ट विकास की प्रक्रिया की देन है। यह प्रक्रिया लम्बी हो (उदाहरणतया, हमारी सौर-प्रक्रिया, जिसका अनुमान 5 अरब वर्ष का है) सकती है या छोटी अवधि (उदाहरणतया, एक क्वार्क का अस्तित्व एक सैकण्ड के दस लाखवें समय में माना गया है) हो सकती है परन्तु इसका विकास केवल इसके भागीदारों के सिद्धान्त और व्यवहार के अनुरूप ही विकसित होता है और उसी के अनुरूप इसका अन्त होता है।

II

3. हमारी वर्तमान राष्ट्रीय प्रक्रिया (जिसकी शुरूआत 1947 के बाद ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रक्रिया से बाहर आने से हुई) का भी अपना विशिष्ट इतिहास है। आज, जब यह अपनी स्वर्ण जयंती समारोह (50 वर्ष पूरे होने जा रहे हैं) की तरफ बढ़ रही है, इसके सभी पहलू और समस्त चलन (जैसा कि प्रिंट और इलेक्ट्रोनिक मीडिया रिपोर्ट कर रहा है) अत्यधिक कष्टदायक कहानियां बयान कर रहे हैं। उदाहरणतया, इसके उच्च राजनीतिज्ञों का घोटालों और धोखाधड़ियों में शामिल होना, राजनीतिक ठगी, बैंकों में गबन, व्यापारिक गड़बड़ियां, शेयर बाजार की जुआखोरी, नौकरशाही, भ्रष्टाचार, न्यायालय की अवमानना पर मुकदमेबाजी, न्यायालय में दसियों लाख मुकदमों का लम्बित पड़े होना, उच्च लागत और देरी से मिलता न्याय, हत्याएं, हिरासत में मौतें, मानवाधिकारों की अवहेलना, साम्प्रदायिक दंगे, जातीय झगड़े, महिलाओं की प्रताड़ना (बलात्कार, अपहरण, महिलाओं को भगाना, इत्यादि), बिजली गुल होना, पानी की कमी, टेलिफोन खराब होना, घोर गन्दे भण्डारों का होना, दुर्गन्धयुक्त सार्वजनिक शौचालय, अवरोध ग्रस्त यातायात, यातायात दुर्घटनाएं, कर्मचारी हड़तालें, मजदूर हड़तालें, किसान का विरोध प्रदर्शन, घटिया माल, अकुशलता,

ढिलाई, प्रदूषण, घटिया दवाइयां, मिलावटी खाद्य पदार्थ, कम तोलना, अवैध शराब, नशों का अवैध व्यापार, तस्करी, जुआखोरी, सभी सामाजिक जरूरियात में काला बाजारी (जैसे स्कूलों, कॉलेजों, हास्पिटलों में भर्ती प्रक्रिया का भ्रष्ट होना, रेलवे रिजर्वेशन, सिनेमा टिकटों, टैस्ट मैचों की टिकट हासिल करने में गड़बड़ी, किसी दुकान या मकान किराये लेने, पानी बिजली, टेलिफोन, राशन कार्ड अथवा गैस सुविधा का कनेक्शन लेने में व्याप्त भ्रष्टाचार, इत्यादि) का होना। झूठी चिट फंड कम्पनियों और रोजगार दफ्तरों का होना, झूठे विश्वविद्यालय, नकली मुद्रा विनिमय के सौदागर, टैक्स चोरी, पैसे का अवैध व्यापार, विदेश व्यापार में धोखाधड़ी, विदेशी बैंकों में अवैध पैसे जमा करवाना, इत्यादि-इत्यादि धन्धे खुले आम चल रहे हैं। अपराधीकरण के कारनामों को छोड़कर हमारे लोगों के लिए बहुत ही थोड़े ऐसे मामले बचते हैं जिन पर हम खुश हो सकें।

संक्षेप में, उपरोक्त वर्णित हमारी साझी सामाजिक कारगुजारी का आम परिदृश्य है, जिसमें हम मानवजाति का छठा भाग होते हुए भी पिछले तीन दशकों में विश्व ओलम्पिक खेलों में पिछले तीन दशक में कांस्य पदक भी प्राप्त नहीं कर सके हैं। हमारी राष्ट्रीय वास्तविकता का दूसरा पक्ष यह भी है कि हमारे राष्ट्र के कई नागरिकों ने निजी तौर पर कई क्षेत्रों में अपनी सार्थकता सिद्ध की है।

III

4. सन् 1995 की यू एन डी पी रिपोर्ट के अनुसार यद्यपि एक तरफ दुनिया के बाकी बचे विकासशील देश शान्ति और सम्पन्नता की तरफ बढ़ रहे हैं तो दूसरी तरफ दुनिया के दो क्षेत्र (दक्षिणी एशिया और सब-सहारा अफ्रीका के देश) गरीबी के दलदल में फंसे हुए हैं। जिसमें से भारत अकेले में सबसे अधिक गरीब, वंचित अशिक्षित, बेरोजगार, बीमार और अस्वस्थ, घर विहीन और नंगे लोग, न केवल इन दोनों क्षेत्रों बल्कि पूरी दुनिया में सबसे अधिक संख्या में है।

5. 193 देशों से संबंधित 'राष्ट्र की सम्पदा' शीर्षक से विश्व बैंक की रिपोर्ट यह इंगित करती है कि 16 प्रतिशत धन दौलत भौतिक पूंजी (यानि, इमारतें, सड़कें, मशीन, इत्यादि) से प्राप्त होती है तथा 20 प्रतिशत धन दौलत प्राकृतिक पूंजी (यानि, खनिज, जंगलात एवं अन्य प्राकृतिक संसाधनों से) प्राप्त होती है, बची हुई 64 प्रतिशत धन दौलत मानवीय पूंजी द्वारा उत्पन्न की जाती है। तथापि, हमारा देश अपनी जनता पर मुश्किल से ही ध्यान देता है, हमारे देश के 50 प्रतिशत लोग अभी भी अनपढ़ हैं, 40 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे हैं (योजना आयोग के नवीनतम मूल्यांकन के अनुसार), 33 प्रतिशत लोग पीने का पानी तालाबों से लेते हैं ना कि नलों से, 75 प्रतिशत लोगों को उचित शौच सुविधा उपलब्ध नहीं है, 80 प्रतिशत प्राथमिक स्वच्छता

विहीन हैं, 60 प्रतिशत को पर्याप्त स्वास्थ्य की देख-रेख नहीं मिलती, 33 प्रतिशत छत विहीन है, 5 प्रतिशत पूर्ण बेरोजगार तथा 40 प्रतिशत अर्द्ध-बेरोजगार हैं, सामाजिक वंचितपन का पैमाना भी दुखदायी है, पिछले 50 वर्ष में (1947 से 1996 के दौरान) भारत की आबादी 34 करोड़ 20 लाख से तिगुनी होकर 95 करोड़ हो गई है और आगे भी जनसंख्या वृद्धि मानव के लिए तकलीफदेह होगी।

IV

6. फिर भी, भारत के उद्भव होने से जीने की दशा पीड़ादायक होते हुए भी इसने क्षेत्रीय महाशक्तिवाद का रास्ता अपनाया है और सामाजिक शान्ति, समता और न्याय की राजनीति के बनिस्पत बन्दूक की राजनीति को प्राथमिकता दी है, इसने अपने दो पड़ोसियों (पाकिस्तान और चीन) से 4 युद्ध किए हैं लेकिन जनता को इससे कोई सारभूत लाभ नहीं मिला है। शीत युद्ध की राजनीति की समाप्ति के बाद भी इसने अपने सैनिक बजट को बढ़ाया है, दुनिया में विकासशील देशों के बीच हथियारों के आयात की सूची में प्रथम है, यह इसकी स्थिति तब है जब वैश्विक सैनिक खर्च 1987 से प्रतिवर्ष 4 बिलियन डालर घटा है तथा दुनिया के प्रत्येक क्षेत्र ने सैनिक खर्च कम किया है, केवल दो क्षेत्र—दक्षिणी एशिया और सब-सहारा अफ्रीका—ऐसे हैं जिन्होंने अपने सैनिक बजट को बढ़ाया है। सभी किस्म की सैन्य संबंधी गतिविधियों (जैसे, अर्द्ध-सैनिक बल, रॉ एवं आईबी की खूफिया एजेन्सियां, सुरक्षा एवं अनुसंधान के उद्योग, इत्यादि) पर विभिन्न शीर्षकों (जैसे गृह मंत्रालय, अनुसंधान और विकास, सार्वजनिक क्षेत्र, आदि) के तहत यह करीब 20 बिलियन डॉलर प्रतिवर्ष खर्च करता है।

7. भारत की बन्दूक की राजनीति का औचित्य इस तर्क पर आधारित है कि पाकिस्तान और चीन की तरफ से विद्यमान जुड़वां सैनिक चुनौतियों के मद्देनजर हमारी सैन्य ताकत को लगातार मजबूत करने की आवश्यकता है। परन्तु यह तर्क मौजूदा विश्व वास्तविकताओं को नजरअंदाज करता है जिससे यह तर्क हमारे युग की बन्दूक की राजनीति की निर्थकता को कम आंक कर देखता है। आज की एक वास्तविकता तो यह है कि सोवियत यूनियन का सैनिक महाशक्तिवाद धाराशायी हो गया क्योंकि वह अपनी जनता को रोटी और स्वतंत्रता प्रदान करने में असफल रहा। दूसरी अन्य वास्तविकता यह है कि मौजूदा अमेरिकी महाशक्तिवाद (जिसको किसी और से चुनौती नहीं है) आज दुनिया में सबसे अधिक कर्जदार है तथा कम वृद्धि दर एवं उच्च बेरोजगारी से पीड़ित है। तीसरी वास्तविकता यह है कि असैन्यकृत जापान एवं जर्मनी के वृद्धि दर वाले मॉडलों ने अपने आपको दुनिया की आर्थिक महाशक्तियों में तब्दील कर लिया है जबकि ये दोनों देश युद्ध से बर्बाद देश रहे हैं, इसके अलावा विश्व

समुदाय ने इनको सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता दिलवाने में सर्वसम्मत स्वीकृति प्रदान की है। चौथी, वास्तविकता यह है कि पूर्वी एशिया एवं दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों द्वारा गैर-टकराहट के रास्ते को अपनाया है जिसने इस एशिया क्षेत्र को आर्थिक तौर पर दुनिया की वृद्धि दर में बढ़ोतरी का इंजिन बना दिया है। पांचवीं वास्तविकता यह है कि आश्चर्यजनक पूर्वी एशिया की वृद्धि दर ने अमेरिका, कनाडा तथा कुछ अन्य प्रशान्त लातिनी अमेरिकी देशों को इन उच्च वृद्धि दर वाले एशियन देशों के साथ अपेक (एशिया प्रशान्त आर्थिक समुदाय) में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया है। छठी वास्तविकता यह है पिछले 2 सालों से भारत सिंगापुर और मलेशिया से अपेक की सदस्यता के लिए सिफारिश करने की याचना कर रहा है परन्तु उस संस्था का एक भी सदस्य दुनिया में 'सबसे बड़े लोकतंत्र' की प्राय: दुन्दुभी बजाने वाले की अपील को सुनने में दिलचरूपी नहीं रखते हैं। सातवीं वास्तविकता यह है कि एशिया का 'सबसे बड़ा बाजार' होने की शेखी बघारने वाला (यानि, भारत) एशियान क्षेत्रीय मंच में पर्यवेक्षक की हैसियत पाने में ही मान-सम्मान महसूस करता है जबकि इसमें कहीं छोटे और अल्प-विकसित देश (जैसे म्यानमार, कंबोडिया और लाओस) 2 सालों में एशियान की पूर्ण सदस्यता पाने के लिए सुनिश्चित हुए हैं। आठवीं वास्तविकता यह है कि सामाजिकता पर खर्च करने के बनिस्पत उच्च सैन्य खर्च (जैसे इराक 8 गुना, सोमालिया 5 गुना तथा निकारागुआ 3.5 गुना खर्च वाले हैं) करने वाले देश पिछड़े ही रह गए हैं। नवीं वास्तविकता यह है कि कोस्टारिका जिसने 1948 में ही अपनी सेना को भंग कर दिया था और जो अब अपनी राष्ट्रीय आय का एक तिहाई हिस्सा शिक्षा, स्वास्थ्य एवं पौष्टिकता पर खर्च करता है जिससे कलहग्रस्त मध्य अमेरिका के अन्दर केवल मात्र समृद्ध लोकतंत्र देश बना हुआ है।

V

8. क्षेत्रीय महाशक्तिवाद का रास्ता हमारे देश को कहां ले गया ? कुछ जानी-मानी एजेन्सियों (सरकारी और गैर-सरकारी दोनों) ने हालिया आंकड़े प्रसारित किये हैं, जो हमारी आजादी के 50 वर्ष बाद हम कहां खड़े हैं, बहुत ही तकलीफदेह दृश्य पेश करते हैं।

9. प्रायोगिक आर्थिक अनुसंधान राष्ट्रीय परिषद (NCAER) द्वारा प्रदत्त 1996 के आंकड़ों के अनुसार भारत की 39 प्रतिशत जनसंख्या (यानि 95 करोड़ में से 38 करोड़) गरीबी की रेखा के नीचे जीवन बसर कर रहे हैं और भारत की ग्रामीण जनसंख्या का 37 प्रतिशत भूमिहीन है। यही सरकारी आंकड़े क्रमश: 19 प्रतिशत और 10 प्रतिशत के हैं।

10. खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) के कृषि अर्थशास्त्री पीटर रोजनेगर

कहते हैं कि अच्छे मानसून के बावजूद भारत में अनाजों का उत्पादन 1980 और 1990 के दौरान निरन्तर गिरता जा रहा है।

11. सरकारी आंकड़ों के अनुसार पिछले पांच वर्षों में जबकि इसका कृषि उत्पादन 1.9 प्रतिशत की दर से बढ़ा है, परन्तु प्रतिदिन प्रति व्यक्ति अनाज की उपलब्धता जो 1991 में 511 ग्राम थी वह घट कर 1996 में 465 ग्राम रह गई है यह 1960 के स्तर के बराबर है। आज यह तथ्य बाजार में आटे की भयंकर कमी से चिह्नित हो रहा है और यह तब हो रहा जब दो दशक पहले ही सरकार ने घोषणा कर दी थी कि देश अनाज में आत्मनिर्भर हो गया है और यहां तक कि निर्यातक भी हो गया है। इस सन्दर्भ में प्रधानमंत्री का हाल ही में खाद्य एवं कृषि संगठन के रोम सम्मेलन में दिया गया वक्तव्य कि सन् 2000 तक भारत से भूख मिटा दी जायेगी, कितना हास्यास्पद वक्तव्य नजर आता है।

12. 1996 का अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का विश्व आर्थिक नजरिए में लिखा गया है कि अधिक वित्तीय घाटे और पूर्ति में बाधा से उत्पन्न भारत में उच्च ब्याज दर के कारण लम्बे समय तक आर्थिक वृद्धि दर धीमी हो सकती है तथा महंगाई बढ़ने एवं बाह्य असुरक्षा का जोखिम सामने है। कुछ क्षेत्रों में इस लेखन से सावधानी से काम करना जरूरी है—जैसे वित्तीय घाटा (जो वर्तमान में केन्द्र व राज्य दोनों को शामिल करते हुए जीडीपी का 10 प्रतिशत है)।

13. हाल ही की विश्व बैंक रिपोर्ट के मुताबिक भारत आन्तरिक ऋण-जाल के कगार पर खड़ा है। 1995-96 में सरकार की आय 110,000 करोड़ रुपये थी जबकि ऋण और ब्याज कुल 123000 करोड़ रुपये का था। 1994-95 में 89000 करोड़ रुपये आय के मुकाबले में ऋण और ब्याज 106000 करोड़ रुपये था।

14. विश्व बैंक के एक मूल्यांकन के अनुसार यदि भारत के कारपोरेट क्षेत्र ने 100 बिलियन डालर देश के बाहर हस्तांतरित नहीं किये होते तो 1991 में भुगतान संतुलन संकट उत्पन्न नहीं होता (तमाम अन्तर्राष्ट्रीय ऋणदाता एजेन्सियों से ली गई 95 बिलियन डालर की उधार शामिल है)।

15. फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के एक अध्ययन के आकलन के अनुसार भारत के विदेशी व्यापार में आयात का अधिक मूल्यांकन और निर्यात के कम मूल्यांकन के नतीजतन प्रतिवर्ष 2.5 बिलियन डालर से 4 बिलियन डालर तक अकेले अमेरिका को हस्तांतरित हो जाता है।

16. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष विश्व बैंक के बीच वितरित रिपोर्टों के अनुसार भारत अपना हिस्सा 5.1 प्रतिशत से घटकर 2 प्रतिशत होने के कारण आई.एम.एफ. और विश्व बैंक के बोर्ड में अपनी सीट गंवाने के कगार पर खड़ा नजर आता है।

17. मानव संसाधन मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार 1990-91 के राजस्व लेखा-जोखा के कुल खर्च में सार्वजनिक सेवा (मानव संसाधन विकास) का हिस्सा 38 प्रतिशत से गिरकर 35.2 प्रतिशत रह गया है। 1992-93 और उसके आगे वाले 2 सालों तक कमोबेश यही स्तर बना रहा जबकि शिक्षा पर व्यय 1990 के स्तर पर ही रहा परन्तु चिकित्सा एवं जन स्वास्थ्य खर्च में कटौती हुई है। राज्यों में प्रति व्यक्ति सामाजिक सेवा खर्च कम होता जा रहा है।

18. यूनिसेफ की एक रिपोर्ट का कहना है कि दक्षिणी एशिया (और विशेष तौर पर भारत में) का पौष्टिकता का स्तर सबसे खराब है, जिसमें माता की मृत्यु की उच्च संख्या है तथा कम वजन के बच्चे अधिक हैं।

19. 1996 यू.एन.डी.पी. रिपोर्ट कुल 174 देशों में से भारत को 135वें नम्बर पर दर्शाती है, पाकिस्तान से भी 2 नम्बर कम पर है। इस रिपोर्ट का आगे कहना है कि दक्षिणी एशिया (विशेषतौर पर भारत, पाकिस्तान, बंगलादेश, नेपाल और भूटान) में 20 प्रतिशत लोग अति गरीबी का जीवन व्यतीत कर रहे हैं तथा क्षमता विहीन हालातों में 62 प्रतिशत लोगों का भविष्य प्रतिकूल प्रभावित हो सकता है।

20. भारत के उत्पादकता स्तर को देखा जाए तो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के काल में विश्व की कुल उत्पादकता एवं वाणिज्य क्रमश: 5.5 एवं 14 गुना बढ़ा, उसके मुकाबले में हमारी राष्ट्रीय उत्पादकता 2.5 गुना बढ़ी तथा विश्व व्यापार में पहले भारत का हिस्सा 2.5 प्रतिशत था जो घटकर 0.6 प्रतिशत रह गया है। चीन में आज प्रति वर्ष प्रति कामगार की उत्पादकता 11000 डालर है, इसकी तुलना में भारत की केवल 900 डालर है, जबकि पाकिस्तान की उत्पादकता 1500 डालर है, जो भारत से अधिक है। पूर्वी और दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों में दो दशकों से वार्षिक वृद्धि दर 7 प्रतिशत रही है, उनसे हम बहुत पीछे रह गये हैं। दुनिया की तुलना में भारत की उच्च दर वाले भ्रष्टाचार के कारण उत्पादन एवं व्यापार की लागत के संदर्भ में यह हानिकर साबित हुआ है।

21. उत्पादन लागत के संबंध में भारत में पूंजी/उत्पादन अनुपात 1990 में 6/1 रहा है जबकि विकसित देशों में 2.5/1 और एशियान आर्थिकताओं में 3/1 रहा है। अर्थात् भारत में 6 रुपये के खर्च से 1 इकाई उत्पादन होता है जबकि विकसित देशों में 2.5 रुपये एवं एशियान देशों में 3 रुपये के निवेश पर 1 इकाई का उत्पादन प्राप्त कर लिया जाता है।

22. हमारे उत्पाद की गुणवत्ता अधिकांशत: अन्तर्राष्ट्रीय स्तर से नीचे होती है। हमारी परम्परागत वस्तुओं जैसे—चाय, जूट, रूई, कपड़ा, जूते एवं कुछ खाद्य पदार्थ को छोड़ दें तो हमारी वस्तुओं एवं सेवाओं की मुश्किल से ही कोई मांग होती है।

VI

23. हमारे मानवीय और भौतिक संसाधनों के अकुशल उपयोग और बर्बादी ने सामाजिक प्रक्रिया को अवहनीय बना दिया है, परिणामस्वरूप पर्यावरण के सभी घटकों में ह्रास हुआ है। वायु प्रदूषण, दूषित पानी, भूमि में गिरावट तथा जंगल विनाश ने पर्यावरणीय चुनौतियों (जैसे अम्ल वर्षा, अधिक गर्मी, आदि) को बढ़ा दिया है, जिससे स्वास्थ्य जोखिम बढ़ गया है, इसमें नई किस्म की घातक बिमारियां एवं पृथ्वी पर सम्पूर्ण जैव-जीवन के विलुप्त होने का गंभीर खतरा शामिल है।

VII

24. क्षेत्रीय महाशक्तिवाद के लक्ष्य ने हमारे पड़ोसियों के साथ अच्छे संबंधों में रुकावट डाली है। पिछले 50 सालों से पाकिस्तान और भारत के बीच में निरन्तर दुश्मनी के कारण जम्मू-कश्मीर के मसले पर तीन युद्ध किये हैं। इस तमाम काल में नेपाल और श्रीलंका भारत की नियत के प्रति संदेहास्पद रहे हैं। भूटान ने सभी नाजुक मुद्दों पर जोखिम भरे समाधान से बचने के लिए अपने शक्तिशाली पड़ोसी देश भारत का समर्थन एक आसान विकल्प के रूप में अपनाया है। बंगलादेश भारत के साथ 2 दशकों पुराने खराब रिश्तों को एक बार पुन: ठीक करने की कोशिश कर रहा है। बड़ी शक्तियों के प्रति भारत ने हमेशा विनम्र रुख अपनाया है (उदाहरणतया पूर्व-सोवियत संघ के साथ भारत का गठजोड़, अमेरिका के साथ गैर-टकराहट का रुख तथा चीन के साथ सीमा विवाद होते हुए भी दोस्ताना संबंध बढ़ाना, चेचन्या में रूसी कार्यवाही का अपरोक्ष समर्थन, सोमालिया, रवाण्डा एवं बोस्निया आदि में अमेरिका तथा यूरोपियन समुदाय की कार्यवाहियों पर चुप्पी साधना)।

25. क्षेत्रीय महाशक्तिवाद की प्रेरणा ने हमेशा हमारे राष्ट्रीय कार्यक्रम में सैन्यवाद को सबसे ऊपर रखा है और परिणामस्वरूप इस गैर-उत्पादक क्षेत्र में गैर-टिकाऊ खर्च को बनाए रखा है जबकि इससे अधिक उपयोगी सामाजिक क्षेत्र की अवहेलना की है। जम्मू कश्मीर पर भारत और पाकिस्तान के बीच निरन्तर तनाव ने दक्षिण-एशिया को दुनिया में सबसे खतरनाक संभावित क्षेत्र में बदल दिया है।

VIII

26. ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि सामाजिक तौर पर किसी भी कुकृत्य या मानवीय असफलता का बुनियादी कारण मनुष्य के मनोगत पहलू (यानि, मनुष्य की अवधारणों एवं प्रत्युत्तर) तथा वस्तुगत वास्तविकता (चाहे सामाजिक हो या प्राकृतिक) के बीच तालमेल ना होने में निहित है। इसलिए यह जरूरी है कि सामाजिक वास्तविकताओं के प्रति हमारी अवधारणाओं एवं हमारे प्रत्युत्तर की वास्तविक जांच-परख की जाए।

27. पहली सामाजिक वास्तविकता यह रही है कि 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश राज्य के तहत एक इकाई में एकीकृत हुआ आधुनिक भारत एक बहु-नस्लीय, बहु-सांस्कृतिक, बहुधार्मिक, बहुभाषाई देश है, ब्रिटिश ने इस पर राज उपनिवेशी व्यवस्था के जरिए किया है (जो मुख्यतया ताकत आधारित रहा है)। परन्तु ब्रिटिश राज की समाप्ति के बाद भारत की बहु-आयामी वास्तविकता को एक पूर्ण संघीय एवं विकेन्द्रित व्यवस्था की दरकार थी। इसकी बनिस्पत 1947 के बाद की मुख्यधारा वाली पाटियां (मुख्यतया कांग्रेस) भारत को एक चली आ रही पारम्परिक एकल वास्तविकता वाले समाज के रूप में देख रही थी तथा इन्होंने एक ऐसे मॉडल का चयन किया जो केन्द्रीयकरण एवं बहुसंख्यक धर्मनिरपेक्षता पर आधारित था। ये दोनों चरित्र एकरूपता पर जोर देने वाले हैं और इसलिए भारत की बहुपक्षीय वास्तविकता के साथ बेमेल रहे हैं।

28. द्वितीय सामाजिक वास्तविकता यह रही कि भारत में बहु-दलीय संसदीय व्यवस्था के उद्भव को कानून के राज को थामे रखने की आवश्यकता थी परन्तु कांग्रेस तथा उस जैसी पार्टियां सामंती लीक से ग्रसित थी, जिन्होंने धन-बल शक्ति, साम्प्रदायिकता एवं जातीय विभाजन की सहभागी बेईमान साधनों के साथ जैसे-तैसे (या वोट बैंक की राजनीति) सत्ता हथियाने की राजनीति को अपनाया। इस प्रकार सभी आधुनिक और परम्परागत नैतिक आचार-विचार के मानदंडों को कमजोर किया।

29. तीसरी सामाजिक वास्तविकता यह रही कि 1947 के बाद का भारत उस समय सामने आया जब भिन्न-भिन्न समुदायों के एकीकरण का अतीत से चले आ रहे अभियान ने द्वितीय विश्व युद्ध के बाद और अधिक गति पकड़ ली थी। इस वैश्विक एकीकरण की प्रक्रिया की आवश्यकता थी कि विश्व बाजार के विस्तार में भारत की सक्रिय भागीदारी रहे, परन्तु भारत के आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भरता के लक्ष्य ने वैश्विक आर्थिकता से इसे जोड़ने में रुकावट पैदा की।

30. चौथी सामाजिक वास्तविकता यह रही कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद का दौर सभी विकासशील देशों के साथ गैर-प्रभुत्व एवं गैर-टकराहट का रास्ता अपनाने की मांग कर रहा था, परन्तु प्राचीन भारतीय महाशक्ति के वैभव का अन्ध-राष्ट्रवादी सिद्धान्त तथा वर्तमान समय की महाशक्तियों के पदचिह्नों पर चलने से निर्देशित होकर भारत ने क्षेत्रीय महाशक्तिवाद की राजनीति को अपनाया जिसने सैन्यवाद को प्रथम प्राथमिकता दी, जिसके कारण कमजोर की छाती पर चढ़ने एवं शक्तिशाली के सामने नरम रहने की प्रवृत्ति अपनाई।

31. उपरोक्त गलत धारणाओं एवं अनुचित प्रत्युत्तर ने भारत को आज की स्थिति में धकेला है।

32. सामाजिक वास्तविकताओं की गलत समझ पर चलने से भारत की मुख्य धारा की पार्टियों ने राष्ट्र की असफलता के भिन्न-भिन्न बहाने—जैसे अल्पसंख्यक समर्थक धर्मनिरपेक्षता, उच्च जातीय दमन, विदेशों द्वारा पैदा की गई मुश्किलें, भारत का बड़ा आकार एवं लोगों की विविधता, आदि अपनाये।

IX

33. विद्यमान व्यवस्था जो पूर्णतया भ्रष्ट एवं सड़-गल गई है, वह अब वापिस दुरुस्ती लायक नहीं रही है।

34. मामलों को पटरी पर लाने की मांग है कि तीन सिद्धान्तों पर चला जाये—(क) पूर्व के अनुभवों से सीखा जाए, (ख) आज की वास्तविकता से शुरूआत की जाए, और (ग) एक सही दृष्टिकोण अपनाया जाए।

35. पूर्व-अनुभव की पुकार पुरानी व्यवस्था को पुनरगठित करने की है। आज की वास्तविकता जनता को अधिकतम संगठित करने की मांग करती है। और भविष्य का दृष्टिकोण वैश्विक मानव समुदाय के उभरने की रोशनी में सामाजिक पुनरगठन की दूरदृष्टि देता है, जिसका तात्कालिक चरण क्षेत्रीय समुदाय (उदाहरणतया, यूरोपीय समुदाय, एशियान, नाफ्टा, मरकूसर, राज्यों का राष्ट्रमंडल, कुछ पूर्व सोवियत गणराज्य), सार्क, इत्यादि हो सकते हैं।

36. उपरोक्त मूल आवश्यकताओं से प्रारम्भ करते हुए भारत के पुनरगठन के लिए निम्न कदम उठाये जाने चाहिए—

(क) टिकाऊ विकास, जिसे एक तरफ प्राकृतिक एवं सामाजिक हितों (यानि पर्यावरणीय सुरक्षा) के एवं दूसरी तरफ समाज (यानि भारत) में भिन्न-भिन्न सामाजिक समूहों (गरीब-अमीर, शहरी-ग्रामीण, लिंग असमानता, आदि) के बीच संतुलन की आवश्यकता है।

(ख) टिकाऊ विकास के लिए वास्तविक शांति की राजनीति की तथा महाशक्तिवाद की राजनीति और इसके टकरावादी पद्धति को रद्द करने की आवश्यकता है। आज विश्व में वास्तविक शांति तभी सुनिश्चित की जा सकती है जब विभिन्न देशों के हितों के तालमेल कायम किया जाए तथा राष्ट्रीय शांति को तभी पाया जा सकता है जब राष्ट्र के अन्दर के विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच संतुलन बनाया रखा जाए। दक्षिणी एशिया में हमेशा के लिए शांति बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों का समायोजन किया जाए।

(ग) वास्तविक शांति की राजनीति की आवश्यकता है कि भारत को महासंघीय तौर पर गठित किया जाए जिसमें राज्यों को अर्द्ध-स्वतंत्रता का दर्जा हासिल हो, सभी संस्थाओं का पूर्णतया जनवादीकरण हो एवं सभी स्तरों पर लोगों का सशक्तिकरण हो।

(घ) एक पूर्ण लोकतंत्र के लिए जनवादी व्यवहार एवं उचित नैतिक मानदंडों की आवश्यकता है।

(ड़) टिकाऊ विकास, शांति एवं पूर्ण लोकतांत्रिकरण के लिए आवश्यक है कि एक संतुलित आर्थिक वृद्धि हो, वैश्विक आर्थिकता के साथ निकटता वाला एकीकरण हो तथा वह बाजार प्रदत्त वृद्धि एवं राज्य द्वारा सामाजिक न्याय देने वाले जुड़वां सिद्धान्तों पर आधारित हो।

(च) उपरोक्त सभी मूलभूत तत्व वैज्ञानिक वास्तविकतावाद के आम नजरिये को अपनाना एवं तर्कसंगत मानवतावाद के सामाजिक नजरिए को — जिसके साथ पूर्ण लोकतांत्रिक एवं मूल्य आधारित व्यवहार जुड़ा हुआ है—अपनाना जरूरी बनाते हैं।

37. त्रिपक्षीय कार्य के जरिए लोगों को लामबन्द किया जाना चाहिए:

(क) उनकी तात्कालिक समस्याओं पर लोगों को संगठित किया जाए।

(ख) वर्तमान भारतीय व्यवस्था एवं उसके संचालकों की व्यर्थता के बारे में जनता को सहमत किया जाए।

(ग) भारत में वैश्विक निर्देशित लोकतांत्रिक व्यवस्था स्थापित करने के लिए उन्हें प्रेरित किया जाए, साथ ही विभिन्न मुद्दों पर, जैसे, जम्मू-कश्मीर समस्या, मानवाधिकार, सामाजिक न्याय, लिंग समानता, अल्पसंख्यकों के मुद्दे, आदि-आदि विभिन्न प्रकार के संयुक्त मोर्चे बनाये जाने चाहिए।

38. भारत के पुराने फार्मूले हिन्दुत्वकरण या मंडलवादीकरण या नेहरूवादीकरण या सर्वहाराकरण (यानि, साम्यवादीकरण)- जब कभी व्यवहार की कसौटी पर कसे गये हैं तब ये सभी फार्मुले भारत की जरूरतों की पूर्ति के लिए निष्प्रभावी साबित हुए है।

39. हमारी न्यायिक प्रक्रिया के जरिए भारतीय व्यवस्था को पुनरजीवित करने के नये मंत्र मात्र भ्रम हैं। कुछ सकारात्मक न्यायिक निर्णय बिना शक इस व्यवस्था के कुछ गलत पहलुओं एवं व्यवहार को रोकने की लाभदायक भूमिका अदा कर सकते है एवं करते है, परन्तु कोई न्यायिक निर्णय बुनियादी व्यवस्थागत परिवर्तन या नई व्यवस्था का निर्माण नहीं कर सकते। इसका कारण यह है कि वर्तमान भारतीय संविधान के तहत कार्यपालिका (दूसरे शब्दो में सबसे ऊपर के राजनीतिज्ञ) द्वारा

नियुक्त किये गये मात्र नामांकित न्यायाधीश होते है, उनके पास केवल संविधान और कानून की केवल व्याख्या करने की शक्ति होती है।

वे कानून को समृद्ध बना सकते हैं एवं उसे निरस्त भी कर सकते हैं। परन्तु उनके पास विधायिका की कोई शक्ति नहीं होती और इस सबके अलावा, न्यायाधीश निश्चित सामाजिक माहौल की देन होते हैं तथा वे स्वर्ग से उतरे हुए नहीं होते है। इसलिए, सामाजिक नैतिकता की जो स्थिति होती है, वैसी ही न्यायाधीशों की नैतिकता की स्थिति होती है।

40. वर्तमान राष्ट्रीय परिदृश्य निराशाजनक है। भारत के ऊपर तुफानी बादल मंडरा रहे है। यदि समय रहते समस्याओं को हम ठीक नहीं करते तो उसके नतीजे विध्वंशक हो सकते हैं। राजनीतिक अराजकता, आर्थिक अस्थिरता, एवं नैतिक पतन, साम्प्रदायिक एवं जातीय विभाजन के साथ जुड़कर हमारे सामाजिक ताने-बाने को यह छिन्न-भिन्न कर सकते हैं। दिनांक 23.12.1996

❋ ❋ ❋

(आल पार्टी हुर्रियत कान्फ्रेंस के लिए पत्र, नवम्बर 26, 1996)

चुनाव के बाद का जम्मू-कश्मीर परिदृश्य एवं इसकी मांगे

I

(1) जम्मू-कश्मीर में चुनाव के बाद की आम परिस्थिति एवं विशेष तौर पर घाटी की परिस्थिति ओर अधिक बिगड़ गई है।

(2) फारूख अब्दुल्ला के मंत्रीमंडल के गठन के केवल 50 दिन बाद घाटी के तमाम लोग गरीब, मध्यम तबका एवं अमीर (व्यापारी तथा उद्योगपति) से गठित- इस नये ढाँचे से ऊब चुके है। घेरा डालना, तलाशी लेना, पहचान मार्च करवाना, गायब करना, हिरासत में मौतें, गोली चलाना, पीटना, बलात्कार, चिरस्थायी गरीबी और बेराजगारी, मंहगाई, आवश्यक वस्तुओं की कमी एवं कालाबाजरी (जिसमें केरोसीन तेल और रसोई गैस शामिल है) बार-बार बिजली गुल होना, घटियां गुणवत्ता वाले दूध और मांस तथा सार्वजनिक वितरण व्यवस्था के तहत घटिया वस्तुओं की आपूर्ति एवं 7 साल पुराने बिजली व पानी के बिलों के बकाया अदा करने व विक्रय एवं आयकर आदि की मांग करके लोगों को तंग-परेशान करने के प्रयास ने सामाजिक जीवन को और अधिक पीड़ादायक बना दिया है।

(3) लद्दाख में नई सत्ता व्यवहार के विरूद्ध प्रतिरोध स्वरूप पर्वतीय विकास परिषद के सदस्यों द्वारा इस्तीफा दिया जाना लोगों की भावनाओं को इंगित करता है।

(4). जम्मू में चुनाव से पहले फारूख सरकार से लोगों की जो आशाएं थी वे कम हो गई हैं। घाटी में भविष्य में अच्छी कारगुजारी बाबत इनकी पहले की आशाएं खरी नहीं उतरी है। परन्तु उन्हें अभी भी इन्तजार है कि वे इस क्षेत्र में कुछ करने लायक स्थिति में होगें।

(5) राजनीतिक क्षेत्र में, कुछ महत्वपूर्ण सरकारी कदम- जैसे, जिला विकास बोर्डो का पुर्नगठन, विधानसभा के उपाध्यक्ष का चुनाव, स्वायतता के बिन्दु पर नई-दिल्ली से बातचीत करने के लिए कर्णसिंह कमेटी का गठन, अन्तरक्षेत्रीय स्वायत कमेटी का नामांकन करना, आदि-सत्ताधारी पार्टी के हाथों में शक्ति के एकाधिकार के प्रति इसके रूझान को दर्शाते हैं। बिना शक इसने सभी नई दिल्ली समर्थक पार्टियों- भाजपा, कांग्रेस, जनता दल, बसपा, आदि को क्रोधित किया है, जो इनके हालिया वक्तव्यों से साबित होता है।

II

(6) फारूख सरकार के बनते ही जन विरोध शुरू हो गया, जबकि इससे

पहले की नेशनल कान्फ्रेन्स की सरकार के विरूद्ध जन विरोध के बिन्दु तक पहुंचने में काफी समय लगा, ऐसा क्यों हुआ, इसका कारण तीन नये उभरे पहलुओं में निहित है। पहला कारण है कश्मीरी लोगों का नई दिल्ली से अलगाव होना, दूसरा कारण है कश्मीर खाड़कूओं और भारतीय सुरक्षा बलों के बीच हथियारबन्द मुठभेड़ों का जारी रहना तथा तीसरा वर्तमान सरकार का चरित्र, यानि घाटी में चुनाव के लिए लोगों के अनिच्छुक होने के बावजूद उन पर चुनाव थोपने से बनी यह सरकार है। थोपे गये चुनाव से बनी सरकार से उपजा तर्क उसे बांधता है कि इस प्रक्रिया से फायदा पाने वाले घटक (दिल्ली सरकार) की सेवा करे एवं लोगों के प्रति संदेह करे कि क्या जनता फारूख सरकार के हितों का ध्यान रखेगी। घाटी में चल रहे हालातों में यह सरकार नई दिल्ली के प्रति अग्निशामक का कार्य करने के लिए उत्तरदायी है।

III

(7) जम्मू-कश्मीर (विशेष तौर पर घाटी) में मौजूदा हालात में राजनीतिक या आर्थिक किसी भी प्रकार के सुधार की इस सरकार के लिए मामूली गुंजाइश है। इसके निम्न कारण है:

(A) नई दिल्ली की बन्दूक आधारित राजनीति जो विशेष तौर पर घाटी में तथा आम तौर पर जम्मू-कश्मीर में सभी लोकतांत्रिक मानदंडों को अपनाने से बचती है और सुरक्षा बलो को निर्बाध शक्तियां प्रदान करती है।

(B) भारतीय राज्य का केन्द्रीयकरण एवं बहुसंख्यक राष्ट्रवाद का चरित्र, जो देश में सत्तावाद और देश के बाहर प्रभुत्ववाद का व्यवहार करता है- इस प्रकार राज्य को किसी भी तरह की स्वायतता देने से इन्कार करता है।

(C) भारत की मुख्यधारा वाली पार्टियों की बेईमान राजनीति, जो लोगों के हितों की बजाए, व्यक्तिगत एवं पार्टी हितों को प्रधानता देती है।

(D) नई दिल्ली की कमजोर आर्थिकता एवम् वित्तीय स्थिति, जो जम्मू कश्मीर को किसी भी प्रकार की भारी मात्रा में विकास सहायता की संभावना को धूमिल करती है।

(E) राज्य में तेजी से बढ़ रही गरीबी (जो अभी 30 प्रतिशत से ऊपर चल रही है) तथा बेरोजगारी (पढ़े-लिखों में 5 लाख और अनपढ़ों में 5 लाख से ऊपर का होना।

(F) जम्मू-कश्मीर में भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद का बढ़ना।

(G) नेशनल-कान्फ्रेन्स का सत्ता पर एकाधिकार होना।

(H) भारत में राजनीतिक हालात का अस्थिर होना एवं केन्द्र सरकार के किसी भी प्रकार की राजनीतिक दृष्टि का अभाव होना।

(8) यद्यपि नई दिल्ली वर्तमान जम्मू-कश्मीर की सत्ता को कश्मीरी जनता के विभिन्न समुदायों के बीच विभाजन पैदा करने वाले हथियार के रूप में उपयोग ले सकती है, और यह भूमिका बन्दूक की राजनीति के दृष्टिकोण के लिए बहुत उपयोगी है।

IV

(9) जम्मू-कश्मीर, क्योंकि नई दिल्ली और इस्लामाबाद के राष्ट्रीय कार्यक्रम का मुख्य मुद्दा है और इसलिए यह विश्व शान्ति की प्रक्रिया का बहुत ही उच्च ज्वलंत बिन्दु है, इनकी ये विशेष परिस्थियां भी जम्मू-कश्मीर के मामलों पर सीधा प्रभाव डालती है।

(10) भारत और पाकिस्तान के अपने-अपने राजनीतिक मामलों के संबंध में, यानि पाकिस्तान में चल रहा राजनीतिक संकट तथा भारत में वर्तमान राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति के रहते कोई संभावना नहीं है कि भारत-पाक के बीच चले आ रहे गतिरोध को भंग किया जा सके- जो दक्षिणी एशिया के विकास में एक रूकावट है।

(11) अर्न्तराष्ट्रीय परिस्थिति के सन्दर्भ में, विश्व के विभिन्न संगठनों (यू एन, आई एम एफ, डब्ल्यू बी, नाम, ओ आई सी, एपेक, एशियान, सार्क, आदि) या कोई भी देश (सिवाय पाकिस्तान के) में से किसी की भी मनोदशा ऐसी नहीं है कि वह जम्मू-कश्मीर के सवाल पर कोई नई पहल करे।

(12) यहां तक कि भारत, पाकिस्तान और दुनियां की लोकतांत्रिक शक्तियां भी अपने-अपने मामलों में पहले से ही उलझी हुई है।

V

(13) उपरोक्त तथ्य जम्मू-कश्मीर की लोकतांत्रिक शक्तियों के कंधों पर एक भारी जिम्मेवारी सौपती है जो जम्मू-कश्मीर की गुत्थी की बुनियादी और जमीनी हकीकत से शुरू करके न केवल इस समस्या का न्यायपूर्ण एवं उचित समाधान ढूंढ सकते है बल्कि इस 50 वर्ष पुरानी भारत-पाक की गलाघोंटु स्थिति से बाहर निकलने में सहयोग दे सकती है- इस प्रकार विश्व शान्ति एवं विकास प्रक्रिया को मजबूती प्रदान की जा सकती है।

(14) लेकिन उपरोक्त उद्देश्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब जन लोकतांत्रिक आन्दोलन के निर्माण के लिए सही दिशा अख्तियार की जाए। दुनियां का तमाम अनुभव ऐसे आन्दोलन को संगठित करने के लिए एक उचित दिशा की महत्वता पर जोर देता है। स्पष्टतया, एक सही दिशा का खाका तैयार करने की यह मांग है कि निम्न सवालों पर पूर्णतया स्पष्टता हो:

(A) संबंधित लोगों की पहचान क्या है? यानि, जम्मू-कश्मीर के लोग एक राष्ट्र है या एक राष्ट्रीयता, अथवा एक इस्लामी समूह या एक अलग कश्मीरी स्वतंत्र इकाई है या वे बहु-नस्ली पहचान रखते हैं।

(B) इस समस्या का स्वभाव (चरित्र) क्या है? यानि, क्या जम्मू-कश्मीर समस्या राष्ट्रीय सवाल या ईस्लामिक सवाल या कश्मीरी सवाल या विवादास्पद मुद्दे का प्रतिनिधित्व करती है या यह विवाद त्रिपक्षीय द्विपक्षीय, या एक पक्षी यानी एक ही देश के अन्दर केन्द्र और उसकी इकाइयों के बीच विवादास्पद मुद्दा है)

(C) उपरोक्त लोकतांत्रिक आन्दोलन का दीर्घकालीन एवम् अल्पकालीन लक्ष्य क्या है? इस मामले में क्या यह सम्पूर्ण राज्य स्वतंत्र हो या इसका कोई एक भाग या पूर्ण रूप से भारत या पाकिस्तान के साथ विलय हो जाए या क्या ऐसे समाधान का अन्दाजा किया जा सकता है कि सम्पूर्ण राज्य अर्द्ध-स्वतंत्रता का दर्जा प्राप्त हो जिसमें इसके प्रत्येक नस्लीय समूह को भारत-पाक सहराज्य या सार्क के नियंत्रण के तहत अधिकतम संभव स्वायतता प्राप्त हो।

(D) उपरोक्त लोकतांत्रिक आन्दोलन का रास्ता क्या हो? इस मामले में क्या यह शान्तिपूर्ण हो या अशान्तिपूर्ण हो?

(E) उपरोक्त लोकतांत्रिक आन्दोलन की सकारात्मक व नकारात्मक शक्तियों की विभिन्न श्रेणियां क्या है?

(F) इसके संगठन का स्वरूप क्या हो? क्या वह एक केन्द्रीकृत हो या संघीय हो।

(G) जनता को लामबद्ध करने की प्रक्रिया का तरीका क्या हो? इस मामले में हमारा केन्द्रिय नारा क्या है तथा लोगों को प्रेरित करने के लिए हमारे पूरक औजार क्या है।

(H) समान उद्देश्य के लिए हथियारबन्द संघर्ष कर रहे समूहों के प्रति हमारा नजरिया क्या हो? इस मामले में खाड़कुओं के बारे में हमारी स्थिति क्या है।

(I) विस्तृत संभव एकता के निर्माण के लिए न्यूनतम संभव कार्यक्रम क्या है?

(15) उपरोक्त सभी बिन्दुओं की जरूरत है कि इन सभी बिन्दुओं को राज्य के सभी तरह के लोकतांत्रिक तत्वों की संयुक्त बैठक में विचार-विमर्श किया जाए।

VI

(16) आई डी पी ऐसी किसी भी बैठक में भाग लेने के लिए तैयार है जिसमें अधिकतम एवं न्यूनतम दोनों के लिए साझे कार्यक्रम पर गहराई से विचार विमर्श किया जाए। यद्यपि, इस समय उपरोक्त बिन्दुओं के संबंध में निम्न राय है, जिसे संशोधित या परिवर्तित भी किया जा सकता है यदि इससे वास्तविक विकल्प उपलब्ध हो।

(A) पहला बिन्दु :- जम्मू-कश्मीर की जनता बहु-नस्लीय पहचान का समूह है।

(B) दूसरा बिन्दु :- जम्मू-कश्मीर समस्या एक त्रिपक्षीय समस्या है जिसके तीन पक्षकार हैं, यानि, भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू कश्मीर के लोग।

(C) तीसरा बिन्दु:- इसका दीर्घकालीन लक्ष्य है कि जम्मू-कश्मीर समस्या का समाधान भारत पाक सहराज्य के तहत (या सार्क के नियंत्रण के तहत) किया जाए, जिसमें जम्मू-कश्मीर को अर्द्ध स्वतंत्रता प्राप्त हो तथा उसकी प्रत्येक आठों नस्लीय पहचानों को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्राप्त हो।

इसका अल्पकालीन लक्ष्य है कि चौथे भारत-पाक युद्ध से बचाव, भारत-पाक तनाव को कम करने, सभी लोकतांत्रिक तत्वों को सांझा मोर्चे में एक स्वीकृत न्यूनतम कार्यक्रम के आधार पर संगठित करने एवं जम्मू-कश्मीर के विभिन्न नस्लीय ग्रुपों के बीच जम्मू-कश्मीर के भविष्य के ढाँचे हेतु सहमति निर्माण करने, पर काम किया जाए।

(D) चतुर्थ बिन्दु :- शान्ति पूर्ण रास्ता अपनाया जाए।

(E) पांचवा बिन्दु:- सकारात्मक शक्तियों के संबंध में, वे सभी जो जम्मू कश्मीर समस्या के चरित्र को त्रिपक्षीय विवाद पर सहमत है, वे सभी राजनीतिक शक्ति के भाग हैं विभिन्न नस्लीय क्षेत्रिय समूह इसकी बुनियादी ताकत है; भारत और पाकिस्तान में लोकतांत्रिक शक्तियाँ जो त्रिपक्षीय विकल्प का समर्थन करते हैं इसके सक्रिय सहयोगी है; तथा अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति चाहने वाली ताकतें इसकी हमदर्द हैं। वे सभी नकारात्मक शक्तियां है जो जम्मू-कश्मीर समस्या के चरित्र को एक सैन्य सवाल समझती हैं, इसके सैन्य समाधान का चयन करती हैं, लोगों पर अत्याचार करती हैं तथा मानवाधिकारों का उल्लंघन करती हैं।

(F) छठा बिन्दु:- जम्मू-कश्मीर राज्य के बहु-नस्लीय स्वभाव को ध्यान में रखते हुए, यह संघीय किस्म के संगठन जिसमें प्रत्येक नस्लीय समूह अपना स्वायत संगठन बना सकता है, को मान्यता प्रदान करता है।

(G) सातवां बिन्दु:- इसकी लामबन्द करने की प्रक्रिया विभिन्न किस्म की गतिविधियों को शामिल करती है।

राजनीतिक तौर पर, इसका प्रयास है कि जम्मू कश्मीर में (साथ ही भारत के अन्य भागों में) भाषण व लेखन दोनों के जरिए, इसके कार्यक्रम की बुनियाद पर लोगों को लामबन्द किया जाए। इसका केन्द्रीय नारा है त्रिपक्षीय समाधान जिसका दृष्टिकोण भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के सांझे और संयुक्त भविष्य के आधार पर टिका है। इसकी गतिविधि का महत्वपूर्ण हिस्सा है, मानवाधिकारों की

सुरक्षा तथा लोगों के लिए सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करना।

आर्थिक तौर पर, यह लोगों को उनके बुनियादी आर्थिक मुद्दों के साथ उनकी दिन-प्रतिदिन मांगों के समाधान के लिए लोगों को लामबन्द करने की कोशिश करता है।

सांस्कृतिक तौर पर, यह विभिन्न किस्म की मानवीय सांस्कृतियों को मानता है तथा राज्य में तर्कसंगतता के आधार पर प्रत्येक नस्लीय संस्कृति को संगठित करने एवं फलने-फूलने का समर्थन करता है।

(H) आठवाँ बिन्दु:- यह नई दिल्ली और खाड़कूओं के बीच युद्ध विराम के समझौते पर पहुंचने के सवाल पर बिना शर्त बातचीत करने की पहल का समर्थन करता है, इससे पहले सभी सुरक्षा बलों को वापिस बैरकों में भेजा जाए, सैन्य बल विशेष अधिकार अधिनियम को समाप्त किया जाए तथा उन सभी कैदियों को रिहा कर दिया जाए जिन पर आरोप के लिए पर्याप्त कारण नहीं हो। नई दिल्ली और खाड़कूओं के बीच बातचीत के साथ ही, इसकी मांग है कि जम्मू-कश्मीर समस्या पर त्रिपक्षीय बात शुरू करने के लिए नई दिल्ली आवश्यक कदम उठाये।

(I) नवां बिन्दु :- यह उन सभी का विस्तृत संभव मोर्चा (जिसे त्रिपक्षीय मंच कहा सकता है) बनाये जाने का पक्षधर है, जो जम्मू कश्मीर समस्या को त्रिपक्षीय विवाद होना स्वीकार करते है, जिसके संबंधित तीन पक्ष भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के लोग हैं। यह इस मोर्चे में उनको भी शामिल करने को तैयार है जो जम्मू-कश्मीर समस्या को भारत व पाक के बीच द्विपक्षीय मुद्दा मानते हैं। एक या दूसरे समूह की शर्तों पर विस्तृत आधार पर एकता बनाना एक जटिल मामला है, जो संभव नहीं है।

VII

(17) घाटी में काम को संगठित करने के संबंध में आइ डी पी के निम्न सुझाव है:-

(A) सबसे ऊपर लोगों की निष्पक्ष एवं व्यवस्थित जीवन के इंतजाम करने के लक्ष्य को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, यानि लोगों की समस्याओं, जैसे व्यक्तिगत, पारिवारिक, गली, मोहल्ला, वार्ड या ग्रामीण इकाई से लेकर ब्लॉक, तहसील, जिला एवं क्षेत्रीय स्तर पर ध्यान दिया जाए, लोगों की समस्याओं में-गरीब, वंचित, बेरोजगार (पढ़े-लिखे व अनपढ़), असंगठित मजूदर (ग्रामीण और शहरी दोनों), किसान, दस्तकार, खेती करने वाले, बागवानी करने वाले, सब्जी उत्पादक, दूध और गोश्त बेचने वाले, हांजिस, रेहड़ीवाले, सार्वजनिक वितरण व्यवस्था से जुड़े दुकानदार, संगठित मजदूर और सभी तरह के कर्मचारी एवं उनकी यूनियने, छोटे व मध्यम श्रेणी

के दुकानदार (गांव व शहर दोनों में), बड़े व्यापारी, उद्योगपति, आदि इसके अलावा बिजली व पानी, अस्पताल, स्वच्छता (पैशाब घर, शौचालय, कूड़े के ढेर सहित), स्कूले, कॉलेज, विश्वविद्यालय, सड़क, यातायात, टेलिफोन, खाद्य एवं आपूर्ति, सब्जियां, रसोई गैस, लकड़ी, कोयला, भ्रष्टाचार, पक्षपातवाद, सांझी जमीनों पर अतिक्रमण, धोखाधड़ी, अधिक कीमत वसूलना, सार्वजनिक धन का दुरूपयोग, कालाबाजारी, अपराध रोकना (जंगली लकड़ी की चोरी, शहतूत पेड़ को गिराने, आदि), तथा बिजली और पानी की कीमतों के प्रश्न, विक्रय कर, आय कर आदि, सार्वजनिक हड़ताल या कर्मचायिों की हड़ताल बिना कारण के नहीं करना- इत्यादि शामिल है जिन पर ध्यान दिया जाए।

(B) अन्य प्राथमिकताएं निम्न क्रम में रखी जा सकती है:-

(I) उन सभी को जिनके खिलाफ कोई मुकदमा नहीं बनता है, ऐसे सभी को रिहा करवाने के लिए हस्ताक्षर अभियान शुरू किया जाए।

(II) पिछले 7 सालों में मानवाधिकारों के उल्लघन की सभी गतिविधियों के बारे में निम्न बिन्दुओं पर, जैसे सभी हत्याओं, हिरासत में मौत, बन्दे का गायब होना, गोली चलने, पिटाई करने, बलात्कार, हिरासत, घेराबंदी, तलाशियां, पहचान मार्च, घर जलाने, सम्पत्ति को नुकसान पहुंचाने तथा लूटपाट करने, बलपूर्वक मजदूरी करवाने, कार छीनने, वाहनों के यात्रियों की चैकिंग करने, आर्मी कैम्पों में नौजवानों को बुलाने और उनको गालियां देने के संबंध में एक गैर-सरकारी न्यायिक आयोग गठित किया जाए जो सही-सही विस्तृत और सम्पूर्ण सूचनाओं को एकत्रित कर सूचीबद्ध करे। इस आयोग को मानवाधिकारों पर विचार-विमर्श करने के लिए सेमीनार भी आयोजित करने चाहिए, जिसमें राज्य के सभी हिस्सों से बुद्धिजीवियों को निमंत्रण किया जाए, साथ ही साथ सभी सार्क देशों (भारत,पाकिस्तान सहित) से मानवाधिकार आयोग के सदस्यों, न्यायधीशों, वकीलों, प्रोफेसरों, बुद्धिजीवियों, आदि को भी निमंत्रित किया जाए।

(III) एक गैर-सरकारी जांच आयोग को गठित किया जाए जो विदेशी बंधकों के साथ-साथ नेपाली और बिहारी मजूदरों की हत्याओं, राजस्थानी पर्यटकों तथा डोडा के गद्दी आदिवासियों के मामले की छानबीन करे।

राजनीतिक दिशा को प्रस्तुत किया जाए जिसका बुनियादी उद्देश्य वाद-विवाद, सेमीनार, सार्वजनिक मिटिंग, कमरों के अन्दर मिटिंग, पर्चे, पोस्टर, आदि के जरिए जनता के बीच आम विचार-विमर्श करवाना हो।

(V) उन सभी समूहों और व्यक्तियों के बीच जो जम्मू-कश्मीर के सवाल को

विवादास्पद स्वीकार करते हो चाहे वो अपने विशेष लक्ष्य एवं काम के तरीके पर ही चलते हो, इन बातों पर ध्यान दिये बगैर विस्तृत सम्भव एकता कायम की जाए।

(VI) आजाद कश्मीर सहित जम्मू-कश्मीर के अन्य हिस्सों में जो लोकतांत्रिक शक्तियां काम कर रही है उनके साथ सोच और व्यवहार की एकता कायम की जाए।

(VII) जम्मू-कश्मीर के विभिन्न क्षेत्रों में उन सभी लोकतांत्रिक तत्वों और व्यक्तियों का सम्मेलन बुलाया जाए जो न्यूनतम स्वीकृत कार्यक्रम पर विस्तृत संभव मोर्चा बनाने के लिए काम कर रहे हैं।

(VIII) भारत, पाकिस्तान और अन्य सार्क देशों के लोकतांत्रिक शक्तियों के साथ निकट का सम्पर्क स्थापित किया जाए।

(IX) दुनिया के सभी शान्तिप्रिय, लोकतांत्रिक ताकतों की सहानुभूति और सहयोग हासिल किया जाए।

(X) युद्ध-बन्दी रेखा के दोनों तरफ के सभी किस्म के नेताओं का सम्मेलन बुलाने की कोशिश की जाए।

(XI) भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के विभिन्न लोकतांत्रिक ताकतों की एक समुचित प्रतिनिधित्व वाली बैठक दिल्ली या जालंधर एवं यदि संभव हो तो जम्मू में करने की कोशिश की जाए।

(18) वास्तविकता के आधार पर निर्णय लेने तथा उनको उचित तौर पर लागू करने की आवश्यकता है जिसमें अधिकतम लाभ मिले तथा न्यूनतम हानि हो।

❋ ❋ ❋

जे के समस्या और भारत-पाक शान्ति प्रक्रिया

I

1. तीन वर्ष के बाद जम्मू-कश्मीर के मुद्दे सहित भारत-पाकिस्तान के बीच सभी सम्बन्धित मुद्दों पर बातचीत पुनः प्रारम्भ करने की घोषणा एक अति स्वागत योग्य कदम है। क्योंकि इससे हालात सामान्य होंगे और अन्ततः दक्षिण एशिया में तनाव में कमी आयेगी एवम् शान्ति तथा विकास की विश्व प्रक्रिया मजबूत होगी। स्पष्टतः, इससे सभी - यानि भारत, पाकिस्तान, दक्षिण एशिया के साथ-साथ विश्व—के हितों की सेवा होगी। भारत-पाक के बीच एक या दो बार की वार्ता से चमत्कारिक परिणाम हासिल नहीं किये जा सकते क्योंकि दोनों देशों के शासक ग्रुपों की घरेलू राजनीतिक स्वार्थपरायणता इसमें बाधक है। परन्तु इस शान्ति प्रक्रिया की केवल शुरूआत ही भविष्य में अच्छे अन्त की ओर ले जायेगी।

2. तीन मुख्य कारणों से यह नया विकास हुआ है -

(A) दोनों देशों में अपनी-अपनी कमजोर आर्थिकताओं और प्रबल आर्थिक संकटों के प्रति बढ़ रही अनुभूति के कारण अपनी पुरानी टकरावावादी लाइन को बिना किसी राजनीतिक अस्थिरता के खतरे को मोल लिये बगैर चलाना टिकाऊ नहीं हो सकता है। और अगर ये अभी भी टकरावावादी दलदल में फँसे रहते है तो ये जल्दी ही विश्व के कंगाल बन जायेंगे। ये पहले से ही बहुत से पूर्वी और दक्षिणी-पूर्वी एशियाई विकासशील देशों से काफी पिछड़ चुके है।

(B) दूसरा कारण चौतरफा व्याप्त वैश्वीकरण प्रक्रिया में है जो समस्त विश्व में शान्ति प्रक्रिया की सामान्य हवा दो तरीकों से चला रही है। यह एक तरफ क्षेत्रिय व्यापारिक समुदायों को जन्म दे रही है एवम् निवेश, व्यापार, तकनीकी और संस्कृति का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करते हुए प्रतिद्वन्द्वी देशों में नई जागृति पैदा कर रही है तथा साथ ही उनको अपने विवादित मुद्दों को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल करने के लिए गैर-टकरावावादी दिशा में मुड़ने का संदेश देते हुए उन्हें जिन्दा रहने की चुनौती से आगाह कर रही है। और दूसरी तरफ यह प्रक्रिया विश्वभर में गैर-प्रतिद्वन्दी देशों को दिशा दे रही है कि वे प्रतिद्वन्दी देशों पर बातचीत के रास्ते को अपनाने का दबाव डालें, जिससे विश्व के सभी तनाव बिन्दुओं को हल करने में विश्व का साझा प्रयत्न सफल हो सके। बहुत से देश विकसित के साथ-साथ विकासशील (दक्षिण एशियाई देशों सहित) भारत और पाकिस्तान को अपने विवादों को बातचीत से हल करने का परामर्श पहले से दे चुके है। भारत और पाकिस्तान दोनों पर वैश्विक अनिवार्यता दबाव डाल रही है कि वे मामलों को अति पर ना ले जायें।

(C) तीसरा कारण मानवीय सामाजिक विकास का नियम है जो मानव समाज की आम प्रक्रिया में आवश्यक तौर पर शान्ति और विकास के आधारभूत लक्षणों (पहलुओं) की माँग करता है, जबकि टकराव और युद्ध इस लम्बे समय में कभी-कभी आने वाले अवधान मात्र रहे हैं।

II

(3) भारत-पाक टकराव की 50 वर्ष लम्बी प्रक्रिया पर नजरसानी करने से यह स्पष्ट होता है कि मुख्य तनाव बिन्दु हमेशा से जम्मू-कश्मीर मसला रहा है, जिसके परिणामस्वरूप इनके बीच तीन युद्ध पहले से हो चुके हैं। मसला अत्यधिक जटिल है जो सभी तरह के हल को नकार चुका है। अलग-अलग व्याख्याओं के बावजूद भारत और पाकिस्तान सहित लगभग सभी देश इस मसले के विवादित होने की वास्तविकता को मान चुके हैं। चाहे भारत इसे 1972-शिमला समझौते के तहत द्विपक्षीय मुद्दा कहता है तो पाकिस्तान इसे संयुक्त राष्ट्र प्रस्तावों के तहत अन्तर्राष्ट्रीय विवादित मुद्दा कहे परन्तु दोनों ही व्याख्याएँ जेके को दोनो देशों के बीच अनसुलझा मसला करार देती है।

(4) कुछ कट्टरपंथी दिसम्बर 1993 में भारतीय संसद द्वारा सर्वसम्मति से लिए गये प्रस्ताव (कि जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है) के हवाले से उस हर एक को राष्ट्रद्रोही कहते हैं जो जम्मू-कश्मीर मासले को विवादित मानता है और उसका शान्तिपूर्ण तरीके से हल करने की आवश्यकता पर जोर देता है। वास्तव में स्थिति यह है कि स्वयं कट्टरपंथी भी जम्मू-कश्मीर के सवाल पर अपने उच्च नेताओं के आत्म-प्रवंचना (खुद धोखा खाना) के शिकार हैं। ये राजनीतिज्ञ एक तरफ जेके राज्य को भारत का अभिन्न अंग बताते हैं और दूसरी तरफ इसको भारत-पाकिस्तान के बीच की द्विपक्षीय समस्या करार देते है तथा सन् 1947 से आज तक इस मसले पर पाकिस्तान से वार्ता करते रहते हैं। पार्लियामैंट के प्रस्ताव के मुख्य अवहेलना करने वाले और कोई नहीं बल्कि उच्च नेता और स्वयं सरकार है।

(5) इसी तरह भारत-चीन सीमा विवाद पर अक्टूबर 1962 में पार्लियामैंट ने सर्वसम्मति से प्रस्ताव पास किया जिसका हश्र भी ऐसा ही हुआ। इसके अनुसार भारतीय भूमि से जब तक प्रत्येक चीनी सिपाही को बाहर नहीं फेंक दिया जाता तब तक चीन से कोई वार्ता नहीं की जायेगी। चीनी फौंजें आज भी वहीं खड़ी हैं जहां अक्टूबर 1962 में खड़ी थी, परन्तु भारत ने अपने इस संसदीय प्रस्ताव की साफ अवहेलना करते हुए सन् 1993 में चीन के साथ यथास्थिति कायम रखने का सीमा समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये। जबकि इस समझौते का आधार तैयार करने के लिए भारत के दो भूतपूर्व प्रधानमंत्री द्वारा चीन की सद्भावना यात्राएं की गई। सन् 1979 में चीन की यात्रा करने वाली मुख्य हस्ती, भारतीय संसद की पवित्रता का मुख्य हीरो

अटलबिहारी बाजपेई विदेश मंत्री के तौर पर अक्टूबर 1962 के सर्वसम्मत प्रस्ताव की अवहेलना करने वाला पहला नेता बना।

(6) इस सबका यह अर्थ नहीं है कि भारत द्वारा 1990 के आसपास चीन से वार्ता करने में कोई गलत बात है। हकीकत में हमारे राष्ट्रीय हितों की माँग है कि वार्तालाप को आगे बढ़ाया जाए। यह कार्य 40 वर्ष पहले ही कर लेना चाहिए था। ऐसा करते तो हमें 1962 के भारत-चीनी युद्ध की शर्मनाक हार नहीं देखनी पड़ती और 40 साल तक भारत-चीन सीमा की अतिरिक्त सुरक्षा पर अरबो रूपये खर्च नहीं करने पड़ते जिससे हमारे गरीब देश का धन बचाया जा सकता था। इस तरह की हरकत में गलती यह है कि इससे 1962 में सर्वसम्मति से लिए गये संसदीय प्रस्ताव की अवास्तविकता और अव्यवहारिकता पर पर्दा डाला जाता है। इस तरह के व्यवहार में दोगलापन साफ नजर आता है कि दो एक जैसे मामलों में अलग-अलग व्यवहार करना - उदाहरण के लिए भारत-चीन विवाद में समझौताकारी रूख अपनाना जबकि पाकिस्तान के साथ विवाद में झगड़े का रूख अपनाना। इस नजरिए का आधार राजनीतिक अवसरवाद में निहित है जो कमजोर को आँख दिखाता है और मजबूत के सामने घुटने टेकता है।

(7) किसी देश के राष्ट्रीय हितों की सेवा अवास्तविक धारणाओं और दोगलेपन के व्यवहार से नहीं की जा सकती। पिछले 50 वर्षों में भारत के राष्ट्रीय हितों को हानि पहुँचाने के मुख्य जिम्मेवार बेअसूले और भ्रष्ट शासक, एक संकीर्ण एवम् चमत्कारिक राष्ट्रवाद तथा अधिनायकवादी एवम् केन्द्रीयकृत संवैधानिक कानूनी व्यवस्था है। इन मूलभूत कमियों को जितना जल्दी हो सके दूर करे, यह भारत के हित में है। इसमें और अधिक देरी ऊंट पर बोझे का अन्तिम भार साबित न हो जाए।

(8) ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि भारत और पाकिस्तान की फौज आधारित लाईन एवं टकरावावादी दिशा ने पिछले 50 सालों में दोनों देशों का विकास अवरुद्ध किये रखा है जबकि 1945 के बाद जर्मनी और जापान के गैर-फौजी राष्ट्रीय मॉडल ने महायुद्ध में बर्बाद इन दोनों को आर्थिक महाशक्तियों में तब्दील कर दिया है। इसी तरह पूर्व और दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों द्वारा अपनाई गई गैर-टकरावावादी राष्ट्रीय विकास नीति ने इस एशियाई क्षेत्र को विश्व वृद्धि का उभरता हुआ आर्थिक इंजिन बना दिया है।

III

(9) किसी निश्चित सामाजिक वास्तविकता को समझने की प्रक्रिया की माँग है कि इसके लिए ना केवल वर्तमान अवस्था को ही समझा जाए बल्कि इसके बीते

इतिहास पर नजरसानी करते हुए इसके भविष्य की दिशा तय की जाए। इसका अर्थ है कि किसी प्रक्रिया को उसकी सम्पूर्णता में देखा जाए।

(10) इस प्रकार, भारत-पाक टकराव के साथ-साथ जम्मू-कश्मीर समस्या की सम्पूर्ण प्रक्रिया पर नजरसानी करने से हम समझ सकते हैं कि इसकी शुरूआत सन् 1947 के भारत विभाजन से हुई। जिसका (विभाजन का) कारण 1947 से पहले की कांग्रेस और मुस्लीम लीग की अपनी-अपनी संकीर्ण तथा अन्धराष्ट्रवादी लाइनों का ही पारिणाम था। कांग्रेस का राष्ट्रवाद हिन्दू बहुसंख्यक धर्म-निरपेक्षतावाद के लक्षणों से भरपूर था जबकि मुस्लिम लीग का राष्ट्रवाद पान-इस्लामबाद से संचालित था। सन् 1947 के बाद भारतीय राष्ट्रवाद (जो अब इसके संवैधानिक-कानूनी व्यवस्था, राज्य ढाँचे और इसकी मुख्य राजनीतिक पार्टियों, इत्यादि के रूप में साकार है) का सिद्धान्त और व्यवहार जातीवाद और साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देता है, जिससे देश की सामाजिक और राजनीतिक एकता कमजोर हुई है, जबकि पाकिस्तान ने सुन्नीवाद का पक्ष लेते हुए पंजाबी अन्धराष्ट्रवाद को बढ़ावा दिया है जिसके परिणामस्वरूप पाकिस्तान का विभाजन (स्वतंत्र बांग्लादेश का बनना) हो गया तथा ना केवल बहुसंख्यक और अल्पसंख्यकों के बीच बल्कि विभिन्न मुस्लिम समुदायों (उदाहरणतया शिया-सुन्नी, सुन्नी-अहमदिया इत्यादि) के साथ-साथ पंजाबी और गैर-पंजाबी समुदायों के बीच तीव्र विभाजन हुआ है।

(11) सन् 1947 से अब तक दोनों देशों का सबसे बड़ा राष्ट्रीय मुद्दा रहा है एक दूसरे को किसी भी कीमत पर नुकसान पहुंचाना। दोनों देश बहुत सी आर्थिक और राजनीतिक बिमारियों से ग्रसित होने के बावजूद बेतहाशा अपने-अपने टकरावावादी मार्ग पर चल रहे है जो उनके हालात को और अधिक खराब कर रहे हैं।

(12) टकरावावादी रास्ते की त्रासदी यह है कि यह शीत-युद्ध के बाद की वैश्वीकरण की प्रक्रिया की गतिशीलता (या चाल) से मेल नहीं खाता है। आज के युग की वैश्वीकरण प्रक्रिया की माँग है कि देशों के बीच द्विपक्षीय अथवा बहुपक्षीय विवादों को बातचीत और समझौते के तरीकों से हल करते हुए सभी देशों के बीच दोस्ताना और सहयोग के रिश्ते कायम किये जाए। यह रास्ता वैश्वीकरण की प्रक्रिया से हर बिन्दू पर टकराता है - जैसे यह प्रत्येक देश का आर्थिकता को विश्व बाजार से जोड़ने से लेकर क्षेत्रीय आर्थिक संगठनों को खड़ा करने के विपरित रास्ता है। जितना जल्दी एक राष्ट्रीय आर्थिकता इन सुत्रों को अपनायेगी उतना ही उसके आगे बढ़ने के आसार खुलेंगे।

(13) आज भारत-पाक का टकरावावादी रास्ता सार्क देशों के विकास और परिणामस्वरूप खुद के विकास के रास्ते में सबसे बड़ी बाधा है। नई सामाजिक

आवश्यकता की माँग है कि भारत-पाक के संकीर्ण तथा अन्धराष्ट्रवादी और उनके टकरावादी रास्ते की जगह वैश्विक राष्ट्रवाद और शान्तिपूर्ण मार्ग की ओर बढ़ा जाए। स्पष्टतया, इस बदलाव की चाबी जेके समस्या के न्यायपूर्ण और उचित हल में निहित है।

IV

(14) उपरोक्त तथ्य सभी शांति पसंद एवम् जनवादी ताकतों पर बहुत बड़ा दायित्व सौंपते है कि भारत-पाक के बीच विवादित जेके समस्या के मुख्य बिन्दु को हल करने के एक वास्तविकता आधारित लाइन का निर्माण करें। यह लाईन निम्नलिखित बिन्दुओं पर आधारित हो सकती है।

A. जेके समस्या का मूलभूत स्वरूप

जैसा कि भारत-पाकिस्तान सहित सभी देशों और संयुक्त राष्ट्र की सहमति है कि यह समस्या भारत-पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय विवादित मुद्दा है जिसको जेके की जनता की भागीदारी से हल किया जाना है और किया जा सकता है। कहने का अर्थ है कि वास्तव में यह एक त्रिपक्षीय समस्या है।

B. जम्मू-कश्मीर के लोगों का स्वरूप

जेके के लोग एक एकीकृत इकाई (यानि, एक देश, राष्ट्रीयता या नस्ली समुदाय) में गठित नहीं है। ये कुल मिलाकर भिन्न प्रेरणा और आंकांक्षाओं के लगभग 8 नस्ली-क्षेत्रीय पहचानों के समूह हैं।

C. जमीनी वास्तविकताएँ

(अन्तर्राष्ट्रीय, उपमहाद्वीपीय, जम्मू-कश्मीर राज्य)

जहाँ तक विश्व की जमीनी हकीकत का सवाल है, विश्व के विभिन्न तरह के संगठनों (संयुक्त राष्ट्र, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, नाम, ओ आई सी, ओपेक, आशियान, सार्क, इत्यादि) तथा कोई भी देश (पाकिस्तान को छोड़कर) जम्मू-कश्मीर के सवाल पर कोई भी पहलकदमी लेने को तैयार नहीं है।

जहाँ तक उपमहाद्वीपीय विश्व वास्तविकता का संबंध है, आज अधिक से अधिक जनता भारत-पाकिस्तान के बीच गतिरोध को तोड़ना चाहती है, हालांकि अपने-अपने देश के पक्ष में जम्मू-कश्मीर समस्या के हल की इच्छा अवश्य रखती है।

जम्मू-कश्मीर की जमीनी वास्तविकता के अनुसार प्रत्येक नस्ली-क्षेत्रीय पहचान अपने-अपने विशिष्ट उद्देश्य लिए हुए हैं जबकि इनमें से कश्मीरी समुदाय

(राज्य में बहुसंख्यक नस्ली, समुदाय बनता है) जेके—राज्य के संबंध में वर्तमान भारतीय राजनीतिक ढाँचे को बदलने के लिए सशस्त्र संघर्ष कर रहा है।

जहाँ तक नेशनल कान्फ्रेन्स सरकार का संबंध है, यह घाटी में पूर्णतया अलग-थलग पड़ चुकी है और अपने तंग नजरिए के कारण इसकी जम्मू और अन्य क्षेत्रों में जमीन खोना प्रारम्भ हो चुका है।

जहाँ तक नई दिल्ली का संबंध है, इसके राजनीतिक नजरिये में कमी है, यह केवल फौजी हल चाहता है जिसके लिए कश्मीरी खाड़कूओं के बीच विभाजन चाहता है और खुद पूर्णतया बन्दूक का सहारा लेता है।

D. परिप्रेक्ष्य

जम्मू-कश्मीर के हल का फार्मुला या भारत-पाक शांति की प्रक्रिया का परिप्रेक्ष्य वैश्विक राष्ट्रवाद (अब कुछ हद तक लगभग सभी देश अपने तरीके से व्यवहार में इसका पालन कर रहे हैं), दक्षिण एशियाई समुदाय, वैश्विकवाद या तर्कसंगत मानवतावाद कायम करना होना चाहिए।

E. उद्देश्य

उपरोक्त परिप्रेक्ष्य के अनुसार इसका उद्देश्य भारत-पाक शांति प्रक्रिया को आयोजित करने या भारत-पाक के बीच आम तौर पर सभी तरह के विवादित मुद्दों एवं खास तौर पर जम्मू-कश्मीर समस्या को त्रिपक्षीय प्रक्रिया (जिसमें भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों को शामिल करके) द्वारा हल करके दोनों के रिश्तों में दोस्ताना और सहयोगी संबंध स्थापित करना है। तीनों पक्षों के बीच आम सहमति से भारत-पाक या सार्क सहराज्य कायम किया जा सकता है जिसके तहत सुरक्षा, विदेश मामले और मुद्रा का हो, एवं जम्मू-कश्मीर की अर्द्ध-स्वतन्त्रता सुनिश्चित करे तथा जेके के आठ नस्लीय पहचानों में से प्रत्येक को अधिकतम स्वायतता प्रदान करे। विभिन्न तरह के दूसरे विकल्प जैसे — आत्मनिर्णय का अधिकार, जनमत संग्रह, दोनों देशों में से किसी एक देश के साथ विलय, जेके को यू एन के नियन्त्रण में रखना, या कोई अन्य आधार वाला विकल्प भारत और पाकिस्तान को नजदीक लाने के उद्देश्य की सेवा नहीं करेगा।

F. पथ एवं रणनीति

इसके परिप्रेक्ष्य और उद्देश्य के अनुसार भारत-पाक शांति-प्रक्रिया का रास्ता अख्तियार करने के लिए तीनों संबंधित पक्षों को शामिल करने वाले त्रिपक्षीय बातचीत के पथ को अपनाया जाना चाहिए। इस शांति प्रक्रिया की राजनीतिक ताकतें वहीं सब बनती हैं जो जम्मू-कश्मीर समस्या को त्रिपक्षीय विवादित मुद्दा स्वीकार

करती हैं; जम्मू-कश्मीर के विभिन्न नस्ली-क्षेत्रीय समूह इसकी आधारभूत ताकते हैं, भारत और पाकिस्तान की जनवादी ताकतें जो इस समस्या के शांतिपूर्ण हल के समर्थक हैं, इसके सक्रिय समर्थक हैं; और अन्तर्राष्ट्रीय शांति पसंद ताकतें इसकी हमदर्द हैं। वो सभी ताकतें जो जेके समस्या को सैनिक समाधान से करना चाहते और ऐसे ही हल का समर्थन करते हैं और कश्मीर में अत्याचार करते हैं मानव अधिकारों का हनन करते हैं, ऐसे सभी भारत-पाक शांति प्रक्रिया के लिए नकारात्मक ताकते हैं।

G. संगठन

भारत पाक शान्ति प्रक्रिया या जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के लिये मूलभूत उसूलों (यानि परिप्रेक्ष्य, उद्देश्य, मार्ग, रणनीति और राज्य की बहुनस्ली संरचना) की रोशनी में यह आवश्यक है कि जम्मू-कश्मीर एक संघात्मक जन संगठन राज्य के प्रदेश नस्ली क्षेत्र में गांव से लेकर क्षेत्रीय स्तर तक निर्माण किया जाय। शुरूआत से ही एक वृहद सम्भव मोर्चे के रूप में संगठित किया जाय (त्रिपक्षीय मोर्चा या जम्मू-कश्मीर समस्या के शान्तिपूर्ण हल के लिये फोर्म या भारत-पाक शान्ति प्रक्रिया मंच या इसी तरह का कोई अन्य संगठन), ये संगठन जेके समस्या के शान्तिपूर्ण हल को मजबूती से पकड़े और उन सभी को उसमें शामिल करे जो इस समस्या को भारत पाकिस्तान और जम्मू कश्मीर के लोगों का मुद्दा (यानि त्रिपक्षीय मुद्दा) मानते हो। जेके मुद्दे को भारत और पाकिस्तान के मध्य द्विपक्षीय मुद्दा समझते है या वो लोग जो जेके समस्या के शान्तिपूर्ण हल के समर्थक है उनको भी इस मोर्चे में शामिल किया जाय। किसी एक या किसी दूसरे ग्रुप को आधार बनाकर ऐसे विस्तृत आधार वाले मोर्चे का निर्माण करना संभव नहीं।

H. ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस

भारत और पाकिस्तान से ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस (शाबिरशाह के नेतृत्व वाला पीपल्स लीग सहित) द्वारा जेके के सवाल को शान्तिपूर्ण त्रिपक्षी आधार पर हल करने की मांग का नजरिया सकारात्मक है, परन्तु ये एक स्पष्ट निशाने और कई अन्य आवश्यक उसूलों पर साफ नहीं है।

यह लोगों के सामने तीन राजनैतिक लक्ष्य प्रस्तुत करता है : आत्म निर्णय, जनमत संग्रह एवं त्रिपक्षीयवाद। तीनों अवधारणाएँ एक जैसा अर्थ नहीं रखती है।

आत्मनिर्णय

संक्षेप में आत्मनिर्णय किसी निश्चित लोगों के समूह का (नस्ली समुदाय या राष्ट्रीयता या एक राष्ट्र बनने की खासियत रखने वाले समूह) स्वाभाविक प्राकृतिक आधार होता है।

ऐसे लोग जो अपने आपको एक देश में गठित नहीं कर सके हैं परन्तु वे ऐसा करने की ख्वाहिस रखते हैं। इसके उलट जनमत संग्रह और त्रिपक्षीयवाद सहज प्राकृतिक अधिकार नहीं है।

जनमत संग्रह

यह केवल किसी देश के लोगों को दिया गया सीधा वोट का अधिकार है या किसी क्षेत्र के संविधान द्वारा दिया गया अधिकार या किसी जनमत संग्रह अथोरिटी द्वारा जनमत संग्रह का अधिकार लोगों को देने जिसमें वे किसी एक के विरुद्ध या पक्ष में अपने वोट का कानूनी रूप से उपयोग कर सके। जब संयुक्तराष्ट्र सम्बंधित पार्टियों की सहमति से लोगों के किसी समूह को जनमत संग्रह का अधिकार देती है तो यह आत्म निर्णय के अधिकार में तब्दील नहीं हो जाता है। इस मामले में भी लोगों को वोट का अधिकार मिला, जबकि संयुक्तराष्ट्र की अथोरटी ने जनमत की शर्तें निर्धारित की है।

त्रिपक्षीय वार्ता

त्रिपक्षीयवाद का अर्थ है किसी मामले के तीन पक्ष का होना या तीन पक्षों द्वारा कोई फार्मूला तैयार करना। यहाँ इसका अर्थ है तीन पक्ष (यानि भारत, पाकिस्तान और जेके के लोग) जेके की समस्या में शामिल है और इन तीनों के समान राजनैतिक अधिकार है इन तीनों को किसी भी सहमति वाले फार्मूले पर फैसला लेने का अधिकार है।

इस प्रकार आत्मनिर्णय का अधिकार कोई विवादित मसला नहीं बल्कि किसी निश्चित मानवीय समूह का अपने भविष्य के बारे में निर्णय करने का स्वाभाविक अधिकार है जिससे वे अपना राज्य बना सके। जनमत संग्रह का अधिकार किसी निश्चित समूह द्वारा हासिल किया गया वोट का अधिकार है जो किसी ऑथरिटी द्वारा किसी मुद्दे को हल करने को दिया जाने वाला अधिकार है और त्रिपक्षीयवाद तीन पक्षों द्वारा तय किया गया वह सिद्धान्त है जिसको तय करने में किसी भी एक पक्ष को विशेष या वीटो अधिकार नहीं होता।

स्पष्टतया, आल पार्टी हूर्रियत कान्फ्रेंस के तीन विभिन्न राजनैतिक उद्देश्य हालांकि एक दूसरे के अन्तरविरोधी नहीं है फिर भी मामले को अस्पष्ट और गडमड कर देते है जिससे विभिन्न राजनैतिक ताकतों और विभिन्न लोगों के विभिन्न समूह की राजनैतिक एकता में बाधा खड़ी करते हैं।

आल पार्टी हूर्रियत कान्फ्रेन्स के अन्य आवश्यक मसलों के सम्बंध में स्थिति यह है कि वे जम्मू व लदाख के क्षेत्र के लोगों से घनिष्ठ सम्बंध बनाने पर कम जोर देते

हैं साथ ही जेके समस्या के तर्क संगत हल की बात करने वाले दूसरे राजनैतिक ग्रुपों के साथ एकता पर कम जोर देते है, जेके समस्या और इसके हल के लिए लोगों के विभिन्न समूहों को बातचीत में शामिल करने पर जोर नहीं देते हैं, नीचे के स्तर पर लोगों को संगठित करने पर मामूली ध्यान देते है, भारत-पाक शान्ति प्रिय प्रक्रिया पर जोर देने पर कोताही बरतते हैं, इत्यादि।

I. खाड़कूवाद पर

नई दिल्ली से यह माँग करना आवश्यक है कि वह युद्ध विराम की सहमति के लिये खाड़कुओं से बिना शर्त बातचीत करने की पहल कदमी करें, साथ ही सुरक्षा सेनाओं को बेरेक में वापस बुलाऐं, सैनिक ताकतों को दिये गये विशेष अधिकार अधिनियम को समाप्त करें, ऐसे लोगों जिनपर कोई बड़ा दोषारोपण नहीं है उन्हें जेल से रिहा किया जाय। आगे, नई दिल्ली से यह भी मांग की जाय कि वह जेके की समस्या हल करने के लिए त्रिपक्षीय वार्त्ता के लिये आवश्यक कदम उठाऐं और इसके साथ ही खाड़कूओं से भी वार्त्ता जारी रखें।

J. जनता को संगठित करने का तरिकाकार

भारत-पाक शांति प्रक्रिया को आगे ले जाने तथा पहलकदमी लेने के लिये यह आवश्यक है कि निम्न पांच बातें की जाय -

प्रथमत: शान्ति प्रक्रिया या इसके एजेण्डे के लिये आवश्यक पहलुओं पर पूर्ण स्पष्टता कायम की जाय।

दूसरा, मात्रात्मक और गुणात्मक दोनों दृष्टि से संगठन का निर्माण किया जाये। संगठन के प्रत्येक सदस्य की व्यक्तिगत और सामूहिक इकाई की चेतना बढ़ाने के लिये सामाजिक ज्ञान के स्तर को विकसित करना, जबकि मात्रात्मक संख्या बढ़ाने के लिये समस्त सांगठनिक क्षमता को पूरी तरह उत्पादक तरीके से काम में लेना आवश्यक है।

तीसरा, भारत-पाक शान्ति प्रक्रिया की समर्थक ताकतों को अधिकतम सम्भव संयुक्त मोर्चे के रूप में विकसित करना आवश्क है।

चौथा नई सामाजिक आवश्यकताओं और कार्य के नये तरीकों के आधार पर विभिन्न तरह के जन संगठनों (महिलाओं, विद्यार्थियों, नौजवानों इत्यादि) और ट्रेड यूनियनो (मजदूरों, किसानों, कर्मचारियों, इत्यादि) का निर्माण करना आवश्यक है।

पाँचवा परन्तु अति महत्वपूर्ण इस शान्ति प्रक्रिया में सभी तरीकों, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक इत्यादि से वास्तविकता के बारे में प्रेरित करते हुए लोगों को शामिल करना आवश्यक है। यहां हमारी कोशिशों को दो तरफा उद्देश्यों यानि स्वार्थ

पूर्ति और सत्ता की पूजा करने की पुरानी सामाजिक चेतना को बदलना और लोगों के बीच तर्क संगत दृष्टकोण को मन में बैठाना - के लिये निर्देशित करना आवश्यक है। हमारा स्पष्टीकरण इस बात पर जोर देने वाला होना चाहिये कि कोई भी जनता का एजेण्डा (सम्बंधित प्रत्येक निश्चित समूह) शान्तिपूर्ण तरीके से ही पूरा हासिल किया जा सकता है।

राजनीतिक मोर्चे पर

जेके समस्या के विभिन्न आयामों (इसके हल सहित) पर वाद-विवाद में लोगों को शामिल करना एवम् भिन्न-भिन्न तरह की जनगतिविधियों के माध्यम से बहुत से अन्य राजनीतिक मुद्दों पर लोगों की भागीदारी कायम करना।

"आजाद कश्मीर" सहित जेके राज्य के विभिन्न भागों में काम कर रही जनवादी ताकतों के साथ विचारों (सोचने) और व्यवहार में एकता कायम करना।

न्यूनतम सहमति आधारित एजेण्डे पर अधिकतम संभव मोर्चे के निर्माण के लिए जम्मू-कश्मीर के विभिन्न इलाकों के जनवादी ग्रुपों और व्यक्तियों का सम्मेलन आयोजित करना।

जेके समस्या पर राज्य के भिन्न-भिन्न नस्ली क्षेत्रों में राजनीतिक आम सहमति के लिए सम्मेलन बुलाना।

किसी सहमति वाले स्थान पर युद्ध विराम रेखा के दोनों तरफ के सभी खेमों के नेताओं के सम्मेलन संगठित करना।

भारत, पाकिस्तान और जेके के विभिन्न जनवादी तत्वों के प्रतिनिधित्ववाली मीटिंग किसी जगह पर आयोजन करने की कोशिश करना, अगर सम्भव हो तो जम्मू या देहली में करना।

भारत, पाकिस्तान और अन्य सार्क देशों की ताकतों के बीच नजदीकी रिश्ते कायम करना।

दुनिया में सभी जनवादी ताकतों एवं शान्तिप्रिय लोगों का समर्थन और हमदर्दी हासिल करना।

आर्थिक क्षेत्र में

तात्कालीक और महत्वपूर्ण जन मुद्दो पर वाद-विवाद में लोगों को शामिल करना एवं दिन प्रतिदिन की माँगों सहित उनके मूलभूत आर्थिक मुद्दों को हल करवाने के लिये लोगों को संगठित कना।

सांस्कृतिक क्षेत्र में

महत्वपूर्ण सांस्कृतिक मुद्दों पर लोगों में वाद-विवाद छेड़ना, विभिन्न तरह की मानवीय संस्कृति के विकास के लिये लोगों की सहायता करना एवं तर्कसंगत आधार पर प्रत्येक नस्ली समुदाय की संस्कृति का संर्वधन करने के लिये लोगों को संगठित करना एवं समर्थन देना।

V

भारत-पाक शांति प्रक्रिया या जम्मू-कश्मीर के लोगों एवम् भारत-पाकिस्तान के हितों की सेवा जेके समस्या के ऐसे हल के माध्यम से की जा सकती है जिसमें जेके राज्य को भारत-पाक या सार्क सहराज्य के तहत लाया जाए, जिसमें जेके की सुरक्षा, विदेश मामले और मुद्रा सहराज्य संभाले और जम्मू-कश्मीर की अर्द्ध-स्वतन्त्रता को सुनिश्चित करें, साथ ही इसके प्रत्येक नस्लीय क्षेत्रों को अधिकतम स्वायतता प्रदान करे। यह सह-राज्य क्षेत्रिय तनावों को खत्म करेगा, हथियारों की दौड़ को रोकेगा और चौतरफा स्थायित्व कायम करेगा, यह जेके, भारत, पाकिस्तान और अन्य सार्क देशों में शांति, जनवाद, आर्थिक विकास, पर्यावरणीय सुधार, अपराध रोकने एवम् समाप्त करने, इत्यादि के रूप में एक नये युग की शुरूआत करेगा।

❋ ❋ ❋

चुनाव के बाद पंजाब के हालात और इसकी मांगें

I. पंजाब में मामलों के वर्तमान हालात

1. पंजाब में चुनाव के बाद के हालात में बादल सरकार से लोगों की आकांक्षाऐं अभी इंगित होनी बाकी है। इस सरकार के बनने के लगभग 40 दिन बात अब जनता सरकार पर कड़ी नजर रखे हुए हैं। ये सरकार पंजाब में शान्ति और समृद्धी लाने के वादे के साथ सत्ता में आई है जनता व्यवहार में इसको पूरे होते देखना चाहती है।

2. नि:सन्देह बादल सरकार जबसे आई है इसने कुछ अच्छे काम किये है जैसे किसानों को पानी और बिजली मुफ्त प्रदान करना, कैदियों को रियायतें देना, जनता की व्यक्तिगत और सामूहिक शिकायतों पर तत्काल कार्यवाही करना इत्यादि। इससे जनता के कुछ वर्गों को राहत मिली है। परन्तु यह पंजाब के लोगों की सामाजिक आवश्यकताओं का बहुत छोटा अंश है।

3. पंजाब के सामने भिन्न-भिन्न तरह की तथा विराट चुनौतियों से सामना हैं, जिनमें से कुछ मुख्य हैं : कृषि संकट (जैसाकि भूमि की गिरावट, हवा और पानी का प्रदूषण, जंगल विनाश से प्रतीत होती है), बेरोजगारी, गरीबी, भ्रष्टाचार, त्रुटिपूर्ण शिक्षा व्यवस्था, कमजोर स्वास्थ्य सेवाएँ (खास करके पीने के पानी का बढ़ता प्रदूषण), नाकाफी संरचनात्मक ढाँचा, अनियमित बिजली आपूर्ति, नाममात्र कानून का राज, पंजाब के लिये स्वायतता हासिल करना, पंजाबी एकता (या हिन्दू सिख संबंधों में घनिष्टता कायम करना, वर्तमान सरकार की स्थिरता बनाए रखना इत्यादि। जहां तक बादल सरकार को अभी इन मुद्दों पर काम करने का समय नहीं मिला है।

II. पंजाब के सामने मुँह बाऐं खड़ी चुनौतियों के प्रति सरकार का रुख

4. बादल सरकार आने वाले दिनों में उपरोक्त समस्याओं का समाधान कैसे करेगी यह अभी ठोस रूप में दिखाई नहीं देता। फिर भी इन मुद्दों के सम्बंध में सरकारी नीतियां वांच्छित दिशा में किसी भी तरह के परिवर्तन की ओर इंगित नहीं करती।

(A) कृषि मोर्चे पर बादल सरकार केमोथेरेपी (रसायनखेती) की अपनी पुरानी नीति को ही चलाने का रूझान नजर आता है हालांकि कृषि निवेश की आपूर्ति और कृषि जिन्सों को बाजार में बेचने की कुछ सुविधा एवं रियायतों के द्वारा राहत पहुँचाई है इसका अर्थ है कि वर्तमान संकटग्रस्त कृषि नीति का कोई विकल्प पेश नहीं कर रहे हैं। स्पष्टतया पंजाब कृषि भूमि के गम्भीर गिरावट, पीने के पानी का प्रदूषण, जल संसाधनों को निचोड़ना, जंगल का विनाश (इसका जंगल क्षेत्र पहले से ही कम हो

चुका है) इत्यादि गम्भीर चुनौतियों से सामना कर रहा है। इस सबसे इसकी खेती गैर टिकाऊ बन चुकी है, इसका कृषि उत्पादन गिर गया है और सबसे अधिक पंजाब के लोगों का स्वास्थ्य खराब होता जा रहा है।

(B) बेरोजगारी के सवाल पर इसने कोई नई नीति नहीं बनाई है और यह निरन्तर सभी को रोजगार प्रदान करने के सामान्य वादे की बातें कर रही है जबकि बेरोजगारों (ग्रामीण तथा शहरी तथा पारम्परिक क्षेत्रों से पैदा हो रही बेरोजगारी) की संख्या बहुत बड़ी है जबकि इनको खपाने की सम्भावनाएं बहुत थोड़ी हैं।

(C) गरीबी के सवाल पर भी इसके पास अपने चुनावी घोषणाओं को पूरा करने की कोई ताजा योजना नहीं है। ये ज्यादा से ज्यादा केन्द्र की गरीबी उन्मुलन स्किमों को ही लागू कर सकती है। परन्तु ये गरीब लोगों को केवल झूनझूना ही पकड़ा सकती है और गरीबी उन्मुलन नहीं कर सकती है।

(D) भ्रष्टाचार के सवाल पर यह इसके उन्मुलन पर व्यक्तव्यों से आगे जाती नजर नहीं आती उलट सीबीआई द्वारा इस सरकार समर्थक मुख्य सचिव आर.एस. मान पर लगाये गये भ्रष्टाचार के आरोपों पर शंका खड़ी करने से इस सरकार की भ्रष्टाचार खत्म करने की ईमानदारी संदेहास्पद बनती है, सीबीआई जांच का उद्देश्य और स्वरूप चाहे जो हो, सामाजिक नैतिकता मांग करती है कि बादल सरकार अपने आरोपित अधिकारी की रक्षा के लिये सीबीआई जांच को रोकने की हद तक नहीं जाए।

(E) शिक्षा व्यवस्था में सुधार करने के सवाल पर अभी तक कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया है। हो सकता है इसका संकीर्ण नजरिया इस शिक्षा व्यवस्था को ओर अधिक जटिल बनाये।

(F) स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार के सवाल पर पुरानी व्यवस्था पूर्ण रूप से कायम है। पीने के गन्दे पानी की आपूर्ति की समस्या के कारण बहुत से लोगों को वातरोग की समस्या, लोगों के स्वास्थ्य को बर्बाद कर रही हैं।

(G) संरचनात्मक ढांचे के मोर्चे पर कोई नई योजना सामने नहीं आई है, सभी क्षेत्रों - घरों में, कृषि और औद्योगिक क्षेत्र में विद्युत की सप्लाई पहले की तरह ही अनियमित बनी हुई है।

(H) कानून के राज को सुधारने के सवाल पर राज्य में कानून को लागू करने वाली ऐजेन्सियों में कोई महत्वपूर्ण बदलाव नजर नहीं आता, इसके उलट एक परिवर्तन नजर आता है कि ये एजेन्सियां साक्ष्यों को छुपाने में ज्यादा चुस्त हो गई है ताकि न्यायालय में आरोप साबित नहीं हो सके। हाल ही तरनतारन में हुई कश्मीरासिंह की हत्या से संदेह पैदा होता है कि उचित कानून व्यवस्था की पालना करने और

मानवाधिकारों की रक्षा करने के सवाल पर सरकार की गम्भीरता पर प्रश्नचिन्ह लगता है।

(I) पंजाब के लिये स्वायतता हासिल करने के सवाल पर अभी तक कोई सरकारी संदर्भ सामने नहीं आया है जबकि ये चुनाव घोषणा पत्र का वादा था। इससे नजर आता है यह साझी सरकार जिसमें दो भिन्न नजरिये वाले घटक इस मुद्दे पर कोई पहल कदमी करने की क्षमता में नही है।

(J) पंजाबी एकता के सवाल पर शासन करने वाला कोई राजनीतिज्ञ बात तक नहीं करता, इसका कारण है कि दोनों साझेदार पक्ष जो अपनी-अपनी धार्मिक राजनीति की शपथ लिऐ हुए है, इस सवाल पर उनकी समझ है कि साझी पंजाबी पहचान तथा पंजाबियों के विभिन्न वर्गों के बीच भावनात्मक एकता को कायम करने की कोई समस्या नहीं है बल्कि सिरोमणी अकाली दल-भाजपा गठजोड़ की तरह का दो धार्मिक पहचानों का गठजोड़ ही पंजाबियत की पहचान है।

III. वास्तविकता आधारित एजेण्डे की आवश्यकता

पंजाब के सामने मुँह बाऐं खड़ी वर्तमान चुनौतियां हालांकि जटिल है परन्तु हल की जा सकती है बशर्ते है कि वास्तविक एजेन्डा (जो विद्यमान सामाजिक वास्तविकताओं पर आधारित हो) के माध्यम से हल किया जाय। यह ऐजेन्डा निम्नलिखित मूलभूत असूलों से गठित हो सकता है।

(A) पहला मूलभूत सिद्धान्त पंजाबी एकता का मुद्दा बनता है, भविष्य में विश्व के करोड़ों पंजाबियों को एक करने वाले दृष्टिकोण की जरूरत है।

(B) दूसरा मूलभूत सिद्धान्त भारतीय ढाँचे में पंजाब को विशेष अधिकार सुनिश्चित करने का मुद्दा होना चाहिये। यह जम्मू-कश्मीर राज्य को 1952 से पहले दी गई स्वायत्तता की पद्धति के मॉडल पर आधारित होना चाहिये जिसके अनुसार केन्द्र को मिले अधिकार के अलावा सभी बचे अधिकार राज्य को देते हुए भारत को संघीय आधार पर पुर्नगठित किया जाय। एक तरफ पंजाब के विशेष अधिकार देने से सिख पहचान, हिन्दू सुरक्षा, पंजाबी एकता और गांव स्तर से लेकर राज्य के स्तर तक सत्ता का विकेन्द्रीकरण के मुद्दे हल करने में सहायता मिलेगी और दूसरी तरफ पंजाब के कृषि क्षेत्र को विश्व बाजार से जोड़कर इसके कृषि आधारित उद्योगों को गति मिलेगी और मानवीय संसाधनों का विकास होगा। पंजाब को विशेष दर्जा देने से सम्पूर्ण पंजाबी समुदाय के हितों की सेवा सुनिश्चित होगी जबकि इसके उलट खालिस्तान का नारा (जो न केवल हिन्दू और सिख जनता को विभाजित करता है बल्कि पंजाब भारत और विदेशों में रहने वाले सिख समुदाय के लोगों के बीच भी विभाजन पैदा करता है) और इसी तरह सिरोमणी अकाली दल की स्वायतता (जिसके अनुसार अवशिष्ट

अधिकार केन्द्र के पास ही रह जाते है) की मांगे भी पंजाब के हितों की उचित पूर्ति नहीं करती।

(C) तीसरा मूलभूत मुद्दा टिकाऊ विकास का होना चाहिए, जिससे एक तरफ प्रकृति (या पर्यावरण) और समाज के हितों में समन्वय सुनिश्चित किया जाए जबकि दूसरी तरफ विभिन्न सामाजिक समूहों के हितों में संतुलन कायम किया जाए (यानि एक तरफ भूमि, जंगलों, जल और वायु, इत्यादि पर्यावरणीय संसाधनों को संरक्षित करना और दूसरी तरफ पर्यावरण हितैषी तकनीकी का विकास करना)। यह एक तरफ उत्पादक क्षमता हासिल करने के लिए बाजार तंत्र का उपयोग करेगा और दूसरी तरफ समाज में सामाजिक न्याय (यानि गरीबी हटाने, बेरोजगारी, अनपढ़ता, बिमारी, कमजोर संरचनात्मक ढांचे, खासकर ग्रामीण इलाकों में, धनी और गरीब के बीच की खाई को भरना, महिला और पुरुष, तथा शहरी एवम् ग्रामीण इत्यादि भेदों को मिटाकर) की स्थापना के लिए राजकीय ढाँचे का उपयोग करेगा।

(D) चौथा मूलभत उसूल वर्तमान गैर-टिकाऊ कृषि पैटर्न (जिसके परिणामस्वरूप भूमि में गिरावट, जलप्रदूषण और उसकी उपलब्धता में कमी, जंगलों का विनाश, मानवीय स्वास्थ्य को नई चुनौतियाँ इत्यादि) को एक टिकाऊ कृषि मॉडल से प्रति-स्थापित करके एक तरफ पर्यावरणीय सुरक्षा को सुनिश्चित करना तथा दूसरी तरफ कृषि को अधिक उत्पादक बनाना।

(E) पाँचवा मूलभूत मुद्दा गरीबी हटाने और बेरोजगारी को कम से कम प्रत्येक परिवार के एक सदस्य को उत्पादक रोजगार सुनिश्चित करके इन समस्याओं का समाधान करना। यह तभी किया जा सकता है जब एक तरफ रोजगार के पारम्परिक क्षेत्र को विकसित किया जाए तथा दूसरी तरफ नये धन्धों का रास्ता खोला जाए। इसके लिए भूमि का पुनर्उद्धार करना, जल को प्रदूषण रहित करना और उसका कुशल प्रबन्धन करना, चौतरफा जंगल लगाना, कृषि-उद्योग स्थापित करना, कृषि का विविधिकरण (यानि बागबानी, पुष्पकृषि, सब्जी पैदा करना, मछली पालन, मुर्गी पालन, पशुपालन, डेयरी उद्योग, मधु-मक्खी पालन इत्यादि) करना अति आवश्यक है।

(F) छठा मूलभूत मुद्दा लोकतांत्रिक संस्कृति के विकास का है जिसके लिए सभी तरह के सामाजिक अपराध, खास करके भ्रष्टाचार (जो भारत में जीवन का एक तरीका बन चुका है) उन्मूलन की मुहिम चलाकर इन्हें समाप्त करना और सभी तरह की सामाजिक प्रक्रिया में मूल्य-आधारित मानदंडों को मन में बैठाना आवश्यक है।

(G) सातवाँ मूलभूत मुद्दा भारत में चल रही वर्तमान संसदीय लोकतंत्र (जो समस्त सत्ता को कार्यपालिका और प्रशासन में केन्द्रित किये हुए है; जिससे अपराध के

फलने-फूलने और भ्रष्टाचार जीवन का अंग बनाने का वातावरण पैदा हुआ है और जहाँ मानवीय अस्तित्व के लिए पैसे और सत्ता को ही सब-कुछ मान लिया गया है) की जगह भारत में भागीदारी वाले लोकतंत्र (जिसमें भारतीय सामाजिक ढाँचे का पूर्णतया संघीयकरण किया जाए; राज्यों को अधिकतम स्वायतता प्रदान करके; तहेदिली कानूनी के राज का अनुसरण करके; सभी स्तरों पर सत्ता की व्यवस्था का विकेन्द्रीकरण करके; लोगों का सशक्तिकरण करके, खासकर महिलाओं का सशक्तिकरण करके; सभी स्तरों पर अधिकतम व्यवहारिक निर्णयकारी ताकत लोगों को देकर; कार्यपालिका, नौकरशाही और राजनीतिक पार्टियों को लोगों के प्रति जावबदेह बनाकर; सभी गैर-जनवादी कानूनों को रद्द करके, जैसे सरकारी गुप्तता अधिनियम, न्यायालय अवमानना अधिनियम, विधायकों के विशेष अधिकार, सेना में कोर्ट मार्शल का प्रावधान, सभी नजरबन्द कानूनों इत्यादि; सभी तरह के चुनावों के लिए राज्य द्वारा वित्त प्रबन्ध करना कानूनी बनाना; प्रत्येक नागरिक को सूचना का अधिकार प्रदान करना, संयुक्त राष्ट्र चार्टर और इसके समझौते के मुताबिक मानव अधिकारों की गारन्टी देना, इत्यादि) की स्थापना करना।

(H) आठवां मूलभूत मुद्दा विदेश नीति में विद्यमान टकरावावादी नीति की बजाए शांतिवादी नीति अख्तियार की जाए। आज के समय में एक सच्ची शांति विभिन्न राष्ट्रों के हितों में मेल बैठाकर सुनिश्चित की जा सकती है और राष्ट्रीय शांति देश में विभिन्न सामाजिक समूहों के हितों में संतुलन कायम करके हासिल की जा सकती है। भारतीय उपमहाद्वीप में इसे हासिल करने के लिए भारत और पाकिस्तान के बीच सहयोग और दोस्ताना संबंध स्थापित करने होंगे। यह कार्य जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय प्रक्रिया (भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों को शामिल करके) द्वारा समाधान करके पुरा किया जा सकता है। तीनों पक्षों के बीच आम सहमति कायम करके भारत-पाक या सार्क सहराज्य का फैसला लिया जाए, जिसमें जम्मू-कश्मीर की आठ नस्लीय पहचानों में से प्रत्येक को अधिकतम स्वायतता प्रदान करते हुए जम्मू-कश्मीर की अर्द्ध-स्वतन्त्रता सुनिश्चित की जाए तथा सुरक्षा, विदेश मामले और मुद्रा सहराज्य संभाले।

दक्षिण एशिया में शांति की स्थापना के लिए हथियारों की दौड़ समाप्त करके और खरबों रूपये के सुरक्षा खर्च घटाकर इस क्षेत्र के 120 करोड़ से अधिक लोगों के लिए एक नये युग की शुरूआत की जा सकती हैं जिसमें सामाजिक समन्वय, न्याय, जनवाद, विकास और सम्पन्नता का द्वार खोला जा सकता है।

(I) नवम् मूलभूत मुद्दा है वैश्विक राष्ट्रवाद (आजकल व्यवहारिक तौर पर लगभग सभी देश भिन्न-भिन्न मात्रा में इसका अनुसरण करते हैं, जबकि अपने-अपने

पारम्परिक संकीर्ण एवमं अन्धराष्ट्रवादी राष्ट्रवादों की तोता रटंत करते हैं), दक्षिण एशियाई राष्ट्रवाद या तर्कसंगत मानवतावाद के परिप्रेक्ष्य (समुचित उद्देश्य) को अपनाने की जरूरत है।

(J) दसवां मूलभत मुद्दा है कि बादल मंत्रीमंडल के प्रति एक वास्तविकता पर आधारित निम्नलिखित नजरिया अपनाया जाए — यानि, इसके उन कदमों का स्वागत किया जाए जिससे जनता को फायदा होता हो, जबकि जन विरोधी कामों का विरोध किया जाए।

(K) ग्यारहवां मूलभूत मुद्दा सभी स्तरों (खासकर जमीनी स्तर) पर विभिन्न जन समस्याओं (तात्कालिक और आधारभूत दोनों) पर वाद-विवाद के लिए लोगों की सभी सामाजिक श्रेणियों को शामिल किया जाए। इस तरह की अन्तरक्रिया से हमारे लोगों के बीच सामाजिक चेतना पैदा होगी और साथ ही उनके बीच घनिष्ठ सामाजिक बन्धन कायम होंगे।

उपरोक्त वर्णित एजेण्डे को व्यवहार में केवल तभी लाया जा सकता है जब इस प्रक्रिया को आगे ले जाने की पहलकदमी के लिए लोगों को प्रेरित और शामिल किया जा सके। 23.3.1997

❋ ❋ ❋

ऐतिहासिक वास्तविकता को समझने का एक प्रयास

यह सवाल मानवीय ज्ञान की समस्या में अति महत्वपूर्ण स्थान रखता है। परन्तु इस विषय का हमारा ज्ञान बहुत थोड़ा है। स्पष्टया, इस मसले में हमारे ज्ञान के वर्तमान स्तर को ऊँचा उठाने का एक मात्र तरीका बार-बार अध्ययन करना ही है। इसी तरह यह लेखन भी तथ्यों के आधार पर सामाजिक और तर्कसंगत विश्लेषण के द्वारा ऐतिहासिक वास्तविकता के आवश्यक पहलुओं को कदम-ब-कदम सीखने की प्रक्रिया का एक हिस्सा है।

यद्यपि तथ्यों को खोजते समय हमने निष्पक्ष और तटस्थ रहने की कोशिश की है। अपने-आप को किसी भी तरह के पूर्वाग्रह से मुक्त रहते हुए हमारे आंकड़ों और तथ्यों का आधार दृष्टिगोचर प्रमाणों को बनाया है।

तथ्यों की व्याख्या के मामले में हमारी धारणा यह है कि अध्ययन के इस क्षेत्र में हम तटस्थ या निष्पक्ष नहीं रह सकते हैं। क्योंकि व्यक्ति किसी घटनाक्रम की व्याख्या केवल वास्तविकता की अपनी आम अवधारणा के साथ-साथ सामाजिक वास्तविकता की विभिन्न प्रक्रियाओं के बारे में अपनी विशिष्ट अवधारणाओं के अनुसार ही करता है। यही अवधारणाएं व्यक्ति को किसी समस्या के बारे में सही और गलत की पहचान करवाती है। इसके अलावा सामाजिक सवालों की व्याख्या करने का कोई तरीका नहीं है। मूल्य रहित सामाजिक अध्ययन हमारी मानवीय दुनिया में सम्भव नहीं है। फिर भी विभिन्न प्रस्तावित विकल्पों और अवधारणाओं के बीच भेद खोलकर और तुलना करके सामाजिक वास्तविकता को समझने का प्रयास करते हैं। हमने मनोगत (यानि दिमाग के साधन) और वस्तुगत (यानि ऊर्जा, पदार्थ, अतंरिक्ष, समय इत्यादि घटनाक्रमों) दोनों श्रेणियों का उपयोग किया है, जबकि प्रकृति विज्ञान आम तौर पर वस्तुगत को तथा रहस्यवाद मुख्यतया मनोगत को अपना आधार मानता है।

I. इतिहास की उत्पत्ति, अर्थ और विषय वस्तु

हमारे अध्ययन का पहला बिन्दु है—इतिहास का अर्थ क्या है? मानव समाज में इसकी उत्पत्ति कब हुई, तथा इसकी विषय वस्तु क्या है?

(अ) इतिहास का अर्थ

इतिहास की शब्दावली ग्रीक शब्द से आयी है जिसका अर्थ है—जाँच, खोजबीन या अनुसंधान।

सरल परिभाषा के अनुसार इतिहास की अवधारणा ज्ञान की उस शाखा को निर्दिष्ट करती है, जिसमें शुरू से लेकर आज तक की सम्पूर्ण मानवीय सामाजिक

प्रक्रिया का वर्णन होता है साथ ही इतिहास संबंधित सभी सवालों का जवाब देता है। संक्षेप में मानवीय सामाजिक घटनाक्रमों के सभी तरह के पहलुओं में अंतर संबंध और अंतर क्रिया के कुल योग के अध्ययन का नाम इतिहास है।

(ब) इतिहास की उत्पत्ति

इतिहास के उद्‌भव की कोई निश्चित तिथि तय नहीं की जा सकती है साधारण रूप में जब से मानव ने सामाजिक जीवन में पदार्पण किया है तब से इतिहास का अस्तित्व स्वीकारा जा सकता है जैसे ही सामाजिक विकास आगे बढ़ा है, ऐतिहासिक विचारों ने भी ठोस शक्ल का रूप लिया है। सामाजिक विकास की आवश्यकताओं ने मानव को ऐतिहासिक तथ्यों से निपटने के लिए प्रेरित किया और इसी से इतिहास की तकनीक का जन्म हुआ। तभी से एक अलग ज्ञान की शाखा के रूप में अपनी पहचान बना ली है। मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि इतिहास मुख्यतया दो अवस्थाओं में विकसित हुआ है—पूर्व ऐतिहासिक और ऐतिहासिक। इन दोनों के बीच अन्तर यह है कि जबकि पहले वाला अलिखित (यानि उस काल से जब लिखना नहीं आता था) और बाद वाला लिखित रूप में मौजूद है। पूर्व इतिहास को समझने में पुरातत्व विज्ञान और आदिम मानव का वैज्ञानिक अध्ययन आधार का काम करते हैं।

(स) इतिहास की विषय वस्तु

ज्ञान की हर शाखा निश्चित क्षेत्र के घटनाक्रमों का अध्ययन करती है और वही उसकी विषय वस्तु बनती है।

मानवीय सामाजिक प्रक्रिया और मानवीय सामाजिक जीवन के अध्ययन के लिए मानवीय सामाजिक प्रक्रियाओं का उनके ठोस रूपों में (यानि सामान्य तौर पर और विशिष्ट तौर पर) खोजबीन और व्याख्या करना ही इतिहास की विषय वस्तु है। इसका मतलब है कि मानव जाति का जन्म कहां से हुआ या मानव प्रजाति कैसे विकसित हुई। सामाजिक विकास क्या केवल मानवीय मामला है या प्रकृति की सामाजिक विकास में कोई निश्चित भूमिका है? मानव प्रजाति की उत्पत्ति की कहानी से क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है? प्रकृति और मानव समाज के विकास का मुख्य कारण क्या है? यानि विकास का आम नियम क्या है? प्रकृति और मानव समाज के आम नियम की यह धारणा प्रकृति और सामाजिक विज्ञानों द्वारा सत्यापित होती है? क्या कारण और प्रभाव के बीच कोई सुसंगत क्रम है या इन दोनों के बीच किसी बिन्दु पर किसी तीसरे पहलु के कारण कोई बाधा आती है? आम तौर पर मानव और विशिष्ट व्यक्ति के बीच क्या कोई अन्तरसम्बन्ध है? सामाजिक विचार कहां से आते हैं? और उनकी समाज में क्या भूमिका रहती है? सामाजिक विकास की विभिन्न

अवस्थाएं क्या रही हैं? एक सामाजिक अवस्था से अगली अवस्था के विशिष्ट पहलुओं में क्या भेद है? एक के बाद दूसरी सामाजिक अवस्था का प्रादुर्भाव कैसे होता है? यानि अपने विकास के दौरान एक अवस्था दूसरी अवस्था को कैसे जन्म देती है? सामाजिक विकास की प्रत्येक अवस्था में लोग किस तरीके से कठिन परिश्रम करते हुए जीवन व्यतीत करते रहे? और एक से दूसरी अवस्था मे इतिहास किस दिशा में आगे बढ़ा? संक्षेप में ये कुछ आम सवाल हैं जिनका वैज्ञानिक इतिहास को इन सारे सवालों का उत्तर एक सुसंगत सार के भागों के रूप में देना चाहिए जिसमें वास्तविक तथ्यों को न तो बढ़ा-चढ़ा कर और न घटाकर देखा गया हो, जिसमें अतीत की वास्तविकता का मूल्यांकन ठीक किया गया हो, जो हमें सच्ची पृष्ठभूमि प्रदान करे और भविष्य के लिए उपयोगी दिशा दिला सके। वास्तविक प्रमाणों को दबाना या विकृत करने से अतीत के बारे में गलत नतीजे निकलते हैं जो समाज के लिए नुकसानदायक और अलाभकारी होते हैं। सच और केवल सच जो ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर टिका हो और सत्यापित हो, वही इतिहास का सुदृढ़ ढांचा बनता है। इतिहास के विज्ञान और अन्य सामाजिक विज्ञानों—जैसे कि अर्थशास्त्र, न्यायशास्त्र, सौन्दर्यशास्त्र, शिक्षाशास्त्र आदि—के बीच अन्तर यह है कि जबकि बाद वाले विषय केवल सामाजिक विकास के कुछ विशिष्ट पहलुओं का अध्ययन करते हैं जबकि पहले वाला सामाजिक जीवन के सम्पूर्ण विकास को वर्णित करता है। बड़े सन्दर्भ में यह एक इस तरह का आम विज्ञान है जिसमें न केवल सामाजिक विज्ञानों बल्कि प्रकृति विज्ञानों का ज्ञान भी शामिल है। इतिहास अपने विशिष्ट तरीके से तथ्यों की व्याख्या और स्थापना करता है। दूसरे विज्ञानों की तरह यह जांच के कई तरीकों, परीक्षण, वर्गीकरण, परिकल्पना और अतीत की पुनर्रचना आदि के बहुत से तरीके काम में लेता है।

II . मानव प्रजाति कैसे विकसित हुई

हमारे अध्ययन का दूसरा बिन्दु है—मानव जाति का प्रादुर्भाव कहां से हुआ या मानव प्रजाति कैसे विकसित हुई? रहस्यवाद का सिद्धान्त कहता है कि अकेला ईश्वर ही मानव जाति का सृष्टिकर्ता और प्रवर्तक है। इसका विश्वास है कि सच्चाई का पूर्ण आध्यात्मिक बोध मानवीय समझ से परे है। ईश्वर सब कुछ है और सब कुछ ईश्वर है कि धारणा से यह सभी तरह की दरियाफ्त और अन्वेषण को रद्द करता है।

रहस्यवाद के उलट, प्रकृति विज्ञान और ऐतिहासिक अनुभव बताता है कि प्राकृतिक और मानवीय वास्तविकताओं की वर्तमान अवस्था हमेशा से अस्तित्व में नहीं थी, बल्कि वर्तमान अवस्था एक बहुत ही लम्बे विकास की प्रक्रिया का परिणाम है जो करोड़ों वर्ष तक चली है।

(क) ब्रह्माण्ड

ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में खगोल विज्ञान के प्रमाणों के अनुसार इसकी आयु लगभग 15 अरब वर्ष है और लगभग इतना ही समय और आगे कायम रहेगा। आज ब्रह्माण्ड का केवल 10 प्रतिशत हिस्सा चमकीला है और रेडिया टेलीस्कोप से दिखाई देता है जबकि 90 प्रतिशत भाग ठण्डा हो चुका है और घने काले पदार्थ के रूप में बदल चुका है। खोजे गए भाग में अरबों-खरबों गेलेक्सी हैं जिनमें से प्रत्येक में करोड़ों तारे हैं। घना काला पदार्थ सारे ब्रह्माण्ड में अदृश्य ब्लेक होल के रूप में बिखरा हुआ है। इसका प्रत्येक भाग अत्यधिक गुरुत्वाकर्षण शक्ति सम्पन्न है जिसमें से रोशनी की किरण भी नहीं निकल सकती है। हमारी अपनी गेलेक्सी (आकाश गंगा) मध्यम दर्जे की गैलेक्सी है।

(ख) सौरमण्डल

सौरमण्डल के सम्बन्ध में खगोल विज्ञान के प्रमाणों के अनुसार सूर्य लगभग 10 अरब वर्ष पुराना है और लगभग इतना ही समय यह और आगे कायम रहेगा। यह एक औसत दर्जे का तारा है। इसके अपने ग्रह हैं जो सौरमण्डल का निर्माण करते हैं।

विज्ञान सिद्ध करता है कि सौरमण्डल जैसा आज है वैसा हमेशा नहीं था। ना ही सूर्य अपरिवर्तनीय रहा है। भारी मात्रा में ऊर्जा के विकिरण की वजह से 4 लाख टन प्रति सैकण्ड की दर से सूर्य की संहति (द्रव्यमान) में कमी हो रही है।

(ग) पृथ्वी

(i) पृथ्वी के सम्बन्ध में वैज्ञानिक आंकड़ों के अनुसार इसकी आयु लगभग 5 अरब वर्ष है। पृथ्वी सहित समुद्रों, चट्टानों, पहाड़ों, भूमि और वनस्पति तथा पशु जीवन का निर्माण 5 भूवैज्ञानिक अवस्थाओं से गुजरा है—(1) पुरातत्व महाकल्प 350 करोड़ वर्ष; (2) आद्य महाकल्प—170.6 करोड़ वर्ष; (3) द्वितीय महाकल्प—55.9 करोड़ वर्ष; (4) तृतीय महाकल्प—10.9 करोड़ वर्ष; (5) चतुर्थ महाकल्प—10 लाख वर्ष। प्रत्येक नई अवस्था शुरू होने का अर्थ है कई महाद्वीपों, टापुओं, समुद्रों, पहाड़ों इत्यादि का गायब हो जाना और सम्पूर्णतया नए भूगर्भीय घटनाक्रमों के उभरने के साथ-साथ भरपूर जलवायु परिवर्तन हो जाना। तृतीय महाकल्प के अन्त में जाकर आज की पृथ्वी का संघटन हुआ है। पृथ्वी की वर्तमान संरचना ने लगभग 20,000 साल पहले शक्ल अख्तियार की है जो अभी भी लगातार बदल रही है।

(ii) पृथ्वी एक ऐसी पतली फिल्म (पर्त) से ढकी हुई है जिसका वजन मुश्किल से हमारे ग्रह के पदार्थ के अरबवें भाग से अधिक होगा। यह वह आवरण (संभवतया पृथ्वी से 1000 मील ऊपर तक) है जो हमारे भूमण्डल पर जीवन की रक्षा

करता है और उसको कायम रखता है। बिना इसके संरक्षात्मक अवरोध के रात्रि को ठण्ड असहनीय स्थिति तक पहुंच जाती जबकि दिन में गर्मी असहनीय हो जाती। हवा नाइट्रोजन (78 प्रतिशत), आक्सीजन (21 प्रतिशत), आर्गन (लगभग 1 प्रतिशत) और अतिअल्प मात्रा में अन्य गैसों से संगठित हुई है। हवा एक समान संहति वाली नहीं है, बल्कि उसे पर्तों में विभाजित किया जा सकता है जिसमें प्रत्येक के अपने लक्षण हैं।

(घ) जैव-जीवन

जैव-जीवन के सम्बन्ध में स्थिति यह रही है कि इसका आदिम रूप—वनस्पति सबसे पहले शायद समुद्रों में 2 अरब वर्ष पहले प्रकट हुई। वनस्पति जीवन विकास की एक लम्बी प्रक्रिया से गुजरा है। जीवन की प्रक्रिया सरल से जटिल, पूर्व कोशिकीय से कोशिकीय, एक कोशिक से बहुकोशिक, अकशेरूकी से कशेरूकी, जलधारी से थलधारी, अण्डा देने वाले से बच्चा जन्म देने वाले और निष्क्रिय प्रतिक्रिया से असहज (प्रतिबन्धित) और सहज क्रिया (भोजन, काम-भावना इत्यादि) में विकसित होकर ही पशु जीवन का आविर्भाव हुआ है।

(ड़) पक्षी, पशु और मनुष्य

प्रथम, पक्षी और पशु लगभग 20 करोड़ वर्ष पहले अस्तित्व में आये। लगभग 20 से 30 लाख वर्ष पहले मनुष्य का आविर्भाव हुआ। कृषि की आयु 10,000 वर्ष से अधिक नहीं है। और पहला लिखित शब्द लगभग इसके भी आधे समय पहले आया है।

(च) प्रकृति—एक स्व उ त्पत्ति की प्रक्रिया

प्रकृति में विभिन्न रूपों के विकास की प्रक्रिया के सम्बन्ध में विज्ञान की मान्यता है कि प्रकृति स्व-उत्पत्ति की प्रक्रिया है यानि यह अपने-आप से ही उत्पन्न हुई है। इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में प्रमाण इन तथ्यों से आते हैं कि ब्रह्माण्ड में गैर-जैविक (प्राथमिक कण से लेकर विशाल अन्तरिक्ष पिण्ड तक) और जैविक दोनों घटनाक्रम (छोटे से बैक्टीरिया से मनुष्य तक) समान तत्वों से बने हुए हैं। दोनों के बीच अलंघ्य सीमा नहीं है। दोनों ही हाइट्रोजन, कार्बन, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन के रासायनिक तत्वों से बने हैं। दोनों में ही पर्यावरण के साथ अन्तरक्रिया करने की मूलभूत (तात्विक) विशेषता है। इस क्षेत्र में दोनों में अन्तर केवल यह है कि जैविक पदार्थ सक्रिय तरीके (संवेदनशीलता, उत्तेजनशीलता, अतिसंवेदनशीलता, इत्यादि) से अन्तरक्रिया करते हैं। जबकि गैर-जैविक पदार्थ निष्क्रिय तरीके (लोहा चुम्बक की तरफ खिंचता है) से अन्तरक्रिया करते हैं।

(छ) मनुष्य के विकास के बारे में परिदृश्य

मनुष्य के विकास के सम्बन्ध में सबसे अधिक स्वीकृत परिदृश्य आजकल इस तरह है—पहला नर वानर (प्राईमेट) जो मानवता के रास्ते पर सवार हुआ वह लगभग 2.5 करोड़ वर्ष पहले का ड्रायोपिथीकस था। लगभग 1.2 करोड़ वर्ष पूर्व उसकी जगह प्लीओपिथीकस ने ले ली। उसकी जगह लगभग 50 लाख वर्ष पहले आस्ट्रेलोपिथीकस ने ले ली जो अभी तक अर्द्धमानव ही था और सम्भवत: औजार उपयोग करने लगा था। लगभग 30 लाख वर्ष बाद आस्ट्रेलोपिथीकस हाथों से काम करने वाले मनुष्य के रूप में विकसित हुआ। उसके बाद 10 लाख वर्ष पहले पिथीकन थ्रोम्पुसेरेक्टस (पिकिंग और जावा मानव) अस्तित्व में आया। यह पहला खड़ा मानव जिसका दिमाग काफी बड़ा था उसे 'मानव' माना जा सकता है। वह सुदृढ़, घुमक्कड़, यद्यपि धीमा और पूरी पृथ्वी पर अपना रास्ता तय करने वाला था। इस धारा की दो शाखाएं हिडेलबर्ग और निएन्डरथाल बन गई। इनमें से निएन्डरथाल को पहला बुद्धिमान मनुष्य (होमो-सेपियन) होने का दर्जा मिला। कुछ मानव विज्ञानियों का अनुमान है कि वह लगभग 2 लाख वर्ष पहले पैदा हुआ और करीब 1 लाख वर्ष पहले यूरोप में पक्के तौर पर बस गया। उसके बाद पिल्टडाऊन मानव आया, इसके साथ ही आज का प्रतिनिधित्व करने वाली आस्ट्रलियन आदिवासी जातियों की नस्लें चलीं। यह वर्तमान मानव समुदाय का सबसे पुराना आदिम रूप था। कुछ समय बाद इनमें से वर्तमान मानव समुदाय के पूर्वजों की कई साझी प्रजातियां निकली। क्रोमानॉन, ग्रीमाल्डी, चान्सीलेड, कोम्बेकेपेली या ओबीरिएसेल प्रजातियां बिल्कुल आधुनिक हैं और इनमें आपस में ज्यादा फर्क नहीं है। वे अभिनूतन युग में रहती थी और उनके रूपान्तरित वंशजों के अलावा बाकी का अस्तित्व समाप्त हो गया। करीब 40 से 50 हजार वर्ष पहले एक बड़ी छलांग लगी और मानव अपने आधुनिक शारीरिक बनावट के साथ उभरा।

मानव प्रजातियां, जैसे-जैसे भूमण्डल पर फैली, उनका अपने परिवेश के साथ अन्तरक्रिया के कारण नई विशिष्टताएं पैदा हुई, इस प्रकार मानव कई प्रजातियों में विकसित हुआ। ये हैं—मंगोलियन (पीला) समूह, कॉकोसोएड (सफेद) समूह, कॉकोसाएड (भूरा) समूह, निग्रो (काला) समूह, आस्ट्रोलॉएड (आस्ट्रलियन आदिवासी) समूह, कैपोइड (अफ्रीकन) समूह। इस पृथ्वी पर प्रत्येक प्रजाति दूसरी किसी भी प्रजाति के साथ स्वतंत्र रूप से सम्बन्ध स्थापित कर मानव को जन्म दे सकती है। मानव वर्णसंकर है और लम्बे समय से ऐसा रहा है।

पाशविक दुनिया से एक स्पष्टत: भिन्न प्रजाति के रूप में मनुष्य का अलगाव मुख्यतया उसके सीधे खड़े होने से हुआ था; जिससे उसके आगे के दो पैर हाथों में

तब्दील हो गए। इससे मानव ने पत्थरों और छड़ियों का औजारों और उपकरणों के रूप में उपयोग करना शुरू किया। उसी के साथ-साथ पाशविक दिमाग मानवीय दिमाग में तब्दील होना शुरू हुआ और मानव ने बोलने की ताकत भी हासिल की। ये समस्त विकास लाखों वर्षों में हुए हैं। इसी युगान्तरकारी लम्बे काल ने ही सामाजिक मानव और इसके समाज को अस्तित्व में लाया है।

मानव समाज का इतिहास विकास की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें मानव कई सामाजिक अवस्थाओं से गुजरा है। जिसमें प्रत्येक अवस्था निम्न लक्षणों से परिलक्षित होती हैं—(अ) एक निश्चित वैज्ञानिक तकनीकी (या प्राकृतिक) रचनातंत्र और इससे सम्बन्धित सामाजिक श्रम विभाजन (या सामाजिक मानदण्डों और रूप विधानों) और (ब) एक निश्चित तरह के लोग जिनका चलन उस समय के सामाजिक श्रम विभाजन के अनुसार होता है, उसी के अनुरूप सामाजिक इकाइयों और ग्रुपों में गठित होते हैं। उनके उस समय के निश्चित सिद्धान्त और व्यवहार होते हैं। एक निश्चित सामाजिक व्यवस्था (मूलत: एक गण, बाद में एक कबीला, उसके बाद में राजाओं के राज्य और अब एक राष्ट्रीय राज्य) में बंधे होते हैं। ऐतिहासिक विकास पुष्टि करता है कि प्रत्येक अवस्था पुरानी से नई में तब्दील होने की एक प्रक्रिया रही है—इसी से छड़ियों और पत्थरों वाले आदिम स्तर से वर्तमान इलेक्ट्रॉनिक यन्त्रों के स्तर वाला मानव समाज अस्तित्व में आया है और विकसित हुआ है।

III. विकास की कहानी से निकले निष्कर्ष

हमारे अध्ययन का तीसरा बिन्दु है, मानव प्रजाति के उद्‌भव से शुरू हुई संक्षिप्त कहानी से क्या निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

उपरोक्त लेखा-जोखा दो मुख्य परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करता है—एक प्रकृति के विषय में और दूसरा मानव प्रजाति के विषय में।

(क) प्रकृति के विषय में परिप्रेक्ष्य

प्रकृति (या ब्रह्माण्ड) के विषय में परिप्रेक्ष्य एक ऐसी व्यापक या आम प्रक्रिया को प्रस्तुत करता है। जिनमें अनगिनत विशिष्ट प्रक्रियाएं शामिल हैं। इन अनन्त प्रक्रियाओं (मानव प्रजाति की प्रक्रिया साहित) के भिन्न-भिन्न रूप और व्यवहार हैं। परन्तु ये सब प्रक्रियाएं अपने-अपने स्वभाव के मुताबिक भिन्न-भिन्न तरीकों से एक आम (सामान्य) संचालन की पद्धति का अनुसरण करती हैं। यह सतत आम संचालन पद्धति की प्रक्रिया दो तरफा अन्तरक्रिया (यानि आन्तरिक और बाह्य) दो या दो से अधिक वस्तुओं के बीच कभी एकता और कभी संघर्ष की गति द्वारा सम्पन्न होती है। ऐसी अन्तरक्रिया, चाहे वह सामंजस्यपूर्ण हो या टकरावपूर्ण, समय के

दौरान प्रत्येक प्रक्रिया के गुण और परिणाम में निरन्तर आंशिक परिवर्तन कर देती है। और, परिणाम स्वरूप एक चरम बिन्दु पर प्रत्येक पुरानी प्रक्रिया (जिसका अपना विशिष्ट चरित्र होता है) एक नई प्रक्रिया (अपने खास लक्षणों के साथ) में तब्दील होती है, इस प्रकार दोनों प्रक्रियाएं अपने-अपने भिन्न स्वभावों वाली होती हैं। बदलाव और विकास की यह अन्तहीन प्रक्रिया मानव समाज सहित प्रत्येक घटनाक्रम में निरन्तर जारी रहती हैं।

(ख) मानव समाज के विषय में परिप्रेक्ष्य

मानव समाज के विषय में परिप्रेक्ष्य के दृष्टिकोण से यह ऐसा घटनाक्रम है जिसके अस्तित्व की प्रणाली जैविक (जिसके लिए एक निचिश्त प्राकृतिक पर्यावरण की आवश्यकता) है, परन्तु जिसकी जीवन यापन और कार्य करने की प्रणाली सामाजिक है। स्पष्टतया, मानव प्रजाति या उसके संगठन, यानि समाज, दो तरफा प्रकृति लिए हुए हैं—जैविक (या प्राकृतिक) और सामाजिक।

प्रकृति की दूसरी सभी प्रक्रियाओं की तरह मानव समाज की प्रक्रिया भी प्रकृति की सार्वत्रिक (सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में चलने वाली एक आम प्रक्रिया) प्रक्रिया का एक हिस्सा है। प्रकृति की दूसरी किसी भी प्रक्रिया की तरह ही यह भी बदलती और विकसित होती रहती है। अत: यह अपने उद्भव से ही घटनाक्रमों की दो तरफा अन्तरक्रिया (एक बाह्य और दूसरी अन्त:)—एकता और संघर्ष के द्वारा और सार्वत्रित संचालन की पद्धति के अनुसार परिवर्तित और विकसित होती रही है। बाह्य अन्तरक्रिया मानव और प्रकृति की दूसरी प्रक्रियाओं के बीच एकता और संघर्ष द्वारा घटित होती है जबकि मानव समाज के अन्दर अन्त: प्रक्रिया सम्पन्न होती है।

IV. प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञानों द्वारा उपर्युक्त धारणाओं की पुष्टि

हमारे अध्ययन का चौथा बिन्दु है—प्रकृति और मानव समाज के बारे में उपर्युक्त वर्णित आम धारणाओं की तथ्यों से पुष्टि कैसे होती है। यह प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञानों की विभिन्न शाखाओं के सिद्धान्त और व्यवहार करके देखा जा सकता है।

(क) क्वाण्टम मैकेनिक्स

(i) क्वाटम मैकेनिक्स का विज्ञान (सूक्ष्म-विश्व के बारे में) दर्शाया है कि रेडियो केन्द्रक (मध्यम भार वाले तत्व जैसे यूरेनियम-235 या प्लुटोनियम-239) में से न्यूट्रोन और प्रोटोन के बीच की एकता को तोड़ने से कैसे परमाणु ऊर्जा निकलती है। यह प्रक्रिया परमाणु विखण्डन कहलाती है और इसे परमाणु रिएक्टर या परमाणु बम में

देखा जा सकता है। इसके उलट, जब हाइट्रोजन (एक हल्के भार वाला तत्व जिसमें केवल एक परमाणु होता है) के दो परमाणुओं को जोड़कर हीलियम (जिसके दो परमाणु होते हैं) बनाया जाता है तो काफी बड़ी मात्रा में परमाणु ऊर्जा निकलती है। यह प्रक्रिया परमाणु संलयन कहलाती है। जो सूर्य सहित तारों में ऊर्जा उत्पन्न होने की आम पद्धति है।

(ख) भौतिकी

(ii) भौतिक विज्ञान (दीर्घ-विश्व के सम्बन्ध में) दर्शाता है कि कैसे एक निश्चित हालात में पानी के अणुओं के बीच नजदीकी एकता उसे बर्फ में बदल देती है, जबकि इसके अणुओं के बीच दूरी बढ़ने से यह भाप में परिवर्तित हो जाता है। इसके परमाणुओं की वायु में औसत दूरी साधारण ठोस पदार्थ के परमाणुओं की दूरी की तुलना में 10 गुनी अधिक होती है। हमारा ग्रह पृथ्वी स्वयं गैसों, पत्थर, लोहे के कणों और धूल का संयोग है जो गुरुत्वाकर्षण खिंचाव, गैस दबाव और विद्युत-चुम्बकीय बल के द्वारा आपस में जुड़े हुए हैं।

(ग) रसायन विज्ञान

(iii) रसायन विज्ञान (रासायनिक प्रक्रियाओं के सम्बन्ध में) दर्शाता है कि कैसे-कैसे तत्वों को एक निश्चित मात्रा में संयोग करवाने से एक नया यौगिक (उदाहरणतया सोडियम+क्लोराइड=साधारण नमक) बनता है। एक यौगिक को किसी निश्चित मात्रा (उदाहरणतया, पानी=ऑक्सीजन का एक परमाणु +हाईड्रोजन के 2 परमाणु) के 2 तत्वों में विभाजित किया जा सकता है। गैसों के संयोजन से वायु बनती है और वायु को गैसों में विभाजित किया जा सकता है।

(घ) जीव-विज्ञान

(iv) जीव-विज्ञान (जैविक प्रक्रियाओं के सम्बन्ध में) दर्शाता है कि कैसे कार्बनिक (जैविक) प्रक्रियाओं (यानि पौधों, पशुओं और मनुष्यों) में पचा लेने और अपघटित भाग को निकाल देने की उपापचयी क्रियाएं आंशिक और मूलभूत परिवर्तन कर देती है।

(ड़) यान्त्रिकी

(v) यांत्रिकी विज्ञान (यांत्रिकी के सम्बन्ध में) दर्शाता है कि विभिन्न यांत्रिक घटनाक्रमों में क्रिया और प्रतिक्रिया के कारण उनकी अपनी-अपनी गति में कैसे बदलाव आता है। उदाहरण के लिए एक निश्चित हालात में गेंद को दीवार से टकराने की क्रिया में दीवार समान बल से गेंद को प्रतिक्रिया स्वरूप वापिस धकेल देती है।

(च) अन्तरिक्ष

(vi) अन्तरिक्ष विज्ञान (खगोलीय पिण्डों के सम्बन्ध में) दर्शाता है कि कैसे इसकी समस्याओं—जैसे समय की माप, दैनिक गति, ग्रहीय गति, ग्रहों और तारों का सहयोजन, ग्रहण और भूकेन्द्रीय पैरेलैक्स, इत्यादि—को गणित के धन और ऋण अंकों का उपयोग करके हल किया जा सकता है।

(छ) भूविज्ञान

(vii) भूविज्ञान (भूवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के संदर्भ में) दर्शाता है कि कैसे पृथ्वी के विकास की प्रक्रिया विभिन्न अवस्थाओं (यानि पुरातन, प्रजीव, मध्यजीवी, नूतन जीव युग इत्यादि) से गुजरती है, जिसमें से कोई भी अपनी पहली अवस्था को दोहराती नहीं है और प्रत्येक अवस्था में बहुत से महाद्वीपों, द्वीपों, समुद्रों, पहाड़ों इत्यादि का लोप हुआ है और पूर्णतया नए घटनाक्रमों के साथ-साथ महत्वपूर्ण जलवायु परिवर्तन हुए।

(ज) जीवाश्म-विज्ञान

(viii) जीवाश्म-विज्ञान (जीवाशेष प्रजातियों का अध्ययन करने वाले विज्ञान की एक नई शाखा) दर्शाता है कि कैसे बहुत से पौधे और पशु प्रजातियां एक दूसरे का स्थान लेती रही है। इनमें से कुछ लुप्त होती रही हैं जबकि दूसरी प्रजातियां का करोड़ों वर्षों में आविर्भाव होता रहा है। इस प्रक्रिया द्वारा पशु प्रजातियां क्रमशः धीरे-धीरे तृतीय महाकल्प (6.9 करोड़ से 10 लाख साल पहले से) तक अधिक जटिल बनती गई, विकसित पशु सहित स्तनधारी प्रकट हुए जो न केवल संवेदन करने के सक्षम थे बल्कि प्रत्यक्ष बोध अवधारणा की क्षमता भी रखते थे।

(झ) विज्ञान की नई शाखाएं

(ix) विज्ञान की दूसरी नई शाखाएं जैसे कि जैव-भौतिकी, जैव-रसायन, जैव-तकनीकी, खगोल-भौतिकी, भू-रसायन, सूक्ष्म जैविकी इत्यादि जो अपने से सम्बन्धित प्रक्रियाओं का संयुक्त अध्ययन करती है और दर्शाती है कि किस प्रकार उनके विशिष्ट घटनाक्रम अन्तरसम्बन्धित आपस में जुड़े हुए, अन्तरक्रियाशील और एक दूसरे में तब्दील होते हैं।

(ञ) विज्ञान की पुरानी शाखाएं

(x) विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के तीन दूसरे महत्वपूर्ण सिद्धान्त भी दर्शाते हैं कि कैसे प्रकृति में भिन्न-भिन्न प्रकार के घटनाक्रम अन्तरसम्बन्धित, अन्तरक्रियाशील और आपस में तब्दील होते रहते हैं।

प्रथमतया, जैविक (ऑरगेनिक) घटनाक्रम की कोशिकीय संरचना (1838-39) का जीव विज्ञान का सिद्धान्त स्थापित करता है कि पशु और पौधे की कोशिकाएं—चाहे वे एक समुद्री घास या एक पेड़ की अथवा एक सूक्ष्म जीव या मनुष्य की कोशिकाएं हो—सभी मौलिक तौर पर एक ही तरह की संरचना और शारीरिक क्रिया सम्पन्न करती हैं। जीवों का जन्म और विकास कोशिकाएं की गुणन वृद्धि, उनके निरन्तर नवीनीकरण—जन्म और मृत्यु—के द्वारा होता है। यह सिद्धान्त सभी जीवों की ऐतिहासिक एकता को सिद्ध करता है और अप्रत्यक्ष तौर पर उनकी उत्पत्ति की एकता की तरफ इशारा करता है।

द्वितीयतः, संरक्षण एवं ऊर्जा के रूपातन्तरण का भौतिक सिद्धान्त (1840 का) उद्घाटित करता है कि यांत्रिक, उष्मीय, विद्युत और रासायनिक ऊर्जा आपस में परिवर्तनीय है। इस प्रकार इसने दुनिया में विभिन्न घटनाक्रमों के बीच आपसी तब्दीली और अन्तरसम्बन्ध को प्रदर्शित किया।

तृतीयतः, जीवों के बारे में डार्विन का विकासवादी सिद्धान्त (1859) पशुओं और पौधों की प्रजातियों की परिवर्तनीयता और उनकी उत्पत्ति की एकता को सिद्ध करता है। यह स्वतः (स्वाभाविक) प्राकृतिक चयन, पेड़ और पोधों का अस्तित्व के लिए संघर्ष और सर्वोत्तम अनुकूल व्यक्तिगत इकाइयों और प्रजातियों के जिन्दा रहने के उसूल को मानता है। यह सभी जीवों के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है और प्रदर्शित करता है कि उनका विकास पुराने को दोहराना नहीं था बल्कि पुराने का नए में तब्दील होना था। यहां यह उल्लेख करना बिलकुल उचित होगा कि प्रकृति की प्रक्रिया एक से दूसरी प्रजातियों में विकास के बहुत से उदाहरणों के दृष्टान्त पेश करती है। सूण्डी से तितली का विकास एक सामान्य तब्दीली का उदाहरण है। आजकल, एक तरफ के पौधे के उत्परिवर्तन (म्युटेशन) और जैव-तकनीकी द्वारा गुणात्मक तौर पर भिन्न पौधे में परिवर्तन करना आम प्रचलन हो गया है। यहां तक कि पौधे में पशु जीव के प्रतिरोपण ने पौधे और पशु के बीच के अवरोध को तोड़ दिया है।

(ट) सामाजिक विज्ञान

सामाजिक विज्ञान का गहन अध्ययन भी दर्शाता है कि कैसे समाज भी (प्रकृति की आम प्रक्रिया के एक भाग के तौर पर) अन्य प्रकृति विज्ञानों के समान समाज की विभिन्न उप-प्रक्रियाओं (यानि राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, विदेश, प्रशासनिक इत्यादि) और उनकी अपनी-अपनी शाखाओं (उदाहरणतया सामाजिक प्रक्रिया में राष्ट्रों, राजनीतिक प्रक्रिया में पार्टी और दबाव समूह, आर्थिक प्रक्रिया में उद्योग, कृषि, इत्यादि और सांस्कृतिक प्रक्रिया में कला, साहित्य, विज्ञान इत्यादि) में अन्तरक्रिया (यानि क्रिया और प्रतिक्रिया) का अनुसरण करता है।

समाजशास्त्र का समाज विज्ञान दर्शाता है कि कैसे अपने अपने समय की विभिन्न ऐतिहासिक इकाइयों के बीच कभी एकता और कभी संघर्ष (उदाहरणतया प्राचीन समय में गण-संघर्ष और गणों का मेल, उसके बाद कबीलों के बीच संघर्ष और मेल, बाद में सामन्ती राज्यों के बीच युद्धों और समझौते का होना और हालिया राष्ट्रीय युद्धों का होना, जैसे इराक के खिलाफ अमेरिका की अगुवाई में संयुक्त राष्ट्र का 1991 का युद्ध, 1950 से 1980 के बीच अमेरिका और सोवियत संघ के बीच शीत युद्ध, 1980 के दशक में ईरान-इराक युद्ध, 1965 और 1971 का भारत-पाक युद्ध इत्यादि और हालिया राष्ट्रीय गठजोड़ों, जैसे नाटो, भूतपूर्व वार्सा गठजोड़ और दूसरे सुरक्षा गठजोड़ों के साथ व्यापारिक ब्लॉकों जैसे नाफ्टा, एसीयान, ई.सी.इत्यादि) के द्वारा सामाजिक विकास की प्रक्रिया आगे बढ़ती रही हैं राजनीति विज्ञान दर्शाता है कि कैसे विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के बीच कभी संघर्ष (उदाहरणतया, पंजाब में फरवरी 1977 के चुनावों में सी.पी.आई.—कांग्रेस गठजोड़ बनाम जनता दल—सी.पी.एम. का साझा जबकि केन्द्र में सी.पी आई., सी.पी.एम. और जनता दल का गठजोड़) और कभी एकता (उदाहरणतया 1977 में पंजाब में अकाली—बी.जे.पी. गठजोड़, हरियाणा में एच.वी.पी.—बी.जे.पी. गठजोड़, बंगाल में वाम मोर्चा इत्यादि) की अन्तरक्रिया से राजनीतिक प्रक्रिया विकसित होती रहती है। अर्थशास्त्र का समाज विज्ञान दर्शाता है कि कैसे आर्थिक प्रक्रिया प्रायः एकता की गति (यानि उत्पादन की प्रतिदिन की गतिविधि में) तथा कभी-कभी संघर्ष (यानि मजदूरी बढ़ाने, बोनस, प्रोवीडेण्ट फण्ड इत्यादि) के तरीके से विकसित होती है। कला में संस्कृति का समाज विज्ञान दर्शाता है कि कैसे विभिन्न सांस्कृतिक पहचानों के बीच कभी एकता (यानि अन्दर आने वाले कबीलों का जैसे कुशाणों, गुज्जरों इत्यादि और धार्मिक समूह जैसे मुसलमानों, क्रिश्चियनों इत्यादि का भारत के मूल निवासियों के साथ सांस्कृतिक संश्लेषण और कभी संघर्ष (उदाहरणतया ग्रीक, मुगल और ब्रिटिश का अपने-अपने शासनों के द्वारा भारत पर सांस्कृतिक प्रभाव और भारत की संस्कृति का उन पर प्रभाव) की अन्तरक्रिया से कला और संस्कृति की प्रक्रिया आगे बढ़ी है।

V. प्रकृति और समाज के बीच एवं समाज के भीतर अन्तरक्रिया

हमारे अध्ययन का पांचवां बिन्दु है कि प्रकृति और मानव समाज के बीच बाह्य अन्तरक्रिया और मानव समाज में अन्दरूनी अन्तरक्रिया बारी-बारी से एकता और संघर्ष के तरीके से कैसे सम्पन्न होती है?

(क) प्रकृति और समाज के बीच अन्तरक्रिया

समाज के साथ प्रकृति विभिन्न संघठनकारी (उदाहरण वायु, पानी, भोजन इत्यादि) और विघठनकारी (जैसे वॉयरस, भूकम्प, सूखा इत्यादि) प्रक्रियाओं द्वारा

समाज के साथ क्रिया और प्रतिक्रिया करती है। इन अन्तरक्रिया करने वाली प्राकृतिक प्रक्रियाओं की दो बड़ी श्रेणियां हैं। एक वह श्रेणी जिसके संगठन, संचालन और परिवर्तन की पद्धति का मनुष्य जाति को इल्म है (उदाहरणतया, भूमि, मशीनों, तेलों, अनाज के दानों इत्यादि)। दूसरी श्रेणी जिसके संगठन, संचालन और परिवर्तन का अभी तक मनुष्य जाति को ज्ञान नहीं है या जिसका बहुत कम ज्ञान है (उदाहरणतया, ब्लेक होल, गैलेक्सी, तारे, नक्षत्र इत्यादि) इन दो तरह की प्रक्रियाओं में से पहली ज्ञात प्रक्रिया के सिद्धान्त और व्यवहार को वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र (या समाजी प्राकृतिक रचनातंत्र) के रूप में जाना जाता है जिसमें सभी तरह की वैज्ञानिक धारणायें, तकनीकी साधन और वस्तुएं तथा उनके उत्पाद आते हैं।

यह वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र एक निश्चित तरह के सामाजिक श्रम-विभाजन या संचालन की प्रणाली (उदारहणतया, एक मशीन के लिए फैक्ट्री की तरह का संगठन चाहिए या एक हवाई जहाज के लिए हवाई अड्डे का प्रबन्ध और कार्य प्रणाली की आवश्यकता होती है, इत्यादि) से जुड़ा होता है। इस वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र के संचालन के लिए मनुष्य जाति को इन नियमों का पालन करना पड़ता है। अगर मुनष्य जाति इन नियमों का पालना नहीं करे तो इस वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र का संचालन नहीं किया जा सकता है (जैसे एक मशीन तभी कार्य करती है जब मजदूर अपने श्रम का मशीन की गति से सुमेल बैठाये अन्यथा मशीन अपने संचालक निर्देशों को मानने से इंकार कर देती है।)

सामाजिक श्रम विभाजन एक बड़ी सामाजिक श्रेणी है। यह श्रम की विभिन्न धारणाओं और रूपों या मानव सामाजिक समुदाय के राजनीतिक, आर्थिक और संस्कृति के तीन मुख्य क्षेत्रों में कार्य की गतिविधि का द्योतक है। राजनीति का सम्बन्ध सार्वजनिक प्रबन्ध या संचालन या राज्य प्रशासन की कला (या समाज विज्ञान) से है। अर्थशास्त्र का सम्बन्ध उत्पादन, वितरण, विनिमय, उपभोग और आर्थिक समानता की कला (या समाज विज्ञान) से है। संस्कृति एक निश्चित सामाजिक इकाई की जीवन पद्धति को चिह्नित करती है। जो एक निश्चित विश्वासों, रिवाजों, परम्पराओं, भाषा, कला इत्यादि का उपभोग करती है। इस प्रकार सामजिक श्रम-विभाजन सम्पूर्ण मानसिक और शारीरिक कार्य को शामिल किए हुए है, अर्थात् आर्थिकता, राजनीति और संस्कृति में मानसिक और शारीरिक श्रम का द्योतक है, आर्थिकता (यानि उद्योग, कृषि, व्यापार इत्यादि), राजनीति (यानि कानून, प्रशासन इत्यादि) और संस्कृति (यानि कला, साहित्य, विज्ञान इत्यादि) की विभिन्न शाखाओं में तथा उद्योग, कृषि व्यापार, कानून, प्रशासन, कला, साहित्य, विज्ञान और इसी प्रकार के अन्य सभी क्षेत्रों की उपशाखाओं में सम्पूर्ण शारीरिक और मानसिक श्रम को चिह्नित करता है। परिणामस्वरूप, मनुष्य अपनी सामाजिक इकाइयों (गण, कबीला,

वर्ग, सामन्ती राज्य, राष्ट्रीय राज्य, वर्तमान में विश्व स्तर के विभिन्न संगठन इत्यादि) एवं सामाजिक मानदण्डों तथा रूपों का गठन निश्चित सामाजिक श्रम विभाजन के अनुरूप करता है।

इस प्रकार सामाजिक श्रम विभाजन मानव के संगठन, गति और परिवर्तन में बहुत महत्वपूर्ण पहलू है। प्रकृति अपने सामाजिक श्रम विभाजन का अनुसरण करने के लिए मनुष्य जाति को बाध्य करके मानव समाज के साथ अपने सम्बन्धों में प्रथम स्थिति अख्तियार करती है।

निश्चित सामाजिक श्रम विभाजन की प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने के साथ-साथ अधिक सम्पत्ति प्राप्त करने या समाज के लिए कुछ अधिक सुविधाएं हासिल करने या बढ़ती हुई सामाजिक आवश्यकताएं पूरी करने के लिए अभी तक अज्ञात प्रकृति की प्रक्रिया को जानने के लिए नई खोज और प्रयोग करके समाज प्रकृति पर अपनी क्रिया और प्रतिक्रिया करता है। यह अन्तरक्रिया कभी एकात्मक (उदाहरणतया, श्वास लेना, पानी पीना, भोजन करना इत्यादि) और कभी विरोधाभासी (उदारहणतया, प्राकृतिक संसाधनों का अधिक उपयोग, प्रदूषण पैदा करना, इत्यादि) तरीके से होती है। इन अन्तरक्रियाओं के दौरान मनुष्य निरन्तर विभिन्न प्राकृतिक प्रक्रियाओं में नए परिवर्तन करता है, अपने नए सिद्धान्त और व्यवहार से प्रकृति को मानव जाति के लिए उपयोगी नये रूपों में विकसित करता है। इस प्रकार प्रकृति में नए परिवर्तन लाकर और परिणामस्वरूप वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र को और आगे विकसित करते हुए समाज, प्रकृति के साथ सम्बन्धों में मुख्य भूमिका अदा करता है।

प्रकृति और समाज की बारी-बारी से यह बदलती हुई भूमिका समाज के विकास के सम्बन्ध में प्रत्येक प्रक्रिया में निरन्तर चलती रहती है। इस प्रकार वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र और समाज दोनों में निरन्तर बदलाव लाते हुए सामाजिक उन्नति को आगे बढ़ाया जाता है।

(ख) समाज के भीतर अन्तरक्रिया

मानव समाज के भीतर अन्तरक्रिया सामाजिक श्रम विभाजन से नजदीकी जुड़ी हुई है। सामाजिक श्रम विभाजन के कार्यान्वयन के लिए दो जरूरतें हैं– (अ) विभिन्न क्षेत्रों—राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, सुरक्षा और विदेश मामलों में कार्य कर रही मनुष्य की सामाजिक इकाइयां और (ब) सामाजिक श्रम विभाजन के निर्विघ्न संचालन के लिए सामाजिक इकाइयों तथा उनके व्यक्तिगत सदस्यों के पालन के लिए सामाजिक मानदण्डों और रूपों की आवश्यकता है।

(i) सामाजिक इकाइयों तथा सामाजिक मानदण्डों और रूपों की भूमिका—हमारे अध्ययन का छठा बिन्दु है—समाज में सामाजिक इकाइयों और

सामाजिक मानदण्डों एवं रूपों की क्या भूमिका है?

वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र और उससे सम्बन्धित सामाजिक श्रम विभाजन का सर्जन और संचालन करने वाली सामाजिक इकाइयां (जो सामाजिक वर्ग भी कहलाती हैं) कोई साधारण घटनाक्रम नहीं है। एक व्यक्तिगत सामाजिक इकाई से प्रारम्भ होकर (उदाहरणतया, 94 करोड़ का भारतीय राष्ट्र) जैसी बड़ी इकाइयां भी इसमें शामिल है। इनमें से कुछ सामाजिक इकाइयां प्रमुख तौर पर वैचारिक (उदाहरणतया, धार्मिक समूह, राजनीतिक ग्रुपों, वैज्ञानिक अनुसंधान कार्यकर्ता इत्यादि) होती है। इनमें से कुछ मुख्यतया आर्थिक फायदे के लिए होती है (उदाहरणतया, परिवारों, ट्रेड यूनियनों, वर्गों इत्यादि)। इनमें से कुछ मुख्यतया राजनीतिक, कुछ आर्थिक, कुछ सांस्कृतिक और कुछ समाज विरोधी होती हैं। इनमें से कुछ इकाइयों (उदाहरण, राष्ट्रों, समुदायों इत्यादि) को उनके बहुपक्षीय चरित्र के कारण उनका मुख्य चरित्र नहीं पहचाना जा सकता। व्यक्तिगत इकाई को छोड़कर बाकी सभी इकाइयों को दो पहलुओं से पहचाना जाता है, उनमें एक पहलू उसका मुख्य कार्यकर्ता और दूसरा पहलू उसकी सहायक इकाई (यानि जनरल बॉडी) होती है। नियम के तौर पर ऐसी कोई सामाजिक इकाई नहीं है जिसका अगुवा कार्यकर्ता (जो चाहे थोड़े ही समय के लिए अगुवा की भूमिका निभाए) न हो। किसी इकाई के अगुवा कार्यकर्ता और सहायक इकाई (जनरल बॉडी) के बीच सम्बन्ध यह बना रहता है कि इनमें से प्रत्येक बारी-बारी से आगे आता रहता है।

सामाजिक मानदण्डों और रूपों (जिन्हें सामाजिक सम्बन्ध भी कहा जाता है) को जो सामाजिक श्रम विभाजन को लागू करने के नियम है, यह भी एक जटिल प्रक्रिया है। संक्षेप में ये सम्बन्ध व्यक्ति और समाज के बीच आर्थिक कार्य (यानि उत्पादन, वितरण, विनियम, उपभोग, आर्थिक समानता) के दौरान विभिन्न सामाजिक इकाइयों के दरम्यान, राजनीतिक कार्यवाहियों (यानि चुनावों, प्रशासन, कानून इत्यादि) और सांस्कृतिक गतिविधियों (यानि आचार-शास्त्र, विभिन्न सांस्कृतिक मुहिमों में नैतिक तत्व इत्यादि) तथा भौतिक वस्तुओं और विभिन्न सामाजिक इकाइयों के बीच सामाजिक उसूलों का एक समुच्चय बनते हैं जो बहु-पक्षीय सामाजिक सम्बन्धों को तय करते हैं, दूसरे शब्दों में वे प्रत्येक सामाजिक इकाई की सामाजिक स्थिति और सामाजिक भूमिका (आर्थिकता, राजनीति और संस्कृति के सम्बन्ध में चाहे प्रभुत्वकारी, अधीनस्थ या मध्यम दर्जे की भूमिका हो) को तय करती है। इन सामाजिक मानदण्डों और रूपों पर एक निश्चित समाज की सभी सामाजिक इकाइयां आम सहमति बनाकर उन्हें कानूनों और नियमों के रूप में संविधान और विधिशास्त्र में दर्ज कर लेती है और उसे समस्त राज्य और इसके निवासियों के लिए कानूनी तौर पर पालन करना आवश्यक बना दिया जाता है।

मानव समाज के प्रारम्भ से लेकर अब तक सामाजिक श्रम-विभाजन (और इससे सम्बन्धित वैज्ञानिक तकनीकी) के अनुरूप सामाजिक इकाइयां और सामाजिक मानदण्डों तथा रूपों में निरन्तर बदलाव होता रहा है। सामाजिक इकाइयां आपसी एकता और आपसी संघर्ष के द्वारा सामाजिक विकास में अपनी विशिष्ट भूमिकाएं निभाती हैं। एकता का सवाल विभिन्न सामाजिक इकाइयों के निश्चित उद्देश्यों और हितों में मेल से सम्बन्ध रखता है जबकि विभिन्न सामाजिक इकाइयों के वास्तविक उद्देश्यों और सम्बन्धों में टकराव से संघर्ष की भूमिका निकलती है। बहुत से राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मामलों में एकता और संघर्ष के मसले एवं सामाजिक इकाई या कुछ सामाजिक इकाइयों के आम सहमति पर आधारित एजेण्डा के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करने वाले भिन्न विचारों के द्योतक हैं जो या तो सम्पूर्ण सामाजिक वास्तविकता या इसके विभिन्न आयामों में कोई एक के बारे में स्पष्ट धारणा का दावा करते हैं। अथवा इन वास्तविकताओं को उचित जवाब देते हैं। ठोस हालात के मुताबिक वास्तविकता और उसको दिया गया जवाब बारी-बारी से परिस्थितियों के मुताबिक प्राथमिक स्थान ग्रहण करते हैं। यहां तक कि राज्य सत्ता (जिसमें एक राज्य की समस्त जनसंख्या प्रभावित होती है) का विषय जो निरन्तर टकराव का विषय बना रहता है, इस विषय को भी या तो मुकाबले वाली सामाजिक इकाइयों के बीच समझौते से या लड़ाई से हल किया जाता रहा है। जब कभी एक नया सामाजिक श्रम विभाजन और सम्बन्धित वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र उभरता है तब समाज में नई सामाजिक इकाइयां पैदा होती हैं, ऐसे समय में पुरानी इकाइयों और नई पैदा हुई सामाजिक इकाइयों के बीच एकता और संघर्ष की समस्या तेज हो जाती है।

मानव समाज की सम्पूर्ण लम्बी प्रक्रिया में कोई एक सामाजिक इकाई (चाहे वह पश्चिमी उदारवादी मॉडल का बुद्धिमान नायक हो या कम्युनिस्ट मॉडल का सामाजिक वर्ग हो) सभी उद्देश्यों की पूर्ति करने वाली इकाई न तो हुई है और न ही हो सकती है, यानि एक इकाई सामाजिक प्रगति का एकमात्र स्रोत नहीं होती है। सामाजिक विकास के द्वारा व्यवस्थागत परिवर्तन विभिन्न इकाइयों (व्यक्तिगत इकाई सहित) के बीच अन्तरक्रिया के द्वारा ही होता है और इसी अन्तरक्रिया से ही ऐसा होना सम्भव है। इस बहुपक्षीय और बहुआयामी अन्तरक्रिया में कमी एक विशिष्ट वैज्ञानिक अपने सहयोगी वैज्ञानिकों की टीम सहित कभी एक विशिष्ट अर्थशास्त्री अपने सहयोगी अर्थशास्त्रियों की टीम सहित, कभी एक विशिष्ट कलाकार अपने कलाकारों की टीम सहित, कभी एक विशिष्ट धार्मिक प्रचारक अपने सहयोगी धार्मिक प्रचारकों के साथ और अन्य इसी प्रकार के संगठन भिन्न-भिन्न समय पर अपने-अपने समय की समकालीन इकाइयों के साथ अपने विकसित सही सामाजिक विचारों की अन्तरक्रिया (जो कभी-कभी एकता द्वारा और कभी संघर्ष द्वारा होती है) करते हुए सामाजिक

विकास में अपना बड़ा योगदान करते रहे हैं।

सभी को सम्मिलित कर लेने वाली राज्य इकाई में अत्यधिक उत्कृष्ट राजनीतिक इकाई और उसका विशिष्ट नेता वास्तविकता पर आधारित अपने प्रस्तावों और उनको लागू करने में अपने समय की राजनीतिक इकाइयों के साथ अन्तरक्रिया (एकता व संघर्ष) के द्वारा अपनी प्रमुख भूमिका अदा करता है।

(ii) सामाजिक विचार कहां से आते हैं—हमारे अध्ययन का सातवां बिन्दु है कि सामाजिक विचार कहां से आते हैं?

मानव समाज, उसकी सामाजिक इकाइयां और उसके समस्त मनुष्य सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सामाजिक विचारों के द्वारा कार्य करते हैं। विचारों के द्वारा सम्प्रेषण (सम्पर्क) मानव जाति के चलन की एकमात्र पद्धति रही है जो मनुष्य को सभी गैर मानवीय घटनाक्रमों से अलग दर्शाती है। दूरदर्शी नेता और सामाजिक इकाइयां अपने विचारों को सूत्रबद्ध करके सामाजिक सिद्धान्त बनाते हैं और अपने समकालीन लोगों (अपने अन्दर और बाहर) के साथ अन्तरक्रिया में कई तरह की पहलकदमियां और गतिविधियां करते हुए अपने सिद्धान्त को व्यवहार में लाते हैं। सही सिद्धान्त अपनी मान्यता व्यवहार के द्वारा साबित करता है जबकि गलत सिद्धान्त व्यवहारिक गतिविधि के दौरान अपनी साख खो बैठता है।

एक सही सिद्धान्त और उसके व्यवहार के बीच सम्बन्ध है कि इनमें से प्रत्येक बारी-बारी से मनुष्य को उनके उद्देश्य और कोशिशों में सहायता पहुंचाते हैं। शुरूआत में जब सिद्धान्त-व्यवहार को विकसित करता है। तब सिद्धान्त ज्ञान का मुख्य पहलू बनता है। जिन क्षणों में व्यवहार सिद्धान्त को समृद्ध करता है उस समय व्यवहार प्राथमिक होता है। इस प्रकार, सिद्धान्त और व्यवहार दोनों ही ज्ञान का आधार बनते हैं चाहे वह ज्ञान प्राकृतिक हो या सामाजिक अथवा सैद्धान्तिक हो या व्यवहारिक। किसी सामाजिक इकाई (एक व्यक्ति की इकाई भी हो सकती है) का कुल सिद्धान्त और व्यवहार ही उसका सम्पूर्ण प्राकृतिक और सामाजिक ज्ञान बनता है। इसी तरह से मानव समाज की सभी सामाजिक इकाइयों का कुल सैद्धान्तिक और व्यवहारिक ज्ञान ही समाज का सम्पूण ज्ञान बनता है। प्रकृति के ज्ञान के सम्बन्ध में, सूचना का आधार प्राकृतिक प्रक्रियाओं में निहित होता है, जबकि उनका प्रेक्षण (निरीक्षण) व्याख्या और सूत्रबद्ध करने की प्रक्रिया मानवीय सोच से जुड़ी हुई है। इसी तरह से सामाजिक ज्ञान के सम्बन्ध में सूचना का आधार सामाजिक श्रम विभाजन (सामाजिक इकाइयों और सामाजिक मानदण्ड तथा रूपों सहित) में निहित है जबकि उनकी व्याख्या और सूत्रबद्ध करने की प्रक्रिया मानवीय सोच से जुड़ी हुई है। ज्ञान के मनोगत सृजन में उत्कृष्ट व्यक्ति की सामाजिक इकाई वैचारिक संसाधन रूपी संयत्र की भूमिका अदा

करती है जबकि उससे सम्बन्धित टीम या ग्रुप सामाजिक इकाई या सम्पूर्ण समुदाय वैचारिक कच्चे माल की पूर्ति करते हैं।

(iii) सामाजिक विकास की अवस्थाएं—हमारे अध्ययन का आठवां बिन्दु है—मनुष्य जाति सामाजिक विकास की किन-किन अवस्थाओं से गुजरी है?

मनुष्य जाति (यानि मानव समाज) का सामाजिक विकास एक एकल प्रक्रिया है, जो दो तरफा यानि एक तरफ मनुष्य और प्रकृति के बीच और दूसरी तरफ मनुष्य जाति की सामाजिक इकाइयों के बीच अन्तरक्रिया से परिलक्षित होती है। इस दो तरफा अन्तरक्रिया ने मोटे तौर पर सामाजिक विकास की चार अवस्थाएं पैदा की हैं, जिनमें से प्रत्येक एक निश्चित वैज्ञानिक रचनातंत्र, सामाजिक श्रम विभाजन, सामाजिक इकाइयों, उसके साथ ही उनके सामाजिक मानदण्डों तथा रूपों और सामाजिक सिद्धान्तों एवं व्यवहार से चरित्रित होती हैं।

प्रथम अवस्था पत्थरों, छड़ियों, हड्डियों, धनुषों, तीरों इत्यादि की तकनीकी पर आधारित भोजन इकट्ठा करने और शिकार करने की अवस्था थी। उस समय सामूहिक श्रम विभाजन था, गणों का संगठन और वंश आधारित मानदण्ड, ढांचा, सिद्धान्त और व्यवहार था जो लाखों वर्षों तक चलता रहा था।

दूसरी अवस्था पशुपालनवाद (ग्राम्यवाद) की थी। यह अवस्था पहले पशुपालन तकनीकी और बाद में धातु (कांस्य और ताम्बा) के औजारों पर आधारित थी। इस अवस्था के शुरू में एक अर्द्ध सामूहिक और बाद में दास आधारित श्रम विभाजन प्रचलित था। उस समय का समाज कबीलों का संगठन था या पशुपालन इकाइयों (यानि प्रभुत्वकारी पशुपालन इकाई, पशुपालक दास इकाई, प्रभुत्वकारी इकाई से सम्बन्धित दूसरी पशुपालक इकाइयां इत्यादि) और अर्द्ध वंशवाद के साथ-साथ दासता (अन्तर कबीलाई युद्धों के दौरान पकड़े गये कैदियों के द्वारा बनाए गए दास और दास प्रथा) के मानदण्डों, रूपों, सिद्धान्त और व्यवहार वाला संगठन था।

तीसरी अवस्था कृषिकारी अवस्था थी। यह अवस्था धातु (विशेषकर लोहा) पिघलाने और ढलाई करने, भूमि उर्वरण, खान खोदने, चक्की लगाने, बुनाई करने, चर्म शोधन, मिट्टी के बर्तन बनाने, कागज बनाने, छपाई करने, जहाज निर्माण इत्यादि तकनीकी पर आधारित थी। इस अवस्था में भू—दास आधारित और पारिवारिक कार्य पर आधारित श्रम विभाजन था। कृषिकारी इकाइयों (यानि प्रभुत्वकारी कृषिकारी इकाई, भू-दास की इकाई, मध्यम श्रेणी, करीगर इकाई इत्यादि) और राज्य के दैवी अधिकार की विचारधारा के नीचे भू-दास प्रथा के मानदण्डों, रूपों, सिद्धान्त और व्यवहार वाला संगठन कायम था।

चौथी अवस्था औद्योगिक अवस्था थी। यह अवस्था पहले हस्तकला और बाद

में मशीन कला (जो भापशक्ति, विद्युत शक्ति और उच्च ऊर्जा ईंधन से चलाई जाती थी) की तकनीकी पर आधारित थी। इस अवस्था में उजरती मजदूरी और मालों के विनिमय पर आधारित श्रम-विभाजन कायम हुआ; औद्योगिक इकाइयों (यानि प्रभुत्वकारी औद्योगिक इकाई, औद्योगिक मजदूर इकाई, औद्योगिक मध्यम श्रेणी इत्यादि) का संगठन बना और उपनिवेशवाद व कम्युनिष्ट केन्द्रीयवाद के साथ उदारवाद एवं संसदीयवाद का सिद्धान्त और व्यवहार तथा मानदण्डों व रूपों वाली व्यवस्था कायम हुई।

हालिया उभरे 1945 के बाद के वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र (अन्तरिक्ष, ऊर्जा, पदार्थ, जीव-विज्ञान, साइबरनेटिक्स, इत्यादि के क्षेत्र में अत्यधिक विकसित अन्तर्दृष्टि को सम्मिलित करते हुए) और इससे सम्बन्धित ग्लोबल (या राष्ट्रों की अन्तरनिर्भरता का) सामाजिक श्रम विभाजन ने ग्लोबल कम्युनिटी के निर्माण की एक नई प्रक्रिया को गति प्रदान कर दी है जो विभिन्न अवस्थाओं से गुजरती हुई आगे बढ़ेगी।

(iv) मानवीय सामाजिक विकास के सकारात्मक और नकारात्मक पहलू—हमारे अध्ययन का नौवां बिन्दु है—मानव समाज की लम्बी प्रक्रिया ने मनुष्य जाति के भविष्य के लिए किस तरह के रणनीतिक प्रभाव छोड़े हैं।

इस प्रक्रिया ने सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह के रणनीतिक प्रभाव पैदा किए हैं।

मानव समाज (या मनुष्य जाति) का सकारात्मक पक्ष है कि इसने कदम ब कदम अपने विज्ञान तकनीकी रचनातंत्र, सामाजिक श्रम-विभाजन, सामाजिक इकाइयों, सामाजिक मानदण्डों और रूपों, सामाजिक सिद्धान्तों और व्यवहार को रूपान्तरित करते हुए आधुनिकीकरण किया। इस प्रकार, भोजन इकट्ठा करने और शिकार करने के विज्ञान और तकनीकी तथा इसका सामूहिक श्रम-विभाजन जो भोजन इकट्ठा करने वाले और शिकारी से पहचाना जाता है। इस समय के मनुष्य ने अपने भोजन इकट्ठा करने और शिकार के लिए सामाजिक मानदण्डों, रूपों, सिद्धान्त और व्यवहार और वंश (सगोत्रता) आधारित गण के संगठन कायम किए, जिसने बाह्य दुश्मन और आन्तरिक गण के विद्रोही के प्रति बर्बर रवैया अपनाया।

पशुपालन विज्ञान और तकनीकी तथा इसके अर्द्ध सामूहिक एवं दासता आधारित श्रम विभाजन का एक घूमने वाले इसके मनुष्य (यानि एक घुमक्कड़) द्वारा चरित्र-चित्रण होता है। इस मनुष्य ने अपने पशुपालनवाद (ग्राम्यता) के सामाजिक मानदण्डों, रूपों, सिद्धान्त और व्यवहार तथा अर्द्ध-वंशवाद आधारित कबीला संगठन कायम किए। जिसने अपने विरोधियों यानि दासों और कबीलों का आन्तरिक अनुशासन

तोड़ने वालों के प्रति निर्मम रवैया अपनाया।

कृषिकारी विज्ञान और तकनीकी तथा इसके भू-दास आधारित श्रम-विभाजन को एक कृषक (अपनी भूमि के साथ जुड़ा हुआ) द्वारा चिह्नित किया जाता है। इस कृषक ने अपनी कृषि के सामाजिक मानदण्डों, रूपों, सिद्धान्त और व्यवहार तथा धार्मिक दिशा वाले कृषिकारी समुदाय का एक सामन्ती संरक्षण आधारित संगठन कायम किया जिसने दुश्मनों और आन्तरिक कानून भंजकों के प्रति सैनिककृत और दमनकारी रवैया अपनाया।

औद्योगिक विज्ञान और तकनीकी और इसके माल व उजरती श्रम-विभाजन एक औद्योगिक मनुष्य की खासियत रखता है। यह औद्योगिक मनुष्य अपने घरेलू मामले में उदारवादी सामाजिक मानदण्डों, रूपों, सिद्धान्त और व्यवहार से तथा बाहरी मामलों में उपनिवेशी दृष्टिकोण से चलता रहा है। इसी तरह से यह राष्ट्र के अन्दर संसदीय व्यवहार करता रहा है जबकि बाहर दमनकारी भूमिका अदा करता रहा है।

आधुनिकीकरण प्रक्रिया, दूसरे शब्दो में सामाजिक पूंजीकरण की प्रक्रिया है जो एक तरफ वैज्ञानिक तकनीकी (या प्राकृतिक) संसाधनों की उन्नति तो दूसरी तरफ मानव संसाधन के विकास का प्रतिनिधित्व करती है। चूंकि ये दोनों पहलू (यानि विज्ञान और तकनीकी तथा लोग) मनुष्य समाज में प्रत्येक घटनाक्रम के सर्जक हैं, वे दोनों मिलकर सामाजिक पूंजी बनते हैं। स्पष्टतया, पूंजी की उपर्युक्त धारणा वर्तमान में प्रचलित दो धाराओं से भिन्न है। पूंजी के बारे में वर्तमान दो आम सिद्धान्तों में से पहला पश्चिमी उदारवादी अर्थशास्त्री (जिसमें सम्पूर्ण पैदावार के साधनों को पूंजी माना गया है) और दूसरा मार्क्सवादी अर्थशास्त्र (जिसमें पूंजी को मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य या एकत्रित श्रम या पैदावारी सम्बन्धों के रूप में समझा जाता है) हैं। इनमें से पहला मानवीय पहलू (यानि श्रम) को पीछे धकेलकर सहायक स्थिति में रखता है जबकि दूसरा सिद्धान्त तकनीकी को गौण स्थान प्रदान करता है। वास्तव में दोनों सिद्धान्त एक तरफा है।

ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि विज्ञान व तकनीकी तथा मनुष्य दोनों ही अपने-अपने तरीकों से सर्जन करने वाले हैं। मनुष्य की आविष्कार करने की काबलियत उसकी मानसिक और शारीरिक ऊर्जा में निहित है, जबकि तकनीकी की उत्पादकता ऊर्जा के विभिन्न रूपों (यानि विद्युत, रासायनिक, गतिज, उष्मा, विकिरक, नाभिकीय इत्यादि) में निहित है। वास्तव में उत्पादन के क्षेत्र में तकनीकी (यानि स्वचालित और मनुष्य द्वारा संचालित दोनों तरह की मशीनें) मानव श्रम से अधिक मूल्य का सर्जन करती हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि एक मशीन दसियों हजार वाट ऊर्जा एक दिन में उपयोग करती है जबकि उसकी तुलना में एक मजदूर प्रतिदिन शारीरिक कार्य के

दौरान लगभग 120 वाट ऊर्जा (यानि लगभग 2,400 कैलोरी) खर्च करता है। यद्यपि भौतिक उत्पादन में मनुष्य तकनीकी से पीछे रह जाता है जबकि वह अपनी मानसिक अद्वितीयता (अनोखापन) के कारण भौतिक और वैचारिक खोज (नवीनता या आविष्कार) में तकनीकी से आगे बढ़ा हुआ (उत्कृष्ट) होता है। इस प्रकार मानव समाज में विज्ञान व तकनीकी तथा मानव दोनों ही पूंजीकरण व आधुनिकीकरण के लिए दो आधारभूत पहलू बनते हैं।

नकारात्मक पक्ष में, इसने 2 अत्यधिक ध्वंसात्मक चुनौतियां खड़ी कर दी हैं जिनसे न केवल मानव बल्कि समस्त जीव जगत के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया है।

पर्यावरण—वायु, पानी, भूमि इत्यादि—का प्रदूषण एक चुनौती है जिसने पहले से ही जीव जगत के क्षेत्र में बरबादी खड़ी कर रखी है। जीव-जगत की सैकड़ों जातियां प्रतिदिन लुप्त होती जा रही हैं। खतरे की घण्टी पहले से ही बज रही है कि दुनिया पर्यावरण विनाश के कगार पर खड़ी है।

दूसरी चुनौती तेजी से बढ़ रही जनसंख्या की है जो इस शताब्दी के दौरान ही चार गुनी बढ़ी है। जनसंख्या विस्फोट ने प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग पर अत्यधिक दबाव बढ़ा दिया है और इससे पर्यावरण का संकट गहरा गया है।

(v) प्रभुत्व के सामाजिक सम्बन्ध लम्बे समय तक क्यों चले — हमारे अध्ययन का दसवां बिन्दु है—मानव समाज प्रभुत्व के सामाजिक सम्बन्धों के रूप में चरित्रिक क्यों होता रहा है? इसके दो तरफा कारण हैं यानि लाखों सालों तक आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक विकास का निम्न स्तर पर बने रहना एक कारण है तथा इस समय के दौरान बर्बर और असभ्य जीवन से एक तर्कसंगत और मानवीय जीवन की तरफ मनुष्य के शनैः शनैः क्रमिक विकास के द्वारा बढ़ना दूसरा कारण है। वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र और मानवीय ज्ञान दोनों में निरन्तर उन्नति के साथ सामाजिक प्रभुत्व की मात्रा शनैः शनैः कम होती रही है—जैसे, दासता के सामाजिक सम्बन्धों से भूदास सामाजिक सम्बन्धों तथा उसके बाद उजरती (वेतनभोगी) मजदूरी के सामाजिक सम्बन्धों का विकसित होना दासता के युग में प्रभुत्वकारी शासक सामाजिक इकाई उस समय के वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र के साथ-साथ दासों को नियंत्रण में रखती थी। भूदास युग में दासों का स्तर ऊंचा उठा और भूदास बने जिनको कुछ आर्थिक अधिकार मिले, परन्तु वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र और भूदास श्रम अभी भी प्रभुत्वकारी शासक इकाई के नियन्त्रण में बने रहे। हालिया उजरती श्रम (वेतनभोगी) के युग में प्रभुत्व की मात्रा और सीमित हुई है, वर्तमान दौर में प्रभुत्व की सीमा और नीचे आ रही है क्योंकि आज का वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र और मानव

समाज का स्तर सामाजिक प्रक्रिया में जनता के नियंत्रण की आवश्यकता को उजागर कर रहा है।

(vi) मनुष्य की जैविक सामाजिक प्रकृति—हमारे अध्ययन का ग्यारहवां बिन्दु है—मनुष्य की प्रकृति क्या है (या मनुष्य का स्वभाव क्या है) प्रकृति और सामाजिक विज्ञान दर्शाते हैं कि मनुष्य की दोहरी प्रकृति है—जैविक और सामाजिक अथवा जैव-सामाजिक। ये दोनों पहलू एक एकीकृत इकाई के रूप में गठित हैं। अत: इनमें से किसी एक को दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। आम मानवीय प्रक्रिया (जिसमें जन्म, वृद्धि, क्षय और मृत्यु की अवस्थाएं शामिल हैं) और विशिष्ट मानवीय प्रक्रियाओं, जैसे श्वास लेना, पानी पीना, भोजन करना, मल निष्कासन इत्यादि से मानव के जैविक पहलू को देखा जा सकता है। सामाजिक अन्तरक्रिया के बिना मनुष्य की कुछ भी सीख नहीं पाने की असमर्थता से उसका सामाजिक पहलू स्पष्ट होता है। उदाहरण के लिए हालांकि सभी मनुष्य सुस्पष्ट बोलने वाले अंग के साथ जन्म लेते हैं फिर भी वे भाषा और बोलने का ज्ञान केवल सामाजिक गतिविधि के द्वारा ही हासिल करते हैं। एक बच्चा जो भेड़ियों के बीच रहता हो तो ना तो बोलना और न ही चलना सीख सकता है और सभी सामाजिक चरित्र खो बैठता है, इसी तरह से सुस्पष्ट बोलने वाले जैविक अंग के बिना गैर मानवीय जीव को किसी भी तरह से सामाजिक वार्तालाप से भाषा और बोलने की कला नहीं सिखाई जा सकती। अत: निष्कर्ष निकलता है कि मनुष्य की प्रकृति को अकेला सामाजिक या अकेला जैविक करार देना एक तरफापन है।

(vii) गुण और मात्रा के बीच समीकरण—हमारे अध्ययन का बाहरवां बिन्दु है कि एक घटनाक्रम की मात्रा और गुण के बीच किसी तरह का समीकरण है। विज्ञान और अनुभव दर्शाता है कि गुण मात्रा में और मात्रा गुण के साथ विद्यमान होती है। उदारहणत: भोजन की प्रत्येक गुणवत्ता एक निश्चित मात्रा में ऊर्जा लिए हुए होती है जिसे कैलोरी में मापा जाता है। कक्षों मे स्थित इलेक्ट्रोनों की संख्या किसी परमाणु के रासायनिक व्यवहार को तय करती है। एक ऑक्सीजन अणु के दो परमाणु में से एक और परमाणु जोड़ देने से इसकी गुणवत्ता ओजोन के रूप में बदल जाती है। इसी तरह से मानव समाज में गुण और मात्रा का परिवर्तन साथ-साथ चलता रहता है। उदाहरणतया 18वीं शताब्दी में भाप के इंजन का आविष्कार 19वीं शताब्दी में मशीनों का तथा 20वीं शताब्दी में कम्युटरों का आविष्कार एवं इसी तरह के विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में मात्रा और गुण के समस्त महत्वपूर्ण परिवर्तन ने अपने सामाजिक श्रम विभाजन के साथ-साथ सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को बदल दिया है।

(viii) समाज में पुराने से नए में तब्दीली—हमारे अध्ययन का तेहरवां बिन्दु

है कि समाज में पुराने से नये में तब्दीली की धारणा किस बात की द्योतक है। यह समाज में कभी समाप्त नहीं होने वाले एवं निरन्तर चलने वाले अल्पकालीन और दीर्घकालीन दोनों तरह के परिवर्तन को जाहिर करती है। अल्पकालीन परिवर्तन वो परिवर्तन है जो किसी एक जैसी प्रक्रिया में शुरू से लेकर आगे के सभी दौरों में होता रहता है, उदाहरणतया, मानव जीवन के विकास की प्रक्रिया—शिशु से बच्चे, बच्चे से किशोर, उसके बाद नौजवान, प्रौढ़, बुढ़ापा और आखिर मृत्यु—में होने वाले परिवर्तन; अथवा औद्योगिक रचनातंत्र के विकास की प्रक्रिया में निर्माणी प्रणाली से स्वचालित मशीनों में परिवर्तन होना। पुरानी प्रक्रियाओं की नई प्रक्रियाओं में तब्दीली को दीर्घकालीन परिवर्तन कहते हैं। उदाहरणतया, मानव जीवन की प्रक्रिया का मानव का मानव की मृत्यु के पश्चात विभिन्न गैर-जैविक घटनाक्रम (यानि धूल, गैसों इत्यादि) की प्रक्रिया में तब्दील हो जाना या कृषिकारी सामाजिक ढांचे की प्रक्रिया में निरन्तर मात्रात्मक परिवर्तन से गुजर कर औद्योगिक सामाजिक ढांचे की प्रक्रिया में तब्दील हो जाना अथवा पृथ्वी के विकास की विभिन्न अवस्थाएं जिनमें से प्रत्येक अवस्था का अर्थ है कि एक बड़ी संख्या में महाद्वीपों, द्वीपों, समुद्रों, पहाड़ों इत्यादि का गायब हो जाना और पूर्णतया नए भूगर्भीय घटनाक्रम के साथ-साथ अत्यधिक जलवायु परिवर्तन हो जाना।

(ix) एकता व संघर्ष दोनों परिवर्तन लाते हैं—हमारे अध्ययन का चौदहवां बिन्दु है कि चाहे गुणात्मक परिवर्तन हो या मात्रात्मक एवं समाज में पुराने से नए में तब्दीली अकेले संघर्ष से होती है अथवा एकता से भी होती है। विज्ञान और इतिहास दर्शाता है कि एकता और संघर्ष दोनों की दो भिन्न तरीकाकार हैं तथा उन दोनों से परिवर्तन होते हैं। उदाहरण के लिए, समकालीन श्रम विभाजन के साथ उस समय की सामाजिक इकाइयों का सामंजस्य (या एकता) सामाजिक विकास को गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों तौर पर आगे बढ़ाता है जबकि समकालीन सामाजिक श्रम-विभाजन के साथ उस पर समय की सामाजिक इकाइयों का गैर सामंजस्य (या संघर्ष) सामाजिक विकास को गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों तौर पर विकृत कर देता है। पुन: चूंकि कृषिकारी से औद्योगिक समाज में तब्दीली फ्रांस में (1789) में पुरानी और नई सामाजिक इकाइयों के बीच संघर्ष द्वारा हुई जब कि जर्मनी (1848) और जापान में (1880) यह तब्दीली पुरानी और नई सामाजिक इकाइयों के बीच मेल-मिलाप से हुआ। आगे, पुरानी और नई सामाजिक इकाइयों के बीच संघर्ष पुरानी सामाजिक संरचना को तोड़ देता है जबकि नई सामाजिक इकाइयों की एकता से नई सामाजिक संरचना का निर्माण होता है। स्पष्टतया, ऐसे दोनों सिद्धान्त जिनमें से एक संघर्ष पर जोर देता है और दूसरा केवल एकता के तरीके पर जोर देता है—एक तरफा है।

(x) वैज्ञानिक-तकनीकी रचनातंत्र और मनुष्य के बीच सामंजस्य और गैर सामंजस्य—हमारे अध्ययन का पन्द्रहवां बिन्दु है कि वैज्ञानिक तकनीकी रचनातंत्र

और मनुष्य के बीच अन्तरक्रिया के दौरान किस तरह सामंजस्य (यानि एकता) और गैर सामंजस्य (यानि संघर्ष) पैदा किया होता है। उनका सामंजस्य उनकी अनुरूपता (यानि किसी निश्चित सामाजिक श्रम-विभाजन को सामाजिक इकाइयों द्वारा उचित तौर पर लागू करना) में निहित होता है जब कि उनका गैर-सामंजस्य उनकी गैर-अनुरूपता (यानि किसी निश्चित सामाजिक श्रम-विभाजन के लिए जरूरी सामाजिक मानदण्डों और ढंगों का सामाजिक इकाइयों द्वारा अवहेलना करना) में निहित होता है उनके बीच सामंजस्य सामाजिक विकास को आगे बढ़ाता है, जब कि गैर सामंजस्य सामाजिक अवनति का कारण बनता है।

(xi) कारण और प्रभाव के बीच अन्तरक्रिया—हमारे अध्ययन का सोलहवां बिन्दु है कि क्या किसी प्रक्रिया में एक पक्ष हमेशा प्रभावी तथा दूसरा पक्ष हमेशा ताबेदार बना रहता है, उदारहण के लिए किसी प्रक्रिया के कारण और प्रभाव के बीच की अन्तरक्रिया में क्या एक पक्ष ही प्रमुख बना रहता है। विज्ञान और इतिहास का अनुभव दर्शाता है कि अन्तरक्रिया में प्रत्येक पक्ष दूसरे पक्ष को प्रभावित करता है। ऐसा ही किसी भी घटनाक्रम के कारण और प्रभाव के बीच अन्तरक्रिया में भी होता है यद्यपि कारण वह घटनाक्रम है जो दूसरे घटनाक्रम को अस्तित्व में लाता है और प्रभाव किसी कारण की क्रिया का प्रभाव है तब भी कारण से प्रादुर्भाव होने के बाद प्रभाव स्वयं कारण को प्रभावित करता है। उदारहण के लिए किसी माल की बढ़ती मांग उत्पादन को प्रोत्साहित करती है जो बदले में पुन: मांग में वृद्धि करती है। आगे, जबकि उष्मा, इंजन की धुरी की यांत्रिक गति का कारण है और वही बदले में यांत्रिक गति और इंजन के भागों में घर्षण से गर्म होने के बाद उष्मा उत्पन्न करती है। यहां उष्मा यांत्रिक गति के लिए कारण और प्रभाव साथ-साथ है। और आगे, जबकि यांत्रिक गति (जल विद्युत स्टेशन में पानी की धारा से उत्पन्न) विद्युत धारा का कारण है और बाद में वही विद्युतधारा स्वयं विद्युत स्टेशनों व फैक्ट्रियों में यांत्रिक गति का कारण बन जाती है।

आम तौर पर मनुष्य कारण-संबंध को सार्वत्रिक चरित्र के रूप में स्वीकार करता है परन्तु फिर भी कुछ अपवाद हो सकते हैं जिनके बारे में अभी हमें जानकारी नहीं है।

(xii) अवश्यंभाविता का नियम—हमारे अध्ययन का सत्रहवां बिन्दु है कि क्या ब्रह्माण्ड में अवश्यंभाविता का नियम विद्यमान है। विज्ञान और ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि ब्रह्माण्ड में केवल परिवर्तन और विकास का नियम या प्रत्येक वस्तु का पुराने से नए में तब्दील हो जाने का नियम ही अवश्यंभाविता का आम (सार्वत्रिक) नियम है। परन्तु किसी भी विज्ञान या दर्शनशास्त्र द्वारा अनुमान या

पुर्वानुमान नहीं किया जा सकता कि नया आखिरकार क्या शक्ल या ढंग अख्तियार करेगा।

एक निश्चित हालात में विभिन्न घटनाक्रमों के बीच अन्तरक्रिया एक निश्चित घटनाक्रम के विकास के सम्बन्ध में विभिन्न सम्भावनाओं और प्राथमिकताओं को जन्म देती है। इनमें अनिर्वायता, प्रबल संभावना या प्राथमिकता, सम्भावना, संयोग और असंभावना शामिल है। अनिर्वायता यह अभिव्यक्त करती है कि एक निश्चित हालात में क्या घटित होना तय है। परन्तु अगर निश्चित हालात में कोई कमी आ जाए तो ऐसा घटित नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए एक पूर्ण ठीक हालात में हवाई जहाज को प्रज्वलित करने पर उसका उड़ना तय है, परन्तु अगर हवाई पट्टी ठीक नहीं है तो यह नहीं उड़ेगा, यानि यह नहीं उड़ सकेगा।

प्रबल संभावना यह अभिव्यक्त करती है कि एक निश्चित हालात में क्या घटना घटित होने की प्रबल गुंजाइश है। उदाहरण के लिए एक कैन्सरग्रस्त व्यक्ति की पहले मृत्यु होने की प्रबल संभावना होती है।

संभावना यह अभिव्यक्त करती है कि एक निश्चित हालात में क्या घटना घटित हो सकती है। उदाहरण के लिए आसमान में बादल छाए हों तो वर्षा हो सकती है।

संयोग यह अभिव्यक्त करता है कि एक निश्चित हालात में घटना घटित होने की बहुत कम संभावना है। उदाहरण के लिए निश्चित ताप और नमी वाली भूमि में बीज का पौधे के रूप में उगना एक अनिवार्य घटनाक्रम है, परन्तु ओलावृष्टि से पौधे का नष्ट हो जाना एक संयोग ही होता है।

असंभव यह अभिव्यक्ति करता है कि एक निश्चित हालात में किसी घटना के घटित होने का आधार ही नहीं है और इसीलिए ऐसा होना अवास्तविक है। उदाहरणतया, आज मनुष्य के लिए 500 साल की औसत उम्र पाना असंभव है, परन्तु हो सकता है यह कुछ समय बाद संभव हो जाए।

VI. इतिहास के बारे में विभिन्न दृष्टिकोण

इतिहास की समझ और अध्ययन के बारे में सामाजिक दृष्टिकोण की अत्यधिक किस्में हैं। उनको मोटे तौर पर निम्न क्रम में वर्गीक्रत किया जा सकता है।

(क) ईश्वर केन्द्रित सिद्धान्त

प्रथमतया, इतिहास के सम्बन्ध में ईश्वर केन्द्रित सिद्धान्त इसे ईश्वरीय आदेश या भाग्य निर्णय के रूप में पेश करता है। इसके प्रचारक राम कहानी कहते हैं कि प्रत्येक वस्तु ईश्वर से पैदा होती है और लोग कभी भी अपने आप किसी भी समस्या का हल नहीं कर सकते। ''मनुष्य की इच्छा कुछ होती है परन्तु ईश्वर कुछ और देता

है'' यह उनका 'निर्विवाद सत्य' है जिसमें इतिहास के निर्माण में प्रकृति और मनुष्य की भूमिका को पूर्णतया रद्द कर दिया जाता है। इस किस्म के मुख्य काल्पनिक नमूने निम्न हैं—

1. अलौकिकतावाद—अलौकिकतावाद विश्वास करता है कि अलौकिक शक्ति ही घटनाओं का स्वरूप तय करती है।

2. भाग्यवाद—भाग्यवाद विश्वास करता है कि सभी घटनाएं पूर्व-निश्चित होती है और मनुष्य अपना भाग्य बदलने में असमर्थ होता है।

3. अनुभवातीतवाद—अनुभवातीतवाद विश्वास करता है कि ज्ञान सोच और व्यवहार की बजाए अन्तर्बोध पर आधारित होता है।

4. अध्यात्मवाद—अध्यात्मवाद विश्वास करता है कि मृत आत्माएं सजीवों से सम्पर्क रख सकती हैं।

5. जड़पूजावाद—जड़पूजावाद विश्वास करता है कि जड़ पदार्थ की पूजा में चकत्मकारी शक्ति होती है।

6. रहस्यवाद—रहस्यवाद विश्वास करता है कि सच्चाई का आध्यात्मिक बोध मानवीय समझ से परे है।

7. पौराणिक कथावर्णवाद—पौराणिक कथावर्णवाद घटनाक्रम की व्याख्या (अलौकिक चरित्र पर आधारित कहानियां कहना) कपोल कल्पना से करता है।

8. सर्वज्ञतावाद—सर्वज्ञतावाद विश्वास करता है कि इस संसार में सब कुछ जानने वाली शक्ति मौजूद है।

9. सर्वेश्वरवाद—सर्वेश्वरवाद विश्वास करता है कि प्रत्येक वस्तु में ईश्वर मौजूद है।

10. एकेश्वरवाद—एकेश्वरवाद विश्वास करता है कि त्रियेक परमेश्वर (तीन का समूह) की बजाए ईश्वर एक है

(ख) तकनीकी केन्द्रित सिद्धान्त

आगे आइए तकनीकी केन्द्रित सिद्धान्तों पर जो इतिहास को अकेले तकनीकी विकास (यानि प्रकृति से हासिल किए गए यांत्रिक साधनों) का फल समझते हैं। केवल तकनीकी पर जोर देकर यह विचार इस सच्चाई पर पर्दा डालता है कि मनुष्य तकनीकी को पैदा करने वाला और संचालक है—इस तरह से तकनीकी और मनुष्य के बीच ऐतिहासिक एकता को तोड़ता है। इस एक तरफा मॉडल के मुख्य भाग निम्न हैं—

1. प्रोद्योगतंत्रवादी—इस नजरिए के मुताबिक सामाजिक बदलाव की ताकत केवल तकनीकी में है।

2. यांत्रिकवाद—यह समाज की कार्यप्रणाली को एक मशीन के कार्य उसके ढांचे और भागों के तरीके से देखता है।

3. स्वतः क्रियावाद—स्वतः क्रियावाद सजीव की गति और क्रियाओं को मशीनी गति के रूप में देखता है जिसमें इच्छा शक्ति की भूमिका को नकार दिया जाता है।

(ग) पर्यावरण केन्द्रित सिद्धान्त

पुनः पर्यावरण (या भौगोलिक) केन्द्रित सिद्धान्त जोर देते हैं कि सामाजिक विकास का अन्तिम कारण पर्यावरण है। कोई संदेह नहीं है कि सामाजिक विकास पर मनुष्य की तरह ही पर्यावरण भारी प्रभाव छोड़ता है। परन्तु यह सब वह केवल मनुष्य के साथ-साथ ही कर पाता है। अगर मनुष्य पर्यावरण उपयोग की तकनीक को नहीं समझ पाता है तो पर्यावरण अपने आप क्रिया नहीं कर पाता है। उदाहरण के लिए, ब्राजील भौगोलिक सम्पत्ति में बहुत अधिक धनवान है। परन्तु यह अभी विकासशील देश ही है। इसके खिलाफ जापान प्राकृतिक संसाधनों में कमजोर है परन्तु फिर भी यह अत्यधिक विकसित देशों में से एक है। स्पष्टतया पर्यावरण केन्द्रित सिद्धान्त मनुष्य और पर्यावरण के बीच ऐतिहासिक एकता को तोड़ते हैं अतः ये एक तरफा सिद्धान्त है। इस आम विचार शाखा की मुख्य प्रस्तावनाएं नीचे दी जा रही हैं—

1. पर्यावरणवाद—पर्यावरणवाद सामाजिक विकास में पर्यावरण को फैसलाकुन पहलू समझाता है।

2. भू-राजनीति—भू-राजनीति किसी देश की राजनीतिक जांच का आधार उसकी भौगोलिक स्थिति को बनाती है।

3. जन्तुवाद—जन्तुवाद के अध्ययन के अनुसार मनुष्य पशु ही तो है।

(घ) प्रकृति-केन्द्रित सिद्धान्त

आगे, प्रकृति केन्द्रित सिद्धान्त सामाजिक विकास के बारे में मनुष्य की भूमिका को गौण स्थान पर धकेल देता है। इस प्रकार मनुष्य और प्रकृति के बीच ऐतिहासिक एकता को तोड़कर ये सिद्धान्त ठीक वास्तविकता को विकृत कर देते हैं। इसकी मुख्य धारणाएं निम्नलिखित हैं—

1. प्रकृतिवाद—प्रकृतिवाद समझता है कि सामाजिक परिवर्तन प्राकृतिक नियमों से होते हैं।

2. पदार्थवाद या वस्तुवाद—इसकी मान्यता है कि गैर-अहम (यानि वस्तुगत) का ज्ञान अहम (यानि मनोगत अथवा स्वयं) की तुलना में प्राथमिक और महत्वपूर्ण है।

3. गतिवाद—गतिवाद के अनुसार ब्रह्माण्ड के घटनाक्रम को कुछ सर्वव्यापी

(या अन्तर्निहित) शक्ति या ऊर्जा से गति मिलती है।

4. सार्वभौमिकतावाद (या ब्रह्माण्डवाद)—यह इस बात पर जोर देता है कि ब्रह्माण्ड का अस्तित्व उसके स्वयं से है और यह सम्पूर्णता में स्वत: क्रियाशील है।

5. प्रत्यक्षज्ञानवाद—प्रत्यक्ष ज्ञानवाद घोषणा करता है कि केवल घटनाक्रम को जानना ही ज्ञान का उद्देश्य है।

6. व्यापकतावाद—व्यापकतावाद समझता है कि एक सार्वभौम नियम प्रत्येक घटनाक्रम में क्रियाशील है जिसका कोई विशिष्ट नियम नहीं है।

7. समरूपतावाद—समरूपतावाद उद्घोषणा करता है कि प्रत्येक वस्तु भिन्न-भिन्न स्थान और भिन्न-भिन्न समय में समान रहती है।

(ड़) मानव केन्द्रित सिद्धान्त

अन्तत: मानव केन्द्रित सिद्धान्त बहुत से हैं। वे कई श्रेणियों में बंटे हुए हैं। कुछ निश्चयवादी, कुछ अनिश्चियवादी, कुछ लघुकरणवादी (अपचयनवादी), कुछ प्रेरकवादी इत्यादि, कुछ अनुभववाद, कुछ मनोगतवाद, कुछ शून्यवाद, कुछ आतंकवाद, कुछ व्यवहारवाद, कुछ नैतिकवाद और कुछ सैन्यवाद इत्यादि पर जोर देते हैं। कुछ (यानि जो रूढ़िवादी हैं) आर्थिकता को, कुछ जाति, कुछ नस्ल, कुछ राजनीति, आदि को सामाजिक विकास का प्रधान निर्णयकारी वाहक मानते हैं। कुछ संरचनावाद, कुछ बहुल्यवाद, कुछ कुलीनतन्त्रवाद, कुछ संकीर्णतावाद, आदि पर जोर देते हैं।

लेकिन संक्षेप में ये सभी सिद्धान्त दर्शाते हैं कि समाज में विचार प्रमुख भूमिका निभाते हैं—इस प्रकार यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि विचारक ही इतिहास का निर्माण करते हैं। एक वैचारिक किस्म के मुताबिक विचार महान व्यक्तियों के दिमाग की उपज होते हैं जो जन्म से ही प्रतिभावान होते हैं और वे समाज को आगे ले जाने के लिए इंजन की भूमिका अदा करते हैं। अन्य वैचारिक किस्म प्रतिपादित करती है कि जनता ही समाज के हर पहलू की निर्माता है और वही विचारों की जन्मदाता है तथा वही इतिहास चक्र को आगे ले जाने वाली है। तीसरी वैचारिक किस्म का यह सोच है कि विचारों की रचना भी अन्य रचनाओं की तरह ईश्वर द्वारा की गई है।

स्पष्टतया, मानव केन्द्रित सिद्धान्त एक तरफ मानव और प्रकृति के बीच की ऐतिहासिक एकता और दूसरी तरफ व्यक्ति और समाज के बीच की ऐतिहासिक एकता को तोड़ते हैं। मानव केन्द्रित मुख्य सिद्धान्तों की निम्न सूची है—

1. निश्चयवाद—निश्चयवाद घटनाओं के एक निश्चित पद्धति से घटित होने का सिद्धान्त है जो निरपेक्ष कारण और कोई स्थाई प्रभाव का लक्षण लिए हुई हैं और इस प्रकार यह दीर्घकालीन पूर्व-अनुमानों को ठीक ठहरने का सिद्धान्त है। (मसलन,

मार्क्सवाद-लेनिनवाद का यह पूर्वानुमान करना कि पूंजीवाद का पतन अवश्यंभावी है)।

2. न्यूनकरणवाद (लघुकरणवाद)—यह व्यापक नियम से विशिष्ट नियम का अर्थ निकालने का सिद्धान्त है।

3. प्रेरणादायक—विशिष्ट घटनाओं से व्यापक नियम (या आम नियम) निकालने का सिद्धान्त—एक विशिष्ट घटना के लिए कोई चीज सत्य है तो दूसरी घटनाओं के लिए भी वही सत्य होगा—इस प्रकार से सत्य को सिद्ध करने का तरीका प्रेरणावाद है।

4. इंद्रियानुभववाद—केवल निरीक्षण और प्रयोग को मान्यता देने और सिद्धान्त को रद्द करने का उसूल इन्द्रियानुभववाद है।

5. मनोगतवाद—समस्त ज्ञान का स्रोत दिमाग है, का सिद्धान्त मनोगतवाद है।

6. निषेधवाद (शून्यवाद)—वर्तमान विश्वासों को पूर्णतया रद्द करने और समस्त अस्तित्व को सन्देह से देखने का सिद्धान्त।

7. आतंकवाद—दबाव से भयग्रस्त कर अपने उदेश्यों को प्राप्त करने का सिद्धान्त।

8. व्यवहारवाद—किसी घटनाक्रम के व्यवहार का यथार्थ अध्ययन का सिद्धान्त (यानि घटनाक्रम को प्रोत्साहित या प्रेरित होने और उसके द्वारा प्रतिक्रिया करने का यथार्थ अध्ययन करने का सिद्धान्त ही व्यवहारवाद है)।

9. नैतिकवाद—धर्म की बजाए सामाजिक तौर पर सही और गलत के भेद पर आधारिक आचरण के नियमों का सिद्धान्त नैतिकतावाद है।

10. सैन्यवाद—सैन्यशक्ति पर भरोसा रखने का सिद्धान्त ।

11. मार्क्सवाद—सामाजिक विकास के मुख्य पहलू पैदावारी शक्तियां और पैदावारी सम्बन्धों (यानि उत्पादन की प्रणाली या आर्थिकता) को मानने का सिद्धान्त।

12. धार्मिक कट्टरतावाद—परम्परागत रूढ़िवादी धार्मिक मान्यताएं समाज को संगठित करने का एकमात्र तरीका है, इस दृष्टिकोण वाले सिद्धान्त को धार्मिक कट्टरतावाद कहते हैं। उदारहणतया, हिन्दुत्व, अफगान तुलीबा, इस्लामीकरण इत्यादि।

13. सांस्कृतिकतावाद—यह सिद्धान्त एक निश्चित संस्कृति को सामाजिक विकास का एकमात्र पहलू मानता है।

14. मण्डलवाद—सामाजिक न्याय देने का निर्णयकारी पहलू जाति (यानि एक दो हजार वर्ष पुरानी सामाजिक इकाई) को मानने का सिद्धान्त।

15. नस्लवाद—विशिष्ट नस्ल में अन्तर्निहित श्रेष्ठता होती है, को मानने का

सिद्धान्त नस्लवाद है। यह सिद्धान्त विभिन्न नस्लों के बीच टकराव पैदा करने की ओर ले जाता है।

16. संरचनावाद—ऐसा सिद्धान्त जो भागों की बजाए सम्पूर्ण पर अधिक जोर देता है।

17. बहुलवाद—एक से अधिक विकास के निर्णयकारी उसूलों को मान्यता देने का सिद्धान्त बहुलतावाद है।

18. कूलीनतंत्रवाद (अल्पतंत्रवाद)—अल्प लोगों के शासन को मान्यता देने वाला सिद्धान्त।

19. संभाव्यतावाद—ऐसा सिद्धान्त जो मानता है कि हालांकि कोई निश्चित पक्का ज्ञान नहीं होता परन्तु यह ज्ञान विश्वास का ऐसा आधार तो हो सकता है जो व्यवहारिक क्रिया के लिए पर्याप्त हो।

20. रूढ़िवाद—ऐसा सिद्धान्त जो परम्परागत को जैसे का तैसे कायम रखने या नहीं बदलने का दृष्टिकोण रखता है।

21. संविधानवाद— ऐसा सिद्धान्त जो राज्य संचालन के मूलभूत उसूलों पर जोर देता है।

22. पितृसत्तावाद—पुरुष की सर्वोच्चता को मान्यता देने वाला सिद्धान्त।

23. अवसरवाद—ऐसा सिद्धान्त जो उसूलों से बंधा हुआ न हो अवसरवाद कहलाता है।

24. उपयोगिता (स्वार्थपरतावाद)—ऐसा सिद्धान्त जो प्रत्येक वस्तु की जांच परख उसकी उपयोगिता के नजरिये से करता है।

25. सार्वभौमवाद (विश्ववाद)—ऐसा सिद्धान्त जो विश्वास करता है कि आखिरकार सारी मानव जाति को बचाया जा सकेगा।

26. सर्वसत्तावादी—ऐसा सिद्धान्त जो अपने आपको बिल्कुल सच होने का झूठा दावा करता है तथा भिन्न विचारों को इजाजत नहीं देता है।

27. समानतावाद—ऐसा सिद्धान्त जो मनुष्य जाति की बराबरी पर जोर देता हैं।

28. अज्ञेयवाद—ऐसा सिद्धान्त जिसके अनुसार कुछ भी ज्ञान नहीं हैं या न ही ज्ञान किया जा सकता है।

29. स्वार्थवाद (अहम्वाद)—ऐसा सिद्धान्त जिसके अनुसार खुद का स्वार्थ ही विकास की नींव है।

30. मानववाद—ऐसा सिद्धान्त जिसके मुताबिक सोचने या कार्य कलाप का

सम्बन्ध मानवीय हितों को ध्यान में रखकर तय किया जाता है।

31. तर्कशीलतावाद—ऐसा सिद्धान्त जो सामाजिक विकास का अन्तिम कारण तर्क को मानता है।

32. द्वन्द्वात्मकतावाद—ऐसा सिद्धान्त जो अन्तरविरोध को विकास का आम नियम समझता है तथा विभिन्न सामाजिक ताकतों के बीच विवाद या वर्ग संघर्ष को इतिहास का निश्चयकारी पहलू समझता है।

33. उदारतावाद—ऐसा सिद्धान्त जो स्वतन्त्र विचारों यानि विचारों की आजादी में विश्वास रखता है।

34. फलवाद (उपयोगितावाद)—ऐसा सिद्धान्त जो केवल अपने हितों की व्यावहारिक उपयोगिता पर जोर देता है।

35. अनुकूलतावाद—ऐसा सिद्धान्त जो सकारात्मक तथ्यों और निरीक्षण लायक घटनाओंक्रमों की मान्यता देता है तथा कारण या अन्तिम उद्भव की सभी जांच पड़तालों को रद्द करता है।

36. ऐच्छिकवाद (संकल्पवाद)—ऐसा सिद्धान्त जो यह मानता है कि मानवीय व्यवहार का निर्धारण स्वतन्त्र इच्छा पर निर्भर है, इसलिए उसका पूर्वानुमान लगाना मुश्किल है।

37. नियतिवाद (प्रारब्धवाद)—ऐसा सिद्धान्त जो स्वतन्त्र इच्छा को नकारता है और इस धारणा पर चलता है कि सब कार्य पूर्ववर्ती (पहले का प्राथमिक) कारणों से तय होते हैं।

38. संवेदनावाद—ऐसा सिद्धान्त जो संवेदना को ज्ञान का एकमात्र स्रोत समझता है।

39. संशोधनवाद—ऐसा सिद्धान्त जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त या किसी भी कम्युनिस्ट पार्टी के अन्दर मौजूद प्रभुत्वकारी लाईन के सूत्र को संशोधित करता है।

40. गणतंत्रवाद—ऐसा सिद्धान्त जो गणतंत्रीय ढांचे की सरकार की वकालात करता है।

41. नाजीवाद—नाजी पार्टी और खासकर इसके तानाशाह द्वारा प्रत्येक को नाजीवादी सैनिक ताबेदारी के नीचे लाने के सिद्धान्त को नाजीवाद कहते हैं।

42. ज्ञानसापेक्षवाद—ऐसा सिद्धान्त जो केवल सम्बन्धों को ही ज्ञान मानता है।

43. सापेक्षतावाद—ऐसा सिद्धान्त (जिसे अलबर्ट आइन्सटाईन ने प्रस्तुत

किया था) जो अन्तरिक्ष, समय और गति तथा त्वरण एवं गुरुत्वाकर्षण के सम्बन्धों को दर्शाता है तथा प्रदर्शित करता है कि सभी तरह की गति सापेक्ष है।

44. तत्ववाद—यह सिद्धान्त घटनाक्रमों में अन्तर्निहित सारगर्भित वास्तविकताओं को मान्यता देता है।

45. अनुमानवाद—जिसमें आगमनात्मक (प्रेरक) से निगमनात्मक तर्क (inductive to deductive) के दो प्रस्तावों से परिणाम निकालने के सिद्धान्त को अनुमानवाद कहते हैं। उदाहरणतया, कालीदास एक मनुष्य है इसलिए कालीदास नाशवान है।

46. श्रमिक संघवाद—ऐसा सिद्धान्त जो पैदावार के साधनों तथा वितरण पर नियंत्रणकारी अधिकार श्रमिक संघों को हस्ततंरित करने का विचार रखता है।

47. आधुनिकतावाद—ऐसा सिद्धान्त जो आधुनिक पश्चिमी विचारों की रोशनी में घटनाक्रम की जांच परख करता है।

48. आभासवाद—ऐसा सिद्धान्त जो समझता है कि सार्वभौम (या सर्वव्यापक) तथा अमूर्त (या निरपेक्ष) केवल नाम ही है तथा इनके अनुरूप कोई वास्तविकता नहीं है।

49. प्राच्यवाद (पूर्वदेशीयतावाद)—ऐसा सिद्धान्त जिसमें प्राच्य-विद्या वाली (यानि पूर्वदेशीयता) सभ्यता पर जोर दिया जाता है।

50. पाश्चात्यावाद—ऐसा सिद्धान्त जो पाश्चात्य सभ्यता पर जोर देता है।

51. तत्वविज्ञान—ऐसा सिद्धान्त जो चीजों के सार तत्व से सम्बन्ध रखता है।

52. प्लेटोवाद—ऐसा सिद्धान्त जो प्लेटो की दार्शनिक प्रणाली को मानता है। जिसकी केन्द्रिय अवधारणा है कि दुनिया के अस्तित्व में अकेले विचार ही वास्तविक और सर्वोपरि है।

53. समतावाद—ऐसा सिद्धान्त जो मनुष्य जाति की समानता की वकालात करता है।

54. अर्थव्यवस्थावाद—ऐसा सिद्धान्त (जो एक तरह का रूढ़िवाद है) जो परिवर्तन और विकास को आर्थिकता के रूप में पेश करता है।

55. विकासवाद—पूर्ववर्ती प्रजातियों से विकास पाकर पेड़ और पौधों की प्रजातियों का उद्‌भव होने के सिद्धान्त को विकासवाद कहा जाता है

56. परम्परावाद—यह सिद्धान्त परम्पराओं पर निर्भर रहने को मान्यता देता है।

57. अनुभववाद या प्रयोगवाद—यह सिद्धान्त कहता है कि सारा ज्ञान

अनुभव से ही प्राप्त होता है।

58. अतिवाद—यह सिद्धान्त चरमपंथी विचारों एवं तरीकों से अपना उद्देश्य हासिल करने की पैरवी करता है।

59. अस्तित्ववाद—यह सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि यथार्थ जो अस्तित्व में है वह मनुष्य द्वारा स्वतंत्र और उत्तरदायी रूप से केवल जीया जा सकता है। परन्तु वह सोच का कभी उद्देश्य नहीं बन सकता है (यह बुद्धिवाद विरोधी सिद्धान्त है)।

60. प्रदर्शनवाद—यह सिद्धान्त दिखावटी व्यवहार पर खड़ा है।

61. हेतुवाद (उद्देश्यवादी)—यह अन्तिम कारणों का सिद्धान्त है जो यह विश्वास करता है कि विकास उद्देश्य के कारण होता है और यह उद्देश्य की सेवा करके प्राप्त किया जा सकता है।

62. व्यवस्थावाद—यह वनस्पति एवं पशु जगत का वर्गीकरण करके वैज्ञानिक अध्ययन करने का सिद्धान्त है।

63. फासिस्टवाद—यह फासिस्टों के अधिनायकवादी और षड़यन्त्रकारी अमलों, तरीकों और संगठन को मान्यता देने वाला सिद्धान्त है।

64. साम्राज्यवाद—यह सिद्धान्त उपनिवेशवाद या साम्राज्य निर्माण के फैलाव की वकालात करता है।

65. बुद्धिवाद—इस सिद्धान्त के अनुसार ज्ञान पूर्णतया या मुख्यतया शुद्ध तर्क से हासिल होता है।

66. वामवाद—मार्क्सवाद—लेनिनवाद के विचारों को स्थापित करने वाला सिद्धान्त वामवाद है।

67. सौन्दर्यवाद—यह सिद्धान्त कला के क्षेत्रों में केवल अच्छी पसन्द या सौन्दर्य के नियमों की प्रंशासा करता है।

68. अतियथार्थवाद—यह कला और साहित्य में चल रहा आंदोलन है जो मस्तिष्क के अवचेतन (सुषुप्त) गतिविधियों को अभिव्यक्त करता है।

69. प्रतीकवाद—कला के क्षेत्र में प्रतीकों के उपयोग से भावनाएं उत्पन्न करने का सिद्धान्त प्रतीकवाद है।

70. औपचारिकतावाद—यह सिद्धान्त औपचारिकताओं की पालना पर जोर देता है।

71. परिकल्पनावाद—परिकल्पना को तर्क का आधार बताना या उसे किसी प्रक्रिया की वास्तविकता की खोज का प्रारम्भिक बिन्दु बनाना ही परिकल्पनावाद है।

72. परमशक्तिवाद (निरपेक्षवाद)—यह सिद्धान्त नियंत्रण व अनियंत्रित शक्ति को मान्यता देता है।

73. अलगाववाद—ऐसा सिद्धान्त जो अलगाव का पक्ष लेता है।

74. स्थानीयवाद—यह विशिष्ट स्थान से चिपके रहने का सिद्धान्त है।

75. नारीवाद—यह सिद्धान्त महिला अधिकारों की पैरवी करता है।

76. शिशुवाद (बालरूपतावाद)—मानसिक तथा भौतिक तौर पर अविकसित स्थिति वाला सिद्धान्त बालरूपतावाद है।

77. व्यक्तिवाद—स्वकेन्द्रित अनुभूति या आचरण को पोषित करने वाला सिद्धान्त व्यक्तिवाद है।

78. सामन्तवाद—एक भू-मालिक (यानि अधिनायकवादी सत्ता) की अधीनता (या भूदासता) के विश्वास या आचरण को प्रतिपादित करने वाला सिद्धान्त सामन्तवाद कहलाता है।

79. मूलनिवासवाद (सहजतावाद)—यह सिद्धान्त सहज विचारों का सिद्धान्त है।

80. घुमन्तुवाद—जगह-जगह घुमते रहने की व्यवस्था का सिद्धान्त घुमन्तुवाद कहलाता है।

81. भिन्नमतावलम्बितावाद—यह सिद्धान्त किसी भी विचार या कार्यशैली के अनुरूप नहीं होने का सिद्धान्त है।

82. अनीश्वरवाद—यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड में ईश्वरीय शक्ति के अस्तित्व को नकारने का सिद्धान्त है।

83. ज्ञानमीमांसावाद—ज्ञान का सिद्धान्त है।

84. व्युत्पत्ति विज्ञान—शब्दों की व्युत्पत्ति का सिद्धान्त।

85. अधिभौतिकवाद—यह निराकारी (अमूर्त) पद्धति से अस्तित्व की खोजबीन करने का सिद्धान्त है।

86. तटस्थतावाद—किसी प्रक्रिया से सही और गलत में कोई भेद नहीं करने का सिद्धान्त।

87. संकीर्णतावाद—वस्तुओं के अध्ययन में संकीर्ण दृष्टिकोण अपनाने का सिद्धान्त संकीर्णतावाद है।

88. विवेकशील (या तर्कशील) मानववाद—यह सिद्धान्त मौजूदा समय में उभर रही भूमण्डलीय मानव समाज का सिद्धान्त है जो वर्तमान से पहले के बंटे हुए असंगठित और बिखरे सामाजिक स्वरूपों में व्यवहारिक नहीं था।

89. यथार्थवाद—एक ऐसा सिद्धान्त जो चीजों को उसी रूप में लाकर स्वीकार करता है जैसी वास्तव में वे हैं।

90. वैज्ञानिक यथार्थवाद—यह प्रक्रियाओं को उनकी अपनी वास्तविक प्रकृति में जानने का सिद्धान्त है जिनमें अपनें निष्कर्षों की प्रामाणिक वैज्ञानिक नियमों (प्रकृति और सामाजिक दोनों) के अनुसार जांची परखी जाती है और वस्तुएं जैसी वास्तविकता में है उसी के अनुरूप व्यवहार किया जाता है।

VII. इतिहास-एक तर्कसंगत प्रक्रिया का लेखा-जोखा

इस प्रकार इतिहास एक तर्कसंगत सामाजिक प्रक्रिया का लेखा-जोखा है। यह बिना सूरत और बिना पद्धति की बिखरी हुई घटनाओं की शृंखला नहीं है। यह मानव समाज की कहानी है जो मानव के साथ क्या हुआ और क्यों हुआ का विवरण प्रस्तुत करता है। इतिहास न तो बालू रेत का ढेर है और न ही बिना तालमेल की घटनाओं को मात्र लिपिबद्ध करना है। उदाहरणतया, यह वास्तविक इतिहास का अध्ययन है जो हमें बताता है कि क्यों ईश्वर प्रदत्त समझे जाने वाली सामन्ती विचारधारा का स्थान लोकतांत्रिक विचारधारा ने ले लिया।

एक अर्थ में इतिहास मानव समाज का बुनियादी विज्ञान है जो मनुष्य को अपने पुराने अनुभवों से सीखकर यह समझने में सक्षम बनाता है कि उसे कैसे समाज में जीना है और अपनी समस्याओं को हल करना है।

❋ ❋ ❋

देवगौड़ा के स्थान पर इन्द्रकुमार गुजराल का आना भारत की गड़बड़ राजनीतिक प्रक्रिया

I

(1) देवगौड़ा के स्थान पर इंद्र कुमार गुजराल के प्रधानमंत्री बनने से हमारा देश एक साल में (पी.वी. नरसिंहा राव, अटल बिहारी वाजपेयी, देवगौड़ा और अब गुजराल के नेतृत्व में) चार सरकारें देख रहा हैं। यह तथ्य ध्यान देने लायक है कि पिछले आठ सालों में (अप्रेल 1989 से अप्रेल 1997 तक) भारत ने सात प्रधानमंत्री (यानि राजीव गांधी, वी.पी. सिंह, चन्द्रशेखर, नरसिम्हा राव, वाजपेयी और गौडा और गुजराल) तथा तीन आम चुनाव (1989, 1991 और 1996 के) देखे हैं जबकि भारत आजाद होने के 42 वर्षों के दौरान केवल 6 प्रधानमंत्री (जवाहरलाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री, इंदिरा गांधी, मोरारजी देसाई तथा चरणसिंह) एवं आठ आम चुनाव (सन् 1952, 1957, 1962, 1967, 1971, 1977, 1980 एवं 1984) का होना इस देश की विशिष्ठता रही है। स्पष्टतया हमारी राजनीतिक प्रक्रिया ठीक ढंग से नहीं चल रही है।

II

2. यद्यपि भारत की राजनीतिक प्रक्रिया में लम्बे समय से गड़बड़ी उजागर हो रही है, इसे 1996 के चुनाव के बाद गति मिली है जब भारत की जनता ने किसी एक पार्टी के पक्ष में अपनी पसंद अभिव्यक्त नहीं की है तथा विभाजित मत दिया है - जो दर्शाती है कि केन्द्रीयकरण निदेशित मुख्यधारा वाली पार्टियों की कारगुजारी से जनता संतुष्ट नहीं है तथा वे इन सबको एक ही थैली के चट्टे-बट्टे समझती है। स्पष्टतया, 1996 के चुनाव नतीजों ने केवल यह संदेश दिया है कि सभी राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय पार्टियां साथ मिलकर एक स्वीकृत साझे कार्यक्रम पर सर्वदलीय गठबंधन बनाकर काम करे। इस चुनावी नतीजे की यह भी आवश्यकता है कि किसी भी पार्टी को दुश्मन या अछूत की श्रेणी में नहीं रखे और यदि कोई पार्टी ऐसे गठबंधन से वैचारिक या कार्यक्रम के आधार पर अलग रहना चाहती है तो उसे इसकी इजाजत मिलनी चाहिए तथा स्वीकार किए जाने लायक मुद्दों पर बाहर रहकर सहयोग देने का निवेदन किया जाना चाहिये। परन्तु तीन मुख्यधारावाले राजनीतिक गटक - यानि भाजपा, कांग्रेस व राष्ट्रीयमोर्चा - वाममोर्चा के शीर्ष राजनेता व्यक्तिगत एवं अत्यधिक सत्ता लालसा से मार्गदर्शित होकर वे इस चुनावी नतिजे को अपने-अपने पक्ष में मोड़ने की कोशिश कर रहे हैं।

(3) लोकसभा में भाजपा को अन्य दो राजनीतिक विरोधियों के मुकाबले में

मामूली सा अधिक बहुमत मिला है, उसकी व्याख्या भाजपा करती है कि चुनाव नतिजों का बहुमत उसके पक्ष में है परन्तु वह इस तथ्य को नजर अंदाज कर रही है कि उसे डाले गए मतों में से मात्र 23.9 प्रतिशत मत ही मिले हैं तथा कुल लोक सभा सीटों में से एक तिहाई सीटें ही मिली - यानि कुल लड़ी गई 543 सीटों में से 161

(4) कांग्रेस और राष्ट्रीय मोर्चा-वाम मोर्चा स्पष्टीकरण देते है कि यह साम्प्रदायिकतावाद के विरुद्ध एवं धर्मनिरपेक्षतावाद के पक्ष में मतदान है। परन्तु वे तथ्यों को तोड़ मरोड़ रहे हैं क्योंकि किसी भी पार्टी ने भारत के चुनावों में धर्मनिरपेक्षतावाद बनाम साम्प्रदायिकतावाद के मुद्दे पर कभी कोई चुनाव नहीं लड़ा है। हाल के चुनावों में जबकि उस समय की सत्ताधारी पार्टी कांग्रेस ने केन्द्रीकृत नजरिए वाली स्थिरता एवं नरसिम्हा राव सरकार के कुशल निष्पादन के मुद्दे पर मत प्राप्त किए तथा दो मुख्य विरोधी गठजोड़ों (यानि एक तरफ भाजपा एवं उसका क्षेत्रीय गठजोड़ दूसरी तरफ राष्ट्रीय मोर्चा-वाममोर्चा/एन एफ-एल एफ और उसके क्षेत्रीय भागीदार) ने राव सरकार के भ्रष्टाचार व उसकी गैर कारगुजारी के मुद्दों को भुनाने की कोशिश की। इस प्रकार, कांग्रेस व उसके विरोधियों के बीच विभाजन का मुख्य विषय गैर-कांग्रेसवाद था, मुख्य तीन राजनीतिक गटकों की चुनाव के बाद की गई व्याख्या तथ्यों को मात्र गलत प्रस्तुतीकरण है। स्पष्टतया जनादेश को विकृत करने से राजनीतिक प्रक्रिया में उन्हें अपने ही तर्क की ओर ले जाना था।

III

(5) मंत्रीमण्डल गठन के मामले में, भाजपा सरकार एक अल्पजीवी विषय रहा, जो एक तरफ अपनी अवसरवादी सोच को दर्शाता है कि सत्ता और धन लोकसभा सदस्यों का एक अच्छा बहुमत उसकी ओर खींच लेगा, दूसरी तरफ इसकी मूल्य आधारित राजनीति के अतिशोर के दिवालियापन को उजागर किया है।

(6) कांग्रेस समर्थित यू-एफ सरकार का विचार और कार्य गैर भाजपावाद था। और इस प्रकार इनका न्यूनतम साझा कार्यक्रम एवं अन्य रचनातंत्र इसके मात्र तात्कालिक औजार थे जो भाजपा को सत्ता से बाहर रखकर सत्ता हड़पने के इसके रणनीतिक उद्देश्यों की सेवा करना था। स्पष्टतया, जनादेश के स्पष्ट उल्लंघन में इसने तथ्यों के गलत विवरण से शुरूआत की।

IV

(7) जनता के अनुमान के बजाए कांग्रेस समर्थित युनाईटेड फ्रंट सरकार अधिक समय तक बनी रहने का कारण नई उभरती राजनीतिक वास्तविकता में निहित है, जो बढ़ती केन्द्रीयकरण निदेशित राजनीति और पार्टियों की अप्रासंगिकता का प्रतिनिधित्व कर रही है और केन्द्रीयकरण विरोधी या क्षेत्रीयकरण की राजनीति और

पार्टियों की शुरूआत हो रही हैं तथा इसी के अनुसार क्षेत्रीय समूहों का प्रभाव तुलनात्मक बढ़ रहा है।

(8) उपरोक्त तथ्य 1996 के चुनाव के बाद की स्थिति के साथ-साथ वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य से बिलकुल स्पष्ट होते हैं। वास्तविक राजनीतिक प्रभाव के रूप में आज कांग्रेस-आई केवल एक बड़े राज्य (यानि, मध्यप्रदेश) और दो मध्यम राज्य, यानि उड़िसा और हिमाचल प्रदेश के अलावा कुछ सीमान्त क्षेत्रों में ही मौजूद है। इसी तरह, भाजपा केवल एक मध्यम राज्य, यानि राजस्थान और एक छोटा राज्य, यानि दिल्ली में स्वयं के बल पर काबिज है। पंजाब, हरियाणा और महाराष्ट्र में भाजपा केवल अकाली, हयिाणा विकास पार्टी और शिवसेना के नेतृत्व वाले मंत्रिमंडलों में जुनियर पार्टनर के तौर पर है जबकि उत्तर प्रदेश में मायावती के नेतृत्व वाली साँझी सरकार में भाजपा के पास अधिक विधायक हैं। वाम मोर्चा बहुत लम्बे समय से केवल तीन राज्यों - यानि, बंगाल, केरल और त्रिपुरा तक सीमित है, जबकि जनता दल कर्नाटक और बिहार में सीमित है। केन्द्रीयकरण - निर्देशित पार्टियों की तुलना में आज क्षेत्रीय पार्टियां 6 राज्यों में — यानि, तमिलनाडु में डी एम के, आन्ध्रा में टी डी पी, आसाम में ए जी पी, पंजाब में एस ए डी, हरियाणा में एच वी पी और महाराष्ट्र में शिवसेना — पहले नम्बर पर हैं। इसके अलावा बहुत सी प्रभावशाली क्षेत्रीय पार्टियां विभिन्न राज्यों में काम कर रही है, जो विद्यमान राज्यों के अन्दर से नये नस्ली राज्य बनाने की मांग कर रही हैं, जैसे - बिहार, बंगाल और उड़ीसा के इलाकों में झारखंड पार्टी, दार्जिलिंग (पश्चिम बंगाल) में गोरखालीग, आसाम में उल्फा और बोडोलैंड पार्टी, तथा लगभग सभी उत्तरी-पूर्वी राज्यों में विभिन्न क्षेत्रीय खाड़कू संगठन, तेलंगाना, विदर्भ, उत्तराखंड और छत्तीसगढ़ (एम पी) में राज्य बनाने की मांग करने वाले क्षेत्रीय संगठन, विभिन्न आदिवासी समूह अपने-अपने क्षेत्रों को राज्य का दर्जा दिलाने की माँग कर रहे हैं; उपरोक्त के अतिरिक्त क्षेत्रीय ग्रुप, जैसे - सिक्किम में सिक्किम डेमोक्रेटिक फ्रंट, हरियाणा में सपा, उत्तर प्रदेश में बसपा और सपा और महाराष्ट्र में आर पी आई पार्टियों के क्षेत्रीयकरण की प्रक्रिया अपनी परिपक्वता तक पहुँचने से पहले लम्बे समय तक चलने वाली है।

(9) यह वो वास्तविकता है जिसने प्रत्येक पार्टी को ताजा चुनाव करवाने के जोखिम उठाने की स्थिति को संदेहास्पद बना दिया है, इस वजह से संयुक्त मोर्चे के घटक साथ-साथ बने हुए हैं, उससे संयुक्त मोर्चे की सरकार का समर्थन कांग्रेस के लिए एक राजनीतिक आवश्यकता बन गई हैं एवम् इसके अनुकूल ही आगे भी संयुक्त मोर्चा सरकार बनना सुनिश्चित हो रहा है।

V

(10) देवगौड़ा का प्रधानमंत्री पद से बीच में ही हटाया जाना उनकी अवसरवादी राजनीति तथा चालाकी/टकराहट की शैली में निहित है जो गठबन्धन राजनीति की

आवश्यकताओं से मेल नहीं खाती है।

(11) गठबंधन राजनीति साधारणतया तीन शर्तों के पूरे होने की माँग करती है, जो ये हैं (1) न्यूनतम साँझाा कार्यक्रम पर आधे-अधूरे मन की बनिस्पत पूर्ण सहमति, (2) विवादों को निपटाने एवम् निर्णय लेने में पूरी तरह से लोकतांत्रिक कार्यपद्धति अपनाना और (3) एक दूसरे के प्रभाव क्षेत्र में दखलंदाजी से बचने के बाध्यकारी उसूल के तौर पर स्वीकार करना। यदि इन शर्तों की सभी पक्ष पालना करते हैं तो गठबन्धन उतना ही स्थायित्व लिए हो सकता है जितना कि आम तौर पर एक पार्टी की सरकार का स्थात्वि होना। गठबंधन स्कैन्डेनेनियम देशों (यानि स्वीडन, डेनमार्क आदि) या यूरोप के नीचे के देश (हालैंड आदि) में स्थायित्व के लिए अच्छे-खासे साबित हुए हैं, जबकि इटली में 50 बार से अधिक गठबन्धन सरकारें स्वार्थपरायणता के कारण तुलनात्मक तौर पर कम स्थायित्व वाली रही।

(12) गठबंधन राजनीति के उपरोक्त तीन शर्तों को नजरअंदाज करना, प्रधानमंत्री के तौर पर देवगौड़ा की मुख्य असफलता रही है। कांग्रेस सहित संयुक्त मोर्चे के साथ उन्होंने सांझा न्यूनतम कार्यक्रम के विवरण पर गहराई से विचार-विमर्श कर समाधान नहीं निकला। संयुक्त मोर्चा को बाहर से समर्थन करने वाले सबसे बड़े समूह कांग्रेस के साथ राय-मशविरे की कार्यपद्धति को गठित करने को अनदेखा किया और ना ही उन्होंने ऐसा तरीकाकार विकसित किया जिससे संयुक्त मोर्चे के घटक एवम् कांग्रेस के बीच में उनके अपने-अपने राजनीतिक प्रभाव क्षेत्रों में विवादों से बचा जा सके।

(13) संयुक्त मोर्चे के लिए वे (देवगौड़ा) अपरिहार्य हैं तथा संयुक्त मोर्चे को समर्थन करना कांग्रेस की राजनीतिक मजबूरी है, इन गलत मान्यताओं के चलते हुए उन्होंने (देवगौड़ा) ने सतत् व्यक्तिगत सत्ता बनाए रखने की रणनीति को अपनाया। उन्होंने राजनीतिक लोक-लुभावनवाले कपटपूर्ण रास्ते का सहारा लिया, उन्होंने सबको और हर एक को हर चीज दिलाने का वादा किया, बजाए उसके कि उनकी सरकार के न्यूनतम साझा कार्यक्रम को गंभीरता से लागू किया जाए। उन्होंने अपने राजनीतिक आलोचकों को जनता दल से बाहर करने के लिए प्रतिशोधात्मक तरीके का अनुसरण किया (जैसे आर.के. हेगड़े, मेनका गांधी एवं अन्य)। उन्होंने कांग्रेस में फूट डालने के साथ-साथ ही कांग्रेस नेतृत्व में उनके विरोधियों को आतंकित करने की तकनीक को काम में लिया (उनमें 107 के खिलाफ सी बी आई की जाँच करवाई तथा राजीव व सोनिया तक को बोफोर्स केस में फंसाया। उन्होंने जनता दल में अपने सभी विरोधियों (जैसे, लालू एवम् उसके समर्थकों) को सी बी आई की कार्यवाही के जरिए नीचा दिखाने की कोशिश की। उन्होंने ढके-छुपे सौदे किए (नरसिम्हा राव से उनकी नियमित बैठके, चन्द्रशेखर के साथ नजदीकी रिश्ते, बाला-ठाकरे को खुश करने के

प्रयास इत्यादि) तथा संयुक्त मोर्चे में अपना खुद का गुट धूर्त सह-शिल्पकार हरकिशन सिंह सुरजीत के साथ मिलकर बनाया। परन्तु लम्बे समय तक राजनीतिक चालबाजी काम नहीं करती तथा दांव-पेंच या सी बी आई का कुचक्र चलाकर राजनीतिक स्थायित्व कभी भी प्राप्त नहीं किया जा सकता।

(14) ना केवल यही कि व्यक्तिगत सतत् सत्ता बनी रहे, उन्होंने (देवगौड़ा) पहले तो भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम के दायरे से मंत्रियों व सांसदों को कानून के संशोधन कर अलग रखने की कोशिश करते हुए भ्रष्टाचार के विरुद्ध घेराबन्दी करके संघर्ष करने का प्रयास किया जो साँझा न्यूनतम कार्यक्रम के विपरित था तथा बाद में सी.बी.आई. को जाँच शुरू करने से पहले प्रधानमंत्री से स्वीकृति लेने पूर्व मंत्री के परिसर पर छापा मारने या पुछताछ करने से पहले प्रधानमंत्री से स्वीकृति लेने का प्रशासनिक आदेश जारी किया। इसी तरह से साँझा कार्यक्रम के वादों के खिलाफ नरसिम्हा राव की सरकार के दौरान विवेक आधारित कोटा आंवटन की प्रथा (या सोच) को बिना सोचे समझे नियमित किया। यह उन्हीं (देवगौड़ा) का मंत्रिमंडल था जिसने बेलाडिला (म.प्र.) खदानों को निपेन डेनरो (कम्पनी) को पट्टे पर दिये जाने के नरसिम्हा राव सरकार के विवादास्पद निर्णय को अभिपुष्ट किया।

(15) पुनः, यह उन्हीं की सरकार थी जिसने लोक-पाल बिल, महिला आरक्षण बिल एवम् सूचना के अधिकार का बिल को ठंडे बस्ते में डाल दिया, जिन्हें साँझा न्यूनतम कार्यक्रम में संयुक्त मोर्चे की सरकार आने के 6 महिने के अन्दर पुरा करने का वादा किया गया था।

(16) उनकी सत्ता की भूख इतनी गहरी थी कि कांग्रेस ने उनकी सरकार से समर्थन वापिस लिया, उन्होंने सत्ता में रहने के लिए बेतहाशा दाव-पेंच लगाए। यद्यपि गाहें-बघायें सार्वजनिक तौर पर वे दोहराते रहते थे कि प्रधानमंत्री का पद उन पर थोपा गया है तथा यदि कांग्रेस धर्म-निरपेक्ष गठजोड़ से अलग होने का निर्णय लेती है तो वे कर्नाटक वापिस चले जायेंगे। आगे, विश्वास प्रस्ताव का जब वे जवाब दे रहे थे तो उन्होंने यह दावा किया कि वह इस संकट से बाहर निकल आयेंगे तथा उनका राजनीति पर पुनः प्रभुत्व होगा।

(17) गौड़ा सरकार के द्वारा भारत की किन राजनीतिक, आर्थिक या सांस्कृतिक हितों की सेवा हुई?

राजनीतिक में, कानून व राज की स्थिति धूमिल (विशेषतौर पर उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश, गुजरात आदि में) रही। कश्मीर, आसाम एवम् उत्तर-पूर्व के सभी राज्यों में खाड़कूपन पुनः मजबतू हुआ। संघीयकरण और विकेन्द्रकरण के लिए एक भी गंभीर कदम नहीं उठाया गया।

आर्थिक क्षेत्र में, आर्थिकता भारी तनाव में रही। गरीबी ज्यों की त्यों रही। बेरोजगारी में इजाफा हुआ। महंगाई बढ़ी। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो की ताजा रिपोर्ट के अनुसार देश में अवसाद से ग्रसित होकर आत्महत्याएं बढ़ी। प्रत्येक 6 मिनट में एक ने आत्महत्या की। 1997 के शुरू के केवल 4 महिनों के दौरान दिल्ली में 300 से ज्यादा आत्महत्याएं हुई।

नेपाल और बांग्लादेश के साथ वैमनस्य दूर करने के लिए कुछ सकारात्मक कदम उठाये गए। परन्तु भारतीय कूटनीति के लिए अनसुलझी चुनौती यह रही है कि भारत-पाकिस्तान दोनों के बीच जम्मू-कश्मीर पर टकराहट की मौजूदगी में पाकिस्तान से पुनरमेल कैसे कायम किया जाए।

पाकिस्तान के साथ टकराहट को छोड़कर अन्य किसी भी नीति या राष्ट्रीय सर्वानुमति नहीं रही।

VI

(18) संयुक्त मोर्चे एवम् कांग्रेस आई के संबंधों के हालिया दौर में एक भी मुद्दा ऐसा नहीं है जिसमें सार्वजनिक हित शामिल हो। ना ही दोनों पक्ष किसी सिद्धान्त या विचारधारा पर संघर्षरत रहे हैं। प्रधानमंत्री पद किसे मिले, मात्र इस छोटी बात पर इस दौर में झगड़ा रहा। स्पष्टतया, विवाद की प्रकृति अवसरवादी थी यह स्वतः प्रत्यक्ष है। संयुक्त मोर्चा-कांग्रेस आई का शुरू के 10 महिनों में झगड़ा इसलिए नहीं उभरा, इसका मुख्य कारण यह रहा कि पूर्व अनुभव के आधार पर कांग्रेस की यह मान्यता रही कि संयुक्त मोर्चे के अपने अन्दर के अन्तरविरोध के बोझ तले वह स्वयं ही बिखर जायेगा। जब यह घटित नहीं हुआ तो कांग्रेस ने संकट को उभार दिया। इसके अलावा संयुक्त मोर्चे के सात महिनों में नरसिम्हा राव के अपराधिक-दागी नेतृत्व के तहत कांग्रेस के अत्यधिक गिरे हुए मनोबल की वजह से वह किसी चुनौती भरे राजनीतिक कार्य को हाथ में नहीं ले सकी।

अब संयुक्त मोर्चा व कांग्रेस दोनों ने अंतरिम समझौता कर लिया। परन्तु संभावना यही है कि संघर्ष निरन्तर रहेगा।

(19) 13 दिन के संयुक्त मोर्चा एवम् कांग्रेस आई के सत्ता छिना-झपट्टी के नाटक ने तीन मुख्य राजनीतिक गठन (यानि संयुक्त मोर्चा, कांग्रेस आई एवम् भाजपा) के नेतृत्व की दोगली राजनीतिक नैतिकता का भंडाफोड़ कर दिया। उदाहरणतया, यद्यपि उनमें से कोई भी मध्यावधि चुनाव नहीं चाहता था परन्तु प्रत्येक ने ऐसा दिखावा किया कि वो तो चुनावी दंगल में दो-दो हाथ करने को तैयार है। संयुक्त मोर्चा और कांग्रेस एक तरफ टकराहट की भाव-भंगिमाओं में थे तो उसी समय दूसरी तरफ पर्दे के पीछे बातचीत कर रहे थे। संयुक्त मोर्चे के 13 घटक यह शोर बराबर कर रहे थे कि

वे देवगौड़ा के साथ खड़े रहेंगे और उसका साथ देंगे तथा इसके अलावा उनके पास और कोई रास्ता नहीं है। परन्तु देवगौड़ा ने जैसे ही सत्ता खोई, अचानक इन सबने झूठ का पर्दा गिराकर देवगौड़ा को अकेला छोड़ दिया।

VII

(20) गुजराल सरकार का पिछली सरकार के लक्षणों के मुताबिक वही समान कार्यक्रम, समान प्राथमिकता एवं वही मंत्रीमण्डल रहा। अतएव दोनों सरकारों के मध्य, सिवाय दोनों प्रधानमंत्रियों के अपनी-अपनी विशेषता एवं स्वभाव के मुश्किल से ही कोई बुनियादी अन्तर रहा है, देवगौड़ा से भिन्न, गुजराल ने पहले ही संकेत दे दिए कि कांग्रेस के साथ निकटता उसकी प्राथमिकता रहेगी तथा उसकी सरकार में गैर कांग्रेसवाद को कोई जगह नहीं रहेगी।

(21) अपने पूर्ववर्तियों से बिल्कुल भिन्न, गुजराल सरकार को शुरूआत से ही गंभीर मुश्किलों का सामना करना पड़ा। लालू के विरुद्ध सी.बी.आई. का आरोप-पत्र तथा केन्द्र के प्रति लालू की अवज्ञारूपी व्यवहार ने गुजराल सरकार के सामने नया सिरदर्द पैदा कर दिया। स्वर्गीय राजीव गांधी और कांग्रेस के अन्य शीर्ष नेताओं को विस्फोटक बोफोर्स मामले में शामिल करने से उनकी सरकार के तनाव और दबाव में और इजाफा कर दिया। इसके अलावा, आने वाले महीनों में कर्नाटक, गुजरात, उत्तरप्रदेश के नये राजनीतिक संकट की संभावना इस सरकार के लिए और अधिक व्यथा पैदा कर सकती है। एक तरफ कांग्रेस के साथ रिश्ते और दूसरी तरफ वाम-मोर्चे के साथ रिश्ते इसके लिए लगातार चिंता का विषय रहेगा। ज्वलन्त जन समस्याओं — जैसे गरीबी, बेरोजगारी, कीमतों में इजाफा, प्रशासनिक संतुलन, भ्रष्टाचार एवं अकार्यकुशलता अत्यधिक परेशान करने वाली समस्याएं सिद्ध हो सकती है।

(22) गुजराल सरकार गंभीर समस्याओं वाले इस दरिया को क्या तैर कर पार करने के योग्य हो सकेंगी या बीच मझधार में ही डूब जायेगी - यह तो केवल समय ही बता पायेगा।

VIII

(23) संयुक्त मोर्चा - कांग्रेस द्वारा उनके तथाकथित धर्मनिरपेक्ष गठबंधन के बुनियादी उद्देश्य को हासिल करने में वास्तविक उपलब्धि क्या रही। जैसा कि सर्वज्ञात है, इस गठबंधन का मूलभूत निशाना भाजपा को रोकने तथा कमजोर करने और धर्मनिरपेक्ष ताकतों को मजबूत करने का रहा। परन्तु उनके इरादे के विपरीत तथ्य दर्शाते हैं कि यद्यपि भाजपा अपने राजनीतिक प्रभाव को बढ़ाने के योग्य हुई तथापि 'धर्मनिरपेक्ष' ताकते कोई प्रगति नहीं कर पाई।

(24) पंजाब विधान सभा के चुनावों, नागौर (राजस्थान), छिंदवाड़ा (मध्य-

प्रदेश) की लोकसभा सीटों में और दिल्ली एवं मुम्बई के नगर निगमों के चुनावों में इसकी जीत से भाजपा के प्रभाव का बढ़ना सुस्पष्ट है। उच्च-न्यायालय द्वारा हवाला मामले में एल.के. आडवानी तथा एम.एल. खुराना को दोष मुक्त घोषित करने से भाजपा को आगे और प्रोत्साहन मिला।

(25) 'धर्मनिरपेक्ष' ताकतों के बारे में कांग्रेस लगभग अपने सभी शीर्ष नेताओं के अभूतपूर्व भ्रष्टाचार के कारण लोगों में और अधिक बेनकाब हुई।

(26) संयुक्त मोर्चे की स्थिति भी कोई बेहतर नहीं है। लालू को बिहार में वाटर लू जैसे संघर्ष का सामना है। कर्नाटक की शासक जनता दल भी मुश्किल में है। गुटों के झगड़े बढ़ोतरी मे हैं। पूर्व में देवगौड़ा ने अपनी पुरानी विधानसभा सीट कांग्रेस के मुकाबले में खोई है। मुलायमसिंह यादव का भाजपा-बसपा के मिलन से कड़ा मुकाबला रहा। डी.एम.के.-टी.एम.सी. देहली में हाल के जी.के. मूपनार घटना के कारण लड़खड़ा गया हैं। टीडीपी को एक तरफ भाजपा-लक्ष्मी-पार्वती गठबंधन से तथा दूसरी तरफ कांग्रेस से चुनौती का सामना है। बंगाल में सीपीएम कांग्रेस के बढ़ते हुए प्रतिरोध से मुठभेड़ कर रही है। केरल में हमेशा कांटे की टक्कर रही है। एजीपी एक तरफ खाड़कूओं की बढ़ती हुई कार्यवाहियों की वजह से तथा दूसरी तरफ शासक पार्टी द्वारा चुनावी वादों को पूरा न करने से जनता की नाराजगी के कारण कठिनाई महसूस कर रही है।

(27) अनुकूल परिस्थितियां होते हुए भी अवास्तविक मान्यताएं कभी भी सकारात्मक परिणाम की ओर नहीं ले जाती।

IX

(28) भारत में केन्द्रीयकरण निदेशित राजनीति व पार्टियों की बढ़ती अप्रासंगिकता तथा राजनीति एवं पार्टियों का क्षेत्रीयकरण एक अचानक होने वाली घटना नहीं है। यह तीन अन्तर संबंधित पहलू लिए हुए हैं। ये हैं, सामाजिक परिप्रेक्ष्य (या दृष्टिकोण), सामाजिक व्यवस्था तथा सामाजिक व्यवस्था के संचालक। सामाजिक परिप्रेक्ष्य भारतीय राष्ट्रवाद के मूलभूत सिद्धान्त का द्योतक है, यानि बहुसंख्यक राष्ट्रवाद या एक ऐसा राष्ट्रवाद जो बहुसंख्यक समुदाय की ओर झुकाव लिए हो। सामाजिक व्यवस्था भारतीय संविधान के संवैधानिक-कानूनी ढांचे को अभिव्यक्त करती है यानि, केन्द्रीयता निदेशित व्यवस्था। और सामाजिक व्यवस्था के संचालक का अर्थ है भारत की मुख्य-धारा वाली केन्द्रियकृत राजनीतिक पार्टियां।

(29) उपर बताए गए तीनों अन्तरसंबंधित पहलुओं के 50 वर्षों के लम्बे व्यवहार पर नजर डालने पर हम पाते हैं कि उनकी कारगुजारी हमारी राष्ट्रीय जरूरतों और साथ ही अन्य विकासशील देशों से तुलना, दोनों दृष्टि से बहुत ही खराब रही है।

(30) आजादी के आधी शताब्दी के ठीक बाद हमारी जनता का विशाल भाग — 62% गरीब, 40% गरीबी के रेखा से नीचे, 48% अनपढ़, 33% बेघर, 5% पढ़े-लिखे बेरोजगार, 40% अर्द्धबेरोजगार, 25% को सुरक्षित पेयजल नहीं, 75% शौचालय की सुविधा से वंचित - सामान्य जीवन स्तर से भी वंचित रही है।

(31) राजनीतिक क्षेत्र में नेताओं-माफिया गैंग हमारे राजनीतिक जीवन पर हावी होने लगे हैं (यानि, राजनीतिक प्रक्रिया व पार्टियों का अपराधीकरण), जबकि आर्थिक क्षेत्र में, अकुशल कार्यशीलता, उत्पादन की उच्च लागत, कम उत्पादन, कमजोर गुणवत्ता, बेकार व पर्यावरण विरोधी तकनीक एवं वित्तीय असंतुलन हमारी आर्थिक प्रक्रिया की मुख्य सूरत हो गई है। सांस्कृतिक तौर पर हमारे व्यवहार के मानदण्ड अश्लीलता से ग्रसित है — इस प्रकार हमारी जीवन शैली में अपराध, धोखाधड़ी, दोगलापन तथा हिंसा पैदा होती जा रही है।

(32) विदेश सह सुरक्षा मामलों में, क्षेत्रीय महाशक्तिवाद हमारा प्रभावकारी विषय रहा है — जिसकी प्राथमिकता सामाजिक शांति की राजनीति से ऊपर बन्दूक की राजनीति की है। क्षेत्रीय महाशक्तिवाद का रास्ता पहले से ही हमारे दो पड़ौसी पाकिस्तान और चीन के साथ हमें चार युद्धों की ओर ले जा चुका है। शीतयुद्ध के युग के बीत जाने के बाद भी 1987 से वैश्विक सैन्य खर्च प्रतिवर्ष 4 अरब डॉलर घटता गया है जबकि दुनिया के प्रत्येक क्षेत्र में सैन्य खर्च घटा है, हमारा देश वही पुरानी सैन्य लीक पर दुनिया के विकासशील देशों के बीच हथियारों का सबसे बड़ा आयातक देश की अलग पहचान बनाए रखी है।

(33) पर्यावरणीय तौर पर, भारत दुनिया में सबसे ज्यादा गंदे जल एवं वायु प्रदूषण, जल की घटती उपलब्धता, 40% बिगड़ी हुई खेती योग्य जमीन, जंगल क्षेत्र के आधे भाग में उजाड़ सहित-प्रदुषित देश है।

(34) आबादी के तौर पर, 60 करोड़ तीस लाख की आबादी में बढ़ौतरी (1947 में 34 करोड़ 20 लाख से आज 94 करोड़ 50 लाख) का परिणाम गंभीर सामाजिक तनाव में निकला है।

(35) निश्चित सीमा के बाद, चीज़े उनके विपरीत मुड़ जायेगी और यही हमारे देश में हो रहा है।

(36) केन्द्रियता निदेशित इस सामाजिक व्यवस्था के लम्बे 50 साल के दुखदायी नतीजों से तथा केन्द्रिकृत पार्टियों के निंदनीय कारगुजारियों से ऊबते हुए भारत की जनता ने क्षेत्रीयकरण (या बहुलीकरण) की प्रक्रिया तथा पार्टियों को उलट पहल शुरू की है। यह प्रक्रिया कई फिसलन व गिरावटों या ऊपर उठने के जरिए आगे जा सकती है। परन्तु वास्तव में भारत की जनता की सही सामाजिक वास्तविकता के अनुसार वह अपने तर्क संगत परिणाम तक पहुँचने के लिए बाध्य है।

X

(37) भारत में बहुसंख्यक राष्ट्रवाद के परिप्रेक्ष्य, केन्द्रियता निदेशित सामाजिक व्यवस्था तथा केन्द्रिकृत राजनीतिक पार्टियाँ क्यों नहीं भलीभांति कारगर हुई जैसा कि इसके प्रणेताओं ने अनुमान लगाया था।

इसका एकमात्र कारण यह है कि आपस में जुड़े हुए उपर्युक्त तीन कारक भारत की जनता की मूलभूत सामाजिक वास्तविकता से मेल नहीं खाते। यह मूलभूत वास्तविकता; एक बहुधार्मिक, बहु-नस्ली, बहु-भाषाई और बहु-क्षेत्रीयता की है।

(38) बहुसंख्यक राष्ट्रवाद, केन्द्रियता निदेशित सामाजिक व्यवस्था और केन्द्रिकृत पार्टियों का सामाजिक, परिप्रेक्ष्य भारतीय लोगों को एक एकरूपतावाला समूह मानता है जबकि उनकी विविधता को मात्र द्वितीयक लक्षण के रूप में स्वीकार करता है। जब भारतीय लोगों की एकरूपता का प्रमुख लक्षण हिन्दुत्व है, तब यह देश की एकता का केवल लक्षण धर्म को बनाता है। परन्तु आज की दुनिया में राजनीतिकृत धर्म या धर्म निदेशित राजनीति किसी भी देश, राष्ट्र या समुदाय का सांगठनिक सिद्धान्त नहीं बन सकता।

(39) नि:संदेह सामन्ति (या राजशाही) राजनीति व आर्थिकता में धर्म ने सर्वोच्च भूमिका अदा की है, परन्तु आज भी पार लौकिकता,धार्मिक नैतिकता के उपदेशों में इसकी एक भूमिका है, दबे-कुचले तथा वंचित या रचनात्मक गतिविधियों के काम आती है, परन्तु यह मौजूदा लोकतांत्रिक राजनीति या वहनीय आर्थिकता के निर्माण में मदद नहीं दे सकती। पाकिस्तान, अफगानिस्तान, मध्य एशियाई अरब, बुद्धिष्टवादी एशियाई देशों एवं क्रिश्चियन यूरोप का अनुभव इस तथ्य की गवाही देते हैं।

(40) और इसलिए, बहुसंख्यक राष्ट्रवाद (या गांधी द्वारा प्रतिपादित उदारवादी हिन्दू मानवतावाद) 1947 से पहले वाले भारत में कारगर नहीं हुआ तथा नतीजा एकीकृत भारत के विभाजन में निकला तथा इस बहुसंख्यक राष्ट्रवादी दिशा के तहत 1947 के बाद भारत ने केन्द्रियता निदेशित सामाजिक व्यवस्था एवं केन्द्रीकृत पार्टियों का संवैधानिक-कानूनी ढांचा अपनाया जिसने भारत की जनता को घातक परिणामों की ओर धकेला।

(41) जैसाकि पुरानी कहावत है : "सत्ता भ्रष्ट करती हैं तथा निरंकुश सत्ता पूर्णरूप से भ्रष्ट बना देती है" और कैसे पूर्ण केन्द्रियतावाद ने हमारी अत्यधिक सच्ची व निष्कपट जनता को दोयम दर्जे में परिवर्तित कर दिया एवं विकासशील देशों के बीच भी हाशिए पर ला खड़ा किया है।

❋ ❋ ❋

1997 का बजट
आर्थिक वास्तविकताओं की बुनियाद पर नहीं

I

(1) बजट किसी देश की आर्थिक समस्याओं का किसी सरकार का आर्थिक प्रत्युत्तर है। अगर जरूरत पड़े तो समय के अनुसार इसमें बदलाव या संशोधन हो सकता है।

(2) अनुभव बताता है कि एक बजट विशेषज्ञ और योजनाकार के लिए तर्कसंगत, वांछित एवम् टिकाऊ रास्ता वह है जो वैश्विक आर्थिकता के अनुभव से सीखते हुए संबंधित देश की आर्थिक वास्तविकताओं को हल करने की कोशिश करता है।

(3) क्या चिदम्बरम ने 1997-98 के बजट में उक्त रास्ते को अपनाया है? आओं हम तथ्यों पर नजर डालें।

II

(4) भारत की प्रथम आर्थिक वास्तविकता यह है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी निवेशकों के अलावा उत्पादकों की कई प्रकार की किस्में हैं जैसे — कॉरपोरेट, सार्वजकि क्षेत्र, विशाल पैमाने, मध्यम-पैमाने एवं लघु-पैमाने के उत्पादक इत्यादि। ये सभी इकाइयां आर्थिकता को समृद्ध करने में अपनी-अपनी भूमिका अदा करती हैं।

स्पष्टतया, यह वास्तविकता अधिक उत्पादक इकाइयों को प्रोत्साहन के साथ इन सभी इकाइयों के हितों में समन्वय की माँग करती है। परन्तु यह बजट अन्य इकाइयों की अनदेखी कर कारपोरेट इकाइयों को अभूतपूर्व छूट देकर उक्त वास्तविकता का निषेध करता है। यह उस समय हो रहा है जब हाल ही में कोरपोरेट की श्रंखलाबद्ध गलत कारगुजारियां उजागर हुई हैं तथा कारपोरेट क्षेत्र की जनता में पैठ बहुत कम है।

(5) द्वितीय भारतीय आर्थिकता की वास्तविकता है कि भारतीय पूंजीपति वर्ग राष्ट्रीय दायरे में ही पला-बढ़ा है और संरिक्षत रहा है अत: वैश्विक बाजार में अभी तक अल्प विकसित है।

स्पष्टतया, यह वास्तविकता 4 एकीकृत कदमों को अख्तियार करने की मांग करती है - सम्पूर्ण उदारीकरण के साथ राष्ट्रीय बाजार को एकीकृत करना, सार्क व्यापार और सांझा बाजार को ओर आगे विकसित करना, विश्व बाजार के साथ भारतीय आर्थिकता का और अधिक एकीकरण करना तथा इन सबसे ऊपर उत्पादकता और गुणवत्ता के संबंध में निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के कौशल को विकसित करना। परन्तु बजट इस बिन्दु पर कोई जोर नहीं दे रहा है।

(6) तृतीय भारतीय आर्थिक वास्तविकता है भारत में बड़े परन्तु गैर-लाभदायक सार्वजनिक क्षेत्र का अस्तित्व होना। वर्तमान हालात यह है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम जहाँ 2.5 प्रतिशत लाभ देते हैं जबकि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को प्राप्त ऋण पर लगभग 9 प्रतिशत ब्याज चुकाना पड़ता है, अत: इन्हें लगभग 6.5 प्रतिशत की हानि उठानी पड़ती है। चूंकि इस क्षेत्र में लगभग 2 लाख करोड़ पूंजी निवेश की हुई है जिसके कारण लगभग 2000 करोड़ की हानि होती है।

स्पष्टतया, यह वास्तविकता सार्वजनिक क्षेत्र के संबंध में एक हकीकी नीति बनाने की माँग करती है। यह व्यवहारिक उद्यमों के कुशल प्रबन्ध पर जोर देती है तथा गैर-फायदेमंद उद्यमों के उचित निस्तारण चाहे तो उपयुक्त शर्तों पर संबंधित मजदूरों को उसके प्रबन्ध का जिम्मा सौंप दें अथवा उनमें विनिवेश कर दें, जबकि छटनी किये जाने वाले मजदूरों की रोजगार सुरक्षा और प्रभावित धनों की सुरक्षा कायम करें। परन्तु बजट, हालांकि विनिवेश आयोग की रिपोर्ट को स्वीकार करती है परन्तु इस अत्यधिक महत्वपूर्ण आर्थिक समस्या को यह बड़े अस्पष्ट और धीरे-धीरे अंगीकार कर रहा है। हो सकता है इसका कारण संयुक्त मोर्चे में इस मुद्दे पर भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण होने में निहित है।

(7) चौथी भारतीय आर्थिक वास्तविकता चरमराती भारतीय संरचनात्मक ढाँचे - यानि, उर्जा, दूरसंचार, सड़कें, रेलवे, बन्दरगाह, हवाई अड्डों, बैंकों, बीमा, वित्त इत्यादि की स्थिति है। आर्थिक विकास के लिए संरचनात्मक ढाँचे की अनिवार्यता सर्वत्र मान्य है। बिना सार्वजनिक ढाँचे के कोई आर्थिकता फल-फूल नहीं सकती।

कमजोर यातायात व्यवस्था (यानि, सड़क यातायात, रेलवे और हवाई सेवा) के कारण प्रति वर्ष लगभग 15-20 प्रतिशत अनाज बर्बाद होता है, जो 5000 करोड़ रुपये का बनता है। लगभग 30 प्रतिशत दूध, सब्जियां और फल, नाकाफी यातायात, कमजोर बाजारीकरण और संरक्षण की उचित तकनीक की कमी के कारण बर्बाद हो जाते हैं।

इस देश में विद्युत उर्जा की भारी कमी है। विद्युत उर्जा की कमी न केवल उपभोक्ताओं को अंधेरे मे रखती है बल्कि उद्योग और कृषि की पैदावार में भी बाधा है। देश के सकल घरेलू उत्पादन में लगभग 2 से 2.5 प्रतिशत कमजोर उर्जा पूर्ति के कारण नुकसान होता है। इस वर्ष अकेले उर्जा की कमी के कारण आर्थिकता में उत्पादन की हानि के रूप में लगभग 18000 करोड़ रूपये का आंकलन किया गया है। अगर सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) 6 प्रतिशत की अनुमानित वृद्धि दर से बढ़ता है तो उर्जा की कमी से होने वाला नुकसान अगले 5 साल में 45000 करोड़ रूपये का होगा, जबकि अगले 10 साल में यह नुकसान 1.8 लाख करोड़ रूपये से ज्यादा होगा।

यह समस्या अन्य संरचनात्मक क्षेत्रों में भी बराबर बुरी है। दूर संचार, बैंक, बीमा, वित्त इत्यादि क्षेत्र विशेषज्ञता की कमी, नौकरशाही व्यवहार, अकुशल, कमजोर कारगुजारी से भी ग्रसित हैं।

भारत में संरचनात्मक ढाँचे पर हालिया सम्मेलन में एक डेलीगेट ने कहा : "सुधारों की वर्तमान तर्ज से यह 2005 के साल तक पूर्वी एशियन देशों से 10 साल पीछे रहेगा।"

(8) भारतीय आर्थिकता की पाँचवी वास्तविकता यह है कि विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में हमारी उच्च ब्याज दरें चलन में हैं परन्तु मुद्रा संकुचन की पुरानी लीक पर बजट अभी भी चल रहा है तथा इस बिन्दु पर शिथिलता का कोई चिन्ह बजट में नजर नहीं आता।

(9) भारतीय आर्थिकता की छठी वास्तविकता यह है कि यह अमीर पक्षिय है तथा भारतीय शासन की अनुदान प्रणाली—(सामाजिक वस्तुएं एवं सेवायें तीन तरह की है : निशुल्क सेवाएँ जैसे-कानून एवम् व्यवस्था व सार्वजनिक प्रशासन, निशुल्क गुणवान चीजें जो सामाजिक फायदा देने वाली हैं जैसे शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य इत्यादि; तथा भौतिक वस्तुएं जिसमें निजी हित बहुत मजबूत है। करीब 90 प्रतिशत भारतीय अनुदान भौतिक वस्तुओं पर है)—शहरी पक्षिय है। यह मुख्यतया धनवानों के फायदे में है। खाद अनुदान का आधा अमीर किसानों के पास पहुंच जाता है, उच्च शिक्षा का अनुदान मध्यम एवं उच्च आय के ग्रुपों द्वारा हथिया लिया जाता है। यातायात का अनुदान प्रधानत: मध्यम वर्ग प्राप्त कर लेता है तथा बिजली एवम् सिंचाई पर अनुदान धनी व मध्यम किसानों के उपयोग में आता है। दिल्ली में अनुदानित सार्वजनिक वितरण व्यवस्था एवं अनुदानित दुग्ध व्यवस्था शहरी पक्षपात लिए हुए हैं। इन अनुदानों की लागत देश की जीडीपी की करीब 10.7 प्रतिशत है (यानि जो सरकार के कुल राजस्व से आधे से थोड़ा अधिक है)।

सरकार तीन वर्ष में इन भौतिक अनुदानों को 90 प्रतिशत से घटाकर 50 प्रतिशत करने की बात करती है और उसके अगले दो सालों में 25 प्रतिशत और घटा देना चाहती है परन्तु बजट इस पर मौन है कि यह कैसे किया जाएगा।

(10) भारतीय आर्थिकता की सातवीं वास्तविकता यह है कि सरकार आन्तरिक ऋण के जाल में फंसी हुई है। बजट के अनुसार, सरकार को यह आशा है कि उसे 65454 करोड़ रुपये उधार मिल जायेंगे, परन्तु पुराने आधार पर 68000 करोड़ रुपये ब्याज के देने होंगे। यानि सरकार के प्रत्येक रूपये के बजट का 23 पैसा उधार लेगा परन्तु पुराना ऋण चुकाने पर ब्याज पर 25 पैसा खर्च हो जायेगा। नई उधारी को पूंजीगत खाते में शामिल करके बजट में ऋण जाल को छुपाने की कोशिश की गई है।

(11) भारतीय आर्थिकता की आठवीं वास्तविकता यह है कि कृषि संकट बढ़ता जा रहा है। खाद्य क्षेत्र में 1990 के दशक के दौरान वास्तविक वृद्धि दर जनसंख्या वृद्धि दर से पीछे रही है। खाद्य आपात भंडारण दो साल पहले के भंडारण का मुश्किल से आधा ही है। कृषि में गिरावट का मुख्य कारण पिछले 15 सालों में केन्द्र व राज्य दोनों सरकारों द्वारा सार्वजनिक निवेश में कमी करना है। खाद्य मोर्चे पर उभरते संकट के चिन्ह सामने नजर आते हैं। परन्तु बजट इस तथ्य की जानकारी होना प्रदर्शित नहीं करता है, यद्यपि कृषि अभी भी वृहद-आर्थिकता के परिवर्तनीय पहलू (जैसे कि कुल माँग एवम् औद्योगिक लागत व कीमतें) की अभी भी निर्णायक चाबी है।

(12) भारतीय आर्थिकता की नवीं वास्तविकता यह है कि इसका उद्योग यद्यपि 1992-93 से अपना स्तर बनाए हुए था, तथापि आधारभूत मालों एवम् संरचनात्मक ढाँचे की कमजोरी से पड़ने वाले भार के कारण उद्योग की धीमी गति का कोई संकेत बजट नहीं देता है। संरचनात्मक ढाँचे की अड़चनों के बढ़ते जाने से उद्योग की वृद्धि दर पर अवश्य ही असर पड़ेगा। परन्तु इस संबंध में बजट से ऐसी कोई आशंका प्रतिबिम्बित नहीं होती है।

(13) भारतीय आर्थिकता की दसवीं वास्तविकता यह है कि भारत में 7 बड़े वर्ग हैं - यानि बड़े व्यापारी, शहरी मध्यम समूह, संगठित मजदूर तथा असंगठित मजदूर, धनी किसान एवम् मध्यम किसान तथा ग्रामीण मजदूर। जबकि बजट बड़े व्यापारियों को अधिकतम रियायत देता है, शहरी मध्यम समूह और संगठित मजदूरों की कुछ माँगों को पूरा करता है, धनी और मध्यम किसानों को कृषि के विभिन्न अनुदानों से संतुष्ट करता है, तथापि विशाल शहरी असंगठित मजदूरों, ग्रामीण मजदूरों एवं वंचितों को कुछ टुकड़े यह शौर मचाते हुए डालता है कि बजट में सामाजिक क्षेत्र और गरीबी हटाने की योजनाओं के लिए धनराशि चिन्हित कर दी है।

(14) भारतीय आर्थिकता की 11वीं वास्तविकता यह है कि संयुक्त मोर्चा सरकार गरीब हितैषी नीतियों को उच्चतम-प्राथमिकता देने एवम् सामाजिक क्षेत्र व गरीबी हटाने की योजनाओं को अति महत्व देने का दावा करती है, परन्तु बजट इन वादों को कैसे पूरा करेगा, यह नहीं दर्शाता है। वास्तविक अर्थ में प्रति व्यक्ति के तौर पर सामाजिक क्षेत्र के लिए बजट में चिन्हित राशि आठवीं योजना के लक्ष्यों से वास्तव में कम है। सामाजिक क्षेत्र एवम् ग्रामीण विकास पर खर्च की राशि 4000 करोड़ रूपये 1997-98 बजट में बढ़ाई गई है परन्तु यह बढ़ोतरी देश की जीडीपी का केवल 1.6 प्रतिशत बनती है, तथापि यह इस मद में 1995-96 के जीडीपी के 1.7 प्रतिशत खर्च से कम है। जबकि 1996-97 में भी सामाजिक क्षेत्र पर व्यय बजट में 11 प्रतिशत बढ़ाया गया परन्तु संशोधित आंकलन में उसे 7 प्रतिशत घटा दिया गया।

ग्रामीण क्षेत्रों एवं रोजगार योजनाओं का 866 करोड़ रुपये तथा शिक्षा की 807 करोड़ रूपये की राशि इन मदों में खर्च ही नहीं की गई। पिछले कई सालों से अन्य विकासशील देश सामाजिक क्षेत्र पर जो खर्च कर रहे है, भारत उससे पहले से ही कम खर्च कर रहा है।

(15) भारतीय आर्थिकता की 12वीं वास्तविकता यह है कि यद्यपि बड़े पैमाने पर यह माँग रही है कि राज्यों को वित्तीय शक्तियां और अधिक दी जायें तथा संयुक्त मोर्चा सरकार की विकेन्द्रीकरण एवम् राज्यों को अधिक संसाधनों को हस्तान्तरित करने की ऊँची-ऊँची घोषणाओं के बाजवूद 1997-98 के बजट ने राज्यों को संसाधनों का कुल हस्तानान्तरण किया है वह 1996-97 के 17.6 प्रतिशत एवम् पिछले 5 सालों के औसत 8-10 प्रतिशत के स्तर से घटाकर 6.9 प्रतिशत कर दिया गया है।

(16) भारतीय आर्थिकता की 13वीं वास्तविकता यह है कि जिस मद के लिए बजट में धनराशि निर्धारित की गई थी, उस मद पर खर्च नहीं की गई तथा वह धन-राशि साल-दर साल काम में ही नहीं ली गई। घाटे, नुकसान एवम् अप्रभावी क्रियान्वयन को दुरूस्त करने के जरिए क्रियान्वयन संस्थाओं एवम् वितरण व्यवस्था को चुस्त करने की अत्यन्त आवश्यकता है। यह तुरन्त आवश्यकता बन गई है कि खर्च प्रबन्धन एवं नियन्त्रण आयोग स्थापित किया जाए, परन्तु इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर बजट चुप्पी साधे हुए है।

(17) भारतीय आर्थिकता की 14वीं वास्तविकता यह है कि 4 मुद्दों पर विदेशी निवेशकों की शिकायतें हैं – यानि, उचित संरचनात्मक ढाँचे में कमी, चौतरफा लाल फिताशाही, कानून एवम् व्यवस्था की असंतोषजनक स्थिति तथा पारदर्शिता की कमी होना। परन्तु इस बजट ने इनको छुआ तक नहीं है।

(18) भारत की आर्थिकता के संबंध में 15वीं वास्तविकता यह है कि भारत का प्रशासन दुनियां के प्रशासनों में सबसे भ्रष्ट में से एक है। परन्तु भ्रष्ट कार्यवाहियों को उखाड़ फेंकने की डींगों पर जोर मारने के अलावा यह बजट कानून तोड़ने वालों को रियायतें देकर ठगों को प्रोत्साहित करता है। यह उन सभी कर चोरों को आम माफी इस छूट के साथ प्रस्तावित करता है कि साल दर साल उन्होंने कभी 97.75 प्रतिशत तो कभी 60 या कभी 50 या कभी 40 प्रतिशत तक की कर चोरी की है उसमें से केवल 30 प्रतिशत कर अदा करके वित्त मंत्रालय से देशभक्ति का प्रमाणपत्र हासिल कर लिया जाए।

(19) भारत की आर्थिकता के संबंध में 16वीं वास्तविकता यह है कि पाँचवें वेतन आयोग की रिपोर्ट के अनुसार भारतीय प्रशासन में सामान्य से 30 प्रतिशत अधिक कर्मचारी कार्यरत हैं, परन्तु यह बजट उक्त अपव्यय और अनुत्पादक व्यय के बारे में

एक भी शब्द नहीं कहता इसका अर्थ है कि बजट सरकार की इस नीति का समर्थन करता है कि बिना काम के रोजगार दिया जाए। इन अतिरिक्त कर्मचारियों को तंग-परेशान किये बिना उन्हें स्कूलों, स्वास्थ्य और स्वच्छता के केन्द्रों, अन्य सामाजिक क्षेत्रों एवम् इन सबसे ऊपर पर्यावरणीय संरक्षण के कामों में लगाया जाए। इस मामले में किसी भी बदलाव की अनदेखी करते हुए बजट ने 94.5 करोड़ लोगों के बनिस्पत सरकार के हितों को आगे रखा है।

(20) भारत की आर्थिकता की 17वीं वास्तविकता यह है कि अकुशलता एवम् जड़ता के जरिए भारतीय राजनीति पहचानी जाती है। उदाहरण के तौर पर भारत द्वारा 31.3.96 तक 11 बिलियन डालर से अधिक लोन मुख्यत: उपयोग में ही नहीं लिया गया है परन्तु बजट में इस घोर लापरवाही के कारण को इंगित तक नहीं किया गया है।

III

(21) उपरोक्त समस्याएँ जिनका सामना भारत की आर्थिकता को है, उनको 1997-98 का बजट नजरअन्दाज क्यों करता है। इसका एकमात्र कारण यह है कि बजट की रणनीति मौजूदा जमीनी हकीकत एवम् भारतीय अर्थव्यवस्था की बुनियादी प्रकृति (यानि, एक विकासशील आर्थिक व्यवस्था) पर आधारित नहीं है। इसके बनिस्पत यह बजट पूर्ति-पक्षिय अर्थशास्त्र के दार्शनिक तर्क से शुरू करता है, यानि, एक शास्त्रीय आर्थिक सिद्धान्त का पुनरूद्धारित कथन है।

(22) पूर्ति-पक्षिय अर्थव्यवस्था पुष्टि करती है कि माल और सेवाओं के उत्पादन एवम् रोजगार पैदा करने को बढ़ावा देना है तो उद्योगपतियों एवम् व्यापारियों के हाथों में करों में कटौति करके उनके हाथों में अधिक संसाधनों को देना होगा; सार्वजनिक क्षेत्र में भारी मात्रा में विनिवेश करना होगा, विनियमन की नीतियों को लागू करना होगा तथा ब्याज दरों में काफी बढ़ोतरी करनी होगी ताकि पैसे की पूर्ति को स्थिर रखा जा सके। पूर्ति-पक्षिय आर्थिकता, 1930 में आये केन्सवादी आर्थिक सिद्धान्त के मुकाबले में 1970 में उभरी धारणा है। केन्सवादी सिद्धान्त बजट घाटे के जरिए सार्वजनिक क्षेत्र या सामाजिक सेवाओं में भारी मात्रा में निवेश करके माँग पैदा करने पर जोर देता है, जिससे अधिक उत्पादन एवम् रोजगार प्राप्त होता है। असल में दोनों सिद्धान्त एक तरफा हैं जो पूर्ति और मांग के बीच की ऐतिहासिक एकता को तोड़ते हैं। पहला सिद्धान्त (पूर्ति सिद्धान्त) अधिक बेराजगारी और गरीबी की ओर ले जाता है जबकि माँग का सिद्धान्त मँहगाई को बढ़ाता है।

(23) दोनों सिद्धान्त विकसित देशों से संबंधित हैं जहाँ की आर्थिकता मुख्यत: मंडी द्वारा संचालित हैं। दोनों उन देशों में कारगर रही हैं क्योंकि एक सरकार के बाद

दूसरी सरकार के बदलने (उदाहरणतया, ब्रिटेन में टोरी एवम् लेबर सरकारें) से उनके अनुकूल एक सिद्धान्त की जगह दूसरे सिद्धान्त के कारण दोनों में संतुलन बना रहा है।

(24) पूर्वी एशिया और दक्षिणी-पूर्वी एशिया के हालिया अनुभव यह दर्शाता है कि इन दोनों आर्थिक अवधारणाओं के तालमेल से कैसे अद्‌भूत नतीजे पाये जा सकते हैं।

IV

(25) आर्थिक विकास का वैकल्पिक रास्ता क्या होना चाहिए? इस प्रश्न के उत्तर के लिए दुनियां भर में विस्तृत अनुसंधान चल रहा है। विभिन्न प्रयोगों द्वारा जो तथ्य उपलब्ध करवाये गये हैं वह बताते हैं कि इस जरूरत को पुरा करने के लिए टिकाऊ विकास मॉडल उचित है।

(26) एक टिकाऊ विकास मॉडल वह है जो दो खम्बों - लोक समर्थक एवम् पर्यावरण समर्थक उसूलों पर खड़ा है। यह एक त्रिपक्षीय लक्ष्य (यानि वृद्धि, समता एवम् पर्यावरण संरक्षण) से चरित्रित रणनीति का अनुसरण करता है। आर्थिक वृद्धि में यह बाजार और राज्य मशीरी दोनों को काम में लेता है। आर्थिक वृद्धि का उद्देश्य तो यह मुख्यत: बाजार रचनातंत्र के जरिए हासिल करता है तथापि मुख्यत: सामाजिक समता यह राज्य के दखल के जरिए प्राप्त करता है, जिसके लिए संसाधन सार्वजनिक एवम् निजी क्षेत्र से जुटाए जाते हैं। वृद्धि और समता को पाने के लिए पर्यावरणीय सिद्धान्त, परिवर्तनीय निर्धारक (निर्णायक चर) के रूप में मान्य है। इस मॉडल का प्रस्थान बिन्दु है कि वर्तमान भारतीय आर्थिक वास्तविकताओं को यह उचित प्रत्युत्तर दे। इसके संचालन के दो मूल पहलू - यानि जवाबदेही और पारदर्शिता हैं।

(27) यह किसी का भी कहना नहीं है कि उपरोक्त प्रस्तावना भारत की सभी आर्थिक समस्याओं का हल है। परन्तु टिकाऊ विकास मॉडल उस अवधारणा का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें एक सही रणनीतिक दिशा, एक वास्तविक कार्यक्रम (एजेण्डे) को महत्व तथा इसकी प्राथमिकताएं एवम् दबाव, प्रत्येक उभरती आर्थिक समस्या को पर्याप्त प्रत्युत्तर देना है।

❋ ❋ ❋

(26-27 अप्रेल, 1997, जम्मू में अखिल भारत रचनात्मक समाज राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रसारित पेपर)

दक्षिण एशिया में शांति और समन्वय

I

(1) आज, दक्षिण एशिया दुनिया में अत्यधिक निरक्षर और गरीब क्षेत्र है, तब भी इसकी सरकारे किसी ओर क्षेत्र की अपेक्षा सबसे अधिक हथियार खरीदती हैं।

(2) दक्षिण एशियाई क्षेत्र मानवीय वंचितपन और हताशा के दलदल में डूबता जा रहा है, दुनिया में अत्यधिक वंचित क्षेत्र के रूप में उभर रहा है।

(3) दक्षिण एशिया में प्रत्येक रात्रि में भूखे सोने वाले बच्चे सब-सहारा अफ्रीका सहित दुनिया के किसी भी क्षेत्र के बच्चों से अधिक है।

(4) दक्षिण एशिया में अनुमानित 13 करोड़ 40 लाख बच्चे काम करते हैं। इनमें से बहुत से बच्चे एक दिन में 15 घंटों से ज्यादा काम करते हैं और प्राय: शारीरिक तौर प्रताड़ित किये जाते हैं।

(5) दक्षिण एशिया में प्रत्येक 100,000 बच्चों के जन्म के पीछे 600 माताएं मृत्यु का शिकार हो जाती हैं। बांग्लादेश में यह और भी अधिक संख्या (यानि 850 माताएं) और भूटान में इससे भी अधिक (यानि 1600 माताएं) मृत्यु की शिकार होती हैं।

(6) विश्व बैंक के आंकलन के अनुसार इस क्षेत्र में लगभग 40 प्रतिशत अति गरीब लोग हैं जो केवल 1 डालर प्रतिदिन पर गुजारा करते हैं।

(7) रक्षा पर भारत का प्रति व्यक्ति खर्च 10 डालर और पाकिस्तान का 26 डालर है, जबकि स्वास्थ्य और शिक्षा पर भारत का खर्च 14 डालर और पाकिस्तान का 10 डालर प्रति व्यक्ति है।

(8) इस क्षेत्र में कोई भी निवेश की सम्भावना नहीं देख रहा है।

(9) क्षेत्र में दो राजनीतिक ताकतें, भारत और पाकिस्तान परमाणु बम्ब बनाने की क्षमता रखते हैं और वे मिसाइल दौड़ शुरू करने के किनारे पहूँच चूके हैं।

(10) हालिया भारत-पाकिस्तान के टकराव का सबसे अधिक डरावना पहलू दोनों देशों द्वारा बहुत तेजी से आधुनिक हथियारों को हासिल करना है।

(11) ऐसा भारी निवेश हमारे कमजोर वित्तिय संसाधनों को निचोड़ रहा है जिसकी मानवीय विकास के लिए तत्काल आवश्यकता है।

(12) दक्षिण एशिया को 12 करोड़ 60 लाख बच्चों के लिए प्राथमिक स्कूल, 69 करोड़ लोगों के लिए बुनियादी स्वास्थ्य सुविधा, 77 करोड़ लोगों के लिए सुरक्षित पीने के पानी, 8 करोड़ 70 लाख बच्चों के लिए भरपूर पोषक भोजन और 28 करोड़ 70 लाख विवाहित जोड़ों के लिए परिवार नियोजन सेवाओं की जरूरत हैं।

(13) और इन सभी के लिए अगले 15 सालों में लगभग 129 अरब डालर की कीमत लगेगी जो प्रतिवर्ष 8.6 अरब डालर बनती है।

(14) इसके लिए बहुत से कठोर निर्णय लेने होंगे, जैसे बाकी दुनिया की तरह (और साथ में) रक्षा खर्च में भारी कटौती करनी होगी।

(15) केवल 5 प्रतिशत रक्षा खर्च कम करने का अर्थ होगा कि अगले 15 वर्षों में 80 अरब डालर की बचत होगी।

(16) क्षेत्र के लोग अपनी सरकारों पर कम भ्रष्टाचार, अच्छे शासन (या सरकार) और रोजगार की माँग के साथ लगातार दबाव बढ़ा रहे हैं।

(17) लोग वास्तव में भयभीत हैं कि अगर यह कटौती अभी नहीं की जाती है तो भारत और पाकिस्तान वास्तव में गर्त में जाते रहेंगे।

(18) उपरोक्त वर्णित लेखा-जोखा इस्लामाबाद में आयोजित "दक्षिण एशिया में विकास" पर तीन दिवसीय सेमीनार के अंत में दिनांक 9.4.97 को संयुक्त राष्ट्र के फंड से तैयार प्रकाशित रिपोर्ट से उद्धरित किया गया है।

II

(19) दक्षिण एशिया "दुनिया में सबसे अधिक गरीब और अत्यधिक निरक्षर क्षेत्र क्यों बना हुआ है?

(20) दक्षिण एशिया की गिरावट के लिए यू एन रिपोर्ट में बहुत से कारणों का जिक्र किया गया है — जैसे राजनीतिक अस्थिरता, खराब सरकारें, भ्रष्टाचार और कानूनहीनता।

(21) परन्तु ये सभी कारण, हालांकि काफी हद तक समस्याओं से अन्तर-संबंधित है परन्तु इनमें बुनियादी बिन्दु गायब है। और यह बुनियादी बिन्दु बनता है कि बहुत से विकासशील देशों में राजनीतिक अस्थिरता, खराब सरकारें, भ्रष्टाचार और कानूनहीनता साँझे और सामान्य बिन्दु हैं, फिर दक्षिण एशिया क्षेत्र दुनिया में सबसे पिछड़ा क्षेत्र क्यों बन गया है।

(22) एक तर्कसंगत और सीधा-सपाट उत्तर है कि दक्षिण एशियाई देशों की राष्ट्रीय प्राथमिकताएँ और उनके राष्ट्रीय एजेण्डे सदा जनविरोधी रहे हैं। दक्षिण

एशिया क्षेत्र के दो बड़े सदस्य, भारत और पाकिस्तान जिनमें कुल 100 करोड़ जनसंख्या (जबकि पुरे क्षेत्र की जनसंख्या 120 करोड़ है) निवास करती है, ये दोनों हमेशा टकराव और युद्ध के रास्ते पर चलते रहे हैं। इनके विवाद का मुख्य मसला जम्मू-कश्मीर समस्या है। 50 साल से इन दोनों देशों के राष्ट्रीय एजेण्डे युद्ध निर्देशित रहे हैं जिससे रक्षा उनकी अपनी-अपनी प्राथमिकता बनी हुई है। इस शताब्दी के पिछले 50 वर्षों में कोई भी जन मुद्दा जैसे — गरीबी उन्मूलन, बेरोजगारी हटाना, निरक्षरता, बेघरबारता, बिजली की कमी, शुद्ध पीने के पानी की एक तिहाई गाँवो में कमी, तीन चौथाई आबादी के लिए शौच-सुविधा का नहीं होना इत्यादि - भारत या पाकिस्तानी सरकार की प्राथमिकता पर नहीं आ सका है।

(23) ये दोनों देश, खास करके क्षेत्र का सबसे ताकतवर देश (यानि भारत) अपनी बढ़ती सैनिक ताकत के साथ पड़ौसी देशों में गड़बड़िया करता है और उन्हें धमकाता है। भारत ने श्रीलंका में तमिल खाड़कूपन को बढ़ाने में सहायता की तथा इसी तरह बंग्लादेश में खाड़कू बुद्धवादी मुक्तिवाहिनी को बढ़ावा दिया एवम् कराची सहित पाकिस्तान के कुछ अन्य भागों में तकलीफें खड़ी की। इसी तरह पाकिस्तान ने अफगानिस्तान के अन्दरूनी मामलों में दखलन्दाजी की और कश्मीरी खाड़कूपन को खुला समर्थन दिया। जब तक भारत और पाकिस्तान इस आत्मघाती मार्ग को या तो अपनी-अपनी जनता के दबाव में आकर या वैश्विक एकता की उभरती सामाजिक व आर्थिक आवश्यकताओं के दबाव में छोड़ नहीं देते हैं तब तक दक्षिण एशिया क्षेत्र के लोगों (जो लम्बे समय से तकलीफ में हैं) के लिए भविष्य भी ज्यादा आशाजनक और लाभदायक नहीं हो सकता है।

(24) दोनों देशों के अपने-अपने राष्ट्रीय एजेण्डे और प्राथमिकताओं में गलतियाँ, बिना किसी आधार के नहीं है। इनका आधार दोनों देशों के संकीर्ण और अन्धराष्ट्रवादी विचारों में निहित है। जबकि भारतीय राष्ट्रवाद (जिसका प्रतिनिधित्व तथाकथित धर्मनिरपेक्ष काँग्रेस-आई और राष्ट्रीय मोर्चा-वाम मोर्चा करते हैं) हिन्दु बहुसंख्यक राष्ट्रवाद से चरित्रित है तो पाकिस्तानी राष्ट्रवाद (जिसका प्रतिनिधित्व पाक राष्ट्रीय पार्टियां करती है) आम तौर पर पैन-इस्लामवाद और खासतौर पर सुन्नीवाद से संचालित है।

III

(25) विश्व समुदाय को अब यह स्पष्ट हो चुका है कि दक्षिण एशिया उभर नहीं सकता एवम् विकसित नहीं हो सकता है जब तक कि सार्क के दो मुख्य देशों - यानि, भारत और पाकिस्तान के बीच जेके विवाद का हल नहीं निकल जाता, इसी के

साथ इस क्षेत्र के अन्य छोटे विवादों को भी हल किया जाए। परन्तु दक्षिण एशियाई समुदाय के 7 सदस्य देशों के बीच कौनसा देश इस शांति प्रक्रिया की पहल करे।

(26) इस समन्वयकारी रास्ते का उत्तरदायित्व तर्क संगत तौर पर इन सभी विवादों में सबसे बड़ी पार्टी और दक्षिण एशियाई क्षेत्र की सबसे बड़ी शक्ति यानि - भारत पर आता है, जो दक्षिण एशिया में शांति हासिल करने के पावन कार्य को अपने हाथ में ले और अपने पड़ौसियों के बीच सद्भाव पैदा करे चाहे इसके लिए उसे अपने सार्क भागीदारों को रियायतें भी देनी पड़ें। यह आम तौर पर विश्व में और खास तौर पर दक्षिण एशियाई देशों के बीच राजनीतिक विश्वास का वातावरण पैदा करने वाला कदम होगा।

(27) जेके समस्या पर, उचित रास्ता इसके बुनियादी स्वभाव (प्रकृति) और जमीनी वास्तविकताओं से शुरू किया जाना है। बुनियादी तौर पर कानूनी अर्थ में यह एक द्विपक्षीय मुद्दा है परन्तु राजनीतिक तौर पर यह अब त्रिपक्षीय मुद्दा है। एक मुख्य जमीनी हकीकत यह है कि इस बिन्दु पर भारत और पाकिस्तान दोनों ने अपने-अपने राष्ट्रीय सम्मान को दाव पर लगा दिया है। दूसरी जमीनी हकीकत यह है कि, हालांकि कश्मीरियों ने भारत से अलग होने की ठान ली है, जबकि अन्य नस्लीय पहचानों की उनकी अपनी-अपनी आंकाक्षाएं और चिन्ताएं हैं।

(28) इसकी बुनियादी प्रकृति और जमीनी हकीकत को देखते हुए जम्मू-कश्मीर समस्या का एक न्यायपूर्ण, निष्पक्ष एवम् उचित समाधान यह है और हो सकता है जो एक तरफ भारत और पाकिस्तान के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों और दूसरी तरफ जेके राज्य में नस्ली ग्रुपों सहित जम्मू-कश्मीर के लोगों की आकांक्षाओं और चिन्ताओं को भी हल करे। उसूल पर आधारित एक उचित विकल्प यह बनता है कि समस्त राज्य पर भारत पाक या सार्क का सहराज्य (जो केवल जेके की सुरक्षा, विदेशी मामले एवम् मुद्रा का संचालन करे) स्थापित हो। इसमें जेके राज्य को अर्द्ध-स्वतंत्रता हो तथा जम्मू-कश्मीर की आठ नस्लीय क्षेत्रियताओं में से प्रत्येक को एक संघीय ढाँचे के तहत अधिकतम संभव स्वायतता हो, नतीजतन यह एक तरफ भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर की जनता की साझेदारी बनायेगा तथा दूसरी तरफ सार्क को विकसित करने के दरवाजे खोल देगा।

(29) सार्क सदस्य देशों के बीच अन्य सभी द्विपक्षीय मुद्दों को सार्क के माध्यम से हल किया जाना चाहिए।

IV

(30) स्पष्टत: यदि सार्क आगे बढ़ने में असफल होता है तो आम तौर पर सभी के लिए तथा विशेष तौर पर भारत व पाकिस्तान के लिए इसके परिणाम

खतरनाक हो सकते है। अन्य क्षेत्रीयताओं की तुलना में सभी दक्षिणी एशियाई देशों की विकास प्रक्रिया पिछड़ सकती है, विशेष तौर पर आर्थिक अवनति एवम् राजनीतिक अनिश्चितता तथा तेज होते नस्लीय टकराहट बहुनस्लीय भारत और पाकिस्तान को अस्थिरता की ओर ले जा सकते हैं। देर होने से पहले यही समय है कि कार्यवाही की जाए।

(31) पुराने राष्ट्रीय मॉडल - यानि, पश्चिमी उदारवादी तथा साम्यवादी मौजूदा विश्व हालात की स्थिति को ठीक करने की काबीलियत नहीं रखते। इसमें स्पष्ट है कि दुनिया को आज एक नये वैश्विक नजरिए वाले विकास मॉडल की आवश्यकता है जो एक तरफ मानव समाज और प्रकृति के बीच संतुलन कायम करे और दूसरी तरफ अत्यधिक सम्पन्न और अत्यधिक निर्धन तथा व्यक्ति एवम् समाज के बीच समन्वय बैठाये। 23.4.1997

❋ ❋ ❋

(अप्रेल 26-27, 1997 जम्मू में अखिल भारत रचनात्मक समाज राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रस्तुत पत्र)

जम्मू-कश्मीर में शान्ति एवम् समन्वय

I

(1) जम्मू-कश्मीर में शांति और समन्वय किसी भी इकाई - चाहे वह लोगों का एक सामाजिक समूह हो या एक राष्ट्रीय राज्य - की मनोगत इच्छा पर निर्भर नहीं है। जम्मू-कश्मीर में झूठी शांति व समन्वय की राजनीति, जिसका पिछले पाँच सालों से नई दिल्ली अनुसरण कर रही है, इससे शांति व समन्वय हासिल नहीं किए जा सके हैं। जम्मू-कश्मीर में बन्दूक की राजनीति के जरिए भी शांति व समन्वय प्राप्त नहीं किया जा सकता। तीन भारत-पाक युद्ध, 50 साल लम्बी टकराहट, नई दिल्ली द्वारा प्रायोजित सरकार समर्थक सशस्त्र गैंग तथा अन्तिम कश्मीरी खाड़कूओं की इस समस्या को सुलझाने में असफलता से जाहिर है कि बन्दूक की राजनीति से जम्मू-कश्मीर में शांति एवम् समन्वय नहीं प्राप्त किया जा सकता।

(2) अनुभव बताता है कि किसी भी क्षेत्र या देश में शांति व समन्वय तभी प्राप्त किया जा सकता है जब इसकी (यानि, निश्चित घटनाक्रम की) बुनियादी एवम् तात्कालिक सामाजिक वास्तविकताओं की गहरी समझ हासिल की जाए।

II

(3) तब, यह जाना जाए कि जम्मू-कश्मीर समस्या की बुनियादी एवम् तात्कालिक सामाजिक वास्तविकताएं क्या हैं, संक्षेप में, जम्मू-कश्मीर समस्या दो बुनियादी एवम् सात तात्कालिक सामाजिक वास्तविकताओं से परिलक्षित है।

(4) जम्मू-कश्मीर की दो बुनियादी सामाजिक वास्तविकताएं निम्न हैं :

जम्मू-कश्मीर समस्या की पहली सामाजिक वास्तविकता है कि यह एक द्विपक्षिय भारत-पाक समस्या है, इसे संयुक्त राष्ट्र संघ तथा भारत व पाकिस्तान सहित लगभग सभी देश स्वीकार करते हैं, संयुक्त राष्ट्र संघ एवम् दुनिया के तमाम देशों के अनुसार जम्मू-कश्मीर के लोगों को शामिल करके इस समस्या को सुलझाया जा सकता है, अर्थात् वास्तव में यह त्रिपक्षीय समस्या है।

जम्मू-कश्मीर समस्या की दूसरी सामाजिक वास्तविकता यह है कि जम्मू-कश्मीर की जनता कोई एकल सामाजिक इकाई (यानि, एक राष्ट्र, राष्ट्रीयता या एक नस्लीय समूह) नहीं है। जम्मू-कश्मीर की जनता करीब 8 नस्लीय - क्षेत्रीय इकाइयों का समूह है जिनकी भिन्न-भिन्न आकांक्षाएं और अभिलाषाएं (इच्छाएं) हैं।

(5) जम्मू-कश्मीर की सात तात्कालिक सामाजिक वास्तविकताओं में शामिल हैं — दुनिया की जमीनी हकीकत यह है कि दुनिया की विभिन्न संस्थाओं (यानि, यू एन, विश्व बैंक, आई.एम.एफ., नाम, ओ.आई.सी. एपेक, एशियन, सार्क इत्यादि) में से कोई भी या पाकिस्तान के अलावा कोई भी देश इस मानसिकता में नहीं है कि जम्मू-कश्मीर के सवाल पर कोई नई पहल की जाए।

उपमहाद्वीपीय जमीनी वास्तविकता यह है कि अधिक से अधिक लोग अब यह चाहते हैं कि भारत-पाक रिश्तों में आगे गतिरोध को हटाया जाए। यद्यपि उनकी हार्दिक इच्छा यह है कि जम्मू-कश्मीर की समस्या का हल उनके अपने-अपने देश के पक्ष में हो।

जम्मू-कश्मीर की जमीनी वास्तविकता यह है कि प्रत्येक क्षेत्रीय नस्लीय पहचान अपनी ही चिन्ताएं लिए हुए हैं, तथा कश्मीरी समुदाय (राज्य में बहुसंख्यक नस्लीय समुदाय के रूप में गठित) जम्मू-कश्मीर राज्य से संबंधित मौजूदा भारतीय राजनीतिक ढाँचे को बदलने के लिए सशस्त्र संघर्ष कर रहा है।

जम्मू-कश्मीर की एक और जमीनी हकीकत यह है कि नेशनल कान्फ्रेंस सरकार घाटी में पूर्णतया अलग-थलग पड़ गई है और अब यह जम्मू एवम् अन्य क्षेत्रों में अवास्तविक राजनीतिक नजरिए तथा संकीर्ण नीतियों के कारण अपनी पकड़ खोती जा रही हैं।

नई दिल्ली की जमीनी हकीकत यह है कि इसकी राजनीतिक दूर-दृष्टि में कमी है, यह सैनिक समाधान चाहती है तथा यह पूर्णतया बन्दूक तथा कश्मीरी खाड़कूओं के बीच फूट डालने पर निर्भर करती है।

वर्तमान वैश्विक आर्थिकता यह है कि दुनिया में आर्थिक प्रक्रिया अत्यधिक प्रतियोगी हो गई है तथा आज कोई भी देश इस स्थिति में नहीं है कि एक लम्बे समय तक किसी क्षेत्र पर जबरिया कब्जा जमाए रखने की आर्थिक कीमत को झेल सके।

एक नई ऊभरी उपमहाद्वीपीय जमीनी वास्तविकता यह है कि देशों की सामाजिक अन्तरनिर्भरता ने भारत व पाकिस्तान के भविष्य को साँझा एवम् एक साथ चलने वाला बना दिया है। यदि वे इस सामाजिक आवश्यकता से इनकार करेंगे तो उन्हें गंभीर परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं।

III

(6) जम्मू-कश्मीर समस्या की उपरोक्त बुनियादी एवम् तात्कालिक सामाजिक वास्तविकताएँ क्या इंगित करती हैं? ये साफ तौर पर दर्शाती हैं कि इस समस्या के समाधान में चिन्तित तीनों पक्षों को शामिल करके ही जम्मू-कश्मीर समस्या का केवल-मात्र उचित हल निकाला जा सकता है। 50 साल का अनुभव यह साबित करता

है कि ये सभी विकल्प उक्त बुनियादी सामाजिक आवश्यकताओं का उल्लंघन करते हैं इसीलिए कारगर नहीं हैं। इनको निम्न उदाहरणों में देखा जा सकता है।

(7) प्रथमत्, स्वायतता के सभी ब्रांड (किस्में), यानि, 1953 से पहले की अधिकतम स्वायतता तथा 1975 के बाद की खण्डित स्वायतता कारगर नहीं हुई है नतीजतन एक के बाद दूसरा संकट या तो भारत व पाकिस्तान के बीच या नई दिल्ली और स्वायतता समर्थक कश्मीरी नेताओं के बीच या नई दिल्ली एवम् भारत विरोधी ताकतों के बीच संकट आता रहा है।

(8) द्वितीयत:, सभी प्रकार के द्विपक्षीय समझौते, चाहे वे भारत व पाकिस्तान के बीच हो (मसलन, 1947 का युद्ध-विराम समझौता, 1965 की ताशकंद संधि, 1972 का शिमला समझौता) या नई दिल्ली और श्रीनगर के बीच (मसलन 1952 का नेहरू-अब्दुला समझौता, 1954 -संविधान लागू करने का आदेश, 1975 का इंदिरा-शेख घोषणा, 1986 राजीव-फारूख समझौता इत्यादि) समझौते कागर साबित नहीं हुए।

IV

(9) उपरोक्त आकलन से यह निकलता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या का निष्पक्ष, न्यायपूर्ण एवम् उचित एक समाधान यह है कि वह समाधान एक तरफ भारत व पाकिस्तान के हितों से मेल खाता हो तथा दूसरी तरफ भारत व पाकिस्तान की जनता के साथ जम्मू-कश्मीर की जनता के हितों में समन्वय बैठाता हो।

(10) भारत और पाकिस्तान से संबंधित राष्ट्रीय हितों को जम्मू-कश्मीर राज्य के बारे में भारत-पाक सहराज्य या सार्क सहराज्य स्थापित करके (जो केवल जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा, विदेशी मामले एवम् मुद्रा का संचालन करे) संतुलित किया जाना चाहिए व किया जा सकता है, जबकि राज्य में प्रत्येक नस्लीय पहचान को अधिकतम संभव स्वायतता के साथ अर्द्ध-स्वतंत्रता देकर जम्मू-कश्मीर की जनता के हितों का भारत व पाकिस्तान की जनता के हितों से समन्वय बैठाया जाना चाहिए और बैठाया जा सकता है।

(11) जम्मू-कश्मीर की विभिन्न पहचानों (जैसा कि दूसरे बुनियादी पहलू की आवश्यकता है) की भिन्न-भिन्न आकांक्षाओं और चिन्ताओं के समन्वय के संबंध में राज्य के लिए एक संघीय संविधान अपनाकर पुरा किया जाना चाहिए और पुरा किया जा सकता है। इस संघीय संविधान में एक तरफ प्रत्येक नस्लीय क्षेत्र को अधिकतम संभव स्वायतता देकर, जिसमें आगे जिला, ब्लाक और ग्राम परिषदों को और अधिक शक्ति प्रदान करने का प्रावधान हो तथा दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर एक एकल राज्य रहे जिसमें राज्य का एक साँझा मुखिया हो जिसका चुनाव नस्लीय क्षेत्रीय परिषदों द्वारा किया जाए, एक साँझाा उच्च न्यायालय, एक साँझा चुनाव आयोग, एक

साझा लोक-सेवा आयोग, एक साँझा पर्यावरण आयोग एवम् एक साँझा मानव संसाधन विकास आयोग हो, इन सभी की नियुक्ति नस्लीय क्षेत्रिय परिषदों द्वारा की जाए जिसमें प्रत्येक का एक प्रतिनिधि हो।

(12) जम्मू-कश्मीर के बारे में भारत-पाक या सार्क सहराज्य आज की दुनियां में यह एक नया वैश्विक निर्देशित विकास मॉडल का एक नवीन प्रयोग होगा, जो यह दर्शायेगा कि विभिन्न राष्ट्रों के अलग-अलग राष्ट्रीय हितों में कैसे मेल बैठाया जा सकता है तथा विभिन्न नस्लीयताओं की भिन्न-भिन्न आकांक्षाओं व चिन्ताओं में कैसे समन्वय बैठाया जा सकता है।

V

(13) जेके समस्या का त्रिपक्षीय समाधान हो, ऐसा कहना क्या भारत (राष्ट्र विरोधी या देशद्रोही) विरोधी है?

(14) जम्मू-कश्मीर के संबंध में सामाजिक सत्य (या सामाजिक वास्तविकताओं को थामना ही केवल वास्तविक राष्ट्रवाद है। जम्मू-कश्मीर के संबंध में सभी झूठ और चालबाजियां राष्ट्रवाद विरोधी हैं तथा भारतीय जनता के हितों को नुकसान पहुँचाती हैं।

(15) सामाजिक सत्य की दिशा, जो शांति, स्थिरता तथा टिकाऊ विकास को थामती है केवल वही देश भक्ति की दिशा हो सकती है, जो भारतीय जनता के हितों की सेवा करती है। तथा पाकिस्तान या अन्य देश के साथ युद्ध खोरी एवम् टकराहट की दिशा भारतीय जनता के हितों के लिए अत्यधिक घातक है।

(16) आज भारत को धन व बाहुबल, घोटाले, भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, हिंसा, सम्प्रदायवाद व जातीवाद, अकुशलता आदि से ग्रसित मौजूदा बेईमान राजनीति क्या आज भारत को कमजोर नहीं कर रही है।

(17) इस अवसरवादी राजनीति के संचालक और कोई नहीं बल्कि भारत के मौजूदा राजनीतिज्ञ (जो भारत राज्य को चला रहे हैं) तथा मुख्यधारा की पार्टियाँ हैं। उनमें से कई पहले से ही आपराधिक मामलों में फँसे हुए हैं जबकि अन्य उसी पार्टी में उनके सहयोगी (जो प्राय: उन अपराधियों के लिए रक्षा कवच का काम करते हैं) हैं।

(18) पुन:, यह उन राजनीतिज्ञों का झुण्ड है जो उक्त जेके नीतियों को थामे रख कर भारत को कमजोर कर रहे हैं तथा लगातार चुनाव में धांधलेबाजी, मानवाधिकारों का उल्लंघन (हिरासत में मौत, नकली मुठभेड़ें, बलात्कार, सम्पत्ति को जलाना आदि), अर्द्ध-सैनिक शासन थोप कर तथा विशेषतौर पर घाटी में आमतौर पर जम्मू-कश्मीर में मानवीय एवम् भौतिक संसाधनों को लगातार बर्बाद कर रहे हैं।

(19) ये उन्हीं राजनीतिज्ञों का झुण्ड हैं जो विदेश नीति में टकराहट को थाम

कर भारत को कमजोर करते हैं, जिन्होंने 1947 से 1971 के 24 साल के काल में भारत को अपने पड़ौसियों के साथ चार युद्धों में धकेला है (शायद दुनिया में किसी भी विकासशील देश द्वारा यह रिकार्ड नहीं तोड़ा गया है) तथा सभी दक्षिण एशियाई देशों के साथ भारत के संबंधों को खट्टा किया है।

(20) और आगे, यह उन्हीं राजनीतिज्ञों का झुण्ड है जिनकी नीतियों ने भारत को दुनियां में सबसे अधिक हिंसक, भ्रष्ट, अकुशल, दोगले देश में बदल दिया है।

(21) आज, भारतीय राष्ट्रवाद का बेकार नमूना (यानि पुनरूद्धारित नेहरूवाद, हिन्दुत्व व मंडलवाद), जिसे इन्हीं राजनीतिज्ञों के झुण्ड ने प्रायोजित किया है, इसकी जगह पर एक वैश्विक निर्देशित राष्ट्रवाद (या अन्तरनिर्भर राष्ट्रवाद या तर्क संगत मानवीय राष्ट्रवाद) के एक नये मॉडल को स्थापित करने की आवश्यकता है। यह मॉडल प्रकृति समर्थक और मानव समर्थक दृष्टिकोण अपनाता है, पाकिस्तान के साथ सहयोगी एवम् दोस्ती की नीति का अनुसरण करता है तथा जम्मू-कश्मीर समस्या का त्रिपक्षीय हल चाहता है। इस प्रकार न केवल भारत और पाकिस्तान में, बल्कि समस्त दक्षिण एशिया में यह मॉडल शांति, लोकतंत्र एवम् टिकाऊ विकास की बुनियाद रखता है।

❋ ❋ ❋

महिलाओं का घोषणा-पत्र

महिलाओं के इरादों, उद्देश्यों और दृष्टिकोण की एक सार्वजनिक घोषणा

महिलाओं का राष्ट्रीय मैत्री संगठन (NAWO) का महिलाओं का घोषणापत्र और 1996 का माँग-पत्र जमीनी स्तर से देश भर में विभिन्न क्षेत्रों, वर्गों, कार्य क्षेत्रों और पृष्ठभूमि की महिलाओं से राय-मशवीरा तथा बहुत-सी मीटिंगों का परमोत्कर्ष (चरम बिन्दु) है।

यह घोषणा-पत्र और माँग-पत्र महिलाओं के राष्ट्रीय गठजोड़ (NAWO) से जुड़े क्षेत्रिय ग्रुपों के तंत्र द्वारा तैयार किया गया था, और इसको 20-21 मार्च, 1996 को नई दिल्ली में आयोजित चुनावी राजनीति में महिलाओं का मुख्यधारा आधारित एजेण्डे पर राष्ट्रीय विचार-विमर्श के बाद अख्तियार किया गया।

हम, महिलाएँ :

जो देश की आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हैं, और अभी तक बहुत बड़ी संख्या में गरीबी की रेखा के नीचे हैं, अनपढ़ हैं, हाशिये पर हैं तथा जानबूझकर जनवादी ढाँचे में उनकी गरिमा को नकारा गया है।

जो खेतों, कारखानों, जंगलों, खानों, पहाड़ों और नदियों में अपने कठिन परिश्रम से (कुल उत्पादन का) तीन चौथाई उत्पादन करती है परन्तु अभी तक अपने इस श्रम के केवल 1/10 वें भाग को पारिश्रमिक के रूप में ले पाती हैं।

जो नस्लों को जन्म देती और पालती हैं, परिवारों तथा समाज को सस्टेन (टिकाऊ) बनाती हैं, तब भी उनके विवेक पर और शारीरिक तौर पर व्यक्तिगत तथा संस्थागत हिंसा का शिकार बनाया जाता है।

जिनको जाति, सम्प्रदाय, नस्ल और सांस्कृतिक आधार पर विभाजित किया जाता है परन्तु यह महिलाएँ अपनी इच्छा से नहीं करती हैं बल्कि इतिहास की प्रक्रिया में सामाजिक ताकतों द्वारा तय मार्ग की मजबूरी में करती हैं।

जो संयुक्त रूप से आशा करती हैं और एक न्यायिक तथा मानवीय समाज (जहाँ प्रत्येक अपनी क्षमता के अनुसार योगदान करे तथा अपनी आवश्यकता के अनुसार प्राप्त करे) के निर्माण के लिए कार्यरत रहेगी।

हम महिलाएँ, हमारी गहरी चिन्ता और नाराजगी जाहिर करती हैं :

• हमारी राष्ट्रीय आर्थिकता के उदारीकरण पर, जिसने - आर्थिक असुरक्षा को पैदा किया है, बढ़ती बेराजगारी का कारण बना है तथा तथाकथित राष्ट्रीय विकास के हाशिये पर खड़े हमारे समाज के कमजोर तबकों को जीने के लिए आधारभूत

सुविधाओं से वंचित किया है।

• रूढ़ीवाद और फासीवाद के उभार पर, जिसने भारत के लोगों की एकता को धर्म, भाषा, जाति और संस्कृति के नाम पर तार-तार कर दिया है।

• "राजनीति के अपराधीकरण" और "अपराध के राजनीतिकरण" पर जो जनवादी प्रक्रियाओं को निरर्थक बना रहे हैं तथा राज्य ढाँचे पर कब्जा जमाने की चुनौती बन चुके हैं।

• आई.एम.एफ., विश्व बैंक तथा विश्व व्यापार संगठन, इत्यादि के बढ़ते "ऋण जाल" पर, जो देश व लोगों के अपने संसाधनों तथा उत्पादक क्षमताओं को निचोड़ रहे हैं।

'कल्याणकारी राज्य' के चरित्र में प्रबल और नाटकीय परिवर्तन पर जो आज वैश्विक मंडी ताकतों के रक्षक और समर्थक बन गये हैं।

पारिस्थितिकी गिरावट पर जो सभी तरह के जीवन को चुनौती दे रही है।

बढ़ते भ्रष्टाचार पर जो देश की सम्पूर्ण राजनीति को प्रभावित कर रहा है।

हम, महिलाएँ संकल्प करती है :

सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक प्रक्रियाएँ, जो हमें हमारे बच्चों और हमारे अपनों को प्रभावित करती हैं, उन सभी पर हम महिलाएं रचनात्मक, सकारात्मक एवम् सक्रिय रूप से दखल करेंगी।

हम, महिलाएं, मानव इतिहास का भविष्य एक न्यायिक और मानवीय समाज का मार्ग तय करने के लिए हमारी राजनीति को "सशक्तिकरण की राजनीति" के रूप में परिभाषित करती हैं।

जहाँ महिलाएँ और पुरुष अधिकतम मुनाफे की जगह आधारभूत मानवीय आवश्यकताओं को पुरा करने के लिए उत्पाद और सम्पत्ति की हिस्सेदारी के उद्देश्य से प्राकृतिक संसाधनों पर सामूहिक नियन्त्रण हासिल करेंगी।

• जहाँ सभी को सामाजिक और आर्थिक न्याय मिलने की धारणा पर आधारित लोक-समर्थक और परिस्थितिक-मैत्री वाले विकास के लिए योजनाएं और नीतियों का निर्माण करना।

राजनीति के सामने मौजूद निम्नलिखित बड़े मुद्दों की मांग है कि हम, महिलाएँ इन पर सक्रिय दखलन्दाजी करें :

(1) वैश्वीकरण/उदारीकरण; (2) रूढीवाद और फासीवाद; (3) राजनीति के अपराधीकरण; (4) भ्रष्टाचार बनाम स्वच्छ राजनीति; (5) गरीबों और शक्तिहीनों

के पक्ष में राजनीतिक ताकत का विकेन्द्रीकरण करना; (6) लोगों की आजीविका और जीने के अधिकार; (7) संसाधनों पर लोगों का नियन्त्रण; (8) उत्पादन और वितरण प्रक्रियाओं का सामाजिकरण; (9) कृषि बनाम कृषि-व्यापार; (10) मानवाधिकारों, मानवीय गरिमा और समानता की रक्षा; (11) सभी संस्कृतियों एवम् भाषाओं की बराबरी और सम्मान आधारित भारतीयता; (12) देशज संस्कृति को हथियाना और उसको बाजार में बेचना; (13) सड़ी-गली संस्कृति का जनक उपभोक्तावाद; (14) महिलाओं की गरिमा को घटाने वाले, बच्चों के विकास को कुचलने वाले, पारिवारिक और सामुदायिक जीवन को नष्ट करने वाले नशों, शराब तथा आरामदेह सामानों के बढ़ते प्रभाव; (15) बाल-श्रम और बन्धक मजदूरी।

❋ ❋ ❋

भारतीय स्वतन्त्रता के 50 वर्ष : भारतीय अल्पसंख्यक, पंजाब समस्या और मानवाधिकार

(यह पेपर 23 अगस्त, 1997 के जालंधर सेमीनार में आर.पी. सराफ द्वारा प्रस्तुत किया गया)

I. स्वतन्त्रता के गोल्डन जुबली दिवस पर भारत की अवस्था

(1) भारत की स्वतंत्रता के ऐतिहासिक गोल्डन जुबली दिवस पर हमें इस मूल सवाल का अध्ययन करने की जरूरत है कि आधी शताब्दी पहले हासिल की गई आजादी के बाद हमने कैसा भारत बनाया है।

(2) सरकारी आँकड़े हमें बताते हैं कि मानवीय विकास के क्षेत्र में भारतीय लोगों का बहुत बड़ा तबका सामाजिक जीवन में न्यूनतम आवश्यकताओं से वंचित है — उदाहरणतया, 62 प्रतिशत गरीबों में से 40 प्रतिशत गरीबी की रेखा से नीचे हैं, 48 प्रतिशत निरक्षर, 33 प्रतिशत बेघरबार, 5 प्रतिशत (यानि लगभग 5 करोड़) शिक्षित बेरोजगार, 40 प्रतिशत अर्द्ध बेरोजगार, 25 प्रतिशत को पीने के शुद्ध पानी की कमी, 75 प्रतिशत को शौचालय सुविधा नहीं, इत्यादि-इत्यादि।

(3) राजनीति के क्षेत्र में, राजनीतिज्ञों व माफिया गैंगों का गठजोड़ हमारी राजनीतिक प्रक्रिया (यानि, हालिया सरकारी बोहरा कमेटी की रिपोर्ट में कहा गया है कि हमारी राजनीतिक पार्टियों और नेताओं का अपराधीकरण हो गया है और प्रतिदिन राजनीतिक धोखाधड़ी व घोटाले सामने आ रहे हैं) में प्रभुत्वशाली हैं। जबकि आर्थिक क्षेत्र में, अकुशलता, उच्च कीमत पर उत्पादन, निम्न उत्पादकता, घटिया गुणवत्ता, पुरानी पड़ चुकी एवम् पर्यावरण विरोधी तकनीकी तथा वित्तीय असंतुलन, हमारी आर्थिक प्रक्रिया के मुख्य पहलू बन चुके हैं। सांस्कृतिक तौर पर, हमारे व्यवहार के मानदंडों में अशिष्टता बढ़ गई है - यानि हमारे जीवन के हर क्षेत्र में, अपराध का बढ़ना, धोखाधड़ी, दोगलापन और हिंसा से जाहिर है।

(4) सुरक्षा और विदेश मामलों में क्षेत्रीय महाशक्तिवाद हमारा मुख्य सारतत्व है, जिसमें शांति की राजनीति के बजाए बन्दूक की राजनीति प्राथमिकता पर है। क्षेत्रीय महाशक्तिवाद के रास्ते पर चल कर हम दो पड़ोसियों-पाकिस्तान व चीन से चार युद्ध कर चुके हैं। शीत युद्ध के अन्त के बाद जब वैश्विक हथियारों के खर्च में सन् 1987 से आज तक प्रतिवर्ष 4 बिलीयन डालर की कमी होती रही है और इस दौर में विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में हथियार खर्च में कटौती की गई है जबकि हमारा देश उसी

पुराने सैनिक मार्ग पर चल रहा है। विश्व के विकासशील देशों में सबसे अधिक हथियारों का आयात करने वाला देश भारत ही है।

(5) पर्यावरणीय तौर पर भारत दुनिया का अत्यधिक प्रदूषित देश बन चुका है। जिसमें जल का प्रदूषण बढ़ रहा है और हवा प्रदूषित हो चुकी है। भारत में पानी की उपलब्धता घट चुकी है, कृषि भूमि का 40 प्रतिशत भाग बंजर हो चुका है तथा इसका आधा जंगली क्षेत्र साफ हो चुका है।

(6) इसका सकारात्मक पक्ष हम मान सकते हैं कि यहाँ आम चुनाव (धन और बाहुबल आधरित) नियमित हो रहे हैं; खाद्य उत्पादन में बढोतरी (चाहे बहुत कम दर से) हो रही है; सार्वजनिक क्षेत्र (घाटा खानेवाला) का निर्माण किया है; संरचनात्मक ढाँचे में सुधार (चाहे मात्रा में कम और गुण में घटिया ही सही) किया है।

(7) स्पष्टतया, उपरोक्त चित्रित तस्वीर हमारे सामने कमियां अधिक और विकास कम का पक्का चिट्ठा पेश करता है।

II. भारतीय अल्पसंख्यकों की स्थिति

(8) अनुभव दर्शाता है कि राजनीतिक तौर पर एक अधिक भ्रष्ट और हिंसक समाज का बनना; आर्थिकता में एक अधिक अकुशल और असमानता वाला समाज बनना तथा सांस्कृतिक तौर पर अधिक अनैतिक तथा विदेश नीति में अन्धराष्ट्रवादी बनने वाला समाज, स्वाभाविकतया अल्पसंख्यकों और कमजोर तबकों — यानि, महिलाओं, बच्चों, गरीबों और वंचितों के प्रति और अधिक उत्पीड़क और दमनकारी बन जाता है।

(9) तर्कसंगत तौर पर, भारत में अल्पसंख्यकों की स्थिति बहुत पीड़ादायक है। जबकि भारतीय संविधान और 1947 के बाद आने वाली प्रत्येक सरकार ने इनके भाग्य को सुधारने का नारा प्रतिध्वनित किया है तथा इन्होंने एक दन्तविहीन राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग का गठन कर रखा है, परन्तु किसी भी दृष्टि से देखें तो अल्पसंख्यकों के हालात निरन्तर शोचनीय बने हुए हैं।

(10) जहाँ तक व्यक्तिगत सुरक्षा का मामला है, इनके सिर पर हमेशा साम्प्रदायिक हिंसा की चुनौती बनी रहती है। सन् 1947 के बाद देश में बढ़ते साम्प्रदायिक दंगों की संख्या कुल मिलाकर 22000 से अधिक है जिसने सभी पुराने रिकार्ड तोड़ दिये हैं।

(11) अल्पसंख्यकों के विकास के मामले में अधिकारिक आँकड़े उपलब्ध नहीं है परन्तु गैर सरकारी अनुमानों (खासकर मुसलमानों के संबंध में) के अनुसार चाहे ग्रामीण क्षेत्र के संसाधनों का सवाल हो, चाहे ग्रामीण और शहरी स्वरोजगार हो, या महिला शिक्षा और रोजगार, आम शिक्षा के स्तर पर, साक्षरता, स्वास्थ्य सुविधाएँ,

जीवन स्तर, शिशु-पालन, गरीबी का विस्तार, इत्यादि सभी क्षेत्रों में दुसरे समुदायों से काफी पिछड़े हैं। राजकीय सेवाओं में अल्पसंख्यकों का हिस्सा 3 प्रतिशत से थोड़ा ऊपर है, मुस्लिमों का प्रतिनिधित्व संवेदनशील विभागों में बहुत ही थोड़ा है, जैसे सेना, पुलिस, टेलीवीजन, आकाशवाणी इत्यादि। हालांकि अल्पसंख्यकों के उच्च वर्ग को यह निरन्तर अच्छे पदों पर समायोजित करते रहे जैसे जाकिर हुसैन, ज्ञानी जैलसिंह, फखरूद्दीन अली अहमद, इत्यादि।

(12) अन्तरआत्मा की स्वतंत्रता के मामले में स्थिति यह है कि अल्पसंख्यक आयोग के मुताबिक टाडा के तहत बंदी कैदियों की संख्या में अल्पसंख्यक बहुतायत में है।

(13) अल्पसंख्यक ग्रुपों की पहचान के मामले में तीन तथ्यों पर गौर किया जाना आवश्यक है।

पहला तथ्य है कि तीन अल्पसंख्यक समूह — कश्मीरी-मुस्लिम, पंजाबी-सिख और नागा तथा अन्य आदिवासी क्रिश्चियन अपनी-अपनी सांस्कृतिक पहचानों को बचाये रखने के लिये हथियार उठाए हुए हैं।

दूसरा तथ्य है कि बाबरी मस्जिद विवाद इतिहास पर देखने से पता चलता है कि - यानि बाबरी मस्जिद का मामला कैसे शुरू हुआ, कैसे यह ठण्डे बस्ते में गया और कैसे मस्जिद का ताला खोला गया और आखिर इसे ध्वस्त कर देना - दर्शाता है कि केन्द्र किस तरह से अल्पसंख्यकों की पहचान के पुराने पड़ चुके ऐतिहासिक चिन्ह के प्रति भी कैसे पूर्वाग्रह से ग्रसित है।

तीसरा तथ्य अमृतसर के स्वर्णमन्दिर पर ब्ल्यूस्टार नाम की सैनिक कार्यवाही करना तथा 1984 के सिख विरोधी दंगें इंगित करते है कि कोई भी अल्पसंख्यक समुदाय अपनी पहचान के किसी भी विचार का दमन कर दिया जायेगा।

III. पंजाब समस्या

(14) भारतीय अल्पसंख्यककों के हालात के अनुसार ही इसने आवश्यक तौर पर उपरोक्त उसूल का अनुसरण करते हुए पंजाब के मुद्दे में भी केन्द्र ने सिख समुदाय के साथ खास तौर पर अन्याय किया है जबकि केन्द्र ने आम तौर पर सभी पंजाबियों के साथ अनुचित व्यवहार करके समस्या को पैदा किया है।

(15) नई दिल्ली के खिलाफ सिखों की शिकायतों (पुरानी और नई) की सूची बहुत लम्बी है और अधिकांश मांगे जायज है उदाहरणतया आजादी के 20 साल बाद पंजाबी राज्य का गठन करना, भारत में अन्य भाषाई राज्यों के गठन के दस साल बाद इसका निर्माण करना; जबकि 1947 से पहले गांधी और नेहरू ने पंजाब के

बहादुर सिखों के लिये विशेष रियायतों के वादे किये थे; भारतीय सेना और अन्य रणनीतिक सरकारी विभागों में सिखों के प्रतिशत में अनुचित कटौती करना; सिख प्रभुत्व के खतरे को दिखाना और पंजाबी सिखों और हिन्दुओं के बीच दरार पैदा करना; पंजाबी हिन्दु को हिन्दी भाषी पेश करके उसमें साम्प्रदायिक पहचान की दिशा देना; पंजाब में निवास कर रहे सिखों और भारत के दुसरे भागों में बसे सिखों के बीच खाई पैदा करते हुए बाहरी सिखों को प्रशासन, सेना और व्यापार के क्षेत्र में कुछ रियायतें देना; पंजाब के सम्बंध में प्रत्येक समझौतो को तोड़ना चाहे वह नदी जल सवाल हो; आनन्दपुर प्रस्ताव को गैर न्यायिक तरीके से रद्द करना जिसमें पंजाब सहित सभी राज्यों को स्वायतता प्रदान करने की मांग थी; स्वर्ण मन्दिर पर ब्ल्यू स्टार सैनिक हमला; पुराने सिख साहित्य को नष्ट करना; पेन्टिंग और कलाओं तथा हजारों मानवीय अमूल्य जीवन की हत्या करना; 1984 के दिल्ली और कुछ अन्य स्थानों पर सिख विरोधी दंगों को उकसाना; इत्यादि-इत्यादि।

(16) कुल मिलाकर पंजाब के सम्बंध में समस्याओं की सूची निम्न है - चण्डीगढ़ का सवाल, नदी जल का सवाल, दूसरे राज्यों के साथ जुड़े पंजाबी इलाके, पंजाब के कृषि और औद्योगिक विकास की अनदेखी, थीनबाँध को बनाने की धीमी चाल, आर्थिक पैकेज देने के वादे में देरी करना, इत्यादि।

(17) उपरोक्त वर्णित अन्याय और अनुचित व्यवहार ने ही वह आधार तैयार किया जिससे खालिस्तानी खाड़कूपन का उदय हुआ परन्तु इसकी अपनी अमानवीय राजनीति और व्यवहार से भारी धक्का लगा। हालांकि पंजाब में बन्दूक से निकली शान्ति अभी चल रही है परन्तु इसका मूल कारण कायम रहने से खालीस्तानी खाड़कूपन के बने रहने के हालातों को समाप्त नहीं किया गया।

(18) पंजाब समस्या का एक न्यायपूर्ण और उचित हल ऐसे नये एजेण्डे की माँग करता है जिससे सिख समुदाय की विशिष्ठता सुनिश्चित बनाकर तथा हिन्दू और सिखों के बीच भाईचारे के रिश्तों को मजबूत करके भारत और पंजाब के विकास का रास्ता खोला जाय।

(19) सिख पहचान के लिये : (क) भारतीय संघ के भीतर पंजाब को जम्मू-कश्मीर की तरह का विशेष अधिकार प्रदान किया जाय, (ख) सिख धर्म को एक स्वतन्त्र विश्वास या धर्म की मान्यता देना, (ग) पंजाब और पड़ौसी राज्यों के बीच सीमा विवादों को हल करना, (घ) सिख धार्मिक संस्थाओं और अल्पसंख्यक आयोग की सिफारिशों के आधार पर गुरुद्वारा प्रबंधक अधिनियम को संशोधित करना, (ड़) सिख खाड़कूपन के संदर्भ में गिरफ्तार किए गये सभी लोगों के लिये आम माफी की घोषणा की जाय, (च) 1984 के सिख विरोधी दंगों में विभिन्न

आयोगों द्वारा दोषी पाये गये लोगों पर अभियोग चलाया जाये।

(20) हिन्दू सिख भाईचारा : (क) सभी पंजाबियों की मातृभाषा पंजाबी होना, की मान्यता दी जाय, (ख) हिन्दुओं द्वारा भारतीय संघ के भीतर पंजाब को विशेष दर्जा दिये जाने की मांग का समर्थन देना।

(21) पंजाब के विकास के लिये : पंजाब की सभी महत्वपूर्ण और तात्कालिक समस्याओं जैसे की नदी जल, चण्डीगढ़, थीन डेम, कृषि और औद्योगिक विकास, घोषित आर्थिक पैकेज, और इन सबसे उपर मानवाधिकारों की रक्षा कानून के राज को सुनिश्चित करके, इन सबका उचित हल निकालना।

(22) दिखावटी तौर पर पंजाब में सभी तरह की शान्ति नजर आती है परन्तु धरातल के नीचे बुरे बर्ताव का व्यवहार का दर्द मौजूद है ऐसा इसलिये है कि पंजाब में पुरानी बड़ी गलतियां की गई है जिनको सही करना बाकी है। जबकि नई गलतियां भी लगातार बढ़ रही है जो केन्द्र के पाप के घड़े को भर रही है।

IV. मानव अधिकारों का सवाल

(23) गत पच्चास वर्षों का राष्ट्रीय रेकार्ड बहुत कमजोर है जिससे अल्पसंख्यक समुदाय में असन्तोष बढ़ा है, पंजाब में अन्याय के आभास का बने रहना, मानव अधिकारों का पूरे देश में तथा खास करके पंजाब में सुधार नहीं हो सका बल्कि और खराब हुआ है। पूरे देश के स्तर पर हजारों राजनैतिक कैदी जिसमें अन्तरआत्मा के केदी जैलों में सड़ रहे हैं, कैदियों को आमतौर पर यातनाऐं दी जाती हैं और उनमें से कुछ को पुलिस हिरासत में यातना देकर मार दिया जाता हैं, उन्हें पीटा जाता है, ठोकरें मारी जाती हैं, आँखें बांधी जाती है, बलात्कार किया जाता है, बिजली के झटके दिये जाते है और सिगरेट से जलाना, इत्यादि आम यातना के मानदण्ड चल रहे हैं। हिरासत वाले केदियों को बेइज्जत किया जाता है, भयभीत किया जाता है और उनको तब्लीस करने वालों को प्राय: पैसे बार-बार देने पड़ते हैं। अगर प्रताड़ित व्यक्ति या उनके कोई रिश्तेदार द्वारा कानून लागू करने वाले अधिकारी के खिलाफ मानवाधिकारों की अवहेलना की शिकायत की जाती है तो पुलिस आम तौर पर ऐसी शिकायत दर्ज करने से मना कर देती है और कभी-कभी तो शिकायत कर्ता को दण्डित करती है या धमकाती है और उन्हें किसी झूठे कैसों में फँसाने की कोशिश करती है। अगर कोर्ट पुलिस को कैस दर्ज करने का आदेश देती है तो पुलिस उसमें बाधाएँ खड़ी करती है और कार्यवाही में देरी करती है।

(24) जेके, पंजाब और उत्तर-पूर्व में मानवाधिकारों के हनन का विस्तार चौकाने वाला है। इन राज्यों में मानवाधिकारों की गंभीर अवहेलना होती है। यहाँ तक कि कई बार राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने स्वीकार किया है कि भारत में (खास

करके कश्मीर, पंजाब और उत्तर-पूर्वी राज्यों में) मानवाधिकारों की गंभीर अवहेलना होती है।

(25) सम्पूर्ण देश में पुलिस हिरासत में हुई मौतों, बलात्कार, यातना के केसों पर राष्ट्रीय अपराध रेकार्ड ब्यूरों प्रतिवर्ष इनकी संख्या का ब्यौरा जारी करता है। राष्ट्रीय पुलिस आयोग (1977) ने पुलिस यातनाओं, हिरासत में मौत के मामलों में विश्लेषण किया जिसमें पाया कि आठ राज्यों में न्यायिक 17 जांचों में से 11 जांचों में पुलिस को दोषी पाया गया और अन्य एजेन्सियों द्वारा की गई जांच में 430 में से 23 में दोष साबित हुआ। आयोग ने यह सिफारिश की कि हिरासत में मारे गये सभी केस में न्यायिक जांच को आदेशात्मक बनाया जाय। परन्तु इस सिफारिश को सरकार ने अभी तक स्वीकार नहीं किया।

(26) उच्चतम न्यायालय प्राय: मानव अधिकारों के हनन के मामले में पुलिस पर आरोप लगाती है। फरवरी 1994 में उच्चतम न्यायालय ने महसूस किया, यह न्यायालय इस देश को पक्के तौर पर दिखाना चाहता है कि किस तरह की पुलिस बल के लिये जनता टेक्स दे रही है। कुछ ही साल पहले इलाहबाद उच्च न्यायालय के एक जज द्वारा टिप्पणी की गयी कि इस देश में भारतीय पुलिस अपराधियों की सबसे बड़ी संगठित गेंग हैं।

(27) एमनेस्टी इन्टरनेशनल और ह्युमन राईट्स वाच प्रतिवर्ष भारत (विशेषकर जेके, पंजाब, उत्तरी पूर्वी राज्यों) में मानवाधिकार हनन और यातनाओं के बारे में प्रति वर्ष रिपोर्ट जारी करती है।

(28) हमारे सामाजिक अपराधीकरण का स्तर इस तथ्य से देखा जा सकता है कि आज हमारे देश में कोई भी वीआईपी बिना पुलिस सुरक्षा के चल नहीं सकता।

V. राजकीय आतंकवाद का सवाल

(29) पंजाब में एसएसपी सिन्धु की आत्महत्या के बाद पुलिस मिडिया और राजनैतिक कुछ लोगों ने मुद्दा उठाया कि खाड़कूओं से लड़ने के लिये तैनात किये गये सुरक्षा बलों को कुछ भी करने की छुट दी जाय और खाड़कूवाद को रोकने के लिये उनके द्वारा अदा की गई भूमिका के लिये राष्ट्रीय हीरों के तौर पर सम्मानित किया जाना चाहिये और आतंकवादी गतिविधियों को रोकने में लगे सुरक्षाबलों को किसी भी तरह की कार्यवाही करने की छूट और उन पर कानूनी अभियोग नहीं लगाया जाना चाहिए। यह मांग पुरानी सड़ी-गली फासिस्ट राग है जो पूरे विश्व में राजकीय आतंकवाद का आह्वान है।

(30) राजकीय आतंकवाद के तहत सरकार बिना किसी कानूनी ढांचे के शासन करना चाहती है। सवाल खड़ा होता है कि आतंकवादी रास्ते पर चलने से पहले

सरकार राजकीय आतंकवाद विरोधी कानूनों को रद्द क्यों नही कर देती। अगर मूलभूत कानून यानि संविधान इसके सुरक्षाबलों को किसी भी हालत में जनता के अधिकारों को छिनने की इजाजत नहीं देती है तो सुरक्षा बल कानून के मुताबिक व्यवहार क्यों नहीं करते। मनुष्य जाति प्राचीन समय में युद्ध लड़ने के भी नियम बनाती रही है। अगर युद्ध के दौरान भी नियमों की पालना की जा सकती है तो खाड़कूपन से लड़ने के लिये कानूनी प्रावधानों की अवहेलना क्यों की जाती है।

(31) इतिहास दर्शाता है कि मुद्दों में भी जीत उन्हीं की होती रही है जिन्होंने न केवल न्याय के लिये ही युद्ध किया बल्कि न्यायपूर्ण तरिके से ही युद्ध का संचालन किया। स्पष्टतया, हर तरह की कार्यवाही (युद्ध सहित) में न्यायिककारण के साथ-साथ न्यायिक संचालन, दोनों अतिआवश्यक तत्व है। खालिस्तानी खाड़कूओं की हार का कारण उनके गैर न्यायिक साध्य और अनुचित संचालन है ना कि पंजाब पुलिस की गैर कानूनी कार्यवाहियां। पुलिस की गैर कानूनी कार्यवाहियां लोगों का केवल नुकसान ही करती है।

(32) आज हमें इस बात की आवश्यकता है कि शान्ति कायम करने वाले सभी तरह के बलों पर उचित निगरानी की जरूरत है। इस मांग के अनुसार सुरक्षा बलों के खिलाफ जनता की शिकायतों के लिये एक स्वतन्त्र पुन:निरीक्षण तन्त्र की स्थापना की जाय। इसके लिये राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को खोजबीन के सभी अधिकार दिये जाने चाहिये चाहे वह अशान्त क्षेत्र हो या सामान्य क्षेत्र हों। पंजाब पुलिस द्वारा की गयी सभी ज्यादतियों को उच्चतम न्यायालय की सिफारिश पर बनाये गये स्वतन्त्र न्यायिक आयोग को सौंपा जाय।

(33) मूलरूप से सम्पूर्ण कानूनी व्यवस्था को सुधारने की आवयकता है तथा कानून के राज के पेमानों के भीतर ही कानून लागू करने वाली एजेंसियों की व्यवहार पद्धती को बदलना होगा। इसके लिये एक संवैधानिक आयोग नियुक्त करने की आवश्यकता है। अगर यह समय रहते नहीं किया गया तो संकटग्रस्त भारतीय कानूनी व्यवस्था बर्बादी की तरफ बढेंगी। यह भी आवश्यक है कि यातना के खिलाफ 1984 यूएन समझौते पर भारत जल्दी हस्ताक्षर करे, कानून को लागू करने वाले अधिकारियों पर 1979 की यूएन आचरण संहिता लागू की जाय। 1966 के यूएन स्वैच्छिक प्रोटोकॉल के तहत यूएन मानवाधिकार आयोग इस संधि को अभिपुष्ट करने वाले देश के नागरिक की किसी भी सूचना पर संज्ञान ले सके।

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर समस्या

नई सामाजिक वास्तविकताएँ और पिछले अनुभव नई पहलकदमियों की माँग करते हैं

I. एक दुखदायी परिदृश्य

(1) भारत-पाक शान्ति प्रक्रिया की शुरूआत अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के तनाव में कमी के बावजूद अभी तक कश्मीरियों के साथ हो रही हिरासत में मौतों, बलात्कारों, और मानवाधिकारों के हनन की निरन्तर घटनाऐं इनके दिन प्रतिदिन के जीवन में दुखों का अम्बार खड़ा कर रही है उनमें कमी के कोई संकेत नहीं है। यह नजर आता है कि राजकीय आतंकवाद घाटी में प्रदर्शन का क्षेत्र बनी हुई है जहां किसी तरफ से अवरोध नहीं है। जम्मू रिजन के कुछ इलाके (जैसे डोडा, उधमपुर, राजोरी और पुछ जिले) थोड़ी कम दुखदायी प्रक्रिया के साथ ऐसी स्थिति का सामना कर रहे है। जम्मू क्षेत्र का बाकि बचा भाग भी सुरक्षा बलों के साथ-साथ खाड़कुओं (यदि दोनों) से भयभीत स्थिति में रहते हैं।

(2) जेके में कानूनी अव्यवस्था की स्थिति इस तथ्य में देखी जा सकती है कि, यद्यपि सरकारी आंकड़ों के अनुसार खाड़कू गतिविधियों के लिये पिछले सात सालों (जनवरी 1990 से अप्रेल 1997) में तीन हजार दो सौ चमालीस से उपर गिरफ्तारियाँ दिखाई गई है जबकि इनमें से किसी एक भी दोष सिद्ध नहीं हुआ है।

(3) यह दुखदायी हालात कब तक जारी रहेंगे? इस सवाल का जवाब विभिन्न ताकतों (वैश्विक, उपमहाद्वीपीय तथा स्थानीय) के आपसी खेलों पर निर्भर करता है। विश्वभर में चल रहे विभिन्न जनवादी आन्दोलनों का अनुभव दर्शाता है कि जेके के लोग अगर तीन बातें एक उचित और अति सावधानीपूर्वक अमल करे तो इन ताकतों के खेल को अपने पक्ष में मोड़ सकते हैं ये तीन बाते हैं, (क) नई सामाजिक वास्तविकताओं की पकड़ करना, (ख) पिछली गलतियों से उचित सबक लेना और (ग) नई सामाजिक वास्तविकताओं और पिछले अनुभव के आधार पर हकीकी कार्य योजना तैयार करना। आवश्यकता इसे वास्तविकता में बदलने की है।

II. नई सामाजिक वास्तविकताएँ

(4) नई सामाजिक वास्तविकताओं की समस्याओं पर नजरशानी निम्न तरीके से की जा सकती है।

(5) सबसे पहले अन्तरनिर्भर दुनिया की वैश्विक आर्थिक वास्तविकता सभी देशों को एक दो तरफा रास्ते का अनुसरण करना आवश्यक बना देती है। यह

आवश्यकता है कि एक तरफ प्रत्येक राष्ट्रीय आर्थिकता को वैश्विक बाजार से जोड़ा जाए और दूसरी तरफ क्षेत्रिय आर्थिक सहयोग और समांकलन के माध्यम से क्षेत्रिय बाजार का निर्माण किया जाय। ये अति आवश्यक कदम शान्ति की राजनीति की मांग करते हैं ताकि आर्थिक विकास की इस पूर्व शर्त को पूरा किया जा सके। ये बन्दूक की राजनीति और टकराववादी रास्ते के खिलाफ है जो क्षेत्रिय आर्थिक प्रक्रिया के साथ-साथ वैश्विक विकास के रास्ते में रोड़ा बनती है।

(6) आगे, वैश्विक राजनीतिक वास्तविकता की माँग है कि सभी विवादों का शांतिपूर्ण हल किया जाए, चाहे विवाद देशों के बीच हों या देशों के अन्दर हों। यही कारण है कि समस्त दुनियां (ओआईसी देशों सहित) माँग करती है कि जेके समस्या का भारत-पाक के बीच द्विपक्षीय हल निकाला जाए जिसमें जेके के लोगों को शामिल किया जाय। इनमें से कोई भी देश (अत्यधिक शक्तिशाली देश अमेरिका भी) भारत या पाकिस्तान में से किसी को भी नाराज नहीं करना चाहता है और इस सवाल पर कोई भी नई पहलकदमी लेने को तैयार नहीं होता है। इनमें से कोई भी जेके को भारत का अभिन्न अंग मानने वाले नई दिल्ली के सिद्धान्त को समर्थन नहीं देता है तथा ना ही जेके को इस्लामिक मुद्दा मानने वाले पाकिस्तानी ब्रांड अथवा जेके के लिए कुछ ग्रुपों की आत्मनिर्णय की माँग को समर्थन मिलता है। जेके की सीमा से लगते देश रूस, चीन, ईरान और पाकिस्तान स्वतन्त्र कश्मीर के विचार का खुला विरोध इस दृष्टि से करते हैं कि इससे यह क्षेत्र अमेरिका के प्रभाव क्षेत्र में आ सकता है। 1996 के दौरान जेके सवाल को यूएन के एजेन्डे से हटाना और बाद में पाकिस्तान के जोर देने पर इसे अटकाना साबित करता है कि दुनिया इस मामले में दखलन्दाजी नहीं करना चाहती है और ख्वाहिश रखती है कि संबंधित पक्ष ही इस मामले को हल करें।

(7) पुनः, हालिया उपमहाद्वीपीय वास्तविकता है कि भारत व पाकिस्तान दोनों में बुद्धिजीवी, विद्वान, मानवाधिकार कार्यकर्त्ता, पर्यावरणवादी तथा उद्यमी सहित अधिकतर लोग दोनों देशों के बीच आपसी सहयोग और शांति के इच्छुक हैं। जैसे ही भारत-पाक शांति प्रक्रिया की शुरूआत होगी जिसका उद्देश्य दोनों देशों के बीच संबंध सामान्य करना और अन्ततः दक्षिण एशिया में तनाव को कम करते हुए शांति और विकास की वैश्विक प्रक्रिया को मजबूत करना होगा। हो सकता है इसका तत्काल चमत्कारिक असर नजर नहीं आये परन्तु इसकी शुरूआत होना ही आने वाले समय में सकारात्मक परिणाम की तरफ ले जायेगा।

(8) और अधिक, हालिया जेके की वास्तविकता यह है कि घाटी में लोगों की मानसिकता में बदलाव देखने लायक है। पहले उनका विश्वास था कि जीत नजदीक है। परन्तु अब वे सोचते है कि यह तात्कालिक एजेण्डा नहीं है और हमें कुछ लम्बे

समय तक संघर्ष करना पड़ेगा। अतः वे कुछ श्वास लेना चाहते हैं। हालांकि उनमें भारत की मुख्य राष्ट्रीयधारा से अलगाव में कोई कमी नहीं आई है और उनका नई दिल्ली के प्रति गुस्सा कम नहीं हुआ है (जबकि पाकिस्तान उनकी पसंद नहीं है)। अब वे संघर्ष के लिए ऐसे शांतिपूर्ण मंच या मोर्चे को पसंद करेंगे जिसमें वे सीधे भाग ले सकें।

(9) आगे, हालिया अन्य जेके वास्तविकता है कि जम्मू और लद्दाख क्षेत्र में अधिक से अधिक लोग इस विचार के इर्द-गिर्द घूम रहे हैं कि राज्य के सभी नस्लीय समुदायों की आकांक्षाओं और आशाओं का ध्यान रखते हुए जम्मू-कश्मीर समस्या का सौहार्दपूर्ण हल निकले।

(10) और आगे, नेशनल कान्फ्रेन्स सरकार प्रतिदिन अपनी स्थिति को बदलती है जिसमें घाटी में अब यह अपनी जमीन खो चुकी है और अब यह जम्मू तथा अन्य क्षेत्रों में भी अपना समर्थन खो रही है। चुनावों के समय (मई 1996), इसने बाकायदा घोषणा की कि वह चुनाव प्रक्रिया में तभी भाग लेगी जब नई दिल्ली की सरकार जेके स्वायतता के सवाल को हल कर देगी, परन्तु अचानक सितम्बर 1996 के विधानसभा चुनाव में कूद गई। पहले इसने जेके के लिये 1953 से पहले की स्थिति पुनः कायम करने की मांग की थी तब इसने घोषणा की कि अब हम 1947 से शुरूआत करेंगे और जेके और केन्द्र के बीच संवैधानिक सम्बन्धों के सम्पूर्ण खाके की जांच करेंगे और केन्द्र सरकार से उसके उपर बात करने के फार्मुले को एक साल के भीतर तैयार कर लेंगे क्या यह अपनी इन मांगों के प्रति गम्भीर रहा? क्या इसने विधानसभा की दो तिहाई बहुमत के आधार पर नई दिल्ली पर कभी दबाव बनाया? कभी-कभी इसने घोषणा की कि भारत और पाकिस्तान वास्तविक नियन्त्रण रेखा को अन्तर्राष्ट्रीय नियन्त्रण रेखा को स्वीकार करके जेके समस्या का समाधान करें। परन्तु दूसरे ही वक्त इसने मांग की कि भारत पाकिस्तान पर दबाव डाले कि वह अपने नियन्त्रण वाले जेके को खाली करें। एक दिन यह सुरक्षा बलों की उनकी ज्यादतियों के लिये आलोचना करता है परन्तु दूसरे ही दिन उनकी मानवाधिकार के सच्चे रक्षक के तौर पर प्रशंसा करता है।

(11) और आगे, एक हालिया सामाजिक वास्तविकता है कि आजाद कश्मीर के लोग पाकिस्तान के प्रभाव से बाहर आ रहे हैं और मांग कर रहे हैं कि सम्पूर्ण जेके राज्य का भविष्य का दर्जा एक न्यायपूर्ण हल से तय किया जाय।

III. भूतकाल के सबक

(12) भूतकाल से सबक लेने के सवाल पर संक्षेप में नीचे दर्ज कर रहे हैं।

(13) प्रथमतः पिछली आधी शताब्दी का अनुभव भारतीय बहुसंख्यक राष्ट्रवाद

और पाकिस्तान के ईस्लामिक राष्ट्रवाद कमजोर किस्म के राष्ट्रवाद सिद्ध हो चुके हैं। ये कमजोर राष्ट्रवाद प्रत्येक क्षेत्र - राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं विदेश सह सुरक्षा में इतने कमजोर रहे हैं कि कुल मिलाकर ये दोनों अपने-अपने राष्ट्रों की एकता को भी व्यावहारिक नहीं बना सके।

भारतीय ब्राण्ड भारतीय लोगों के विभिन्न भागों के बीच सद्भावना का वातावरण पैदा करने में असफल रहा है। इसने साम्प्रदायिकता और जातिवाद को पैदा किया, भारत के सामाजिक सम्बंधों को छिन्न-भिन्न किया, एक समुदाय को दूसरे समुदाय के सामने खड़ा किया और एक जाति को दूसरी जाति के खिलाफ उकसाया है। इसके कारण सभी अल्पसंख्यक राष्ट्रीय मुख्य धारा से अलगाव में पड़ गये। कश्मीर, उत्तरी पूर्वी राज्यों तथा पंजाब में चल रहे सशस्त्र संघर्ष भारतीय राष्ट्र से अल्पसंख्यकों के अलगाव का ही इजहार है, पाकिस्तानी इस्लामिक राष्ट्रवाद पाकिस्तान की एकता को कायम नहीं रख सका, पूर्वी पाकिस्तान (बांग्लादेश) का पश्चिमी पाकिस्तान से अलग होना दर्शाता है कि पाकिस्तानी इस्लामिक राजनीति देश को एक रखने में ना काफी साबित हुई है। सुन्नीवाद और पंजाबी अन्धराष्ट्रवाद को अपनाते हुए यह न केवल देश का विभाजन कर चुका है बल्कि ये खुद मुस्लिम समुदाय को भी टुकड़े-टुकड़े कर चुका है - उदाहरणतया शिया और सुन्नियों के बीच सशस्त्र झगड़े, मुहाजिर और गैर मुहाजिरों के बीच दंगे, अहमदिया समुदाय को ईस्लामिक दायरे से बाहर कर देना, पंजाबी और गैर पंजाबी समुदायों के बीच भेद करना, इत्यादि। पाकिस्तान के ईस्लामिक राष्ट्रवाद की कार्य प्रणाली ने सिद्ध किया है कि धर्म की तुलना में नस्लीयता अधिक शक्तिशाली है।

(14) द्वितीयत: पच्चास साल पुराना बन्दूक की राजनीति का व्यवहार दर्शाता है कि यह राजनीति जेके समस्या का हल नहीं कर सकती। तीन भारत-पाक युद्धों का अनुभव, निरन्तर भारत-पाक शीत युद्ध, भारत की बड़ी सैनिक ताकत और कश्मीर में चल रहा खाड़कूपन, इनकी गैर कारगुजारी और अव्यावहारिकता के स्पष्ट उदाहरण है। इसके अलावा, बन्दूक की राजनीति ने हमेशा ही गैर जनवाद को जन्म दिया है, जिसने कश्मीर के लोगों (खास करके कश्मीरियों) का निरन्तर दमन और उत्पीड़न किया, चुनावों में फर्जीवाड़ा और घाटी में चालाकी और धोखे से आज्ञाकारी व्यक्ति को थोपना, लोगों को धन बल से खरीदना, आम जनता को गलत सूचना के माध्यम से धोखा देना, इस राजनीति के मुख्य लक्षण है।

(15) तृतीय भारत-पाक टकराव की राजनीति के 50 साल पुराने अनुभव ने यह साफ कर दिया है कि टकराव की राजनीति ने भारत और पाकिस्तान दोनों से भारी कीमत वसूली है। इन दोनों ने अपने गन्दे दुस्साहस भरे कदमों से संसाधनों की भारी

बरबादी की हैं। दोनों देशों में गरीबी, भूखमरी, अभावग्रस्तता, अनपढ़पन, इत्यादि को हटाने के लिए पूँजी की भारी कमी के बावजूद इन्होंने यह रास्ता पकड़े रखा। यह राजनीति पिछले दशक से सार्क के विकास में सबसे बड़ी बाधा बनी हुई है। किसी भी तरह की गणना करने में हम पाते है कि ऐसी राजनीति ने खोया बहुत अधिक है, पाया कुछ नहीं।

(16) चतुर्थ पच्चास साल पुराने विश्व अनुभव ने बताया है कि भारत और पाकिस्तान की सैनिक आधारित और टकरावावादी राजनीति के कारण अपने-अपने देश के विकास को आधी शताब्दी तक अवरुद्ध रखा। 1945 के बाद जापान और जर्मनी के गैर सैनिक राष्ट्रीय मॉडलों ने दिखाया है कि दूसरे महायुद्ध में बर्बाद और अस्त-व्यस्त आर्थिकता के बावजूद उन्होंने नई नीति से दोनों देशों को अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक महाशक्तियों में बदल दिया है और इसी तरह राष्ट्रीय विकास के गैर टकरावावादी रास्ते को अखतियार करते हुए पूर्वी और दक्षिणी पूर्वी ऐशियाई देश विश्व आर्थिक वृद्धि के लिए ये उभरते हुए आर्थिक इंजिन साबित हुए।

(17) पाँचवा उपनिवेशिक काल के बाद का अनुभव दिखाता है कि कोई कितना भी ताकतवर देश हो वह किसी क्षेत्र को लम्बे समय तक ताकत के बल पर कब्जा रखने की आर्थिक कीमत चुकाने की क्षमता नहीं रख सकता। और ना ही विश्व के लोगों की राय के खिलाफ कोई भी ताकत लम्बे समय तक कब्जा नहीं रख सकती है।

(18) छठा: जेके समस्या का पच्चास साल पुराना इतिहास यह साफ करता है कि इस विवाद में शामिल तीनों पक्ष अपनी-अपनी शर्तों पर जेके समस्या का हल नहीं करवा सकते।

(19) सातवां जम्मू कश्मीर की स्वायतता के पच्चास साल पुराने इतिहास से साफ देखा जा सकता है कि इस स्वायतता के सभी नमूने— यानि 1953 के पहले की अधिकतम स्वायत्तता तथा 1975 के बाद की क्षयग्रस्त स्वायत्तता एक के बाद दूसरा संकट खड़ी करती रही है और कोई परिणाम हासिल नहीं कर सकी, चाहे भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बंधों का सवाल हो या नई दिल्ली स्वायत्तता समर्थक नेशनल कान्फ्रेंस का सवाल हो या नई दिल्ली और घाटी में भारत विरोधी ताकतों के सम्बन्धों का सवाल हो असफल रहे हैं।

(20) आठवाँ, द्विपक्षीय समझौते का 50 साल पुराना लेखा-जोखा साफ करता है कि ऐसे सभी समझौते - चाहे वह भारत-पाकिस्तान के बीच 1947 का युद्ध विराम सहमति हो, 1965 की ताशकंद संधि हो या 1972 का शिमला समझौता हो अथवा नई दिल्ली और श्रीनगर के बीच के द्विपक्षीय समझौते (यानि, 1952 का

नेहरू-शेख समझौता; 1954 का संवैधानिक अनुपयोग अध्योदश; 1975 की इन्दिरा-शेख घोषणा, 1986 का राजीव-फारूख समझौता इत्यादि) अव्यवहारिक साबित हुए हैं।

(21) नवम्, जेके समस्या की 50 साल पुरानी प्रक्रिया विशद रूप से इंगित करती है कि जम्मू-कश्मीर का सवाल एक अनिर्णित मुद्दा रहा है और अभी भी अनसुलझा है। इसके विभिन्न वृतान्त (या व्याख्याएँ) कुछ भी रहे हों परन्तु इसकी विवादित प्रकृति को भारत और पाकिस्तान सहित लगभग सभी देशों ने स्वीकार किया है। भारत 1972 के शिमला समझौते के मुताबिक इसे द्विपक्षीय मसला करार देता है जबकि पाकिस्तान इसे यूएन प्रस्तावों के आधार पर अर्न्तराष्ट्रीय झगड़े के रूप में परिभाषित करता है, परन्तु दोनों की व्याख्या इसके विवादग्रस्त चरित्र की द्योतक हैं।

IV. नई पहलकदमियाँ

(22) आखिरकार इस सवाल पर एक हकीकी कार्य योजना का खाका संक्षेप में निम्न हो सकता है -

(23) यह पहले से ही साफ है कि पुराने सबक और नई सामाजिक वास्तविकताएँ (दोनों ही) माँग करती है कि जेके गुत्थी को सुलझाने का रास्ता टकराव व युद्ध की राजनीति को रद्द करने और शान्ति की राजनीति अख्तियार करने में ही निहित है।

(24) निश्चित ही शांति की राजनीति की पहली प्राथमिकता दो पक्षीय उद्देश्य - यानि, एक तरफ जेके समस्या का समाधान ऐसे तरीके से किया जाए जिससे भारत-पाक टकराव की बजाए उन्हें दुश्मन से दोस्त बनाया जा सके और दूसरी तरफ आमतौर पर जेके के लोगों की आकांक्षाओं और उद्देश्यों की पूर्ति की जाए तथा जेके के प्रत्येक नस्ली समुदाय को संतुष्ट करने का उद्देश्य हासिल किया जाए।

(25) निस्संदेह, उपरोक्त उद्देश्य तीनों संबंधित पक्षों (यानि, भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों) के हितों में मेल बैठाने वाले हल के माध्यम से हासिल किया जा सकता है और वहीं हल इनको मंजूर होगा। सभी एक पक्षीय हल — जैसे जेके के लोगों को भारत या पाकिस्तान में से किसी एक के साथ विलय या आत्मनिर्णय का अधिकार देना (एक तरह से जेके के लोगों को विटो देना), जम्मू-कश्मीर राज्य को यूएन के ट्रस्टीशिप में रखना, अथवा किसी तरह का द्विपक्षीय हल, जैसे जेके राज्य का वर्तमान वास्तविक नियन्त्रण रेखा के आधार पर विभाजन, या किसी भी तरह का नई दिल्ली और जेके के बीच अथवा पाकिस्तान और जेके के बीच का समाधान—भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों के बीच दोस्ती के संबंध नहीं बना सकेगा।

(26) साफ तौर पर, एक त्रिपक्षीय प्रक्रिया का मार्ग, तीनों संबंधित पक्षों के बीच बातचीत और समझौतों का रास्ता ही है।

(27-A) उपरोक्त उद्देश्य और मार्ग के अनुरूप यह आवश्यक है कि एक ऐसा राजनीतिक संगठन खड़ा किया जाए, जिस पर राज्य के विभिन्न नस्ली समुदाय के लोग विश्वास कर सकें कि यह संगठन हमें इस गुत्थी से बाहर लाने की क्षमता रखता है।

(27-B) इस तरह का संगठन संघीय एजेण्डे पर आधारित होना चाहिए जो एक तरफ विभिन्न क्षेत्रों की आकांक्षाओं और उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए उनमें से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायतता, जम्मू-कश्मीर राज्य के संघीय ढाँचे के भीतर प्रदान करने का समर्थक हो तो दूसरी तरफ जेके राज्य की सुरक्षा, विदेश मामले और मुद्रा को या तो भारत-पाक के संयुक्त नियन्त्रण में अथवा सार्क की देखरेख में रखने को तैयार हो।

(27-C) इस संघीय किस्म के संगठन को प्रारम्भ से ही एक विस्तृत संभव मोर्चे (जैसे त्रिपक्षीय मोर्चा या भारत-पाक शान्ति प्रक्रिया मंच या जेके समस्या के शांतिपूर्ण समाधान के लिए प्लेटफार्म, इत्यादि) के रूप में गठित किया जाए। इस मंच में जेके समस्या को त्रिपक्षीय समझने वाले सभी लोगों व संगठनों को शामिल किया जाना चाहिए। जेके समस्या को भारत-पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय मसला समझने वाले तथा दोनों के बीच शांतिपूर्ण तरीके से हल निकालने के समर्थक तत्वों को भी मंच में शामिल किया जाए। इस मोर्चे को किसी एक या दूसरे ग्रुप को आधार बनाकर गठित नहीं किया जा सकता है।

(27-D) केवल एक जन आधारित व्यापक पक्ष, जिसका प्रभाव सभी क्षेत्रों में हो, उसे ही जेके समस्या में तीसरे पक्ष का स्थान दिया जाए और किसी भी त्रिपक्षीय वार्ता में जेके के लोगों का वह प्रतिनिधित्व करे। इस समय पूरे राज्य में ऐसा लोकप्रिय पक्ष मौजूद नहीं है जो जम्मू-कश्मीर के सभी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व कर सके। निस्संदेह, आल पार्टी हुरियत कान्फ्रेन्स (शब्बीर शाह ग्रुप सहित) राज्य में ताकतवर जन पक्ष है। परन्तु इसका जनाधार मुख्यता घाटी तक सीमित है, जबकि जम्मू और लद्दाख में इसका कम प्रभाव है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि आल पार्टी हुरियत कान्फ्रेंस अपने उद्देश्य यानि जेके के भविष्य की पहचान के दर्जे और इसके अन्दरूनी क्षेत्रीय संरचना के दोनों पहलुओं पर अस्पष्ट है।

(27-E) शुरूआत से ही इस संघीय किस्म के संगठन को प्रत्येक नस्ली क्षेत्र में मौजूद उन लोगों को संगठित करना चाहिए जो इस मसले को विवादित मानते हैं। उसके बाद सभी क्षेत्रों की नस्लीय इकाइयों को एक एकीकृत संगठन (पक्ष) में तब्दील करना चाहिए।

(27-F) इस एकीकृत संगठन के सदस्यों को प्रेरित करने और जन कार्यवाहिओं

में उन्हें शामिल करने के लिए निम्नलिखित पहलकदमियाँ की जानी चाहिए।

(क) इस शांति प्रक्रिया के सभी आवश्यक बिन्दुओं (यानि, उद्देश्य, मार्ग, तरीकाकार, इत्यादि) पर सदस्यों की स्पष्ट राय को विकसित किया जाए। और (ख) इस संगठन को गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों दृष्टि से विकसित किया जाए। प्रत्येक सदस्य के साथ-साथ सामूहिक तौर पर सभी सदस्यों के सामाजिक ज्ञान और चेतना को विकसित करके गुणवत्ता को विकसित किया जाए। जबकि मात्रा बढ़ाने के लिए सारे संगठन की क्षमता को जन कार्य में लगाते हुए नये सदस्यों की भर्ती की जाए।

(28) खाड़कूओं के संबंध में संगठन द्वारा माँग की जानी चाहिए कि नई दिल्ली - खाड़कूओं से बिना शर्त वार्ता की पहलकदमी करे तथा युद्ध विराम के समझौते पर आये। सुरक्षा बलों को बैरकों में वापिस बुलाए इसके साथ ही सैनिक बल विशेष अधिकार अधिनियम को समाप्त करे और बिना मुकम्मल दोषारोपण के आधार पर बन्दी बनाए गए सभी लोगों को रिहा किया जाए। आगे, स्वयं खाड़कूपन छोड़ चुके सभी लोगों (सरकार समर्थक नहीं) को संगठन में लाने की भरसक कोशिश की जाए।

(29) लोगों को शांति-प्रक्रिया के लिए प्रेरित और शामिल करने वाली निम्नलिखित पहलकदमियों के साथ जोड़ा जाए।

राजनीतिक मोर्चे पर —

(क) जेके के विभिन्न नस्लीय समुदायों से संबंधित सभी लोकतान्त्रिक समूहों और व्यक्तियों का सम्मेलन बुलाकर न्यूनतम सहमति के एजेण्डे पर संभव विस्तृत मोर्चे का निर्माण करना।

(ख) जेके समस्या के समाधान पर राज्य में राजनीतिक सहमति पैदा करने के लिए विभिन्न नस्लीय क्षेत्रों में सम्मेलन आयोजित करना।

(ग) भारत, पाकिस्तान और जम्मू के जनवादी तत्वों के ठीक-ठाक प्रतिनिधित्व वाली मीटिंग किसी उचित स्थान (अगर सम्भव हो तो जम्मू या दिल्ली में) पर आयोजित की जाए।

(घ) भारत, पाकिस्तान और सार्क देशों में जनवादी ताकतों के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित करना।

(ड) दुनिया के सभी शांति पसंद और जनवादी ताकतों का समर्थन और हमदर्दी हासिल करना।

(च) और इन सबसे ऊपर जम्मू-कश्मीर समस्या तथा अन्य राजनैतिक मुद्दों पर विभिन्न तरह की जनगतिविधियां करते हुए जनता को इन सभी मुद्दों पर बातचीत

में शामिल करना ताकि लोगों की पुरानी, सत्ता पूजा और स्वार्थी मानसिकता की जगह एक तर्क संगत नजरिये वाली चेतना पैदा हो सके।

आर्थिक मोर्चे पर -

(क) महत्वपूर्ण और तात्कालिक जन मुद्दों पर लोगों को विचार-विमर्श में शामिल करना।

(ख) विभिन्न तरह के जन संगठनों (महिलाओं, विद्यार्थियों, नौजवानों, इत्यादि) और ट्रेड यूनियनों (मजदूरों, किसानों, कर्मचारियों, इत्यादि) को उनकी मांगों तथा जनवादी कार्यों के तरीकाकार के आधार पर संगठित करना।

(ग) आधारभूत आर्थिक मुद्दों के साथ-साथ लोगों के विभिन्न वर्गों की दिन-प्रतिदिन की मांगों की पूर्ति के लिए आंदोलन संगठित करना।

सांस्कृतिक मोर्चे पर -

(क) लोगों को महत्वपूर्ण सांस्कृतिक मुद्दों पर विचार-विमर्श के लिए तैयार करना।

(ख) विभिन्न तरह की मानवीय संस्कृति के विकास को बढ़ावा देना।

(ग) राज्य में प्रत्येक नस्ली संस्कृति को तर्क संगत आधार पर संबंधित करने के लिए संगठित करना।

(3) जम्मू-कश्मीर में शांति का एजेण्डा आज के दिन न केवल जम्मू-कश्मीर के लोगों, भारत और पाकिस्तान के लोगों बल्कि पूरी दुनिया और सार्क देशों के भी हित में हैं।

❋ ❋ ❋

क्षेत्रीय स्वायत्तता

I. एक शान्तिपूर्ण और टकराव रहित हालात का कार्यक्रम

(1) इतिहास का कथन और अनुभव सिद्ध करता है कि "सामाजिक व्यवस्था या एक विकास का मॉडल की वैधानिकता केवल तभी साबित होती है जब इसके प्रादुर्भाव में इस समय के सम्बंधित लोग भागीदार बने। कोई भी सामाजिक परिवर्तन ऊपर से थोपा जाने पर अइच्छुक कभी भी इसे लागू नहीं करते है और जल्दी वह बदलाव काम नहीं आता। 1947 के बाद जेके में सामाजिक व्यवस्थागत अनुभव इस ऐतिहासिक सच्चाई को भी सिद्ध करता है। यह नई दिल्ली और श्रीनगर के बीच पुराने समझौतों—यानि 1952 का नेहरू शेख संधि, 1954 संवैधानिक अनुप्रयोग अध्यादेश, 1975 का इन्दिरा-शेख समझौता, 1986 राजीव-फारूख अनुबंध इत्यादि—की अप्रासंगिकता से स्थिति स्पष्ट होती है। स्वाभाविकतया ये असफलताएँ समझौता करने वाले नेताओं को बहुत से झंझटों में धकेला है और जेके और दोनों देशों के लोगों से भारी कीमत वसूली है।

(2) फिर भी यह नजर आता है कि नई दिल्ली और श्रीनगर को भारी धक्के लगने के बावजूद उपरोक्त जेके के ऐतिहासिक सबकों की निरन्तर अनदेखी करते रहे है और पुन: जेके के विभिन्न क्षेत्रों को स्वायतता प्रदान करने के लिये एजेण्डे को बार-बार दोहराते रहे हैं। ये एक बार फिर इस सवाल को उठाता है कि विद्यमान जमीनी हकीकत के अनुसार क्षेत्रीय स्वायतता का वादा क्या उचित एजेण्डा बनता है।

II

(3) क्षेत्रीय स्वायतता कमेटी की पहली शर्त और उद्देश्य के अनुसार - "लोगों को विकास में सहायता देना, जैसे सभी स्तरों पर लोगों के सशक्तिकरण के लिये संगठन बनाना, राज्य की एकता और संगतता कायम रखना तथा विभिन्न क्षेत्र के लोगों की भागीदारी और साझेदारी को प्रोत्साहित करने के लिये एक सन्तुलित, राजनैतिक, आर्थिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक विकास करना" लोगों से आह्वान किया जाय कि वे इस बारे में अपना-अपना मांग पत्र पेश करें। इसके विपरीत, घाटी, डोडा जिला और उधमपुर के कुछ भाग, राजोरी और पुंछ के इलाकों (जहाँ सेना और खाड़कुओं के बीच मुकाबले में औसतन एक व्यक्ति मारा जाता है, असहाय महिलाओं का सुरक्षा बलों द्वारा बलात्कार किया जाता है, पुलिस हिरासत में लोगों को पीटा जाता है और प्राय: यातना देकर मार दिया जाता है एवं मानवाधिकारों को पूर्णतया नकारा जाता है) की जमीनी वास्तविकता गम्भीर बनी हुई है और बाकी बचे जम्मू डिविजन के हालात (जहां बसों में कई बार बम्ब धमाके होते रहते हैं और हर समय डर का वातावरण बना रहता है।) माँग करते है कि सभी मानव हत्याओं तथा मानवाधिकारों के हनन को रोका

जाय और सम्बंधित सभी पक्षों के बीच शान्ति की प्रक्रिया को शुरू करने के लिये विचार विमर्श किया जाय। कोई भी संवेदनशील व्यक्ति देख सकता है कि स्वायत्तता के सवाल पर नया विवाद खड़ा किया जाय या शान्ति की प्रक्रिया को प्राथमिकता दी जाय।

(4) अगर जेके सरकार जेके के विभिन्न क्षेत्रों को एक उचित स्वायतता देना चाहती है तो उसे तत्काल नई दिल्ली को बन्दूक की राजनीति छोड़ने की सिफारिस की जानी चाहिए और जेके की शान्ति प्रिय ताकतों के साथ-साथ अलगाव में पड़े कश्मीरी लोगों के प्रतिनिधियों से बातचीत की शुरूआत करें।

(5) दूसरे दौर में क्षेत्रीय स्वायत्तता कमेटी लोगों से इस सवाल पर राय लेगी कि क्षेत्र में विद्यमान विभिन्न प्रशासनिक इकाईयों के बीच अधिकारों का विभाजन कैसे हो जबकि भारत-पाक की वास्तविकता—नई दिल्ली और इस्लामाबाद दोनो ही जेके मुद्दे को अपने-अपने राष्ट्रीय तौर पर जीने और मरने का सवाल बनाऐ हुए है और उनमें से प्रत्येक इस सवाल को अपने-अपने पक्ष में हल करने के लिये किसी भी हद तक जाने के लिये तैयार है — माँग करती है कि जेके की समस्या के न्यायपूर्ण, उचित और व्यवहारिक हल के लिए एक शांतिपूर्ण और लोकतान्त्रिक आन्दोलन का रास्ता खोलना होगा तथा गंभीरतापूर्वक भारत-पाक के बीच घनिष्ठ संबंध बनाने होंगे।

(6) क्षेत्रीय स्वायत्तता कमेटी के तीसरे या अंतिम दौर में - लोगों की राय जानी जाय कि कमेटी द्वारा प्रस्तावित क्षेत्रीय स्वायतता को प्रभावी बनाने के लिये किसी संवैधानिक बदलाव की जरूरत होगी या नहीं - इस उद्देश्य से शुरूआत की जाय कि राज्य का संविधान, जेके राज्य को भारत का अभिन्न अंग मानता है, जबकि विश्व वास्तविकता — जहाँ भारत, पाकिस्तान सहित दुनिया के लगभग सभी देश जेके समस्या के हल के लिये जेके के लोगों की सक्रिय भागीदारी के साथ नई दिल्ली और पाकिस्तान के बीच बातचीत द्वारा हल करने पर जोर देते है — जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय (भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों के बीच) हल की माँग करती है।

(7) स्पष्टतया स्वायत्तता के एजेण्डे और विद्यमान जमीनी हकीकत की माँग के बीच कोई रिश्ता नहीं है।

III

(8) क्षेत्रीय स्वायत्तता कमेटी की तीन शर्तो वाली धारणाओं की खोजबीन करें तो निम्नलिखित तथ्य पर ध्यान दिया जाय—

(9) स्वायत्तता के मुख्य सवाल पर : हालांकि कमेटी का नाम क्षेत्रीय स्वायत्त्सता के लिये कमेटी है जबकि इसकी तीनों शर्तों में स्वायत्तता शब्द का कहीं जिक्र तक नहीं, उनके किसी दस्तावेज में यह दर्ज नहीं है। इस तरह मुख्य शब्द को

छोड़ देना, जान बुझकर छोड़ा गया नजर आता है। क्योंकि पहली शर्त में जो उद्देश्य रखा गया है वह स्वायत्तता की राजनीति को प्रतिबिम्बित नहीं करता बल्कि यह सस्ती लोकप्रियता का प्रतीक है।

(10) जैसा की सभी जानते है कि स्वायत्तता की शब्दावली कोई निरपेक्ष अवधारणा नहीं है। इसका एक विशिष्ट अर्थ है अर्थात किसी इलाके या क्षेत्र के सामाजिक ग्रुप या विशिष्ट समुदाय की अपनी स्वयं की सरकार। स्वायत्तता का विचार इस मूलभूत जनवादी सिद्धान्त पर आधारित है कि कोई निश्चित लोगों का समूह अपने मामलों का प्रबन्ध करने का अधिकार रखता है। इस दुनिया में विभिन्न किस्म की स्वायत्तताएँ भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में अपने-अपने विशिष्ट हालातों या विशिष्ट नश्लीयता, पिछड़ेपन, रणनीति इत्यादि - खास कारणों से प्रदान की गयी हैं। स्वायत्तता का दर्जा प्रदान करने से बहुत हद तक किसी विशिष्ट पहचान की समस्या या अन्य सम्बंधित मामले को हल करने में सहायक है।

(11) भारतीय संविधान की धारा 370 के तहत एक विशेष तरह की स्वायत्तता दी गई है जबकि धारा 244(2) और 275(1) में प्रावधान रखा गया है जिसके अनुसार "स्वायत्त जिले" और "स्वायत्त क्षेत्र" का निर्माण किया गया है, ये प्रावधान मेघालय, त्रिपुरा, मिजोरम इत्यादि आदिवासी इलाकों में किया गया है। महाराष्ट्र और गुजरात जैसे राज्यों में विशिष्ट प्रावधान धारा 371 के तहत किये गये है। नागालेण्ड राज्य के सम्बंध में धारा 371-A लगाई गई है जबकि धारा 371-B, 371-C और 371-D आसाम, मणीपुर और आंध्रप्रदेश आदि के राज्यों के सम्बंध में लगाई गई है। और धारा 371-F, 371-G, 371-H और 371-I को सिक्किम, मिजोरम, अरूणाचल प्रदेश और गोआ राज्यों के सम्बंध में लगाई है।

(12) फिर भी इन सभी प्रावधानों में कुछ छोटी रियायतें - विकास के मामलों, पारम्परिक नियमों, धार्मिक और सामाजिक परम्पराओं, पहाड़ी इलाकों, सेवाओं में भर्ती, शिक्षा, इत्यादि - मामलों में प्रदान की गई है। असल हकीकत यह है कि भारतीय संविधान अति केन्द्रीयकृत है और इसीलिये किसी भी क्षेत्र में सही मायने में स्वायत्तता को बरकरार रखना इस संविधान के तहत सम्भव नहीं है।

(13) भारतीय राष्ट्रवाद का 1947 से पूर्व असफल होना भारत के विभाजन से जाहिर होता है जबकि 1947 के बाद इसकी कमजोर कारगुजारियों - राजनीतिक प्रक्रिया का अपराधीकरण, अकुशल आर्थिक प्रक्रिया और मूल्य रहित व्यवहार के मानदण्डों की नींव इसके केन्द्रीयकृत संवैधानिक स्वभाव तथा इसके अवसरवादी सामाजिक दृष्टीकोण में प्रतिबिम्बित होती है। क्योंकि केन्द्रीयकरण भारत की बहुपक्षीय नश्लीयता और जनसांख्यकीय वास्तविकता को नकारता है तथा इसका संपूर्ण सामाजिक

अवसरवाद मूल्य आधारित जीवन पद्धति के विकास में भारी बाधा है।

(14) क्षेत्रीय स्वायत्तता के लिये जम्मू-कश्मीर राज्य एक आदर्श जगह है जहाँ विभिन्न नस्ले, धर्म, समुदाय, जातियाँ, भाषाएँ, इत्यादि समूह रहते हैं। ईमानदारी से स्वायत्त क्षेत्रों का निर्माण राज्य की उन्नति और अखण्डता के विरुद्ध नहीं है। अगर विभिन्न नस्लीय क्षेत्रों के लोगों की लोकतान्त्रिक आकांक्षाओं और इनकी विशिष्टताओं का सम्मान किया जाय और इनका तिरस्कार नहीं किया जाय तो एक विकसित और अखण्ड कश्मीर उभर कर सामने आयेगा।

(16) ऐतिहासिक तौर पर केवल स्वीट्जरलैण्ड एक ऐसा देश है जहाँ स्वायत्तता के असूल को ईमानदारी से लागू किया गया है, इसके 22 प्रान्तों (19 प्रान्त और 6 अर्द्ध प्रान्त) में 22 विधानसभाएँ हैं। एक प्रान्त विदेशी ताकतों के साथ सन्धियाँ कर सकती है, अपनी सेना रख सकती है और स्वीट्जरलैण्ड के संविधान में इन प्रान्तों से सहमति लिये बगैर किसी भी तरह का बदलाव या संशोधन नहीं किया जा सकता। 150 वर्ष पुराने एक उचित स्वायतता के व्यवहार ने स्वीट्जरलेण्ड को दुनिया में सबसे अधिक शान्तिपूर्ण और विकसित देश में बदल दिया है जिसकी प्रतिव्यक्ति आय सबसे अधिक है।

(17) किसी भी तरह से क्षेत्रीय स्वायत्तता के लिए कमेटी की शर्तों में ना तो स्वायत्तता की कोई खुद की परिभाषा है और ना ही ऐसा करने का अधिकार और ना ही लक्ष्य दिया गया है। यह भी स्पष्टीकरण नहीं किया गया है कि किस संवैधानिक प्रावधान (राज्य या केन्द्र) के तहत यह प्रोजेक्ट तैयार किया गया है।

(18) क्षेत्र के मुख्य सवाल पर : इस सवाल पर क्षेत्रीय स्वायत्तता कमेटी की शर्ते भी अस्पष्ट है। क्षेत्र के बारे में ना तो इसने कोई स्वयं की धारणा बनाई है और ना ही इस कमेटी को इस सम्बन्ध में कोई काम दिया गया है और इस बात का भी खुलासा नहीं किया गया है कि जम्मू-कश्मीर राज्य में कितने क्षेत्र है।

(19) क्षेत्र की शब्दावली कोई गढ़मढ़ शब्द नहीं है बल्कि आमतौर पर यह किसी क्षेत्र या इलाके के सम्बंध में उसकी निश्चित सीमाओं और चारित्रिक विशेषताओं - उदाहरणतया ध्रुवीय क्षेत्र, जंगली इलाका, हिमालय क्षेत्र, उभारा क्षेत्र, ऊपरी या निचले क्षेत्र, चुनावी क्षेत्र, पंजाबी क्षेत्र, तमिल भूमि, इत्यादि से परिलक्षित होती है।

(20) प्रशासनिक तौर पर जम्मू डिविजन अपने आप में एक क्षेत्र का द्योतक है परन्तु इस प्रशासनिक क्षेत्र में लोगों के विभिन्न समूह और भिन्न-भिन्न क्षेत्र अपनी अलग पहचान का दावा करते हैं। उदाहरण के लिये राजोरी, पुँछ जिलों के लोग अपने आपको पठवारी पहचान के रूप में पेश करते है, गुजर-बकरवाल समुदाय अपनी आदिवासी पहचान के साथ खड़े है, दलित अपनी विशिष्ट पहचान उनके सामाजिक

आर्थिक पिछड़ेपन के आधार पर चाहते हैं, किस्तवाड़ के लोग अपनी किस्तवाड़ी पहचान चाहते है (जो डोडा जिले के कुछ भागों में रहते है), कश्मीरी भाषी और डोगरी भाषी लोग अपनी विशिष्ठ पहचान की ईच्छा रखते है। इसी तरह लद्दाख क्षेत्र में बुद्धिष्ट, कारगिली और कश्मीरी भाषी जनता अपनी तरह की पहचान करवाना चाहते हैं।

(21) पुन: कश्मीर डिविजन में हालांकि कश्मीरी समुदाय पहले से ही प्रभुत्व में है जबकि कुछ छोटे समूह जैसे गुर्जर बकरवाल, पहाड़ी, इत्यादि लोग अपनी भिन्न पहचान चाहते हैं।

(22) और आगे, आजाद कश्मीर जहाँ मीरपुर, भीम्बर, बाग, सधनोती आदि, अपनी पठवारी पहचान चाहते हैं, गिलगि एजेन्सी क्षेत्र गिलगिती बाल्ट अपनी चारित्रिक पहचान रखते है।

(23) तार्किक तौर पर सामाजिक सांस्कृतिक क्षेत्र के निर्धारण के आधारभूत उसूल अपने अन्दर "अधिकतम एकरूपता" और अपने बाहर "अधिकतम पहचान" दोनों गुणों को समाये हुए हैं। एकरूपता के मुख्य तथ्य निम्न है (क) बोली/भाषा, (ख) सांस्कृतिक रीति-रिवाज, (ग) मनोवैज्ञानिक स्वभाव और ग्रुप की पहचान का एहसास, (घ) संलग्न क्षेत्र, (ड) साँझा इतिहास, (च) सामाजिक संरचना, (छ) समान आर्थिक-राजनीतिक संदर्भ।

(24) निश्चित सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्रों की उचित पहचान के लिये यह आवश्यक है कि एक उच्चस्तरीय स्वतन्त्र न्यायिक आयोग द्वारा उनके क्षेत्र का पक्के तौर पर निर्धारण करना और उस निर्णय को मानने के लिये सभी पक्षों को बाध्य किया जाना चाहिये। किसी गांव के अन्दर या कुछ गावों के बीच (जो दो सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्रों के संलग्न इलाके हो) विवाद के मामले में विशेष वोटिंग के माध्यम से लोगों की राय जानी जाय और उसके मुताबिक निर्णय किया जाय।

(25) अपने-अपने मामलों को प्रबन्धित करने में लोगों के सशक्तिकरण के मुख्य सवाल पर : क्षेत्रीय स्वायत्तता कमेटी की शर्तों के साथ-साथ उसकी प्रश्नावली से प्रतिबिम्बित होता है कि वे सत्ता की पारम्परिक समझ पर खड़े है जिसके अनुसार जनता को सम्मिलित करने और भागीदार बनाने में विद्यमान पदलोलूप-नौकरशाही के नियन्त्रण में राजनैतिक और विकास की प्रक्रिया जारी रखी जाये (जैसा कि यह बात कमेटी की पहली शर्त में दर्ज है)।

(26) स्वायत्तता के उपरोक्त उसूल, यानि किसी एक ग्रुप या समुदाय के लोगों की खुद की सरकार की धारणा, लगभग नयी उभर रही लोगों के सशक्तिकरण की अवधारणा से मेल खाती है परन्तु स्वायत्तता अपने आप में कोई सुस्पष्ट या एकीकृत

अवधारणा नहीं है। वास्तव में यह संघीय ढांचे का एक आधारभूत सिद्धान्त है।

(27) संघीय शब्द लेटिन भाषा का शब्द है जो कम से कम आठ तरह के अर्थ देता है जिसमें से प्रत्येक भिन्न स्तर के सहयोग का द्योतक है। संघीयकरण को सामाजिक व्यवस्था के तौर पर शासन के दो स्तरों पर परिभाषित किया जा सकता है— क्षेत्रीय केन्द्र अथवा संघीय राज्य या क्षेत्र जिनमें से प्रत्येक अपने परिभाषित क्षेत्राधिकार के अन्दर स्वायत्तता और सत्ता लाभ लेते है। स्व-प्रशासित क्षेत्रों का अस्तित्व एक पूर्ण लोकतान्त्रिक व्यवस्था के भीतर ही अस्तित्व कायम रख सकता है। जहाँ केन्द्र संघीय इकाईयों के स्वेच्छिक संघ का प्रतिनिधित्व करता है और केन्द्र के पास सीमित अधिकार होते हैं।

(28) आज की दुनिया में एक सौ सियासी देशों में से केवल 15-20 देश ही संघीय राजनीति का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन संघीय राज्यों में भी केवल चार - अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और स्वीट्जलेण्ड संघीय कहलाऐ जा सकते है। बाकि वे ज्यादातर संघीय देश भारत की तरह अर्द्धसंघीय है।

(29) संघीय प्रक्रिया कोई आसान चलने वाला मामला नहीं है यह तभी तक फलती-फूलती है जब तक एकता और अनेकता के बीच उचित सन्तुलन कायम रखा जाता है। जिस क्षण इसका समीकरण खराब होता है तो इसको नई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिये कुछ संघीय व्यवस्थाएं — रोडेसिया-न्यासलेण्ड, माया-सिंगापुर, जोर्डन-ईराक इत्यादि जैसे विकासशील देशों में विभिन्नता के बीच एकता के रिश्ते को गलत ढंग से चलाने के कारण ध्वस्त हो गये।

(30) नये उभर रहे वैश्वीकरण के युग में संघीयकरण की प्रासंगिकता बढ़ रही है और यह एक महासंघीय ढांचों के अगले स्तर पर पहुँच रही है। संयुक्त राष्ट्र और अन्य सभी अर्न्तराष्ट्रीय संस्थाऐं जैसे WTO, IMF, वर्ल्ड बैंक के साथ-साथ विभिन्न क्षेत्रीय ग्रुपों पर जैसे EU, ऐशियान, नाफ्टा, मरकाऊसर इत्यादि एक नये महासंघीय मॉडल का प्रतिनिधित्व करते है जिनमें से प्रत्येक महासंघीय इकाई अपनी महासंघीय संप्रभुता कायम रखती है।

(31) क्षेत्रीय स्वायत्तता कमेटी की संरचना के मुख्य सवाल पर : ऐसी कमेटी को बनाने का कोई न्यायिक औचित्य मुश्किल ही है जिसमें या तो शासक पार्टी का कार्यकर्त्ता या समर्थक है एवं तीन चौथाई सदस्य एक ही क्षेत्र के है। इस एक तरफा पेमाने का तर्क संगत विकल्प था कि अपने-अपने इलाके का विशेष ज्ञान रखने वाले बराबर संख्या में (यानि हर क्षेत्र से) कमेटी में सदस्य लिये जाते तभी यह न्यायोचित कमेटी होती।

(32) क्षेत्रीय स्वायत्तता कमेटी के निर्माण सामाजिक आवश्यकता के मुख्य सवाल पर : राज्य सरकार ने समस्या को जिस रूप में समझा वह यह है कि यानि विकास की कमी, नौकरियों में भेदभाव, क्षेत्रों के बीच असमान, वित्तीय बंटवारा एवं लोगों की आकांक्षाओं और चिन्ताओं के अनुसार सत्ता में असमान भागीदारी ही समस्या का कारण है। स्पष्टतया ऐसे मामले में न्यायिक आयोग की नियुक्ति करके एक उचित राजनैतिक वित्तिय विकास सम्बंधी तथा विभिन्न क्षेत्रों के बीच रोजगाार के ससांधनों के उचित बंटवारे में ही हल निहित है। जबकि कमेटी इस समस्या को सम्पूर्ण और इसके भागों के बीच "सत्ता के विभाजन" को पक्के तौर पर देखने के नियम पर कायम हो।

IV

(33) जम्मू-कश्मीर जैसा बहुनस्लीय राज्य केवल तभी कायम रह सकता है जब उचित स्वायत्तता, सच्चा संघीयवाद का रास्ता अख्तियार किया जाये। बल्कि स्वयतता/संघीय एजेण्डा एक शान्तिपूर्ण और सामान्य हालात में ही लागू होता है। स्वायत्तता/संघीय प्रोग्राम ने विश्व में कहीं भी टकरावावादी और विवादग्रस्त हालातों में कारगर नहीं रहा है, वास्तव में सच्ची स्वायत्तता और महासंघीयवाद की प्रक्रिया शान्ति और जनवाद की नई उभर रही वैश्विक व्यवस्था के अंग है।

❋ ❋ ❋

आई. डी. पी. के सैद्धान्तिक और व्यवहारिक दिशा का एक लेखा-जोखा

I

1. हर समय हो रहे परिवर्तन की हकीकत के मद्देनजर हर किसी के लिए हमेशा जरूरी है कि समय-समय पर अपनी धारणाओं और तरीकाकार पर नजरसानी करता रहे। एक सदियों पुरानी कहावत है कि अगर आगे के लिए बेहतर काम करना है तो बीते समय से सबक सीखो। जिन्दगी सकारात्मक और नकारात्मक पक्षों का मिश्रण है। ठीक तजुरबे से हम सिखते है कि काम कैसे करना चाहिए, जबकि गलत तजरबा हमें सिखाता है कि किसी भी नये काम को हाथ में लेने से पहले अपने नकारात्मक पक्ष से पीछा कैसे छुड़ाया जाए। इस तरह की जांच-परख से गुजर कर हमें अपनी सैद्धान्तिक और व्यवहारिक दिशा का लेखा-जोखा करना है।

2. प्रथम, हमारी दिशा के सैद्धान्तिक पहलू को लेते हुए हमारे अध्ययन का शुरूआती नुक्ता है : किसी घटनाक्रम की मौलिक सच्चाई या किसी प्रक्रिया में गलत और सही जानने के लिए हमारा आम दृष्टिकोण क्या रहा है।

II

हमारा आम दृष्टिकोण, जैसे कि हमारी द्वितीय पार्टी कांग्रेस (जिसमें आई.डी. पी. की बुनियाद पड़ी थी) के मुख्य दस्तावेज में परिभाषित किया गया था; जिसके अनुसार, कुदरत (या ब्रह्माण्ड) एक व्यापक प्रक्रिया है जो असंख्य प्रक्रियाओं से मिलकर बनी है। इस बेअंत प्रक्रियाओं (मानव नस्ल सहित) के अलग-अलग आकार और व्यवहार है। लेकिन ये सब एक आम तरजे-अमल को अपनाते हुए अलग-अलग तरीकों से अपने-अपने स्वाभाव के अनुसार क्रियाशील रहते हैं। यह निरन्तर चलने वाला तरजे-अमल किसी समय एकता की गति के जरिए तो किसी समय संघर्ष की गति के जरिए यानि बहुत से घटनाक्रमों के बीच दो पक्षी अन्तरक्रिया (अन्दरूनी तथा बाहरी दोनों) के माध्यम से चलता है। ऐसी अन्तरक्रिया, जो चाहे मेलजोल से हो या टकराव से हो, समयानुसार हर एक प्रक्रिया में आंशिक परिणात्मक और गुणात्मक तब्दीलियां आती है और एक निर्णायक बिन्दु पर पहुंच कर हर पुरानी प्रक्रिया (जिसके अपने विशिष्ट लक्षण होते है) एक नई प्रक्रिया (जिसकी खास विशेषता होती है) में बदल जाती है। इस प्रकार दोनों प्रक्रियाओं के अलग-अलग स्वभाव बन जाते हैं। परिवर्तन और विकास की यह अनन्त प्रक्रिया हर एक घटनाक्रम (समेत मानव समाज) के अन्दर लगातार जारी रहती है।

3. हमारे अध्ययन का दूसरा नुक्ता है : मनुष्य समाज की हकीकत को जानने के लिए हमारी आम धारणा क्या रही है।

एक बार पुन: दूसरी पार्टी कांग्रेस का वहीं दस्तावेज मनुष्य समाज को एक ऐसे घटनाक्रम के रूप में देखता है जिसके अस्तित्व जैविक (जिसके लिए एक विशेष कुदरती वातावरण की जरूरत है) हैं, परन्तु जिसके जीवन निर्वाह और कामकाज का तरीका सामाजिक है। स्पष्ट है मानव नस्ल या उसके संगठन (यानि समाज) की दो पक्षिय खासियत है : यानि जैविक (कुदरती) और सामाजिक।

कुदरत (प्रकृति) की अन्य सभी प्रक्रियाओं की तरह, मनुष्य समाज की प्रक्रिया भी प्रकृति की सर्वव्यापक प्रक्रियाओं में एक हिस्से के तौर पर उभरी। बाकी किसी भी प्रक्रिया की तरह यह भी उसी ढंग से बदलती है और व्यक्त होती रही है। यह ऐसे है कि यह अपने जन्म से ही एकता और संघर्ष के द्वारा परिवर्तन (गति के जरिए घटनाक्रम के व्यवहारिक दो पक्षीय अन्तरक्रिया) एक अन्दरूनी और दूसरी बाहरी के अनुसार बदलती और व्यक्त हो रही है। एकता और संघर्ष की बाहरी अन्तरक्रिया मनुष्य समाज और प्रकृति की अन्य प्रक्रियाओं के बीच होती है जबकि अन्दरूनी अन्तरक्रिया मनुष्य समाज के अन्दर ही होती है।

4. हमारे अध्ययन का तीसरा बिन्दु है : वर्तमान मनुष्य समाज के प्रति हमारी समझ क्या रही है जैसे कि तीसरी पार्टी कांग्रेस (जनवरी 1988) द्वारा अपनाऐ गये पार्टी प्रोग्राम को परिभाषित किया गया, हमारी समझ कह रही है कि समकालीन मनुष्य समाज औद्योगिक ढाँचे का बोध कराता है जिसकी औद्योगिक पूंजी की गतिविधि (जो एक औद्योगिक तकनीकी और औद्योगिक मानवीय सामाजिक संगठन जिसकी प्रकृति और समाज के बारे में एक औद्योगिक समझ है- से मिलकर बनती है) खुल्ली पहचान है। औद्योगिक पूंजी मौलिक रूप से राष्ट्रीय बाजार की सीमा और राष्ट्रीय राज्य की सीमा के अन्दर ही कार्यशील होती है और औद्योगिक काम के बंटवारे के तीन अन्तर सम्बन्धित क्षेत्रों यानि आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में सामाजिक विनिमय और सामाजिक निवेश के लिये मुद्रा का रूप (विधी मान्यता आधारित सर्वव्यापक माल) पूर्णत: अपनाते हुए अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में द्वितीय स्तर पर सक्रिय होती है। राष्ट्रीय राज्य, आर्थिकता और सांस्कृतिक पहलुओं के लिये उदारवाद, जनवाद, धर्म निरपेक्षवाद इत्यादि वैचारिक उसूल आधार प्रदान करते है।

5. हमारे अध्ययन का चौथा बिन्दु : समकालीन मनुष्य समाज के चल रहे दौर के सम्बन्ध में हमारा दृष्टिकोण क्या है? जैसे की दूसरी पार्टी कांग्रेस के बाद (जून 1986) के दस्तावेज में परिभाषित किया गया कि चल रहा दौर एक अन्तरराज्य अन्तराष्ट्रीय इकाई का दौर है। 1945 के बाद के वैज्ञानिक- टेक्नोलॉजीकल खोजों की वजह से राष्ट्रीय सामाजिक श्रम विभाजन के साथ साथ एक नये अन्तरराष्ट्रीय श्रम

विभाजन का जन्म हुआ है। अन्तर-राज्य अन्तर्राष्ट्रीय इकाइयों के निर्माण की प्रक्रिया सन् 1900 के आसपास शुरू हुई जिससे मध्यम दर्जे का औद्योगिकरण (लगभग सभी पूर्व-औद्योगिक देशों में उपनिवेशवाद के साथ) का दौर शुरू हुआ। यह एक ऐसा विकासक्रम था जो उस समय के विज्ञान, टेक्नोलॉजी तथा सामाजिक श्रम विभाजन में आई तब्दियों के अनुसार था। 1945 के बाद भारी अन्तराष्ट्रीयकरण सबसे पहले राष्ट्रों के बीच बढ़ी अन्तरनिर्भता से जाहिर होता है जिनमें से कोई भी यहां तक कि अत्याधिक विकसित औद्योगिक देश भी दूसरे देशों के साथ सहयोग व आदान प्रदान के बिना अपने सामाजिक विकास को असरदार ढंग से आगे नहीं ले जा सकते। दूसरा अन्तराष्ट्रीयकरण इस पैमाने से जाहिर होता है जिसमें तेज रफ्तार के आवागम के साधनों- हवाईजहाज, समुद्री जहाज, ऑटोमोबाईल, दूरसंचार, आदि के जरिये लोगों के बीच सम्पर्क और संचार विकसित हुआ है, इन साधनों ने लोगों की गतिशीलता तथा अन्तरक्रिया को सैकड़ों हजार गुणा बढ़ा दिया है।

तीसरा, यह विश्व स्तर पर चीजों के आदान प्रदान तथा सेवाओं (विज्ञान, टेक्नोलॉजीकल साधनो सहित) के प्रसार से जाहिर है जो कि 1950-1975 के दौरान संसार की औद्योगिक तथा खेती बाड़ी पैदावार की तुलना में डेढ़ से दुगुना की दर से बढ़ रहा था। 1970 के दशक के अन्त में सालाना विश्व व्यापार 10 खरब (एक हजार बिलियन) डॉलर से अधिक हो गया। जो कि विश्व की कुल घरेलू पैदावार (GDP) का लगभग 15 प्रतिशत है जबकि 1950 के दशक में यह राशि 9 प्रतिशत थी।

चौथा, अन्तराष्ट्रीयकरण अलग अलग क्षेत्रों के लोगों के बीच इलेक्ट्रोनिक ओडियो-विडिओ यन्त्रों के जरिये सूचना के आदान प्रदान से साफ जाहिर है जिसकी मनुष्य के इतिहास में कोई मिशाल नहीं मिलती।

20 वीं सदी से पहले प्रत्येक राष्ट्र सामाजिक विकास की एक इकाई थी जबकि उस समय अन्तरराष्ट्रीय सहयोग द्वितीय भूमिका में था।

6. हमारे अध्ययन का पांचवा नुक्ता है- चल रहे सामाजिक दौर में पार्टी का उद्देश्य और व्यापक लक्ष्य क्या है। जैसाकि तीसरी पार्टी कांग्रेस में अपनाऐं गये पार्टी प्रोग्राम में परिभाषित किया गया कि हमारी पार्टी का उद्देश्य या आम कार्य यह रहा है कि पीछे वर्णित तथ्यों का लेखा जोखा लेते हुए हमारी पार्टी के (जिसका संगठनात्मक ढांचा वर्तमान में भारत तक सीमित है) सामने दो पक्षीय कार्य है- एक तरफ एक विश्व जनवादी राज्य के पक्ष में विश्व जनमत को संगठित रूप देना तथा भारत में लोगों को राज्य शक्ति हासिल करने के लिये जागृत करना तथा संगठित करना है।

7. हमारे अध्ययन का छठा नुक्ता है- भारत सम्बन्धी हमारी समझ क्या रही है जैसा कि तीसरी पार्टी कांग्रेस द्वारा अपनाऐ गये हमारे पार्टी प्रोग्राम में परिभाषित है कि

भारत के सम्बन्ध में हमारा दृष्टिकोण वर्तमान राजकीय ढांचे का जन विरोधी लक्षण तथा मौजूदा सरकार की लोग विरोध नीतियों की जगह लोकतांत्रिक विकल्प (जो हमारे प्रोग्राम के पेज 26 से 39 में दर्ज है।) पेश करना है जो कि आम तौर पर विश्व और खास तौर पर भारत की विद्यमान सामाजिक हालातों से मेल खाता जनवादीकरण होगा।

8. हमारे अध्ययन का सातवां नुक्ता है कि ऊपर दर्ज किये गये 5वां व छठा नुक्ता जो कि हमारे 1993 के पार्टी संविधान में अत्यधिक विशेष रूप से सूत्रबध किया गया। इस संविधान में दर्ज था कि आई डी पी का उद्देश्य विश्व जनता का व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों रूपों में यानि विचारधारात्मक तथा भौतिक दृष्टि से सशक्तिकरण करना है, हमारे समय में यह उद्देश्य दो अन्तरालवादी (पड़ाव) प्रक्रिया से पूरा किया जा सकता है। पहला पड़ाव (अन्तराल) में एक तरफ भारत का पूर्ण लोकतांत्रिकरण करना और कदम ब कदम एक साझा बाजार, साझी सुरक्षा व्यवस्था तथा साझी राजनैतिक यूनियन के माध्यम से दक्षिणी एशिया में अन्तर निर्भर राष्ट्रीय राज्यों का एक क्षेत्रीय भाईचारा कायम करना शामिल है। वर्तमान दक्षिण एशिया सहयोग संगठन (सार्क) भविष्य का दक्षिणी एशियाई भाईचारे का भ्रूण है जिसका निर्माण भारत तथा पाकिस्तान के बीच में कश्मीर मसले यानि कश्मीर घाटी के ऊपर साझे नियत्रण (चाहे यह भारत पाक महासंघ, सहराज्य या किसी और समझौते के तहत हो) सम्बन्धी सुलह सफाई पर निर्भर है। आशा है कि इस प्रकार के भाईचारे संसार के दूसरे भागों में भी बनेगें। ये सारे क्षेत्रिय भाईचारे संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र से तालमेल कायम करते हुए मिलकर काम करेंगे।

क्षेत्रीय भाईचारा 1945 के बाद वैज्ञानिक टेक्नोलोजिकल क्रान्ति द्वारा पैदा की गई देशों के अन्तर निर्भरता की नई उभर रही विश्व हकीकत को प्रकट करता है यह समाज के राष्ट्रीय राज्य के मुकाबले एक नये राष्ट्रीय राज्य से ऊपर की प्रबन्धकीय इकाई की मांग करता है।

दूसरे पड़ाव (अन्तराल) में संयुक्त राष्ट्र एक अन्तर राष्ट्रीय केन्द्र की तरह उभरेगा और पुर्नगठित एक क्षेत्रिय संगठन, संयुक्त राष्ट्र की मातहत ईकाईयां होगी। यह विश्व के अन्दर दो जुड़वा सिद्धान्तों पर टीका होगा। बड़े छोटे सभी नश्ली ग्रुपों की बराबरी का सिद्धान्त तथा सबसे नीचली सामाजिक इकाई से लेकर अन्तरराष्ट्रीय स्तर तक लोगों का जन तांत्रिक नियंत्रण होना। हो सकता है इस दो पड़ावी प्रक्रिया को कई मोड़-घुमाओं, ऊपर-नीचे या सकारात्मक-नकारात्मक समय से गुजरना पड़े।

9. हमारे अध्ययन का आठवां नुक्ता है कि भारत जनवादीकरण की हमारी पार्टी की योजना हमारी मेगजीन नम्बर 57 सन् (सन् 1991) और मेगजीन नम्बर

90-91 (सन् 1995) के हमारे पार्टी प्रोग्राम में संक्षिप्त तौर पर वर्णित है। हमारी मेगजीन नम्बर 57 में निम्नानुसार वर्णित किया गया है:-

मार्ग दर्शक विचार : सोचने व व्यवहार में तर्क संगत मानवतावाद को थामे रखना।

दृष्टि : सुरक्षा और स्वायत्त कश्मीर के दो महासंघीय विषयों के साथ बराबरी के आधार पर भारत-पाक महासंघ के लिये डटे रहना और जद्दोजहद करना।

भारत का राजनैतिक ढांचा : सभी राज्यों को अर्थपूर्ण स्वायत्तता और पंजाब को विशेष दर्जे के साथ भारत को एक विकेन्द्रित संघीय राज्य में बदलने के लिये उठ खड़े होना व जद्दोजहद करना।

भारत की आर्थिकता : भारत की आर्थिकता को प्रतियोगी, कुशल और उत्पादक बनाकर खुल्ली सार्क व्यापार मण्डी का विकास करके, भारतीय आर्थिकता को विश्व आर्थिकता से जोड़ने के लिये खड़े रहना व कार्य करना।

भारत के विदेश मामले : सम्बन्धों में मजबूती के लिये अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और राष्ट्रीय हितों की साझेदारी के द्वारा वैश्वीकरण को विकसित करने के लिए स्टेण्ड लेना व कार्य करना।

भारतीय संस्कृति मामले : मानवतावाद, समतावाद, व्यवहार के अच्छे मानदण्डों को थामना व उसके लिये कार्य करना।

भारत के सुरक्षा मामले : सार्क क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था जो कि वैश्विक सुरक्षा व्यवस्था से जोड़ने के लिये कार्य करना। हमारी मेग्जीन नम्बर 90-91 में उपरोक्त सिद्धान्तों को निम्न तरीके से वर्णित किया गया है।

व्यवस्था का संघीयकरण तथा विकेन्द्रीयकरण

व्यवस्था के संघीयकरण और विकेन्द्रीयकरण का अर्थ है भारत के संविधान कानून और नीतियों को नई राष्ट्रीय व विश्व वास्तविकता की रोशनी में नया रूप देना। इस मॉडल की आवश्यक विशेषताएं निम्न हैं।

A. उद्देश्य : भारत तथा विश्व के अन्दर एक न्यायप्रिय तथा उचित सामाजिक व्यवस्था जो कि एक तरफ प्रकृति समर्थक तथा दूसरी तरफ लोक पक्षीय हो—स्थापित करनी।

B . सामान्य दृष्टिकोण : तर्क संगत यथार्थवाद जो की स्वयं चौतरफा तथ्यों पर आधारित होता है।

C. सामाजिक परिपेक्ष्य : वैश्वीकरण या तर्कसंगत मानवतावाद।

D. जनवादी व्यवस्था और लोगों का सशक्तिकरण : सारे अन्दुरनी विवाद बातचीत से निपटाना और एक सम्पूर्ण संघात्मक तथा विकेन्द्रित ढाँचा कायम

करना जिसके तहत सारे राज्यों को स्वायत्तता देना और भारतीय संघ के अन्दर पंजाब के लिये विशेष दर्जे की स्थापना करना। सब स्तरों पर लोगों को फैसला लेने में शामिल करके तथा समाज में अमीर व गरीब, औरत-मर्द का फर्क मिटा कर लोगों को ताकतवर बनाना।

E. टिकाऊ विकास : एक तरफ पर्यावरण (यानि भूमि, जल तथा हवा रूपी) प्राकृतिक संसाधन और दूसरी तरफ बाजार प्रणाली एवं राजकीय योजनाओं के न्यायपूर्ण मेल बैठा कर आर्थिकता का वैश्वीकरण करके मानवीय और भौतिक संसाधनों की गुणवत्ता में सुधार लाना।

F. क्षेत्रिय सुरक्षा एवं विकास : वास्तविक नियंत्रण रेखा के आर पार के प्रत्येक नस्ली क्षेत्र को सम्पूर्ण स्वायत्तता देकर, राज्य के सुरक्षा, विदेश मामले और मुद्रा मामलों को भारत-पाक के संयुक्त निमंत्रण में लाकर, जम्मू-कश्मीर के तीन पक्षीय हल की वकालत करते हुए सार्क के विकास का द्वार खोलना, जो समय पाकर एक मुक्त व्यापार, साझा मण्डी समेत क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था एवं एक महासंघीय राजनैतिक यूनियन को उभारना।

G. तर्कसंगत मानवीय सोच और जनवादी व्यवहार को प्रोत्साहित करना।

H. विदेश एवं सुरक्षा मामले : अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं दोस्ती का रास्ता अपनाना, साथ ही पड़ोसी देशों के साथ एक साझा क्षेत्रिय सुरक्षा व्यवस्था कायम करनी तथा पाकिस्तान के साथ मिल कर परमाणु हथियार एवं इससे संबंधित सहायक उपकरण तैयार नहीं करने की प्रतिज्ञा करना।

I. पर्यावरण - जनसंख्या की चुनौतियों का सामना करने के लिये आपस में जुड़ी हुई इन दोनों चुनौतियों का सामना करने के लिये तीन बुनियादी सिद्धान्तों के आधार पर विस्तृत कार्य योजना बनाना:-

(i) लोगों के अन्दर इन दोनों गम्भीर चुनौतियों की कठिनाइयों के बारे में जागृति पैदा करना और टिकाऊ विकास एवं जीवन शैली की अति आवश्यक माँग पर जोर देना।

(ii) इन योजनाओं को लागू करने के लिये लोगों को सक्रीय तौर पर भागीदार बनाना।

(iii) इन दोनों मुद्दों को राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम का सबसे महत्वपूर्ण भाग बनाना।

III

10. हमारी लाईन के दो व्यावहारिक पहलुओं को लेते हुए सिर्फ याद कराने के लिये दो नमूने आगे दिये जा रहे है।

A. पार्टी और जन मोर्चों पर काम

(1) मौजूदा हालात के मद्देनजर तथा अपने अपर्याप्त सांगठनिक ढांचे और लोगों में क्षीण प्रभाव को देखते हुए, इस कांग्रेस का मत है कि हालात को अधिक जनवादीकरण और सामाजिक न्याय की दिशा में मोड़ देने के लिए पार्टी को दो तरफा काम पूरा करना चाहिए। पहला काम गुण और परिमाण के लिहाज से अपने संगठन को मजबूत करने का है तथा दूसरा काम आवामी मसले उठाने के साथ-साथ तानाशाही, अफसरशाही और सत्ता का केन्द्रीयकरण करने वाली ताकतों (इस रुझान का प्रतिनिधित्व इस समय अमूमन दो महाशक्तियां और खास तौर पर भारत सरकार व सत्तारूढ़ पार्टी करती है) के खिलाफ लोगों को गोलबंद करने व संगठित करने का है। ये दोनों पक्ष अन्तरसंबंधित हैं और एक को दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। इस दो तरफा काम को पूरा करने के लिए पार्टी को उचित योजना बनाने और फिर उस पर अमल करने की जरूरत है। इसके बाद उसका जायजा लिया जाना चाहिए और फिर योजना बनाई जानी चाहिए वगैरह-वगैरह। इसके लिए निम्नलिखित बातों का दृढ़ता से पालन किया जाना चाहिए।

(2) पार्टी मोर्चे पर हमारी सभी इकाइयों को शुरूआत इस सवाल से करनी चाहिए कि क्या वे प्रत्येक सदस्य के अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में; सदस्यों और उम्मीदवार सदस्यों को भर्ती करने, संगठन के निदेशक सिद्धान्त और उसके नियमों का पालन करने, यूनिट मीटिंगें आयोजित करने के बारे में; पार्टी सदस्यों में अनुशासन रखने, वर्ग और जन संगठनों में पार्टी की शाखाओं के कामकाज, लोगों में काम आदि के बारे में पार्टी संविधान के मुताबिक अमल कर रही है। अगर ऐसा नहीं किया जा रहा हो तो उस पर पूरी तरह अमल किया जाए। दूसरे, सभी इकाइयों को व्यक्तिगत अध्ययन और फिर सामूहिक अध्ययन व बहस के जरिये पार्टी लाइन के बारे में अपनी समझ गहरी करने की कोशिश करनी चाहिए। तीसरे, सभी इकाइयों को व्यक्तिगत और सामूहिक आधार पर पार्टी पत्रिका का समुचित अध्ययन करना चाहिए तथा उसके उचित वितरण और बिक्री की योजना तैयार करनी चाहिए। चौथे, सभी इकाइयों को यह जायजा लेना चाहिए कि क्या उनकी समूची ताकत या क्षमता (यानि सदस्यों और हमदर्दों की क्षमता) का उपयोग पार्टी और लोगों के कामकाज के लिए किया जा रहा है। अगर ऐसा नहीं हो रहा तो उन्हें तुरन्त अपनी बेकार पड़ी क्षमता को इस्तेमाल में लाना चाहिए। पांचवें, सभी इकाइयों को समाज विरोधी तत्वों की छेड़छाड़ के विरुद्ध कानूनी और राजनैतिक दोनों तौर पर अपनी रक्षा (सदस्यों की निजी सुरक्षा समेत) के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए। छठे, सभी इकाइयों को लोगों में काम की विस्तृत योजना तेयार करनी चाहिए जिसमें प्राथमिक मुद्दे और प्राथमिक इलाके पर खास जोर दिया जाना चाहिए। सातवें, सभी इकाइयों को हमेशा जनता के प्रति जवाबदेही के

कारगर तरीके तलाश करने चाहिए और उन पर ईमानदारी से अमल करना चाहिए। इस सिलसिले में नई खोज जारी रखते हुए उन्हें फिलहाल इन नियमों का पालन करना चाहिए : (क) पार्टी संविधान के मुताबिक पार्टी में जनवादी तरीके से काम करना (ख) वर्ग व जन संगठनों में उनके अपने-अपने कार्यक्रमों और संविधानों के मुताबिक काम करने, (ग) उस इलाके के लोगों से जहां वे काम करते हैं, हर साल अपनी कार्यशैली के बारे में आलोचनाएं आमंत्रित करना, (घ) जनमत से जमा किए गए हर चंदे का हिसाब-किताब उन्हें देना (यूनिटवार या निजी तौर पर जैसी भी सूरत हो) (ड़) हर अगुआ साथी की वित्तीय व आर्थिक स्थिति के बारे में पार्टी इकाई के जरिये लोगों को जानकारी देना।

(3) (क) जनमोर्चे पर शुरूआत सभी पार्टी इकाइयां जन कार्य से जुड़ी दो अंतरसंबंधित समस्याओं को संतोषजनक तरीके से हल करके करें। पहली समस्या जन प्रचार की लाइन तय करने की है। दूसरी समस्या ऐसे मसलों की पहचान करने की है जो लोगों के लिए तत्काल कठिनाइयों का वायस बने हुए हैं और शासक पार्टी की नालायकी की वजह से अभी तक लटके चले आ रहे हैं; इन्हें हल करने के लिए लोगों को उचित तरीकों और कारगर अगुवाई की जरूरत है।

(ख) जहां तक पहली समस्या (जन प्रचार की लाइन तय करने) का ताल्लुक है, इसे पार्टी की आम लाइन और ठोस स्थानीय हालात को मद्देनजर रखकर हल किया जा सकता है। पार्टी की आम लाइन और ठोस स्थानीय हालात को जोड़ने के लिए निम्नलिखित पांच बातें स्पष्ट करना जरूरी है। पहली, जन प्रचार की हमारी लाइन की शुरूआत लोगों को दरपेश तात्कालिक मसलों (वे चाहे स्थानीय हों, राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय) से होनी चाहिए, जिसमें यह बताया जाए कि लोगों के मसले मौजूदा सरकार और सत्तारूढ़ पार्टी की प्रतिक्रियावादी नीतियों की वजह से नहीं सुलझे हैं और उन्हें सुलझाने का ठीक तरीका क्या है। दूसरी, इसमें सत्तारूढ़ पार्टी की अच्छी तरह भंडाफोड़ किया जाए कि उसने आम चुनाव के दौरान अपने भाषणों और घोषणा-पत्र में क्या वायदे किए थे तथा फिर सत्ता में आने के बाद उसने क्या गुल खिलाए हैं (और संविधान व कानून का कितना उल्लंघन किया है)। तीसरी, इसमें अपने पार्टी कार्यक्रम की व्याख्या की जाए (जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय जनवाद की हमारी बुनियादी दिशा का राष्ट्रीय पार्टियों के राष्ट्रीय जनवाद से फर्क बताया जाए और यह भी कि राष्ट्रीय जनवाद भारत सहित दुनिया की मूल समस्याओं को हल करने के असमर्थ है); सभी स्थानीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों से संबंधित पार्टी नीतियों की व्याख्या की जाए (इन नीतियों का केन्द्रीय सिद्धान्त बताया जाए जिसका मकसद राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में अधिकतम नीति निर्धारक अधिकार लोगों को सौंपना है); तथा अपनी पार्टी के कार्यक्रम और नीतियों से कांग्रेस-इ और विपक्षी

पार्टियां सहित सभी पार्टियों का फर्क बताया जाए। चौथी, इसमें लोगों को कार्यक्रमों और नीतियों के आधार पर विभिन्न पार्टियों के बीच फर्क करने और इसी फर्क को सत्तारूढ़ पार्टी का राष्ट्रीय विकल्प चुनने की कसौटी बनाने की दिशा दी जाए। पांचवीं, इसमें लोगों को या तो आईडीएफ में या किसी दूसरे जनसंगठन में (जो कुछ अवामी मांगों पर आंदोलन के लिए बनाया गया हो) संगठित होने के लिए मानसिक तौर पर तैयार किया जाए।

(ग) जहां तक दूसरी समस्या (लोगों के लिए तात्कालिक कठिनाइयां पैदा करने वाले अवामी मसलों की पहचान) का ताल्लुक है, इसे उचित जांच-पड़ताल करके और उसका ठोस समाधान तलाश करके सुलझाया जा सकता है। फिर इस समाधान को जनता में लोकप्रिय बनाया जाना चाहिए। उन्हें इस हद तक गोलबंद किया जाए कि वे इसमें सुझाए गए सांगठनिक और संघर्ष के तौर-तरीके मान लें। सांगठनिक तौर तरीके में इस बात पर जोर दिया जाए कि बिना किसी संगठन के बड़ी से बड़ी अवामी गोलबंदी (वह चाहे छोटे अवामी मसलों पर हो या बड़ों पर) बिखर जाती है तथा कि बिना किसी संगठन के कोई कारगर गतिविधि नहीं चलाई जा सकती। इससे लोगों को या तो आईडीएफ में या संबद्ध मसले पर अस्थायी तौर पर बने जन संगठन में शामिल होने की प्रेरणा मिलनी चाहिए। जहां कहीं मुमकिन हो विशालतम संभव संयुक्त मोर्चा बनाया जाना चाहिए। संयुक्त कार्यक्रम (चाहे एक ही मुद्दे पर हो या कई मुद्दों पर अथवा अवामी मांग पर हो या चुनाव लड़ने पर) के बिना कोई संयुक्त मोर्चा (महज कांग्रेस विरोध के आधार पर) न बनाया जाए। और कोई भी पार्टी या गुट यदि संयुक्त कार्यक्रम पर सहमत हो तो बाहर न रखा जाए। संघर्ष का तौर-तरीका लोगों के मूड और उनकी वास्तविक ताकत के मुताबिक अख्तियार किया जाए (यह चाहे ज्ञापन देने, किसी मंत्री अथवा अफसर को शिष्टमंडल लेकर मिलने या उससे भी बड़े कदम प्रदर्शन, धरने, हड़ताल या लंबे आंदोलन की सूरत में हो)। लोगों को गोलबंद और संगठित करने के बाद संघर्ष तब तक चलाया जाए जब तक कि मसला हल नहीं हो जाता। लोगों को तात्कालिक मुद्दों पर गोलबंद करते समय उन्हें पार्टी की जन प्रचार लाइन के बारे में भी जानकारी देनी चाहिए। इससे उन्हें मौजूदा सामाजिक हालात की जानकारी मिलेगी और उनकी सामाजिक चेतना बढ़ेगी।

B. जनवादी पार्टी सह आन्दोलन

(जैसा कि नाभा पार्टी कांग्रेस 1995 में अपनाया गया दस्तावेज मेगजीन नं. 90-91 पेज 30 से 32 तक)

अपने कार्यक्रम और नियमों के मुताबिक एक नई जनवादी पार्टी सह आन्दोलन के निर्माण में दो आम कार्य अपनाने की आवश्यकता है। एक पार्टी मोर्चे पर दूसरा लोगों के स्तर पर।

(i) पार्टी मोर्चे पर

11. ये परिस्थिति नीचे दी गई कुछ निश्चित आवश्यक पहलकदमियों की मांग करती है।

(क) वैज्ञानिक वास्तविकतावाद अथवा तर्कसंगत मानवतावाद को आम और सामाजिक अवधारणा मानने को सुनिश्चित करना, सामूहिक तौर पर पार्टी के साथ-साथ इसके प्रत्येक सदस्य द्वारा जनवादी व्यवहार और टिकाऊ जीवन शैली को अपनाना।

(ख) प्रेरणा स्तर ऊंचा उठाकर, अवसरवादी और उपभोक्तावादी राजनीति से स्वतंत्र रहकर, सभी हिस्सों एवं प्रक्रियाओं से सीखने के लिए खुला दिमाग रखने की आदत बनाकर पूर्व निर्धारित धारणाओं के बजाए तथ्यों से शुरूआत करने और अधिक महत्वपूर्ण यह कि आत्म विश्लेषण करके स्वनिरीक्षण का दृष्टिकोण अपनाकर तथा अपने अहम को हर मौके पर उचित तरीके से नियंत्रित करके पार्टी स्वयं और अपने प्रत्येक सदस्य का रूपान्तरण करे।

(ग) पार्टी की पूरी क्षमता को उत्पादक उपयोग के लिए लगाने की भरसक कोशिश करना।

(घ) प्रत्येक सदस्य को व्यक्तिगत, पारिवारिक, पार्टी और लोगों संबंधी उसके विभिन्न दायित्वों को संतुलित करने में सहायता करना।

(ड़) पार्टी सदस्यता की गुणात्मक एवं संख्यात्मक वृद्धि के लिए ठोस योजना बनाना, इसमें इस बात पर जोर देना कि प्रत्येक सदस्य एक प्रभावी जनसंचारक की भूमिका अदा करने वाला बन सके।

(च) नई वास्तविकता को आत्मसात करने के नजरिये से पार्टी की नीतियों, तरीकों और व्यवहारों का निरन्तर पुनरावलोकन करना।

(छ) नए ज्ञान और कलाओं को सीखने की पार्टी संस्कृति विकसित करना, कार्य रुझान का विकास करना, विद्यमान अवसरों का उपयोग करना, आलोचना की सकारात्मक प्रतिक्रिया देना, मुसीबत में पीड़ित सदस्य की तकलीफों में भागीदार बनना।

(ज) हमेशा साधन और साध्य तथा सिद्धांत एवं व्यवहार को जोड़ने में सचेत रहना।

12. उपरोक्त वर्णित पहलकदमियां हर दृष्टि से पार्टी और इसके प्रत्येक सदस्य को लोकतांत्रिक बनाने के समर्थ होगी।

(ii) लोगों के स्तर पर

13. तर्कसंगत मानवतावादी चेतना द्वारा लोगों में सत्ता की पूजा तथा स्वार्थपूर्ति की चेतना को बदलने के लिए बुनियादी वास्तविकता से मेल खाते निम्नलिखित कदमों

को उठाने की आवश्यकता है।

एक, कोई भी, जो जिन लोगों में काम करे वह उनकी वैचारिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थिति को आम तौर पर तथा विशेष तौर पर यदि कोई हो तो, उनकी प्राथमिकता की समस्या को पहचाने।

दो, गांव, तहसील (ब्लॉक, जिला, प्रान्त, देश तथा विश्व से संबंधित हरेक महत्वपूर्ण सवालों के प्रति नीति और दृष्टिकोण पर विचार-विमर्श में लोगों को सम्मिलित किया जाना, जैसे—टिकाऊ विकास, पर्यावरण, जनसंख्या, मानवाधिकार, अल्पसंख्यकों, गरीबी, बेरोजगारी, मूल्यवृद्धि, जातीय आरक्षण, शिक्षा, औरतें, उद्योग, व्यवसायिक संघ, कृषि, ग्रामीण विकास, साम्प्रदायिक दंगे, जातीय उत्पीड़न, न्यायिक प्रणाली, पंचायती राज, प्रचार तंत्र, कानून-निष्पादन, संवैधानिक मुद्दे, युद्ध, शीत युद्ध, परमाणु संधि,, गैट, बहुराष्ट्रीय कम्पनियां, संयुक्त राष्ट्र संघ, आदि पर ग्रामीण एवं शहरी सेमीनारों, ग्रुप मिटिंगों, कमरा बैठकों, सामाजिक उत्सवों, सांस्कृतिक अवसरों अथवा अन्य कोई गतिविधि।

तीन, विभिन्न जन समूहों में विविध प्रकार की सामाजिक बीमारियों से संबंधित कारण एवं हल के विचार विमर्श में लोगों को भागीदार बनाना जैसे—राजनीति के अपराधीकरण, धन सह बाहुबल से प्रभुत्व वाली चुनाव प्रक्रिया, भ्रष्टाचार, घोटाले, धोखे, कालाधन, तस्करी, नशाखोरी, गुण्डों द्वारा लोगों को सताना, कर चोरी, सार्वजनिक सम्पत्ति की चोरी, अस्वास्थ्य हालात, औरतों एवं बच्चों की पिटाई, दंभ, चापलूसी, दोगलापन, आदि।

चार, विभिन्न प्रकार के रचनात्मक प्रबंध में लोगों को शरीक करना, मसलन जल संरक्षण, भूमि क्षरण की रोकथाम, जंगलात लगाना, प्रदूषण पर रोक, साक्षरता अभियान, स्वास्थ्य सुरक्षा केन्द्र के निर्माण, गरीबों, अनाथों और निस्सहायों को लोगों की सहायता का प्रबंध।

पांच, पर्यावरणीय, मानवीय एवं भौतिक स्रोतों के विकास से संबंधित उनके क्षेत्र की योजनाओं के विचार-विमर्श और निर्माण में लोगों को सम्मिलित करना जैसे—पानी की आपूर्ति, शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली, यातायात, डाक सेवा, संचार, कृषि, कृषि उद्योग, ग्रामीण ऋण, बाढ़ नियंत्रण, मरुस्थलीकरण, परम्परागत तकनीकों का विकास और संबंधित सांसद, विधायक, सरकारी विभागों, तकनीशियन एवं विशेषज्ञों आदि को लोगों के साथ अन्तरक्रिया हेतु आमंत्रित करना।

छः, लोगों को परम्परागत अधिनायकवादी संस्कृति और इसके परम्परागत अधिनस्थकारी रूपों पर विचार विमर्श में शामिल करना तथा उन्हें तर्कसंगत मानवतावादी संस्कृति और एक लोकतांत्रिक व्यवहार में विकसित करना। क्षेत्रीय नृजाति के इतिहास एवं विकास से संबंधित राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय कला (भाषा, संगीत, नाटक,

शिल्पकला, साहित्य, विज्ञान तथा संस्कृति) पर सांस्कृतिक सम्मेलनों का आयोजन करना।

सात, मतदाता एसोसियेशन की स्थापना करके लोगों को चुनावी प्रक्रिया में सम्मिलित करना जो यदि हो तो लोगों में से ही उचित उम्मीदवार प्रस्तुत करे तथा जो व्यापक रूप से मतदाता को स्वीकार्य हो और मतदाता अपने मत का प्रयोग कार्यक्रम के आधार पर करें। कार्यक्रम में भ्रष्टाचार, राजनीति का अपराधीकरण, मानवाधिकार, उम्मीदवार की धन व सम्पत्ति की घोषणा, जन सेवा के रिकार्ड, समाज में उसके योगदान के विषय शामिल हों।

आठ, लोगों, खास करके औरतों, गरीबों, वंचित हिस्सों, बेरोजगारों, अल्पसंख्यकों आदि, को उनके झुकाव के अनुसार जन संगठनों, सांस्कृतिक इदारों, व्यवसायिक संघों आदि में संगठित करना।

नौवां, लेकिन अतिमहत्वपूर्ण, लोगों को संवैधानिक एवं कानूनी ताकत से परिपूर्ण करने, उन्हें अंतिम नीति निर्धारण करने एवं निर्णय लेने की ताकत प्रदान करने के लिए (क) विभिन्न स्तरों जैसे—गांव, ब्लॉक, जिला, प्रान्त एवं देश स्तर—पर जनमत संग्रह करने (ख) सम्पूर्ण प्रशासन को लोगों के प्रति जवाबदेह बनाने (ग) लोगों को सूचना का अधिकार प्रदान करने (घ) सरकारी गोपनीयता कानून, अदालत की अवमानना कानून, विधायी सदस्यों को विशेषाधिकार, सेना को कोर्ट मार्शल का अधिकार, नजरबंदी कानूनों आदि का खात्मा करना (ड़) राज्य ढांचे का संघीयकरण तथा ताकत का ऊपर से नीचे तक विकेन्द्रीकरण और इसी तरह के प्रावधान करना।

14. ऊपर कथित उपाय पार्टी को अपना दृष्टिकोण एवं मिशन को लोगों तक ले जाने तथा उनसे जुड़ने के समर्थ बनाएगा, परिणामत: लोगों के साथ-साथ पार्टी का लोकतांत्रिकरण होगा।

IV

हमारी लाईन के दो उपरोक्त तत्वों के गहन अध्ययन के पीछे यह तथ्य याद करना जरूरी है कि यह पहलू जबसे पार्टी अस्तित्व में आई हमारी पार्टी पत्रिका के हरेक अंक में और अधिक ठोस किया जाता रहा है।

V

15. यह अध्ययन हमसे माँग करता है कि अच्छे नतीजे प्राप्त करने के लिये हमें अपना ध्यान कहां केन्द्रित करना चाहिये। (1.8.1997)

❋ ❋ ❋

क्या करना चाहिये और कैसे किया जाये

I

1. मानवीय अनुभव सीखाता है कि मनचाहे या अनुमानित किये गये सामाजिक परिणाम हासिल करने के लिये यह हर वक्त जरूरी है कि मानवीय मनोगत को उपलब्ध वस्तुगत हालातों से जोड़ा जाय अगर इस जरूरी कदम की पालना न की जाय तो नतीजे हमेशा हमारी आशा के विपरीत निकलेगें। इसी कारण हम वहीं काटते है जिसकी बिजाई करते हैं। हमारे साथ जो कुछ भी घटता है वह हमारे अपने कर्मों के कारण होता है नियति और भाग्य और कुछ नहीं है बल्कि हमारे कर्मों का ही परिणाम होते है किस्तम उनकी खुलती है जो उसके लिये प्रयत्न करते हैं।

2. अनुभव यह भी दर्शाता है कि पहले जरूरी फर्ज की पूर्ति के लिये उतनी ही महत्वपूर्ण शर्त आवश्यक है। यह शर्त है कि मनोगत ओर वस्तुगत को जोड़ने की उच्च तकनीक विकसित करना।

3. पहले जरूरी कार्य में दो पहलू शामिल है मनोगत का अर्थ है किसी के (या एक संगठन के) उद्देश्य या लक्ष्य का वर्तमान वस्तुगत (लोगों की आंकाक्षाओं और आवश्यकता के साथ सम्बन्ध) हकीकतों से सीधा अभिव्यक्ति करता है या नहीं। पहले जरूरी कार्य में दो पहलू शामिल है मनोगत पहलू किसी के (या एक संगठन के) उद्देश्य और लक्ष्य को इंगित करता है और निश्चित वस्तुगत पहलू विद्यमान वास्तविकताओं (सम्बन्धित लोगों की आकांक्षाओं और आवश्यकताओं) को प्रकट करती है। दूसरा अति आवश्यक पहलू है कि इन दो पहलुओं के अनुकूल तरीके अख्तियार करना।

स्पष्टतया, अगर इन तीनों पहलुओं में किसी की भी कारगुजारी में कोई नुक्श पैदा होता है तो नतीजे हमेशा गलत निकलेगें। उदाहरण के तौर पर यदि उद्देश्य गलत (यानि गैर अमल योग्य या अवास्तवकि) हो, अस्पष्ट या दिग्भ्रमित हो अथवा इसको लागू करने वाले की समझ अपने लक्ष्य के बारे में ठोस, पक्की और सुसंगत नहीं हो तो अपेक्षित परिणाम हासिल नहीं हो सकता।

दुबारा पुन: यदि विद्यमान वास्तविकताओं के बारे में हमारी धारणा में गलती है तो उचित तरीकाकारों के सूत्रीकरण में बाधा बनेगा, असन्तोषजनक कारगुजारी की तरफ धकेल देगा और आगे यदि तरीकाकार अस्पष्ट या असंगत अथवा उसको लागू करने वालों की यान्त्रिक कारगुजारी होगी तो घटीया नतीजे प्राप्त होगें।

II

5. उपरोक्त कथन पर चलते हुए पहला नुक्ता जो साफ तौर पर गम्भीर ध्यान की मांग करता है वो है हमारे उद्देश्य (या बुनियादी कार्य) की स्पष्ट और सम्पूर्ण

समझ होना यानि इसके अलग-अलग आयाम-ऐतिहासिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, इत्यादि के बारे में स्पष्ट समझ होना, पार्टी की लाईन को ठोस तरीके से व्याख्या करने की क्षमता होना।

6. जैसा की हमारे प्रोग्राम तथा अन्य दस्तावेजों, खासकर 1993 के पार्टी संविधान में वर्णित किया गया है कि हमारा उद्देश्य दो पक्षीय है यानि आम और खास। आम उद्देश्य एक तर्क संगत मानवीय समाज की स्थापना करना है और खास उद्देश्य भारत के जनवादीकरण का है। स्पष्ट है ये दो पक्षीय उद्देश्य लोगों को तर्कसंगत एवं जनतांत्रिक (यानि लोगों को स्व प्रबन्ध करने के योग्य बनाना है। आज के समय में इसे लोगों का सशक्तिकरण कहा जाता है) बनायेगा। इसके लिये हमारा मुख्य कार्य आम तौर पर दुनिया के लोगों का और खास तौर पर भारत के लोगों के वैचारिक और भौतिक स्तर ऊंचा उठाना है।

III

7. द्वितीयत: हमारे लिये एक और आवश्यक जरूरत है कि हमारा संसार, भारत और प्रत्येक कार्य क्षेत्र की जमीनी वास्तविकता और मूलभूत स्वभाव (यानि मूलभूत तथ्यों को दर्शाना, कारण का पता करना और चीजों के चरित्र को पहचानना) के बारे में हकीकी अवधारणा बनाना।

8. जैसाकि हमारे प्रोग्राम और अन्य दस्तावेजों में वर्तमान संसार का बुनियादी स्वभाव देशों के बीच बढ़ रही अन्तरनिर्भरता से भलीभांति स्पष्ट होता है। इससे देश एक तरफ अपनी आवश्यकता अन्तर्राष्ट्रीय पैमानों से जोड़ रहे है। (उदाहरण के लिये (WTO, IMF, World Bank आदि) दूसरी तरफ खुद को क्षेत्रिय आर्थिक संगठनों (मसलन EC एशियान) (MERCOUSR) मर्काऊसर इत्यादि आर्थिक संगठनों में संगठित कर रहे है। दूसरे शब्दों में वैश्विकरण की प्रक्रिया राष्ट्रीय राज्यों को विश्व मानवीय समाज रूपी माला में पिरो रही है।

9. विश्व परिवर्तन प्रक्रिया हमारे से एक (पारम्परिक राष्ट्रवाद की जगह) अन्तरनिर्भर राष्ट्रवाद की दिशा को पकड़ने की मांग करती है। जिसके तीन आधार बिन्दु है।

(क) भारतीय लोगों का सारे स्तरों पर सशक्तिकरण करना।

(ख) एक साझी मण्डी, साझी सुरक्षा व्यवस्था, साझी राजनैतिक यूनियन और जम्मू कश्मीर मुद्दे का हल (भारत,पाकिस्तान एवं जम्मू कश्मीर के लोगों के दरम्यान तीन पक्षीय बातचीत के जरिये) करते हुए सार्क को मजबूत करना।

(ग) एक शान्तिमय, साफ सुथरी, न्यायपूर्ण, समता आधारित तथा टिकाऊ अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की स्थापना करना।

10. विद्यमान विश्व की जमीनी हकीकतों में शामिल है; अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक एकीकरण; क्षेत्रिय आर्थिक समुहों का उभरना; एक बहुधुव्रीय विश्व; प्रत्येक राष्ट्रीय राज्य का एक अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय राज्य में पुनर्गठित होना; राष्ट्रीय राज्यों के अन्दर अत्यधिक नस्ली उभार; अधिनायकवादी सरकारों का बिखरना; विकासशील देशों के साथ साथ विकसित देशों में गरीब लोगों का अत्यधिक असन्तोष उभरना; लोग समानता के लिये विश्वव्यापी अभियान; अल्पसंख्यको के अधिकार और सामाजिक न्याय; लोगों की सुरक्षा की बदलती अवधारणा, हथियारों से सुरक्षा के स्थान पर विकास से सुरक्षा और क्षेत्रिय सुरक्षा के स्थान पर भोजन, रोजगार, जनसंख्या नियंत्रण और पर्यावरणीय सुरक्षा की अवधारणाएं की उभर रही अनुभूति, पर्यावरण एवं गरीबी के लिये एक अत्यधिक बड़ी चुनौती है; और इसी तरह की अन्य धारणाएं।

11. चल रही ठोस विश्व वास्तविकता संकेत दे रही है कि हमें आम तौर पर संसार के लोगों और खास करके भारत के लोगों को एक पूरे संघात्मक (या महासंघीय) एवं लोकतांत्रिक भारत की स्थापना के लिए संगठित करना चाहिए। ऐसा भारत जहां कानून का शासन हो मानव अधिकारों, लैगिग समानता, अल्पसंख्यक अधिकार तथा वंचित एवं गरीब तबके के अधिकार इत्यादि हो, जिनका यूएन संधि दस्तावेजों तथा यहां तक की यूनेस्को से भी अधिक गारन्टी की मांग है।

12. जैसा कि हमारे पार्टी प्रोग्राम और अन्य दस्तावेजों में दर्ज है कि 1947 के बाद भारत का मौलिक स्वभाव केन्द्रीयकरण एंव प्रभुत्वकारी लक्षण लिये हुए है जो हथियारबन्द ताकत पर आधारित है जिसके कारण यह भारत के बहुसांस्कृतिक, बहुधर्मी एवं बहुनस्ली देश की बुनियादी हकीकतों के बिल्कुल विरूद्ध है। हमारा राष्ट्रीय राज्य की 50 वर्षों की कारगुजारी ने हमारे पक्ष में थोड़े सकारात्मक कदम रखे है जबकि बहुत अधिक नकारात्मक कदम रखे है इसने ऐसा भारत कायम किया है जहां मुट्ठी भर लोग खुशहाली में सराबोर है जबकि बहुसंख्यक लोग गरीबी और वंचीतपन से परेशान है। संक्षेप में आज भारतीय राष्ट्र गरीबी और पिछड़ेपन, राजनैतिक गिरावट और भ्रष्टाचार, अकुशल आर्थिकता और विश्वभर की तुलना में जीवन स्तर में चौतरफा गिरावट वाला देश बन गया है।

13. भारत की चौतरफा एकता में विभिन्नता तथा विभिन्नता में एकता की मांग है कि भारत को फोरी तौर पर एक पूर्ण संघात्मक एवं लोकतांत्रिक राज्य में तब्दील किया जाय, जैसा कि पेरा 11 में पहले वर्णित है।

14. विद्यमान भारतीय जमीनी हकीकतों में शामिल है: इसकी राजनैतिक प्रक्रिया का अपराधीकरण, इसकी आर्थिक प्रक्रिया का कुप्रबन्ध, इसके व्यवहार के मानदण्डों और आदर्शों का अशिष्ट होना, क्षेत्रिय महाशक्तिवाद, बन्दूक की राजनीति का प्रभुत्व होना, क्षेत्रियवाद की राजनीति का उभरना, केन्द्र सरकार की अस्थिरता का

बढ़ना, अल्पसंख्यकों एवं कमजोर तबकों का आत्मविश्वास और अपनी दृढ़ मांगों पर दबाव डालना: अत्याधिक अल्पसंख्यक प्रभुत्व वाले क्षेत्रों में सशस्त्र संघर्षों जैसे जम्मू कश्मीर, उत्तरपूर्वी राज्यों, पंजाब इत्यादि में - का उभरना।

15. भारतीय ठोस वास्तविकता दर्शाती है कि पार्टी को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सुधार लाने के लिये जनता खास कर गरीबों, वंचितों, अलगाव में धकेले गये लोगों को सभी राष्ट्रीय समस्याओं तथा तत्कालीन जन समस्याओं के आधार पर संगठित करने की जरूरत है।

16. कार्य के प्रत्येक क्षेत्र प्रत्येक गांव सहित की वास्तविकता को सम्बन्धित स्थानीय इकाई द्वारा मूल्यांकन किया जाना चाहिये और इसी तात्कालिक और अत्याधिक महत्वपूर्ण कार्य के आधार पर लोगों की लामबन्दी का कार्य निर्भर करता है।

IV

17. तृतीय: हमारी पार्टी के लिये अन्य बराबर महत्वपूर्ण बिन्दु है कि हमारे मनोगत और सामने मौजूद वस्तुगत के उचित तरीके निकालना है। इसका मतलब है कि ऐसा तरीकाकार जो एक तरफ पार्टी का विकास करे और दूसरी तरफ लोगों को प्रेरित और संगठित करे ताकि लोग अपने तत्कालीन और मूलभूत अधिकारों को हासिल कर सके।

18. तरीकाकार सबसे पहले कोशिश करे कि हमारी पार्टी की सोचने, कहने, करने और संगठित होने की सम्पूर्ण प्रक्रिया में कमियों को चिन्हित करते हुए इनसे मुक्ती पाने के उचित साधन और योजना बनाये ताकि हमारे मानवीय (यानि पार्टी और लोग) और भौतिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सके। द्वितीय: हमें एक ऐसी योजना बनानी चाहिये जिससे लोगों को सभी मसलो-राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय, जनसंख्या इत्यादि पर वैचारिक विचार विमर्श और व्यावहारिक कार्यवाही में शामिल किया जा सके।

A

19. पार्टी फ्रन्ट पर हमारी नीचे लिखी मुख्य कमियां है।

I. पार्टी की सैद्धान्तिक, व्यावहारिक और सांगठनिक लाईन की कमी जो पार्टी के अन्दर और लोगों के अन्दर हमारे विचार को फैलाने के संदर्भ में रोड़ा बन रही है। विचारों के आदान प्रदान करने की कमी हमारे कार्य करने की क्षमता का गला घोट देती है इस तरह हम प्रभावी राजनैतिक कार्य नहीं कर पाते है।

II. पार्टी के प्रति प्रतिबद्धता और जवाबदेही की कमी, जिसका नतीजा होता है पार्टी के फैसलों और सदस्यों द्वारा लागू करनें के बीच खाई (यानि पार्टी के कहने और

करने के बीच अन्तर विरोध) पड़ जाना है।

III. पार्टी में सत्ता-धन-बल आधारित राजनीति की सोच का जारी रहना। इस सोच को उखाड़े बिना नई सोच को पैदा नहीं किया जा सकता।

IV. गैर उपयोगी पार्टी की क्षमता पार्टी की वृद्धि दर में रूकावट है और ये पार्टी के उत्साह को प्रभावित करती है।

20. इन कमियों को नीचे लिखी पहल कदमियाँ लेकर तथा कार्य करने के नये ढंग तरीको वाले अनुभव से गुजर कर दुरस्त किया जा सकता है।

(I) हर एक स्तर पर लगातार सीखने और सीखाने वाली मीटिगों के माध्यम से सिद्धान्त, व्यवहार और संगठन के बारे में पार्टी की समझ को सामुहिक और व्यक्तिगत समझ को ऊंचा उठाने पर ध्यान केन्द्रित करना।

(II) वक्ताओं प्रचारको-संचारको का एक ताना-बाना खड़ा करना जो पार्टी प्रोग्राम ओर जनता के एजेन्डे पर पूरी तरह दक्ष हो। कम से कम प्रत्येक सदस्य को अच्छा वार्ताकार बनाने का प्रयत्न करना।

(III) पार्टी की तरफ से बोलने लायक महत्वपूर्ण नुक्ते प्रदान करके इसके संचार सिस्टम को मजबूत करना।

(IV) पार्टी की तरफ से विचारों की संचार व्यवस्था को अधिक आकर्षक बनाने के लिये संगीतकारो, नाटककारो, कलाकारो इत्यादि की टीमे गठित करना।

(V) प्रत्येक सदस्य की विचार-संचार क्षमता का विकास करना। सदस्य की सम्बन्धित यूनिट के साथ-साथ पार्टी उसके स्वप्रबंध, उसके स्वभाव को तर्कसंगत बनाने एवं दुख सुख को साझा करने की उनकी भावना को विकसित करना।

(VI) पार्टी की प्रतिबद्धता और जवाबदेही के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए पार्टी संविधान अलग-अलग प्रावधानों और उनके अमल का ठीक-ठीक जायजा लेने के लिए सम्मेलन आयोजित किए जावे।

(VII) एक दूसरे सदस्यों के बीच खासकर कमजोर के दुख:सुख को साझा करने के उद्देश्य से ब्लॉक स्तर पर लगातार मीटिगे बुलाई जाय पात्रता के आधार पर मदद के असरदार तरीके खोजे जाय, ये कदम पार्टी के अन्दर भावनात्मक एकता को मजूबत करेगा।

(VIII) प्रत्येक स्तर पर पार्टी इकाईयों में बहस की एक व्यवस्था प्रारम्भ की जावे जिसमें प्रत्येक सदस्य अपनी आत्मआलोचना और यूनिट अपना मूल्याकंन पेश करे। इन मीटिगों में प्रत्येक सदस्यों को उसकी योग्यता के अनुसार काम सौंपा जाय जिसकी सम्बन्धित यूनिट जांच परख करती रहे।

(IX) पार्टी की नीतियां, विधियां और व्यवहार का प्रत्येक यूनिट निरन्तर

जायजा ले ताकि नई वास्तविकताओं के बारे में उचित रूख अपनाया जा सके।

21. इन नुस्कों का सफल प्रयोग करके पार्टी न केवल अपनी कमियों को दूर कर सकेगी बल्कि इसके मानवीय (यानि पार्टी और लोग) तथा भौतिक संसाधनों का अधिक से अधिक उपयोग किया जा सकेगा।

B

22. जन मोर्चो पर हमारी कमजोरियां की समस्याएं इस प्रकार है।

(क) जन समस्याओं, जनता की सोच, जनता का मूड और आंकाक्षाओं का एक उचित अध्ययन तथा खोज के माध्यम से सारे पार्टी स्तरों पर एक ठोस समझ की कमी के कारण हमारे सदस्य यान्त्रिक धारणाओं पर चल रहे है।

(ख) हमारे जन कार्यों की गुणवत्ता (जो भी थोड़ा बहुत हम काम करते है) तथा दूसरी पार्टियों की जन गतिविधियों के बीच किसी तरह का स्पष्ट अन्तर नहीं दिखाई पड़ता।

(ग) हमारे जन कार्य में हम आर्थिक मुद्दो पर ज्यादा ध्यान देते है जबकि विचारधारा और राजनीति पर कम जोर दिया जाता है।

23. हमारी कमजोरियों के साथ-साथ नीचे लिखे जनता के रूझान भी हमारी जन पहल कदमियों के रास्ते में रोड़ा बनते हैं। ये इस प्रकार है

(अ) सही और गलत का फैसला करने वाला पैमाना सत्ता, धन और बल के पारम्परिक जनमानसिकता का कायम रहना।

(ब) लोगों में राजनीतिज्ञों की कथनी और करनी में अन्तर के कारण विश्वास की कमी होना।

24. हमारी पार्टी की कमजोरियों से मुक्ति के लिये तथा लोगों में प्रचलित रुझानों को खत्म करने के लिये जरूरी है कि प्रत्येक क्षेत्र में हमारे जन कामकाज का एक ऐजेण्डा तैयार किया जावे जो कि ग्रामीण, शहर, ट्रेड युनियन या किसी और प्रकार की जनगतिविधि हो सकती है।

25. कोई भी विशेष जन ऐजेण्डा तैयार करने के लिये यह जरूरी है कि जन समस्याओं, जनता की विचारधारा, जनता का राजनैतिक रूझान, सांस्कृतिक आचार विचार, जनता का मूड और मौलिक जन भावनाओं की जांच परख की जावे। यह पहल कदमी हमारी खोजी टीमों को जनता विशेष के बारे में पूरी तरह वाकिफ करवायेगी तथा उनके साथ प्राथमिक नाता जोड़ने का अवसर प्रदान करेगी।

26. विशेष जन ऐजेन्डे पर विचार चर्चा के दौरान जनता को शामिल करने के लिये अच्छा रहेगा की हम अपने काम को किसी एक या अलग अलग क्षेत्रों में बसे वंचित और प्रताड़ित लोगों (उदाहरण के लिये असंगठित मजदूर) से शुरूआत करे,

इन ग्रुपो में मुख्य तौर पर शामिल है ग्रामीण व शहरी गरीब, बेघरबार, बेरोजगार, विधवाएं, महिलाएं (गरीब तबको से संबधित) मजूदर बच्चे, बच्चियां, अपाहित, सफाई कर्मचारी, खेत मजदूर, बन्धुआ मजदूर, असंगठित मजदूर (जैसे इमारती मजदूर, रिक्शा चालक आदि) आदिवासी, कैदी, मुकदमे अधीन, असहाय बुजुर्ग, लम्पटतत्व (भिखारी वगैरह) कारखाना मजदूर, ऑफिस कर्मचारी, विद्यार्थी, नौजवान, अल्पसंख्यक इत्यादि।

यदि कहीं इलाके के स्तर पर जन कामकाज शुरू करने का उचित मौका हो तो हमें तत्काल ऐसे कार्य को आरम्भ कर देना चाहिये।

27. लक्षित ग्रुप अथवा काम के क्षेत्र चुनने के पीछे यह जरूरी है कि उस ग्रुप के सदस्य, ईमानदार, स्वतंत्र विचार वाले लोगों को इक्ट्ठा करके उनके साथ सम्बन्धित समस्याओं का एक जन ऐजेण्डा तैयार किया जावे। ऐसी मीटिंग बुलाने से पहले प्रत्येक को निजी तौर पर आने की अपील की जावे। मीटिंग से पहले अच्छी तैयारी की जावे और एक ऐसे गतिशील ढंग से सम्पन्न की जावे ताकि उसमें उपस्थित लोगों के अन्दर दिलचस्पी और उत्साह पैदा हो सके।

28. जन ऐजेण्डे पर बहस के दौरान हमें इस बात पर जोर देना चाहिये कि जो कुछ हमारे देश में हो रहा है उसका कारण बाहर से नहीं आया बल्कि यह हमारे केन्द्रित सिस्टम तथा भ्रष्ट तथा बेअसूले शासकों द्वारा पैदा किया गया नतीजा है तथा अगर हम इसे ठीक करना चाहते है तो हम अपने पैरों पर खड़े होकर प्रतिक्रियावादी ताकतों के खिलाफ दृढ संघर्ष करना चाहिये। संक्षेप में हमें लोगों की सत्ता, धन और बल पूजा वाली पारम्परिक मनोदशा को एक तर्क संगत मनोदशा में बदलने के लिये प्रयत्न करना होगा।

29. मीटिंग के निष्कर्ष के बाद उपस्थित लोगों की एक कोर टीम चुनी जानी चाहिए। इसको जन ऐजेण्डे पर और सामाजिक ग्रुपों को लामबन्द्ध करने तथा नई कोर टीमे गठित करने का कार्य सौंपा जाना चाहिए। हमारी पार्टी की टीम इन कोर टीमों के साथ तालमेल से काम करेगी तथा उनको समस्याओं के हल के लिये पूरी मदद करेगी। इन टीमों के साथ अन्तरक्रिया के दौरान हमें इनके चेतन तत्वों को पार्टी में शामिल करने तथा बाकी लोगों को जन संगठन में शामिल करने की कोशिश करनी चाहिए।

30. हमें एक के बाद दूसरे भिन्न-भिन्न सामाजिक ग्रुपों के साथ मेलजोल जारी रखना चाहिए।

31. जैसे ही सामाजिक ग्रुपों की कोर टीमों की सुझबुझ परिपक्व हो हमें उनके सहयोग से अध्ययन ग्रुप चलाने चाहिए, जिनमें बुनियादी राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सवालों पर पूरी तरह विचार विमर्श किया जाय।

उपरोक्त जनमुखी तकनीक के अलावा पार्टी संविधान की मांग के मुताबिक हमें जनता के मुद्दों तथा ट्रेड यूनियन कामकाज हमारी पार्टी लाईन के अनुसार चलाना चाहिए ताकि लोगों को हमारी सरगर्मियों में शामिल किया जा सके। ठोस हकीकतों से मेल खाते नीचे लिखे कदम अमल में लाने चाहिऐ

(I) महिलाओं के साथ सभी मुद्दों यानि-राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, घरेलू आदि पर बहस मुबाहिसे में शामिल करना और उनको उनके जन संगठन में संगठित करने में मदद देना।

(II) निम्न मध्यम वर्गीय आमदनी वाले ग्रुपों जैसे कि विद्यार्थियों, नौजवानो, कर्मचारियों, दुकानदारों आदि के साथ उनके खुद के मसलों के साथ-साथ लोकतांत्रिक मुद्दो (जैसे गैर लोकतांत्रिक कानूनो का खात्मा, लोगों को सूचना का अधिकार देना, चुनावों में सरकारी खर्च, अल्पसंख्यको के अधिकारों को सुनिश्चित करना, मानव अधिकारों, पर्यावरण संरक्षण, आदि) पर विचार चर्चा में शामिल करना तथा उनको इन दोनों तरह की समस्याओं को हल करने के लिये मुहिम चलाने के लिये तैयार करना।

(III) फेक्ट्री मजदूरों को उनके मुद्दों पर संगठित करना तथा उनको इस तर्कसंगत सिद्धान्त जो कि एक तरफ मजदूरों की मांगों का समर्थन करते हुए दूसरी तरफ फेक्ट्री के हितों को भी सामने रखें। उपरोक्त सिद्धान्त के आधार पर मजदूरों को मानसिक तौर पर तैयार किया जावे।

(IV) लोगों को उनके इलाके की विकास योजनाओं- जैसे कि पर्यावरण, मानवीय तथा भौतिक संसाधनों का विकास- में शामिल करना। ऐसा करने के लिये क्षेत्र के लोगों के लिये जल आपूर्ति, शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली, यातायात, डाक-तार सेवाओं, दूरसंचार, खेतीबाड़ी, खेती आधारित उद्योग, ग्रामीण कर्जा, बाढ़ और सुखा नियंत्रण, पारम्परिक तकनीक का विकास इन सब पर बहस एवं सूत्रीकरण के लिये शामिल करना तथा सम्बन्धित सांसद, विधायक, सरकारी विभागों, तकनीशियनों, विशेषज्ञों आदि का लोगों के साथ विचार विमर्श करवाया जावें।

(V) लोगों के अन्दर मानव जाति के सामने दो गम्भीर सवालों यानि पर्यावरणीय गिरावट और बढ़ती जनसंख्या के बारे में जागृति पैदा करनी तथा टिकाऊ विकास तथा उचित जीवन शैली के साथ साथ लोगों के सशक्तिकरण पर जोर देना। 27.07.97

❋ ❋ ❋

स्वतंत्रता के पहले और बाद का भारतीय राष्ट्रवाद

अ. समस्या

1. हमारी स्वतन्त्रता की पचासवी वर्षगांठ एक राष्ट्रीय इकाई के रूप में हमारे अब तक के कामों का लेखा-जोखा लेने का एक बेहतरीन अवसर है। इसके लिए भारतीय राष्ट्रवाद की स्वतन्त्रता-पूर्व और उपरान्त दोनों अवस्थाओं की समूची प्रक्रिया का निष्पक्ष विश्लेषण जरूरी है। जाहिर है, इसका मतलब भारतीय राष्ट्रवाद की इसके सभी आयामों—वैचारिक, कार्यिक एवं सांगठनिक—सहित समीक्षा करना है। बेहतर होगा यदि हम पहले सामान्य-राष्ट्रवाद के प्रश्न को लें और बाद में भारतीय राष्ट्रवाद के हमारे सुनिश्चित मुद्दे पर आएं। (चूंकि यह प्रलेख स्वतंत्रता की अर्धशती के सम्बन्ध में हमारे अगस्त 1997 के जोधपुर सम्मेलन में प्रस्तुत विचार-पत्र का हिस्सा है; अत: यह हमारे विषय-वस्तु के सभी आवश्यक बिन्दुओं को छूते हुए तर्कसंगत एवं तर्कपूर्ण आकलन होना चाहिए।)

I. राष्ट्रवाद का सवाल

आ. राष्ट्रवाद का सिद्धान्त

2. यदि हम सामान्य रूप से राष्ट्रवाद के प्रश्न को देखें तो निम्नलिखित तथ्य हमें इसका संक्षिप्त विवरण देते हैं :

3. राष्ट्रवाद आधुनिक विश्व की एक घटना है। एक सामाजिक अवधारणा के रूप में यह राष्ट्रीय आधार पर समाज को संगठित करने के लिए राष्ट्र की विचारधारा को इंगित करती है। इसकी आधारभूत अभिधारणा यह है कि मानव-समाज स्वयं इसके अपने लोगों द्वारा प्रबन्धित होना चाहिए, किसी अन्य बाहरी ताकत द्वारा नहीं; और ऐसा व्यवहार में होता भी है। अर्थात् यह किसी जनसमूह विशेष को अपने मामले संचालित करने की संप्रभुता को मान्यता देता है और सामाजिक विषयों में किसी अलौकिक शक्ति की सत्ता को अस्वीकार करता है। इस प्रकार किसी सामाजिक प्रक्रिया, घटना या वस्तु से सम्बन्धित सही या गलत होने के मसले का फैसला करने में यह राष्ट्रवाद को निर्णायक कारक मानता है। तर्कबुद्धिवाद किसी मसले के पक्ष और विपक्ष को तर्क की कसौटी पर कसने का पक्षधर है और सत्य की कसौटी के तौर पर आस्था में विश्वास के सिद्धांत को नकारता है।

4. राष्ट्रवाद की विचारधारा राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति से अपने राष्ट्र-राज्य के प्रति प्राथमिक वफ़ादारी की मांग करती है। जब एक विशिष्ट राष्ट्रवाद अपनी राष्ट्रीय सर्वोच्चता को आवश्यकता से अधिक बल देता है, अपने राष्ट्रीय गुणों को महिमा-मंडित करता है और अन्य राष्ट्र-राज्यों के गुणों, हितों और चिन्ताओं की परवाह किये बिना

अपने राष्ट्रीय हितों और चिन्ताओं को उन पर तरजीह देता है तो यह स्थिति अंतराष्ट्रीय विवादों और युद्धों की ओर ले जा सकती है।

5. राष्ट्रवाद की सामाजिक विचारधारा को कबायली, जनजातीय और धार्मिक जैसी पूर्वगामी सामाजिक अवधारणाओं के साथ तुलना करते हुए देखा जा सकता है कि कबायली विचारधारा कबायली रिश्तेदारी के मूल सिद्धान्त पर आधारित थी। जनजातीय विचारधारा जनजातीय लगाव द्वारा चिह्नित थी और धार्मिक विचारधारा अलौकिकता में आस्था की विशेषता से युक्त थी। इसके विपरीत राष्ट्रीय विचारधारा राष्ट्रीय तर्कबुद्धिवाद को अपना संदर्भ-बिन्दु बनाती है, अर्थात् ऐसा तर्कबुद्धिवाद जो इसे राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं में सीमित करता है।

इ. राष्ट्रवाद का व्यवहार

6. क्रियात्मक रूप से, राष्ट्रवाद राष्ट्रीय-राज्य व्यवस्था को चलाने के लिए प्रजातन्त्र को एक माध्यम के रूप में अपनाता है। जैसा कि साधारणतया माना जाता है, सिद्धान्त के रूप में प्रजातन्त्र लोगों द्वारा, लोगों का और लोगों के लिए शासन को अभिव्यक्त करता है; लेकिन वास्तविक तथ्य के रूप में राष्ट्रीय शासन जनता के नाम पर राजनैतिक दलों द्वारा चलाया जाता है। इसलिए लोग अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिए मुश्किल से ही सत्ता का सीधा प्रयोग करते हैं। यद्यपि सार्वभौमिक मताधिकार का सिद्धान्त आधारभूत रूप से अन्तिम अधिकार उनके हाथों में सौंपता है और चुनाव राष्ट्रीय लोकतांत्रिक प्रक्रिया की मुख्य प्रणाली का निर्माण करता है।

7. राष्ट्रवाद के सामाजिक व्यवहार की पूर्वगामी सामाजिक प्रचालन प्रणालियों से तुलना करते हुए यह देखा जा सकता है कि जबकि भूतकालिक सामाजिक प्रणालियां सामान्यतया दैवीय आधारित शक्ति और ताकत की अगुवाई में सही की विशेषताओं से युक्त थी; राष्ट्रीय व्यवहार मुख्यतया जनआधारित सत्ता एवं बहुमत के नेतृत्व में सही होने की तर्कसंगतता के द्वारा पहचाना जाता है; इसके साथ यदा कदा ताकत की अगुवाई में सही होने का लक्षण लिए है, जो राष्ट्रों के बीच बाह्य युद्धों और आन्तरिक संघर्षों के दौरान प्रकट होता है।

'ई' राष्ट्रवाद का संघटन

8. संगठनात्मक रूप से राष्ट्रवाद, राष्ट्र और राष्ट्र-राज्य के प्रतीक रूप में सभी स्तरों और समान इदारों वाली राष्ट्रीय संस्थाओं का एक समुच्चय है। मौटे तौर पर यह तीन मुख्य संस्थागत घटकों से बनता है — विधायिका, न्यायपालिका और सेना के साथ-साथ नौकरशाही को शामिल करते हुए कार्यपालिका। ये सारे घटक किसी एक या दूसरे के मनमाने आचरण की स्थिति में एक प्रतिरोधी संतुलनकारी रोक लगाते हैं।

राष्ट्रीय दल विधायिका और कार्यपालिका के संचालन के मुख्य वाहक होते हैं। राष्ट्र-राज्य और सार्वजनिक मामलों में इसकी विभिन्न संस्थाओं को अधिक संवेदनशील, उत्तरदायी और पारदर्शी बनाने में योगदान करने वाली एक अन्य लोकतान्त्रिक संस्था मीडिया है।

9. राष्ट्रवाद के सामाजिक संगठन की इससे पूर्वगामी सामाजिक संगठनों से तुलना करते हुए यह स्पष्ट है कि जबकि भूतकालिक सामाजिक संगठन नस्ल, जाति, रक्त-सम्बन्धों, धर्म आदि के संकुचित सोच-विचार से चिह्नित थे; राष्ट्र-राज्य और इसका राष्ट्रीय संघटन राष्ट्रीय मानवतावादी सरोकारों पर आधारित है।

उ. राष्ट्रवाद का ऐतिहासिक उद्भव

10. ऐतिहासिक दृष्टि से राष्ट्र एक आधुनिक घटनाक्रम है। इसके प्रारम्भिक लक्षण सतरहवीं सदी के दौरान हॉलैण्ड और इंगलैण्ड में प्रकट हुए। अंगरेज़ प्यूरिटन क्रान्ति में कॉल्विनवादी नीतिशास्त्र के साथ एक आशावादी मानवतावाद एकाकार हो गया था। लेकिन अठारहवीं सदी के अन्त में पहले ऐसा नहीं हुआ, जब तक कि दो सर्वाधिक शक्तिशाली राष्ट्रवाद — अमरीकन और फ्रान्सीसी — विश्व में नही अभरे, जिससे कि राष्ट्र आधुनिक समाज के एक बड़े निर्धारक तत्त्व के रूप में मान्यता प्राप्त करने लगता।

11. अमरीकी राष्ट्रवाद इंगलैण्ड के विरुद्ध 1775 के अमरीकी स्वतंत्रता संग्राम की एक प्रातिनिधिक रचना था। यह आंशिक रूप से अंगरेज़ प्यूरिटनवादी क्रान्ति की परम्पराओं से और आंशिक रूप से समकालीन फ्रांसीसी दार्शनिक द्वारा अंगरेज़-स्वाधीनता की नयी तर्कबुद्धिपूर्ण व्याख्या से प्रभावित था। इसने सामूहिक स्वाधीनता और व्यक्तिगत अधिकारों के लिए संघर्ष को प्रतीक रूप में अभिव्यक्त किया।

12. फ्रांसीसी राष्ट्रवाद उदार प्रगति और सामान्य मानवता में एक तर्कबुद्धिपूर्ण आस्था की अभिव्यक्ति था। 1789 की फ्रांसीसी क्रान्ति का नारा "स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व" मनुष्य के अधिकारों की इस घोषणा को न केवल फ्रांसीसी लोगों के लिए अपितु समस्त राष्ट्रों के लिए युक्तियुक्त समझा गया।

13. 1848 की यूरोपीय राष्ट्रवादी क्रान्तिकारी लहर के बाद यूरोप के इटली, स्पेन और रूस सहित अनेक देशों में राष्ट्रवाद की प्रगति से साक्षात्कार किया।

14. राष्ट्रवाद ने लातीनी अमरीकी देशों में अठारहवीं सदी के अंतिम और उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भिक काल में प्रवेश किया। लेकिन एशिया और अफ्रीका के देशों में राष्ट्रवाद के पुष्पित होने की शुरूआत होते-होते बीसवीं सदी प्रारम्भ हो चुकी थी।

ऊ. राष्ट्रवाद की उत्पत्ति के कारण

15. राष्ट्रवाद के संकल्पना, व्यवहार और संगठन को जन्म देने वाला मुख्य कारक सोलहवीं सदी का श्रम-विभाजन था, जो व्यापार की वाणिज्यिक व्यवस्था को अस्तित्व में लाया। यह श्रम-विभाजन स्वयं विज्ञान एवं तकनिकी में ऐसे नये विकासों का एक उत्पाद था, विशेष तौर से नौवहन एवं परिवहन के साधनों में सुधारों का, जिन्होंने विभिन्न सामन्ती राज्यों के बीच और मनुष्यों एवं सामग्रियों के मध्य परस्पर अन्तरक्रिया को बढ़ाया।

16. व्यापार की वाणिज्यिक व्यवस्था ने, जो मुख्यत: यूरोप में उभरी, बड़े बाजारों के लिए रास्ता तैयार किया, जिन्होंने फलस्वरूप विनिमय को बढ़ावा दिया, मांग की गति तेज़ की; निर्माण में विशेषज्ञता की गति को तेज़ किया; खेतीहर लोगों में स्तरनिर्माण को बढ़ावा दिया; शहरीकरण को उछाला; नयी सामाजिक शक्तियों को जन्म दिया और केन्द्रीकृत राजशाहियों को खड़ा किया; जिन्होंने लोगों को एक शासन के नीचे रखा और छोटे सामन्ती शासकों को खत्म किया।

17. बाद में नये व्यापारिक एवं औद्योगिक वर्गों की शक्ति में वृद्धि के साथ विशेषकर यूरोप में, यूरोपीय केन्द्रीकृत राजशाहियां राष्ट्र-राज्यों में परिवर्तित हो गयीं। एशिया, अफ्रीका एवं लातीनी अमरीका में, राजशाही एवं जनजातीय राज्य प्रारम्भ में कुछ शक्तिशाली यूरोपीय राज्यों द्वारा बलपूर्वक उपनिवशों में, और फिर बीसवीं सदी में राष्ट्रीय आन्दोलनों के अभ्युदय के साथ राष्ट्र-राज्यों में परिवर्तित किये गए।

18. राष्ट्रवाद के दो सदियों के लम्बे इतिहास पर निगाह डालने से पता चलता है कि जबकि इसकी सामान्य प्रकृति-अपने देश के भीतर प्रजातान्त्रिक और विदेशों में अनैतिकतापूर्ण—कमोबेश अपरिवर्तित रही है; इसके विशेष लक्षण प्रत्येक देश की निश्चित परिस्थितयों की विशेषता से युक्त रहे हैं।

II. 1947-पूर्व का भारतीय राष्ट्रवाद

अ. विभिन्न ज्ञानबोध

19. 1947-पूर्व के भारतीय राष्ट्रवाद पर न तो वर्तमान में कोई सर्वसम्मत दृष्टिकोण अस्तित्व में है और न ही इसके इतिहास के किसी अन्य काल में रहा था।

20. कुछ लोग सोचते है कि 1947-पूर्व के भारतीय राष्ट्रवाद का प्रभेदी लक्षण इसका उपनिवेशवाद विरोध रहा था। इस दृष्टिकोण के अनुसार ब्रितानी उपनिवेशवाद के विरुद्ध 1857 का सशस्त्र विद्रोह भारत की स्वतन्त्रता का प्रथम युद्ध था। इस दृष्टिकोण का यह भी मानना था कि ब्रितानी शासन के विरुद्ध वहाबी सशस्त्र संघर्ष (1820-1900) भी एक राष्ट्रीय लक्ष्य का प्रतिनिधित्व करता था।

21. दूसरे लोग मानते हैं कि भारत के विगत गौरव का पुनरुत्थानवाद भारतीय राष्ट्रवाद का मूल लक्षण रहा था। यह समूह मानता है कि उन्नीसवीं सदी के सुधारवादी आन्दोलन; यथा: ब्रह्मसमाज (1828), आर्यसमाज (1875), थियोसोफीकल सोसायटी (1882), रामकृष्ण-मिशन (1896) आदि ने भारतीय राष्ट्रवाद की शुरूआती राहों को उलीका।

22. कुछ दूसरे लोग सोचते हैं कि ब्रितानी प्रकृति का संसदीय मॉडल इसकी बुनियादी विशेषता है। यह वर्ग सोचता है कि वे सब लोग भारतीय राष्ट्रवाद के पक्षधर थे; जिन्होंने ब्रितानी शासन के अधीन सुधारों का समर्थन किया।

23. इससे भी बढ़कर एक विचार मानता है कि भारत में हिन्दू एवं मुस्लिम दो भिन्न राष्ट्रवादों को संस्थापित करते थे। हिन्दू रूढ़िवाद यह मानता है कि मुसलिम लोग विदेशी थे, जिन्होंने अपने शासन के दौरान भारत को पदावनत किया और जिनकी आक्रामक प्रकृति हिन्दू-मुसलिम फूट का मुख्य कारण रही थी। इसके विपरीत मुसलिम रूढ़िवाद मानता है कि प्रबल हिन्दू बहुमत मुसलिम पहचान के लिए ख़तरा बना।

24. इससे और आगे, देश और विदेश में निवास करने वाले लोगों की एक बहुत बड़ी तादाद मानती है कि केवल गांधीवाद ही वास्तविक भारतीय राष्ट्रवाद का प्रतिनिधित्व करता है।

25. जाहिर है ये सभी विचार भारतीय राष्ट्रवाद के अयथार्थवादी दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं; क्योंकि ये राष्ट्रवाद के मूल प्राचलों, यथा: प्रजातन्त्र एवं सम्प्रभुता के साथ समन्वय स्थापित नहीं करते।

आ. 1857 के भारत के प्रथम स्वातन्त्र्य-संग्राम का सिद्धांत

26. ऊपर-वर्णित राष्ट्रवाद के दो मूल सिद्धान्तों से आगे चलते हुए 1857 के सशस्त्र-संघर्ष को भारत के प्रथम स्वातन्त्र्य-संग्राम का नाम नहीं दिया जा सकता। ब्रितानी शासन का विद्रोह ब्रितानी भारतीय (हिन्दू एवं मुसलिम दोनों को शामिल करते हुए) सिपाहियों का विरोध धार्मिक कारणों पर आधारित था, जिसके अनुसार (तत्कालीन ब्रितानी भारतीय सेना द्वारा प्रयुक्त चर्बी-युक्त कारतूसों ने उनकी अपनी-अपनी धार्मिक पवित्रता का अनादर किया। तत्पश्चात किसी भी प्रकार के राष्ट्रीय मुक्ति विचार से रहित, सामंती रजवाड़े, ब्रितानियों से अपने विजित राज्यों को पुन: प्राप्त करने के लिए लड़ रहे थे। पुन: यह सम्पूर्ण मिलाजुला समूह, विछिन्न मुग़लिया एकतन्त्र को पुनर्स्थापित करने का समर्थक था और उपनिवेशी शासन को किसी प्रकार के प्रजातान्त्रिक शासन द्वारा प्रतिस्थापित करने का कोई विचार नहीं रखता था। फिर, पूरा का पूरा उत्तरी एवं दक्षिणी भारत इस संघर्ष से अछूता और अप्रभावित रहा। तथ्य केवल यह संकेत करते

हैं कि 1857 का बरतानिया विरोधी आन्दोलन केवल भारतीय जनता के बिलगायित अनुभागों का एक विद्रोह था। इसी प्रकार से अंगरेज़ों के विरुद्ध बिना किसी राष्ट्रीय सोच का वहाबी सशस्त्र संघर्ष मुस्लिम शासन की पुनर्स्थापना का प्रतीक था।

इ. पुनरुत्थानवादी आन्दोलन का सिद्धान्त

27. दूसरी ओर पुनरुत्थानवादी आन्दोलन मुख्यत: भारत के विगत गौरव को पुनर्स्थापित करने की ओर लक्षित थे। वे भारत के अतीत के अद्वितीय गौरव की स्तुतियां गाते थे। उनका निश्चय था कि पहला मानव सर्वप्रथम भारत की धरा पर प्रकट हुआ और इस प्रकार मानव इतिहास की प्रक्रिया शुरू हुई। उनका दावा था कि उस प्राचीन स्वर्णिम काल में भारत ने हर चीज़ के उस सर्वोत्तम नमूने की रचना की, जो आज तक अतुलनीय रहा है। स्पष्टत: इस पुनरुत्थानवादी सिद्धान्त की उन्नीसवीं सदी के भारत से कोई प्रासंगिकता नहीं थी, सिवा इसके कि इसने केवल अन्तरसामुदायिक सम्बन्धों में कड़वाहट घोली।

ई. ब्रितानी शासन के अधीन सुधार-समर्थक राष्ट्रवाद

28. इसके अतिरिक्त ब्रितानी शासन के अधीन सुधारों की मांग के रूप में भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा राष्ट्रवाद के दो आवश्यक लक्षणों में से एक; अर्थात् राष्ट्रीय संप्रभुता को नकारती थी। लेकिन 1917 तक सामान्यतया हर राजनीतिक दल और उसके नेताओं ने इस रास्ते को अपनाया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के पूर्वगामी संगठन अर्थात्—ब्रितानी भारत संगठन यानी ब्रिटिश इंडिया (1851), बम्बई संगठन यानी बॉम्बे ॲसोसिएशॅन (1857), मद्रास देशज संगठन यानी मैद्रास नेटिव एसोसिएशन (1852), दो दशकों से अधिक समय तक राजनीति पर छाये रहे। इनमें मुख्यत: प्रशासनिक सुधारों, प्रशासनिक सेवाओं में अधिक संख्या में भारतीयों की नियुक्ति, शिक्षा के प्रसार आदि के लिए काम किया। इनका अनुगमन करते हुए कलकत्ता भारतीय संगठन यानी इंडियन ॲसोसिएशॅन ऑफ कैलकटा (1876), पूना सार्वजनिक सभा (1870) और मद्रास महाजन सभा (1881) आदि मुख्यत: महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक एवं विधायी कार्यों की आलोचना के प्रति समर्पित थे।

29. एक ब्रितानी प्रशासक ऐलेन ऑक्टोवियो ह्यूम की पहल पर शुरू की गयी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1917 तक उसी रास्ते पर चलना जारी रखा। इस अवधि के दौरान कांग्रेस का हर वार्षिक सम्मेलन ब्रितानी राष्ट्र गीत 'राजा अमर रहे' यानी 'लान्ग लिव द किंग' के गायन के साथ प्रारम्भ होता था।

30. सुधार समर्थक राष्ट्रवाद के अस्तित्व के प्रथम दो दशकों (1885-1905) में इसकी मुख्य राजनीतिक मांग विधायी सभाओं के सुधार और बजट पर बहस के लिए विधायकों को ज्यादा शक्तियों के लिए थी। प्रशासनिक सुधारों में इसकी मुख्य

मांगें—सेवाओं के भारतीयकरण, कार्यपालिका से न्यायपालिका के अलगाव और सेना में भारतीयों के लिए ज्यादा ऊँचे ओहदों, आदि की थी। इसके द्वारा उठाये गये आर्थिक मुद्दों में भारत की बढ़ती हुई ग़रीबी, दुर्भिक्ष और गृह-प्रशासन (घरेलू प्रभार) एवं सैनिक खर्चों में कटौती शामिल थे। ये मांगे ब्रितानी सरकार के सामने याचनाओं के रूप में पेश की जाती थीं। इस अवस्था के दौरान कांग्रेस, बुद्धिवादियों तक सीमित रही और इसकी जन-साधारण में कोई जड़ें नहीं थीं।

31. 1905 में बंगाल के दो भागों में विभाजन की घोषणा के बाद कांग्रेस ने बॉयकाट और स्वदेशी की तरक़ीब को अपनाया। लेकिन इनका मुख्यत: बंगाल में सरकार को बंग-विभाजन समाप्त करने के लिए अनुशीलन किया गया। 1906 में कांग्रेस ने भारतीय जनता के लक्ष्य के रूप में स्वराज को अपनाया। इसका अभिप्राय मात्र ब्रितानी संप्रभुता के अधीन स्व-शासन था।

32. मुसलिम लीग ने 1906 में अपने निर्माण के बाद घोषणा की कि सरकार के प्रति वफ़ादारी को बढ़ावा देना, मुसलिम हितों की रक्षा और अभिवृद्धि करना और दूसरे समुदायों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को आश्वस्त करना इसके लक्ष्य हैं।

33. प्रथम महायुद्ध के दौरान कांग्रेस ने (बाल गंगाधर तिलक जैसे अपने अतिवादी नेताओं सहित) ब्रितानी युद्ध-नीति को पूर्ण सहयोग प्रस्तावित किया। कांग्रेस के 1914, 1915 और 1916 के अधिवेशन क्रमश: मद्रास, बम्बई और यूपी के ब्रितानी गवर्नरों की व्यक्तिश: उपस्थिति द्वारा समुचित रूप से संबोधित किये गये।

34. मोहनदास कर्मचन्द गांधी ने, जो हाल ही में कांग्रेस में प्रविष्ट हुए थे, ब्रितानी विदेश सचिव को संबोधित 1914 को पत्र में अपनी सेवाएं प्रस्तावित कीं। युद्ध के दौरान अंगरेज़ों को दी गयी अपनी सेवाओं के लिए उन्हें 1917 की दिल्ली युद्ध-सभा में वॉयसराय द्वारा कैसर-ए-हिन्द स्वर्ण पदक से नवाज़ा गया।

35. कांग्रेस ने 1929 तक भारतीय जनता के लक्ष्य के रूप में स्वराज को समर्थन देना जारी रखा, तब यह अपने लाहौर अधिवेशन में स्वराज से पूर्ण-स्वराज अर्थात स्वतन्त्रता की ओर प्रवृत्त हुई।

उ. धर्म-आधारित राष्ट्र का सिद्धान्त

36. जहां तक एक धर्म-आधारित राष्ट्र के सिद्धान्त का सवाल है, राष्ट्रवाद की प्रक्रिया के अनुभव का सम्पूर्ण इतिहास इस प्रस्थापना को नकारता है। यह दर्शाता है कि धर्म एक राष्ट्र के कारगर आधार की रचना नहीं करता। मिसाल के तौर पर पाकिस्तान एक अकेले धर्म के आधार पर अपनी राष्ट्रीय एकता को नहीं बचा सका। एक ही ईसाई धर्म के मानने वाले होते हुए भी मात्र थोड़े से वर्ष पहले चैक और स्लोवाक गणतन्त्र एक दूसरे से अलग हो गये। 1930 के दशक में एक साझा धर्म स्वीडन और

नॉर्वे को एक सूत्र मे पिरोये रखने में विफल रहा। 1991 में पूर्व सोवियत संघ का विघटन मुख्यत: इसके तीन स्लाव मिश्रित ईसाई धर्म के प्रभुत्व वाले गणतन्त्रों अर्थात् रूस, यूक्रेन और बेलारूस के कारण हुआ। 1993 में यूगोस्लाविया भी मुख्यत: इसके तीन ईसाई-बहुल आबादी वाले गणतन्त्रों अर्थात् सर्बिया, क्रोएशिया और स्लोवैनिया के बीच राजनीतिक संघर्ष के कारण विभाजित हुआ।

37. मुख्यतया हिन्दू-बहुल जनसंख्या के बावजूद भारत और नेपाल विदेशी मामलों तक में भी एक साझी नीति में सहभागी नहीं हैं। एक ही संस्कृति, भाषा और धर्म के बावजूद 21 मध्य-एशियाई मुसलिम राष्ट्र एक साझी रक्षा-नीति भी नहीं घड़ सके। यूरोप के ईसाई आबादी वाले देश और पूर्व एवं दक्षिण-पूर्व एशिया में बौद्धधर्म प्राबल्य वाले देश कई-कई सदियों से न केवल परस्पर अलग-थलग रहे हैं; बल्कि एक-दूसरों के विरुद्ध सतत युद्धों में भी प्रवृत्त रहे हैं। राष्ट्रवाद के विकास की प्रक्रिया में धर्म ने कहीं भी और कभी भी जोड़ने वाली सक्षम शक्ति के रूप में कार्य नहीं किया है।

ऊ. हिन्दू कठमुल्लावादी तर्क-वितर्क

38. मुसलिमों की आक्रामक प्रकृति और मुसलिम शासन के अधीन भारत की पदावनित को लेकर हिन्दू कठमुल्लावादी तर्क के विषय में यह कहा जा सकता है कि तथ्य इस दावे की सम्पुष्टि नहीं करते।

39. प्रथम विचारणीय बिन्दु यह है कि किस प्रकार 'विदेशी आक्रमणकारी' अपने कुछ हज़ार सैनिकों के साथ अपने देशज प्रतिद्वन्द्वियों को हराने में सफल हो गये, जिनके सैन्य, आर्थिक और मानवीय संसाधन पहले वालों से कहीं ज्यादा विपुल थे? स्थानीय लोग अपने गृह-शासकों के बचाव के लिए आगे क्यों नहीं आए और उन्होंने विदेशियों के विरुद्ध विद्रोह क्यों नही किया? जाहिर है, स्थानीय लोगों की मूल शासकों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं थी और सत्ता की उस उठापटक से वे लोग अधिकांशत: तटस्थ ही रहे, जो शासक समूहों तक सीमित थी।

40. दूसरा बिन्दु यह है कि स्थानीय शासकों ने अपने विजेता-शत्रुओं के लिए कार्य करना क्यों स्वीकार किया? आने वाले शासकों ने अपने शत्रुओं के घुटने टिका देने के बाद सम्पूर्ण सामन्ती व्यवस्था को अछूता रखा और सम्पूर्ण पूर्व राजतन्त्र को हिन्दू राजाओं, राणाओं, रावों, ज़मीदारों और चौधरियों आदि सहित अंगीकार करते हुए प्रशासन के पूर्ण-नियन्त्रण के लिए लग़ाम को अपने हाथ में रखा। इस प्रकार हिन्दू शासन के मुखियाओं (हिन्दू कठमुल्लावाद के अनुसार जो तत्कालीन 'भारतीय देशभक्तों' का समुच्चय था) के अतिरिक्त कोई अन्य नहीं था, जिसने मुसलिम शासन की स्थापना में सहायता दी।

41. क्रमश: मुसलिम या हिन्दू शासकों के अधीन शुद्ध रूप से कोई मुसलिम या शुद्ध हिन्दू सेनाएं नहीं होती थीं। राजपूत मुखिया उच्च पदों पर होते थे, जो कभी-कभी मुसलिम, विशेषत: मुग़लिया शासन के दौरान सेनाध्यक्ष तक पदोन्नत होते थे। औरंगज़ेब का रनिवास राजपूत सेना द्वारा रक्षित होता था। राजपूत-नरेश मुसलिम शासन, खासतौर से मुग़लिया शासन में आज्ञाधीन भागीदार बनते थे। जब 1761 में अहमदशाह अब्दावली दिल्ली को रौंदकर वापस चला गया तब सफदरजंग एक मुग़ल-मराठा संयुक्त मोर्चा निर्मित करने की कोशिश कर रहा था। सम्पूर्ण मुसलिम शासन के दौरान, जबकि राज-व्यवस्था मुख्यतया मुसलिम हाथों में थी, अर्थ-व्यवस्था हिन्दू विशेषज्ञों द्वारा प्रबन्धित की जाती रही। महमूद ग़ज़नी, नादिशाह और अब्दाली के अतिरिक्त कोई मुग़ल शासक प्राचीन भारत की सम्पदा को देश से बाहर नहीं ले गया। छह सदियों के मुसलिम शासन के बाद भी 'भारत की सम्पदा' विश्व भर में प्रसिद्ध रही।

42. विजयनगर के हिन्दू शासक की सेना में 80,000 तक मुसलिम सैनिक सम्मिलित थे। शिवाजी की गुरिल्ला फौज में हिन्दू और मुसलिम दोनो होते थे। यहां तक कि राणा प्रताप की सेना भी बहुत से मुसलमानों पर आधारित थी। उनके तोपखाने का प्रमुख — जो उन दिनों सेना की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शाखा होती थी -एक मुसलिम था। प्रारम्भिक अठारहवीं सदी में मुग़लिया शासन के खिलाफ सिख किसानों के साथ-साथ लड़ते हुए हजारों मुसलिम खेतिहर कामगारों ने अपनी जानें कुर्बान की; जबकि हिन्दू राजा औरंगज़ेब की तरफ से लड़ रहे थे।

43. मुसलिम अवाम (जिनमें से अधिकांश देशज मूल के हैं और कुछ विशेष सांस्कृतिक प्रथाओं को मानना आज भी जारी रखे हुए हैं) उतने ही निर्धन और उत्पीड़ित थे जितने कि ग़ैर-मुसलिम अवाम। ग्रामीण समुदायों में हिन्दुओं के साथ-साथ रहते हुए मुसलमानों ने ग्रामीण कृषि द्वारा वांछित पारम्परिक धन्धों और हस्त-कलाओं को अपनाया जिनका तैयार माल सारी ग्राम्य लोक-आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उपयोग में लाया जाता था। देशज मुसलमानों ने कभी भी उस राजनीतिक सत्ता में किसी तरह की भागीदारी का आनन्द नहीं उठाया, जिसका उच्च वर्गीय मुसलिमों और प्रभु वर्ग के हिन्दुओं द्वारा मज़ा लूटा जा रहा था।

44. हिन्दुओं और मुसलमानों के मध्य सांस्कृतिक अन्तरक्रिया ने साझे पीर-फक़ीरों और गुरुओं को उत्पन्न किया (जैसे कि सिख गुरु, कबीर, रविदास, शेख़ फ़रीद आदि), राजनीतिक अन्तरक्रिया ने दूरदर्शी राजनीतिज्ञ पैदा किये (जैसे कि अकबर, शिवाजी, दाराशिकोह, गुरु गोविन्दसिंह, आदि) और आर्थिक अन्तरक्रिया ने (टोडरमल जैसे) कृषि-क्षेत्र के विशेषज्ञों को जन्म दिया।

45. शीर्षस्थ स्तरों पर समुदायों के बीच वैवाहिक संबंध आम थे। निम्न स्तर पर ऐसे संबंध दूरस्थ स्थानों; यथा राजौरी, लद्दाख, बाल्तीस्तान आदि में अस्तित्व में थे।

46. इस्लाम में धर्मान्तरण वास्तव में ऐसे स्थानों पर हुआ (यथा: कश्मीर, केरल, पूर्वी बंगाल आदि) जहां दिल्ली दरबार का भी ज्यादा सिक्का नहीं चला। यह स्पष्ट है कि धर्मान्तरण आधिकारिक दबाव के कारण स्वतन्त्र रूप से हुए, मुख्यत: मुसलिम संतो (सूफ़ियों) के उपदेशों के कारण। दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र में पर्याप्त बहुमत के साथ हिन्दुओं का वर्चस्व रहा।

47. अपने हिन्दू प्रतिपक्षियों की तरह मुसलिम शासकों ने भी अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धर्म का उपयोग किया, जिनमें से धन प्राप्ति के लिए एक तरीका मन्दिर लूटना था। लेकिन उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों की बीच में कभी स्थाई खाई पैदा करने का प्रयास नहीं किया; यह उन मुसलिम शासकों के व्यवहार से स्पष्ट है जो धार्मिक रूप से कट्टर समझे जाते हैं।

48. अठारहवीं सदी के अन्तिम चतुर्थांश के दौरान हिन्दू पेशवा रघुनाथराव पटवर्धन के द्वारा श्रृंगेरी हिन्दू मठ की लूटपाट को रोकने के लिए टीपू सुलतान ने अपनी सेनाएं भेजी थी। टीपू के मुख्यमंत्री (पूर्णय्या), कोषाध्यक्ष (कृष्ण राव) और पुलिसमंत्री (श्यामा आयंगार) सब हिन्दू थे; जबकि औरंगज़ेब ने कुछ हिन्दू मन्दिरों को ध्वस्त किया। उसने सैकड़ों मन्दिरों के लिए सहायता राशियां स्वीकृत कीं, जिनमें अहमदाबाद का जगन्नाथ मन्दिर भी मुख्य है।

49. यह बात ध्यान देने के लिए महत्त्वपूर्ण है कि छह सौ साल के मुसलिम शासन के दौरान 1673 में केवल एक सांप्रदायिक उपद्रव अहमदाबाद में हुआ था। हिन्दू और मुसलिक शासकों के बीच प्राय: होने वाले युद्धों के बावजूद इतने लम्बे समय तक दोनों समुदायों के संबंध नहीं बिगड़े।

ऋ. मुसलिम रूढ़िवाद का सवाल

50. हिन्दू रूढ़िवादी तार्किकता के विकास के फलस्वरूप वैसा ही तर्क मुसलमानों में भी विकसित होना शुरू हो गया। पुनरुत्थानवादी हिन्दू नेताओं की तरह कुछ शिक्षित मुसलिम लोग नए हालात में मुसलिम हितों की सुरक्षा के बारे में सोचने लगे। इन विचारकों में सय्यद अहमद खान विशेष उल्लेख के अधिकारी हैं। प्रारम्भ में एक राष्ट्रवादी और हिन्दू-मुसलिम एकता के प्रेमी, दो समुदायों को उस सुन्दर दुलहन की, जिसे भारत कहा जाता है, दो आंखे कहने वाले सय्यद अहमद, मुसलिम अधिकारों की ओर ज्यादा ध्यान देते हुए अंगरेज़ों के प्रति वफादार हो गये। उनके तर्क के अनुसार

ब्रितानी राज एक प्रगतिवादी शासन था, जिसे पलटने की कूव्वत मुसलमानों में नही थी। मुसलिम शासन दुबारा नहीं लाया जा सकता था। ब्रितानियों के साथ सहयोग करके हिन्दू तबका शिक्षा और रोजगार में मुसलमानों से आगे निकल गया था। इसलिए मुसलमानों को आधुनिक शिक्षा प्राप्त करने पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। एक प्रजातान्त्रिक राज-व्यवस्था हिन्दुओं को बढ़त प्रदान करेगी। उस स्थिति में हिन्दुओं से स्पर्धा करना एक निरर्थक काम होगा। अत: एक सम्भावित हिन्दू-प्रभुत्व से ब्रितानी शासन श्रेयस्कर था।

51. सय्यद अहमद की 1899 में मृत्यु हो गयी; किन्तु उनके विचार मुसलिम रूढ़िवादियों की कल्पना को प्रज्ज्वलित करने के साथ ब्रितानी प्रशासकों में से कुछ के चित्त में चढ़ गये, जिन्होंने इस दलील को बल देने में भारत में अंगरेज़ी राज के चिरस्थायित्व को देखा।

52. इस विचार ने 1906 में मुसलिम लीग के नाम के अधीन अपनी राजनीतिक-संगठनात्मक शक्ल प्राप्त की और इसके बाद जो कुछ हुआ वह अब इतिहास है।

ए. विशुद्ध भारतीय राष्ट्रवाद के रूप में गांधीवाद का सिद्धान्त

(i) गांधीवाद का प्रसंग

53. भारतीय राष्ट्र के महान् नेता मोहनदास कर्मचन्द गांधी लगभग 28 वर्षों (1919-1948) तक भारतीय परिदृश्य पर छाये रहे और इसी काल को सही रूप में भारतीय इतिहास का गांधी-युग कहा जा सकता है।

54. गांधी ने प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति पर कांग्रेस का नेतृत्व ग्रहण किया। उस समय भारतीय राष्ट्र पंजाब में जलियावाला हत्याकाण्ड, रॉव्लेट ऐक्ट लागू किये जाने और 1918 के मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों की अपर्याप्त प्रकृति के कारण क्रोध से सीझ रहा था। नग्न साम्प्रदायिकता और जातिगत दमन लोगों की एकता में बाधा डाल रहे थे। राष्ट्रीय लक्ष्य और उसे प्राप्ति के तरीके के बारे में कोई मतैक्य नहीं था। विभिन्न दल पृथक्-पृथक दिशाओं मे आगे बढ़ रहे थे।

(ii) गांधीवाद का प्रमुख सरोकार

55. गांधी ने हिन्दू-मुसलिम समस्या को, जो काफी समय से राष्ट्रीय एकता में बाधा डाल रही थी, अपनी प्रमुख चिन्ता के रूम में अलग छांटा। वे 1919 में ख़िलाफ़त आन्दोलन के दौरान पहली बार इस समस्या से जुड़े। इस क्षण के बारे में बोलते हुए उन्होंने कहा : "मेरे लिए यह जीवन में केवल एक बार आने वाला मौक़ा था। मैंने अनुभव किया कि यदि मैं परीक्षा की इस घड़ी में अपने मुसलिम देशवासियों

के प्रति अपनी वफादारी दिखला सकूं तो मैं दोनों समुदायों के बीच अटूट मित्रता स्थापित करने में समर्थ रहूंगा।" लेकिन यह समस्या का अति सरलीकरण मात्र था।

56. हिन्दू-मुसलिम बंटवारे की समस्या धर्म से कम और राजनीति, अर्थशास्त्र और संस्कृति से कहीं ज्यादा सम्बन्धित थी। इस प्रश्न में कई मुद्दे शामिल थे —अर्थात् भावी भारतीय सत्तातन्त्र में बहुमत-अल्पमत आधार पर भागीदारी, अल्पसंख्यकों के आर्थिक कल्याण के बारे में दृढ़ आश्वासन, अल्पसंख्यकों को सांस्कृतिक अस्मिता की प्रतिभूति आदि। समस्या से राजनीतिक-आर्थिक-सांस्कृतिक आधार पर निपटने के बजाय गांधी ने इसे एक धार्मिक आधार पर सुलझाने का प्रयास किया। उन्होंने सोचा कि ईश्वर-अल्लाह की एकता के सिद्धान्त पर यदि इन समुदायों को इकट्ठा किया जाए तो वे धीरे-धीरे साथ रहना सीख लेंगे; लेकिन राम-रहीम एकता का यह गांधीवाद सूत्र चला नहीं।

(iii) धर्म को राजनीति से जोड़ने का गांधीवादी परिप्रेक्ष्य

57. कांग्रेस में गांधी के नेतृत्व के दौरान ऐसे अनेक मौके आए जब 'कुछ दे-कुछ ले' सूत्र के आधार पर यह समस्या सुलझाई जा सकती थी। लेकिन धर्म और राजनीति के घालमेल वाले गांधीवादी परिप्रेक्ष्य ने किसी समझौते पर पहुंचने के सारे अनुकूल अवसर बेकार कर दिए।

58. गांधीवादी राजनीति ने भारत की नई सामाजिक व्यवस्था के रूप में रामराज्य पर ज़ोर दिया। मानव-व्यवहार के लिए आदर्श नैतिक आधार के रूप में एक हिन्दू धर्मग्रंथ श्रीमद्भगवद्गीता को प्रस्तुत किया। राष्ट्रगीत के रूप में वन्दे मातरम् को चुना, जिसका मूल "मुसलिम आक्रान्ताओं को लड़-भगाने में युद्धघोष के रूप में प्रयुक्त एक नारे में था।" "गौ-पूजा को मानवतावाद के क्रमिक विकास में हिन्दू-धर्म के अद्वितीय योगदान के रूप में" चिह्नित किया और जाति-व्यवस्था की खोज को सत्य के लिए अनवरत शोध के भव्य परिणाम के रूप में रेखांकित किया। कुल मिलाकर, इसने गांधी को भारत में हिन्दू पुनरुत्थानवाद के महान्तम वास्तुकार के रूप में उभारा।

59. गांधीवादी दर्शन (अर्थात् गीता), आदर्श (अर्थात् राम-राज्य) और कार्यपद्धति (पुरातन हिन्दू-विचारों की उनकी पुनर्व्याख्या और उनका मानवतावादी अवधारणाओं में रूपान्तरण, दैनिक हिन्दू कर्मकाण्ड, मुहावरे,गीत आदि) हिन्दू-मुसलिम फूट की समस्या को सुलझाने के विपरीत थे। यह एक सर्वमान्य विचार है कि विवाद से सम्बद्ध एक पक्ष का साथ देने वाले किसी व्यक्ति को न्यायाधीश या मध्यस्थ के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। वस्तुत: विभिन्न समुदायों के नेतृत्व का भार वहन करने वाली किसी शख्सीयत से संकीर्ण संघर्षों से ऊपर उठे होने की अपेक्षा की जाती है। गांधी इस मामले में चूक गये। उन्होंने अपने आपको बहुसंख्यक समुदाय के

नेता के रूप में उभारा। यही कारण है कि भारतीय अल्पसंख्यकों, विशेषकर मुसलिमों ने, उन्हें कभी भी एक गैरज़ानिबदार और निष्कपट नेता के रूप में स्वीकार नहीं किया। वे उन्हें आधुनिक युग के एक हिन्दू सुधारक के रूप में देखते थे।

60. गांधी के राजनीति और धर्म में घालमेल के सम्बन्ध में नेहरू के बारंबार उल्लेख काफी अर्थवान हैं। अपनी आत्मकथा (1941-पुनर्मुद्रण, पृ. 2) में उन्होंने लिखा, "गांधी वास्तव में आन्दोलन के आध्यात्मिक और धार्मिक पक्ष पर निरन्तर जोर डाल रहे थे। उनका धर्म मतान्ध नहीं था; किन्तु यह जीवन के धार्मिक दृष्टिकोण को निश्चयात्मक रूप से अभिव्यंजित करता था और सारे का सारा आन्दोलन इससे जबरदस्त ढंग से प्रभावित हुआ था और जहां तक जन-साधारण की सोच है, इसने एक पुनरुत्थानवादी चरित्र ग्रहण कर लिया था। .....मैं कभी-कभी हमारी राजनीति में इस धार्मिक तत्त्व के हिन्दू और मुसलिम दोनों पक्षों पर बढ़ते प्रभाव से चिन्तित हो जाया करता था। मैं इसे बिलकुल पसन्द नहीं करता था। .....यहां तक कि कई बार मुझे गांधी जी की शब्दावली भी खटकती थी; खासतौर से उनके स्वर्णिम युग के रूप में आगामी रामराज्य के बारे में बारंबार उल्लेख।"

(iv) गांधीवादी व्यवहार

61. वास्तव में गांधी ने विवादित मुद्दों पर सार्थक प्रस्तावों को अस्वीकार करके मुसलमानों को राष्ट्रीय मुख्यधारा में लाने के सारे अवसर बरबाद कर दिये और इस प्रकार उन्हें मुसलिम लीग की गोद में धकेल दिया।

(क) पहला मौका 1928 के नेहरू प्रतिवेदन के प्रकट होने के बाद आया जिसने भारत के भावी संविधान के निर्माण के लिए सिद्धान्त निर्धारित किए थे। मुसलिम लीग ने उस प्रतिवेदन हेतु कुछ संशोधन प्रस्तावित किए; अर्थात् अवशिष्ट शक्तियों का प्रान्तों को, न कि केन्द्र को सौंपा जाना, विधायिकाओं में मुसलमानों को अधिक महत्व प्रदान किया जाना और उनके लिए अलग निर्वाचक मण्डल बनाया जाना आदि, एक सर्वदलीय सम्मेलन ने, जो प्रतिवेदन पर विचार करने के लिए बुलाया गया था, कांग्रेस के अनुरोध पर मुसलिम लीग के संशोधन अस्वीकार कर दिये। अगर ये संशोधन स्वीकार हो गये होते तो एक संगठित भारत को बनाए रखा जा सकता था।

(ख) दूसरा अवसर 1937 में आया जब प्रान्तीय विधानसभा चुनावों में मुसलिम लीग के घटिया प्रदर्शन और कांग्रेस की शानदार सफलता के बाद जिन्ना ने बम्बई और यूपी विधानसभाओं में कांग्रेस, मुसलिम लीग सत्ता-सहभागिता का सुझाव देते हुए गांधी को एक व्यक्तिगत संदेश भेजा। गांधी का लिखित उत्तर अर्थात् "काश कि मैं कुछ कर सकता; लेकिन मैं मजबूर हूँ" (राजमोहन गांधी : "अ स्टॅडी ऑव द हिन्दू-मुसलिम इनकाउंटर" पृ. 145) सीधा-सीधा जिन्ना का मुंह झाड़ना था। नेहरू ने

यूपी मुसलिम लीग के मिली-जुली सरकार के प्रस्ताव को शेख़ीपूर्ण ढंप से यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि भारत में केवल दो ही दल - कांग्रेस और ब्रितानी हैं और कांग्रेस के सिवा भारतीय जनता का कोई और प्रतिनिधित्व नहीं करता। यह एक अत्यन्त विवेकहीन और अदूरदर्शितापूर्ण बयान था जिसने तत्कालीन पंजाब में ख़िज़्र हयात खां के नेतृत्व में सत्ता पर अधिकार रखने वाली यूनियनिस्ट पार्टी और बंगाल में फ़ज़्लुल हक़ के नेतृत्व में शासन करने वाली कृषक प्रजा पार्टी जैसे विभिन्न शक्तिशाली प्रादेशिक मुसलिम दलों के साथ एक संयुक्त मोर्चे के विकल्प को भी बन्द कर दिया। कई महत्त्वपूर्ण कांग्रेसी नेताओं (यथा : मौलाना आजाद, के ऐम मुंशी, दीवान चमनलाल गांधी के निजी सचिव प्यारेलाल आदि), इतिहासकारों (जैसे आर सी मजूमदार, माइकल बेचर, आदि) और लेखकों (जैसे कि फ्रैन्क मोरेस, के के अजीज़ आदि) ने टिप्पणी की है कि कांग्रेस के इस घमण्डी रवैये ने ही मुसलिम अवाम को भारत से विमुख कर दिया और फलत: परोक्ष रूप से पाकिसतान की मांग को समर्थन मिला।

(ग) विभाजन को टालने का अन्तिम अवसर जुलाई 1946 में खो दिया गया जब कांग्रेस और मुसलिम लीग दोनों द्वारा मई 1946 की कैबिनेट मिशन योजना की (जो तीन समूहों के बने हुए एक स्वतन्त्र संगठित भारत को सामने देखती थी; जिनमें से प्रत्येक के साथ कुछ निश्चित प्रान्तों का सम्बद्ध होना अनिवार्य था) स्वीकृति के बाद गांधी और नेहरू ने, जो प्रान्तों की अनिवार्य समूहबद्धता के विरुद्ध थे, अपनी पूर्व की वचनबद्धता से चालाकीपूर्ण ढंग से बच निकलने की कोशिश की। गांधी ने अपनी दैनिक प्रार्थनासभाओं में इस योजना के विरुद्ध प्रचार किया ("ट्रांस्फर ऑफ पावर" ज़िल्द XI पृ. 106); लेकिन यह बात ख़बरों में नही आयी। जब नेहरू ने 10 जुलाई 1946 को एक प्रेस-वक्तव्य दिया कि कांग्रेस संविधान सभा में समझौते से अबाधित रहते हुए प्रवेश करेगी, स्थिति-विकास के अनुसार उनका सामना करने के लिए स्वतन्त्र रहेगी (जो योजना की वास्तविक अस्वीकृति के समान था), तो मुसलिम लीग ने, जो प्रान्तों की अनिवार्य समूहबद्धता को योजना के मूल हिस्से के रूप में देखती थी (जैसा कि बाद में कैबिनेट मिशन द्वारा भी सत्यापित किया गया), तुरन्त उक्त योजना से अपनी सहमति को वापस लेकर प्रतिक्रिया व्यक्त की। नेहरू की 10 जुलाई 1946 की प्रेस-वक्तव्य में की गयी "अमर्यादित टिप्पणियों" के बारे में प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए पटेल ने डीपी मिश्रा को एक पत्र में लिखा, "यद्यपि नेहरू कांग्रेस के चौथी बार अध्यक्ष चुने गए हैं, फिर भी वे अकसर बच्चों जैसी अबोधता के साथ काम करते हैं जो हमें बिलकुल अनपेक्षित रूप से बड़ी कठिनाइयों में डाल देती है।" ("क्लेक्टड वर्क्स ऑफ सरदार वल्लभ भाई पटेल" ज़िल्द X डॉ. पी ऐन चोपड़ा)।

62. यदि कांग्रेस के शीर्ष नेताओं का उद्देश्य सत्ता का व्यक्तिगत विवर्धन न होकर, देश की एकता होता तो कैबिनेट मिशन योजना व्यवहारिक थी। मौलान आजाद

के अनुसार पहले पटेल और नेहरू, लार्ड माउण्टबैटन के विभाजन षड्यन्त्र के शिकार हुए (इण्डिया विन्स फ्रीडम, देहली 1959 पृ. 183)। एक निष्कपट उद्देश्य के साथ अपनी क्रियान्विति की समयावधि के दौरान कैबिनेट मिशन योजना के दोष सुधारे जा सकते थे। यहां तक कि गांधी और नेहरू ने भी, जिन्होंने इसे विभाजन से भी बदतर बताते हुए इसकी निन्दा की थी, सिर्फ एक महीने बाद अक्षरश: और इस आकांक्षा के साथ इसके विनियोग की मांग करनी शुरू कर दी। लेकिन तब तक इसे पुन: प्राप्त करने में आवश्यकता से अधिक देर हो चुकी थी।

63. स्पष्टत: यह कांग्रेस ही थी, जिसने दलीय हितों को राष्ट्रीय हितों से ऊपर रखकर राष्ट्रीय उद्देश्य को हानि पहुंचाई। उस समय राष्ट्रीय लक्ष्य एक संगठित भारत के लिए राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्त करना था। इस द्विपक्षीय राष्ट्रीय लक्ष्य में यह देश की एकता या राष्ट्रीय एकता थी जिसने प्रथम स्थान ग्रहण किया; क्योंकि स्वाधीनता स्वयं राष्ट्रीय एकता पर निर्भर थी। राष्ट्रीय एकता का नुकसान एक असंशोधनीय घटक था और इसने केवल हमारे सम्पूर्ण लोगों का ही नहीं; बल्कि पूरी मानव जाति के लिए भारी नुकसान किया; जबकि ब्रितानी उपनिवेशवाद सहित कोई भी स्वाधीनता को अधिक समय तक टाल नहीं सकता था और देर-सवेर यह आनी ही थी। नेहरू-पटेल गठजोड़ ने आसन्न सत्ता की अपनी लिप्सा में देश की एकता के प्राथमिक पक्ष को राष्ट्रीय स्वाधीनता से निचले दर्जा का बना दिया। इस प्रकार इस गठजोड़ ने राष्ट्रीय प्रश्न को उलटा-पुलटा करते हुए देश के विभाजन का रास्ता तैयार कर दिया।

(v) 1947 से पहले अन्य राजनीतिक शक्तियों की भूमिका

64. 1947 से पहले की अन्य राजनीतिक शक्तियों की भूमिका के बारे में विचार करते हुए यह कहना पड़ेगा कि राष्ट्रीय एकता को भंग करने में कम्यूनिस्ट पार्टी की भूमिका भी कांग्रेस से किसी प्रकार कम हानिकारक नहीं थी। पाकिस्तान के साम्प्रदायिक नारे को आत्मनिर्णय के अधिकार के समान बनाकर इसने हिन्दू-मुसलिम खाई को चौड़ा करने में सहायता प्रदान की। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और हिन्दू महासभा के हिन्दू श्रेष्ठता के दुराग्रह ने वातावरण को और विषाक्त बना दिया और इस प्रकार मुसलिम विघटनवाद परोक्षरूप से मजबूत हुआ। अकाली दल की एकमात्र कमी यह थी कि इसने कांग्रेस के अवसरवादी दृष्टिकोण को अविवेकी समर्थन दिया।

65. मुसलमानों में ज्यादा समर्थन न होने की स्थिति में 1945 तक मुसलिम लीग के पास दिखाने के लिए कुछ भी न था। 1931 में स्वयं जिन्ना ने राजनीति से अवकाश ले लिया और केवल 1935 में पुन: इससे जुड़े मुसलिम प्रभाव वाले क्षेत्रों में — अर्थात् सिंध, बलूचिस्तान और उत्तर-पश्चिमी सीमान्त मुसलिम लीग को नाममात्र समर्थन मिलता था और पाकिस्तान की मांग के साथ कोई जन-आन्दोलन नहीं था।

बंगाल और पंजाब के स्पष्ट मुसलिम बहुल क्षेत्रों में 1946 तक बंगाल कृषक प्रजा पार्टी के और पंजाब यूनियनिस्ट पार्टी के नियंत्रण में रहा। मुसलिम लीग को केवल यूपी और बिहार में व्यापक मुसलिम जनसमर्थन था, जहां मुसलिम बहुत ही कम संख्या में थे। 1945-46 के आसपास मुसलिम अवाम में मुसलिम लीग के प्रभाव में विस्तार का बुनियादी कारण राष्ट्रीय प्रश्न पर कांग्रेस का पुनरुत्थानवादी दृष्टिकोण था, जबकि लघु कालीन कारण नेहरू और पटेल जैसे कुछ शीर्ष कांग्रेस नेताओं का दादागीरी वाला व्यवहार था।

(vi) ब्रितानी उपनिवेशवाद की भूमिका

66. जहां तक भारत में ब्रितानी उपनिवेशवाद की भूमिका का प्रश्न है, "फूट डालो और राज करो" की नीति को एक सोची-समझी चाल के तहत साम्प्रदायिक चेतना के विषबीज जनमानस में बोने के हथकंडे के रूप में आजमाया। इस प्रकार मुसलिम अलगाववाद को दृढ़ करने की ब्रितानी नीति का निम्न तथ्यों के आलोक में अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है।

67. सर्वप्रथम तो यह तर्क इस तथ्य की व्याख्या करने में विफल रहता है कि ब्रितानी उपनिवेशवाद और विघटनवादी मुसलिम लीग के दफा हो जाने के 50 साल बाद और नेहरूवादी समाजवाद के साथ गांधीवादी रामराज्य के कांग्रेसी भविष्य-निरूपण के लम्बे विनियोजन के पश्चात् आज भी हमारे देश में साम्प्रदायिकतावाद का तांडव क्यों यथावत जारी है? यदि ब्रितानी उपनिवेशवाद या मुसलिम लीगी अलगाववाद इसके वास्तविक कारण रहे होते तो 1947 के बाद समस्या समाप्त हो गई होती।

68. दूसरे, ऐतिहासिक रूप से, जैसा साम्प्रदायिकता को समझा जाता है उस रूप में, भारत में मुगल काल के दौरान या ब्रितानी उपनिवेशी शासन की एक शताब्दी से अधिक लम्बी अवधि (1757-1880) के दौरान साम्प्रदायिकतावाद की कोई भी समस्या अस्तित्व में नहीं रही। यद्यपि हिन्दू-मुसलिम धार्मिक चेतना मुसलमानों के आगमन के समय से ही भारत में अस्तित्व में रही है, तो भी यह साम्प्रदायिकता में तभी बदली, जब धर्म और राजनीति का घालमेल शुरू हुआ। हिन्दू और मुसलिम पुनरुत्थानवादी नेताओं से शुरू होते हुए यह समस्या वैसे-वैसे बढ़ती गयी जैसे-जैसे कांग्रेसी और मुसलिम लीगी नेताओं द्वारा धार्मिक शब्दावली में सत्ता के जनतांत्रिक ढांचे को बहुसंख्यक-अल्पसंख्यक सिद्धान्त पर हल करना शुरू किया। भारत की स्वाधीनता की किसी भी योजना को अंतिम रूप दिये जाने से पहले मुसलिम अल्पसंख्यक भारत की भावी जनतांत्रिक व्यवस्था में अपने अल्पसंख्यक अधिकारों का निर्धारण चाहते थे। लेकिन कांग्रेस देश की अल्पसंख्यक या साम्प्रदायिक समस्या का एक राष्ट्रीय समाधान निकालने में विफल रही।

69. तीसरे, "फूट डालो और राज करो" की ब्रितानी नीति का भी वही उद्देश्य था, जो भूतकालिक हिन्दू और मुसलिम शासकों का रहा था अर्थात् राजनीतिक आर्थिक लाभ सुनिश्चित करना। लेकिन इसने दो समुदायों के बीच एक स्थायी खाई पैदा करने का प्रयास कभी नहीं किया। जो कुछ भी साम्प्रदायिक तरीके — अलग निर्वाचन मण्डल, साम्प्रदायिक पंचाट आदि — इसने अपनाये वे वास्तव में भारत में साम्प्रदायिक समस्याओं के हल के अत्यावश्यक तत्त्व थे। और इसके हल का विनियोजन केवल इसी कारण सम्भव हुआ कि सम्बद्ध दलों द्वारा कोई सर्वसम्मत विकल्प नहीं ढूंढा जा सका।

70. चौथे, भारत में प्रचलित इस आम राय को कि विभाजन मुसलिम लीग के साथ सहयोग से ब्रितानी उपनिवेशवाद द्वारा उत्पन्न किया गया, 1942-1947 के 7482 दस्तावेजों सहित समस्त कार्यालय-अभिलेख रखने वाले हाल ही प्रकाशित 12 खण्डीय ग्रन्थ "ट्रान्सफर ऑफ पावर" से कोई समर्थन नहीं मिलता। नये तथ्य यह उद्घाटित करते हैं कि कैबिनेट मिशन योजना ने एक एकीकृत भारत की स्वाधीनता सुनिश्चित करने के लिए अंतिम अवसर प्रदान किया। इसने पाकिस्तान बनाने की मुसलिम लीग की मांग को अस्वीकार किया और कांग्रेस की संगठित और स्वाधीन भारत की मांग का समर्थन करने के साथ मुसलिम अल्पसंख्यकों को सुरक्षा उपाय प्रदान किए। इस प्रकार इस योजना ने कांगेस और मुसलिम लीग में संतुलन स्थापित करके एक कारगर हल प्रस्तावित किया; जिसने दूसरे शब्दों में भारत की एकता के संरक्षण और मुसलमानों की न्यायसंगत शंकाओं के निवारण का प्रयास किया।

71. पांचवे, कैबिनेट मिशन योजना ने भारत की भावी नियति के निर्धारण की सारी जिम्मेदारी कांग्रेसी और मुसलिम लीगी नेताओं के कान्धों पर डाल दी थी, क्योंकि उन्हें ही एक ढीलेढाले परिसंघ के भीतर एक स्वाधीन एकीकृत भारत के संरक्षण या भारत और पाकिस्तान के रूप में भारत के विभाजन को स्वीकार करने के बीच अन्तिम चुनाव करना था। शुरू में कांग्रेस और मुसलिम लीग दोनों ने ही इस योजना को स्वीकार कर लिया। लेकिन कुछ दिनों बाद पहले कांग्रेस और फिर मुसलिम लीग ने अपने-अपने पूर्व-निर्णयों को सुरक्षित रखा और इस प्रकार भारत के विभाजन को अवश्यम्भावी बना दिया। माउण्टबैटन ने जब विभाजन योजना को घोषित किया, गांधी और नेहरू दोनों चिल्लाए कि कैबिनेट मिशन योजना एक पंच-फैसले के रूप में बाध्यकारी ढंग से लागू की जाए। ("ट्रान्सफर ऑफ पावर" खण्ड X पृ. 1013-14; खण्ड XI पृ. 5, पादटिप्पणी 5, और खण्ड VII पृ. 466, 613) लेकिन तब तक स्थितियां हाथ से निकल चुकी थीं।

(vii) क्या विभाजन अपरिहार्य था?

72. विभाजन न तो अवश्यम्भावी था और न ही अपरिहार्य। दीर्घावधि कोण से अगर गांधी ने अपनी हिन्दू कार्य-सूची को प्रक्षेपित न किया होता और कांग्रेस ने मुसलिम लीग से तिरस्कार के साथ बर्ताव न किया होता तो मुसलिम लीग ने मुसलिम अवाम में प्रथम स्थान न प्राप्त किया होता।

73. लघु-अवधि दृष्टिकोण से 1947 में विभाजन जब मुसलिम अवाम की मांग बन चुका था तब तीन विकल्प सामने थे। अर्थात् (क) दोनों पक्षों द्वारा यथा स्वीकृत ब्रितानी कैबिनेट मिशन योजना, (ख) संयुक्त रक्षा व्यवस्था के साथ दोनों राज्यों का एक परसिंघ, और (ग) दोनों विवादियों को एक तर्कसंगत समझौते तक पहुंचाने के योग्य बनाने के लिए ब्रितानी राज का कुछ और समय तक जारी रखना। इन सभी विकल्पों को दोनों पक्षों के, विशेषकर कांग्रेस के, सत्ता लोलुप राजनीतिज्ञों द्वारा दुरदुरा कर दिया गया।

74. विभाजन के बाद घटनाओं के विकास से अब देखा जा सकता है कि उक्त तीनों विकल्पों में से कोई एक बेड़ा पार लगा सकता था। अब उपलब्ध साक्ष्य के अनुसार जिन्ना ने अपने अंतिम दिनों (1948) के दौरान विभाजन पर पश्चाताप किया, और (हिन्दू, 29-11-87, पृ. 1 में उद्धृत फ्रंटियर पोस्ट, पेशवर के अनुसार) यह कहा बताते हैं : "मैंने पाकिस्तान का निर्माण करके महान्तम गलती की है और मैं दिल्ली जाकर नेहरू से विगत की मूर्खताओं को भूलने और पुन: मित्र बनने की बात कहना चाहूंगा।" माइकल ऐडवर्ड्स ने अभिलेखित किया था : "यह संदेहपूर्ण है कि क्या जिन्ना वास्तव में पाकिस्तान चाहते थे। उनके सारे कार्य नकारात्मक और एक अविभाजित कांग्रेस-शासित भारत के अस्तित्व में आने से रोकने की तरफ लक्षित थे।" ("द लास्ट ईयर्स ऑफ ब्रिटिश इण्डिया", लंदन, कैसल, 1963)। आयशा जलाल ने अपने शोधपत्र ("द' सोल स्पॉकमैन, जिन्ना, द-मुसलिम लीग ऐंड द डिमांड फॉर पाकिस्तान") में लिखा कि "यह कांग्रेस थी जिसने विभाजन पर आग्रह किया। यह जिन्ना थे, जो पाकिस्तान के विरुद्ध थे।" (पृ. 262) उसके अनुसार, "पाकिस्तान सौदेबाजी का एक पटल मात्र था" (पृ.213, पाद-टि. 18)। पाकिस्तान के निर्माण के बाद ज्यादा समय न गुजरते ही मुसलिम लीग का छितराव दर्शाता है कि यदि कांग्रेस ने भारत को एकीकृत रखने का कोई संवैधानिक रूप स्वीकार किया होता तो देश के भीतर अर्थात् कांग्रेस, मुसलिम लीग और दूसरी राजनीतिक शक्तियों के भीतर हमारे राष्ट्रवासियों के सामने विकास और सामाजिक संगठन के नये विकल्प खोलते हुए शक्तियों का एक नया गठजोड़ अस्तित्व में आ गया होता।

75. विभाजन को एकमात्र व्यवहार्य समाधान के रूप में दर्शाने वाले कांग्रेस

और मुसलिम लीग के दावों के विपरीत तथ्य संकेत करते हैं कि यह देश पर थोपा जाने वाला निष्कृष्टतम समाधान था। इसने दोनों तरफ के लोगों के जान और माल की भयावनी कीमत वसूल की। इतने तुच्छ सौदे के लिए इतनी भारी कीमत चुकाने के बाद हम आज भी अंधकार में भटक रहे हैं।

(viii) गांधीवाद की विफलता के कारण

76. गांधीवाद हिन्दू-मुसलिम एकता का लक्ष्य प्राप्त करने में क्यों विफल रहा और यह विभाजन को क्यों नहीं रोक सका? इसका कारण यह रहा कि यह भारतीय परिस्थितियों का यथार्थवादी ज्ञानबोध नहीं रखता था। यही कारण है कि इसके सिद्धान्त और व्यवहारिक पक्ष भारत की प्रकृति के समरूप और इस तरह भारतीय हितों के अनुरूप नहीं थे।

77. एक बहु-धर्मी, बहु-नस्ली, बहु-भाषी, बहु-जातीय और बहु-क्षेत्रीय देश होने के कारण भारत को सब प्रकार के धार्मिक पूजा-वस्तुओं और चमत्कारों से मुक्त एक ऐसी तर्कबुद्धिपरक मानवतावादी कार्य-सूची की आवश्यकता थी जो विभिन्न प्रकार के सामाजिक समूहों को एक साझे मंच पर संगठित कर सकती।

78. भारत के बहुविध सामाजिक चरित्र के प्रति सही प्रतिक्रिया करने के बजाय गांधी ने परिष्कृत हिन्दू मानवतावाद का झण्डा उठा लिया, जिसको उन्होंने अपने पारम्परिक हिन्दू पुनरुत्थानवादी पूर्वगामियों के सिद्धान्तों का नवगठित करके विकसित किया था। राम-रहिम का एक नया नारा गढ़ते हुए उन्होंने सब धर्मों के लिए सम्मान का उपदेश दिया; किन्तु व्यावहारिक रूप से उन्होंने स्वयं के धर्म-हित की वकालत की। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से वे सब प्रकार के हिन्दू संगठनों, जैसे गौ रक्षा समिति, गौ सेवा संघ, संगठन, शुद्धि आदि को समर्थन देते रहे। इससे जुड़े हिन्दी-उर्दू विवाद में उनकी भूमिका थी। शुरू में उन्होंने देवनागरी और फारसी लिपियों में हिन्दुस्तानी का पक्ष लिया; लेकिन बाद में उन्होंने फारसी लिपि के लगभग अपवर्जन की सीमा तक जाते हुए नागरी लिपि में हिन्दी का हिन्दुस्तानी के साथ तादात्म्य स्थापित करना शुरू कर दिया। हिन्दी प्रचारिणी सभा की स्थापना ने इस आरोप को और पुष्ट किया। हिन्दुओं के पक्ष में होने के कारण हिन्दू-मुसलिम संबंधों पर उनकी टिप्पणियों में से कुछ पर मुसलमानों द्वारा बुरा माना गया। उनकी उक्तियों ने यथा, "मुसलिम भारत को अपना घर नहीं समझते थे" और "सामान्यतया मुसलमान एक धोंसिया (दादा) और हिन्दू प्राय: एक कायर होता है", मुसलिम क्षेत्रों में काफी आलोचना भड़कायी।

79. यह अकारण नहीं है कि एक हिन्दू धर्मान्ध द्वारा गान्धीजी की हत्या के बत्तीस वर्ष बाद राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ की राजनीतिक शाखा, भाजपा ने गांधीवाद को अपने निर्देशक सिद्धांत के रूप में अपनाया। गांधीवादी धार्मिक राजनीति और

भाजपा के लड़ाकू हिन्दूवाद में मुख्य अन्तर यह है कि पहली अहिंसक और मूल्य-आधारित है, जबकि दूसरी सत्ता एवं धनाभिमुख और हिंसा-आधारित है।

80. गांधीवादी धार्मिक कार्य-सूचि ने मुसलिम सोच पर एकाधिक रूप से क्षतिकारक प्रभाव डाला। मुसलिम लीग ने स्थिति का पूरा लाभ उठाया। समय गुजरने के साथ-साथ इसने और सब प्रकार के साम्प्रदायिकतावाद ने देश के हर कोने में पांव पसार लिये।

81. इस प्रकार विभाजन उस समय के प्रचलित भारतीय यथार्थ की तार्किक परिणति थी; जैसी कि आशा की जाती थी, विभाजन ने उप-महाद्वीप में हिन्दू-मुसलिम समस्या नहीं सुलझायी। इसने इसके कुछ पक्षों का केवल अन्तर्राष्ट्रीयकरण किया।

(ix) मानवीय-उपलब्धि की भावना-विहीन स्वतंत्रता

82. कांग्रेस, मुसलिम लीग और ब्रितानी सरकार के मध्य निष्कर्षित भारत को विभाजित करने के निर्णय की परिणति एक ऐसी साम्प्रदायिक विनाश-लीला में हुई, जिसमें हिन्दू, मुसलिम और सिखों सहित दस लाख लोगों की सामूहिक हत्याएं हुई और लगभग 147 लाख लोगों को (अधिकांशत: पंजाब और बंगाल से) विस्थापित होना पड़ा। हिन्दूओं और सिखों ने पंजाब से और मुसलमानों ने भारत से पलायन किया। इस प्रकार इसने इतिहास में एक भयावह मानव त्रासदी की रचना की।

83. लेकिन यह त्रासदी आसमान से नहीं गिरी थी। यह सब हमारी कारस्तानियों का अवश्यम्भावी परिणाम था। गांधीवादी राष्ट्रवाद ने एक अहिंसक, सत्याग्रही, सर्वोदयी और त्यागी मानव को तैयार करने की उद्घोषणा की थी; लेकिन वास्तव में इसने एक हिंसक, क्रूर और लोभी हिन्दू और ठीक इसी किस्म के मुसलिम एवं सिख को जन्म दिया।

84. चाहे यह स्वाधीनता की प्राप्ति थी; जैसा कि कांग्रेस और इसके समान राजनीतिक किस्मों द्वारा व्याख्या की जाती है; या कांग्रेस और मुसलिम लीग को ब्रितानियों की ओर से सत्ता का हस्तांतरण था; जैसा कि ब्रिटेन तथा बहुत से इतिहासकारों और लेखकों द्वारा रेखांकित किया जाता है। वस्तुत: यह किसी भी मानवीय उपलब्धि की भावना से रहित थी।

85. 15 अगस्त, 1947 के दिन जब भारत स्वाधीन हुआ तो हताश हो चुके गांधी ने कहा, "जिस प्रकार की स्वाधीनता हम प्राप्त करने जा रहे हैं, रोशनियों के माध्यम से मनाये जाने लायक नहीं है.....। हमारे पास खाद्यान्न, कपड़ा और तेल तक नहीं है, कहीं भी जश्न की जरूरत नहीं"।

III. 1947-उपरांत भारतीय राष्ट्रवाद

(क) उद्देश्य

86. "**हम भारत के लोग**, भारत को एक **संपूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य** बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों की : सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,** विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की **स्वतंत्रता**, प्रतिष्ठा और अवसर की **समता** प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली **बंधुता** बढ़ाने के लिए दृढसंकल्प होकर **अपनी इस संविधान-सभा** में आज तारीख 26 नवम्बर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, सम्वत दो हजार छह विक्रमी) को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते है।"**

यह वह कार्य-पद्धति है, जिसमें हमारे संविधान की प्रस्तावना भारतीय जनता के भविष्य को प्रस्तुत करती है।

87. लेकिन स्वाधीनता के 50 वर्षों और भारतीय संविधान के लागू किए जाने के 47 वर्षों के बाद हालात क्या हैं? किस प्रकार का भारत हमने निर्मित किया है? किस प्रकार की जीवन-गुणवत्ता हमने प्रदान की है? और किस प्रकार के मानव को हमने तैयार किया है? हमारे राष्ट्रवाद, संविधान, कार्य-सूची, प्राथमिकताएं और राजनेता हमें तथ्यत: कहां ले आए हैं?

88. भारतीय "राष्ट्रीय" नेता घोषणा करते हैं कि भारत ने उल्लेखनीय प्रगति की है। उनके अनुसार सकल घरेलू उत्पाद बढ़ा है। कृषि उत्पादन तिगुना हो गया है। साक्षरता 18 से 52 प्रतिशत तक पहुंच गयी है। जीवन-प्रत्याशा 35 से 60 वर्षों तक बढ़ गयी है। और भारत सैलुलर फोनों, सिएलो कारों, उच्च-गुणवत्ता वाले कम्प्यूटरों, टीवियों, वीडियो और इस प्रकार के अन्य उत्पादों के देश में परिवर्तित कर दिया गया है; लेकिन यह दावा कितना सच्चा है? केवल तथ्य ही इसका उत्तर दे सकते हैं।

89. प्रगति बहुत से मानदण्डों की शब्दावली में परिभाषित और मूल्यांकित की जा सकती है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यूएनडीपी) में कई कारक सूचीबद्ध किये गए हैं; जैसे कि आय, गरीबी, शिक्षा, भोजन और पोषण, स्वास्थ्य, महिलाओं और बच्चों की सामाजिक दशा आदि। लेकिन इसके अतिरिक्त हम अर्थव्यवस्था, राजनीति, संस्कृति तथा रक्षा एवं विदेश सम्बन्धित मामलों के मानदण्डों को भी शामिल करते हैं।

(ख) मानव विकास

90. यह सुनने में अजीब, यहां तक कि बेतुका लग सकता है कि भारतीय स्वाधीनता के 50 वर्षों बाद भी हमारी जनसंख्या का लगभग 62 प्रतिशत गरीब की

श्रेणी में, 40 प्रतिशत गरीबीरेखा से नीचे, 33 प्रतिशत बेघर, 25 प्रतिशत सुरक्षित पेयजल-सुविधा रहित और 75 प्रतिशत भाग शौचालय सुविधाओं से विहीन रहता है।

91. भारत की स्वाधीनता के समय देश की 33.2 करोड़ की कुल आबादी के विपरीत लगभग 41.8 करोड़ तक पहुंचते हुए आज गरीब संख्या में और अधिक हो गये हैं।

92. शिक्षा के क्षेत्र में आज राष्ट्रीय साक्षरता दर शोचनीय (52 प्रतिशत) है। यह न केवल सिंगापुर (91 प्रतिशत), थाइलैण्ड (94 प्रतिशत) और इण्डोनेशिया (80 प्रतिशत) जैसे आसियान देशों से, बल्कि जाम्बिया (78 प्रतिशत), युगाण्डा (62 प्रतिशत) तञ्जानिया (68 प्रतिशत) और केनिया जैसी विदाग्रस्त अफ्रीकी अर्थव्यवस्थाओं वाले देशों से भी निम्नतर है। 1991 की जन-गणना के मुताबिक जहां तक गांव और शहर की खाई का सवाल है; ग्रामीण क्षेत्रों के 36 प्रतिशत के मुकाबले में शहरी क्षेत्रों की साक्षरता दर 62 प्रतिशत थी। महिलाओं के लिए यह शहरी क्षेत्रों में 54 प्रतिशत और ग्रामीण क्षेत्रों में केवल 24 प्रतिशत थी। 10-12 आयु वर्ग की लड़कियों, का जिन्हें कभी विद्यालय में नामांकित नहीं किया, ग्रामीण क्षेत्रों में 51 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में 19 प्रतिशत था।

93. स्वास्थ्य सम्बन्धी संकेतक इसी प्रकार समान रूप से एक धूमिल तस्वीर पेश करते हैं। सिंगापुर में प्रत्येक 1000 पर 4, और कोरिया में 1000 पर 10 की तुलना में भारत में शिशु मृत्यु दर (आईएमआर) — जो सामान्यतया पारिवारिक आय और महिला शिक्षा पर निर्भर करती है — लगभग 1000 के पीछे 70 थी। जहां तक गांव और शहर की खाई की बात है, 1992 में शहरी क्षेत्रों में 51 के मुकाबले ग्राम्य क्षेत्रों में शिशु मृत्यु दर 79 थी। उड़ीसा में यह खाई कहीं ज्यादा चौड़ी थी। इसके शहरी क्षेत्रों में 57 के मुकाबले ग्राम्य क्षेत्रों में 105 थी। केरल में, जो मानव विकास के हिसाब से ज्यादा ऊंचा स्थान पाता है, यह ग्राम्य और शहरी क्षेत्रों में क्रमशः 16 के मुकाबले 14 थी।

94. भारत में बीमारी की मार का जहां तक सवाल है, उदर-आंत सम्बन्धी खराबियां, रोग सम्बन्धी मामलों के 10वें भाग से अधिक के लिए उत्तरदायी हैं। लगभग 1.2 करोड़ लोग दृष्टिहीन हैं और 2 करोड़ की दृष्टि-क्षमता बाधित है। आबादी का तीन से चार प्रतिशत भाग एक या दूसरे प्रकार की गुर्दे सम्बन्धी बीमारियों से पीड़ित है। 1990 में प्रति-वर्ष टीबी के नये मामलों की कुल संख्या 9 लाख से ऊपर थी और 2001 में 11 लाख वार्षिक नये मामलों के होने का अनुमान लगाया जाता है। सन् 2000 तक एचआइवी संक्रमण 21 लाख से 67 लाख तक बढ़ने का अनुमान लगाया जाता है। 2001 के लिए अनुमानित कैन्सर विस्तार संख्या 9.3 लाख है। सड़क दुघटनाएं प्रति वर्ष चुंगी के रूप में लगभग 70 हजार जानें ले लेती है। 2001 तक

औद्योगिक, घरेलू और सड़क दुर्घटनाओं द्वारा जनित मृत्यु तथा हताहतों की संख्या क्रमशः 87 हजार और 4 लाख होगी।

95. 1965-90 की अवधि के दौरान भारत में 10 प्रतिशत से कम और दक्षिण एशिया में 14 प्रतिशत के मुकाबले पूर्वी एशिया में शिक्षा और स्वास्थ्य पर कुल खर्चा सरकारी व्यय का 22 प्रतिशत था। वास्तविकता यह है कि सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के प्रतिशत के हिसाब से भारत शिक्षा पर (4 प्रतिशत) तथा निम्न सहारा-अफ्रीका (6 प्रतिशत) से कम खर्च करता है।

96. भोजन और पोषण के हिसाब से 1991-96 के दौरान खाद्यान्नों की प्रति व्यक्ति, प्रतिदिन सुलभता दर 511 से 465 ग्राम तक गिरी है। एक यूनीसेफ प्रतिवेदन के मुताबिक दक्षिण एशिया विशेषतः भारत में मातृ-मृत्युओं के सर्वोच्च आंकड़े और कम वजनी शिशुओं की 50 प्रतिशतता के मामले में निकृष्टतम पोषण स्तर है।

97. संयुक्त राष्ट्र (यूएन) अभिकरणों द्वारा संग्रहित आंकड़े दर्शाते हैं कि निम्न सहारा-अफ्रीका में 47 प्रतिशत, दक्षिण एशिया में 17 प्रतिशत और चीन में 20 प्रतिशत की तुलना में भारत में 55 प्रतिशत लोग गरीब हैं। अति-निर्धन-वर्ग के मामले में भारत का प्रतिशत 33 तक ऊंचा है सब सहारा अफ्रीका और चीन क्रमशः 30 और 8 तक नीचे आते हैं

98. किसी देश में गरीबी का उचित समाधान उत्पादक रोजगार ही होता है। हर राजनीतिक दल द्वारा चुन कर सत्ता में लाये जाने की शर्त पर बेरोजगारी को समाप्त करने का वादा किया जाता है; लेकिन जनसंख्या-वृद्धि की ऊंची दरों, संयुक्त असक्षम आर्थिक प्रदर्शन, भारत में बेराजगारी की स्थिति को निरंतर बदतर बनाने की ओर अग्रसर होता रहा है। 1991 में बेराजगारों का आंकड़ा 2.3 करोड़ था। 1997 में इसके 3.5 करोड़ और बढ़ने की आशंका की जाती है।

99. आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त ऊर्जा की सुनिश्चित आपूर्ति एक मूलभूत आवश्यकता है। प्रति व्यक्ति ऊर्जा उपभोग किसी भी देश के विकास की महत्त्वपूर्ण अभिसूचकों में से एक समझा जाता है; लेकिन भारत का ऊर्जा उत्पादन-उपभोग काफी दयनीय रहा है। यह अपनी अल्प ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति में भी असमर्थ है और लगभग 20 प्रतिशत की कमी से पीड़ित है। 1996 का एक संयुक्त राष्ट्र विकास परियोजना (यूएनडीपी) प्रतिवेदन दर्शाता है कि जबकि प्रति व्यक्ति उपयुक्त व्यावसायिक ऊर्जा, चीन, थाइलैण्ड और मलेशिया में क्रमशः 278 से 623, 178 से 678 और 436 से 1529 किग्रा तेल की ऊर्जा के समकक्ष बढ़ी, भारत में यह वृद्धि केवल 111 से 242 किग्रा तेल की ऊर्जा के समकक्ष थी।

100. 1947-पश्चात भारतीय प्रजातांत्रिक और विकास-मॉडल का मुख्य दोष यह है कि इसने लोगों, विशेषतः वंचित जनता को कभी अपना केन्द्र और सन्दर्भ बिन्दु

नहीं बनाया। यही कारण है कि शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अन्य सामाजिक क्षेत्र पिछली अर्द्ध-शताब्दी के दौरान उपेक्षित रहे हैं। वे किसी भी समय भारत में चुनावी मुद्दे रहे ही नहीं; क्योंकि वे राष्ट्रीय दलों के लिए बिलकुल कोई मुद्दे ही नहीं है। मानव विकास मोर्चे पर भारत की विफलता इस तर्क के खोखलेपन को प्रकाश में लाती है कि कुछ विकासशील देश तेजी से बढ़े; क्योंकि सामाजिक न्याय के हमारे रास्ते के विपरीत उन्होंने एक पूंजीवादी ढांचा निर्मित कर लिया।

(ग) अर्थव्यवस्था

101. 1947-पूर्व भारत में एक व्यापक राय यह थी कि भारतीय निर्धनीकरण और ब्रितानी समृद्धि इंगलैण्ड में हमाारी सम्पदा के ब्रितानी दोहन का दो-छोरीय परिणाम रहा था और यह कि उपनिवेशी राज का अन्त हमें अपनी इस प्राचीन व्यवस्था के आधार पर देश के पुनर्निर्माण के योग्य बना देगा "जिस पवित्र भूमि में शहद और दूध की नदियां बहती थीं"।

102. अपनी स्वाधीनता के समय एक श्रेष्ठतर औद्योगिक आधार, एक सुविकसित शैक्षिक व्यवस्था, वैज्ञानिक-तकनीकी विशेषज्ञों का समृद्ध तन्त्र, आइसीएस (इण्डियन सिविल सर्विसेज) प्रशासकों का एक समुच्चय और 1600 करोड़ रु. की जमा-पूंजी वाले भारत के मुकाबले युद्ध-नष्ट जापान के सिवा सारे पूर्वी एशियाई और दक्षिण-पूर्वी एशियाई देश बहुत पीछे थे। हर कोई उस वक्त ठीक तौर पर यह प्रत्याशा करता था कि भारत का भविष्य बहुत महान् है।

103. लेकिन तथ्य इस सब के बावजूद अधिक जुगुप्सा उत्पन्न करने वाले नहीं हो सकते थे। आज भारत की प्रति व्यक्ति आय मात्र 340 डालर (लगभग 12,240 रुपये) है और सिंगापुर की 26730 डालर (लगभग 9,62,280 रुपये), हाँगकाँग की 23000 डालर (लगभग 8,28,000 रुपये), ताइवान की 13000 डालर (लगभग 4,68,000 रुपये), दक्षिण कोरिया की 9700 डालर (लगभग 3,49,200 रुपये) और थाइलैण्ड की 2740 डालर (लगभग 98,640 रुपये) है।

104. यूएनडीपी की मानव विकास अनुक्रमणिका भारत को 174 देशों में 135वें स्थान पर रखती है। जापान तीसरे पर, दक्षिण कोरिया 29वें, सिंगापुर 34वें, थाइलैण्ड 52वें, मलेशिया 53वें, उत्तर कोरिया 83वें, इण्डोनेशिया 102वें और चीन 108वे स्थान पर है।

105. 1950-51 में भारत की विश्व जीडीपी में भागीदारी 2 प्रतिशत थी; आज यह 1 प्रतिशत से भी कम है। भारत की 1950-51 में विश्व विदेश व्यापार में भागीदारी 2.5 प्रतिशत से घटकर आज 0.6 प्रतिशत है। 1950-51 में भारत की तृतीय विश्व जीडीपी में भागीदारी लगभग 12 प्रतिशत थी, जो अब मात्र 5 प्रतिशत रह

गई है।

106 बहु प्रचारित हरित-क्रान्ति (1970-90) में जबकि भारतीय कृषि 2.1 प्रतिशत की दर से बढ़ी है, चीन की तदनरूप दर 6 प्रतिशत, मलेशिया 4.7 प्रतिशत, थाइलैण्ड की 4.6 प्रतिशत और इण्डोनेशिया की 3.7 प्रतिशत रही।

107. भारत का प्रति हेक्टेयर चावल उत्पाद एशिया में निम्नतम (2576 किग्रा) है जबकि औसत विश्व पैदावार 3581 किग्रा है। मक्का की औसत विश्व उपज 3257 किग्रा प्रति हेक्टेयर के मुकाबले भारत की केवल 1474 किग्रा है। सूरजमुखी के मामले में चीन की उत्पादकता 3 गुनी ज्यादा है।

108. श्रम उत्पादकता में, जबकि चीन की उत्पादकता दर प्रति मजदूर प्रतिवर्ष लगभग 11000 डालर (लगभग 3,96,000 रुपये) है। भारत की तुलनात्मक संख्या केवल 1000 डालर (लगभग 36,000 रुपये) है। 1947 में यह दोनों देश एक ही उत्पादकता स्तर पर थे।

109. उत्पादन के लागत के बारे में, जबकि 1991 के आसपास भारत में पुंजी:उत्पाद अनुपात 6:1 पर खड़ा था, विकसित देशों में यह 2.5:1 और आसियान अर्थव्यवस्थाओं में 3:1 रहा है। अर्थात् जबकि भारत उत्पाद की एक इकाई के लिए 6 रुपये खर्च करता रहा है, विकसित देश उसी मात्रा के लिए सिर्फ 2.50 रु. और आसियान सदस्य देश 3 रु. निवेश करते हैं।

110. हमारे उत्पादों की गुणवत्ता अधिकतर मामलों में अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों से निम्न रही है। चाय, जूट, कपास, वस्त्र, जूतों और कुछ खाद्यान्नों जैसी पारंपरिक वस्तुओं को छोड़ कर हमारी सामग्रियां और सेवाएं मुश्किल से ही कोई विदेशी मांग लाती हैं।

111. भारतीय अर्थ-व्यवस्था का एक चिन्ताजनक आर्थिक पहलू इसका बिखरता हुआ आधारभूत ढांचा है—अर्थात् ऊर्जा, दूरसंचार, सड़कें, रेलमार्ग, बन्दरगाह, हवाई अड्डे, बैंकिंग, बीमा, वित्त व्यवस्था आदि आर्थिक विकास के लिए आधारभूत ढांचे का महत्त्व विश्व-भर में एक स्वीकृत तथ्य है। कमजोर परिवहन तंत्र (वायु, रेल और सड़क परिवहन) प्रतिवर्ष लगभग 50,000 करोड़ रु. के 15-20 प्रतिशत खाद्यान्नों का नुकसान कर रहा है। लगभग 30 प्रतिशत दूध, सब्जियां और फल अपर्याप्त परिवहन, निम्नस्तरीय विपणन और उचित संरक्षण-तकनीकी के अभाव के कारण बेकार हो जाते हैं।

112. देश में ऊर्जा की भयंकर कमी है। उत्पादन के लिहाज से यह 18000 करोड़ रुपये का अनुमानित नुकसान पहुंचाती है और अगले 5 वर्षों में यह हानि बढ़ कर 45000 करोड़ रु. होने की आशंका है। भारत में आधारभूत ढांचे पर हाल ही हुए एक सम्मेलन में एक संभागी ने टिप्पणी की : "सुधार की वर्तमान दर पर भारत 2005

में पूर्व एशियाई देशों से 10 वर्ष पीछे रह जाएगा।"

113. भारतीय अर्थ-व्यवस्था का एक दूसरा शोचनीय पहलू इसका सार्वजनिक क्षेत्र है। यह क्षेत्र अपनी निवेशित पूंजी पर 2.5 प्रतिशत लाभ देता है; जबकि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों (पीएसई) के ऋण पर औसत ब्याज लगभग 9 प्रतिशत है। सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में लगभग 6.5 प्रतिशत की हानि लगभग 2000 करोड़ रु. की अनुमानित की जाती है। एक ओर व्यवहार्य उद्यमों के कुशल प्रबंधन और दूसरी ओर घाटे वाले उद्यमों का उचित निस्तारण या तो प्रभावित मजदूरों को उचित शर्तों पर उनका प्रबंधन सौंपकर या उनमें सरकारी निवेश को समाप्त करके सार्वजनिक क्षेत्र की वर्तमान दशा में सुधार किया जाए।

114. भारतीय अर्थव्यवस्था का एक अन्य, लेकिन अत्यन्त क्षुब्धकारी, क्षेत्र इसकी ऋणग्रस्तता है। 100 करोड़ डालर (3600 करोड़ रुपये) के विदेशी ऋण सहित भारत विश्व में तीसरा सबसे बड़ा ऋणग्रस्त देश बन चुका है। आन्तरिक ऋण ने भयावह अनुपात ग्रहण कर लिए हैं। भारत के महालेखा नियन्त्रक के अनुसार, 1991-92 की ऋण-राशि में 78 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि का प्रतिनिधित्व करते हुए सरकार का मार्च 1992 की समाप्ति पर 1,72,750 करोड़ रु. का आन्तरिक ऋण, मार्च 1996 की समाप्ति पर बढ़कर 3,07,869 करोड़ रु. हो गया।

115. चालू वर्ष में ब्याज सेवा शुल्क भारत के बजट का लगभग 48 प्रतिशत बैठता है। ऋण आधारित कोषों से होने वाली शुद्ध-प्राप्तियां नकारात्मक सिद्ध हुई है। इस वर्ष सरकार को कर्जों से 65,454 करोड़ रु. प्राप्ति की प्रत्याशा है। लेकिन विगत कर्जों पर ब्याज देनदारियां 68,000 करोड़ रु. होंगी। अर्थात् सरकार उधार के अपने प्रत्येक रुपये के बदले में 23 पैसे प्राप्त करेगी। लेकिन उसी रुपये के बदले में पूर्व में लिए ऋणों पर 25 पैसे ब्याज के रूप में खर्च करेगी।

116. भ्रष्टाचार एवं काला धन हमेशा से भारतीय अर्थ-व्यवस्था के दो प्रमाण-चिह्न रहे हैं। घौटाले और कबाड़े रोजमर्रा के मामले हो गये हैं। बर्लिन स्थित ट्रान्सपेरेन्सी इण्टरनेशनल नामक संस्था के अनुसार भारत विश्व के सर्वाधिक भ्रष्ट देशों में से एक है। काले-धन का परिदृश्य भी समान रूप से चौंकाने वाला है। वर्तमान में इसे 4,00,000 करोड़ रु. से अधिक का माना जा सकता है। विश्व की तुलना में भारत के भ्रष्टाचार की उच्च दर हमारे देश को लागत मूल्य और व्यापार के मामले में अलाभकारी स्थिति में रखती है।

117. फ्लोरिडा (संयुक्त राज्य अमरीका) विश्वविद्यालय के 3 प्रोफेसरों द्वारा किया एक अध्ययन रहस्योद्घाटित करता है कि आयातीत माल के बीजक-मूल्य को बढ़ाकर एवं निर्यातित माल के मूल्य को घटाकर दर्शाना भारत से पूंजी के पलायन में परिफलित होता है। इन प्रोफेसरों के अनुमान के मुताबिक 1994 और 1995 के दौरान

विदेश व्यापार मार्ग के माध्यम से लगभग 11.3 बिलियन डालर (लगभग 40.68 हजार करोड़ रु.) की सकल पूंजी पलायित हुई।

118. विश्व बैंक के एक अनुमान के अनुसार यदि भारत के निगम-क्षेत्र (कार्पोरेट सेक्टर) ने 100 करोड़ डॉलर (3600 करोड़ रुपये) विदेशों में स्थानांतरित नहीं किये होते तो भारतीय भुगतान संतुलन समस्या (सभी वैश्विक उधार देने वाले अभिकरणों से कुल 95 बिनियन डॉलर अर्थात् 342 हजार करोड़ रुपये की उधारी में संलिप्ति) घटित नहीं हुई होती।

जनसंख्या

119. भारत की जनसंख्या 34 करोड़ (1947) से बढ़कर 96 करोड़ (1997) हो गयी है। 2001 तक इसके 100 करोड़ का आंकड़ा पार करने का अनुमान किया जाता है। इस प्रकार की जनसंख्या वृद्धि के साथ नियोजन की कोई मात्रा सफल नहीं हो सकती। इतनी विशाल जनसंख्या द्वारा सभी संसाधनों का निगला जाना अवश्यंभावी है। यह आज भारत की सामाजिक प्रगति के रास्ते में भयावह बाधाओं का निर्माण करने में लगी है।

पर्यावरण

120. पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भारत विश्व के सर्वाधिक प्रदूषित देशों में से एक बन चुका है। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, निरंतर घटती जल सुलभता, भू-क्षरण को 40 प्रतिशत और इसके वन क्षेत्र के लगभग 50 प्रतिशत के कटने से ज्यादा बड़ी पर्यावरणीय चुनौतियां उत्पन्न हुई है और नये प्रकार के घातक रोगों सहित स्वास्थ्य खतरों को बढ़ा दिया है।

121. विगत 50 वर्षों के दौरान अक्षमता, ऊंचे उत्पादन मूल्य, न्यून उत्पादकता, निम्न गुणवत्ता, प्रचलन-बाहर हो चुकी एवं पर्यावरण-विमुख तकनालॉजी और वित्तीय असंतुलनों की विशेषताओं से युक्त, मानव एवं सामग्री संसाधनों के अपव्यय तथा अदक्ष उपयोग के कारण हमारा आर्थिक कार्य-निष्पादन, एक आर्थिक संकट से दूसरे तक लंगड़ाता रहा है। यही कारण है कि भारत के आर्थिक विकास की गति न केवल सामान्य रूप से विश्व की तुलना में, बल्कि अन्य विकासशील देशों की रफ्तार से भी धीमी रही है।

राजनीति

122. राजनीति के क्षेत्र में दु:खद सत्य यह है कि विश्व में विशालतम प्रजातंत्र होने के दावे के साथ-साथ हमारी राजनीति सर्वपक्षीय सामाजिक बुराइयों जैसे

अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, हिंसा आदि विशेषताओं से युक्त है।

123. राजनीति के अपराधीकरण से तात्पर्य यह है कि हमारी राजनीति राजनीतिज्ञ-माफिया सरगनों, सत्ता-दलालों, संविधानेतर केन्द्रों, सत्ता-दुरुपयोगकर्त्ताओं तथा धनबल एवं भुजबल दुरुपयोगकर्त्ताओं द्वारा चलाई जा रही है।

124. भ्रष्ट राजनीति से तात्पर्य यह है कि हमारी राजनीतिक प्रक्रिया सर्वतोमुखी भ्रष्टाचार-शासित है।

125. राजनीति के साम्प्रदायीकरण से तात्पर्य यह है कि हमारी राजनीतिक प्रक्रिया साम्प्रदायिक शक्तियों के विभिन्न प्रकारों द्वारा छलयोजित की जाती है। राजनीति के जातीयकरण से यह अभिप्राय है कि हमारी राजीतिक प्रक्रिया जाति आधारित समूहों के विभिन्न रंगों द्वार पथभ्रष्ट तरीकों से संचालित की जाती है। हिंसक राजनीति का मतलब यह है कि हमारी राजनीतिक प्रक्रिया बंदूक, विशेषत: राज्य की बंदूक द्वारा नियंत्रित की जाती है।

126. राजनीतिक प्रक्रिया के ह्रास का मतलब उन सब संवैधानिक एवं विधिक उपायों के क्रियान्वयन में बाधा से है, जो एक ओर विधि के सही शासन की निर्बाध क्रियान्विति के लिए आवश्यक हैं; और दूसरी ओर अल्प-अधिकारों से भी लोगों को वंचित कर दिये जाने से है, जो उन्हें प्रचलित व्यवस्था के अन्तर्गत उपलब्ध हैं।

127. यह सब कुछ एक और तो राष्ट्रीय प्रक्रिया में दरारें और खाइयां उत्पन्न करने में, और दूसरी ओर कमजोर तबकों अर्थात्-महिलाओं, बच्चों, अल्पसंख्यकों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन-जातियों आदि के मानव-अधिकारों को कुचलने में परिणत हुआ है।

128. राज्य की सभी संस्थाओं ने लोगों को इस या उस तरीके से निराश किया है। और सब ने विधि के शासन को सुनिश्चित नहीं करने के सामूहित उत्तरदायित्व में भागीदारी की है।

(ङ) संस्कृति

129. सांस्कृतिक क्षेत्र में हमारी त्रासदी यह है कि सत्य, शांति, अहिंसा, समानता और न्याय के सार्वभौमिक मूल्यों की तोतारटन्त करते हुए भी हमारी संस्कृति हर प्रकार की चालाकियों और छलकपटों से भरी पड़ी है।

130. शीर्ष राजनीतिक स्तर पर धोखा देने वाली यह संस्कृति कहती कुछ है, लेकिन करती कुछ और है यह एक बात की उद्घोषणा करती है और व्यवहार करती है दूसरी बात का।

131. उदाहरण के लिए शांति को लक्ष्य के रूप में एवं अहिंसा को मूल सिद्धान्त के रूप में घोषित करते हुए वर्तमान संस्कृति वास्तव में टकराव और सैन्यीकरण के रास्ते पर चल रही है। जनतंत्र की कसम खाते हुए सदैव असहमति के स्वरों को सब साधनों से कुचल रही है। धर्मनिरपेक्षता के समर्थन की गंभीर घोषणाएं करते हुए साम्प्रदायिक शक्तियों के साथ मेलजोल बढ़ा रही है। भ्रष्टाचार से लड़ने की शपथ लेते हुए या तो व्यक्तिश: भ्रष्टाचार में लिप्त रहती है या भ्रष्ट लोगों का बचाव कर रही है; आदि।

132. जनता के स्तर पर इस पाखण्डी संस्कृति ने चारों ओर एक अनैतिक वातावरण सृजित कर दिया है। खाद्य पदार्थों में मिलावट, निम्न कोटि का माल एवं घटिया दवाओं का निर्माण, पानी, बिजली, राशन कार्ड, गैस, टेलीफोन कनेक्शन, रेलवे आरक्षण, कॉलेजों, स्कूलों तथा अस्पतालों में प्रवेश, घर या दुकान किराये पर प्राप्त करने में काला बाजारी, नकली कम्पनियों, नियोजन कार्यालयों एवं वीजा अभिकरणों के माध्यम से ठगी करने, अवैध स्रोतों से प्राप्त धन हस्तांतरित करने, तस्करी, विदेश व्यापार के चालाकी भरे संचालन, बैंक घोटाले एवं प्रतिभूति घपले आदि धंधे सारे देश में फल-फूल रहे हैं।

133. हमने एक ऐसा सामाजिक वातवरण निर्मित कर दिया है, जिसमें बेईमानी पर पुरस्कार दिया जाता है।

(च) रक्षा एवं विदेश मामले

134. रक्षा एवं विदेश मामलों में क्षेत्रीय महाशक्ति के लक्ष्य ने बंदूक की राजनीति को हमेशा जायज़ ठहराया है और सामाजिक शांति की राजनीति को कलंकित किया है। इसने सुरक्षा को भारत की शीर्ष राष्ट्रीय प्राथमिकता बना दिया है। सुरक्षा पर अनुत्पादक व्यय, भारत को आन्तरिक एवं बाह्य दोनों स्रोतों से उधार प्राप्ति के दौर की ओर ले गया है। यह ऋणग्रस्तता आज तक अनिर्वहनीय स्तर तक पहुंच गयी है और भारत की आर्थिक प्रगति के विकास में बाधा पहुंचा रही है।

135. क्षेत्रीय महाशक्तिवाद के मार्ग ने भारत के अपने पड़ोसियों के साथ संबंधों के सुधार में हमेशा रुकावटें डाली हैं। यह अब तक हमें अपने दो पड़ोसियों— अर्थात् चीन और पाकिस्तान के साथ चार युद्धों में झोंक चुका है। यहां तक कि शीतयुद्ध युग की समाप्ति के बाद भी, जब 1987 से वैश्विक सैन्य व्यय प्रतिवर्ष 4 करोड़ डालर (144 करोड़ रुपये) नीचे आता रहा है और जब विश्व के हर देश ने सैन्य व्यय में कमी की है, भारत विश्व के विकासशील देशों में हथियारों के सबसे बड़े आयातकर्त्ता होने के साथ उसी पुराने सैन्यपथ पर चल रहा हैं।

(छ) भारत के घटिया प्रदर्शन के कारण

136. गांधीवाद या बहुमतवादी राष्ट्रवाद के राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में एक केन्द्रीकृत व्यवस्था के संवैधानिक दृष्टिकोण एवं केन्द्रीकृत राजनीतिक दलों की यान्त्रिकता द्वारा निर्मित 1947-उपरांत भारतीय राष्ट्रवाद ने इतनी अच्छी तरह से काम क्यों नहीं किया जैसा कि इसके प्रस्थापकों ने पूर्वानुमानित किया था?

137. कारण यह है कि 1947-उपरांत भारतीय राष्ट्रवाद के उपरोक्त तीन अन्तरसम्बन्धित घटकों में से एक भी भारत के मूलभूत यथार्थ के साथ-साथ अन्य प्रचलित वास्तविकताओं से मेल नहीं खाता।

138. मूलभूत यथार्थ यह रहा है कि उन्नीसवीं सदी में ब्रितानी शासन के अधीन इसके एकीकरण के बाद एक एकल इकाई के रूप में उभरने के फलस्वरूप आधुनिक भारत एक बहु-नस्ली, बहु-सांस्कृतिक, बहु-भाषी और बहु-धार्मिक देश रहा है। ब्रितानियों ने इस पर एक उपनिवेशवादी व्यवस्था के, जो मुख्यत: शक्ति पर टिकी थी, माध्यम से राज किया। लेकिन ब्रितानी राज की समाप्ति के बाद भारत के बहु-विध यथार्थ को एक पूर्णरूपेण संघीय एवं विकेन्द्रीकृत व्यवस्था की आवश्यकता थी। इसके स्थान पर 1947-उपरांत की मुख्यधारा के राजीतिज्ञों ने, जो विशेषत: कांग्रेस से सम्बद्ध थे; एक ऐसे राष्ट्रीय मॉडल को चुना जो बहुमतवादी धर्मनिरपेक्षतावाद और केन्द्रिकरणवाद पर आधारित रहा है। यह दोनों चारित्रिकताएं एकरूपता की ओर झुकती और उस पर बल देती हैं और इस प्रकार भारत के बहुपक्षीय यथार्थ से टकराती हैं।

139. दूसरी अन्य सामाजिक वास्तविकताओं में से एक यह रही है कि भारत में एक बहु-दलीय संसदीय व्यवस्था का आविर्भाव विधि के शासन के परिपोषण की मांग करता था। लेकिन जैसे-तैसे भी सत्ता हड़पने की राजनीति से प्रेरित, संवैधानिक केन्द्रिकरणवाद में अपना आधार रखते हुए कांग्रेस और दूसरे मुख्य राष्ट्रीय दलों ने समाज को विभाजित करने वाले साम्प्रदायिक एवं जातीय पत्तों के साथ-साथ धनबल एवं भुजबल के अनैतिकतापूर्ण साधन अपनाये, और इस प्रकार से तर्कबुद्धिवादी सोच तथा सारे नैतिक मानदण्डों को कमजोर किया।

140. दूसरी सामाजिक वास्तविकता यह रही है कि जबकि द्वितीय विश्व युद्धोत्तर वास्तविकता विस्तारशील विश्व-बाजार में भारत की सक्रिय भागीदारी की जरूरत पर जोर देती, भारत के आर्थिक आत्मनिर्भरता के लक्ष्य ने ऐसे किसी एकीकरण के विरुद्ध एक प्रतिबन्ध के रूप में काम किया।

141. एक अन्य सामाजिक वास्तविकता यह रही है कि जबकि द्वितीय विश्व-युद्धोतर युग सभी विकासशील देशों से एक चौधराहट-विहीन और

अ-टकरावावादी दिशा की मांग करता था, प्राचीन भारत के महान् सत्ता वैभव के अतिराष्ट्रीयतावादी सिद्धान्त द्वारा अभिमुखित किए जाने और वर्तमान महाशक्तियों के पद चिह्नो का अनुसरण करने के कारण भारत ने क्षेत्रीय महाशक्तिवाद की राजनीति को अपनाया, जो सैन्यवाद को पहली प्राथमिकता देती है तथा कमजोर के ऊपर धौंस जमाने एवं ताकतवर के प्रति दब्बू बने रहने का प्रयास करती है।

142. एक और अन्य सामाजिक वास्तविकता यह रही है कि भारत के जनतांत्रिक तथा विकास मॉडल ने भारत के उच्च एवं मध्यम वर्गों को अपनी पहली प्राथमिकता के रूप में अपनाया।

143. उपरोक्त त्रुटिपूर्ण ज्ञानबोध एवं अनुपयुक्त प्रतिफल भारत को इसकी वर्तमान दुर्दशा तक ले आए हैं।

144. भारत के मुख्यधारा-दलों द्वारा व्यक्त हमारी राष्ट्रीय विफलताओं की विविध परिवर्ती सफाइयां और क्षमा-याचनाएं; यथा अल्पसंख्यक समर्थक धर्म-निरपेक्षतावाद, उच्च-जाति उत्पीड़न, विदेश-सृजित संकट, भारत की विशालता एवं लोगों की विभिन्नता आदि, भारत के बहु-आयामी यथार्थ के विषय में भ्रान्त धारणाओं से उपजती हैं।

(ज) मामलों को सही करने के बारे में

145. मामलों को सही करने के बारे में तीन सिद्धान्तों की अनुपालना की मांग करता है : (अ) विगत अनुभव से सबक लेना, (ब) वर्तमान सामाजिक यथार्थ से शुरूआत और (स) एक सही सामाजिक दूर-दृष्टि अपनाना।

146. विगत अनुभव पुरानी सामाजिक व्यवस्था की पुनर्सरचना की पुकार करता है। वर्तमान यथार्थ विश्व-भर में उभरते क्षेत्रीय समुदायों के आलोक में, विशेषत: सार्क, जिससे हम सीधे एवं मुख्य रूप से संबंधित हैं, व्यवस्थित पुनर्संरचना की दुहाई देता है। देशों के अन्तरनिर्भरता की गतिमान प्रक्रिया से उपजी भविष्य-दूरदृष्टि एक उदीयमान विश्व-मानव-समुदाय की ओर संकेत करती है।

147. उपरोक्त अनिवार्य तत्त्व इस तथ्य को रेखांकित करते हैं कि भारत को अपनी बहुसंख्यक राष्ट्रवादी प्राथमिकताओं को एक वैश्विक या मानव-अभिमुख राष्ट्रवाद के आधारभूत तत्त्वों के रूप में तुरन्त बदल लेना चाहिए। इन्हें निम्नानुसार व्यक्त किया जा सकता है :

(अ) वहनीय विकास जो एक और प्रकृति एवं समाज के हितों (यथा : पर्यावरणीय सुरक्षा) की सामंजस्यता और दूसरी ओर समाज (अर्थात् भारत) के भीतर विभिन्न सामाजिक समूहों (अर्थात् धनी-निर्धन, ग्राम्य-शहरी) लिंग-भेद (अर्थात् पुरुष-महिला) आदि की सामंजस्यता की आकांक्षा रखता है।

(आ) वहनीय विकास को वास्तविक शांति की राजनीति की आवश्यकता होती है, जो महाशक्तिवाद एवं इसके टकरावावादी तौर-तरीकों का निषेध करता है। आज वास्तविक विश्व-शांति केवल विभिन्न राष्ट्रों के हितों में परस्पर मेल-मिलाप से ही सुनिश्चित की जा सकती है और राष्ट्रीय शांति केवल एक राष्ट्र के भीतर विभिन्न सामाजिक समूहों के हितों में संतुलन स्थापित करके ही प्राप्त की जा सकती है। दक्षिण एशिया में स्थायी शांति के लिए जम्मू-कश्मीर के लोगों और भारत-पाकिस्तान के हितों में सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक है।

(इ) वास्तविक शांति की राजनीति के लिए राज्यों को अर्द्ध-स्वाधीनता का स्तर प्रदान करते हुए समस्त संस्थाओं का सम्यक् लोकतांत्रिकरण करते हुए और सब स्तरों पर लोगों को सशक्त बनाते हुए, भारत को संघात्मक आधार पर संगठित करने की आवश्यकता है।

(ई) व्यापक लोकतंत्रीकरण इस बात की आवश्यकता जताता है कि उचित नैतिक मानदण्डों सहित एक लोकतांत्रिक व्यवहार-शैली का सुचारू विकास लाजिमी है।

(उ) वहनीय विकास, शांति एवं सम्पूर्ण लोकतंत्रीकरण वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ तथा निकट का एकीकरण रखने वाले और मण्डी-जनित विकास तथा राज्य-व्यवस्थित सामाजिक न्याय के युग्म सिद्धान्तों पर आधारित एक संतुलित आर्थिक विकास का आह्वान करते हैं।

(ऊ) उपरोक्त सभी मूलतत्त्व, एक पूर्णरूपेण लोकतांत्रिक एवं मूल्य-आधारित व्यवहार-पद्धति के संग-संग वैज्ञानिक यथार्थवाद के सामान्य एवं विवेकशील मानवतावाद के सामाजिक दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता उत्पन्न करते हैं।

148. वर्तमान राष्ट्रीय परिदृश्य हर दृष्टिकोण, विशेषत: नैतिकता-सदाचारिता के लिहाज से अत्यन्त निराशाजनक एवं व्यथाकारी है। कोई नया राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य नहीं है, जो हमें राजनेता-माफिया गिरोहबंदियों, भ्रष्टाचार के दलदल, घपलों-घोटालों और अध:पतन से निकाल सके। कोई राष्ट्रीय-शैली नहीं है, जो हमारे कार्य-प्रदर्शन को सुधार सके। हमें न्यायप्रिय और निष्पक्ष बनाने वाले कोई राष्ट्रीय मूल्य नहीं हैं। यह हताशाकारी स्थिति एक त्वरित; लेकिन सटीक पहलकदमी की मांग करती है। यदि हम समय रहते समस्या से नहीं निपटते हैं तो इसके परिणाम निश्चय ही विनाशकारी होंगे। राजनीतिक अनिश्चयता, आर्थिक विकृतियां, नैतिक अपकर्ष और तीक्ष्ण होते नस्ली, साम्प्रदायिक एवं जातीय टकराव हमें भ्रम, अव्यवस्था और अस्थिरता की ओर ले जा सकते हैं इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, अब काम करने का वक्त आ गया है।

❋ ❋ ❋

विज्ञान-तकनीकी एवं इंजीनियरिंग टिकाऊ और न्याय संगत विकास को हासिल करने के लिए

-आर.पी. सराफ

I. मानव समाज में विज्ञान-तकनीकी की भूमिका

मेरे विचार से मानव समाज में परिवर्तन एवं विकास लाने के लिए दो सर्वोच्च महत्त्वपूर्ण कारकों में से एक कारक विज्ञान-तकनीकी (एस.टी.) है।

सामान्य रूप में विज्ञान को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि किसी निश्चित प्राकृतिक प्रक्रियाओं के बारे में प्राप्त किया गया वह ज्ञान जो कल्पना (यानि, किसी के बारे में अस्थाई व्याख्या जिसे परिकल्पना भी कहा जाता है) और पर्यवेक्षण, विश्लेषण तथा प्रयोगों द्वारा जाना गया हो और अंतिम तौर पर फारमूलों या सिद्धान्तों में सुव्यवस्थिति किया गया हो। विज्ञान की विभिन्न शाखाएँ हैं। एक निश्चित प्राकृतिक प्रक्रिया में विज्ञान की प्रत्येक शाखा का अपना सिद्धान्त, व्यवहार एवं ढांचा है।

तकनीकी को सामान्यतया अपनी-अपनी प्रासांगिक प्रक्रियाओं में सभी व्यवहारिक विज्ञानों में लागू करने के ज्ञान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के अनुसार तकनीकी भी विभिन्न किस्मों (जैसे उद्योग, कृषि आदि) में गठित है, प्रत्येक किस्म की अपनी विशिष्ठ कार्यप्रणाली है।

मानव समाज में तब्दीली लाने वाला अन्य सर्वोच्च महत्त्वपूर्ण कारक मनुष्य है।

II. मानव विकास का दो तत्त्वों वाला नजरिया

मानव समाज में परिवर्तन और विकास का उपरोक्त नजरिया इस प्रस्तावना पर आधारित है कि मानव समाज अपने उद्‌भव से दो बुनियादी अन्तरक्रियाओं के जरिए परिवर्तित एवं विकसित होता रहा है। एक अन्तरक्रिया मानवजाति (यानि ब्रह्माण्ड का एक घटनाक्रम) एवम् प्रकृति (यानि विभिन्नि प्राकृतिक प्रक्रियाएँ) के बीच है तथा दूसरी अन्तरक्रिया मानव-मानव के बीच है।

(क) प्रकृति एवम् मानवजाति के बीच अन्तरक्रिया

प्रकृति एकता (जैसे हवा, पानी, भोजन इत्यादि) तथा संघर्ष (जैसे वायरस, भूकम्प, अकाल आदि) की विभिन्न प्रक्रियाओं के जरिए समाज के साथ क्रिया और

प्रतिक्रिया करती है। यह अन्तरक्रियात्मक प्राकृतिक प्रक्रियाएँ दो बड़ी श्रेणियों से गठित हैं – एक वह जिसके संगठन, संचालन और परिवर्तन की पद्धति का ज्ञान मानवजाति को है (जैसे जमीन, मशीन, तेल, अनाज इत्यादि) और दूसरा वह जिसके संगठन, संचालन और परिवर्तन की पद्धति के बारे में या तो कोई ज्ञान नहीं है अथवा थोड़ा ज्ञान है (जैसे ब्लेक होल, तारामंडल, तारे, अन्तरिक्ष आदि)। इन दो तरह की प्रक्रियाओं में पहली तरह की प्रक्रिया के सिद्धान्त और व्यवहार का ज्ञान वैज्ञानिक तकनीकी रचनातन्त्र (या सामाजिक-प्राकृतिक रचनातंत्र) के नाम से जाना जाता है, जो सभी तरह की वैज्ञानिक धारणाओं, तकनीकी साधनों एवं वस्तुओं तथा उनके उत्पाद का द्योतक है।

वैज्ञानिक-तकनीकी रचनातंत्र एक प्रदत्त सामाजिक श्रम विभाजन या एक संचालन पद्धति (जैसे एक मशीन के लिए फैक्ट्री की तरह का संगठन और क्रिया प्रणाली की आवश्यकता है या एक वायुयान को हवाई अड्डे जैसी व्यवस्था और कार्यप्रणाली की आवश्यकता है, आदि) से चरित्रित है। वैज्ञानिक-तकनीकी रचनातंत्र को संचालित करने के लिए इस श्रम विभाजन का अनुसरण करना मानवजाति के लिए आवश्यक है। यदि मानवजाति इस नियम का उल्लंघन करती है तो वैज्ञानिक-तकनीकी रचनातंत्र को संचालित नहीं किया जा सकता (एक मशीन तभी काम करती है जब उसका श्रमिक मशीन की गति के साथ अपने श्रम का समायोजन करता है। यह मशीन चलने से मना कर देती है जब इसका संचालक अपनी मनमर्जी या आदेशों के मुताबिक चलाना चाहता है)।

इस प्रकार, सामाजिक श्रम विभाजन मानव समाज को संगठित, गतिशील एवम् परिवर्तित करने में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष बन जाता है। अपने श्रम-विभाजन का अनुसरण करने के लिए मानवजाति को बाध्य करके प्रकृति मनुष्य समाज के संदर्भ में प्राथमिक स्थिति अख्तियार कर लेती है।

(ख) समाज के अन्दर अन्तरक्रिया

मानव समाज के अन्दर की अन्तरक्रिया सामाजिक श्रम विभाजन से नजदीकी तौर पर जुड़ी हुई है जिसकी क्रियान्विति को दो अन्तरसंबंधित चीजों की आवश्यकता है : (अ) विभिन्न क्षेत्रों—राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, सुरक्षा तथा विदेशी मामलों में कार्य करने के लिए मानवीय-सामाजिक इकाइयां तथा (ब) सामाजिक इकाइयों तथा उनके व्यक्तिगत सदस्यों द्वारा सुगमता से सामाजिक श्रम विभाजन को संचालित करने के लिए सामाजिक रूपों एवम् मानदण्डों की आवश्यकता है।

III. विज्ञान-तकनीक की विस्मयकारी ऐतिहासिक उपलब्धियाँ

ऐतिहासिक तौर पर, विज्ञान-तकनीकी प्रक्रिया एक विस्मयकारी कथा है। यह कथा इतनी ही पुरानी है जितनी मानवजाति। पशु-जगत से अपने आपको अलग करने के बाद विशेषतौर पर होमो-सेपियन (अर्थात् संवेदनशील जीव होना जिसने चीजों को जांचने के लिए तर्क का उपयोग करना शुरू किया) के रूप में उद्भव (करीब दो लाख वर्ष पूर्व) से मानवीय विवेकशीलता एवम् मानवीय प्रवीणता ने एक के बाद एक शानदार उपलब्धियों का रिकार्ड स्थापित किया है।

उदाहरणतया, प्रारम्भिक मनुष्य समाज में, जब मानव जंगलों में भोजन इकट्ठा करने का काम करता था उसे लगातार जंगली हिंसक जानवरों से खतरा था, उपलब्ध पत्थर और छड़ियों को औजार के तौर पर उपयोग करने की मानवीय खोज ने, न केवल उसे सुरक्षा प्रदान की अपितु आक्रमण करने के हथियार भी प्रदान कर दिये। तभी उसी काल में उसे शिकारी-उत्पादन पद्धति में तब्दील कर दिया और भोजन इकट्ठा करने वाले मानव को शिकारी सह जंगल उत्पाद इकट्ठा करने वाले मानव में तब्दील कर दिया। बाद में जब प्राकृतिक परिस्थितियाँ अनुकूल हुई (यानि हिमयुग का अन्त तथा गलेशियरों का पिघलना शुरू हुआ) तब शिकारी सह भोजन इकट्ठा करने वाले मानव ने पशुओं को पालने की तकनीक अपनाई और अपने-आपको चरवाहे मानव में बदल दिया। जब वह घुमन्तु जीवन बिता रहा था तब उसने साधारण औजार छड़ियों और कुदाली के जरिये प्रारम्भिक जोताई (यानि शिफ्टिंग और झूमिंग) की पद्धति इजाद की। उसके बाद जब परिस्थितियों ने नदियों के किनारों के आसपास बसने की आवश्यकता उत्पन्न की तब चरवाहे मानव ने छड़ियों व कुदाली वाले प्रारम्भिक ज्ञान को हल से जोताई करने वाले ज्ञान में विकसित कर लिया और इस प्रकार अपने-आपको कृषि मानव में बदल दिया।

प्रारम्भिक और मध्यकाल में हल, पहिये, कांसा, लोहा, आदि की खोज ने मानव समाज के विभिन्न स्तरों को चिह्नित किया।

बाद में लगातार वैज्ञानिक सिद्धान्तों – यानि, कोपरनिक्स (1473-1543) के सूर्य के चारों और पृथ्वी के घूमने के सिद्धान्त, केपलर (1571-1630) का ग्रह की गति के तीन नियम, बायल्स (1662) का नियम – यानि निश्चित ताप पर किसी गैस का आयतन उसके दाब के प्रतिलोम अनुपात में बदलता है। न्यूटन (1642-1727) का गुरुत्वाकर्षण का नियम तथा तीन गति के नियम, आइन्स्टीन (1905) का सापेक्षता का विशेष सिद्धान्त—यानि सभी गति सापेक्ष है तथा एक निरीक्षण कर्त्ता के सापेक्ष प्रकाश का वेग हमेशा स्थिर है, प्लांक का क्वान्टम सिद्धान्त (1905)—यानि, ऊर्जा का उत्सर्जन एवम् अवशोषण निरन्तरता के बजाय एक निश्चित सीढी नुमा स्तर ग्रहण

करते जाने की प्रक्रिया है क्योंकि इसका माप कणों (क्वाण्टा) के रूप में है, बोहर का अनिश्चितता का नियम (1929) जो निश्चयवाद को अस्वीकार करता है जिससे मानवजाति के लिए अनुसंधान, खोज विकास की पहल का एक नया युग शुरू हुआ है।

आधुनिक समय में भाप की शक्ति का विज्ञान-तकनीक और इसके बाद का विद्युत-शक्ति के विज्ञान-तकनीकी ने औद्योगिक प्रक्रिया को गति प्रदान की- जिसने कृषि मानव को औद्योगिक मानव में तब्दील कर दिया। 20वीं शताब्दी का विज्ञान-तकनीकी हमें इलैक्ट्रोनिक्स, परमाणु ऊर्जा, अन्तरिक्ष, बायो-टैक्नोलॉजी, सुपर-कंडक्टीविटी, पदार्थ एवं सूचना तकनीक के युग में ले आया है।

विज्ञान-तकनीकी में हाल की उपलब्धियाँ मानव विकास में शानदार प्रगति है जिनका उपयोग बहुत-सी मानवीय समस्याओं को सुलझाने में हुआ है — जैसे बढ़ती आबादी के लिए खाद्य उत्पादन में बढ़ोतरी, लोगों को यातायात और ऊर्जा की सुविधा उपलब्ध करवाना, मानवीय स्वास्थ्य में सुधार लाना तथा पर्यावरण और परिस्थतिकी का संरक्षण।

यहाँ कोई भी पूछ सकता है कि कैसे उन दिनों में तब कोई विज्ञान-तकनीकी नहीं थी तथा लोग विभिन्न कर्मकाण्ड इस विश्वास के साथ किया करते थे कि इसमें जो वो चाहते हैं - उनमें से कुछ मामलों में वांछित स्थिति बन जाती थी या कुछ अवांछित स्थितियों को रोका जा सकता था, ऐसी स्थिति में भी उक्त अन्वेषण हो पाये।

यह सच है कि विज्ञान-तकनीक का अस्तित्व विकसित विषय के रूप में तो नहीं था परन्तु इतिहास दर्शाता है कि सामान्यतौर पर लोगों के पास विभिन्न कार्य प्रणालियों—उदाहरणतया खेती, निर्माणी (मेन्यूफेक्चरिंग) प्रणाली, इत्यादि के बारे में व्यवहारिक सहज बुद्धि की प्रवृत्ति थी तथा नई-तकनीक अपनाने का प्रयास करते थे एवम् कार्य के दौरान सही-गलत के अनुभव रूपी वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर उस नई तकनीक को स्वीकार या अस्वीकार करते थे। उस समय विज्ञान-तकनीकी प्रकृति की विभिन्न प्रक्रियाओं के बारे में मानवजाति के अनुभव का एक साधारण निचौड़ था। शुरू के काल तथा मध्य युग में अनुभव मानव के व्यवहारिक ज्ञान के रूप में संचित होता गया। उस व्यवहारिक ज्ञान ने वर्तमान सूत्रबद्ध और संहिताबद्ध ज्ञान की शक्ल केवल आधुनिक काल में ही अख्तियार की, जब इस विकास के लिए वस्तुगत और मनोगत परिस्थितियाँ परिपक्व हुई।

IV. वैज्ञानिक-तकनीकी का वर्तमान परिदृश्य

इस सदी के अन्त की ओर हम जैसे-जैसे बढ़ रहे हैं विज्ञान-तकनीकी ने अपनी विभिन्न शाखाओं के जरिये अत्यधिक उन्नत ज्ञान के दरवाजे खोल दिये हैं, जो

निम्न हैं : सूचना विज्ञान, पदार्थ विज्ञान, जैव-तकनीक तथा जैव-चिकित्सा अनुसंधान, ऊर्जा और अन्तरिक्ष।

सूचना विज्ञान

इस विज्ञान ने समय और स्थान को सिकोड़ कर आश्चर्यजनक रूप से मानव और मानव के बीच सम्पर्क को एक पूर्णतया नया आयाम दिया है। इस क्षेत्र में जो मुख्य तकनीक मौजूद हैं उसमें शामिल माइक्रो-इलैक्ट्रानिक्स ओप्टो-इलैक्ट्रोनिक्स, स्वीचिंग, पैरालल प्रोसेसिंग सोफ्टवेयर, डाटा काम्प्रेशन, स्टोरेज और डिस्प्ले डिवाइसेज। इन तकनीकों में तेजी से विकास—बदले में सूचना विज्ञान में तेजी से परिवर्तन ले आते हैं। ज्ञान के प्रबन्धन एवं आदान-प्रदान के लिए कम्प्युटर एक शक्तिशाली तथा ज्ञान के विकास का मुख्य औजार बन गया है। इन्टरनेट एक वैश्विक नेटवर्क हो गया है जो सूचना के असीमित स्रोतों तक हमारी पहुँच बनाता है।

पदार्थ विज्ञान

इस क्षेत्र में नये पदार्थों को विकसित करने में अद्‌भूत सफलता प्राप्त हुई जो निम्न हैं : पोलीमर्स, सिरेमिक्स, कम्पोजिटस्, सुपर कंडक्टर्स, नैनो मैटेरियल, स्मार्ट मैटेरियल, बायो-मैटेरियल।

उच्च ताप सुपरकंडक्टर्स ने भौतिक विज्ञान को उन्नत किया है। अभी भी उच्च ताप के सुपर-कंडक्टिंग पदार्थों में सुपरकंडक्टीविटी के रचनातंत्र के बारे में बहुत कुछ जानना बाकी है।

क्लस्टर (गुच्छ रूप) पदार्थ की एक महत्त्वपूर्ण अवस्था है। इस गुच्छ रूप में बड़ी संख्या में परमाणु विद्यमान रहते हैं परन्तु ये गुच्छ रूप अपने समान गुण वाले तरल और ठोस पदार्थों की तुलना में बहुत हल्के और कम मात्रा वाले होते हैं। इन गुच्छ पदार्थों के इलैक्ट्रानिक, ओपटीकल, मैग्नेटिक एवम् मैकेनिकल गुण आकार आधारित है। इन गुच्छ पदार्थों के गुणों का तालमेल इनके आकार को नियन्त्रित करके किया जा सकता है। यह गुण इनके तकनीकी उपयोग की संभावनाएँ प्रस्तुत करता है। आज यह संभव है कि 10 नैनोमीटर (एक नैनोमीटर 1 मीटर का एक अरबवाँ हिस्सा होता है) लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई का सुपरकन्डक्टर बनाया जा सकता है। नैनो-टैक्नोलॉजी में आश्चर्यजनक विकास की भविष्यवाणी की जा सकती है।

स्मार्ट पदार्थ के विकास में सफलता हासिल कर ली गई है जो बदलते हुए वातावरण के साथ समन्वय बैठा सकता है। स्मार्ट पदार्थ में ढाँचागत पदार्थ के साथ संवेदी गुण का पहलू शामिल होता है। इस प्रकार का पदार्थ गड़बड़ी (या असफलता) की सूचना होने पर उसे नियन्त्रित कर सकता है जैसे पुलों, वायुयान की पंखुड़ियों

इत्यादि की असफलता के समय नियन्त्रित करने और चेतावनी देने का काम करता है।

बायोटैक्नोलॉजी (जैव तकनीकी) :

बायोटैक्नोलॉजी - बायोकैमेस्ट्री, मोलीकुलर जेनेटिक्स, माइक्रोबायोलोजी तथा प्रोसिसिंग टैक्नोलॉजी का समाकलित उपयोग (Integrated Use) है जिसका उद्देश्य सूक्ष्म जिवाणुओं या सैलों को व्यवहारिक और औद्योगिक उद्देश्यों के लिए उपयोगी बनाना है।

जेनेटिक इंजीनियरिंग में नई दवाइयों का उत्पादन करके, बिमारियों का बेहतर निदान करके बिमारियों को समाप्त करने की संभावनाएँ हैं तथा इसके जरिये अधिक उत्पादन एवम् रोग प्रतिरोधक किस्मों का विकास करके भूखमरी से मुकाबला किया जा सकता है। पर्यावरण संरक्षण एवम् पर्यावरण सुधार में जेनेटिक इंजीनियरिंग की उपयोगिता है।

प्लांट जेनेटिक्स पुन: सयोजन डी एन ए तकनीक का उपयोग करती है ताकि कुछ फसली पौधे ऐसे तैयार किये जा सकें जो किटाणुओं, बिमारियों तथा बाह्य परिस्थितियों जैसे - गर्मी, सूखा, क्षारीय मिट्टी का प्रतिरोध कर सके।

बायोमेडीकल अनुसंधान

सूचना तकनीकी ने अब एक मरीज को डॉक्टर के साथ लम्बी दूरी से बातचीत करने के समर्थ बनाया है। मेडीकल इमेज (प्रतिकृति) बीमारियों के निदान में डॉक्टर द्वारा पहले से ही काम में लिया जा रहा है। कुछ ऑपरेशन में हाथ से ज्यादा अच्छा काम करने के लिए रोबोट का प्रयोग किया जा सकता है।

मानव जीनोम प्रोजेक्ट प्रत्येक एकल अनुमानित एक लाख मानव जीन्स का खाका बनाने और उनके अनुक्रम (विन्यास) तय करने को लक्षित होता है। इसकी पूर्ण निष्पत्ति बीमारियों को समझने की हमारी मेडीकल क्षमता में भारी वृद्धि करेगी।

मस्तिष्क को प्रभाविक करने वाली बीमारियाँ जैसे अल्जाईमर, जिनका इलाज सबसे कठिन है, को समझा जा सकता है। मस्तिष्क के रहस्य को खोलने में तगड़ा प्रयास किया जा रहा है।

ऊर्जा

ऊर्जा विकास का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण घटक है, ऊर्जा के परम्परागत स्रोत अपने समाप्ति के नजदीक है, ऊर्जा के गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों जैसे सोलर, हाईड्रोजन, हवा आदि के क्षेत्र में विकसित एवं व्यवहारिक तकनीकी अनुसंधान किया जाना है।

अंतरिक्ष

अंतरिक्ष तकनीकी हमें दुनिया एक एकल इकाई होने का परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है। इसने हमारे लोगों की सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन पर गंभीर और महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। उपग्रह तकनीकी में महत्त्वपूर्ण विकास ने हमारे भौतिक और मानवीय संसार की संक्षिप्त एवं आवृत्तीय, स्पष्ट प्रतिबिम्बों को बता सकती हैं, जो अब ज्ञान का शक्तिशाली औजार बन गया है।

विज्ञान-तकनीकी में परिवर्तन इतना तेज गति का है कि आने वाली सदियों में इसके आकार का अन्दाजा लगाना कठिन है। लेकिन यह निश्चित है कि एक नए वैज्ञानिक-तकनीकी की दुनिया उत्पन्न हो रही है।

V. वैज्ञानिक-तकनीकी ज्ञान का स्त्रोत

वैज्ञानिक-तकनीकी सिद्धान्त की उत्पत्ति पर विचार-विमर्श उतना ही पुराना है जितना इसका इतिहास। कुछ मानते है कि इन सिद्धान्तों को मानव सोच ने पैदा किया है (यानि, वैज्ञानिक-तकनीकी विचारक) जबकि अन्य स्वीकार करते हैं कि सभी सिद्धान्त वस्तुगत (मानव सोच से बाहर स्वतंत्र रूप से अस्तित्वमान) घटनाक्रमों का हमारी ज्ञानेन्द्रियों के प्रतिबिम्ब मात्र हैं।

इस प्रकार पहले वाले दृष्टिकोण की मान्यता है कि वैज्ञानिक-तकनीकी ज्ञान मनोगत है, जबकि अन्य इसे वस्तुगत मानता है। लेकिन दोनों अवधारणाएँ वास्तविकता की एक-तरफा तस्वीर पेश करते हैं।

वैज्ञानिक-तकनीकी सिद्धान्तों के क्रमिक विकास की प्रक्रिया स्वयं दर्शाती है कि मनोगत और वस्तुगत दो श्रेणियाँ प्रत्येक विचार या सिद्धान्त के दो पहलू हैं। शुरूआत में जब मानवीय सोच एक परिकल्पना पेश करता है तब मनोगत प्रमुख भूमिका निभाता है। वह क्षण जब कोई (परिकल्पना के आधार पर) पर्यवेक्षण शुरू करता है, जब घटनाक्रम हमारी ज्ञानेन्द्रियों पर इसके कुछ रूझानों को प्रतिबिम्बित करता है और फिर प्रयोगों से गुजरता हैं जहाँ घटनाक्रम (विशिष्ट परिस्थितियों में) हमारी ज्ञानेन्द्रियों में इसके चरित्र (या गुणों) को प्रदर्शित करता है, तब वस्तुगत प्रथम स्थान हासिल करता है। पुन: जब पर्यवेक्षण एवं प्रयोगों द्वारा प्राप्त किए गए डाटा (या आंकड़ों) के विश्लेषण एवं सुव्यवस्थितकरण किया जाता है तब मनोगत प्रथम स्थिति में आता है।

उपर बताए गए तथ्य संकेत देते हैं कि किसी सिद्धान्त के मूलभूत (या तात्विक) तत्त्व वस्तुगत द्वारा प्रतिबिम्बित होते हैं जबकि उनकी अस्थाई व्याख्या और अन्तिम विश्लेषण तथा सुव्यवस्थिकरण मनोगत द्वारा किया जाता है।

आगे सिद्धान्त प्रतिपादित करने में एक व्यक्ति सह समूह की भूमिका का जहाँ तक सवाल है, दोनों अपना-अपना हिस्सा डालते हैं। जहां व्यक्ति एक वैचारिक परिशोधन सयन्त्र की भूमिका निभाता है वहीं उससे संबंधित दल, विभाग साथ ही साथ सम्पूर्ण समाज (वास्तविकता की अपनी सोच के जरिए) वैचारिक कच्चे माल की आपूर्ति करता है।)

VI. आज भारत में विज्ञान-तकनीकी की अवस्था

स्वतंत्रता के 50 वर्षों बाद विज्ञान-तकनीकी के मामले में हम वास्तव में कहां खड़े हैं।

हमारे अधिक ढोल पीटे जाने वाले "दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र" द्वारा प्रतिदिन दुनिया की विज्ञान-तकनीकी की तीसरी बड़ी कार्यशील ताकत होने की शेखी बघारी जाती है।

लेकिन हमारे वैज्ञानिक-तकनीकी खोज के बारे में मुश्किल से ही कोई शब्द है। क्यों? क्योंकि हमारा माफिया और धन आधारित राजतंत्र ने वास्तव में एक भ्रष्ट और अनुसंधान विरोधी सामाजिक वातावरण उत्पन्न किया है, जिसने हमारे वैज्ञानिक-तकनिकी विशेषज्ञों और इंजीनियरों की रचनात्मक बुद्धिमता का गला घोटा है। स्पष्टत:, उनकी क्षमता के वास्तविक रूपान्तरण में कमी विश्व के विज्ञान-तकनीकी में उनकी प्रभावी निशानी को कम किया है। यह क्यों है कि प्रत्येक विज्ञान-तकनीकी का जानकार यदि उसके पास साधन है तो वह अन्य देश को चुनता है। देश में वर्तमान वैज्ञानिक-तकनीकी दृश्य यहां तक कि उपनिवेशन दिनों से भी, धुन्धला है, जब भारतीय व्यक्तित्व जैसे सी. वी. रमन, जे.सी. बोस, मेघनाथ साह, सत्यन बोस आदि, अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान-तकनीकी पर अपनी छाप छोड़ने के समर्थ थे।

जब देश अपनी स्वतंत्रता की गोल्डन जुबली मना रहा है, तब मुख्य भारतीय वैज्ञानिक मूल्यांकन में नीचे लिखी टिप्पणियाँ की।

बी.एम. बिरला विज्ञान केन्द्र के निदेशक डॉ. बी.जी. सिद्धार्थ कहते हैं कि 50 वर्षों में कुछ अपवादों को छोड़कर भारत विज्ञान और तकनीकी के सम्पूर्ण मामलों में न तो प्रभावी और न ही मूल्य-प्रभावी, न ही व्यवहारिक और न ही प्रतियोगी रही है।

तथ्य है कि उत्कृष्ट व्यक्ति ने प्रत्येक क्षेत्र में त्याग किया है तथा विज्ञान-तकनीकी में भी प्रभाव डाला है तथा उचित पर्यावरण के अभाव में ब्रेन-ड्रेन हुआ तथा हालात बिगड़े।

डॉ. सिद्धार्थ ने कहा शुद्ध विज्ञान में दृष्टिकोण खासकरके अंधकारमय था, जहां कोष की कमी की साथ कमजोर मानव संसाधन थे, तेज मस्तिष्क वाले ज्यादा आरामदायक व्यवसाय की ओर मुड़े थे।

डॉ. सिद्धार्थ ने कहा तकनीकी में, कोई प्रभावी प्राप्ति की कमी आंशिक तौर पर इस कारण था कि देश एक निजी क्षेत्र की परम्परा नहीं बना पाया जो अनुसंधान एवं विकास के लिए कोष दे।

गहरे स्तर पर विज्ञान शिक्षा सैकण्डरी स्कूल से ऊपर खेदपूर्ण अवस्था कमजोर मानवीय संसाधन के लिए जिम्मेवार रही है, यह भी तथ्य है कि भारत में विज्ञान शिक्षा कम या ज्यादा बहुत ही सैद्धान्तिक थी।

ऐसी ही मिलती जुलती संवेदना न्यूक्लियर फ्यूल काम्पलेक्स (NFC) के मुख्य अधिशाषी डॉ. के.के. सिन्हा ने कहा यद्यपि देश साईकल से कार, रेलवे इंजन और हवाई जहाज, परमाणु ऊर्जा संयन्त्र से अपग्रह और लाखों-करोड़ों के लिए पर्याप्त भोजन को पैदा करने के समर्थ बना, दुर्भाग्यवश विज्ञान और तकनीकी जनसंख्या में भारी वृद्धि को नियंत्रित करने में समर्थ नहीं बनी, जातिवादी संकीर्णता, भ्रष्टाचार एवं अरक्षता के वहशी फैलाव को रोक नहीं सकी। इस प्रकार हम पाते है कि सिविल इंजीनियरिंग में पर्याप्त ज्ञान के बावजूद हमारी सड़कें लगातार "बहुत ही खराब" है। इसके बावजूद कि बहुत से भारतीय लेखक प्रशासनिक विषय पर अपने प्रदर्शन में उत्कृष्ट रहे हैं, न्याय प्रदान करने की प्रक्रिया ब्रिटिश काल से ज्यादा धीमी थी। देश बहुत से मूल्यवान खनिज और भारी मात्रा में उपजाऊ भूमि होने के बावजूद अल्प-विकसित है।

डा. सिन्हा ने कहा जनसंख्या का बहुमत आज की वास्तविकता के बारे मूक गवाह था। कुछ लोगों द्वारा गलत धन इकट्ठा करने का अनैतिक प्रदर्शन तथा करोड़ों असहायों की गरीबी हमारे देश के साथ थी अन्य क्या सहयोग करे। "हम दावा करते हैं कि हमारे देश का आदर्श वाक्य सत्यमेव जयते है लेकिन वास्तविक सत्य से हमारी अनुसंधान एजेन्सियाँ और न्याय प्रदान करने वाले न्यायालय चालाकी से बच निकलते हैं।

डॉ. सिन्हा यदि देश अपने आपको कही भी समृद्ध देशों के नजदीक की श्रेणी में लाता है "लोग सही और गलत के बीच भेद की योग्यता विकसित करेंगे यदि औद्योगिक प्रक्रिया को चलाने में जरूरत है तो उसमें जोड़ेंगे, हम अधिकतम् जरूरत से ज्यादा ऊर्जा या ज्यादा पदार्थ उपयोग करते हैं हम इसे अकुशल प्रक्रिया कहेंगे। इसी तरह प्रबंध करने या एक विचार या एक राज्य को चलाने में दक्षता और खर्च एक पैमाना की आवश्यकता है। यह एक मूलभूत विषय था जो देश के लोगों को कार्यान्वित करना चाहिए था क्योंकि यह उनकी सम्पत्ति का हिस्सा था जो बीमार सोच की प्रबंध प्रणाली एवं गलत संचालक के जरिए गलत हाथों में चला गया था, नष्ट हो गया। देश में प्रति व्यक्ति बिजली उपभोग दुनिया के उपयोग का सबसे कम था।

तेज विद्युतीकरण की जरूरत का महत्त्व बताते हुए उन्होंने कहा देश को ऊर्जा के सभी उपलब्ध स्रोतों चाहे वे कोयला, तरल ईंधन, जल या परमाणु हो, को उपयोग में लेना चाहिये।

हालांकि उन्होंने कहा कि "हम कभी-कभी पाते हैं कि हम पदार्थ, उपकरण या यंत्र विश्व स्तर के बनाते है, लेकिन स्थिरता और प्रतियोगिता में हर कहीं कमी होती है - नहीं तो हमारा विश्व निर्यात में हमारा हिस्सा नीचे क्यों चला जाता है? इसका क्या कारण हो सकता है?

उन्होंने कहा सम्पूर्ण विश्लेषण स्थिर बिंदू होगा या तो तकनीकी अवस्था पूंजी लागत, समता की दिशा और या उत्पादकता में।

डॉ. के.के. द्विवेदी, जो परमाणु ऊर्जा विभाग की परमाणु खनिज विंग (AMD) के मुखिया है, ने कहा "हमने देश में विभिन्न क्षेत्रों में सभी तरह के विकास को देखा, यद्यपि हमने जैसा समझा उससे धीमी गति पाई। अभी भी काफी कुछ हासिल करना है" नेहरू युग के बाद भ्रष्टाचार तेजी से बढ़ा और देश की तस्वीर को कलंकित किया। सभी को प्राथमिक शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधा के हमारे लक्ष्य से देश अभी भी काफी दूर था।

सेल्यूलर और माल्यूकूल बॉयोलोजी (CCMB) के निदेशक प्रोफेसर डी. बालासुब्रयम ने कहा कि विज्ञान की राज्य योजना के साथ एक समस्या उपकरण और परिणाम के बीच उलझन की रही है। अवधारणा यदि आयोग गठन की समस्या है एक पेनल, एक लेबोटरी या एक संस्थान की। यह हुआ हर कोई सोचता कि कार्य हो चुका जबकि कार्य मात्र शुरू हुआ।

VII. एक वैज्ञानिक-तकनीकी दृष्टिकोण की आवश्यकता

मानवजाति का विकास विज्ञान-तकनीकी की उन्नति में निहित है। और विज्ञान-तकनीकी की प्रक्रिया एक वैज्ञानिक-तकनीकी मानवीय दृष्किोण की वृद्धि पर निर्भर करता है। वैज्ञानिक-तकनिकी की स्थिति के बगैर विज्ञान-तकनीकी का श्रेष्ठ उपयोग संभव नहीं है। जब तक समाज एक विज्ञान-तकनीकी अवधारणा को समाज में प्राथमिकता नहीं देगा तब तक अतार्किक दृष्टिकोण समाप्त नहीं होंगे।

यद्यपि विज्ञान-तकनीकी का विकास, जैसा इतिहास ने दिखाया है, ने लोगों को अधिक वास्तविकतावादी और तर्कसंगत बनाने में महान् भूमिका निभाई है, फिर भी इसे अभी काफी पूरा किया जाना है।

पुरानी मानसिकता और आदतें (अन्धविश्वास, जादू, चमत्कार, कपोल कल्पना, भाग्य, स्वर्ग, नरक आदि) विश्व पटल पर अभी भी प्रभावी बने हुए हैं।

अन्धविश्वास (शुभ होने का अतार्किक विश्वास) चारों ओर प्रचलित है। उदाहरण के लिए यदि कोई महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहा होता है तो छींकना बुरा शगुन माना जाता है। यदि बिल्ली किसी का रास्ता काट ले तो कुछ बुरी घटना होने वाली है। दांयी हाथ की हथेली में खाज आने पर धन प्राप्ति हो सकती है। उल्लू दुर्भाग्य का प्रतीक है। आपकी दीवार पर कौआ की लगातार कांव-कांव मेहमानों के आने का संकेत हैं। दिन में शियारों का हुआना आपदा आने का संकेत है।

इण्लैण्ड में यह आम कहावत है कि "मई में शादी हमेशा की परेशानी" (हमेशा के लिए पछताना)।

जादुई रिवाज (घटनाओं को प्रभावित करने के कल्पित तरीके) अभी भी कई इलाकों में चल रहे हैं। सूखा पीड़ित किसानों द्वारा बरसात करवाने वाले जादुगरों को लगातार काम में लेना। विभिन्न प्रकार की बीमारियों के इलाज में भूतों और आत्माओं की जादुई कला का प्रयोग, दूर-दराज के गांवों में डायन का कू-प्रभाव और किसी की डायन निकालने का प्रयोग, डायनों से निपटने के लिए देववाणी का प्रयोग भी प्रचलित है।

चमत्कार में विश्वास (अलौकिक घटनाओं) बहुत से हिस्सों में विद्यमान हैं। दो वर्ष पूर्व गणेश मूर्ति द्वारा दूध पीने के समाचार ने पूरे भारत को हिला दिया। यहां तक कि कुछ वैज्ञानिकों ने इस घटना को सिद्ध करने की कोशिश की।

धर्म और जादू टोना दोनों धार्मिक विधि विधान को शामिल करते है। यहाँ तक कि कुछ धार्मिक विश्वास और व्यवहार अक्सर जादूई क्रिया काम में लेते है (उदाहरण के लिए कुछ धार्मिक अनुष्ठान में देवता या बुरी आत्माओं का आह्वान की अनिवार्यता होती है)।

अभी भी भगवान, भाग्य, नरक और स्वर्ग में विश्वास लोगों को वश में किए हुए हैं।

इस प्रकार की अतार्किक या अनुपयुक्त प्रकरणों को बढ़ावा देने की एक ही प्रेरणा पर पहुंचना स्वार्थ है, जिसका उद्देश्य या तो इच्छित साध्य पर पहुंचना या कुछ असाध्य कठिनाई से मुक्ति, या बुरी परिस्थिति से बाहर निकलना, या मृत्यु के बाद स्वर्ग में अपनी एक सीट आरक्षित करना होता है।

सभी अबोधगम्य विश्वास प्रकृति के स्थापित नियमों का उल्लंघन करते हैं। वे किसी उच्च आदर्श पर आधारित नहीं होते हैं।

विज्ञान-तकनीकी बहुत ही पहले से घोषणा करती है कि यह लगातार बदल रही वास्तविकता में अंतिम शब्द या अन्तिम सत्ता नहीं है। चमत्कारिक विश्वास वाले यह कहकर इसे गलत निरूपण करते हैं कि विज्ञान-तकनीकी मूलभूत रूप से

अविश्वसनीय है और यह मूलभूत सवालों का कोई उत्तर नहीं देती है जैसे कि विश्व कि उत्पत्ति कैसे हुई ?

विज्ञान-तकनीकी तर्क संगतता पर टिकी है। यह सही और गलत के बीच स्पष्ट भेद करती है। इसके सही गलत के निर्धारण के 4 प्राचल (Parameter) हैं, परिकल्पना (बिना इसके कोई भी यह तय नहीं कर सकता कि उसे क्या अवलोकन करना है और कैसे करना है), पर्यवेक्षण, प्रयोग और विश्लेषण के साथ सुव्यवस्थिकरण। विज्ञान में किसी भी अतार्किकता के लिए कोई स्थान नहीं है। किसी अन्धविश्वास, जादू, चमत्कार या भाग्य के लिए विज्ञान-तकनीकी में कोई जगह नहीं है। विज्ञान-तकनीकी इन अतार्किक या अनुपयुक्त घटनाक्रमों को स्वीकार नहीं कर सकती है और न करती है, क्योंकि वे प्रकृति के मूलभूत नियमों का उल्लंघन करते हैं।

VIII. विज्ञान-तकनीकी का दुरूपयोग

विज्ञान तकनीकी प्रकृति की विविध प्रक्रियाओं के ज्ञान को बताती है। यद्यपि इस ज्ञान का भण्डार अभी बहुत ही सीमित है। अभी कुछ ही प्राकृतिक प्रक्रियाएँ हैं जिनका ज्ञान इसे संतोषजनक (पूरा नहीं) रूप से ज्ञात है जैसे हवा। लेकिन इसकी भारी संख्या के बारे में कोई भी जानकारी नहीं है।

बहरहाल, यदि मानवजाति को किसी एक घटनाक्रम (उदाहरण के लिए, परमाणु ऊर्जा को एक बम्ब में समाहित करने) की सूचना है, जिसका गलत उपयोग कुछ स्वार्थी या अन्धभक्ति के उद्देश्य के लिए जानबूझकर किया जाता है, तो इसमें मानवजाति का दोष हैं, विज्ञान-तकनीकी का नहीं। पुन: यदि हम अचेत (गलत धारणा या अज्ञान) रूप से किसी घटनाक्रम (उदाहरण के लिए ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोतों) का उपयोग जिससे हमें कुछ अस्थाई लाभ होता है लेकिन लम्बे समय में हानि होती है, यहां भी जिम्मेवारी हमारे पर ही आती है। किसी भी रास्ते से हम प्राकृतिक घटनाक्रमों के हमारे संचालन को देखें, विज्ञान-तकनीकी पर दोष नहीं लगाया जा सकता।

(क) जैव-जीवन को दो गंभीर चुनौतियों से सामना

अभी-अभी, विज्ञान-तकनीकी ने दो बहुत ही विध्वसंकारी चुनौतियों को चिह्नित किया है, अचेतन रूप से स्वयं मानव जाति द्वारा पैदा की गई है, न सिर्फ मानवजाति के बल्कि सम्पूर्ण जैव-जीवन के अस्तित्व के खतरे को चुनौती। एक है हमारे पर्यावरण (हवा, पानी, भूमि आदि से गठित) के पतन की, जो पहले से ही खतरनाक स्तर से चल रहा है, साथ ही जैव-प्रजातियाँ जिनमें से बहुत-सी प्रजातियाँ प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में विलुप्त हो रही हैं।

अन्य चुनौती है, अभूतपूर्व रूप से बढ़ रही मानव जनसंख्या है जो इस सदी में

चार गुणा बढ़ी है। जनसंख्या विस्फोटक प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव बढ़ाता है - इस प्रकार पर्यावरण संकट को और गहरा करता है। समस्या आगे विश्वव्यापी गरीबी और बेराजगारी से और ज्यादा प्रबलित होती है।

(ख) दो चुनौतियों की खतरनाक अवस्था

दो मूलभूत चुनौतियों की अवस्था, जैसा कि विभिन्न विशेषज्ञ एजेन्सियों द्वारा दिए गए हैं और अब लोगों को ज्ञात है, उच्च स्तर की खतरे की घण्टी है।

पर्यावरण के क्षेत्र में

1. पृथ्वी पर से प्रतिवर्ष 25 अरब टन ऊपरी मिट्टी समाप्त हो रही हैं तथा 1 करोड़ 70 लाख हैक्टयर घने जंगल नष्ट हो रहे हैं।

2. 1.5 अरब हैक्टेयर भूमि का पतन हो गया है और वह फसल के लिए अनुपयोग हो गई है।

3. खेती योग्य मूल्यवान गैर कृषि भूमि, आवसीय कोलोनियों, पार्कों, रेलवे लाईन, कार और बस पार्कों, हवाई पट्टियों आदि के निर्माण में, जो अनुमानित की है 0.1 से 0.2 हैक्टयर प्रति व्यक्ति है।

4. 35 प्रतिशत विश्व फसल को 15% उपलब्ध सिचिंत भूमि से पैदा की जाती है।

5. 1958 से वाटर टेबल बैंकाक में 80 फीट और तमिलनाडू में 100 फीट नीचे चली गई है।

6. लगभग 70% पृथ्वी का जंगल 1 लाख 70 हजार हैक्टेयर की दर से पहले से ही समाप्त किया जा चुका है।

7. जंगलों के घटने से बहुत सी उड़ने वाली प्रजातियाँ और जानवर या तो विलुप्त हो गए है या उनकी संख्या कम हो गई है। लगभग 140 पौधों की और जानवरों की प्रजातियाँ को प्रतिदिन विलुप्ति की चुनौती है। विश्व की कुल 60,000 प्रजातियाँ या चार में से एक प्रजाति अगली सदी के मध्य में विलुप्त हो जायेगी या विलुप्ति के कगार पर होगी।

8. यदि पर्यावरण पतन का यह स्तर जारी रहता है तो विशेषज्ञों के मुताबिक 100 वर्षों में हमारी पृथ्वी जैव-जीवन के जीने लायक नहीं रहेगी।

9. भारत में कुल जंगल क्षेत्र जो 1947 में कुल क्षेत्र का 30% था आज कम होकर 12% हो गया।

10. भारत में 1 करोड़ 60 लाख हैक्टेयर उपजाऊ भूमि में से 1 करोड़ उपजाऊ भूमि गैर उपजाऊ बन गई है।

मानव जनसंख्या के क्षेत्र में

हजारों वर्षों में जनसंख्या बहुत ही धीमी रफ्तार से बढ़ी यह दस लाख वर्षों में एक अरब तक पहुँची (यानि सन् 1800 के आस पास एक अरब) दूसरा अरब 130 वर्षों में जुड़ गया (यानि 1930 में जनसंख्या 2 अरब हो गई) तीसरा अरब 30 वर्षों में (यानि 1960 में) और चौथा अरब 15 वर्षों (यानि 1975 में) जुड़ गया, और पाँचवा 13 वर्षों यानि (1988 में) इस दशक में विशेषज्ञों का अनुमान है कि 10 करोड़ लोग प्रतिवर्ष इस दुनियां की जनसंख्या में सम्मिलित होंगे।

भारत की जनसंख्या 1947 में 34 करोड़ थी जो अब 1997 में 97 करोड़ हो गई।

स्पष्टत: दुनिया घोर विपत्ति की तरफ बढ़ रही है।

उपर कही गई मामले की अभूतपूर्व स्थिति विश्व भर में चिन्ता का कारण है लेकिन यह चिन्ता 1992 के संयुक्त राष्ट्र द्वारा पर्यावरण पर रियो सम्मेलन में प्रकट हुई। सन् 1994 में जनसंख्या पर यू.एन. काहिरा सम्मेलन और बाद के बहुत सारे अन्तर्राष्ट्रीय मेल-मिलापों में इसे किसी ठोस कार्यक्रम में रूपान्तरित नहीं कर पाये।

(ग) संकीर्ण राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य-मुख्य रूकावट

मानव जाति को इसके एक्शन स्लोगन को लागू करने की शुरूआत करने में क्या रूकावट है?

सबसे महत्त्वपूर्ण रूकावट ग्लोबल एक्शन प्लान को लागू करने के प्रति हमारा रूख संकीर्ण राष्ट्रवाद की अवधारणा हैं - जो प्रत्येक राष्ट्रीय सरकारों द्वारा आगे बढ़ाई जाती है - अब बहुत आक्रामक है, जो पर्यावरण, जनसंख्या से संबंधित अन्तर्राष्ट्रीय एक्शन प्लान से प्रतिकूल है।

राष्ट्रीय प्राथमिकता तार्किक तौर पर, अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम के मूल विषयों से विरोध रखता है। राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों में किसी हिस्सेदारी नहीं होने से विश्व के लोगों की बहुसंख्या विश्व एजेण्डे को आगे बढ़ाने में कोई खास उत्साह नहीं रखती।

मानवजाति इन दो चुनौतियों को कैसे जवाब देती है - इस पर मानवजाति का भविष्य निर्भर करेगा।

IX. देश की उच्च प्राथमिकता

टिकाऊ और समतावादी विकास

मानवजाति के सामने प्रस्तुत दो घातक चुनौतियाँ को प्रभावी तौर पर मुकाबला टिकाऊ और समतावादी विकास अपनाकर किया जा सकता है। यह मॉडल परिवर्तन

के लिए प्रकृति-हितैषी और मानव हितैषी प्रक्रिया को शुरू करने को निर्दिष्ट करता है, यह परिवर्तन एक तरफ पर्यावरण की हिफाजत करता है तथा दूसरी ओर मानव संसाधनों को विकसित करता है। इस प्रस्तावना की तार्किता है कि ये दो शक्तियाँ— यानि, प्रकृति और मानवजाति मानव समाज के विकास की दो मूलभूत ताकतें हैं। इसलिए केवल उनका उचित विकास ही सामाजिक समृद्धि ला सकता है।

उपर उल्लेखित प्रस्तावना के अलावा कोई अन्य प्रस्तावना जो मात्र एक अन्य कारक पर जोर देता है एक उचित परिप्रेक्ष्य नहीं देता है।

उदाहरण के लिये पर्यावरणवादी केवल पर्यावरण को ही निर्णायक होने पर जोर देते है, जबकि व्यवहारिक तौर से वे वर्तमान मानव द्वारा पैदा किए गए और चल रहे पर्यावरण असंतुलन को ठीक करने और भविष्य में उन्हें इसे टालने के मानव के वर्तमान ज्ञान का उपयोग करने की मनाही करते हैं।

इसी तरह, बाजारवादी (अमरीका, यूरोपीयन कम्युनिटी, जापान आदि) पर्यावरण ठीक करने के लिए तकनीकी पर निर्भर रहते हैं, और मानव समाज में आर्थिक संतुलन स्थापित करने का एक मात्र माध्यम बाजार को पेश करते हैं।

आगे वामपंथी, पर्यावरणीय चुनौती की गंभीरता पर अभी भी असंवेदनशील हैं, वे अभी तक अपने प्रिय वाक्यों को दुहराते हैं कि भौतिकवाद आधार और वर्ग संघर्ष समाज के विकास का नियम है।

स्पष्टतया, एकतरफापन वास्तविकता को विकृत पेश करता है। उपर उद्धरित तथ्यों से, यह अनिवार्य तय निर्दिष्ट होता है कि टिकाऊ और समतावादी विकास मांग करता है कि सर्वोच्च राष्ट्रीय प्राथमिकता एक तरफ पर्यावरण संरक्षण और दूसरी तरफ मानव विकास को दे। केवल ये दो क्षेत्र ही प्रमुख स्थान पर रखने से हम पर्यावरण हितैषी और लोक हितैषी परिवर्तन प्रक्रिया की शुरूआत कर सकते है जो हमें टिकाऊ, न्यायिक, उचित मानव समाज स्थापित करने की ओर ले जायेगा। नीचे लिखे बिन्दू इसके लिए सहायक हो सकते हैं।

(क) आम सिद्धान्त

1. सही को अपनाना गलत को छोड़ना।

2. यह मानना कि प्रकृति और मानव दोनों मानव समाज के 2 अन्तर संबंधित और अन्तरक्रियाशील प्रेरक शक्तियाँ हैं।

3. विश्व एक गांव है, विश्व सामाजिक वास्तविकता से मेल खाती हुई एक ही मानव समाज की दृष्टि को स्वीकार करना।

4. पर्यावरणीय एवं मानवजाति के विकास के लिए विश्व दृष्टिकोण की

अनिवार्यता की मान्यता होना।

5. पर्यावरणीय पतन मानव-निर्मित समस्या है, जो अवास्तविक परिप्रेक्ष्य से पैदा हुई है।

6. पर्यावरणीय एवं मानव विकास के एक्शन प्लान को आगे बढ़ाने की तैयारी में लोगों को प्रेरित करना और सम्मिलित करना।

7. लोगों खासकर महिलाओं और वंचित लोगों का सशक्तिकरण करने, टिकाऊ और समतावादी विकास प्रक्रिया को प्रबंधित करना।

8. विकास के लिए नहीं बल्कि पर्यावरण के साथ मानवजाति की सुरक्षा के लिए करना।

9. टिकाऊ और समातवादी विकास के लिए विज्ञान-तकनीकी को काम में लेना। यह मांग करती है कि कुल घरेलु उत्पाद GDP का रिसर्च एवं डवलपमेन्ट को 0.8% से 5%, शिक्षा में वर्तमान 3% से 10% तथा स्वास्थ्य सुरक्षा में वर्तमान 2% से 10% की बढोतरी की जाए। कुल खर्च में (GDP का 19%) संचार, यातायात में सरकारी विनियोजन में कमी करके तथा ऊर्जा क्षेत्र के निजीकरण करके पुरा किया जाए। साथ ही भारतीय उद्योगों के लिए यह बाध्यकारी प्रावधान हो कि वे अपनी बिक्री का 5% अनुसंधान एवं विकास पर खर्च करे।

इन आम सिद्धान्त के लिए बहुत सारे अन्तरसंबंधित पहलकदमियों की आवश्यकता है।

(ख) पर्यावरण के संबंध में

1. वनीकरण को एक अनिवार्य क्षेत्र मानना क्योंकि पर्यावरण प्रदुषण को रोकने का एक निश्चित रास्ता पेड़-पौधों की संख्या बढ़ाना खासकर पेड़ों की संख्या में भारी वृद्धि करना है।

2. बेकार पड़ी जमीन और गैर उपजाऊ भूमि की मिट्टी संरक्षण और वनीकरण करके सुधार करना।

3. पानी के संरक्षण एवं गंदे पानी के पुन: उपयोग को अधिक दक्षता के साथ अमल में लाना।

4. वायु प्रदुषण का नियमन एवं नियन्त्रण करना।

5. विशिष्ट औद्योगिक प्रदुषण नियन्त्रण मापदण्डों को लागू करना।

6. पर्यावरण हितैषी तकनीक और उत्पाद को विकसित करना तथा उन्हें बनाने वालों को आवश्यक वित्तीय सहायता प्रदान करना।

7. ऊर्जा दक्षता को बढ़ाना।

8. कचरे को कम करना तथा इसके प्रबंध को एक मजबूत तथा दक्ष तरीके से करना।

9. गैर नवीनीकृत संसाधनों को संरक्षित करना।

10. ईंधन और पदार्थों का विकल्प तलाशना।

11. जैव-विविधता के संरक्षण के लिए प्रभावी कदम उठाना।

12. कस्बों और शहरों में मल-जल निकास को दक्षता से लागू करना।

13. पर्यावरण संरक्षण को पार्टी राजनीति से ऊपर रखना, यह हमारे सभी के भविष्य से संबंधित है।

14. पर्यावरण प्रबंध से संबंधित मामलों में लोक सरकार पार्टनरशिप सम्मिलित करना।

(ग) मानव विकास के संबंध में

1. संवैधानिक और कानूनी रूप से विभिन्न स्तरों पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में लोगों का सशक्तिकरण करना।

2. सभी तरह की विभेदता - उदाहरण के लिए अमीर-गरीब, लिंग असमानता, जातीय, नस्लीय या धार्मिक, शहर-गांव, विकसित-विकासशील देशों को समाप्त करके सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना।

3. अशिक्षा खासकर महिला अशिक्षा का उन्नमूलन के लिए प्रभावी कदम उठाना।

4. उचित स्वास्थ्य सेवाएं, खासकर ग्रामीण इलाकों में उपलब्ध करना।

5. टिकाऊ आधार पर ज्यादा कृषि उत्पादकता हासिल करने के लिए टिकाऊ एकीकृत विकास योजनाओं को शुरू करना, जो बॉयोतकनीकी के मूलभूत निवेश, कीड़ों का संयुक्त प्रंबंध, उपग्रह द्वारा प्रस्तुत भूमि के गुण और पानी के स्त्रोतों की जानकारी पर आधारित हो।

6. सुधरी हुई कृषि उत्पादकता के लिए ऊपरी मिट्टी, पानी, जंगल और अन्य स्त्रोतों के संरक्षण के तुरन्त उपाय करना।

7. एकीकृत विकास योजनाओं को लागू करने के लिए लोग - सरकार का संयुक्त नियन्त्रण कायम करके ग्रामीण विकास प्रोग्राम के तहत सभी उपायों को जोड़ना और सभी राजनीतिक योजनाओं को बंद करना।

8. ग्रामीण आर्थिकता में सुधार के लिए ग्रामीण इलाकों में कृषि आधारित उद्योगों की शुरूआत करना।

9. ग्रामीण इलाकों में मूलभूत सुविधाओं को विकसित करना।

आज हमारे समय की जरूरत है कि हम सभी साधनों को दो बड़ी चुनौतियों का जवाब देने में लगा दे, ऐसी चुनौतियाँ मानवजाति ने भूतकाल में कभी भी नहीं देखी। यदि हम इस अवसर के उपयोग में असफल रहते हैं, तो विकल्प मानव का सर्वनाश है। लेकिन इतिहास बताता है कि मानव वास्तविकता (या मानव व्यवहारिक संवेदना) हमेशा उसे मिले हुए कार्य के बराबर योग्य सिद्ध किया है।

X. इंजीनियरिंग और इंजीनियरों की सामाजिक जिम्मेवारी

(क) एक साधना के रूप में इंजीनियरिंग

इंजीनियरिंग को ऐसे परिभाषित किया जा सकता है कि यह एक कला या व्यवसाय है जो विज्ञान-तकनीकी सिद्धान्तों को मानव समाज के लिए उपयोगी एवं सुविधा के लिए मानव निर्मित तमाम वस्तुओं को उत्पन्न करती है।

मानव निर्मित वस्तुओं में सभी कुछ - एक सूई से एक उपग्रह तक की - सभी वस्तुएं सम्मिलित हैं। यह व्यापकता मानव गतिविधि के प्रत्येक क्षेत्र कृषि, उद्योग, दवाईयां, इलेक्ट्रानिक, हवाईजहाज, खगोलीय, यांत्रिक, बायो-मेडीकल, रसायन आदि में इंजीनियरिंग की रचनात्मक प्रकृति सम्मिलित होने को दर्शाता है। विज्ञान-तकनीकी और इंजीनियरिंग में मुख्य फर्क यह है कि जहां विज्ञान-तकनीकी का उद्देश्य घटनाक्रमों (उसके दोनों पहलुओं सकारात्मक और नकारात्मक सहित) की वास्तविकता को उजागर करता है और इस प्रकार यह मानवजाति को अधिक वास्तविक और तर्क संगत बनाती है, जबकि इंजीनियरिंग उपलब्ध विज्ञान-तकनीकी एवं स्वयं के अनुसंधान को सुयोग्य या फायदेमंद उद्देश्य, जन उपयोगी कार्यों, पर्यावरणीय सुरक्षा, आर्थिक दक्षता बढ़ाने आदि के लिए प्रयुक्त करती है। इसलिए, इंजीनियरिंग को प्राथमिक तौर पर उत्कृष्ट सामंजस्य की एक रचनात्मक मानसिकता और प्रचलित तकनीकी में सुधार करने की आवश्यकता होती है।

विज्ञान-तकनीकी और इंजीनियरिंग अन्तर संबंधित और अन्तरनिर्भर है। जहां विज्ञान-तकनीकी इंजीनियरिंग को किसी प्रक्रिया के मूलभूत सैद्धान्तिक व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करती है जबकि इंजीनियरिंग बदले में विज्ञान-तकनीकी को उस प्रक्रिया के क्रियान्वयन के दौरान निकले व्यापक और गहरे अनुभव को प्रेषित करती है।

(ख) इंजीनियरिंग का क्रमिक विकास

इंजीनियरिंग उतनी ही पुरानी है जितनी विज्ञान-तकनीकी। इंजीनियरिंग की शुरूआत विज्ञान-तकनीकी प्रक्रिया के अनुकूलन में साथ-साथ आगे बढ़ी है। वह है मानव जाति का विभिन्न कार्य-प्रक्रियाओं के प्रति व्यवहारिक सामान्य ज्ञान जो गलत

एवं सुधार के अनुभव से अपने वर्तमान सूत्रीकरण और संहिताबद्धता के रूप में विकसित हुआ है।

परम्परागत रूप से, इंजीनियरिंग में दो विभाग सम्मिलित रहे - सिविल और सैनिक। विज्ञान-तकनीकी ज्ञान के नए अनुशासन के विकास के साथ इंजीनियरिंग भी इसके उप विभागों में विभक्त होती रही है।

उदाहरण के लिए सिविल इंजीनियरिंग बुनियादी संरचनाओं जैसे सड़क, भवन, पुल, बांध आदि से संबंधित है जबकि मेकेनिकल इंजीनियरिंग अपने-आपको गतिशील पदार्थों जैसे मशीनें, इंजिन आदि में सीमित करती है। इसी तरह माइनिंग इंजीनियरिंग पृथ्वी के गर्भ से खनिज धातु और अयस्क उनके कच्चे रूप की खोज करने और उनसे प्राप्त करने पर संकेन्द्रित रहती है। जबकि धातुकर्मीज (धातु विज्ञान) इंजीनियरिंग अयस्क से धातु के शोधन एवं मिश्रण बनाने में अपने को शामिल करती है। इलेक्ट्रीसिटी एवं रसायन के व्यवहारिक प्रयोग से इलेक्ट्रीकल एवं रसायन इंजीनियरिंग पैदा हुई।

आगे विशेषज्ञता हर उपविभाग में नई विभेता उत्पन्न करता है, सिविल इंजीनियरिंग स्ट्रकचरल इंजीनियरिंग, डेम (बांध) इंजीनियरिंग, जल शक्ति इंजीनियरिंग, पुल इंजीनियरिंग आदि मेकेनिकल इंजीनियरिंग मशीन डिजाईन इंजीनियरिंग, औद्योगिक इंजीनियरिंग, मोटिव (गति) पॉवर इंजीनियरिंग आदि, इलेक्ट्रीकल इंजीनियरिंग शक्ति और संचार इंजीनियरिंग आदि में चरित्रित हैं। कुछ समय पश्चात् संचार इंजीनियरिंग टेलीग्राफ, टेलीफोन, रेडियो, टेलीविजन और रेडार इंजीनियरिंग में, पॉवर इंजीनियरिंग फोसिल फ्यूल और परमाणु इंजीनियरिंग में, खनिज (माईनिंग) इंजीनियरिंग अयस्क धातुकर्म इंजीनियरिंग और फोसिल फ्यूल माईनिंग इंजीनियरिंग में विभक्त हो जाता है। फिर फोसिल फ्यूल माइनिंग इंजीनियरिंग कोयला और पेट्रोलियम इंजीनियरिंग में बंट जाती है।

सेनीटेरी इंजीयिरिंग का विस्तार मानव द्वारा उत्पन्न उपशिष्ट उत्पाद के निदान से हुआ, जो औद्योगिक प्रभाव को भी संभालती है। सिविल इंजीनियरिंग मिट्टी के भौतिक गुणों की सोयल मेकेनिक्स से संबंध रखती है, जो सिविल संरचनाओं में महत्त्वपूर्ण भूमिका रखती है। मानव इंजीनियरिंग या एनगोमिक्स, मानव-मशीन संबंध हल करने के लिए उभरी। पर्यावरण प्रदुषण और सामाजिक जटिलताओं से पैदा हुए भौतिक और मानसिक रोगों से निपटने के लिए बायो-इंजीनियरिंग (शारीरिक समस्याओं से संबंधित) और मैनेजमेन्ट इंजीनियरिंग (मानसिक समस्याओं से संबंधित) की ओर बढ़े है।

विशेषज्ञता हमेशा अन्य संबंधितों (जैसी विश्वव्यापी अन्तर निर्भरता एवं अन्तरक्रिया की मांग है) से अन्तरक्रिया की आवश्कता रखती है। अर्थात् विशेषज्ञता संग अन्तर अनुशासनात्मक क्रिया विभिन्न विशेषज्ञों के संयोजन के लिए साथ आती है। उदाहरण के लिए एक आधुनिक संरचना की डिजाईन में न सिर्फ स्थाई संरचना के सदस्य सम्मिलित होते हैं बल्कि एक व्यापक जटिलता, गतिशील भाग (इलीवेटर), इलेक्ट्रीकल मशीने, पॉवर डिस्ट्रीब्यूटर, संचार व्यवस्था, गर्म करना, हवा के निकास और एयरकण्डीशन तथा अग्नि सुरक्षा सभी शामिल होते हैं। यहाँ तक कि संरचना के सदस्यों को न सिर्फ स्थिर बल्कि गतिशील भार डिजाईन की आवश्यकता होती है, जैसे कि भूकम्प, हवा का दबाव आदि। क्योंकि इंजीनियरिंग में लोग और धन उतने ही शामिल होते हैं जितने पदार्थ, मशीनें और ऊर्जा शामिल होती है। अन्तरक्रियात्मक-अनुशासन एक एकीकृत प्रबंधन इंजीनियरिंग को आगे लाती है।

(ग) इंजीनियरों की सामाजिक जिम्मेवारी

इंजीनियर एक विशिष्ट समाज की पैदावार है जो उन्हें निर्णायक स्थिति सीधे राष्ट्रीय विकास से जुड़ी निर्णायक स्थिति हासिल करने के लिए वैचारिक और भौतिक दोनों साधन समाज प्रदान करता है। इस प्रकार उनका भी अपने संबंधित समाज से कर्त्तव्य हैं। यह कर्त्तव्य और कोई नहीं बल्कि एक सचेत विकास को पूर्ण करना है।

एक सचेत क्रियान्वति लाभकारी परिणाम की आरे ले जाती है जबकि इसके उलट हानिकारक प्रभाव छोड़ती है। परम्परागत रूप से, इंजीनियर मजबूत विज्ञान और मजूबत आर्थिकता दर पर आधारित दो तरफा अवधारणाओं से मार्गदर्शित है लेकिन आज ग्लोबल वास्तविकता उनसे टिकाऊ और समतावादी विकास के परिप्रेक्ष्य अपनाने की मांग करती है।

इस परिप्रेक्ष्य को अपनाने का अर्थ है सभी विकास गतिविधियां पर्यावरण और मानव के कल्याण को समर्पित हो।

स्पष्टत:, ऐसा परिप्रेक्ष्य निम्नलिखित पर्यावरण हितैषी और लोक हितैषी सिद्धान्तों को अपनाकर पूरा किया जा सकता हैं। इनमें ये शामिल हो सकते हैं।

1. लोगों, पर्यावरणवादियों, प्लानिंग करने वालों और इंजीनियरों के बीच लोकतांत्रिक पार्टनरशिप — साथ सोचने, साथ प्लानिंग बनाने और लागू करने तथा देखरेख एवं नियन्त्रण करने के लिए स्थापित की जाए।

2. प्रत्येक मानव संसाधन विकास प्रोग्राम में संबंधित महिलाओं, कमजोर वर्गों, ग्रामीण क्षेत्र आदि को भागीदार बनाना।

3. पर्यावरण संरक्षण एवं मानव कल्याण के बारे में जन जागृति पैदा करने में सक्रिय भाग लेना।

4. प्रत्येक के कार्य में खोजी प्रवृत्ति हो जबकि रूढ़िवादी (न बदलने वाले) कार्य को निरुत्साहित करना।

5. किसी के काम में उत्पादकता का स्तर उच्चतम हासिल करना।

6. कार्य प्रक्रिया में टीम भावना सर्वोच्च स्तर पर विकसित करना।

7. कर्त्तव्य के प्रति जिम्मेवार और लोगों के प्रति जवाबदेही हो।

8. कर्मचारियों से संबंधित मामलों में विभागीय निर्णय लेने के नए तरीकों के बारे में पूछा जाए।

9. अन्तिम लेकिन बहुत ही महत्त्वपूर्ण — एक टिकाऊ और समतावादी अवधारणा और मानसिकता को हासिल करने के लिए दृढ़ता से कोशिश करना।

संक्षेप में यह एक न्यायिक और समृद्ध मानव भविष्य के निर्माण की ओर बढ़ने वाले रास्ते।

❋ ❋ ❋

एक अनुपयुक्त व्यवस्था और अनैतिक तरीके भारत को विपदा की तरफ धकेल रहे हैं

भारत को एक पुनरसंरचनात्मक कार्यक्रम की जरूरत है

1. समय और स्थान के अनुसार हर चीज अपने ही अटल नियम से विकसित होती है और वे कहीं भी तथा कभी भी किसी मानवीय प्रयास में ऊलूल-जुलूल रास्ता अख्तियार नहीं करती। इसलिए किसी चीज से कोई तभी निपट सकता है जब वह सबसे पहले उसके नियम को समझे और तब उसका उचित प्रत्युत्तर दे।

I. मुख्य पार्टियों की अनैतिक राजनीति

2. भारतीय लोगों को दरपेश 12वीं लोक सभा के चुनाव (मध्यावधि) का सवाल किस आधार से निकला है? इस सवाल का गौरतलब नुक्ता यह है कि क्या यह चुनाव भारतीय लोगों की सामाजिक आवश्यकता से पैदा हुआ है या किसी और कारण से।

3. उपरोक्त सवाल पर किसी भी दृष्टिकोण से देखा जाए तो कोई भी इस हकीकत को देखे बगैर नहीं रह सकता कि आज भारतीय जनता असहनीय और अद्वितीय तकलीफों से कराह रही है। जैसे कि भ्रष्टाचार, अपराध, हिंसा, मानव अधिकारों की अवेहलना, अनपढ़ता, गरीबी, बेरोजगारी, बेघर, बढ़ती बिमारियां, पीने के पानी और स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, महंगा और देरी से प्राप्त न्याय, महिलाओं के खिलाफ अत्याचार (बलात्कार, अपहरण इत्यादि), सांप्रदायिक दंगे, जाति झगड़े, बिजली गुल होना, टेलीफोन खराब होना, गंदगी से सड़ रहे ढेर, दुर्गन्धित सार्वजनिक शौचालय, परिवहन अड़चने, ट्रेफिक दुघटनाएं, घटिया माल, सर्वत्र व्याप्त अकुशलता, निम्न स्तर में मिलावट, कम तौल, अवैध शराब, नशील पदार्थों का अवैध व्यापार, तस्करी, जुआखोरी, सर्वत्र व्याप्त काला बाजारी (उदाहरणतया स्कूलों, कॉलेजों, हॉस्पिटलों में भर्ती, रेलवे आरक्षणों, सिनेमा टिकटों, टेस्ट मैचों, एक कमरा या दुकान किराए लेने, पानी, बिजली, टेलीफोन का कनेक्शन लेने, राशन कार्ड बनाने, गैस सुविधा इत्यादि), नकली चिट फंड कंपनियों और रोजगाार दफ्तरों, झूठे विश्वविद्यालयों, नकली मुद्रा व्यापार, टैक्स चोरी, नाजायज तरीके से धन इकट्ठा करना, विदेश-व्यापार में हेराफेरी, अवैध पैसा विदेशी बैंकों में स्थानान्तरित करना, आदि-आदि। दुख-तकलीफों के सिवाय खुशी के मामले बहुत थोड़े हैं। स्पष्टतया, भारतीय लोगों की उच्च प्राथमिकता यह है कि पहले ये कमरतोड़ तकलीफें कम हों और फिर खत्म हों।यही कारण है कि इन चुनावों के प्रति जनता में कम उत्साह पाया जाता है।

4. किसी चुनाव के संबंध में दूसरा मुख्य पहलू उस समय का राजनीतिक शक्ति संतुलन यानि राजनीतिक पार्टियाँ और राजनीतिज्ञ-होते हैं। जब हम इस पहलू की तरफ देखते हैं तो पाते है कि 12वीं लोकसभा का चुनाव, 1996 की चुनाव प्रक्रिया के बाद की स्थिति का तर्कसंगत परिणाम है और यह प्रक्रिया तीन शासनों (मसलन, 13 दिन का भाजपा मंत्रिमंडल, दस महीने का देवेगौड़ा शासन और 7.5 महीने की गुजराल सरकार) के तहत 18 महीने तक चली है। अगर इन तीन शासनों में से किसी एक ने भी भारतीय लोगों की सामाजिक जरूरत के मुताबिक राजनीतिक प्रक्रिया का प्रबंध किया होता तब लोगों की तकलीफें कम होती और इस तरह मध्यावधि चुनाव का सवाल राष्ट्रीय कार्यक्रम (एजेन्डा) में पैदा ही नहीं होता। परंतु व्यक्तिगत सत्ता की भूख से अंधे हुए इनमें से हर एक ने जनता की आकांक्षा की अवेहलना की है तथा उन पर अपना स्वयं का अवसरवादी कार्यक्रम (यानि 12वीं लोकसभा के चुनाव) थोप दिये हैं।

5. भारतीय जनता की यह आकांक्षा 1996 के 11वें लोकसभा के चुनावी फैसले में ठोस तौर पर अभिव्यक्त हुई। इस चुनावी फैसले ने दर्शाया कि लोग सभी मुख्य पार्टियों की कारगुजारियों से असंतुष्ट हैं, कि वे किसी एक पार्टी को तरजीह नहीं देते, कि वे इन्हें एक ही अवसरवादी थैली के चट्टे-बट्टे समझते हैं और कि एक अच्छी शाख वाली पार्टी के अभाव में वे चाहते हैं कि विद्यमान मुख्य पार्टियां एक आम सहमति पर आधारित, जनहितकारी एजेन्डा को लागू करने के लिए मिलजुलकर देश के प्रशासन को चलायें। परन्तु अवसरवादी राजनीति से प्रेरित मुख्य राजनीतिक संगठन -भाजपा, कांग्रेस (ई), जद-वाम मोर्चो, क्षेत्रीय पार्टियां, इत्यादि - ने उपरोक्त चुनावी फैसले को तोड़-मरोड़कर अपने-अपने पक्ष में दर्शाने की कोशिश की।

6. भाजपा-जिसे अपने दोनों प्रतिद्वन्द्वियों की बनिस्पत लोकसभा में न्यूनतम बहुमत प्राप्त हुआ था - ने लोगों के फैसले को तोड़-मरोड़कर उसकी व्याख्या अपने पक्ष में की। उसने इस तथ्य को बिल्कुल नजरअन्दाज कर दिया कि उसे कुल डाले गए मतों का सिर्फ 23.9 प्रतिशत ही प्राप्त हुआ है तथा 545 सदस्यों वाली लोकसभा में से सिर्फ 161, यानि एक तिहाई सीटें हासिल हुई है।

7. कांग्रेस (ई) व 13 दलीय संयुक्त मोर्चे ने लोगों के फैसले को साम्प्रदायिकता के विरुद्ध और उनके किस्म की धर्मनिरपेक्षता के पक्ष में मत देने की मिथ्या व्याख्या की। जबकि तथ्य यह है कि किसी भी दल ने इस चुनाव (या पहले के किसी चुनाव) को साम्प्रदायिकता बनाम धर्मनिरपेक्षता के बिन्दु पर नहीं लड़ा। यह सर्वविदित है कि उस समय की शासक कांग्रेस (ई) ने स्थायित्व और नरसिंहराव सरकार की कारगुजारी के बिन्दुओं के नाम पर वोट प्राप्त करने का यत्न किया, जबकि उसके दो मुख्य

विपक्षियों (यानि भाजपा और उसके सहयोगी एक तरफ तथा जद-वाम मोर्चा तथा इसके साझेदार दूसरी तरफ) ने भ्रष्टाचार तथा राव सरकार की असफलताओं के बिन्दुओं पर वोट बटोरने की कोशिश की। स्पष्टतया, कांग्रेस (ई) और उसके विरूद्ध दो राजनीतिक विपक्षियों के बीच भेद की रेखा गैर-कांग्रेसवाद रही है। इस प्रकार 1986 के चुनावी फैसले की मुख्य तीनों राजनीतिक पक्षों द्वारा गलत व्याख्या की वजह से राजनीतिक प्रक्रिया में विकृतियाँ पैदा होना लाजिमी था।

8. पिछले 18 माह में दो बार—पहले मई 1996 में 13 दिन की भाजपा सरकार के दौरान और फिर नवम्बर 1997 में गुजराल मंत्रिमंडल के इस्तीफे के बाद - भाजपा की बहु-प्रचारित मूल्य आधारित राजनीति बेनकाब हुई, जब उसने सत्ता हड़पने के लिए अन्य दलों में धन एवम् सत्ता के इस्तेमाल में अन्य दलों में विभाजन करवाने की कोशिश की। यहाँ तक कि इसने हिदुत्व के मुद्दे को दरकिनार करते हुए राष्ट्रवाद की व्याख्या कांग्रेस सरीखी धर्मनिरपेक्षता के तौर पर करनी शुरू कर दी।

9. संयुक्त मोर्चे का पाखण्ड इस विरोधाभासी तर्क से उजागर हुआ कि उसने एक तरफ तो कांग्रेस के मतों को धर्मनिरपेक्ष खाते में जोड़ लिया और उसकी सहायता को सरकार बनाने में चुपचाप स्वीकार कर लिया तथा दूसरी ओर लोगों में यह स्टैण्ड लिया कि भाजपा एवम् कांग्रेस दोनों बराबर खतरनाक हैं। उसका दोगलापन इस तथ्य से और साबित होता है कि कांग्रेस (ई) द्वारा समर्थन वापिस लेने की मात्र धमकी पर ही संयुक्त मोर्चा सरकार ने देवेगौड़ा को हटाकर इन्द्रकुमार गुजराल को प्रधानमंत्री बना दिया, जबकि पहले मोर्चा यह डींग हाँकता रहा कि कांग्रेस (ई) की बिना शर्त संयुक्त मोर्चे की सरकार को समर्थन देना उसकी मांग पर नहीं बल्कि कांग्रेस की अपनी चुनावी मजबूरी है।

10. स्पष्टतया, यह अवसरवादी राजनीति जिसकी शैली तिकड़म वाली और टकरावावादी है, साझी राजनीति के मापदंडों से मेल नहीं खाती है। सांझी राजनीति के लिए तीन शर्तों को पूरा करना जरूरी है :

(अ) एक न्यूनतम साँझा कार्यक्रम (प्रोग्राम) जो आधे मन से नहीं बल्कि पूर्णतया टकरावों को दूर करने के लिए एक पूर्णतया सहमति पर आधारित हो। (ब) निर्णय लेने एवम् टकरावों को दूर करने के लिए एक पूर्णतया लोकतांत्रिक रचनातंत्र कायम करना। (स) एक दूसरे के संगठनों में तथा राजनीतिक प्रभाव वाले क्षेत्रों के संगठनों में दखल न करने के उसूल का पालन करना। यदि इन शर्तों की सही तौर पर पालना की जाए तो गठबंधन सरकारें भी उतनी ही स्थायी हो सकती है जितनी की आमतौर पर एक दलीय सरकार। गठबंधन सरकारें स्केन्डेनेवियन देशों (जैसे — स्वीडन, डेनमार्क इत्यादि) या यूरोप के निचली सतह वाले देशों (जैसे - हॉलेंड

इत्यादि) में आम तौर पर स्थायी साबित हुई है। जबकि इटली की 50 गठबंधन सरकारें जो स्वार्थ पर आधारित है, वे अपेक्षाकृत अस्थिर रही है।

11. संयुक्त मोर्चा सरकार और उसके बाहरी समर्थक (कांग्रेस ई) की मुख्य असफलता उक्त तीन आवश्यक शर्तों को नजरअंदाज करने में रही है। न तो संयुक्त मोर्चे ने और न ही कांग्रेस ई ने गठबंधन के सिद्धांतों के अनुकूल आपसी सहयोग से कार्यकारी योजना बनाने की कोशिश की। इसका कारण यह नहीं कि उन्हें इन सिद्धान्तों की जानकारी नहीं थी बल्कि वास्तव में उन्हें इस प्रकार के आचरण संहिता की जरूरत ही नहीं थी। क्योंकि सत्ता एवं धन की अंधी लालसा और घटिया चालबाजियों पर आधारित दोनों गुट मुनासिब मौके पर एक दूसरे के संसदीय गुटों में विभाजन करवाकर एक दूसरे को नीचे गिराना चाहते थे।

12. चाहे परिस्थितियां कितनी ही अनुकूल हो, अनैतिक राजनीति एवं कपटपूर्ण शैली आमतौर पर उसके बेअसूली कर्ताओं के लिए भी सकारात्मक नतीजे नहीं दे सकती। यह निम्न तीन तथ्यों से स्पष्ट होता है।

प्रथम संयुक्त मोर्चा-कांग्रेस ई गठबंधन की धर्मनिरपेक्ष विचारधारा—जिसे 'फिरकापरस्त' भाजपा को कमजोर करने का एक हथियार और भारतीय जनता को इकट्ठा करने के एक बिंदु के तौर पर पेश किया था - ने भाजपा के राजनीतिक असर को वास्तव में देशभर में गहराया व बढ़ाया ही है, जबकि कांग्रेस संयुक्त मोर्चा दोनों की राजनीतिक हैसियत और स्थिति को कमजोर किया है और जनता दल जो संयुक्त मोर्चे में मुख्य स्थान पर था, जिसने दो प्रधानमंत्री दिए, जिनमें से एक संयुक्त मोर्चा की मौन स्वीकृति से अब भाजपा-शिरोमणी अकाली दल गठजोड़ से गुप्त सौदा कर जालंधर लोकसभा सीट से चुनाव लड़ रहे हैं। इस तरह जनता दल की चौतरफा गिरावट हुई है।

दूसरा तथ्य है कि तथाकथित गुजराल सिद्धांत-जो टकराव को हल करने की तकनीक का दावा करता है-ने भारत-पाक के बीच सीमा पर खिंचाव, सशस्त्र मुठभेड़ें और परमाणु हथियारों व मिसाईलों की दौड़ को बढ़ावा दिया है, देशभर में आमतौर पर और जम्मू कश्मीर, आसाम व उत्तर पूर्वी राज्यों में खासतौर पर मानव अधिकारों की उल्लंघना में इजाफा किया है और उप-क्षेत्रीय आधार पर सार्क के अंदर गुटबाज धड़ों (एक तरफ भारत, बांग्लादेश, भूटान और नेपाल तथा दूसरी तरफ पाकिस्तान-श्री लंका और मालद्वीप अभी तक तटस्थ) को पैदा किए हैं।

तीसरा तथ्य देवगौड़ा का गरीब किसानवाद और ग्रामीण पुनरनिर्माणवाद का आडम्बर—जिसने किसानों एवं ग्रामीणजन की खुशहाली को बेहतर बनाने के बजाय भारत की कृषि स्थिति को सिर्फ खराब ही किया है जैसा कि आंध्र में किसानों के आत्महत्या से, उड़ीसा के ग्रामांचल में भूख की मौतों से, मध्य प्रदेश व हरियाणा में

किसानों द्वारा अपनी समस्याओं को हल करवाने के विरोध प्रदर्शन के समय गोली बारी, बिहार में जमीदारों द्वारा गरीब किसानों का कत्ले आम, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक आदि में नकली कीटनाशक एवं बीज, पानी, बिजली की अनियमित आपूर्ति, कृषि उत्पाद की कम सरकारी दर, सरकारी खरीद केन्द्रों का अकुशल इंतजाम, आदि के विरुद्ध किसानों का विरोध प्रदर्शन आदि—से जाहिर है।

13. इस तरह 12वीं लोक सभा के चुनाव का ऐतिहासिक संदर्भ में पुनरावलोकन दर्शाता है कि भारत के तीन मुख्य राजनीतिक पक्षों ने 1996 के चुनाव के बाद के काल में तीन गुनाह किये हैं। पहला इन्होंने ग्यारहवीं लोक सभा चुनाव के जनादेश का उल्लंघन—मुद्दा आधारित सहमति के बजाए अंतरदलीय गैर मुद्दा आधारित टकराहट पैदा कर—किया। दूसरा इन्होंने ज्वलंत जन समस्याओं के प्रति निर्दयी रूख अपनाया। तीसरा इन्होंने अपने अवसरवादी परिप्रेक्ष्य के जरिए भारतीय राजनीति, आर्थिकता, संस्कृति, सुरक्षा एवं विदेशी मामले की समस्याओं को उलझाकर, भारत के राष्ट्रीय हितों को भारी नुकसान पहुंचाया है।

II. धन और बाहुबल जनता के फैसले को विकृत करते हैं

14. 1996 के पूर्व 10 लोक सभा चुनावों के ऐतिहासिक अनुभव की ओर नजर डाले जो पाते हैं कि 1947 के बाद भारत की चुनाव प्रक्रिया शुरू से ही ठीक नहीं रही है। जवाहर लाल नेहरू के प्रधानमंत्रीत्व काल (1947-64) के दौरान, प्रथम तीन लोक सभा चुनाव (1952, 1957 व 1962) में धनबल, भुजबल, जातिवाद, साम्प्रदायिकता की बुराइयों ने चुनाव मुकाबलों में अपना भद्दा सिर उठाना शुरू कर दिया था। बाद के शासनों में स्थिति और भी खराब होती गई।

15. लालबहादुर शास्त्री के नेतृत्व की सरकार (1964-66) के तहत कोई लोक सभा चुनाव नहीं हुआ परन्तु नेहरू के बाद के दौर में कांग्रेस पार्टी में नेताओं और गुटों के बीच के सत्ता के लिए तेज होते संघर्ष ने अवसरवादी राजनीति को बढ़ावा दिया।

16. इंदिरा गांधी शासन (1966-77) के प्रथम दौर के दौरान तीन लोकसभा चुनावों (1967, 1971, 1977) में अवसरवादी राजनीति ने भ्रष्टाचार व अपराध के तौर पर नये आयाम ग्रहण किये जो 1975-77 में आपातकाल लागू करके भारत के कमजोर लोकतंत्र का गला घोटने में प्रमाणित हुआ।

17. मुरार जी देसाई के नेतृत्त्व में जनता पार्टी सरकार (1977-79) में विभिन्न विचार धारा से प्रेरित गुटों (जैसे जनसंघ, समाजवादी, कांग्रेस (ओ) आदि) के मध्य सत्ता संघर्ष ने अवसरवादी राजनीति को गर्म किये रखा।

18. कांग्रेस (ई) के संजय बिग्रेड पर पूर्णतया निर्भर प्रभारी प्रधानमंत्री

चरणसिंह (1979-80) के दौरान होने वाले 7वीं लोक सभा के चुनावों में अवसरवादी राजनीति में अतिरिक्त वृद्धि हुई।

19. इन्दिरा गांधी के शासन का दूसर दौर (1980-84) एक तरफ माफियावाद को और दूसरी तरफ सम्प्रदायवाद (जिसमें भारतीय सेना का स्वर्णमंदिर पर आक्रमण, विश्व हिन्दू परिषद की स्थापना सम्मेलन का इन्दिरा गांधी द्वारा उद्घाटन, जम्मू क्षेत्र एवम् कश्मीर घाटी के मध्य फारूख अब्दुला के पुनर्वास बिल आदि के मुद्दे पर मतभेद पैदा करना शामिल है) को बढ़ावा देने को चरित्रित करता है।

20. 8वीं व 9वीं लोकसभा चुनाव (1984 व 1989) राजीव गांधी शासन के समय हुए जो एक तरफ विभिन्न घोटालों (उदाहरणतया बोफोर्स, एस डी डब्ल्यू) और दूसरी तरफ कई सांप्रदायिक घटनाओं (जैसे 1984 के सिख विरोधी दंगों, 1984 के लोकसभा चुनाव सिख विरोधी घोषणा पत्र पर कांग्रेस द्वारा लड़ा जाना, बाबरी मस्जिद के ताले खोलना तथा राममंदिर का शिलान्यास करना आदि) से प्रसिद्ध रहा।

21. 9वीं लोकसभा चुनाव के बाद वी.पी. सिंह (1989-90) में एक गैर सैद्धान्तिक गठजोड़ सरकार का प्रतिनिधत्व किया जो बिना न्यूनतम साझे कार्यक्रम के, बाहर से जनता दल, भाजपा एवम् वाम मोर्चे गठजोड़ के समर्थन से चली और जिसने पिछड़ी जातियों के लिए सरकारी नौकरियों में जातीय आधार पर आरक्षण देकर जाति को कानूनी मान्यता दी (बजाय गरीबी की रेखा के नीचे तमाम लोगों को गरीबी के आधार पर आरक्षण देने के सिद्धांत को मान्यता देना) नतीजतन 200 युवाओं को आत्मदाह करना पड़ा।

22. चन्द्रशेखर सरकार (1990-जून 91) जो अपने अस्तित्व के लिए राजीव के नेतृत्व वाली कांग्रेस पर पूर्णतया निर्भर थी, ने अपने हितकारी की जरूरतों के अनुकूल कार्य किया और भ्रष्टाचार को एक गैर मुद्दा जाहिर करके बोफोर्स के सवाल को गौण करने की कोशिश की।

23. 10वीं लोकसभा चुनाव (मई जून 1991) जो चन्द्रशेखर के प्रधानमंत्रित्व काल में हुए, के बाद नरसिंहराव का कांग्रेस शासन - जिसका घोटालों और घपलों के रिकार्ड का कोई सानी नहीं - ने घूस व भ्रष्टाचार के जरिए अपनी अल्पमत सरकार को बहुमत सरकार में बदल दिया। इस तरह इसने राजनीतिक स्थायित्व का दिखावा किया परन्तु वास्तव में अपनी संदिग्ध भूमिका के परिणाम बाबरी मस्जिद ध्वस्त होने और कश्मीर घाटी में ऐतिहासिक चरार-ए-शरीफ को जलाये जाने, ने राष्ट्रीय एकता को कमजोर किया।

24. पिछले 11 लोकसभा चुनावों में एक ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि ऐसे प्रत्येक चुनाव से मुख्य धारा वाली भारतीय पार्टियों, उनके नेताओं और उम्मीदवारों ने

धन-बल व बाहुबल का उपयोग करके लोगों के चुनावी फैसले को विकृत किया है। आगे उन्होंने भारत भूमि पर स्वर्ग उतारने के बड़े-बड़े वादे किये लेकिन उनकी 50 वर्ष तक बारम्बार की घोषणाओं का कुल प्रभाव यह रहा कि 1947 से पहले की समस्याएँ (जैसे भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, महिला दमन, गरीबी, असमानता, बेरोजगारी, मूल्य वृद्धि, इत्यादि) अधिक गम्भीर हो गई। जबकि नई और समस्याएँ उभरी हैं (जैसे राजनीतिज्ञों के अपराधीकरण, घौटालों एवम् षडयंत्र, खाड़कूपन, नशीली दवाओं का अवैध व्यापार, इत्यादि) - इस प्रकार भारत की समस्याग्रस्त परिस्थिति और अधिक जटिल हो गई है।

III. मुख्य पार्टियों का एकमात्र उद्देश्य-सत्ता और धन

25. आज भारत की आजादी के 50 वर्ष बाद, देश के भविष्य के बारे में लोगों का विश्वास, शक और संदेह से घिरा हुआ है। यह पक्के तौर पर कोई नहीं जानता है कि देश किधर जा रहा है। यह संदेहास्पद छाप इस धारणा से निकलती है कि भारत सामूहिक तौर पर एक बहुत ही निम्नस्तर की कारगुजारी वाला देश साबित हुआ। जबकि व्यक्तिगत तौर पर भारतीय लोग कई क्षेत्रों मे अपनी पहचान बना चुके हैं। यहां तथ्यों पर नज़र डालें तो अपनी मुंह बोली कहानी खुद सुनाते हैं।

26. मानव विकास के क्षेत्र में, भारतीय जनसंख्या के लगभग 60 प्रतिशत लोग गरीबी की श्रेणी में हैं, 40 प्रतिशत गरीबी रेखा से नीचे है, 33 प्रतिशत बेघरबार, 25 प्रतिशत शुद्ध पीने के पानी से वंचित और 75 प्रतिशत लोगों को शौचालय सुविधा में कमी है।

27. जनसंख्या के तौर पर 61 करोड़ 80 लाख जनसंख्या की वृद्धि ने (1947 में 34.2 करोड़ से आज 96 करोड़ हो गई) गंभीर सामाजिक विकृतियों को जन्म दिया है।

28. पर्यावरण के तौर पर आज भारत दुनिया में अत्यधिक प्रदूषित देशों में से एक देश बन गया है। जिसमें दूषित पानी व वायु प्रदूषण बढ़ रहा है। पानी की उपलब्धता में कमी हो रही है। 40 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि का क्षय हुआ है तथा इसके जंगलात क्षेत्र का आधा भाग उजाड़ बन चुका है।

29. राजनीति के क्षेत्र में "दुनिया का सबसे बड़ा प्रजातंत्र" सभी तरह की सामाजिक बुराइयों-अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, हिंसा, इत्यादि से ग्रस्त है।

30. आर्थिक क्षेत्र में अकुशलता, उत्पादन की उच्च लागत, निम्न उत्पादकता, घटिया गुणवत्ता, पुरानी पड़ चुकी और पर्यावरण विरोधी तकनीक तथा वित्तीय असंतुलन मुख्य लक्षण बन चुके हैं।

31. सांस्कृतिक तौर पर, भद्दे किस्म के व्यवहार—जैसे कि चाटुकारिता, दोगलापन, झूठ बोलना, जालसाजी, धोखाधड़ी, जैसे तैसे पैसा बनाना, बाहुबल का उपयोग इत्यादि — जीवन के आम मापदण्ड बन चुके हैं।

32. विदेश व रक्षा मामले में क्षेत्रीय दादागिरी भारत की मुख्य विशेषता बन चुकी है। क्षेत्रीय दादागिरी का मार्ग-भारत को अपने पड़ोसियों, चीन व पाकिस्तान के साथ चार युद्धों में झोंक चुका है। यहां तक कि शीतयुद्ध के बाद के दौर में जबकि विश्व का सैन्य खर्च सन् 1987 से 4 अरब डॉलर प्रत्येक वर्ष कम हो रहा है जबकि भारत उसी रास्ते पर चलते हुए—विकासशील देशों में सबसे ज्यादा हथियार आयात करने वाला देश बना हुआ है।

33. 1947 के बाद की भारतीय राष्ट्रीय प्रक्रिया की मुख्य कमी यह रही है कि इसने लोगों विशेषकर पिछड़े वर्गों व उनके प्राकृतिक पर्यावरण को कभी केन्द्र में नहीं रखा व प्राथमिकता नहीं दी। यही वजह है कि शिक्षा, स्वास्थ्य, अन्य सामाजिक क्षेत्र व परिस्थितिकी के सवाल पिछली आधी शताब्दी के दौरान नजरअंदाज किये जाते रहे। ये भारत के किसी भी चुनाव में मुद्दे कभी नहीं बने। क्योंकि तमाम राष्ट्रीय पार्टियों का केवल मात्र मुद्दा सत्ता व धन, येन-केन प्रकारेण प्राप्त करना रहा।

IV. भारत की सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक वास्तविकताओं से मेल नहीं खाती

34. भारत की कमजोर निष्पादन का बुनियादी कारण इसके राष्ट्रवादी (या सामाजिक व्यवस्था) परिप्रेक्ष्य में निहित है जो पांच कमजोरियों से चरित्रित है।

(अ) एतिहासिक अंधराष्ट्रवाद, जो भारत को एक निराली धरती (या ईश्वर द्वारा विशेष रूप से पैदा की गई) के रूप में देखता है और भारतीय राष्ट्रवाद को बहुत पुरातन में (इसके हाल के क्रमिक विकास को नकारते हुए) तलाशता है। इस प्रकार यह अपनी पहचान को अनोखी जाहिर करते हुए अपने आप को दुनिया की मानव सभ्यता से ऊपर रखता है जबकि उसके योगदान में यह एक मुख्य भागीदार ही है।

(ब) भारतीय राष्ट्र का बहुसंख्यक धर्म निरपेक्षवाद जो बहुसंख्यक समुदाय को भारत का आधार या मुख्य धारा समझता है तथा सभी अल्पसंख्यकों से तकाजा करता है कि वे अपने विश्वास, रीति-रिवाज और परंपराओं को बहुसंख्यकों की मान्यताओं के अनुकूल करें।

(स) केन्द्रीकृत व्यवस्था (यानि राजनीति, आर्थिकता और संस्कृति) जो भारत या इसके लोगों को छोटे मोटे भेदों के अलावा एक ही श्रेणी मानती है।

(द) अनैतिक राजनीतिक पद्धति जो सत्ता और धन हथियाने के लिए भ्रष्ट

और अपराधी तरीके अपनाने की इजाजत देती है।

(य) जाति आधारित सामाजिक न्याय (गरीबी और पिछड़ापन पर आधारित सामाजिक न्याय के बजाय) सामाजिक समस्याओं से निपटने के लिए जातिवादी दृष्टिकोण और टकराववादी तरीके को प्रोत्साहन देता है। यह सभी लक्षण भारत की मूलभूत वास्तविकता के साथ-साथ दूसरी सभी सामाजिक वास्तविकताओं से मेल नहीं खाते हैं।

35. मूलभूत भारतीय वास्तविकता यह है कि आधुनिक भारत जो एक एकीकृत भू-राजनीतिक इकाई के रूप में, ब्रिटिश शासन के दौरान उभरा, एक बहुनस्ली, बहु सांस्कृतिक, बहु धार्मिक और बहुभाषी इकाई है। यह मूलभूत बहुआयामी वास्तविकता एक पूर्ण संघीय (या एक तरह की महासंघीय) और पूर्ण विकेन्द्रीकृत व्यवस्था की मांग करती है। जबकि भारतीय राष्ट्रवाद का उपरोक्त वर्णित लक्षण एकरूपता की ओर जोर देता है और उस तरफ ले जाता है।

36. उपरोक्त वर्णित भारतीय राष्ट्रवाद (जिसे गांधी द्वारा प्रस्तुत किया गया तथा नेहरू और कांग्रेस पार्टी द्वारा पोषित किया गया) और मूलभूत बहुआयामी भारतीय वास्तविकता के बीच इसी दरार ने सन् 1947 में भारत का विभाजन करवाया था तथा आज यही दरार भारत की एकता, स्थिरता, विकास और उन्नति के रास्ते में रूकावट बनी हुई है तथा इसी ने ही भारत को एक निम्न कारगुजारी वाला देश बना दिया है।

37. दूसरी सामाजिक वास्तविकताओं में से एक बहु-पार्टी संसदीय प्रणाली का उभरना है, जो कानून के राज और लोगों के प्रति सरकार की जवाबदेही की मांग करती है परंतु भारत का राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य (खासकर इसकी अनैतिक पद्धति) तर्कसंगत सोच और नैतिक मानदंडों को कम करके आंकते हुए कानून के राज तथा सरकार की जवाबदेही को नुकसान पहुंचाता है।

38. एक अन्य सामाजिक वास्तविकता यह है कि भारत का पुरातन पिछड़ापन (दूसरे बहुत से विकासशील देशों की तरह) मांग करता है कि एक समतावादी एवं टिकाऊ विकास मॉडल तथा बाहरी और आंतरिक सभी विवादों को हल करने के लिए शांतिपूर्ण और गैर टकराववादी रास्ता अपनाया जाए। परन्तु भारत का राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य (खासतौर पर उसका ऐतिहासिक अंधराष्ट्रवाद) उसे क्षेत्रीय महाशक्तिवादी मॉडल की तरफ मोड़ देता है जो (पर्यावरण एवं मानव संसाधनों के विकास के बजाय) सैनिकवाद को पहली प्राथमिकता देता है तथा यह गरीब, वंचित व कमजोर लोगों पर सवारी करने की कोशिश करता है, जबकि मजबूत लोगों के लिए उपयोगी और नम्र साबित होता है।

39. फिर एक और सामाजिक वास्तविकता यह है कि पुरानी मानसिकताएं एवं रवैये, अंधविश्वासो, चमत्कारों, झूठे विश्वासों, जादू, इत्यादि के रूप में बड़े पैमाने पर संचालित होते हुए विद्यमान हैं। ये अतार्किक विचार लोगों का वैज्ञानिक तकनीकी नजरिया तथा तर्कसंगत दृष्टिकोण बनने में बाधा डालते हैं जिसके अभाव में मानवीय क्षमता एवं दक्षता का अधिकतम उपयोग कर पाना संभव नहीं बनता। फिर भी, भारतीय राष्ट्रवाद का परिप्रेक्ष्य न केवल पारम्परिक मानसिकताओं और तौर तरीकों को फैलाने का जरिया बनता है बल्कि उन्हें केवल पैसे व सत्ता हासिल करने की तरफ भी प्रेरित करता है। इस प्रकार यह केवल मानव के एक तरफा व्यक्तित्व को विकसित करता है, जिसमें वह केवल अपनी चिंता करता है और सामाजिक उद्देश्य को नुकसान पहुंचाता है। इसके उलट, यह ऐसे सभी कार्यक्रमों और पहल कदमियों को कुंद करता है जिनसे सोचने एवं व्यवहार करने का तर्कसंगत मानवीय रास्ता तय होता है।

40. आगे, अन्य सामाजिक वास्तविकता परंतु अति महत्त्वपूर्ण हालिया उभरी ग्लोबेलाईजेशन या राष्ट्र के अंतरनिर्भरता की प्रक्रिया है जिसकी मांग है कि भारत का कदम-ब-कदम एकीकरण ग्लोबल आर्थिकता, राजनीति एवं संस्कृति के साथ हो, परंतु भारत का राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य (खास तौर पर इसका ऐतिहासिक अंध राष्ट्रवाद) भारत को एक अद्वितीय घटनाक्रम मानकर उपरोक्त सामाजिक आवश्यकता के रास्ते में बाधा खड़ी करता है।

41. भारत की असफलताओं के बारे में विभिन्न सफाईयाँ या तो एक तरफा है या पूर्णतया निर्मूल हैं।

42. उदाहरण के लिए भाजपा भारत की बुराइयों का कारण तथाकथित धर्म-निरपेक्ष पार्टियों द्वारा थामें अल्पसंख्यक समर्थित धर्मनिरपेक्षवाद को मानती है तथा राष्ट्र की कायाकल्प के लिए बहुसंख्यक समर्थित धर्म निरपेक्षवाद का विकल्प पेश करती है लेकिन खुद भाजपा के विभिन्न राज्यों के अपने नमूने खासकरके उत्तर प्रदेश का हालिया प्रयोग इसके दावों के खोखलेपन को जाहिर करता है। वास्तव में बहुसंख्यक-अल्पसंख्यक दोनों धर्मनिरपेक्षवाद समान तौर पर अतार्किक हैं। ऐतिहासिक अनुभव प्रदर्शित करता है कि धर्मनिरपेक्षवाद का आधार तर्कसंगत मानवतावाद के अलावा न कुछ है और न हो सकता है।

43. इसी प्रकार जद, बसपा व वाम मोर्चा भारत की बुराइयों का आधार अगड़ी जातियों के दमन को मानती है और विकल्प के तौर पर "ऊपरी जाति बनाम नीची जाति" का सामाजिक न्याय का अपना फार्मूला पेश करती है। परंतु बिहार व उत्तर प्रदेश में लालू, मूलायम व मायावती के प्रयोग भ्रष्टाचार, अपराध व हिंसा के रूप में अत्यधिक गंदे मॉडल साबित हुए हैं। सभी युगों एवं स्थानों में प्रत्येक प्रकार के दमन ने समृद्धि, विकास और न्याय के रास्ते में बाधाएं डाली है। परन्तु इसे टकराववादी व

बदला लेने के सिद्धांत पर आधारित सामाजिक न्याय से समाप्त नहीं किया जा सकता, जैसा कि भूतपूर्व सोवियत संघ व अन्य साम्यवादी देशों के वर्ग बनाम वर्ग मॉडलों के अनुभवों से सिद्ध होता है। आज हमारे समय में प्रत्येक किस्म के दमन को सामाजिक न्याय के तर्क संगत मानवतावादी सिद्धांत के द्वारा ही खत्म किया जा सकता है।

44. आगे, हमारी बुराइयों की वजह, विदेशी ताकतों का हाथ होने का तर्क इस तथ्य की बुनियाद पर रद्द होता है कि एक विदेशी शक्ति चाहे वह कितनी भी ताकतवर क्यों न हो, भारतीय राजनीति का अपराधीकरण, इसकी आर्थिकता की तोड़-मरोड़ तथा सामाजिक मान्यताओं में गिरावट पैदा नहीं कर सकती है।

45. और आगे, यह तर्क की भारत का बड़ा होना ही इसके विकास में बाधा है, यह इस तथ्य से रद्द होता है कि पूरे विश्व में आज छोटे-छोटे देश ज्यादा तेज वृद्धि के लिए बड़ी क्षेत्रीय इकाइयों में एकबद्ध हो रहे हैं। चीन के विकास का अनुभव भी उन्नति के रास्ते में बड़े आकार के बाधाकारी होने के विचार का खंडन करता है।

46. हमारी अपनी गलतियों, जैसे कि ऐतिहासिक अंधराष्ट्रवाद, बहुसंख्यक धर्मनिरपेक्षवाद, केन्द्रीयकृत व्यवस्था, अनैतिक राजनीति, जातीय आधारित सामाजिक न्याय, इत्यादि के बजाय उपरोक्त वर्णित गौण कारणों को दोष देना, गंभीर सामाजिक समस्याओं का हल नहीं हो सकता है।

V. मामले कैसे ठीक हों

47. उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए भारत में मामले को ठीक करने की समस्या तीन सवालों की छंटाई की मांग करती है :

(अ) विद्यमान सामाजिक वास्तविकताओं के अनुरूप भारत की पुनर्सरचना के लिए एक वास्तविक कार्यक्रम पेश करना।

(ब) उपरोक्त कार्यक्रम को लागू करने के लिए एक संगठन का निर्माण करना।

(स) 12वीं लोकसभा चुनाव को एक उचित प्रत्युत्तर देना। ऐसा प्रत्युत्तर जो कि मुख्य धारा की पार्टियों के दोगलेपन के चरित्र (यानि कहना एक बात तो करना दूसरी बात) को दर्शाए। इन पार्टियों द्वारा फैलाए गए सैद्धांतिक भ्रांतियों का स्पष्टीकरण करें और लोगों को स्वार्थ के बजाए उसूलों के आधार पर मतदान करने के लिए प्रेरित करें।

(अ) भारत के लिए पुनर्सरचना का कार्यक्रम

48. किसी भी पुनर्सरचना के कार्यक्रम के लिए तीन नियमों पर गम्भीरता से ध्यान देने की जरूरत है,

(क) भूतकाल के अनुभव से सीखना जो यह बताता है कि 1947 के बाद का भारतीय राष्ट्रीय मॉडल कारगर नहीं रहा है और उसके पुनर्सरचना की आवश्यकता है।

(ख) दुनिया भर में उभरते क्षेत्रीय समुदायों की वास्तविकता, जो यह तकाजा करती है कि भारत की पुनर्सरचना दक्षेस समुदाय के विकास की रोशनी में की जाए।

(ग) भविष्य का सही स्वरूप अपनाना जो यह मांग करता है कि मुख्य सामाजिक रूझान (यानि की ग्लोबलाईजेशन या देशों की अंतरनिर्भरता) के मुताबिक भारत की पुनर्सरचना उभरते हुए अंतर्राष्ट्रीय मानव समाज के स्वरूप के अनुसार ही की जाए।

49. उपरोक्त आवश्यकता इस बात पर जोर देती है कि 1947 के बाद के स्वतंत्र राष्ट्रवाद के बुनियादी नियमों को अंतरनिर्भर (या वैश्वीय अभिमुखी या मानव अभिमुखी) राष्ट्रवाद के बुनियादी नियमों में तब्दील किया जाए।

इस मॉडल के मुख्य लक्षण निम्न हो सकते है

(i) **भविष्य का स्वरूप :** दीर्घकालीन तौर पर तर्कसंगत, न्यायपूर्ण व निष्पक्ष अंतराष्ट्रीय मानव समाज तथा आने वाले कुछ सालों में दक्षेस समुदाय स्थापित करना जो दोनों, एक तरफ प्रकृति हितकारी व दूसरी तरफ लोक हितकारी हों।

(ii) **उद्देश्य :** भारत में तुरंत तर्क संगत, न्यायपूर्ण, निष्पक्ष सामाजिक व्यवस्था कायम करना जो मानव और प्रकृति दोनों के हितों को पूरा करें।

(iii) **आम दिशा :** वैज्ञानिक वास्तविकतावाद जो किसी प्रक्रिया को पर्यवेक्षण, प्रयोग तथा व्यवस्थितकरण द्वारा अध्ययन करता है।

(iv) **सामाजिक परिप्रेक्ष्य :** तर्कसंगत मानवतावाद।

(v) **सच्ची विश्व शांति :** दुनियां में सच्ची शांति कायम करने का प्रयास करना जो महाशक्तिवादी राजनीति एवं इसकी टकरावावादी प्रणाली को नकारे, विभिन्न राष्ट्रों के हितों में सामंजस्य करें, क्षेत्रीय तनाव बिंदुओं को कम करें, पूर्ण निशस्त्रीकरण की ओर बढ़े, आणविक हथियारों का नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र संघ में निहित करें, इत्यादि।

(vi) **दक्षेस सुरक्षा एवं विकास :** सभी द्विपक्षीय विवादों को दक्षेस रचनातंत्र के जरिए हल करना तथा जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक या सार्क का संयुक्त नियंत्रण स्थापित करें। जिसके जिम्मे उस राज्य का रक्षा, विदेश एवं मुद्रा का प्रबंध करना हो और जो उस राज्य को अर्ध स्वतंत्रता और उसके हर नस्ली क्षेत्र को ज्यादा से ज्यादा स्वायत्तता दे। इसे सार्क (दक्षेस) के विकास का मार्ग खुलेगा, जिसकी निकट भविष्य में मुक्त व्यापार क्षेत्र, क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था और महासंघीय राजनीतिक इकाई में

विकसित होने की संभावना है, इसके अलावा पाकिस्तान के साथ मिलकर आणविक हथियार एवं उसको चलाने के संबंध में रचनातंत्र का निर्माण न करने की प्रतिज्ञा ली जाए।

(vii) **लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा लोकशक्तिकरण :** सभी आंतरिक टकराहटों को बातचीत के जरिए हल करना। भारत को संघीय/महासंघीय आधार पर राज्यों का अर्धस्वतंत्रता का दर्जा देकर तथा पंजाब को विशेष दर्जा देकर संगठित करना। इससे भारत की नस्ली, साम्प्रदायिक एवं जातीय टकराहटों को हल करने में मदद मिलेगी। सभी संस्थाओं का लोकतांत्रीकरण करना। अवमानना की शक्ति से रहित, न्यायपालिका की व्यवस्था के जरिए तथा लोगों के शक्तिकरण द्वारा कानून का राज स्थापित करना (लोगों का शक्तिकरण, मसलन, निर्णय लेने में लोगों को शामिल करना, सभी विकास कार्य लोगों के निरीक्षण में करवाना, सूचना का अधिकार लोगों को होना, सभी सामाजिक व आर्थिक भेदभावों को समाप्त करना, किसी राष्ट्रीय मुद्दे पर जनमत संग्रह कराने का लोगों का अधिकार होना, आदि-आदि) है। किसी भी कानूनी बिंदू पर न्यायपालिका एवं विधायिका के मध्य विवाद को जनमत संग्रह द्वारा हल करना। धनबल व भुजबल से मुक्त सभी स्तर पर चुनाव राज्य के खर्च पर करवाना।

(viii) **टिकाऊ एवं समान विकास:** एक तरफ प्रकृति के हितों (मसलन पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण) को बढ़ावा देना तथा दूसरी तरफ लोकहित (मसलन असमानता व भेदभाव, गरीबी-अमीरी, शहर-गांव, लिंग असमानता आदि, को हटाना) को बढ़ावा देना। पर्यावरण संरक्षण व जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रण करने के कार्यक्रमों में लोगों को विशेषकर महिलाओं को शामिल करना, संतुलित आर्थिक विकास का प्रयास करना, जो विश्व आर्थिकता के साथ स्वयं नजदीकी जुड़ाव करें तथा बाजार मुखी वृद्धि एवं राज्य संगठित सामाजिक न्याय के दो उसूलों के जरिए क्रियान्वित हो।

(ix) **मूल्य आधारित व्यवस्था :** तर्कसंगत मानवतावादी सोच व लोकतांत्रिक व्यवहार को बढ़ावा देना।

(x) **विदेश एवं सुरक्षा मसले :** दुनिया के सभी देशों में सहयोग व मित्रता को लागू करना तथा जम्मू-कश्मीर समस्या का उचित हल निकालकर 50 प्रतिशत खर्च कम करना।

50. उपरोक्त पुनर्संरचना कार्यक्रम आवश्यक तौर पर कई अंगों से गठित है। ये आपस में एक दूसरे से इतने जुड़े हैं कि अगर एक को दूसरे से अलग किया जाए तो वह काम नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ लोगों के शक्तिकरण का प्रश्न तभी क्रियाशील

हो सकता है, यदि इसे शांति की नीति के साथ जोड़ा जाए, पाकिस्तान के साथ शीत युद्ध की स्थिति में टिकाऊ विकास का मुद्दा केवल कागज पर ही क्रियान्वित हो सकता है।

51. बेशक, भारत आज संकट मुक्त देश बन सकता है, यदि वह उपरोक्त पुनर्संरचना मॉडल को अपनाए जो नव ऐतिहासिक ग्लोब्लाईजेशन युग से पैदा होने वाले सभी राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों का उचित प्रत्युत्तर देता है। 1947 के बाद की अधिकांश भारतीय असफलताएं राष्ट्रीय मॉडल के असंगत होने की वजह से हैं। निश्चय ही, भारत के परम्परागत नुस्खे – जैसे गांधी का राम राज्य, नेहरूवादी समाजवाद, जेपी की संपूर्ण क्रांति, गोलवलकर का हिन्दुत्व, लोहिया का मंडलवाद, गैर-भाजपावाद, गैर कांग्रेसवाद, अमेरिकन राष्ट्रपति प्रणाली आदि—नये वैश्विक युग की सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ है, यकीनन, विश्व मान्य पुराने राष्ट्रीय सिद्धांत—मंडी आधारित पश्चिमी उदारतावाद तथा सार्वजनिक क्षेत्र प्रेरित साम्यवाद—कमजोर पड़ते जा रहे हैं एवं उनके द्वारा पैदा की गई नई अंतर्राष्ट्रीय चुनौतियों, जैसे पर्यावरण ह्रास, जनसंख्या विस्फोट, नस्लीय अधिकारों का आग्रह, आदि का सामना करने में असमर्थ है। बेशक, नवीन आवश्यक समुचित मॉडल के अभाव में देश विभिन्न परंपरागत नमूनों के मध्य इधर-उधर झूल रहा है। परंतु कोई रास्ता ना पाते हुए, हर कोई किसी नए मॉडल की तलाश में है।

(ब) एक विस्तृत संभव मोर्चे की आवश्यकता

52. उपरोक्त कार्यक्रम के संबंध में महत्त्वपूर्ण समस्या यह है कि इसे व्यवहार में कैसे सफल बनाया जाए, स्पष्टतया, यह एक ऐसे विस्तृत संभव संघीय/महासंघीय मोर्चे की मांग करता है जो उक्त कार्यक्रम को जनता तक ले जाए। वे भी जो सिर्फ इसके v, vi व vii बिन्दुओं से सहमत हो, इसमें शामिल किए जा सकते हैं।

यह मोर्चा भारत के बहुआयामी चरित्र (यानि विभिन्न नस्ली व क्षेत्रीय आकांक्षाओं वाले) के ठीक अनुकूल होगा। ये मोर्चा मिलीजुली सरकारों एवं एकीकृत फ्रन्टों के लंबे दौर में प्रासंगिक होगा, खास तौर पर ऐसे वक्त जबकि मुख्य धारा की पार्टियों के खिलाफ आम लोगों में कटुता पाई जाती है। यह मोर्चा किसी भी स्तर पर बनाया जा सकता है। परिस्थिति के अनुसार कुछ अन्य मुद्दों को भी किसी भी जगह, उक्त कार्यक्रम में जोड़ा जा सकता है।

(स) मतदान सिद्धांत की बुनियाद पर न कि स्वार्थ की बुनियाद पर

53. यह चुनाव ऐसे वक्त में हो रहा है जब चौतरफा असुरक्षा और अस्थिरता का वतावरण बना हुआ है। हर कोई भविष्य के बारे में आशंकित है। कोई नहीं जानता

कि हम कहां जा रहे हैं। मौजूदा हालात को मौटे तौर पर चार पहलुओं से परिलक्षित किया जा सकता है।

प्रथमतया मुख्य धारा वाली पाटियों और राजनीतिज्ञों के उद्देश्यों, व्यवहार और कारगुजारी के बारे में आम मायूसी पाई जाती है, लोगों का उनकी धन और भुजबल पर आधारित बेईमान राजनीति से मोहभंग हो चुका है। उन्होंने महसूस किया है कि इन पार्टियों के कार्यक्रमों (एजेन्डों), प्राथकिताओं, तौर तरीकों और लेखो-जोखों में कोई मूलभूत अंतर नहीं है और वे एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। स्पष्टतया, पार्टियों और राजनीतिज्ञों की विश्वसनीयता, निम्नतम स्तर तक गिर चुकी है।

द्वितीयत:, मुख्यधारा की पार्टियों ने खरीद फरोख्त, तोड़फोड़, नापाक गठबंधन, दोगलापन (कथनी-करनी का अंतर), इत्यादि पर चलकर राजनीतिक अनैतिकता और धोखेबाजी के पुराने सभी रिकार्ड तोड़ दिए हैं। सत्ता और धन के लोभ ने उनकी समझ (संवेदनशीलता) को विकृत कर दिया है। जरा देखिए कि गांधीवाद और स्थिरता की कस्में खाने वाली कांग्रेस ई ने गांधीवाद को गालियां निकालने वाली एवं अस्थिरता की हामी बसपा के साथ किस प्रकार हाथ मिला लिया है; किस प्रकार अल्पसंख्यकों के वोट प्राप्त करने के लिए भाजपा ने अपनी हिन्दु विशिष्टता और प्राथमिकता के ऐजेंडा (यानि राम मंदिर निर्माण, समान नागरिक संहिता को लागू करने, धारा 370 को रद्द करने, इत्यादि) को ताक पर रख दिया है; सीपीएम ने सत्ता में अधिक हिस्सा प्राप्त करने के लिए किस तरह "बुर्जुआ प्रभुत्व वाली सरकार में शामिल नहीं होने के अपने मूलभूत सर्वहारा सिद्धांत" से मुंह मोड़ लिया है; शिव सेना ने अपने अयोध्या राम मंदिर के कार्यक्रम के बजाए किस तरह अयोध्या राष्ट्रीय स्मारक बनाने का कार्यक्रम अपना लिया है, गुजराल की भाजपा और शिरोमणी अकाली दल के साथ मौन सहमति को जनता दल ने किस प्रकार समर्थन किया; लालू और कांग्रेस या भाजपा और अन्नाडीएमके, हेगड़े, ममता एवं नवीन पटनायक किस प्रकार एक साझे मंच पर इकट्ठे हो गए हैं; कम्युनिस्टों, मंडलवादियों और भूतपूर्व समाजवादियों के अवसरवादी गठबंधन (जो नेहरू के वक्त उसकी खिलाफत करता था) ने किस प्रकार अब नेहरूवादी पब्लिक सेक्टर को अपना उद्देश्य बना लिया है।

तृतीयत: किसी पार्टी के पास वाद-विवाद के लिए कोई विशेष राष्ट्रीय मुद्दा नहीं है, सभी मुख्य प्रतिद्वन्द्वी पार्टियां सिर्फ एक सूत्री मूलभूत कार्यक्रम (एजेन्डा) यानि, देश में स्थायित्व कायम करने के मुद्दे पर जोर दे रही हैं। इस मुद्दे पर उनका अंतरविरोध केवल इतना है कि उनमें से प्रत्येक अपने आप को स्थायित्व के अग्रदूत के रूप में पेश करती है जबकि अपने विरोधियों को अस्थिरता का वाहक व जन्मदाता बताती हैं।

इन सब की स्थायित्व की धारणा का मतलब सिर्फ एक ऐसी सरकार का है जो भ्रष्टाचार, गुंडागर्दी और लोगों की लूट के बल पर अपने आपको पांच साल तक शासन में रख सके। परन्तु स्थायित्व की यह समझ महज सतही है।

स्थायित्व का साहित्यक अर्थ है पक्के तौर पर स्थापित। इस दलील के मुताबिक राजनैतिक स्थायित्व का अर्थ है कि एक राजनीतिक प्रक्रिया का मजबूती से स्थापित होना यानि मतदाताओं, पार्टियों, राजनीतिज्ञों और प्रशासन की स्थिर हालत-जिसमें मतदाता निर्णयकारी पहलू या प्रस्थान बिंदु है। अगर वे पार्टियों, राजनीतिज्ञों या उनके कार्यक्रमों से असंतुष्ट है तो इसका इजहार मतदान पद्धति और नतीजतन सरकार की बनावट में जाहिर होगा।

मतदाताओं के बीच असंतुष्टी के क्या कारण है? निश्चित ही ये भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, हिंसा, धोखेबाजी, जालसाजी, गरीबी, बेरोजगारी, मानव अधिकारों की अवहेलना, लिंग-असमानता, अल्पसंख्यकों से भेदभाव, सामाजिक-आर्थिक असमानता, स्वास्थ्य रक्षा और शुद्ध पीने के पानी की कमी, अनपढ़ता, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, इत्यादि के अलावा और कुछ नहीं है। अत: उपरोक्त वर्णित बुराइयों ने पार्टियों, राजनीतिज्ञों और उनकी व्यवस्था से भारतीय मतदाताओं का अलगाव कर दिया है। और यह आजकल की मतदान प्रक्रिया और सरकार की शक्ल से जाहिर होता है।

आखिर, इस घटनाक्रम के लिए कौन जिम्मेदार है। वास्तव में, भारत के मतदाता नहीं, बल्कि साफ तौर पर इसके लिए भारतीय व्यवस्था को चला रही पार्टियाँ और राजनीतिज्ञ ही जिम्मेदार है। 1947 के बाद की राष्ट्रीय प्रक्रिया दर्शाती है कि यह प्रथमतया, व्यक्ति आधारित-सह-परिवार निर्देशित (यानि, आवश्यक तौर पर अधिनायकवादी) 45 वर्षीय नेहरूवादी शासन था जिसने झूठे समाजवाद, धर्मनिपेक्षतावाद और योजनाबद्ध-सह-आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के नाम पर, इन बुराइयों को जन्म दिया।

द्वितीयत:, इसके लिए तथाकथित प्रगतिशील (जो अब वाम पक्ष में है) जिम्मेदार हैं जो दशकों तक समतावादी समाज बनाने के नाम पर नेहरूवादी अधि-नायकवाद का आलोचनात्मक समर्थन करते रहे।

तृतीयत:, वे पार्टियाँ और राजनीतिज्ञ जिम्मेदार है जो आदिम मॉडलों (जैसे भाजपा का हिन्दुत्व, लोहिया का जातिवाद या मंडलवाद इत्यादि) को थामें रही हैं और उन्होंने निरन्तर पुरानी मानसिकताओं और मनोवृत्तियों को कायम रखते हुए लोगों के जनवादीकरण की प्रक्रिया को रोके रखा।

अगर मामला ऐसा नहीं है तो 50 वर्ष की आजादी के बाद हमारे लोगों को उन्हीं मुद्दों (जैसा कि पैरा 53 में वर्णित किया गया है) का सामना क्यों करना पड़ रहा है और भारत की पार्लियामेन्ट को, आजादी की 50वीं वर्षगांठ पर, हमारे घटिया राष्ट्रीय रिकार्ड और द्वितीय दर्जे की कारगुजारी के कारण ढूँढने के लिए विशेष सत्र का आयोजन क्यों करना पड़ा।

1994 के सरकारी बोहरा समिति की रिपोर्ट तथा बहुत से अन्य सरकारी आयोगों की रिपोर्ट यह हकीकत जाहिर करती है कि वर्तमान राजनीतिक अस्थिरता हमारी अनुपयुक्त सामाजिक व्यवस्था और 50 वर्षों से मुख्य पार्टियों तथा राजनीतिज्ञों द्वारा की गई गड़बड़ियों का ही परिणाम है और वे ही हमारे राष्ट्रीय मसलों की वर्तमान स्थिति के लिए मुख्यतया जिम्मेदार हैं।

चाहे वे कुछ भी करें उनके वर्तमान और हालिया मॉडल-जैसे, कल्याणसिंह का विशाल मंत्रिमंडल या लालू की चारा घोटाला किस्म, केरला में सीपीएम की टकराववादी किस्म या नरसिम्हा राव की हवाला किस्म-स्थिरता स्थापित नहीं कर सकते हैं।

चाहे कोई भी सत्ता में आये (हो सकता है कि वह भाजपा और उसके सहयोगी हों) जब तक वह अपने आप में जरूरी बदलाव नहीं लाता है और निरन्तर इस व्यवस्था और इसके पुराने पथ का अनुसरण करना नहीं छोड़ता तो उसका जल्दी नीचे आना लाज़मी है।

सिर्फ अस्थिरता के कारण—यानि, वर्तमान सामाजिक व्यवस्था और मुख्य धारा वाली पार्टियों—को हटाकर ही स्थिरता कायम की जा सकती है।

चतुर्थ, लोगों के सामने कोई वास्तविक चुनावी विकल्प मौजूद नहीं है। किसी व्यवहारिक विकल्प की अनुपस्थिति में मुख्यधारा वाली पार्टियां लोगों को अपने उम्मीदवारों के हक में वोट देने के लिए अपने जाल में फाँस लेती है। यह हालात निम्नलिखित कदम उठाने की माँग करते हैं।

(1) भारत के पुनर्संरचना कार्यक्रम (एजेन्डा) के बुनियादी नुक्तों को लोकप्रिय बनाना।

(2) मुख्यधारा वाली पार्टियों के कार्यक्रमों और उनके बेअसूले तौर-तरीकों के नकारात्मक प्रभावों को जनता के सामने लाना।

(3) लोगों से अपील करना कि वे असूलों के आधार पर चुनावों में भाग लें न कि स्वार्थ के लिए। अपराधी और भ्रष्ट राजनीतिज्ञों को रद्द करें और अपने मतदान का पैमाना ईमानदारी, सच्चाई, असूली स्टैन्ड और लोगों की सेवा को बनाकर तर्कसंगत मानवतावादियों, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं (विभिन्न स्वयंसेवी आन्दोलनों के प्रतिनिधियों

: पर्यावरण, शान्ति, मानव अधिकारों, सर्वोदय, इत्यादि) महिलाओं, वंचित लोगों, अल्पसंख्यकों और विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों को अपना मत दें।

VI. चुनाव के बाद का संभावित परिदृश्य

आज चुनावों से पहले की धड़ेबन्धियाँ बिल्कुल स्पष्ट है और लोगों की मानसिकता भी जाहिर है। ये दो पहलू जाहिर करते है कि आने वाले चुनाव परिणाम कैसे हो सकते है। इस संभावना के मद्देनजर किसी एक पार्टी द्वारा पूर्ण बहुमत प्राप्त करना संभव नहीं लगता। इससे जाहिर होता है कि यह चुनाव चल रही राजनीतिक प्रक्रिया की मूलभूत प्रवृति को नहीं बदलेगा और चुनावों के बाद का परिदृश्य चुनाव के पहले के दृश्य से अधिक गर्म होगा। इसका अर्थ है कि सभी बकाया और नई समस्याएँ आने वाले समय में हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया को हिलायेंगी।

अत: सभी शान्ति प्रिय और जनवादी लोगों का यह कर्त्तव्य है कि वे नये उभरते हुए हालात का सामना करने के लिए तैयार हों; भारत की पुनर्संरचना के कार्यक्रम पर जनता को संगठित करना शुरू करें और आने वाले उतार-चढ़ाव से निपटने के लिए तैयार हो जाएं। 23-1-1998

❋ ❋ ❋

भारत की अस्थिरता
मतदाताओं की परेशान मानसिकता को दर्शाती है
सिर्फ संघवाद ही इसका जवाब देता है

I. एक खण्डित निर्णय

1. जैसी कि अपेक्षा थी, 1998—लोकसभा चुनाव मामलों को कुछ हद तक ही हल कर पाया। भारतीय राजनीति की अस्थिरता और अनिश्चितता की अवस्था पहले जैसी ही बनी हुई है।

2. मतदाताओं ने एक बार पुन: एक खण्डित निर्णय दिया है और लोकसभा में किसी एक पार्टी या गठजोड़ को साधारण बहुमत से दूर रखा है। विभिन्न पार्टियों और उनके गठजोडों को प्राप्त सीटें और वोटों का प्रतिशत नीचे दी गई सूची से पता किया जा सकता है।

सूची-I
लोकसभा चुनाव 1998
453 निर्वाचन क्षेत्रों की अन्तिम चुनाव स्थिति

मनीपुर-2	
भाकपा	1
अन्य	1
आन्ध्र प्रदेश -42	
ए.आई.एम.	1
भाजपा	4
अ.भा. कांग्रेस	22
जद	1
तेदेपा	12
अरुणाचल प्रदेश-2	
अरुणाचल कांग्रेस	2
आसाम-14	
एएसडीसी	1
भाजपा	1
अ.भा. कांग्रेस	10
अन्य	2
दिल्ली-7	
भाजपा	6
अ.भा. कांग्रेस	1
बिहार-54	
भाजपा	20
अ.भा. कांग्रेस	5
जद	1
राजद	17
राजपा	1
एसपी	10
गुजरात-26	
भाजपा	19
अभा कांग्रेस	7
हरियाणा-10	
भाजपा	1
बसपा	1
हलोद	4
हविपा	1
अभा कांग्रेस	3
हिमाचल प्रदेश-4	
भाजपा	2
अभा कांग्रेस	1
चुनाव नहीं हुआ	1
पश्चिमी बंगाल-42	
भाजपा	1
भाकपा	3
माकपा	24
एफबी	2
अभा कांग्रेस	1
आरएसपी	4
तणमूल कांग्रेस	7

दादर नगर हवेली-1

भाजपा	1

जम्मू कश्मीर -6

एनसी	2
भाजपा	2
अभा कांग्रेस	1

कर्नाटक-28

भाजपा	13
अभा कांग्रेस	9
जद	3
लोशक्ति	3

केरल-20

भाकपा	2
माकपा	6
अभा कांग्रेस	8
केसीएम	1
एमयूएल	2
आरएसपी	1

लक्षद्वीप-1

अभा कांग्रेस	1

मध्य प्रदेश-40

भाजपा	30
अभा कांग्रेस	10

महाराष्ट्र-48

भाजपा	4
अभा कांग्रेस	33
आरपीआई	4
शिवसेना	6
अन्य	1

मेद्यालय-2

अभा कांग्रेस	2

मिजोरम-1

अभा कांग्रेस	1

नागालैण्ड-1

अभा कांग्रेस	1

उड़ीसा-21

भाजपा	7
बीजेडी	9
अभा कांग्रेस	5

भाजपा+

भाजपा	182
एडीएमके	18
एसएपी	12
बीजेडी	10
एसएडी	8
टीसी	7
एसएचएस	6
पीएमके	4
एमडीएमके	3
एलएस	3
हविपा	1
कुल	254

उत्तर प्रदेश

भाजपा	57
बसपा	4
अभा कांग्रेस	1
एसएपी	2
एसजेपी	1
एसपी	20

पाण्डिचेरी-1

डीएमके	1

पंजाब-13

एसएडी	8
भाजपा	3
अभा कांग्रेस	1
ज दल	1

राजस्थान-25

अभा कांग्रेस	18
भाजपा	5
अन्य	2

सिक्किम-1

एसडीएफ	1

गोआ-2

अभा कांग्रेस	2

तमिलनाडू-39

एआईएडीएमके	18
भाजपा	3
भाकपा	5
डीएमके	1
अभा कांग्रेस	1
जपा	1
एमडीएमके	3
पीएनके	4
टीएमसी	3

दमन-दीव-1

भाजपा	1

त्रिपुरा-2

सीपीआई (एम)	2

चण्डीगढ़-1

भाजपा	1

अण्डमान निकोबार-1

अभा कांग्रेस	1

अभा कांग्रेस+

अभा कांग्रेस	141
आरपीआई	4
समणूएल	2
केसीएम	1
कुल	148

संयुक्त मोर्चा

माकपा	32
एसपी	20
टीडीपी	12
भाकपा	9
जेडी	6
डीएमके	6
आरएसपी	5
टीएमसी (एम)	3
एफबीएल	2
कुल	95

नोट: दो सदस्यों को राष्ट्रपति ने नामजद किया दो निर्वाचन क्षेत्रों में चुनाव होना है।

सूची-II

मुख्य पाटियों और सहयोगियों द्वारा कुल वैधमतों का प्राप्त अनुपात

लोकसभा चुनाव 1998 (प्रतिशत)

प्रांत/केन्द्र शासित	पाटियां एवं सहयोगी					
प्रदेश	भाजपा	भाजपा सहयोगी	कांग्रेस	कांग्रेस सहयोगी	संयुक्त मोर्चा	अन्य पार्टियों एवं स्वतंत्र
आन्ध्र प्रदेश	18.30	1.23	37.55	0.04	38.37	4.52
अरुणाचल प्रदेश	21.75	0.00	23.90	0.00	1.89	52.47
आसाम	24.47	0.00	38.97	0.11	18.16	18.29
बिहार	21.30	14.82	7.01	25.51	13.62	17.74
गोआ	30.18	0.00	31.53	0.00	13.15	25.14
गुजरात	47.72	0.10	37.95	0.02	3.58	10.64
हरियाणा	18.89	13.56	26.02	0.02	1.11	40.39
हिमाचल प्रदेश	48.60	0.00	43.57	0.30	2.02	5.50
कर्नाटक	26.96	11.66	36.23	0.01	21.82	3.32
केरल	8.21	0.03	37.40	9.74	36.72	7.89
मध्य प्रदेश	45.86	0.49	38.46	0.11	2.65	12.45
महाराष्ट्र	24.19	18.91	43.48	4.63	6.22	2.58
मनीपुर	12.61	0.74	18.60	6.13	20.47	41.45
मेघालय	9.01	0.00	47.62	0.57	1.99	40.81
मिजोरम	2.94	0.00	34.86	0.32	0.00	61.88
नागालैण्ड	0.00	0.00	86.70	0.00	0.00	13.30

उड़िसा	21.43	28.12	40.27	2.54	6.45	1.19
पंजाब	14.90	32.87	25.87	9.44	4.18	12.74
राजस्थान	41.65	0.32	44.45	0.66	4.66	8.26
सिक्किम	0.00	0.00	33.11	0.00	0.00	66.89
तमिलनाडु	6.86	41.77	5.43	0.07	43.62	2.45
त्रिपुरा	8.19	0.00	42.12	0.09	48.80	0.81
उत्तर प्रदेश	36.44	1.49	5.99	1.20	29.48	25.40
पश्चिमी बंगाल	10.00	24.15	14.98	0.38	46.65	3.83
अण्डमान निकोबार द्वीप समुह	35.53	0.00	35.91	0.00	5.67	22.89
चण्डीगढ़	42.39	0.00	38.72	0.18	1.61	17.11
दादर नगर हवेली	53.73	41.71	4.13	0.00	0.00	0.43
दमन एवं द्वीव	41.96	0.00	1.98	0.00	0.00	56.06
दिल्ली	53.51	0.08	42.64	0.03	2.76	0.98
लक्षद्वीप	0.00	0.00	51.55	0.00	48.45	0.00
पाण्डिचेरी	0.00	25.09	32.13	0.34	41.11	1.33
भारत	25.51	11.69	25.72	3.94	21.93	11.20

नोट: भारत के चुनाव आयोग द्वारा निर्वाचन क्षेत्र के आधार पर उपलब्ध करवाये गये आंकड़ों के मुताबिक तीन मोर्चों को 1998 के चुनाव में प्राप्त वोटों के हिस्से की आकृति (at its web.eci.gov.in as on march 5, 1988). आंकड़े 535 निर्वाचन क्षेत्रों से प्राप्त किये गये हैं। बड़े मोर्चों की एक राज्य में सहयोगी पार्टी को राज्य में कुल सहयोगियों में शामिल कर दिया है। इस प्रकार, शिवसेना के आंध्र प्रदेश में मतदाताओं (एक छोटी संख्या) कों भाजपा के कुल सहयोगियों में शामिल कर दिया है। इस प्रक्रिया से अन्तिम प्रतिशत में कोई बड़ा फर्क नहीं आया। बीएसपी के मामले में केवल पंजाब में इसके वोटों को कांग्रेस के सहयोगियों के वोटों में शामिल कर दिया है।

3. उपर्युक्त सूची को देखने से पता लगता है कि 1996 के चुनावों के उलट इस वक्त संयुक्त मोर्चा को 75 सीटें कम और 5 प्रतिशत वोट कम मिले हैं। कांग्रेस-आई सीटों के मामले में स्थिर है जबकि उसे प्राप्त वोटों का लगभग 4 प्रतिशत कम हुआ है। भाजपा द्वारा पूर्ण बहुमत प्राप्त करने की डीगें हांकने के बावजूद वह आधी सीटें प्राप्त करने के इसके लक्ष्य से 90 सीटें पीछे रह गई हैं। इसको मिले वोटों का हिस्सा कांग्रेस से भी कम है। हालांकि इसे 1996 की तुलना में 5.52 प्रतिशत अधिक मत मिले हैं। भाजपा और उसके सहयोगियों ने अपनी सीटों में बढ़ोतरी की है, फिर भी 545 सदस्यों वाली लोकसभा में बहुमत से 21 सीटें कम हासिल की है। इस प्रकार वे स्पष्ट बहुमत प्राप्त करने में असफल रहे हैं। इसमें खास बात यह है कि संयुक्त मोर्चा में उतार के

बावजूद क्षेत्रीय पार्टियों के मतों के हिस्से में कोई गिरावट नहीं आई है। जबकि लगभग 20 सीटें भाजपा को अपने सहयोगियों के बल पर मिली हैं। दो मुख्य राष्ट्रीय पार्टियों यानि भाजपा और कांग्रेस को मिले मतों के अलावा क्षेत्रीय और अन्तर क्षेत्रीय पार्टियों (जो अब लोकसभा में लगभग 45 हैं) को लगभग 49 प्रतिशत मत मिले हैं और भाजपा की 181 एवं कांग्रेस की 141 सीटों के मुकाबले इनको 221 सीटें मिली हैं।

II जनादेश का आशय

4. जनादेश के ऊपर वर्णित आवश्यक पहलू इसके आशय को बिल्कुल साफ कर देते हैं। इसका अर्थ है कि किसी भी पार्टी या गठबंधन को राज करने में लोकप्रिय जनादेश प्राप्त नहीं हुआ है। दूसरे शब्दों में आज किसी भी पार्टी या गठबन्धन में जनता का पूर्ण विश्वास नहीं रहा है। इसीलिए किसी भी एक नेता, पार्टी या गठबंधन के पक्ष में हवा या जनता में उत्साह मौजूद नहीं था।

5. इस वस्तुगत वास्तविकता के उलट, कुछ राजनीति प्रेरित व्याख्याएं, जैसे कि कांग्रेस-आई और संयुक्त मोर्चा की धर्मनिरपेक्षता के पक्ष में जनादेश होने, भाजपा-समर्पित स्थिरता और योग्य प्रधानमंत्री के पक्ष में जनादेश होने, दो राष्ट्रीय पार्टियों के आधार पर राजनीतिक ध्रुवीकरण होने और इसी तरह के विचार चल रहे हैं। परन्तु क्या ये व्याख्याएं तथ्यों पर खरी उतरती हैं।

उदारहण के लिए, अगर कांग्रेस आई और संयुक्त मोर्चा की धर्मनिरपेक्षता के पक्ष में जनादेश को तर्क के बतौर स्वीकार कर लिया जाए तो भाजपा और उसके सहयोगी पार्टियों ने तालिका सूची में प्रथम स्थान और कांग्रेस आई तथा संयुक्त मोर्चा ने क्रमश: द्वितीय और तृतीय स्थान क्यों पाया है। पुन: अगर इस तर्क को माना जाए कि भाजपा के हिन्दुत्व के उद्देश्य या इसके स्थायित्व और एक योग्य प्रधानमंत्री के नारे को स्वीकार किया गया है तब राजस्थान, महाराष्ट्र, हरियाणा इत्यादि जहां उसका स्वयं का शासन था, वहां हार का मुंह क्यों देखना पड़ा है। और वर्तमान लोकसभा में औसत सीटें प्राप्त करने के अपने ही लक्ष्य को हासिल करने में असफल रही है। इसी तरह से क्या जनादेश दो पार्टी आधारित राजनीतिक ध्रुवीकरण के एक नये उभर रहे रुझान का प्रतिनिधित्व करता है, अगर ऐसा होता तो राजनीति का क्षेत्रीकरण और आगे नहीं बढ़ता। यह स्पष्ट है कि लोगों ने वोट किसी और बात के लिये दिये हैं। केवल लोगों की मानसिकता की गहराई से तहकीकात करके ही हम खण्डित निर्णय और उसके अर्थ को समझ सकते हैं।

III. मतदान पर क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य हावी

7. समाज विज्ञान दर्शाता है और अनुभव इस बात की पुष्टि करता है कि

मनुष्य मात्र जो कुछ भी करता है वह उसके दो पक्षीय परिप्रेक्ष्य[1] यानि मानसिक दृष्टिकोण का सीधा परिणाम है। इसमें दो तरफा परिप्रेक्ष्य समाविष्ट होते हैं। (i) व्यक्ति का व्यक्तिगत ध्येय और (ii) उसका सामाजिक दृष्टिकोण। व्यक्तिगत ध्येय किसी के व्यक्तिगत हितों का प्रतिनिधित्व करता है जबकि सामाजिक दृष्टिकोण किसी के सामाजिक उद्देश्य (दीर्घकालीन, मध्यम या अल्पकालीन) का इजहार करता है जिससे वह अपना व्यक्तिगत ध्येय पूरा कर सकता है। दो तरफा मानवीय परिप्रेक्ष्य मानव प्रजाति के दो तरफा जैव-सामाजिक स्वभाव से निकला है।

8. व्यक्तिगत प्रेरणा के सम्बन्ध में समस्त उपलब्ध प्रमाण दर्शाते हैं कि मतदाताओं ने एक या दूसरी किस्म के प्रतिनिधि के पक्ष में मतदान करने का अपना विकल्प चुनने में सबसे बड़े पहलू के तौर पर सार्वजनिक जीवन को सुधारने की इच्छा को आधार बनाया है। लोगों ने सार्वजनिक जीवन की वास्तविक जन समस्याओं [उदाहरणतया, भूख, बेरोजगारी, बेघरबार, शिक्षा, स्वास्थ्य, पीने का पानी, मल-जल निकास, सामाजिक सेवाओं, अधिक जनसंख्या, पर्यावरण गिरावट, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, भ्रष्टाचार, अपराधिकरण, अराजकता (कानूनविहिन स्थिति) हिंसा] को हल करने को मुख्य बिन्दु बनाया। उन्होंने उसी उम्मीदवार को मत दिया जिसको वे अपना भला करने वाला मानते हैं। और जो उनकी आकांक्षाओं और आशाओं को प्रतिबिम्बित करता रहा है। अगर कोई पार्टी या उम्मीदवार उनकी आशाओं के मुताबिक खरा नहीं उतरा तो उन्होंने सत्तासीन पार्टी या उम्मीदवार को फेंक कर किसी नये या पुराने आजमाए को वापिस आजमाया है। उन्होंने न तो किसी खास पार्टी और ना ही किसी घोषणापत्र को मतदान किया है।

9. दूसरा व्यक्तिगत विचार जिसने मतदान के व्यवहार को प्रभावित किया वह जनता के पारम्परिक तौर पर जमे जातिवाद और साम्प्रदायिकता के विचार रहे हैं। यहां मतदाताओं ने उसका समर्थन किया जो एक तरफ तो उनकी जाति या समुदाय का था और दूसरी तरफ आवश्यकता के समय उनकी सहायता करता था।

10. तीसरी चीज जिसने लोगों की व्यक्तिगत पसन्द बनाने में भूमिका अदा की वह व्यक्तिगत या चमत्कारिक नेतृत्व का पहलू था। यह धारणा बहुत से स्तरों जैसे—हल्का, पार्टी, गठजोड़, राष्ट्रीय, जाति या समुदाय सबसे ऊपर क्षेत्रीय पर लागू होती है।

11. उनके सामाजिक दृष्टिकोण के सम्बन्ध में क्षेत्रीयता का परिप्रेक्ष्य मुख्य

1. इसे दिशा (यानि किसी की अपने वातावरण के संबंध में स्थिति) या दृष्टिकोण (यानि रुख), उद्देश्य (यानि कार्य करने का कारण) या मानसिकता (यानि सोचने की मानसिक शक्ति या इरादा)।

तौर पर हर कहीं मतदाताओं के सोच व्यवहार का बिन्दु रहा है। ऐसा इसलिए है क्योंकि लोग अपनी समस्याओं को राज्य विशेष की समस्या समझते हैं और इसका क्षेत्रीय हल तलाश करते हैं। स्वाभाविकतया, वे क्षेत्रीय आधार पर मतदान करते हैं। और इसी आधार पर विभिन्न पार्टियों (खासकर सत्ताधारी पार्टी) की कारगुजारियों का लेखा-जोखा करते हैं। हालिया लोकसभा चुनावों में विभिन्न खोजी एजेन्सियों (संस्थाओं) ने रिपोर्ट दीं कि राष्ट्रीय मुद्दों की बजाए स्थानीय मुद्दे अधिक महत्वपूर्ण रहे हैं और कि दो तिहाई मतदाताओं ने कहा कि वे क्षेत्रीय मुद्दों पर मतदान कर रहे हैं।

12. क्षेत्रीयता के परिप्रेक्ष्य ने क्षेत्रीय नेताओं के दर्जे और भूमिका को बढ़ा दिया है। वे अपने क्षेत्रों में जन राय को बनाने वाले उत्प्रेरक बन गए हैं। उदाहरण के लिए पश्चिम बंगाल के मतदाता ज्योति बसु और ममता बेनर्जी की तरफ देखते हैं। और किसी राष्ट्रीय नेता को नहीं देखते हैं। बिहार में यह लालू बनाम बाकी सभी स्थानीय नेता, उत्तर प्रदेश में कल्याण, मुलायम, मायावती को लोगों ने अपनी पंसद बनाया है। इसी तरह, पंजाब में अकाली-भाजपा का नेतृत्व, हरियाणा में तीन लाल, राजस्थान में शेखावत बनाम विरोधी काँग्रेस नेतृत्व, महाराष्ट्र में बाल ठाकरे बनाम शरद पँवार, गुजरात में पटेल बनाम अमरसिंह चौधरी, उड़ीसा में नवीन बनाम जे बी पटनायक, आंध्रा में नायडू बनाम रेड्डी, तमिलनाडू में जयललिता बनाम करुणानिधी, कर्नाटक में हेगड़े बनाम देवगौड़ा और केरल में नयनार बनाम करुणाकरन मतदाताओं के चुनावी निर्णय को प्रभावित करते हैं। तथ्य यह बात उद्घाटित करते हैं कि अखिल भारतीय सितारे यानि वाजपेयी, सोनिया इत्यादि और उनकी केन्द्रीकृत पार्टियों तथा घोषणा-पत्र अपनी क्षेत्रीय नेताओं और इकाइयों की तुलना में कम असरदायक साबित हुए हैं। इस प्रकार, क्षेत्रीयता के परिप्रेक्ष्य का परिणाम प्रत्येक क्षेत्र के मतदाताओं के लिए विशिष्ट चुनावी पसन्द के रूप में निकला—जिसने राष्ट्रीय स्तर (जो विभिन्न क्षेत्रों से बना है) पर खण्डित निर्णय दिया।

IV. क्या क्षेत्रीयकरण एक रुझान है या भटकाव

13. कुछ लोग दावा करते हैं कि क्षेत्रीयकरण का घटनाक्रम केवल आम राष्ट्रीय प्रक्रिया से भटकाव मात्र है। वे तर्क देते हैं कि मतदाता पद्धति लगातार ऐसी बनी हुई है जिसमें विभिन्न सामाजिक श्रेणियों, जिसमें दोनों यानि पारम्परिक (जैसे कि जातिवाद, धार्मिक रूढ़िवादी, इत्यादि) और आधुनिक (जैसे कि भ्रष्टाचार और अपराध से मुक्त एक साफ राजनीति कायम करने के उद्देश्य, सत्ताधारी के विरोध का पहलू, केन्द्रीयकृत राष्ट्रवाद की धारणा इत्यादि) धारणाओं का असर है। नि:सदेह, इन सभी वैचारिक रूपों का मतदान पद्धति पर प्रभाव पड़ता है। परन्तु ये भी क्षेत्रीय विशिष्ट बन जाते हैं। और क्षेत्रीय लाईन के तौर पर लागू होते हैं।

14. उदारहण के लिए, अगर राष्ट्रीय स्तर पर जातिवाद एक प्रभुत्वकारी सामाजिक नैसर्गिक प्रवृत्ति होती तो भारतीय लोग जनता दल के जातीय आधारित सामाजिक न्याय को रद्द नहीं करते और लालू, मुलायम और मायावती अपने-अपने राज्य जागीरों मे ही सीमित नहीं रहते, उत्तर प्रदेश में कांशीराम लोकसभा चुनाव नहीं हारते, और वर्तमान लोकसभा चुनावों में बसपा अपने सबसे ज्यादा उम्मीदवारों की जमानतें जब्त करवाने वाली निराली पार्टी नहीं बनती। इसी तरीके से अगर धार्मिक रूढ़िवाद देश में एक हावी सामाजिक रुझान होता तो हालिया चुनाव में भाजपा कुल मतों के चौथाई हिस्से पर ही नहीं रुक जाती तथा चुनाव के बाद वह अपने हिन्दू राष्ट्रवाद एवं मुख्य एजेण्डों को ठण्डे बस्ते में नहीं डालती। आगे, अगर भ्रष्टाचार और अपराध से मुक्त एक साफ राजनीति मुख्य राष्ट्रीय मसला होता तब भ्रष्टाचार से लिप्त राजनीतिज्ञ (जैसे सुखराम, बूटासिंह, जाखड़, लालू, जयललिता, मुथैया इत्यादि) हलिया चुनाव में बुरी तरह हार जाते और एक दर्जन से ऊपर बदमास अपराधी व्यक्ति वर्तमान लोकसभा में नहीं पहुँच पाते। और, आगे क्या सत्ताविरोधी मतदान मुख्य राष्ट्रीय उसूल बन गया था, अगर ऐसा होता तब तो बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब, दिल्ली, आन्ध्रा, केरल इत्यादि अप्रभावित नहीं रह सकते आखिरकार, अगर बहुसंख्यक (या केन्द्रीकृत) या राष्ट्रवाद मुख्य राष्ट्रीय मानसिकता वाला विचार होता तो भाजपा और कांग्रेस-आई कुल लोकसभा सदस्यों के एक तिहाई और एक चौथाई पर ही नहीं रुक जाती। स्पष्टतया, इनमें से कोई भी तर्क क्षेत्रीयता के बढ़ते हुए रुझान को नकार या कम करके नहीं आँक सकता।

15. क्षेत्रीयता की राजनीति कुछ समय से अपना रास्ता बना रही है। 1980 के दशक में तेलगु देशम, अखिल भारतीय अन्ना डीएमके, असम गण परिषद्, बीएसपी इत्यादि राजनीतिक परिदृश्य में उभरी। 1990 के शुरूआत में समाजवादी पार्टी, हरियाणा पार्टी, हरियाणा लोकदल, समता पार्टी, इत्यादि उदित हुई। 1988 के चुनावों के पहले के दौर में नये क्षेत्रीय दलों जैसे टीएमसी, बीजू जनता दल, लोक शक्ति, राष्ट्रीय जनता दल, तृणमूल कांग्रेस, इत्यादि की तेजी से वृद्धि हुई।

16. 1989 तक, क्षेत्रीय पार्टियों खासकरके कांग्रेस की कीमत पर लोकसभा में अपनी सीटों और मतों को दुगुना कर लिया। 1996 के चुनावों के बाद क्षेत्रीय पार्टियां एक बड़ी ताकत बन गई, जो केन्द्रीय सरकार के बनाये या बिगाड़ने में फैसलाकुन भूमिका अदा करने लगी। हालिया 12वें लोकसभा के दौरान भाजपा 6 राज्यों (यानि तमिलनाडू, बंगाल, उड़िसा, पंजाब, हरियाणा और महाराष्ट्र) में क्षेत्रीय पार्टियों की कनिष्ठ भागीदार थी, जबकि कांग्रेस आई ने बिहार और पहले उत्तर प्रदेश में द्वितीय दर्जा स्वीकार किया। आज, 10 राज्य सरकारें क्षेत्रीय पार्टियों द्वारा चलाई जा रही हैं, जबकि 18 क्षेत्रीय पार्टियां भाजपा के साथ केन्द्र में सत्तासीन हैं। कोई भी

केन्द्रीकृत राष्ट्रीय पार्टी आज के दिन क्षेत्रीय पार्टियों के सहयोग के बिना सफल नहीं हो सकती।

17. पीछे की तरफ सिंहावलोकन करें तो 1947 के बाद भारत 4 दशकों से अधिक नेहरूवादी राष्ट्रीय मॉडल के राजनीतिक दौर में रहा है। उस समय में क्षेत्रीय राजनीति और पार्टियां केवल सीमान्त घटनाक्रम थे। तब, भारत के लोगों को कांग्रेस आई के निर्बाध शासन से बहुत सी आशाएं थीं और कांग्रेस केन्द्र व राज्यों दोनों में प्रभुत्वकारी ताकत थी। परन्तु यह लोगों की आशाओं और उनकी मूलभूत आवश्यकताओं दोनों के सम्बन्ध में असफल रही है। न केवल पुरानी समस्याएं ही अनसुलझी पड़ी हैं, बल्कि कुछ नई भी शामिल हो गई हैं।

18. परिणामस्वरूप, कांग्रेस आई का 1989 के लगभग गिरावट का दौर पक्का हो गया, तब राष्ट्रवाद के दो नये दृष्टिकोण—यानि हिन्दुत्व और मण्डलवाद—और उनके दो नये शक्ल वाले पैरोकार यानि भाजपा और संयुक्त मोर्चा (जनता दल सहित), दोनों दो राष्ट्र निर्माण में कलाकारी करनी शुरू की। वामपंथ भी मंडलवाद में शामिल हो गया।

19. 9वीं लोकसभा चुनावों (1989) का अनुसरण करते हुए कांग्रेस विरोध की राजनीति (जिसे तीन बड़े राष्ट्रीय संगठनों, यानि संयुक्त मोर्चा, वामपंथी मोर्चा और भाजपा ने अपने चुनावी प्रचार के दौरान अपनाई) के बल पर वी.पी. सिंह के नेतृत्व में राष्ट्रीय मोर्चा सत्ता में आया जिसको एक तरफ भाजपा और दूसरी तरफ वाम मोर्चा का समर्थन हासिल था। यह अवसरवादिता सत्ता गठजोड़ अपने अंदरूनी कलह के परिणाम स्वरूप 10 महिने के बाद ही ढह गया।

20. 1991 के लोकसभा चुनावों में कांग्रेस आई राजीव गांधी की हत्या से उत्पन्न हमदर्दी के बल पर पुनः सत्ता प्राप्त कर सकी। 1991-96 के दौरान कांग्रेस आई शासन में घोर भ्रष्टाचार और राजनीतिक चालबाजियों के व्यवहार ने इसकी साख को और अधिक बिगाड़ दिया। और उसके बाद से अपने विभिन्न चालबाजीपूर्ण निवारक हथकण्डों के बावजूद यह निरन्तर गिरावट की तरफ ही जा रही है।

21. इसी बीच, राष्ट्रीय मोर्चा पूरी तरफ हासिये पर चला गया है, जबकि जनता दल एक अप्रभावी संगठन में बदल चुका है। यद्यपि वाम मोर्चा और उसके घटक अभी अपने किले को थामे हुए हैं परन्तु उनके नीचे से भी जमीन खिसकती नजर आ रही है। पिछले दशक के दौरान में भाजपा असाधारण रूप से बढ़ी है, परन्तु 1996 और 1998 के चुनाव परिणाम इस बात के द्योतक हैं कि यह भी अपने चढ़ाव के स्थिर बिन्दु पर पहुंच चुकी है।

22. स्पष्टतया, केन्द्रीय पार्टियों के क्रमिक क्षय की वजह से क्षेत्रीय ताकतों के लिए अधिक से अधिक जगह खाली होती जा रही है।

V. क्षेत्रीयवाद—भारतीय व्यवस्था की अप्रासंगिकता की अभिव्यक्ति

23. क्षेत्रवाद का उभार कोई अचानक पृथक घटनाक्रम नहीं है। यह सामान्य तौर पर उभरा है क्योंकि केन्द्रीकृत भारतीय राज्य और इसकी केन्द्रीकृत राष्ट्रीय पार्टियां राष्ट्र की सामाजिक वास्तविकताओं का उचित प्रत्युत्तर देने में असफल रही है।

24. भारत की सबसे बड़ी सामाजिक वास्तविकता है कि यह एक अत्यधिक सामाजिक विविधता वाला देश है। विश्व में ऐसा कोई देश नहीं है जो इसकी असीम सामाजिक किस्मों में बराबरी कर सके। इस प्रकार, भारतीय विविधता को एक उचित प्रत्युत्तर देकर ही भारत को इकट्ठा रखा जा सकता है और आगे विकसित किया जा सकता है।

25. ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों ने, जिन्होंने मानव इतिहास में सबसे पहले भारत को एक एकीकृत राजनीतिक इकाई के रूप में संयुक्त किया। उन्होंने भारत की बहुलता को सशस्त्र बल से नियंत्रित किया। ब्रिटिश युग से पहले भारत की भौगोलिक इकाई को किसी भी मानवीय ढांचे द्वारा इसे राजनीतिक इकाई के रूप में गठित नहीं किया गया था। इस प्रकार, हमारे पास ब्रिटिश औपनिवेशिक व्यवहार के अलावा भारत की बहुलता के निरालेपन को प्रबन्धित करने का ऐतिहासिक अनुभव नहीं है।

26. आज ब्रिटिश अनुभव पूरी तरह अप्रासंगिक हो चुका है। क्योंकि आजकल की जनवादी व्यवस्था में सामाजिक अनेकता (विविधता) को संभालने के लिए ताकत का पहलू ना तो उपयोगी है और ना ही हो सकता है। यहां तक कि जन हितैषी और सामाजिक न्याय पर आधारित एकतंत्रीय प्रणाली या केन्द्रीयकरण वाले सोवियत संघ और यूगोस्लाविया के अनुभव प्रदर्शित करते हैं कि इस युग में सामाजिक जटिलता से निपटने में वे असफल ही रहे हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि अनेकता को नियंत्रित करने के लिए केन्द्रीयकरण वाली शक्ति आम तौर पर दमनकारी और फूट डालने वाले तरीके अख्तियार करती है।

27. हमारा खुद का अनुभव दर्शाता है कि अगर 1947 के पहले कांग्रेस ने बहुसंख्यक (या केन्द्रीकृत) राष्ट्रवाद की बजाए संघीय राष्ट्रवाद को अपनाया होता तो भारत के विभाजन को रोका जा सकता था। यहां तक कि दुनिया के जटिल राष्ट्रीय समाजों—जैसे, स्वीट्जरलैण्ड, यू.एस., कनाडा, आस्ट्रेलिया, बेल्जियम इत्यादि—के ऐतिहासिक अनुभव इंगित करते हैं कि उन्होंने अपनी सामाजिक बहुलता को अपने-अपने संघीय राष्ट्रीय मॉडल के द्वारा संतुष्ट किया।

28. 1947 के पहले के हमारे अपने अनुभव से नहीं सीखने के साथ-साथ बहुलता की समस्या को हल करने के लिए विश्व के व्यवहार से भी नहीं सीखा है। 1947 के बाद के दौर में हम निरन्तर बहुसंख्यक राष्ट्रवाद या एक केन्द्रीकृत व्यवस्था

के पुराने ढर्रे को ही चलाए जा रहे हैं। और अब इसका परिणाम हर कोई देख सकता है, यह जांच सकता है कि 'दुनिया के सबसे बड़े जनवाद' की क्या कारगुजारी है।

29. राजनीति के क्षेत्र में इस व्यवस्था ने अस्थिरता, भ्रष्टाचार, अपराध साम्प्रदायिकता, जातिवाद, हिंसा इत्यादि को जन्म दिया है।

30. आर्थिकता के परिवेश में इसने अकुशलता, उत्पादन की उच्च लागत, कम उत्पादकता, निम्न गुणवत्ता इत्यादि बुराइयां पैदा कर दी है।

31. संस्कृति के क्षेत्रों में इसने घटिया किस्म के व्यवहार—जैसे चापलूसी, दोगलापन, झूठ, धोखा, चालबाजी, अवैध तरीके से धन कमाने, इत्यादि को मजबूत किया है।

32. विदेश एवं सुरक्षा मामलों में इसने क्षेत्रीय महाशक्तिवाद को चलाया, देश को सैन्यकरण, हथियारों की दौड़ में शामिल किया। दो पड़ौसियों पाकिस्तान और चीन से चार युद्ध तथा दक्षिण एशियाई देशों के साथ बेहतर सम्बन्ध कायम नहीं किये।

33. पर्यावरण की दृष्टि से इसने भारत को दुनिया में सबसे अधिक प्रदूषित देश बना दिया है। जिसमें पानी का दूषित होना व वायु का प्रदूषित होना, तेजी से जारी है। पानी की उपलब्धता में कमी, 40 प्रतिशत खेती योग्य भूमि का क्षरण, और आधे से अधिक वनों का सफाया कर दिया है।

34. जनसंख्या की नजर से देखें तो इसकी गैर-गंभीरता ने मसले को और अधिक प्रबल बना दिया है। 1947 में 34 करोड़ 20 लाख जनसंख्या की जगह आज यह बढ़कर 98 करोड़ हो गई है।

35. मानव विकास के सम्बन्ध में जहां सबसे खराब परिदृश्य है—जहां जनसंख्या का 62 प्रतिशत गरीब की श्रेणी में हैं, 40 प्रतिशत गरीबी की रेखा के नीचे हैं, 33 प्रतिशत बेघरबार, 25 प्रतिशत लोग शुद्ध पीने के पानी से वंचित हैं, 75 प्रतिशत लोगों को शौचालय की सुविधा नहीं है, इत्यादि।

36. इस व्यवस्था का मुख्य दोष है कि अपने केन्द्रीकृत शासन को चलाने के लिए यह हमेशा दमन और राजनीतिक धोखेबाजी पर निर्भर रही है। इसने कभी भी लोगों (खासकर के वंचित जनता) और उनके परिवेश को अपनी प्राथमिकता पर नहीं रखा है। इसने अपना मुख्य सरोकार उचित या अनुचित तरीकों से धन और सत्ता हड़पने के लिए लोगों को प्रेरित करना ही बनाया। यही वजह है कि इसके अधिकतर उच्च राजनीतिज्ञ भ्रष्ट और माफिया आधारित हो गए हैं। वे हर समय अपनी पैसे, चालबाजी और बाहुबल की राजनीति के बल पर लोगों में बुराइयों के बीज बोने में लगे हुए हैं। और धोखेबाजों एवं दुष्टों की नई पौध तैयार करने में व्यस्त है। जब कानून बनाने वाले खुद ही छुपे-ढके तरीके से कानून तोड़ने में लगते हैं तो जनवाद का

मूलभूत सिद्धान्त—यानि कानून के सामने सभी के बराबर होने का सिद्धान्त या हर किसी के कानून पालन करने की बाध्यता का उसूल छिन्न-भिन्न हो जाता है। जरा देखिये कि हमारे नये प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कुछ महिने पहले यूपी में कल्याणसिंह के जम्बों मंत्रिमण्डल के गठन के समय कहा कि ''यह (यानि भाजपा) अनुचित तरीके इस्तेमाल करेगी क्योंकि दूसरे ऐसा करना बन्द नहीं कर रहे हैं।'' क्या एक सही कानून का राज या मूल्य आधारित जनवादी व्यवस्था ऐसे चौतरफा फैली राजनीतिक मानसिकता के नीचे पनप सकती है।

37. इस तरह की व्यवस्था के अर्द्ध शतक लम्बे व्यवहार की वजह से लोगों के बहुत बड़ें हिस्सों में वंचित रहने और व्यवस्था से मोहभंग होने का भाव पैदा हो गया है। आम तौर पर सम्बन्धित जनता का वंचित तबका अलगाव की तरफ बढ़ता है। परिणामस्वरूप, अलगाव की भावना से ग्रसित लोग चल रही केन्द्रीकृत व्यवस्था; उनकी पार्टियों और नेताओं से हताश होते गए हैं और अपनी समस्याओं का हल वे अपने-अपने नश्ली-क्षेत्रीय ग्रुपों और नेताओं में तलाशने लगे हैं।

38. स्पष्टतया, क्षेत्रीयवाद वर्तमान में चल रही व्यवस्था की अप्रासंगिकता का इजहार है।

VI. क्षेत्रीयवाद के निहितार्थ

(क) क्या है क्षेत्रीयवाद

39. क्षेत्रीयवाद ऊपर से नहीं टपका है और न ही यह बाहर से आया है। यह हमारे लोगों की मानसिकता से पैदा हुआ है। क्योंकि वे अपनी मूलभूत समस्याओं का राष्ट्रीय हल की बजाए क्षेत्रीय हल तलाशना चाहते हैं। क्षेत्रीय पार्टियों और नेताओं (केन्द्रीय राष्ट्रीय पार्टियों की सुव्यवस्थित क्षेत्रीय इकाइयों और नेताओं सहित) का राजनीतिक प्रक्रिया में ऊपर उठना इस बात को सिद्ध करता है।

40. क्षेत्रीयवाद कोई अमूर्त धारणा नहीं है। एक राजनीतिक धारणा के तौर पर यह विशिष्ट क्षेत्र में रहने वाले नस्ली समूह की व्यवस्थागत शक्ति की द्योतक है। क्षेत्रीयतावाद एक विशिष्ट देश या (राष्ट्र) के भाग पर दो रूप अख्तियार करती हैं। अपने अतिवादी रूप में इसका प्रतिनिधित्व करने वाली नस्ली समूह अपने-आपको एक अलग राष्ट्रीय इकाई समझता है और संबंधित देश का हिस्सा नहीं मानता हैं। यहाँ, वह एक स्वतंत्र राष्ट्र की धारणा अपनाता है। और इस प्रकार संबंधित देश की भौगोलिक एकता के लिए चुनौती खड़ी कर देता है। क्षेत्रीयतावाद का दूसरा रूप वह है जिसमें इसका प्रतिनिधित्व करने वाला नस्ली समूह अपने आपको संबंधित देश का एक हिस्सा स्वीकार करता है तथा साथ ही अपनी विशिष्ट ऐतिहासिक पहचान की

संवैधानिक (या स्वायत्तता) की माँग करता है।

41. इस प्रकार क्षेत्रीयतावाद मुख्यतया एक निश्चित क्षेत्रीय-नस्ली समुदाय की माँगों से संबंध रखता है। अपने अतिवादी रूप में यह केवल क्षेत्रीय नस्ली समूह के एकमात्र हितों के प्रति समर्थित होता है जबकि उदार रूप में यह देश के हितों के साथ अपने हितों को जोड़ लेता है। क्षेत्रीयतावाद अपने पहले स्वरूप में अपने आप को ही राष्ट्र मानती है तथा जिस देश का वह हिस्सा है उसकी राष्ट्रीयता की खिलाफत करती है। क्षेत्रीयतावाद अपने दूसरे स्वरूप में अपने नस्ल या क्षेत्रीय हितों के साथ राष्ट्रीय हितों को शामिल कर लेता है। परन्तु समय रहते अगर उदार क्षेत्रीयतावाद के हितों का, राष्ट्रीय हितों के साथ मेल नहीं बैठाया जाता तो वह अपने अतिवादी रूप में विकसित हो जाता है या हो सकता है।

42. एक बहुल देश में उदार क्षेत्रीयता का उभरना कोई नकारात्मक का द्योतक नहीं है बल्कि एक सकारात्मक विकास है। यह सकारात्मक इन अर्थों में है कि यह देश की उपेक्षित विभिन्नता की अभिव्यक्ति है। भारत के मामले में इसके केन्द्रीकृत संविधान द्वारा देश की विविधता वाली सामाजिक वास्तविकता के बारे में गलत अवधारणा एवं परिणाम स्वरूप उसके अप्रासंगिक होने का द्योतक है। दूसरे शब्दों में यह भारत की केन्द्रीकृत व्यवस्था और केन्द्रीकृत पार्टियों से लोगों के असंतुष्ट होने और अपनी प्राथमिकता क्षेत्रीयता को देने की तरफ इंगित करती है। हालांकि अभी-भारतीय क्षेत्रीयतावाद राज्यों को ज्यादा अधिकार की मांग कर रहा है और अभी तक भारतीय व्यवस्था के पूर्ण संघीय आधार पर पुनर्गठन या राज्यों को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान करने के सवाल को नहीं उठा रहा है। परन्तु राजनीति में अब जो हालात विकसित हुए है वे अत्यधिक अस्थिर और अनिश्चित है।

43. वर्तमान राजनीतिक शक्ति संतुलन में, केन्द्रीकृत राष्ट्रीय पार्टियों का असर कुछ हद तक गिरा है, जबकि क्षेत्रीय पार्टियों की सौदाकारी ताकत और राजनीतिक वजन और बढ़ा है। वर्तमान चुनाव में केन्द्रीयतावादी पार्टी भाजपा की अगर 20 सीटे बढ़ी हैं तो दूसरी केन्द्रीयतावादी पार्टी जनता दल की दुगुनी यानि 40 सीटें कम हुई है। अगर यह रुझान मजबूत होता है और क्षेत्रीय पार्टियां केन्द्रीय स्थिति में आती हैं तब वर्तमान में चल रही केन्द्रीयकृत व्यवस्था हालात से कैसे मेल बैठायेगी।

44. 12वीं लोकसभा चुनाव के बाद भी राजनीतिक प्रक्रिया में और अधिक अनिश्चिय की स्थिति उत्पन्न हो गई है। एक अत्यधिक विविधता वाली लोकसभा अस्तित्व में आई है जिसमें विभिन्न विचारधारा एजेण्डों और प्राथमिकताओं वाली 45 पार्टियां शामिल हैं। भारत की राजनीति में बहुध्रुवीयता के उभार ने भारत के केन्द्रीकृत संवैधानिक यन्त्र की कार्यकारी और व्यवहारिकता के रास्ते में समस्याएं खड़ी कर दी

हैं। तर्कसंगत तौर पर स्थिति यह बन गई है कि सरकार का काम मुख्य तौर पर अपने सहयोगियों के मध्य संबंधों में समन्वय कायम रखने और कभी एक जगह व कभी दूसरी जगह पड़ी दरारों को भरना ही रह गया है।

(ख) भारत में गलतियां स्वतः ठीक होने की क्या खासियत है

45. कुछ व्यक्ति आशा करते हैं कि वर्तमान भारतीय व्यवस्था का कुछ स्वाभाविक रचनातंत्र ऐसा है जो विभिन्न तरह की जटिलताओं से स्वतः ही निपट लेता है। परन्तु यह बात तथ्यों की बुनियाद पर खरी नहीं उतरती। उदारहण के लिए, इसी व्यवस्था के तहत हमारी राजनीतिक—प्रक्रिया अधिक अपराधी, भ्रष्ट, साम्प्रदायिक, जातिवादी और हिंसक बन गई है। और हमारे मानवीय संसाधन गरीबी, बेरोजगारी, अनपढता, बेघरबारता, खराब स्वास्थ्य इत्यादि से ग्रस्त हो गए है तथा प्राकृतिक पर्यावरण—यानि, वायु, पानी, जमीन, और अधिक प्रदूषित हो गए हैं। भारतीय संविधान में लगभग सभी तरह की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरी करने का लिखा है परन्तु पिछले 50 वर्षों में उनमें से एक भी पूरी नहीं हुई है। वास्तव में लोगों को फायदा नहीं मिला है। किस आधार पर कोई अच्छे भविष्य की व्यवस्थागत कारगुजारी की आशा कर सकता है। वास्तव में तो आज भारत को पेश आ रही सभी बुराईयों को यह संविधान आधार प्रदान कर रहा है।

(ग) क्या द्वि-पार्टी व्यवस्था की तरफ कोई रुझान है

46. कुछ दूसरे राजनीतिक प्रक्रिया में सुधार के लिए एक ही पार्टी के बहुमत या दो पार्टी ध्रुवीकरण की इच्छा रखते हैं। परन्तु कोई भी विश्लेषक हमारे देश में एक पार्टी या दो पार्टी ध्रुवीकरण होने की संभावना स्वीकार नहीं करता। इसके रास्ते में केन्द्रित राष्ट्रीय पार्टियों के बारे में कटुता विद्यमान होना, लोगों द्वारा अपनी मौलिक (धरातलीय) समस्याओं पर क्षेत्रीयतावाद के रूप में दृष्टिपात करना, और राष्ट्रीय स्थिरता, राष्ट्रीय एकता, परमाणु हथियारों का निर्माण, इत्यादि जैसे राष्ट्रीय मसलों में लोगों की बहुत कम दिलचस्पी के रास्ते में कांग्रेस का बहु-संख्यक राष्ट्रवाद, भाजपा का हिन्दुत्व, मंडलवादी पार्टियों का जातिवादी सामाजिक न्याय और भिन्न-भिन्न क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य के रूप में भिन्न-भिन्न राष्ट्रीय दृष्टिकोण भी बाधाएं खड़ी करते हैं कि भारतीय केन्द्रीकृत व्यवस्था तथा केन्द्रित पार्टियां 50 साल लम्बे व्यवहार के बाद भी भारतीय लोगों में राष्ट्रीय एकता की स्थाई भावना पैदा करने में असफल रही हैं। वे अभी तक अपने आपकों नस्ली, धार्मिक या जातिवादी रूप में तस्लीम करने की प्रवृत्ति रखते हैं। देश के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लोगों के मध्य राजनीतिक, आर्थिक या भावनात्मक एकता की कमी है। हमारी राष्ट्रीय एकता कितनी भंगुर है यह इस तथ्य से देखा जा सकता है कि किसी साम्प्रदायिक या जातिवादी अफवाह या कर्नाटक—

तमिलनाडु जल—विवाद इसमें किसी भी क्षण छेद कर सकती है। हमारे सामाजिक समूहों में अविश्वास और संदेह का वातावरण फैला हुआ है।

(घ) क्या गठजोड़ राजनीति सफल हो सकती है

47. शिक्षित व्यक्तियों में काफी हद तक भावना फैली हुई है कि हमारी जटिल राजनीतिक हालात का उद्धार करने में गठजोड़ राजनीति काम कर सकती है।

48. यद्यपि, भारत में गठजोड़ प्रक्रिया को कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं ने रोक रखा है। प्रथमतया, यह तीन मुख्य पार्टियों, यानि, कांग्रेस आई, भाजपा और संयुक्त मोर्चा और उनके विरोधी राष्ट्रीय दृष्टिकोणों यानि बहुसंख्यक राष्ट्रवाद, हिन्दुत्व और मण्डलवाद (या एक जातिवादी सामाजिक न्याय)—और उनकी टकरावावादी राजनीति के बीच प्रक्रिया को रोक रखा है। द्वितीयतः, गठजोड़ की राजनीति के रास्ते में दूसरी बाधा एक तरफ केन्द्रीकृत परिप्रेक्ष्य जो हमारी केन्द्रीकृत राजनीति और उसकी वाहक केन्द्रीकृत राष्ट्रीय पार्टियों की मांग के मुताबिक है तथा दूसरी तरफ विभिन्न क्षेत्रीय पार्टियों के तरह-तरह के क्षेत्रीय दृष्टिकोण के मध्य टकराव है। इस तरह की बाधा राज्य स्तर पर नहीं है जहां एक ही जैसे क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य का प्रभाव है, चाहे गठजोड़ के भागीदार कोई भी क्यों न हो। तृतीयतः, भारत में गठजोड़ प्रायः उसूल पर नहीं बल्कि राजनीतिक स्वार्थ पर होते है जिनका एकमात्र उद्देश्य सत्ता की भूख होता है। उपर्युक्त तथ्य भारत में गठजोड़ का अनुभव इंगित करता है कि मोर्चा में एकता के मूलभूत उसूल तय नहीं थे और इसीलिए एक दिशा की कमी थी। इसका न्यूनतम साझां कार्यक्रम केवल कुछ सामान्य बिन्दुओं का घालमेल मात्र था और उसमें कोई उद्देश्य, रणनीति, प्राथमिकता इत्यादि तय नहीं थे। 11वीं लोक सभा का चुनावी आदेश भारत में राजनीतिक ताकतों के मध्य सहयोग मेल-मिलाप और आम सहमति के वातावरण की मांग करता है। इसके उलट संयुक्त मोर्चा ने कांग्रेस के साथ मिलकर साम्प्रदायिकता से लड़ने और धर्म निरपेक्षता की रक्षा के नाम पर टकरावावादी मंच का निर्माण किया। अब, भाजपा के सत्ता तक पहुँचने के कटु सत्य और लोकसभा चुनावों में संयुक्त मोर्चा का धरना, इसके साथ ही चुनावों के बाद मोर्चा में संकट, साफ तौर पर सिद्ध करते हैं कि इनकी धोखेबाजी वाली धर्मनिरपेक्षता केवल सत्ता प्राप्त करने की चालबाजी मात्र ही थी। साम्प्रदायिकता और इसका मुख्य इजहार करने वाली भाजपा को वाम पार्टियों और कांग्रेस या कुछ सामाजिक न्याय के लिए जाति दिशा वाली पार्टियों द्वारा प्रायः उपयोग की जाने वाली राजनीतिक चालबाजी से रोका नहीं जा सकता है, बल्कि इसका तर्कसंगत वैचारिक-राजनीतिक कार्यक्रम के द्वारा ही सामना किया जा सकता है और किया जाएगा।

50. 1967, 1977 और 1989 की साझा सरकारों के अनुभव भिन्न श्रेणी के

थे। यह उस समय का दौर था जब केन्द्रीकृत भारतीय व्यवस्था और उसकी मुख्य वकील कांग्रेस पार्टी ने अपने मूलभूत संकट के दौर में प्रवेश नहीं किया था। उस समय की साझा सरकारों की मूलभूत कमजोरियां यह थीं कि ये किसी सकारात्मक एजेण्डा (कार्यक्रम) पर नहीं बनी थी। कांग्रेस विरोध का कार्यक्रम उनका एक मात्र आधार था, जबकि इन्होंने कांग्रेस के ही नेहरूवादी मॉडल को दयानदारी से लागू किया। यह दोहरापन जनता की समझ से बाहर था जिसने इन उचित कार्यो की नियति बदल दी।

51. भाजपा के गठजोड़ की लाइन के सम्बन्ध में दो बिन्दुओं पर जोर देने की जरूरत है। एक यह की चुनाव के दौर में इसने प्रत्येक राज्य में क्षेत्रीयवादी राजनीति से समझौता करने की कोशिश की तथा व्यवहारवादी तरीका अपनाया और अपने मानववादी मुखौटे से अपनी साम्प्रदायिक छवि को ढकने की कोशिश की। दूसरा बिन्दु यह है कि चुनाव के बाद के दौर में इसने लचीला रुख अपनाया तथा अपनी सहयोगी पार्टियों के साथ वार्ता करके उदार कार्यक्रम स्वीकार कर लिया तथा हिन्दूत्व और अपने मुख्य एजेण्डा के मूलभूत उसूलों को इस समय छोड़ने का रास्ता अपनाया है।

52. कुछ लोग तर्क करते हैं कि अगर यूरोप में गठजोड़ सफलतापूर्वक कार्य करता है तो भारत में यह क्यों नहीं कार्य कर सकता। इन दोनों में बड़ा अन्तर यह है कि यूरोपीय देशों के संविधान, अपने देश की जनता, पार्टी तंत्र और संवैधानिक उसूलों से मेल खाते हुए हैं, जबकि हमारे देश में हमारी जनता, संविधान और पार्टी तंत्र का उचित संतुलन नहीं है।

53. बहु-नस्ली यूरोपीय देशों, जैसे स्वीट्जरलैण्ड, बेल्जियम, जर्मनी इत्यादि में साझा सरकार की प्रक्रिया की व्यवहारिकता को अपने संघीय संविधान तथा संघीय पार्टी तंत्र सुसाध्य बना देते हैं, जबकि नस्ली तौर पर एकरूपता वाले राज्यों में केन्द्रीकृत संवैधानिक उसूल वहां के केन्द्रीकृत पार्टी तंत्र से मेल खाता है। इसका मतलब है कि यूरोपीय देशों में वहां के लोगों, वहां के संविधान के चरित्र और उनके पार्टी तंत्र के गुणों में कमोबेश संतुलन कायम किया हुआ है। इसके उलट हमारा संविधान अत्यधिक केन्द्रीकृत, हमारे देश की जनता दुनिया में सबसे अधिक विभिन्नता लिए हुए है तथा पार्टी तंत्र आंशिक केन्द्रीकृत और आंशिक क्षेत्रीयवादी है।

54. आगे, यूरोप के लगभग सभी गठजोड़ एक साझा कार्यक्रम और रणनीति के आधार पर चुनाव के पहले ही बनाये जाते हैं जबकि हमारा करीब-करीब सारा गठजोड़ का व्यापार चुनाव के बाद के समय में चलाया जाता है जिसमें सत्ता की भूख ही मुख्य उद्देश्य होता है।

55. उपरोक्त वर्णित तथ्य हमें यह समझने में सहायता करते हैं कि क्यों हमारी गठजोड़ प्रक्रिया सहज काम नहीं कर सकती और क्यों यह निरन्तर सामंजस्यहीनता, चालबाजियों और संघर्षों से गुजर रही है।

(ड़) कुछ अन्य युक्तियां

56. इनके अतिरिक्त हमारी राजनीतिक प्रक्रिया की अस्थिरता को समाप्त करने के लिए बहुत से लोग नये संवैधानिक सूत्र अपनाने की राजनीतिक युक्तियां अपनाने का सुझाव देते है। उदाहरणतया, हमारे संविधान में ऐसा आवश्यक सुधार लाया जाए जिससे इसे संसदीय रूप की सरकार की बजाए राष्ट्रपति प्रणाली की सरकार बनाने या जिसमें प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्रियों के सीधे चुनाव करना सुनिश्चित करने या लोक सभा का समय 5 साल स्थाई करने वाले विचार, केवल चलते विचार हैं। ये सभी संवैधानिक स्कीमें राजनीति के और अधिक केन्द्रीयकरण की दिशा देती है। स्पष्टतया, क्षेत्रीयवाद की राजनीति को अधिक केन्द्रीयकरण की राजनीति से जवाब देने का सकारात्मक परिणाम नहीं निकल सकता।

(च) एक स्पष्ट नजरिये की आवश्यकता

57. हालात मांग करते हैं कि बहती हुई धारा के साथ फिसलने की बजाए हमारी राजनीतिक प्रक्रिया कहां जा रही है, इस पर स्पष्ट नजरिया अपनाया जाए। एक अस्थिर और अनिश्चित राजनीति गंभीर अन्तरनिहित चुनौती समाए हुए हैं। देश के सामने यही समय है कि वह वास्तविक आधार पर अपने राजनीतिक रसायन को बदले। अगर देश को एक रहना है तो इसको उन मूलभूत उसूलों को तय करना होगा जो इसकी सामाजिक विभिन्नता को उचित उत्तर प्रदान करें और हमारी राष्ट्रीय एकता की नींव का निर्माण करें।

VII. भारत की एकता का आधार इसकी विभिन्नता के साथ

(क) एक लम्बे समय से चल रही समस्या

58. भारत की सामाजिक विभिन्नता के साथ इसकी एकता का सामंजस्य बैठाने वाले मूलभूत उसूल क्या होने चाहिए। यहां, सामाजिक एकता हमारे राष्ट्र की द्योतक है सामाजिक विभिन्नता हमारे लोगों की विभिन्न किस्मों [यानि नस्ली, सांस्कृतिक, भाषाई, धार्मिकता, जातीयता, इत्यादि) को अभिव्यक्ति करती है, जबकि मूलभूत उसूल हमारे राष्ट्रवाद या सामाजिक व्यवस्था (यानि सिद्धान्त (संविधान और सभी तरह के कानून, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, इत्यादि), व्यवहार (नियम, प्रक्रियाएं, इत्यादि) और राज्य ढांचे (विधायिका, कार्यपालिका, प्रशासन, सेना, इत्यादि] का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो हमारे राष्ट्र और इसके विभिन्न घटकों के बीच में माध्यम का काम करते हैं।

59. उपरोक्त सवाल हमारे लोगों द्वारा हालिया दिये गये फैसले से उभरा है जिसने राजनीति में क्षेत्रीकरण का रुझान आगे बढ़ाया है—एक रुझान जो 1989 के

चुनावों से शुरू हुआ, निरन्तर 1991 के चुनावों में यह रुझान चला और 1996 के जनादेश से मजबूत हुआ। इस रुझान की निरन्तर बढ़ती हुई दृढ़ता, भारत की केन्द्रीकृत व्यवस्था से लोगों के असंतोष की अभिव्यक्ति है, जिसने लोगों को शक्तिविहीन बनाया मानव संसाधनों के विकास को रोका और अपराधिकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिक, जातिवाद, हिंसा, गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता, छल-कपट, अनैतिकता, इत्यादि को बढ़ावा देकर राष्ट्रीय एकता को कमजोर किया। जब तक लोगों की मानसिकता और केन्द्रीकृत सामाजिक व्यवस्था के बीच यह खाई उचित तरीके से भरी नहीं जाती, हमारी राजनीतिक प्रक्रिया की गड़बड़ी को सुधारा नहीं जा सकता और भारत की आगे की गति सुनिश्चित नहीं की जा सकती।

60. अगर थोड़ा पीछे हम इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध की राष्ट्रीय घटनाओं पर थोड़ी नजर डालें तो हम पाते हैं कि हमारी सामाजिक विभिन्नता के साथ हमारी सामाजिक एकता के संतुलन की समस्या, वास्तव में चल रही राष्ट्रीयता के शुरूआती दौर से ही हमारा पीछा कर रही है। उस समय यह हिन्दू-मुस्लिम समस्या के रूप में विद्यमान थी। फिर भी, 1947 से पहले का गांधीवादी राष्ट्रवाद (यानि उस युग का प्रभुत्वकारी राष्ट्रवाद) इस सवाल को आपस में ठीक निपटाने में असफल रहे और परिणामस्वरूप देश भारत और पाकिस्तान में बंट गया। विभाजन के मामले में ब्रिटिश उपनिवेशवाद और इस्लामिक राष्ट्रीयतावाद की भूमिका तर्कसंगत तौर पर द्वितीय नम्बर पर थी।

61. इस विभाजन का वास्तविक कारण किसी तरह का धर्म नहीं था, बल्कि राजनीतिक ताकत, आर्थिक संसाधनों, सांस्कृतिक (लिंग विभेदता सहित) मामलों और सुरक्षा तथा पहचान के मामले में बहुसंख्यकों व अल्पसंख्यकों के बीच सम्बन्धों (या बहुसंख्यकों और अल्पसंख्यकों के बीच हिस्सों का अनुपात) का सवाल ही था। लगभग आधी शताब्दी तक कांग्रेस और मुस्लिम लीग इन मसलों पर बातचीत करती रही। कई बार वे समझौतों (उदाहरणतया, 1916 का कांग्रेस-मुस्लिम लीग पैक्ट, 1946 में कांग्रेस और मुस्लिम लीग द्वारा केबिनेट मिशन की योजना को स्वीकार करना इत्यादि) तक पहुंची भी परन्तु वे बार-बार टूटते रहे और आखिरकार 1946 में वे सब ढह गये।

(ख) प्रत्येक सामाजिक इकाई के लिए एक आधारभूत मसला

62. इतिहास दर्शाता है कि सामाजिक व्यवस्था का सवाल जो एक निश्चित सामाजिक समूह (यानि प्राचीन गणों, कबीलों, सामन्ती राज्यों या आजकल के राष्ट्रों) और एक निश्चित सामाजिक इकाई (चाहे वह एक व्यक्ति, परिवार, वर्ग, नस्ली समुदाय, इत्यादि) के बीच अन्तरसम्बन्धों के आधार का निर्माण करता है, यह प्रत्येक

निश्चित समाज या सामाजिक इकाई के लिए हमेशा मूलभूत मसला बनता है। सामाजिक व्यवस्था सामाजिक सम्बन्धों के 5 मुख्य रूपों, यानि राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, सुरक्षा सम्बन्धी और पहचान सम्बन्धी-से सम्बन्ध रखती है और रखती रही है। प्रत्येक समाज और सामाजिक इकाई को अपनी विभिन्न तरह की सामाजिक समस्याओं में परिवर्तन के अनुसार अपनी सामाजिक व्यवस्था में किंचित परिवर्तन या समंजन करना पड़ता है।

63. उपरोक्त वर्णित सामाजिक सम्बन्धों के 5 मुख्य रूप, मानवीय इच्छाओं या आवश्यकताओं, मानसिक, शारीरिक या सामाजिक से सम्बन्धित है और मानव की सशर्त या बिना शर्त की सहज क्रिया का निर्माण करती है। किसी सामाजिक इकाई में ये (एकल या सामूहिक) सभी तरह की सामाजिक एकता या सामाजिक विवाद (युद्ध सहित) का मुख्य कारण बनती है।

64. ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि कोई सामाजिक व्यवस्था जो अपनी निश्चित सामाजिक वास्तविकता से मेल खाती है वह व्यवस्था अपने सामाजिक उद्देश्य के लिए लोगों को प्रेरित कर लेती है और इससे सामाजिक उन्नति में बड़ी उपलब्धियां हासिल होती हैं।

(ग) 1947 के बाद का कांग्रेसी प्रयोग

65. 1947 के बाद के समय में शासक कांग्रेस आई ने एक तरफ गांधीवादी राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य और दूसरी तरफ नेहरूवादी समाजवादी विकास के मॉडल पर चलते हुए घरेलू तौर पर एक मजबूत भारतीय राष्ट्र का निर्माण करना, जिसमें समृद्ध और समतावादी सामाजिक जीवन (गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता और दूसरी सामाजिक बुराइयों से मुक्त) का विशिष्ट उद्देश्य हासिल करने और एशिया में पाकिस्तान की चुनौती को कुचलते हुए भारत को एक क्षेत्रीय महाशक्ति बनाने का उद्देश्य बनाया।

66. आन्तरिक विकास की रणनीति को कांग्रेस पदाधिकारियों (जो उस वक्त सभी स्तरों पर सत्ता में छाए हुए थे) और प्रशासनिक नौकरशाही के गठजोड़ के माध्यम से लागू किया गया, जबकि बाह्य परियोजना पहले की तरह ही विदेश और सुरक्षा विशेषज्ञों के हाथ में रही। दोनों ही उद्यमों ने बर्बादी पैदा की—इसने एक तरफ हमारे मामूली सार्वजनिक संसाधनों को हथियार बनाने और हानिप्रद सार्वजनिक उद्यमों के क्षेत्र में लगातार गैर उत्पादक निवेश किया और दूसरी तरफ हमारी राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं में सभी तरह की सामाजिक बुराइयों को फैलाकर जनजीवन को अधिक कठिन और भयानक बना दिया है।

67. हमारी कमजोर राष्ट्रीय कारगुजारी के दो कारण हैं, एक गांधीवादी राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य का होना जो बहुसंख्यकवाद के उसूल और एक काल्पनिक राष्ट्र

(गांधी के मुताबिक जिसके पूर्वजों ने, बहुत पुरातन समय में ही मानव सभ्यता की ऐसी उच्चतम मंजिल हासिल कर ली थी—जो मानव जाति कर सकती है या पुनः कर सकेगी, यानि जो सर्वोत्तम का प्रतिनिधित्व करती थी) की धारणा के आधार पर कायम था। इस दृष्टिकोण का परिणाम गलत सामाजिक प्राथमिकताओं को अपनाने में निकला। दूसरा कारण नेहरूवादी विकास मॉडल था जिसने विशिष्ट वर्ग पर निर्भर रहते हुए सामाजिक वृद्धि में लोगों की भूमिका की अनदेखी की। यह भूतपूर्व सोवियत संघ और इसी तरह के दूसरे राष्ट्रों के उदाहरणों से पुनः तस्दीक हो जाता है। इन देशों में पार्टी और राज्य नौकरशाही पर निर्भरता रखी गई और लोगों की भूमिका की अनदेखी की गई जिससे उनका विकास मॉडल यानि कम्युनिस्ट व्यवस्था पूरी तरह ढह गई।

(घ) जनता दल और भाजपा परीक्षण

68. 1989 के लगभग दो पुरानी सामाजिक धारणाएं राष्ट्रीय परिदृश्य में उभरीं, जिनमें एक जाति आधारित मंडलवाद था, जिसकी जनता दल और बी एस पी ने वकालत की और वामंपथियों ने समर्थन किया। दूसरा हिन्दू धर्म पर आधारित हिन्दुत्व था जिसे भाजपा द्वारा प्रस्तुत किया गया। ये दोनों ही सिद्धान्त अप्रासंगिक हैं और इनका आशय केवल सम्बन्धित पार्टियों के लिए वोट बटोरना ही था। मंडलवाद की अव्यवहारिकता हालिया लोकसभा चुनावों में जनता दल की घोर हार, बी एस पी को लगे धक्के और वामपंथियों के ठहराव से स्पष्ट हो जाती है। हिन्दुत्व की अव्यवहारिकता इसके चुनावों के बाद के भाजपा सरकार के राष्ट्रीय एजेण्डा से हिन्दुत्व के विलोप से और भाजपा के अपने शासित गढ़ों, यानि राजस्थान और महाराष्ट्र में हार से देखी जा सकती है।

(ड़) एक नये एजेण्डा पर आम सहमति की जरूरत

69. हालिया लोकसभा चुनावों के बाद में एक और अधिक अस्थिर और अनिश्चित राजनीतिक परिस्थिति उचित प्रत्युत्तर की मांग करती है। तीन विभिन्न मुख्य केन्द्रीकृत कार्यक्रम विद्यमान बहु-पक्षीय सामाजिक वास्तविकता के साथ बहुत थोड़ी प्रासंगिकता रखते हैं। ऐसे हालात मांग करते हैं कि सभी राष्ट्रीय और जनवादी ताकतें नजदीक आएं और भारत के हालात से मेल खाने वाले वास्तविक कार्यक्रम पर आम सहमति बनाने की कोशिश करें।

70. जहां तक हमारे दृष्टिकोण का सवाल है हम मानते हैं कि एक ऐसा कार्यक्रम जिसका सार भारतीय लोगों को शामिल करने और उन्हें शक्तिशाली बनाने का हो, वही वर्तमान भारतीय वास्तविकता से निपटने का कार्यक्रम होगा।

(i) अस्थिरता क्यों

71. भारत के सम्बन्ध में पहला सवाल जिसके जवाब की जरूरत है कि देश की राजनीति अस्थिर और अनिश्चित क्यों बन गई है। इसका आधारभूत कारण है कि किसी राजनीति का चरित्र इसकी चुनावी प्रक्रिया से तय होता है जो बदले में निश्चित लोगों के मतदान स्वरूप द्वारा तय की जाती है। इस प्रकार, भारत में राजनीतिक अस्थिरता और अनिश्चितता आवश्यक तौर पर हमारे लोगों की परेशान मानसिकता का इजहार है जो खण्डित जनादेश के रूप में प्रतिबिम्बित हुआ है।

(ii) लोगों की मानसिकता गड़बड़ा गई

72. अगला सवाल जिसके जवाब की जरूरत है कि हमारे लोगों की मानसिकता कैसे गड़बड़ा गई। यह इसलिए गड़बड़ा गई क्योंकि हमारे देश के हालात अत्यधिक दुखदायी और वीभत्स है।

73. संक्षेप में बयान करें, तो हमारी जनसंख्या का लगभग 40 प्रतिशत (यानि 40 करोड़) लोग निहायत गरीब हैं जिनके पास न रोजगार है न घर है, न उचित भोजन है, न बिजली-पानी है यानि कुछ भी नहीं। 20 करोड़ लोगों के लिए स्वच्छ पानी और आधारभूत स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध नहीं है। एक तिहाई जनसंख्या (यानि 32 करोड़ 30 लाख) के पास अपना घर नहीं है। 1 करोड़ गन्दी बस्तियों में रहते हैं। 47 करोड़ लोग पूरी तरह अनपढ़ हैं। 5 करोड़ से अधिक पूर्णतया बेरोजगार हैं, जबकि अर्द्ध बेरोजगारों की संख्या करीब 30 करोड़ है। देश की जनसंख्या का 10 प्रतिशत भाग असमर्थ है जो उपेक्षा में ही जीवन व्यतीत करता है। 10 करोड़ से अधिक कृषि मजदूर (हमारी कुल कार्य शक्ति का 25 प्रतिशत) हमारे समाज की सबसे गरीब सतह है। परन्तु, 50 साल की आजादी के बाद भी उनकी न्यूनतम मजदूरी का बिल अभी तक संसदीय शीत गृह में सीमित होकर रह गया है।

74. महत्वपूर्ण मसले ध्यान दिये बगैर गैर-मसले केन्द्रीय स्तर का स्थान हासिल किये हुए हैं। उदाहरण के लिए भारत की 62 प्रतिशत जनसंख्या गरीब की श्रेणी में आती है और भारत में दुनिया के गरीबों की लगभग 40 प्रतिशत आबादी निवास करती है, फिर भी, भारत 13-14 अरब डालर एक साल में सुरक्षा पर खर्च कर देता है। प्रति व्यक्ति आय के पैमाने से दुनिया में भारत का नम्बर 142वां है। परन्तु यह कुल हथियारों के आयात में पहले नम्बर पर है। लगभग 4.5 अरब डालर मूल्य के सैनिक हथियार हम खरीदते हैं जिससे 8 करोड़ पचास लाख बच्चों की प्राथमिकता शिक्षा का खर्च उठाया जा सकता है, इससे 22 करोड़ लोगों के लिए शुद्ध पेयजल व्यवस्था और 2 करोड़ 20 लाख जोड़ों के परिवार नियोजन का खर्च उठाया जा सकता है। पिछले 50 सालों में नागालैण्ड में 12 लाख नागाओं को नियंत्रित करने के लिए

30,000 करोड़ रुपये से अधिक खर्च (यानि 2.5 लाख प्रति व्यक्ति खर्च) किया जा चुका है। निश्चित ही, यह राजनीतिक आधार पर बहुत पहले ही हल किया जा सकता था। परन्तु महाशक्तिवाद के प्रति मोह ने इस रास्ते को रोके रखा। पिछले 2 सालों में 178600 करोड़ रुपये खर्चे वाली 150 से अधिक नई परियोजनाओं को शुरू करने में असफल रहे हैं, जिससे देश के औद्योगिक विकास को भारी धक्का लगा है।

75. 1997 की यू एन डी पी रिपोर्ट के अनुसार मानव विकास सूचकांक (एच.डी.आई.) के मामले में भारत 174 देशों में 138वां स्थान रखता है, परन्तु यह गरीबी, अनपढ़ता, खराब स्वास्थ्य, बेरोजगारी, बेघरबारता, इत्यादि के क्षेत्र में पहले स्थान पर है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के मुताबिक यहां सबसे अधिक संख्या में मधुमेह, अंधे, टीबी, इत्यादि के रोगी हैं।

एक सर्वे के मुताबिक 80 प्रतिशत भारतीय काम के लिए बाहर जाना चाहते हैं। ब्रेन-ड्रेन बिना रुके चल रहा है। लगभग 6000 उच्चतम ट्रेनिंग प्राप्त भारतीय प्रत्येक वर्ष विदेशों में बसते जा रहे हैं—उनमें से 40 प्रतिशत इंजीनियर, 10 से 12 प्रतिशत डॉक्टर और 15 से 20 प्रतिशत वैज्ञानिक हैं।

76. आर्थिकता के क्षेत्र में दुनिया में भारत का कोई नम्बर नहीं है। जबकि चीन की आर्थिकता अन्धाधुंध गति से बढ़ रही है। भारतीय आर्थिकता निरन्तर एक संकट की तरफ लंगड़ा रही है। पिछले वर्ष देश के कृषि उत्पादन में 2 प्रतिशत गिरावट आई, औद्योगिक वृद्धि हुई और कुल वृद्धि दर 2 प्रतिशत हुई। विशेषज्ञ महसूस करते हैं कि अपने-अपने उच्च वित्तीय घाटों की वजह से देश सार्वजनिक ऋण जाल में फंसता जा रहा है। यह अपनी छाया सम्पूर्ण आर्थिक प्रक्रिया पर डाल रही है।

77. भारत की राजनीतिक प्रक्रिया को अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकरण, जातिवाद और महिला दमन और हिंसा, लगातार गड़बड़ा रहे हैं। ट्रान्सपरेन्सी इण्टरनेशनल के अनुसार भारत दुनिया के सबसे अधिक भ्रष्ट देशों में आठवें स्थान पर है। माफिया संस्कृति चौतरफा फैली हुई है। 1994 की बोहरा कमेटी रिपोर्ट के मुताबिक ''माफिया देश में एक समानान्तर सरकार चला रहे हैं।''

78. कानून का राज वर्तमान लोकतंत्र के सबसे अधिक महत्वपूर्ण मूल सिद्धान्तों में से एक है। परन्तु यह 1947 के बाद से हमारे देश का सबसे अधिक दुरुपयोग और कुप्रयोग वाला क्षेत्र रहा है। पैसा, बाहुबल, बेईमानी और धोखेबाजी ने हमारी जनवादी प्रक्रिया में तबाही मचा रखी है। अब हम ऐसी मंजिल में पहुंच गए हैं जहां राजनीतिज्ञ और पार्टियां कानून के राज की बजाए केवल अपना ही शासन स्थापित करने में दिलचस्पी रखते हैं। जबकि कार्यपालिका और न्यायपालिका कानून के मुताबिक चलने की बजाए एक दूसरे पर सर्वोच्चता सिद्ध करने के लिए बुरी तरह प्रतियोगिता में फंसे हुए हैं।

79. कुछ अपवादों को छोड़कर भारतीय कानून में निरन्तर बड़ी कमियां चल रही हैं। इनमें से बहुत से कानून प्रभुत्वकारी तबके और यहां तक कि अपराधियों के पक्ष में रुझान लिये हुए हैं। ऐसे कानून पक्के तौर पर गरीब के प्रति दुर्भावनापूर्ण अथवा पक्षतापूर्ण हैं। कानूनी अस्पष्टता और असम्बद्धता, कार्यपालिका, न्यायपालिका और पुलिस को अपनी सुविधा के अनुसार कानून तोड़ने-मरोड़ने का अवसर प्रदान करते हैं। विशेषज्ञ रिपोर्टों के मुताबिक लगभग 7 हजार से 8 हजार अप्रचलित पुराने कानून निरन्तर केन्द्र और राज्य सरकारों की प्रतीयमान पुस्तकों में सम्मानजनक स्थान पर दर्ज हैं। वे कार्यपालिका और न्यायपालिका को भी व्यापक अधिकार प्रदान करते हैं। तीन करोड़ के लगभग मामले सुप्रीम कोर्ट सहित न्यायालयों में निरन्तर लम्बित चले आ रहे हैं। इस प्रकार कानून के राज का कमजोर होते जाना भी माफिया राज के उभार के मुख्य कारणों में सें एक है।

80. देश का विदेश सह सुरक्षा मामला अभी भी निरन्तर छोटे देशों के प्रति 'बड़े भाई' वाला रुख अपनाये हुए है। जबकि यू एस ए, चीन इत्यादि जैसी बड़ी शक्तियों के सम्बन्धों में समझौताकारी सह आज्ञाधीन रुख का पालन करता है।

81. नैतिक मूल्यों के सारे अर्थ समाप्त हो गये हैं। हमारे समाज के प्रभुत्वकारी वर्ग का किसी भी तरीके से सत्ता हड़पना और निचोड़ना ही जीवन का मात्र उद्देश्य रह गया है। उनके लिए दोगलापन, चालबाजी और झूठ व्यवहारिक मानदण्ड बन गये हैं।

82. पर्यावरण सवाल और जनसंख्या समस्या गम्भीर आयाम ग्रहण करते जा रहे हैं। सभी पर्यावरण सुरक्षा योजनाएं और जनसंख्या नियंत्रण रणनीतियां सूखे पत्तों की तरह उड़ रही है।

83. देश गम्भीर अवस्था के दौर में चल रहा है। इस हालात का सबसे अधिक नाराज करने वाला पहलू है कि यह प्रभुत्वकारी तबके के हितों की सेवा (शिक्षा, स्वास्थ्य, विज्ञान, दूर संचार, सड़कें, हवाई यात्रा, यातायात, आर्थिक सहायता, पुलिस, गुप्तचर सेवा, नौकरशाही, सेना इत्यादि के माध्यम से) गरीब और मध्यम वर्ग से निचोड़े गये धन (उत्पाद शुल्क कर व्यवस्था, मंहगाई इत्यादि) की कीमत पर करती है। यह कुल मिलाकर निम्न तबके से उच्च तबके को संसाधनों के हस्तान्तरण वाली व्यवस्था बन गई है। यह निरन्तर गरीब और अमीर के बीच खाई बढ़ा रही है—इससे लोगों में अधिक से अधिक अलगाव पैदा हो रहा है। ऐसी गैर न्यायिक और अतर्कसंगत व्यवस्था को तभी बदला जा सकता है जब जनता इसकी पक्षतापूर्ण और अविवेपूर्ण चरित्र से अवगत हो जाए।

83(क). 1998 के चुनाव भारत में सबसे अधिक खण्डित राजनीति लाए हैं। भाजपा के नेतृत्व वाला गठजोड़ (और स्वयं भाजपा) बहुत-सी राजनीतिक उलझनों

और दरारों से त्रस्त है और ये जल्द ही असक्षम सिद्ध होने वाली है।

(iii) भारत में ऐसा क्यों हो गया

84. तीसरा सवाल है कि हमारे देश में चीजें गलत क्यों हो गई हैं। वर्तमान हालात के लिए किस पर जिम्मेवारी जाती है। ये केवल तब हुआ है जब मनोगत और वस्तुगत के बीच मेल नहीं बैठ पाया।

85. हमारे वस्तुगत (यानि आजकल के भारतीय समाज की वास्तविकता) और मनोगत (यानि भारतीय सामाजिक वास्तविकता को हमारा जवाब) के बीच दरार का मुख्य कारण हमारे संविधान में निहित है जो सामाजिक व्यवस्था के लिए आधार बनता है। संविधान की केन्द्रीकृत (या एकात्मक) प्रकृति भारत की मिश्रित प्रकृति या हमारे लोगों के बहुल चरित्र से मेल नहीं खाती है। संविधान जो गांधीवादी राष्ट्रीय दृष्टिकोण से निर्देशित और 1947 के साम्प्रदायिक विभाजन की सामाजिक वास्तविकता के समय निर्मित, जिसमें केवल हिन्दू-मुस्लिम विभेद को ही भारत की वास्तविकता का आधार माना गया है। भारतीय सामाजिक विभिन्नता यानि नस्ली, सांस्कृतिक, भाषाई और क्षेत्रीय के दूसरे विशिष्ट पहलू को एक साधारण और गैर आधारभूत नजरिये से देखा गया। यह सोच कि भारत के हिन्दू धर्म की लाक्षणिकता ही भारतीय लोगों और इस प्रकार राष्ट्र को अभिभूत कर देने वाली प्रकृति है और यही गलत धारणा है। क्योंकि सभी लक्षणों की अपनी महत्वता है और उनके उचित हल की आवश्यकता है। जबकि 1947 के बाद का अनुभव दर्शाता है और 1996 तथा 1998 के लोकसभा चुनावों का व्यवहार यह पक्का करता है कि नस्ली क्षेत्रीय पहलू अन्य सभी पहलुओं से वजनी है।

86. एक केन्द्रीकृत या एकात्मक राज्य स्वभाविकतया एक जैसी राजनीति, आर्थिकता और संस्कृति थोपती है। और पड़ौसी देशों को अपने केन्द्रीकृत प्रभाव के नीचे लाने की कोशिश करती है। यह भारतीय लोगों की विभिन्न श्रेणियों (चाहे नस्ली, सांस्कृतिक, धार्मिक, जातिवादी, इत्यादि) के बीच तनाव उत्पन्न कर देता है जिससे राष्ट्रीय एकता कमजोर हो जाती है। यही कारण है कि 50 वर्ष की आजादी के बाद भी विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच भावनात्मक एकता की कमी है और देश के सामने राष्ट्रीय एकता का सवाल इतना संवेदनशील बना हुआ है।

87. केन्द्र में सम्पूर्ण सत्ता के केन्द्रीयकरण ने स त्ता और धन की लालसा उत्पन्न की है और इनको सबसे अधिक शक्तिशाली प्रेरक बना दिया है। सत्ता और धन के व्यक्तिवादीकरण (सामाजिक पहलू से काटते हुए) ने राजनीति को नैतिकता (यानि एक सामाजिक तत्व) से अलग कर दिया और परिणाम स्वरूप सभी साधनों (अधिकतर अनुचित साधनों) के उपयोग को बढ़ावा दिया।

88. द्वितीयत:, गलती प्रचलित बेईमान राजनीति (जिसकी वकालात मुख्यतया केन्द्रीकृत राष्ट्रीय पार्टियां करती हैं) में निहित है, जिसका एक मात्र उद्देश्य जैसे-तैसे सत्ता हड़पना और पैसा बनाना है। इसका आवश्यक परिणाम अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद और हिंसा के स्थाईकरण में निकला है। जो शक्तिशाली अस्थिरीकरण ताकतों का प्रतिनिधित्व करते हैं और भारतीय राज्य के अस्तित्व को ही चुनौती दे रहे हैं।

89. तृतीयत:, जिम्मेवारी न्यायपालिका पर जाती है जिसने कानून के राज को विकसित करने और उसके क्षरण की रक्षा करने में बहुत कम काम किया। कानून के राज को विकसित करने के लिए उसने मुश्किल से ही कभी जोर से सुसंगत तरीके से भारतीय कानूनी व्यवस्था की अप्रचलित (पुराने) और अप्रासंगिक भाग का पुनर्मूल्यांकन और समयानुकूल बनाने के अनुरूप आधुनिक जनवाद की प्रकृति में हो रहे निरन्तर परिवर्तन को ध्यान में नहीं रखते हुए केवल 1947 की वास्तविकता पर आधारित भारतीय संविधान के आधारभूत ढांचे को सभी समय और दौर में स्थाई मानने के यात्रिंक फैसले पर कायम है। कानून के राज की क्षरण से बचाव के सम्बन्ध में स्थिति यह है कि न्यायपालिका ने बहुत से ऐसे फैसले दिये हैं। जिनमें कार्यपालिका के मनमाने कार्यकलापों (उदाहरण के लिए 1975 के आपातकाल को उचित ठहराना) की भी रक्षा की गई।

90. क्षेत्रीय महाशक्तिवाद की विदेश सह रक्षा नीति में चौथी गलती निहित है। इसने हमारे दो पड़ौसी देशों (यानि पाकिस्तान और चीन) के साथ 4 युद्ध करवाये और हमें पाकिस्तान के खिलाफ टकरावादी रास्ते पर कायम रखा। इसने सैनिकीकरण के क्षेत्र में उच्च लागत निवेश नीति (यानि हथियारों, मिसाइलों, परमाणु हथियारों के प्रयोग, इत्यादि) अपनाकर हमारे कमजोर वित्तीय संसाधनों पर भारी बोझ थोपा है और सन् 1947 से ही यह नीति हमारी ढुलमुल आर्थिकता के लिए सफेद हाथी रही है।

91. पंचम, दोगलापन, बेईमानी और चालबाजी वाला राजनीतिक व्यवहार का स्तर भी हमारी वर्तमान राष्ट्रीय दुर्दशा के लिए जिम्मेवार है।

92. अन्तिम, यह हमारी राष्ट्रीय आर्थिकता है। जिसमें अकुशलता, असंतुलनों, गैर-बराबरी (असमानता) और गैर-टिकाऊपन के लक्षणों की वजह से इसके वित्तीय विकृतियों और उत्पादन की कीमत तथा उत्पादकता, गुणवत्ता और टिकाऊपन की कमियों को ठीक नहीं किया जा सका है। इस प्रकार हमारे सामाजिक जीवन की गुणवत्ता को विकृत कर दिया है।

93. उपर्युक्त तथ्य दर्शाते हैं कि हमारे देश को खतरे, बाहर की बजाए हमारे देश के अन्दर से ही उत्पन्न हो रहा है। यह कानून के राज का क्षरण, राजनीति का

अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, हिंसा, अव्यवस्था, अराजकता, टकराववादी सुरक्षा नीति, धोखा और जालसाजी, अनैतिकता, अकुशल आर्थिकता इत्यादि ही हैं जिसमें हमारे राष्ट्रीय हितों की अनदेखी हो रही है और कदम-ब-कदम हमारा राष्ट्र अस्थिर होता जा रहा है।

94. विभिन्न दृष्टिकोणों द्वारा हमारे देश की गड़बड़ियों के लिए कई बहाने प्रस्तुत किये जाते हैं, उदाहरणतया, अल्पसंख्यक समर्थक धर्मनिरपेक्षता, उच्च जातियों द्वारा दमन, विदेशियों द्वारा उत्पन्न की गई गड़बड़ियों, भारत के बड़े आकार और जनसंख्या, इत्यादि को जिम्मेदार बताना, इस देश की बहु-आयामी सामाजिक वास्तविकता के बारे में गलत अवधाराणाओं का शिकार होना ही है।

(iv) क्या करना चाहिए

95. चौथा सवाल जिसके जवाब की जरूरत है कि हमारी राष्ट्रीय प्रक्रिया की दु:खदाई गड़बड़ अवस्था और उसके कारणों को हमारा क्या प्रत्युत्तर होना चाहिए। वास्तविक उत्तर एक ही है जो एक तरफ भारतीय लोगों के तात्कालिक मुद्दों को और दूसरी तरफ उनकी सामाजिक अवस्था के मूलभूत उसूलों को प्रत्युत्तर दे। इस प्रकार यह दो तरफा कार्यक्रम तात्कालिक और आधारभूत पर जोर देता है।

96. तात्कालिक कार्यक्रम तात्कालिक जन समस्याओं और बेइंसाफी के मुद्दों से मिलकर बनता है। इस वक्त मुख्य जनसमस्याएं हैं—गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता का उन्मूलन करना, शुद्ध पीने का पानी, स्वास्थ्य रक्षा, शिक्षा, सड़कें, यातायात, बिजली, टेलीफोन उपलब्ध करवाना, महिलाओं, काम करने वाले बच्चों, कृषि मजदूरों, आदिवासियों, अपंगों, बूढ़े व्यक्तियों को न्याय देना, सूचना का जन अधिकार, सम्बन्धित लोगों द्वारा सभी विकास कार्यों की देखरेख व निरीक्षण करना, निर्णय लेने की प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी होना, लोगों को खास करके वंचित लोगों को शक्ति प्रदान करना (यानि अधिकार देना) और इसी तरह की अन्य जन समस्याएं हल करने का एजेण्डा बनाना।

97. लोगों के पास बेइंसाफी के मुख्य मामलों (मुद्दों) में गैर कानूनी और अनैतिक विचारों एवं कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जा सकता है। जैसे अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिक, जातिवाद, ठगी, धोखाधड़ी, अराजकता, हिंसा आदि।

98. मूलभूत एजेण्डा (कार्यक्रम) हमारे लोगों (अथवा राष्ट्र) की विविधता की मांग के मुताबिक व्यवस्थागत परिवर्तनों का होना चाहिए।

99. तात्कालिक एजेण्डा के सम्बन्ध में सरकार को तीन कदमों द्वारा लोगों की तात्कालिक समस्याओं को हल करने के लिए राजी किया जाना चाहिए और दबाव डाला जाना चाहिए। (क) सम्बन्धित मामलों में सरकार की नीति/योजना के बारे में

वहां के लोगों को अधिकाधिक माध्यम द्वारा पूर्ण जानकारी देनी चाहिए। (ख) सम्बन्धित समुदाय की प्रतिनिधि कमेटी को सरकार की नीति/योजना को लागू करने के लिए प्रत्येक क्षेत्र (पंचायत अथवा वार्ड न्यूनतम इकाई हो) में सम्मिलित की जानी चाहिए। (ग) सम्बन्धित समुदाय की कमेटी के साथ सभी पार्टियों (जिसमें सभी प्रकार की छोटी एवं बड़ी पार्टियों को बराबर का प्रतिनिधित्व अधिकार हो) की स्थानीय प्रतिनिधि एसोसियेशन हो। यह दो प्रकार की जन सहभागिता सम्बन्धित नीति/योजना को अधिकतम संभव न्यायिक सीमा तक लागू करेगी और घोर भ्रष्टाचार पर प्रभावी जांच रख सकेगी। लोगों के साथ बेइंसाफी के मामलों में (क) विभिन्न मानवीय और लोकतांत्रिक समाजी सांस्कृतिक गतिविधियों में (ख) उनसे संबंधित समस्याओं में निर्णय लेने की प्रक्रिया में (ग) सभी विकास कार्यों के निरीक्षण में (घ) भ्रष्टाचार के खिलाफ लोकपाल द्वारा विभिन्न स्तर पर चलाए गए अभियान में (ड़) स्थानीय सर्वदलीय कमेटी और प्रशासन के संयुक्त तत्वावधान में चलाए गये पर्यावरण संरक्षण, जल-मल निकास व्यवस्था में सुधार और जनसंख्या नियंत्रण के आन्दोलन में लोगों की सहभागिता सुनिश्चित करना।

100. मूलभूत एजेण्डा के सम्बन्ध में भारतीय सामाजिक वास्तविकता, देशों की अन्तरनिर्भरता (अथवा राष्ट्रों का सार्वभौमिकरण) की विश्व वास्तविकता के सन्दर्भ में निम्नलिखित उपायों की मांग करती है।

101. केन्द्रीयकृत राज्य से संघीय-सह-महासंघीय राज्य में सर्वांगीण व्यवस्थागत परिवर्तन करना। संघीयवाद लोकतन्त्र का उच्च रूप है। यह देश की एकता और विविधता को सुरक्षित रखने की सर्वोच्च प्रभावी व्यवस्था है। सामान्यतया, किसी एकात्मक राज्य के मुकाबले संघवाद में स्वतंत्रता प्रमुख आधार है। भारत की अस्थिरता और अनिश्चितता सिर्फ एक संघीय व्यवस्था के तहत ही समाप्त की जा रही है। संघवाद और क्षेत्रवाद को मिलाया नहीं जा सकता। समान नहीं माना जा सकता। ये दो धारणाएं दो भिन्न-भिन्न अर्थ बतलाती हैं। क्षेत्रवाद एक संकीर्ण धारणा है जो हमारे बहुरंगी समाज से मेल नहीं खाती। संघवाद एक व्यापक लोकतांत्रिक धारणा है।

102. महासंघवाद, संघवाद से भी उच्चतर लोकतांत्रिक रूप है। संघवाद या तो संघीय केन्द्र और राज्यों को बराबर का दर्जा देता है अथवा संघीय केन्द्र को ऊपर की स्थिति में रखता है जबकि महासंघवाद, महासंघीय राज्यों की सार्वभौमिकता की स्थिति को स्वीकार करता है।

नये उभर रहे ग्लोबलाईजेशन के युग में महासंघवाद की प्रासंगिकता बढ़ती जा रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ एवं इसकी तमाम संस्थाएं जैसे आई एम एफ, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन के साथ-साथ विभिन्न क्षेत्रीय समुदाय जैसे यूरोपीय समुदाय,

एशियन, नाफ्टा, मरकोसर, आदि महासंघीय मॉडल को प्रदर्शित करते हैं। जिसमें प्रत्येक महासंघीय इकाई एक महासंघीय सार्वभौमिकता रखती है।

103. संघीय सह महासंघीय व्यवस्था दो प्रकार के राज्यों पर आधारित होनी चाहिए—वो राज्य जो केन्द्र को कुछ विषयों—जैसे विदेशी मामलों, रक्षा, संचार, मुद्रा व्यवस्था का कार्यभार सौंप दें और दूसरे वो राज्य जो केन्द्र को एक या दो विषयों अथवा कोई भी विषय नहीं सौंपते बल्कि वे सिर्फ सहयोगी (एसोसिएट) सदस्य ही बने रहना चाहते हैं।

103(क). भारतीय संघीयकरण कानून के राज पर आधारित हो जिसमें लोगों का शक्तिकरण उनका महत्वपूर्ण तत्त्व हो। कानून की व्याख्या का मामला, जैसा कि होता है, न्यायपालिका से सम्बन्धित हो। न्यायपालिका और विधायिका अथवा कार्यपालिका के बीच विवाद को जनमत संग्रह द्वारा तथा आंतरिक मामले बातचीत के जरिये सुलझाये जाने चाहिए।

104. भारतीय संघ मित्रता, सहयोग व सर्वानुमति, परमाणु हथियारों सहित पूर्ण निशस्त्रीकरण, एक इकाई एक वोट के सर्वात्रिक मतदान के जनवादी सिद्धान्त पर संयुक्त राष्ट्र संघ को लोकतांत्रिक बनाने व वीटो पॉवर को समाप्त करने की नीति अपनाते हुए सच्ची विश्व-शांति की स्थापना हेतु कदम उठाए।

यह संघ विभिन्न देशों के साथ सभी द्विपक्षीय विवादों को या तो द्विपक्षीय तौर पर या सार्क तंत्र के जरीये हल करे। यह संघ जम्मू-कश्मीर समस्या का त्रिपक्षीय हल, राज्य पर संयुक्त भारत-पाक या सार्क सहराज्य की स्थापना द्वारा निकाले। इस सहराज्य की जिम्मेदारी राज्य की सुरक्षा, विदेशी मामले व मुद्रा संचालन की हो, जबकि राज्य की अर्द्ध स्वतंत्रता सुनिश्चित करते हुए राज्य में प्रत्येक नस्ली क्षेत्र को अधिकतम सम्भव सीमा तक स्वायत्तता प्रदान की जाए। इससे सार्क के विकास का रास्ता भी खुल जाएगा। जम्मू-कश्मीर समस्या का उचित हल होने पर संघ को रक्षा खर्च में 50 प्रतिशत की कटौती कर देनी चाहिए।

105. भारतीय संघ की आर्थिकता की दिशा तीन बुनियादी सिद्धान्तों—यानि टिकाऊपन, उत्पादकता व समता पर आधारित होगी। इन तीन बुनियादी सिद्धान्तों का तीन तरह के असंतुलनों में समन्वय कायम करके विकसित किया जाए, यानि पर्यावरण व मानव समुदाय के बीच के असंतुलन को—पर्यावरण संरक्षण और मानव संसाधनों को विकसित करके—ठीक किया जाए, जबकि एक मानव (या मानवीय समूह) और दूसरे के बीच असंतुलन को मानवीय असमानता और भेदभाव (यानि गरीब-अमीर, ग्रामीण-शहरी, लिंग असमानता इत्यादि) को मिटाकर दूर किया जाए। विभिन्न वित्तीय क्षेत्रों के बीच की खाई को पाटकर या विभिन्न आर्थिक पहलुओं के बीच

विकृतियों को हटाकर असंतुलन ठीक किया जाए। एक संतुलित आर्थिक वृद्धि के लिए प्रयास किया जाए, जिसे बाजार जनित वृद्धि और राज्य द्वारा संगठित सामाजिक न्याय के दो जुड़वां उसूलों के मार्फत संचालित करना होगा।

106. यह संघ ग्लोबल आर्थिकता के साथ घनिष्ट एकता (यानि जुड़ाव) कायम करे और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा बाजारों, अन्तर्राष्ट्रीय दलाल बाजारों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिए जनवादी, उत्तरदायी, खुली और पारदर्शी कार्यप्रणाली अपनाने के लिए शीघ्र से शीघ्र अन्तर्राष्ट्रीय कानून बनाने का दबाव निरन्तर रखे। अगर अन्तर्राष्ट्रीय विधि निर्माण, नियमों और मानदण्डों को विशिष्ट वर्ग के पक्ष में रियायतें देने सम्बन्धी सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त रखा जाए तो मुद्रा बाजारों, दलाल बाजारों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की ज्यादातर गड़बड़ियों को प्रतिबंधित किया जा सकता है और ग्लोबल आर्थिक प्रणाली में निष्पक्षता कायम रखी जा सकती है।

107. इस संघ का सामाजिक परिप्रेक्ष्य तर्कसंगत मानवतावाद पर आधारित हो तथा इसका तन्त्र तर्कसंगत मानवीय सोच एवं मानवीय तथा जनवादी व्यवहार को बढ़ावा देना हो।

(v) जन-जागरण व जन भागीदारी सबसे पहली आवश्यकता

108. कोई न्याय या निष्पक्षता हासिल नहीं की जा सकती या कहीं भी कोई सामाजिक परिवर्तन नहीं लाया जा सकता है अगर उसमें सम्बन्धित लोग ऐसे परिवर्तन की आवश्यकता से वाकिफ न हों। हर समाज, हकीकत में उस समय के लोगों की सोच से पैदा होता है। जैसे लोग हों उन्हें वैसी सरकार मिल जाती है (यानि यथा प्रजा तथा राजा)—यह पुरानी कहावत सामाजिक सच्चाई को ठीक ढंग से बयान कर देती है। कोई संविधान, संस्था, पार्टी या नेता उचित व न्याय संगत समाज नहीं बना सकते जब तक कि लोगों के दिमागों में निष्पक्षता और न्याय की बात घर न कर जाये।

109. इसलिए यदि बदलाव की प्रक्रिया को तार्किक तौर पर अन्तिम रूप देना है तो लोगों को भागीदार बनाने का सवाल अति महत्वपूर्ण है। लोगों की भागीदारी प्रेरणा पर निर्भर करती है तथा प्रेरणा उनकी तर्कसंगत व भावनात्मक जागृति पर निर्भर करती है। यह करके सीखने वाला सवाल है तथा ऐसा कोई घड़ाघड़ाया सूत्र नहीं है, जो चमत्मकार कर सके।

110. लोगों को भागीदार बनाने की प्रक्रिया के लिए जिन बातों की आवश्यकता होती है वे कमोबेश सभी जगह समान होती हैं, मात्र उनके रचनात्मक अथवा अकुशल उपयोग में लाने का फर्क है। ये आम तौर पर निम्न हैं—

(क) सबसे पहले जिनके बीच काम करना है लोगों के उन समूहों को चिह्नित किया जावे। इन समूहों में मुख्य तौर पर ग्रामीण-शहरी गरीब, बेघरबार, बेरोजगार,

विधवाएं, गरीब तबके की महिलाएं, बाल मजदूर, छोटी बच्चियों, असमर्थों (अशक्त), सफाई कर्मचारी, खेत मजदूर, बंधुआ मजदूर, असंगठित श्रमिक (जैसे भवन निर्माण में लगे मजदूर, रिक्शा चालक इत्यादि), आदिवासी, कैदी, विचाराधीन कैदी, बेसहारा वृद्ध, अवारा तत्त्व (जैसे भिखारी इत्यादि), फैक्ट्री मजदूर, ऑफिस कर्मचारी, विद्यार्थी, युवा, अल्पसंख्यक इत्यादि। इन समूहों को मौटे तौर पर चार तरीकों से वर्गीकृत किया जा सकता है—(i) विशेष समूह (ii) विशेष से सम्बन्धित समूह (iii) समस्या आधारित समूह (iv) ट्रेड यूनियन आधारित समूह।

(ख) विभिन्न पहलुओं का बारीकी से अध्ययन करके चिह्नित समूह हेतु एजेण्डा तैयार करना। अस्पष्ट व सतही समझ का परिणाम अस्थिरता में निकलता है।

(ग) अपने आप को समूह विशेष से भलीभांति परिचित करवाना।

(घ) विचारों के आदान-प्रदान में माहिर होना जो कि मानव सम्बन्धों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(ड़) सामाजिक परिप्रेक्ष्य पर स्पष्ट होना एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य को एजेण्डा के साथ जोड़कर सम्बन्धित लोगों को अवगत करवाना।

(च) विभिन्न सभाओं के जरिये प्रभावित लोगों को जागृत करने हेतु एजेण्डा को प्रारम्भिक बिन्दु के रूप में उपयोग में लाना तथा लोगों को इन समस्याओं व उनके हल के बारे में विचार करने हेतु प्रोत्साहित करना।

(छ) दुनिया, देश व क्षेत्र की समान समस्याओं को लोगों के एजेण्डा के साथ जोड़कर चिह्नित लोगों की जागृति में इजाफा करना।

(ज) हर सभा में भाग लेने वालों में से एक मुख्य टीम का चुनाव करवाना तथा सामाजिक समूह को और आगे संगठित करने हेतु उनके कार्यक्रम पर मुख्य टीम को काम सौंपना और उससे आगे नई मुख्य टीमें बनवाना।

(झ) वांछित स्तर तक लोगों को जागृत व संगठित करके समस्याओं को सम्बन्धित अधिकारियों के समक्ष उठाना व लोगों की इच्छाओं का दबाव बनाकर उनसे हल करवाना।

(ञ) साझे क्रियाकलापों के जरिये लोगों की जागृति लोगों की ताकत में बदल जाती है।

❋ ❋ ❋

भारत और पाकिस्तान का भविष्य साझा है परंतु जम्मू-कश्मीर दोनों के लिए अतिआवश्यक जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक संयुक्त नियन्त्रण में हल निहित

I

1. भारतीय उपमहाद्वीप में नये हालात विकसित हुए हैं। इसका मूलभूत पहलू जम्मू-कश्मीर सवाल (भारत और पाकिस्तान दोनों के लिए जीवन-मरण का सवाल) का अन्तर्राष्ट्रीयकरण होना है। दुनिया द्वारा किसी लम्बे समय से भुलाया गया जम्मू-कश्मीर पुनः अन्तर्राष्ट्रीय एजेण्डा बन गया है। अब यह वास्तव में अन्तर्राष्ट्रीय फोकस का विषय बन गया है। सभी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों और कई देशों ने भारत और पाकिस्तान से आग्रह किया है कि विश्व शांति के लिए यह मसला हल करे।

यह मसला और कहीं से नहीं उठा है। यहाँ भाजपा के कट्टर तत्वों के अलावा कोई नहीं है जिन्होंने पाकिस्तान के खिलाफ अपनी युद्ध-प्रिय धमकियों को भारत के नये परमाणु दर्जे और जम्मू-कश्मीर विवाद से जोड़ा और जिससे गेंद अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की तरफ पहुँच गई है। पाकिस्तान पिछले 50 साल में जो कुछ हासिल नहीं कर सका वह भाजपा के दिग्गजों ने कुछ दिनों के अन्दर ही कर दिखाया। स्वाभाविकतया, इस्लामाबाद इस घटना पर अतिप्रसन्न है, जबकि नई दिल्ली साफतौर पर चिन्ता में है।

II

2. जम्मू-कश्मीर विवाद के अन्तर्राष्ट्रीयकरण का अर्थ क्या है। प्रथमतया, इसका अर्थ है कि जम्मू-कश्मीर मसला एक अन्तर्राष्ट्रीय-चिन्ता का विषय बन गया है। दुनिया ने यह मान्यता दे दी है कि जम्मू-कश्मीर का सवाल भारत-पाक के बीच झगड़े की मूल जड़ है। यह दक्षिण एशिया में तनाव का मुख्य पहलू है। यह न केवल दक्षिण एशिया बल्कि विश्व की शांति और सुरक्षा के लिए चुनौती है। अब यह एक नये परमाणु आयाम के साथ ज्वलन्त बिन्दु में बदल गया है, अगर समय रहते इसे ठीक नहीं किया गया तो यह विश्व शांति और विकास को जोखिम में डाल देगा। यह समझ पी-5 और जी-8 देशों के संयुक्त बयानों और सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव में झलकती है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव और जापान के प्रधानमंत्री सहित विश्व के कई नेताओं ने लम्बे समय से अवलम्बित जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के लिए भारत और पाकिस्तान के बीच मध्यस्थतता करने का प्रस्ताव रखा था। दक्षिण एशिया में टिकाऊ शांति और सुरक्षा केवल जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के आधार पर ही स्थापित की जा सकती है।

द्वितीयत:, इसका अर्थ है कि पाकिस्तान ने एक राजनीतिक अंक प्राप्त कर लिया है जम्मू-कश्मीर अब केवल पाकिस्तान की राष्ट्रीय समस्या ही नहीं है बल्कि दुनिया की समस्या बन चुकी है।

तृतीयत:, इसका अर्थ है कि जम्मू-कश्मीर में खाड़कू प्रतिनिधियों को और अधिक प्रोत्साहन मिलेगा। पहले से ही यह जम्मू क्षेत्र के चार जिलों, यानि डोडा, उधमपुर, पुंछ और राजौरी में फैल चुका है। हाल ही में खाड़कुओं की कार्यनीति में बदलाव आया है इसीलिए उन्होंने अल्पसंख्यक समुदाय को निशाना बनाया है। इसका उद्देश्य अल्पसंख्यक समुदाय में असुरक्षा का भाव पैदा करना नजर आता है। और इसके द्वारा पलायन करवाना तथा बदले में दूसरे इलाकों में प्रतिकार के तौर पर दूसरे अल्पसंख्यक समुदाय का पलायन होने का वातावरण बनवाना ताकि परिणामस्वरूप साम्प्रदायिक विभाजन तेज हो जाए और जो सामाजिक व आर्थिक जीवन को अस्थिर कर दे, इन अर्थों में जम्मू का नया खाड़कुपन घाटी के पूर्ववर्ती खाड़कुपन (जिसने पहले घाटी को हिलाया था) से अलग तरह का है और इसलिए उसे पुराने खाड़कुपन का विस्तार या पहले वाले खाड़कुपन से निकला हुआ खाड़कुपन नहीं समझना चाहिए।

वास्तविक नियन्त्रण रेखा पर भारत-पाकिस्तान के बलों के बीच भिड़न्तें बढ गई हैं।

चतुर्थत:, आने वाले दिनों में भारत के ऊपर जेके सवाल पर मध्यस्थतता स्वीकार करने के लिए दुनिया का दबाव काफी बढ़ जायेगा। जेके मसले को हल करने के लिए द्विपक्षीय तरीकाकार को अमान्य किया जाने लगेगा। भारत इस मामले पर अमेरिका, चीन या कुछ अन्य देशों की अवहेलना कर सकता है। परन्तु संयुक्त राष्ट्र (जिसका भारत एक सदस्य है) से प्रतिरोध करना या उससे चालाकी करना भारत के लिए अत्यधिक मुश्किल होगा। अगर यह कभी भी संयुक्त राष्ट्र की अवहेलना करेगा तो यह केवल सुरक्षा परिषद को ही अपने खिलाफ निमन्त्रण देगा।

पंचम, दक्षिण एशिया में, सार्क की प्रक्रिया रुकी पड़ी है। यहाँ तक कि भारत और सार्क के दूसरे सदस्यों के बीच भी तनाव बढ़ सकता है।

वर्तमान विश्व वास्तविकता हमें संकेत दे रही है कि अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय भारत-पाक टकराव को सदा के लिए सहन नहीं कर सकता।

III

50 वर्ष पुरानी जे के समस्या के क्या ऐतिहासिक सबक है? प्रथमतया, जेके समस्या से आंख मूंदने या सुप्त छोड़ देने से हल नहीं हो सकती है। समय बीतने के साथ यह लुप्त नहीं हुई। इसने विवाद को केवल और अधिक जटिल बनाया है। भारतीय

संसद के 1994 में लिए गए सर्वसम्मत फैसले के मुताबिक जेके भारत का अभिन्न अंग है तथा पाकिस्तान केवल एक आक्रामक है जिसने हमारे इलाके के एक हिस्से पर कब्जा कर रखा है, यह फैसला आने वाली सरकारों के लिए बन्धन है। कोई भी सरकार जो इस मत से भिन्न राय रखेगी वह चल नहीं सकेगी। कोई भी सरकार जनमत संग्रह या तीसरी पार्टी की मध्ययस्थता स्वीकार नहीं कर सकती। यह केवल मसले पर बात कर सकती है, इससे अधिक कुछ नहीं कर सकती। और बात करने का केवल मात्र अर्थ है अन्तर्राष्ट्रीय दबाव से छुटकारा पाना। पाकिस्तानी राष्ट्रीय नजरिया है कि 1947 के विभाजन के बाद से जेके एक अनिर्णित एजेण्डा है और इसीलिए प्रत्येक पाकिस्तानी सरकार का निरन्तर बुनियादी नुक्ता बना हुआ है।

जनमत संग्रह द्वारा जेके समस्या के हल को भारत अन्तिम रूप से नकार चुका है जबकि पाकिस्तानी अभी तक उसे पकड़े हुए हैं।

द्वितीयत:, यथास्थिति, हल का काम नहीं कर सकती है। भारत यथास्थिति से सन्तुष्ट है। इसने प्राय: सलाह दी है कि वह युद्ध विराम रेखा या वास्तविक नियन्त्रण रेखा को भारत व पाकिस्तान के बीच की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा स्वीकार करने को तैयार है। परन्तु पाकिस्तान ने हमेशा इसे रद्द किया है अब कश्मीरी भी यथास्थिति को एक रास्ता स्वीकार करने को तैयार नहीं है।

तृतीयत:, दुनिया में लगभग प्रत्येक देश जेके को भारत व पाकिस्तान के बीच अनसुलझी समस्या के रूप में स्वीकार करता है। कोई भी जे के को भारत का अभिन्न अंग मानने की भारतीय धारणा को स्वीकार नहीं करता है। सम्पूर्ण विश्व समुदाय की इच्छा है कि भारत किसी भी तरह जेके सवाल को पाकिस्तान के साथ शान्तिपूर्ण तरीके से निपटाए। यह सभी द्वारा स्वीकृत है कि जेके एक द्विपक्षीय समस्या है जिसे भारत और पाकिस्तान को जम्मू-कश्मीर के लोगों को शामिल करके हल कर लेना चाहिए। राष्ट्रों के समुदाय के पास जम्मू-कश्मीर समस्या से निपटने के लिए कोई साझा सूत्र नहीं है। इस वक्त तक, भारत या पाकिस्तान पर कोई भी हल थोपने की नहीं सोचता है।

चतुर्थत:, भारत व पाकिस्तान दोनों के पास समस्या से निपटने के लिए हकीकत के नजरिए की कमी है। पहले से तय 1947 की अपनी मानसिकता के तहत दोनों अपनी-अपनी शर्तों पर समस्या का हल करवाना चाहते हैं। प्रत्येक खुद कुछ देना नहीं चाहता, सिवाय इसके कि दूसरा अपनी शर्तों को छोड़ दे। पाकिस्तान आत्म-निर्णय या जनमतसंग्रह पर जोर देता है, जबकि वह पूर्ण रूप से जानता है कि भारत ऐसे किसी प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सकता जिसमें जम्मू-कश्मीर के भारत से अलग होने की संभावना मौजूद हो। भारत ताकत पर आधारित यथास्थिति का प्रस्ताव पेश करता है।

यह पाकिस्तान को मंजूर नहीं है जो पहले से ही जम्मू-कश्मीर राज्य के एक तिहाई हिस्से पर नियन्त्रण किए हुए है।

पंचम:, भारत और पाकिस्तान के बीच जम्मू-कश्मीर पर विभिन्न दौरों में चली द्विपक्षीय वार्ताओं ने कोई परिणाम पैदा नहीं किया। भारत और पाकिस्तान अपने आप एक भी टकराव वाले मसले को हल करने में सफल नहीं हुए हैं। दोनों के बीच चाहे कोई भी समस्या हल हुई हो वह तीसरी पार्टी के शामिल होने का ही नतीजा था।

षष्ठम्, जम्मू-कश्मीर भारत व पाकिस्तान दोनों के लिए अपरिहार्य बन गया है। भारत के लिए इसके धर्मनिरपेक्षतावाद की वैद्यता को सिद्ध करने का प्रतीक है और द्वि-राष्ट्र सिद्धान्त का खण्डन है। पाकिस्तान के लिए यह इसके द्वि-राष्ट्र सिद्धान्त की सच्चाई को प्रदर्शित करने का साधन है।

आखिरी परन्तु अति महत्वपूर्ण पिछले 50 साल के टकराव की राजनीति का रिकार्ड दर्शाता है कि इसने भारत व पाकिस्तान दोनों के लोगों के लिए अत्यधिक खराब परिणाम पैदा किए हैं। यह रिकार्ड इतना वीभत्स है कि दोनों देशों में इस टकराव के संचालक तक भी इसको किसी भी पैमाने से सही नहीं ठहरा सकते हैं। भारत और पाकिस्तान दोनों दुनिया के सबसे गरीब देशों में खड़े हैं। इनकी अपनी अपनी राजनीति में अपराधीकरण और अन्तहीन घोटालों की कड़ी दर्शाती है कि दोनों देशों के सत्ताधारी केवल सत्ता हड़पने और पैसा बनाने के दो तरफा व्यवसाय में मसगूल हैं।

भारत-पाक इतिहास हमें सबक देता है कि जब तक इन दो देशों के बीच अवरोध को तोड़ा नहीं जाता तब तक न तो जेके समस्या हल हो सकती है और ना ही भारत और पाकिस्तान की उन्नति और सम्पन्नता का रास्ता खुल सकता है।

पसन्द साफ है—समझौता या टकराव। समझौता शांति और विकास की तरफ ले जाता है जबकि टकराव युद्ध की तरफ। आज मसला सह-अस्तित्व या गैर अस्तित्व का है।

IV

आजकल दुनिया में मुख्य उभर रहे सामाजिक रुझान क्या है, जो हमें भविष्य का एक वास्तविक दृष्टिकोण प्रदान कर सकें।

सबसे पहले, ग्लोबलाइजेशन या राष्ट्रीय राज्यों की अन्तरनिर्भरता के आम रुझान ने सभी देशों के लिए यह अति आवश्यक बना दिया है कि वे दो तरफा रास्ते का अनुसरण करें। यानि एक तरफ प्रत्येक आर्थिकता ग्लोबल मार्केट के साथ सम्बन्ध बनाए और दूसरी तरफ क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग और एकीकरण के माध्यम से पड़ौसी देशों के साथ मिलकर क्षेत्रीय बाजार का गठन करे। यह दो तरफा रुझान जोर देता है कि भारत-पाक संबंध अन्तरनिर्भरता की तरफ लाये जाए और इनका भविष्य साझा

बनाया जाए। यह इनके लिए आवश्यक बना देता है कि अपने सभी विवादों को हल करें और दोस्ती एवं सहयोग के रास्ते का अनुसरण करे। अगर भारत और पाकिस्तान निरन्तर इस आवश्यकता की अवहेलना करते रहे, जैसा कि लम्बे समय से ये दोनों कर रहे हैं तो इनकी खराब आर्थिक और राजनीतिक कारगुजारी और अधिक गंभीर राजनीतिक-आर्थिक विकृतियों की तरफ ले जाएगी और ये दोनों देश अस्थिरता की तरफ भी जा सकते हैं। चाहें तो ये दोनों एक-दूसरे के नजदीक आकर अपना भविष्य उज्ज्वल करें या एक-दूसरे से लड़कर अपना अस्तित्व ही मिटा लें। सार्क इन दोनों को रास्ता प्रदान कर रहा है।

द्वितीयत:, ग्लोबलाइजेशन का आम रुझान विवादों (चाहें देशों के बीच या किसी देश के अन्दर हों) के शान्तिपूर्ण हल की माँग करता है। इसीलिए, सम्पूर्ण विश्व मांग करता है कि जेके समस्या को जम्मू-कश्मीर के लोगों को शामिल करके भारत व पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय तौर पर हल करें। सैनिक समाधान, चाहे राज्य की अगुवाई में या किसी ग्रुप द्वारा चलाया जाये, आज वह अधिकतर अपनी प्रासंगिकता खो चुका है।

तृतीयत:, ग्लोबलाइजेशन का आम रुझान कश्मीर सहित प्रत्येक समस्या का एक उचित और आपसी फायदेमन्द हल की माँग करता है। इसीलिए कोई भी देश (यहाँ तक कि ताकतवर देश भी) न तो जम्मू-कश्मीर को अभिन्न अंग मानने के नई दिल्ली के सिद्धान्त और ना ही जेके को इस्लामी मुद्दा मानने की इस्लामाबाद व्याख्या या जेके के हल के लिए कई ग्रुपों द्वारा आत्मनिर्णय या जनमतसंग्रह की माँगों को समर्थन देता है। रूस और चीन जो जेके की सीमा से लगते देश हैं तथा ईरान जो एक पड़ौसी देश है, ये सभी एक स्वतन्त्र जम्मू-कश्मीर के विचार का विरोध करते हैं, क्योंकि उनकी मान्यताओं के मुताबिक ऐसा होने पर यह क्षेत्र अमेरिका के प्रभाव क्षेत्र में बदल सकता है।

वर्तमान विश्व के रुझान जो संदेश देते हैं वह है कि केवल दोस्ती, सहयोग शान्तिपूर्ण रास्ता और आपसी समन्वय का एजेण्डा ही भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों को फायदा पहुँचा सकता है, जबकि भारत और पाकिस्तान का परम्परागत टकरावादी दृष्टिकोण न केवल भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों बल्कि दक्षिण एशिया और विश्व के हितों के लिए नुकसानदायक है। इस टकरावादी नजरिए ने दोनों देशों के राष्ट्रीय हितों को पहले से ही अत्यधिक नुकसान पहुँचा दिया है।

V

उपरोक्त लेखे-जोखे से यह निकलता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या का एक ऐसा उचित, न्यायिक और व्यवहारिक हल त्रिपक्षीय आधार पर निकाला जाए जो एक

तरफ भारत और पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों और दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर के लोगों के साथ भारत-पाकिस्तान के लोगों के हितों में समन्वय कायम कर सकें।

भारत और पाकिस्तान के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों को जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक या सार्क सहराज्य कायम करके संतुलित किया जा सकता है और किया जाना चाहिए, जिसमें सहराज्य के जिम्मे जम्मू-कश्मीर की रक्षा, विदेशी मामले और मुद्रा होनी चाहिए। जबकि भारत व पाकिस्तान के लोगों के हितों के साथ जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों में समन्वय जेके को अर्द्ध-स्वतन्त्रता प्रदान करके (जिसमें राज्य की प्रत्येक नस्ली-क्षेत्रीय पहचान को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता प्रदान की जाए) किया जा सकता है और किया जाना चाहिए।

जहाँ तक जम्मू-कश्मीर की विभिन्न पहचानों के भिन्न-भिन्न मामलों और आकांक्षाओं के बीच समन्वय कायम करने का ताल्लुक है (जैसा कि द्वितीय आधारभूत पहलू की आवश्यकता है), इसके लिए राज्य द्वारा संघीय संविधान अपनाया जाना चाहिए, जिसमें एक तरफ प्रत्येक नस्ली-क्षेत्र को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता दी जाए और आगे जिला, ब्लाक व गांव स्तर पर ताकत के विकेन्द्रीकरण करने का प्रावधान हों और दूसरी तरफ एक जम्मू-कश्मीर राज्य की वचनबद्धता पर पहरेदारी की जाए। इस राज्य का एक साझा मुखिया हो और उसका चुनाव नस्ली-क्षेत्रीय कौंसिलों द्वारा किया जाए एवं राज्य का एक साझा उच्च न्यायालय, एक साझा चुनाव आयोग, एक साझा लोक सेवा आयोग, एक साझा पर्यावरण आयोग और एक साझा मानव संसाधन विकास आयोग हो, इन सभी आयोगों की नियुक्ति नस्ली-क्षेत्रीय कौंसिलों द्वारा की जाए जिनमें प्रत्येक नस्ली इकाई का एक प्रतिनिधि हो।

जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक या सार्क सहराज्य, आज की दुनिया में एक नये ग्लोबल निर्देशित विकास मॉडल का एक नया प्रयोग होगा, जो प्रदर्शित कर सकेगा कि कैसे देशों के भिन्न राष्ट्रीय हितों में मेल बैठाया जाए और विभिन्न नस्लों की अलग-अलग आकांक्षाओं और मामलों में समन्वय बैठाया जाए।

VI

त्रिपक्षीय हल की धारणा को लोकप्रिय बनाने के लिए आवश्यक है कि निम्नलिखित कार्य हाथ में लेने चाहिए।

(क) ऐसी ताकतों का साझा मोर्चा बनाना जो जम्मू-कश्मीर को एक गैर-सुलझी समस्या स्वीकार करते हैं और इसका त्रिपक्षीय हल निकालना चाहते हैं।

(ख) जम्मू-कश्मीर समस्या के शान्तिपूर्ण हल की प्रक्रिया में जम्मू-कश्मीर के लोगों को प्रेरित और शामिल करने के लिए दो तरफा तरीका अपनाना—यानि, एक तरफ उन्हें त्रिपक्षीय हल के पक्ष में और बन्दूक की राजनीति के विरोध में संगठित

करना और दूसरी तरफ उनके साथ मिलकर दिन-प्रतिदिन की माँगों को मनवाने के लिए संघर्ष करना।

(ग) त्रिपक्षीय हल के पक्ष में भारत, पाकिस्तान, दक्षिण एशिया और दुनिया के दूसरे भाग के सभी शान्तिप्रिय और जनवादी ताकतों का सक्रिय समर्थन हासिल करना।

(घ) भारत और पाकिस्तान दोनों देशों के लोगों से अपनी-अपनी सरकारों से मांग करने की अपील करना कि वे टकराव और सैनिकीकरण के रास्ते को छोड़ दें, जिसने दोनों देशों के लोगों का जीवन दयनीय बना दिया है।

(ड़) जम्मू कश्मीर की विभिन्न नस्ली क्षेत्रीय पहचानों की सहमति के आधार पर जम्मू कश्मीर समस्या के सर्वसम्मत हल को स्वीकार करने के लिए नई दिल्ली और इस्लामाबाद दोनों से अपील की जाए।

VII

क्या जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय हल को मानना भारतीयता विरोधी या राष्ट्रीयता विरोधी बनता है?

इतिहास दर्शाता है कि कोई भी सामाजिक संरचना, चाहे वह कबीलाई हो या राष्ट्रीय, जब भी इन्होंने सामाजिक वास्तविकता को थामा (पालन किया) और इसकों उचित, प्रत्युत्तर दिया तभी सफल हुई।

आज, त्रिपक्षीय जम्मू-कश्मीर सवाल की वास्तविक प्रकृति है और देश स्तर पर भारत-पाक का साझा नियन्त्रण इसका उचित और व्यवहारिक हल है। उपरोक्त दो धारणाओं की वास्तविकता और उपयुक्तता इस तथ्य में निहित है कि हमारे ग्लोबल युग के रुख के मुताबिक ये जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों को संतुलित करती हैं। यह हकीकत का रास्ता भारतीय और पाकिस्तानी लोगों के सच्चे हितों में है। दोगले राष्ट्रीयवाद की सभी किस्मों (यानि, भाजपा, काँग्रेस, जनता दल और वाम पार्टियां) जो एक तरफ जम्मू-कश्मीर को भारत का अभिन्न अंग मानती है और दूसरी तरफ इसे द्विपक्षीय मसला समझती है। यह दोगलापन उनका राष्ट्रविरोधी और अ-देशभक्तिपूर्ण है।

❋ ❋ ❋

भारत पाक परमाणु विस्फोटों पर आई डी पी का बयान

खतरा अन्दर से है, न कि बाहर से

परमाणु परीक्षणों ने हमारे राष्ट्रीय हितों को हानि पहुंचाई है

हाल ही में भारत और पाकिस्तान के परमाणु विस्फोटों ने न केवल दक्षिणी एशिया के लोगों को झटका दिया है बल्कि विश्व समुदाय को परमाणु हथियारों की तार्किकता पर पुनः सोचने के लिए झकझोरा है। स्वाभाविकतया इसने प्रश्नों की बौछार कर दी है जो प्रत्येक से उचित उत्तर देने की माँग करते हैं।

I

प्रथम सवाल है कि क्या परमाणु हथियार किसी देश को मजबूत और अजेय बना देते हैं? दुनिया का अनुभव इसके उलट है। पूर्व महाशक्ति सोवियत संघ और उसके सोशलिस्ट गुट का एक बड़ा परमाणु हथियारों का भंडार उनकों टूटने से नहीं बचा सका। परमाणु शक्ति आधारित दूसरी महाशक्ति यानि अमेरिका ने एक लम्बे छापामार युद्ध में गरीब विएतनामियों के आगे घुटने टेक दिए। छोटा-सा क्यूबा 50 सालों तक अमेरिकी एटमी हथियारों की धमकी का डट कर मुकाबला करता रहा। हाल ही में सोमालिया के अनियमित सैनिकों ने अमेरिकी नौसैनिकों को अपने देश से खदेड़ दिया। परमाणु ताकत वाला चीन छोटे से टापू ताइवान को कंट्रोल करने में असफल रहा। रूस ने अपने से अत्यधिक कमजोर चेचन्या के हाथों मार खाई थी। आज तक परमाणु हथियारों से दुनिया में कहीं एक भी युद्ध नहीं जीता गया। हिरोशिमा और नागासाकी पर अमेरिका द्वारा बम्ब फेके जाने से पहले ही जापान दम तोड़ चुका था। परमाणु हथियार अपनी विनाशकारी क्षमता के बावजूद व्यवहारिक तौर पर लोगों को डराने और झुकाने में केवल कागजी शेर ही साबित हुआ है।

II

दूसरा प्रश्न है कि सर्वनाशी परमाणु हथियार किसी को सर्वशक्तिमान क्यों नहीं बनाते? ऐसा इसलिए है कि परमाणु हथियार चरित्र के तौर पर मानव विरोधी है और कोई भी मानव विरोधी घटना समाज में फैसलाकुन तत्व नहीं बन सकती।

III

तीसरा प्रश्न है कि क्या भारत का तर्क उचित है कि इसको सीमावर्ती बिगड़ते माहौल का सामना करने के लिए परमाणु हथियारों की जरूरत है? यह दलील 5 तथ्यों द्वारा स्वयं गलत सिद्ध हो जाती है। प्रथम, परिस्थिति सरकार की समझ से उल्ट है क्योंकि परमाणु परीक्षण से पहले भारत की सुरक्षा स्थिति में साफ सुधार नजर आ रहा था, जब भारत के संबंध पाकिस्तान और चीन समेत सभी पड़ोसियों से सुधर रहे थे।

द्वितीय, अगर परमाणु परीक्षण राष्ट्रीय चिन्ता की उपज है तो वाजपेई सरकार ने इस सामरिक प्रश्न पर मंत्रीमंडल की मजूरी क्यों नहीं ली और इसके लिए संसद, राष्ट्रीय एकता परिषद, राजनीतिक पार्टियों, प्रेस आदि को विश्वास में क्यों नहीं लिया? तृतीय, उच्च सरकारी मंडली की अस्पष्ट बयानबाजी और गुप्त तरीकाकार अपने आप में ही इस कार्य के चरित्र को खतरनाक दर्शाता है। चतुर्थ, भारतीय लोगों ने कभी भी इसकी मांग नहीं की और ऐसे परीक्षण इस समय उनकी जरूरत भी नहीं है। पंचम, सरकार ने यह भी स्पष्ट नहीं किया कि दो धमकाने वाले देशों (चीन और पाकिस्तान) के साथ हमारे मसले परमाणु परीक्षणों से कैसे हल होंगे।

IV

चौथा प्रश्न है कि क्या पाकिस्तान का तर्क उचित है कि उसने भारत के परीक्षणों की प्रतिक्रिया दिखाई है? यह पूर्ण तौर पर अप्रासंगिक है। क्योंकि दो गलतियों का जोड़ एक दुरुस्त कार्य नहीं बन जाता। एक गलत पहल और एक गलत जवाब प्रक्रिया को दोगुना गलत बना देता है।

V

पाँचवाँ प्रश्न है कि क्या परमाणु परीक्षणों ने भारतीय सुरक्षा को मजबूत किया है? तथ्य बताते हैं कि देश के विरुद्ध प्रतिबन्धों को न्यौता देते हुए इन विस्फोटों ने उपमहाद्वीप में हथियारों की दौड़ को बढ़ावा देकर हमारे क्षेत्र में परमाणु युद्ध की संभावना को जन्म देने के साथ-साथ दूसरे देशों को परमाणु हथियारों के रास्ते पर प्रेरित कर और चौतरफा युद्ध मनोवृत्ति पैदा करके राष्ट्रीय सुरक्षा को ज्यादा असुरक्षित बना दिया है। भारत की सीमाओं पर नई अस्थिरता का पैदा होना और इसका पहले से चली आ रही अन्दरूनी अस्थिरता से जुड़ जाने से देश की सुरक्षा के लिए उच्च स्तर की चुनौती पैदा हो गई है।

VI

छठा प्रश्न है कि क्या वाजपेई सरकार ने परमाणु हथियारों का रास्ता राष्ट्रीय हितों के लिए अपनाया है? परमाणु हथियारों का रास्ता खास कर इस समय देश के लिए साफ तौर पर आत्मघाती है क्योंकि यह रास्ता केवल मानव विरोधी ही नहीं बल्कि यह संयुक्त राष्ट्र संघ और दूसरी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की अवहेलना करता है। इसने व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबन्ध संधि (सी टी बी टी) पर हस्ताक्षरकर्ता 149-राष्ट्रों के साझे संकल्प की उल्लंघना की है; भारत को विश्व समुदाय से अलग-थलग कर दिया है; भारत को दुनिया में अछूत बना दिया है; संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद का स्थाई सदस्य बनने का भारत का रास्ता रोक दिया है; जम्मू-कश्मीर समस्या को और पेचीदा बना दिया है; भारत के लोगों पर कीमतों का कमरतोड़ बोझ लाद दिया है

(रुपये की कीमत गिरना और इसके साथ महंगाई, बेरोजगारी, अनपढ़ता, बेघरबारता, खराब सेहत, जरूरी चीजों की कमी, आदि) और इसी तरह बहुत सी अन्य समस्याओं को जन्म दिया है। सभी पार्टियां चाहे वो परमाणु हथियारों का सरगर्मी से समर्थन कर रही हैं (जैसे कि भाजपा और उसके सहयोगी दल) या जो आलोचनात्मक समर्थन कर रही है (जैसे कांग्रेस, वामपंथी पार्टियां, जनता दल आदि) एक ही तरह के खाड़कू अंधराष्ट्रवाद और कट्टरपंथी संकीर्ण राष्ट्रवाद के स्तम्भ हैं। यह कट्टर राष्ट्रवाद का ही सिद्धान्त, व्यवहार और संगठन था जिसका पहला नतीजा 1947 के भारतीय विभाजन में निकला और उसके बाद 50 वर्षों के इनके शासन ने भारत को विश्व भिखारी बना दिया। जितनी जल्दी इन गलत राष्ट्रीय ताकतों की गलत भूमिका हम समझ जाएं उतना ही हमारे देश के लिए अच्छा होगा।

VII

सातवां प्रश्न है कि हमारे देश के हितों को खतरा कहां से पैदा हो रहा है? 1947 के बाद के तथ्य साफ बताते हैं कि खतरा हमें अन्दर (नई दिल्ली) से है, न की बाहर से। हमारी एकात्मक प्रणाली द्वारा फैलाई गई बुराइयों, यथा कानून के राज का पतन, राजनीति का अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, फिरकापरस्ती, जातिवाद, हिंसा, अराजकता, पड़ौसियों से टकराव, धोखाधड़ी, अनैतिकता, अकुशल आर्थिकता, आदि जो हमारे देश के हितों की अवहेलना करते हुए देश को आहिस्ता-आहिस्ता अस्थिर कर रही है।

VIII

आठवां प्रश्न है कि परमाणु हथियार निर्देशित प्रतिरक्षा का हमारा राष्ट्रीय विकल्प क्या होना चाहिए? हाल ही का विश्व तजुरबा दर्शाता है कि शान्तिपूर्ण युक्ति का रास्ता (जो राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान के लिए परमाणु हथियारों का त्याग करता है और सैनिक हल को नकारते हुए बात-चीत और आपसी समझौते द्वारा अंदरूनी और बाहरी विवादों को हल करने का रास्ता मानता है) न केवल सुरक्षा का ही वास्तविक यकीन दिलवाता है बल्कि उन्नति का भी विश्वास करवाता है। यह जर्मनी और जापान (दुनिया की दो आर्थिक महाशक्तियां) तथा 14 राष्ट्र जिनके पास सेना नहीं है और एशियन, यूरोपीय समुदाय, लातीनी अमेरिका के देशों का संगठन मरकूसर और इसी तरह के अन्य समूहों के विकास की प्रक्रिया से देखा जा सकता है।

वर्तमान अंतरनिर्भर विश्व एक ऐसे राष्ट्रवाद की मांग करता है जो तर्कसंगत मानवतावाद, लोगों को ज्यादा अधिकारों द्वारा चलाया जाने वाले कानून के राज, टिकाऊ विकास, मूल्य आधारित संस्कृति और शान्ति निर्देशित विदेश और रक्षा नीति पर आधारित हो। ताकत द्वारा शांति की विचारधारा, जैसे कि, राजनीतिक ताकत

बन्दूक की नली से निकलती है, अगर शांति चाहते हो तो युद्ध के लिए तैयार रहो, परमाणु के भय से शान्ति, परमाणु आत्मरक्षा, परम्परागत राष्ट्रवाद के नुक्ते हैं जो सभी अब पुराने पड़ चुके हैं।

IX

नौवां प्रश्न है कि दक्षिण एशिया में युद्ध की तरह के बने वातावरण को बदलने के लिए तात्कालिक क्या किया जाए? इसके लिए जरूरी है कि हम लोगों को नीचे दिये गए एजेण्डा पर जागरूक करें और उनको इसमें शामिल करके अपने नकारात्मक पहलुओं को सकारात्मक में बदलें। यह एजेण्डा न केवल इस क्षेत्र में शान्ति और खुशहाली लाएगा बल्कि विश्व को टिकाऊ बनाएगा, उन्नती और सुख-शांति कायम करेगा। यह मांग की जाए कि—

⋆ भारत और पाकिस्तान परमाणु परीक्षण बन्द करें। परमाणु हथियार न बनाने की घोषणा करे और दक्षिण एशिया को परमाणु हथियार मुक्त क्षेत्र बनाने का संकल्प लें।

⋆ पाँच परमाणु हथियारों वाले देशों का परमाणु हथियारों पर एकाधिकार खत्म किया जाए और ऐसे सभी हथियार संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा (न कि सुरक्षा परिषद) के नियन्त्रण में दे दिये जाएं और वह इनके पूर्ण खात्मे तक प्रबन्ध की पूरी जिम्मेवार हो।

⋆ सभी परमाणु हथियार 25 साल में खत्म कर दिये जाएं।

⋆ जम्मू-कश्मीर समस्या जो भारत-पाक के बीच 50 वर्षीय लम्बे टकराव की जड़ है, इसको त्रिपक्षीय आधार पर हल करने के लिए भारत और पाकिस्तान जल्द बात-चीत शुरू करें।

⋆ अमेरिका और चीन दक्षिण एशिया में अपना-अपना महाशक्ति का खेल बन्द करें, जिसमें चीन गुप्त तौर पर पाकिस्तान को भारत के विरुद्ध उकसाता है और अमेरिका ढके-छिपे कभी भारत को और कभी पाकिस्तान को एक दूसरे के खिलाफ भड़काता है।

गलत फैसले बड़ी कीमत वसूल करते हुए लोगों के हितों के लिए बहुत नुकसानदेह रहते हैं। ऐसे फैसलों को दुरुस्त करना या रद्द करना, जैसे भी हो, कभी देर नहीं करना चाहिए।

❋ ❋ ❋

परमाणु हथियार औचित्य और अनौचित्य

I

उपमहाद्विप के परमाणु विस्फोटों ने न केवल भारत और पाकिस्तान में बल्कि विश्व में एक गंभीर वाद-विवाद पैदा कर दिया है इसके समर्थकों और आलोचकों दोनों की तरफ से कई तरह के तर्क दिये गये हैं। हमारे विचार निम्न हैं—

हम जानते हैं कि शीत युद्ध के बाद के युग में परमाणु-विस्फोट या परमाणु हथियारों का निर्माण अमानवीय और एक नकारात्मक सामाजिक कार्यवाही (चाहे शीत युद्ध के युग में इसकी व्यावहारिकता कुछ भी रही हो) है। अब दुनिया में कहीं भी लोगों को इसकी जरूरत नहीं है और जितना जल्दी परमाणु हथियार नष्ट किये जायें, उतना ही मानवता के लिए अच्छा रहेगा। हमारे विचार व्यावहारिक और नैतिक दोनों मानदण्डों पर आधारित हैं।

II

सोच विचार का पहला बिन्दु है कि नये उभरे ग्लोबलाइजेशन के युग में (या राष्ट्रीय अन्तर-निर्भरता, इसके निश्चित ग्लोबल श्रम विभाजन और सामाजिक शक्तियों के संतुलन के साथ) मानवीय समस्याओं ने ग्लोबल स्वरूप (यानि समस्त मानव समुदाय का साझा मामला) अख्तियार कर लिया है। स्वाभाविकतया, ये समस्याएं ग्लोबल (विश्व-स्तरीय) उत्तर की मांग करती हैं, जो बदले में, ग्लोबल मानव समुदाय के सभी सदस्यों (वर्तमान में राष्ट्रीय राज्यों के रूप में गठित) के बीच दोस्ती और सहयोग की आवश्यकता को पैदा करती है। दोस्ती और सहयोग के रुख के बगैर बड़ी मानवीय समस्याओं—यानि पर्यावरण, जनसंख्या, टिकाऊ विकास, समानता सामाजिक न्याय, मानव अधिकारों, लोगों को शक्तिशाली बनाने—विशेषकर महिलाओं को, देशों के आपसी विवादों और अन्दरूनी झगड़ों को हल करने, इत्यादि का उचित समाधान नहीं किया जा सकता। इन सभी मानवीय समस्याओं, रवैयों और तौर तरीकों में क्रमिक शनैः-शनैः बदलावों ने मानवीय समस्याओं से निपटने के सैनिक हल और युद्ध की प्रासंगिकता को काफी हद तक समाप्त कर दिया है।

आज, युद्धों में एक पक्ष की निर्णायक जीत नहीं होती है। शीत युद्ध—पेरू बनाम चीली, इथोपिया बनाम इरीट्रिया इत्यादि—बिना किसी हार-जीत के समाप्त हुए हैं। युद्धकारी पक्षों को दुनिया के लोगों के भारी दबाव के सामने कुछ दिनों के भीतर ही लड़ाई रोकनी पड़ती है और एक-दूसरे के हितों से समन्वय कायम करते हुए बातचीत से अपने मसलों को हल करना पड़ता है। ऐसा ही मामला अन्दरूनी सशस्त्र संघर्षों पर लागू होता है जहां न तो राज्य शक्ति और न ही ग्रुप खाड़कूपन पूर्ण विजय हासिल करने में सफल हो पाता है, अन्त में समझौते के रूप में परिणाम सामने आता है। सैनिक

ताकत की बढ़ती निष्फलता का परिणाम यह निकल रहा है कि सारी दुनिया के देशों के अपने-अपने सैन्य बजटों में कमी की जा रही है। स्वाभाविकतया, अगर युद्ध, सैनिक समाधान और हथियार दुनिया की व्यवस्था को तय करने वाले अन्तिम पहलू नहीं रहे हैं तो परमाणु हथियार अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्संरचना का औजार भी नहीं बन सकता। इसके उलट यह एक यथापूर्णस्थिति का औजार है तो पुराने चल रहे असमानता और अतर्कसंगत ग्लोबल व्यवस्था को कायम रखने में सहायक होता है। तभी क्यों सभी शक्तियां (यानि, पी-5 जी-8 इत्यादि) जो आज की दुनिया में विशेषाधिकार की स्थिति अख्तियार किये हुए हैं। आज परमाणु हथियारों के समयबद्ध निशस्त्रीकरण के कार्यक्रमों को तय करने के प्रति झुकाव नहीं रखती हैं। भारत, पाकिस्तान या अन्य कोई देश जिसने परमाणु हथियारों का रास्ता अपनाया है वह भी अपने अति राष्ट्रीय हितों से निर्देशित होता है। परमाणु हथियारों पर एकाधिकार को तोड़ने का रास्ता पी-5 राज्यों के परमाणु क्लब में प्रवेश लेना नहीं है, बल्कि परमाणु हथियार की राजनीति (परमाणु बम का अन्तिम उद्देश्य) का विकल्प पेश करना है।

परमाणु हथियार को सामाजिक व्यवस्था का एक पहलू मानने की धारणा उन परम्परागत सिद्धान्तों का आधुनिक संस्करण मात्र है जिनकी मान्यता के मुताबिक ''राजनीतिक शक्ति के सवाल का निर्धारण सैनिक शक्ति के रूप में होता है'' या ''राजनीतिक शक्ति बन्दूक की नली से निकलती है'' या ''अगर तुम शांति चाहते हो, तो युद्ध के लिए तैयार हो जाओ''—राजनीतिक शक्ति के ये सब परम्परागत सिद्धान्त अपनी अधिकतर तीव्रता खो चुके हैं, क्योंकि ये सिद्धान्त पुराने सामाजिक श्रम विभाजन (यानि गण, कबीला, कृषिकारी या औद्योगिक) और इसके एक निश्चित सामाजिक ताकतों के संतुलन से पैदा हुए, इन सिद्धान्तों का वर्तमान ग्लोबल श्रम विभाजन और इसकी सामाजिक ताकतों के संतुलन से मेल नहीं बैठता है। इसी तरह परमाणु हथियार को 'भय से युद्ध रोकने वाला' या एक 'शांति कायम रखने वाला' पहलू मानने का प्रस्ताव भी अज्ञान भरा है। परन्तु परमाणु हथियारों का सम्पूर्ण इतिहास दर्शाता है कि ये हथियारों की दौड़ को हमेशा बढ़ाते रहे हैं, उदाहरणतया, यू एस बनाम सोवियत संघ, नाटो बनाम सोवियत ब्लाक, यूएस बनाम चीन, भारत बनाम पाकिस्तान के बीच। क्या कोई इस सच्चाई को झुठला सकता है कि हथियारों की दौड़ का उद्देश्य हमेशा युद्ध जीतना होता है ना कि शांति प्राप्त करना? शांति के उद्देश्य और रणनीति को युद्ध के साधन से आगे कभी नहीं बढ़ाया जा सकता। एक समान शक्ति संतुलन की स्थिति युद्धकारी पक्षों के अच्छे इरादों का परिणाम नहीं होती बल्कि मात्र संयोग का पहलू होती है।

नाटो और सोवियत ब्लाक के बीच युद्ध परमाणु बम की वजह से नहीं रुका था, बल्कि सोवियत संघ और चीन में फूट और सोवियत संघ तथा इसके ब्लाक (जो

आखिरकार छिन्न-भिन्न हो गया) की शनैः-शनैः छिन्न-भिन्न होती आर्थिकता इसका मुख्य कारण बनी।

III

ध्यान देने लायक दूसरा बिन्दु यह है कि ग्लोबलाईजेशन के नये युग में किसी देश की बाह्य शांति और सुरक्षा मुख्यतया परमाणु हथियारों पर आधारित सुरक्षा नीति से सुनिश्चित नहीं की जा सकती है बल्कि एक शांतिपूर्ण विदेश सह सुरक्षा नीति अपनाने से संभव है जो मसलों (विवादों) को लेने और देने के उसूल से हल करने की दिशा अपनाती है। शीत युद्ध के बाद के दौर में सारी दुनिया में बहुत से देशों के अन्दर और बाहर चल रहे विवादों को विरोधी पक्षों के हितों में समन्वय कायम करके हल किया गया है। युद्ध की संभावना तभी उभरती है जब दुनिया विवादित हिस्से पर आवश्यक ध्यान नहीं देती है तथा विरोधी पक्षों में से दोनों या एक पक्ष अपनी ही शर्तो पर जोर देते रहते हैं, ऐसा ही भारत-पाक के बीच जम्मू कश्मीर मसले पर हो रहा है।

भारतीय और पाकिस्तानी दोनों पक्षों ने हमेशा अपने ही विकल्प को एक दूसरे पर थोपने पर जोर दिया और किसी ने भी अपने हितों को दूसरे के हितों के साथ संतुलित करने का प्रयास नहीं किया। इसीलिए, ये दोनों अपनी वार्ताओं के दौरान भी टकराव के रास्ते पर खड़े रहे हैं। इस रास्ते से ये दोनों देश दीर्घ-शीत-युद्ध, सैनिकीकरण और तीन युद्धों के कारण दुनिया के असाध्य बीमार देशों की श्रेणी में बदल गये हैं।

अब परमाणु-हथियारों ने उनकी बीमारी को नया आयाम दिया है। भारतीय उप महाद्वीप में हथियारों की दौड़ को तेज करके, देश का दुश्मन नम्बर एक चरित्रित: करते हुए चीन को भड़काकर, इस क्षेत्र में परमाणु युद्ध की सम्भावना पैदा करके, दूसरे देशों को परमाणु हथियारों का रास्ता पकड़ने को प्रेरित करके, चारों तरफ युद्ध की मानसिकता पैदा करके, विश्व समुदाय से भारत को अलग-थलग करके, विश्व जनमत की अवहेलना करके और देश के खिलाफ प्रतिबन्धों को न्यौता देकर इसने हमारी बाह्य सुरक्षा को और अधिक असुरक्षित बना दिया है।

हमारा देश शांतिपूर्ण विदेश सह-रक्षा नीति अपनाकर हमारी बाह्य शांति और सुरक्षा को सुनिश्चित कर सकता है, जिसके अनुसार एक तरफ जम्मू-कश्मीर समस्या को त्रिपक्षीय आधार पर पाकिस्तान के साथ हल करें और चीन के साथ सीमा विवाद को या तो विश्व न्यायालय के फैसले या आपसी सहमति पर आधारित आयोग के पंचाट से हल करे।

IV

ध्यान देने योग्य तीसरा बिन्दु है कि ग्लोबलाइजेशन के नये युग में किसी देश की आन्तरिक स्थिरता को मुख्यता अपराध, हिंसा, भ्रष्टाचार, महिला-दमन,

साम्प्रदायिकता, भूख, गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता, अनपढ़ता, खराब स्वास्थ्य इत्यादि को हटाकर एवं कानून का राज, मानव अधिकारों की गारंटी, सामाजिक न्याय, लिंग समानता, अल्पसंख्यकों और कमजोर तबकों के अधिकारों की रक्षा इत्यादि, द्वारा जनता के जीवन स्तर की गुणवत्ता को सुधारकर ही सुनिश्चित किया जा सकता है।

तथापि, हमारे देश में 50 साल की आजादी के बाद भी आबादी का लगभग 40 प्रतिशत हिस्सा पूर्ण गरीबी का जीवन जी रहा है, 20 करोड़ से अधिक बिना स्वच्छ पीने के पानी के रह रहा है और आधारभूत स्वास्थ्य सुविधाओं से भी वंचित है। एक तिहाई से अधिक जनसंख्या के पास अपना घर नहीं है। एक करोड़ लोग गंदी बस्तियों (स्लम) में जीवन बसर करते हैं। लगभग 47 करोड़ लोग पूर्णतया अनपढ़ है। 5 करोड़ से अधिक पूर्ण बेरोजगार हैं। जबकि अर्द्ध-रोजगार प्राप्त लोगों की संख्या लगभग 30 करोड़ है। देश की जनसंख्या का 10 प्रतिशत भाग असमर्थ है जो अवहेलना का जीवन जी रहा है। 10 करोड़ से अधिक कृषि मजदूर हमारे समाज का सबसे अधिक गरीब तबका है।

उपरोक्त वर्णित हालात के मद्देनजर हमारे लोगों की पहली प्राथमिकता परमाणु हथियार बनाना नहीं बल्कि अपने जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने की कार्य-योजना बनाना होनी चाहिए। परमाणु हथियार किसी समस्या के हल की बजाए केवल लोगों के जीवन को अधिक दयनीय और कठिन बनाने का रास्ता देते है।

V

ध्यान देने योग्य चौथा बिन्दु है कि ग्लोबलाइजेशन के नये युग में किसी देश के राष्ट्रीय हितों की सेवा एक ग्लोबल दिशा या अन्तर-निर्भर राष्ट्रीयतावाद के द्वारा ही की जा सकती है। यह राष्ट्रीयतावाद आवश्यक तौर पर एक न्यायिक, उचित और तर्कसंगत जनवादी प्रणाली के निर्माण की दिशा में निर्देशित होगा जो एक तरफ कानून के राज पर आधारित होगा तो दूसरी तरफ लोगों को शक्तिशाली बनाकर इसे लागू करने के उसूल का पालन करेगा, टिकाऊ आर्थिकता को विकसित करने, जिसमें वृद्धि, समता और टिकाऊपन के लक्षण हों, जनवादी व्यवहार के स्तर को बढ़ावा देने, पर्यावरण सुरक्षा करने, जनसंख्या नियंत्रण का उचित प्रबन्ध करने और एक तर्कसंगत मानवीय दृष्टिकोण पैदा करने वाला होगा।

तथापि, हमारे देश में एक केन्द्रीकृत और अधिनायकवादी प्रणाली, अप्रचलित (पुराने) और रहस्यपूर्ण जटिल कानूनों, राजनीति का अपराधीकरण, अकुशल और उच्च लागत वाली आर्थिकता, दोगलापन, क्षेत्रीय प्रभुत्ववादी विदेश सह-सुरक्षा नीति और सबसे ऊपर बहुसंख्यक राष्ट्रीयतावाद हमारे राष्ट्र की नैया को निरन्तर झकझोर रहे हैं।

VI

ध्यान देने योग्य पाचवां बिन्दु यह है कि ग्लोबलाइजेशन के नये युग में अपने-अपने देशों के सुरक्षा बजटों में क्रमिक कमी करने का सुअवसर मिल गया है। और हालांकि दुनिया में राष्ट्रीय सुरक्षा खर्च कम हो रहे हैं, परन्तु दुर्भाग्यवश दक्षिण एशिया और खासकर भारत और पाकिस्तान के सैनिक खर्चे निरन्तर बढ़ते जा रहे हैं।

परमाणु हथियारों ने इस क्षेत्र के देशों पर और अधिक आर्थिक बोझ बढ़ा लिया है। अकेले भारत में, सरकार के अपने अनुमानों के मुताबिक सुरक्षा बजट आवंटन से लगभग 20,000 करोड़ रुपये अधिक खर्च होंगे। इसके अलावा इस परिस्थिति की मांग बन गई है कि भय दिखाकर युद्ध निवारण को विश्वयनीय बनाने के लिए लगभग 16,000 करोड़ रुपये प्रति वर्ष निरन्तर अतिरिक्त खर्च करने होंगे।

VII

ध्यान देने योग्य अन्तिम सवाल है कि ग्लोबलाइजेशन के नये युग में परमाणु हथियार की क्षमता किसी देश की विशिष्ट प्राप्ति नहीं होती और उसके राष्ट्रीय हितों की सेवा नहीं करती। ऐसा इसलिए है, क्योंकि हमारा युग उपनिवेशवाद (जिसमें ब्रिटिश साम्राज्य में सुर्य भी नहीं डूबता था), का युग नहीं हैं। वह युग इतिहास में समा चुका है। हम अब ऐसे युग में प्रवेश कर रहें हैं जहां राष्ट्रीय प्रभुत्ववाद या महा-शक्तिवाद खात्मे की तरफ जा रहे हैं। ग्लोबलाइजेशन की मांग बराबरी के आधार पर दोस्ती, सहयोग और भागीदारी की है। जबकि परमाणु बम युद्ध और टकराव को जन्म देते हैं। यही कारण है कि इस नये युग में यह अप्रासंगिक है और यह परम्परागत हथियारों के साथ ही सीमित हो गया है और इसकी जगह युद्ध शस्त्रों के म्युजियम में तय हो चुकी है।

हमारे मामले पर नजर डालें तो नई दिल्ली वकालात करती है कि परमाणु परीक्षण करने में हमारा प्राथमिक उद्देश्य राष्ट्रीय सुरक्षा को मजबूत करना था। परन्तु परमाणु विस्फोट के बाद के समय में प्रत्येक भारतीय परमाणु हमले की सीमा में आ गया है। शांति के बजाए, इसने न केवल भारत बल्कि सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को ओर अधिक असुरक्षा के घेरे में ले लिया है। जम्मू-कश्मीर समस्या या भारत-चीन सीमा विवाद को हल करने के हालात पैदा करने के बजाए इसने इनके हल को और अधिक जटिल बना दिया है।

परमाणु परीक्षण के पक्ष में दूसरा तर्क था कि परमाणु क्षमता भारत की अन्तर्राष्ट्रीय हैसियत में बढ़ोतरी कर देगी। यह भारत को विश्व की छठी शक्ति का दर्जा हासिल करवाने में सहायक होगी। यह सुरक्षा परिषद में स्थाई सीट हासिल करने के योग्य बना देगी। यह दक्षिणी एशिया में भारत का दर्जा बढ़ा देगी। परन्तु इसने हमारे

लिए केवल राजनीतिक अलगाव, आर्थिक दण्ड और निषेध, वित्तीय बोझ, हथियारों की दौड़, असुरक्षा, बढ़ता हुआ खाड़कुपन और पाकिस्तान के साथ परमाणु टकारव की संभावना पैदा की है। भारत के लिए सुरक्षा परिषद में स्थाई सदस्य बनने या पी-5 परमाणु क्लब में प्रवेश का कोई अवसर नहीं है।

एक और तर्क है कि परमाणु विस्फोट भारतीय विज्ञान और तकनीकी का एक चमत्कार था। परन्तु, साधारणतया यह एक भोला-भाला बयान है। आज, परमाणु भौतिकी एक पुराना विज्ञान बन गया है और परमाणु तकनीकी को विश्व मंडी में आसानी से हासिल किया जा सकता है।

पुनः एक और तर्क है कि पड़ौसी के बिगड़ते वातावरण के मद्देनजर ही परमाणु विस्फोटों की आवयश्यकता उत्पन्न हुई थी। परन्तु जब हमारे 40 प्रतिशत लोगों को दो समय का भोजन उपलब्ध नहीं है। तब परमाणु-आयुधों को फोड़ना क्या हमारा उचित प्रत्युत्तर बनता है। दुनिया में अत्यधिक पिछड़े और गरीब देश होने के रास्ते यह हमारा सामाजिक और राष्ट्रीय दायित्व बनता है कि मेलमिलाप और समझौते पर आधारित शांति की नीति अख्तियार करके और टकराव व युद्ध की पुरानी नीति को रद्द करके (जिसने प्रतिकूल हालात पैदा करने में सहायता की है), हमारे चारों तरफ की प्रतिकूल परिस्थितियों को समाप्त किया जाय।

VIII

परमाणु परीक्षण करना एक भारी गलती है। भारत का आज या भूतकाल में कभी भी परमाणु परीक्षण करने का कोई औचित्य नहीं बनता था, चाहे शासकों की राजनीतिक मजबूरियां कुछ भी क्यों न रही हों।

दक्षिण एशिया में परमाणु खतरा उत्पन्न करने में पाकिस्तान की नकारात्मक भूमिका भारत से कम नहीं है।

हमारे लोग अगर सही नजरिये पर अडिग होकर चलें तो कभी भी दुनिया में भारत की शाख को पुनः प्रतिष्ठित कर सकते हैं। इसके लिए हमें सत्ता और धन निर्देशित तर्क के नजरिये की जगह निष्पक्षता और न्यायिकता निर्देशित तर्कसंगतता का नजरिया अपनाना होगा। यह वही सत्ता और धन निर्देशित तर्क है जिसको व्यावहारिकता के नाम पर और परम्परागत पैमानों के सहारे यथास्थितिवादी ताकतें भारत के साथ-साथ पूरे विश्व में पुरानी असमतावादी और अधिनायकवादी व्यवस्था को कायम रखने के लिए उपयोग करती है।

❋ ❋ ❋

समृद्ध दक्षिण एशिया के निर्माण के लिए इसे टकराव और परमाणुरहित क्षेत्र बनाया जाए

I

1. दक्षिण एशियाई क्षेत्र जिसमें राष्ट्रीय राज्य (यानि भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालद्वीव) सम्मिलित हैं, इनमें मानव समुदाय का पांचवां भाग (यानि लगभग 150 करोड़ लोग) निवास करता है, इनका साझा इतिहास, इनकी सामाजिक नस्ली घनिष्टता और एक प्राचीन सभ्यता है। यह सुसम्पन्न जैव-विविधता और प्राकृतिक संसाधनों के साथ भौगोलिक तौर पर सटे हुए है। आज तक यह विश्व का अत्यधिक गरीब, सबसे अधिक अनपढ़, अत्यधिक कुपोषण और महिलाओं और बच्चों के लिए सबसे कम संवेदनशील क्षेत्र बना हुआ है।

2. सात राष्ट्रों की सामूहिक वार्षिक प्रति व्यक्ति आय 309 डॉलर है, जो अफ्रीका के उप-सहारा क्षेत्र की 555 डॉलर से बहुत नीचे है। इन देशों की अलग-अलग राष्ट्रीय आय दुनिया में सबसे कम आय वाले देशों में से है, जिसमें निम्नतम भूटान की 180 डॉलर और मालद्वीव की उच्चतम 820 डॉलर है।

अनुमानित तौर पर इन देशों में आधे बच्चे कम वजन के होते हैं और 22 करोड़ से अधिक लोग स्वास्थ्य सुविधा हासिल नहीं कर सकते हैं। करीब आधे लोग अनपढ़ हैं और 40 प्रतिशत गरीबी की रेखा के नीचे हैं। इनमें बच्चों और महिलाओं की हालत दुखदायी है।

3. दक्षिण एशिया में 12 करोड़ 60 लाख बच्चों के लिए प्राथमिकता शिक्षा, 69 करोड़ के लिए बुनियादी स्वास्थ्य सुविधा, 71 करोड़ लोगों के लिए साफ पीने का पानी, 8 करोड़ 70 लाख बच्चों के लिए भरपूर पोषण और 28 करोड़ 70 लाख विवाहित जोड़ों के लिए परिवार कल्याण सेवा के प्रावधानों की आवश्यकता है। इन सबके लिए बड़ी मात्रा में धन की जरूरत है। परन्तु इस क्षेत्र के दो सदस्य, यानि भारत और पाकिस्तान केवल अपने सुरक्षा ढांचे पर लगभग 55000 करोड़ रुपये वार्षिक खर्च करते हैं। जिसमें भारत प्रति व्यक्ति 10 डॉलर और पाकिस्तान प्रति व्यक्ति 26 डॉलर इस मद में खर्च करता है। स्पष्टतया, भारत और पाक के सुरक्षा प्रबन्ध पर खर्च होने वाला केवल एक साल का बजट ही अनपढ़ता, खराब स्वास्थ्य, अशुद्ध पीने का पानी की समस्याओं को मिटाने के लिए काफी होगा।

II

4. दक्षिण एशिया दुनिया का सबसे अधिक पिछड़ा क्षेत्र क्यों बना है? इसका कारण क्षेत्रीय सहयोग और दोस्ती के तरीके का पालन नहीं करने में निहित है। इस क्षेत्र

के दो बड़े देश यानि भारत और पाकिस्तान, जो क्षेत्र की 85 प्रतिशत जनसंख्या समाए हुए हैं, अपनी उत्पत्ति के समय से ही लगातार टकराव और युद्ध के रास्ते पर चले आ रहे हैं। इसका परिणाम यह है कि इन दोनों ने अपने-आपको सीमान्त ग्लोबल खिलाड़ी बना लिया है और दक्षिण एशिया को विश्व में अत्यधिक दयनीय क्षेत्र में बदल दिया है।

III

5. विभिन्न क्षेत्रीय समूहों-जैसी ईसी (यूरोपियन समुदाय), एशियन, इत्यादि की तेज आर्थिक वृद्धि से सीखते हुए 1985 में 7 दक्षिण एशियाई देशों ने दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) बनाया। परन्तु, इसके प्रारम्भ से ही, सार्क की वास्तविक शुरूआत रुकी हुई है। जब कभी इसमें दोनों को साथ मिलकर चलाने की कोशिश की है तब-तक भारत-पाक दुश्मनी ने एक रूप में या दूसरे रूप में इन कोशिशों को नाकामयाब कर दिया। इसकी अधिकतर पूर्ववर्ती मिटिंगें मुश्किल से ही कोई सार्थक परिणाम निकाल पाई। भारत-पाक टकराव हमेशा ही इसकी गतिविधियों में मुख्य रोड़ा बना रहा है।

6. संयुक्त राष्ट्र के अनुमान के मुताबिक सार्क के 7 सदस्यों के बीच उनके कुल विश्व व्यापार का मुश्किल से 3 प्रतिशत से थोड़ा अधिक व्यापार होता है जबकि इसके उलट यूरोपियन समुदाय आपस में 80 प्रतिशत और एशियन देश आपस में 20 प्रतिशत व्यापार करते हैं। ग्लोबल ट्रेड डेवलपमेंट केन्द्र की तरह जो इस शताब्दी के अन्त तक वर्तमान 3 बिलियन डॉलर के कुल व्यापार की पांच गुना (यानि 15 बिलियन डॉलर) की व्यापार क्षमता तक पहुंचा देगा, दक्षिण एशिया का एक कार्यकारी साझा बाजार भी ऐसा कर सकता है। परन्तु यह सब वर्तमान रूप से सार्क द्वारा सम्भव नहीं हो सकता है।

7. 1997 में 9वें माले सार्क सम्मेलन ने कुछ गतिरोध तोड़कर आशा की किरण पैदा की कि दक्षिण एशिया के वरियता आधारित व्यापार प्रबन्ध के तहत 2001 तक कुछ विशिष्ट उत्पादों पर व्यापार प्रतिबन्ध समाप्त कर दिए जाएंगे और यह एक स्वतंत्र व्यापार क्षेत्र बन कर क्षेत्रीय विकास की गति को तेज कर देगा। अब हालिया भारत-पाक परमाणु परीक्षणों ने इस आशा को हिला दिया है। अब यह भय है कि संभावित भारत-पाक परमाणु हथियारों की बढ़ती दौड़ दक्षिण एशिया के हालात को और अधिक खराब कर सकती है।

8. दूसरे 5 सार्क सदस्य प्राय: शिकायत करते हैं कि भारत-पाक की पुरानी दुश्मनी ही केवल मात्र उनकी एसोसियन के गैर-निष्पादन का कारण है। वे महसूस करते हैं कि भारत और पाकिस्तान के बीच दोस्ताना सम्बन्धों को विकसित किये बगैर

सार्क परिवर्तन का माध्यम नहीं बन सकता है। इनमें से प्रत्येक ने अपने तरीके से इस जड़ता को तोड़ने के लिए कूटनीतिक प्रयास किये हैं। इनमें से कुछ ने तो द्विपक्षीय मसलों को भी सार्क ढांचे के अन्दर लाने का सवाल खड़ा करने की कोशिश भी की है परन्तु इन सबका इन दोनों सदस्यों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। आज, उनकी आशंका कई गुना बढ़ गई है जब उनका क्षेत्र विश्व में अत्यधिक परमाणु युद्ध के खतरे वाला क्षेत्र बन गया है।

9. एक साझा बाजार के लिए इसके सदस्यों के बीच दोस्ताना, सहयोगी और भागीदारी वाले रुख की आवश्यकता है। सैनिकीकरण और हथियारों की दौड़ को पैदा करने वाली टकराव की पद्धति साझा बाजार का निर्माण नहीं कर सकती। जब तक द्विपक्षीय विवादों और उनसे सम्बन्धित शीत युद्ध की नीतियों को ठीक नहीं किया जाता तब तक सहयोग का सवाल खोखली बातें ही साबित होंगी।

IV

10. यूरोपियन समुदाय और एशियान का ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि ये दोनों क्षेत्रीय समूह भी उनके अपने-अपने सदस्य देशों के बीच परम्परागत टकराव की राख में से उभरे हैं। यूरोपियन सुमदाय द्वितीय विश्व युद्ध के ढेर और इसी के दो पुराने खिलाड़ियों—जर्मनी और फ्रांस की सहस्त्राब्दि पुरानी ऐतिहासिक दुश्मनी से उभरा है। एशियान का उद्‌भव मलेशिया और इण्डोनेशिया के बीच 1960 के दशक के शुरू में विकसित हो रहे विवाद के सन्दर्भ में हुआ, जिस विवाद का समय रहते निवारण कर दिया गया। इसने आपसी समझ कायम होने के लिए 10 वर्ष का समय लिया।

11. फिर भी, क्षेत्रीय सहयोग के रास्ते ने इन दो क्षेत्रीय समूहों के बीच न केवल उनके द्विपक्षीय मामलों को बल्कि उनकी घरेलू समस्याओं, जैसे गरीबी, बेरोजगारी, अनपढ़ता, खराब स्वास्थ्य, इत्यादि से भी उन्हें निपटने के योग्य बनाया है। उभरती आर्थिक समृद्धि उनके राजनीतिक एवं सांस्कृतिक मामलों के हल में भी सहयोग करती है।

V

12. स्पष्टतया, अगर सार्क पर कार्यकारी संगठन बनता है तो यह अपने सदस्यों—खासकर भारत और पाकिस्तान के बीच सभी तनाव बिन्दुओं का खात्मा करवा देगा।

13. अगर सार्क इस काम को हाथ में लेने में असफल हो जाता है तो आम तौर पर सभी सम्बन्धित लोगों और खास तौर पर भारत और पाकिस्तान के लिए विनाशकारी स्थिति पैदा हो सकती है। आम तौर पर यह स्थिति विश्व के दूसरे देशों की तुलना में दक्षिण एशियाई देशों के विकास की प्रक्रिया को रोक सकती है। यह खास तौर पर

भारत और पाकिस्तान की आर्थिक स्थिति खराब कर देगी जो उनकी टकरावादी नीतियों और तीव्र होते अन्दरूनी नस्ली विवादों से जुड़कर दोनों बहुनस्ली देशों (भारत और पाकिस्तान) को अस्थिर कर सकती है।

14. प्रत्येक समझदार व्यक्ति गंभीरतापूर्वक कामना करता है कि दक्षिण एशिया के देश, खास करके भारत और पाकिस्तान विद्यमान भारत-पाक वास्तविकता के गम्भीर आशय को महसूस करें और बहुत ज्यादा देरी होने से पहले ही ठीक निर्णय पर पहुंचे। अनुभव दर्शाता है कि दोनों सरकारें एक दूसरे के प्रति वैर-भाव के नजरिये के चलते सभी तरह के आपसी विवादों और खास करके जम्मू-कश्मीर पर किसी समझौते पर पहुंचने के समर्थ नहीं हो सकते और दक्षिण एशिया के देशों में से न तो कोई अकेला और न ही सामूहिक कोई नैतिक या राजनैतिक ताकत वाली इकाई है जो इन दोनों देशों को ठीक स्थिति में आने के लिए बाध्य कर सके।

VI

15. इन हालातों के मद्देनजर, यह आवश्यक है कि दक्षिण एशिया के लोग खास करके भारत और पाकिस्तान के लोग इस समय उठ खड़े हों और 5 अन्तर-सम्बन्धित मांगों को उठायें।

(क) कि जम्मू-कश्मीर राज्य पर भारत-पाक का या सार्क का साझा नियंत्रण कायम करके जम्मू कश्मीर समस्या का हल निकाला जाए जिसमें इस राज्य को अर्द्ध-स्वतंत्र दर्जा प्रदान किया जाए तथा उसके प्रत्येक नस्ली क्षेत्र को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता का अधिकार दिया जाए।

(ख) कि भारत-चीन सीमा समस्या का हल न्यायालय या एक आपसी सहमति से बनाए गये आयोग के निर्णय के द्वारा किया जाए। इसका निर्णय दोनो पक्षों के लिए मानना जरूरी किया जाए। अनुभव सिद्ध करता है कि ये दोनों इस समस्या का द्विपक्षीय हल नहीं निकाल सकते।

(ग) कि चीन संयुक्त राष्ट्र के सामने यह वादा करें कि वह सम्पूर्ण भारतीय सीमा पर लगे समस्त परमाणु हथियारों को हटा देगा और भारत सहित किसी भी दक्षिण एशियाई देश को निशाना नहीं बनाएगा।

(घ) कि भारत और पाकिस्तान अपने समस्त परमाणु हथियारों को नष्ट करें और दक्षिण एशिया को एक परमाणु मुक्त क्षेत्र स्वीकार करें।

(ड़) कि एक दक्षिण एशियाई सुरक्षा-सहयोग तंत्र को विकसित करने के लिए तत्काल कदम उठाए जाए।

❋ ❋ ❋

परमाणु हथियार पर संयुक्त राष्ट्र महासभा के नियंत्रण की मांग

I

1. केवल भारतीय और पाकिस्तानी ही नहीं बल्कि प्रत्येक तरह के परमाणु बम चाहे वह अमेरिकी, चीनी, रूसी, ब्रितानी या फ्रेन्च हो, कट्टर राष्ट्रवादी मानसिकता के परिणाम हैं। इस तरह की मानसिकता वर्तमान और भूतकाल में अपने राष्ट्र के बड़पन्न और दूसरे राष्ट्रों के प्रति विद्वेष भावना से पैदा होती है।

2. यह एक कट्टर राष्ट्रवादी मानसिकता ही है जो अमेरिका में आजकल की दुनिया पर सरदारी कायम रखने की सोच पैदा करती है और यही मानसिकता चीन के 'एक महान राष्ट्र' होने के सिद्धान्त को कायम रखती है जो अपने आप को केवल प्राचीन और मध्य युग में ही नहीं बल्कि वर्तमान शीतयुद्ध के बाद की स्थिति में स्वाभाविक तौर पर मुख्य शक्ति मानने का विचार पैदा करती है। स्वाल अन्धराष्ट्रवाद न केवल सोवियत कम्युनिस्ट व्यवस्था पर अपना प्रभुत्व रखता था बल्कि आजकल के येल्तसिन के स्वतंत्र बाजारवाद में भी स्थान बनाये हुए है। उपनिवेशी दुनिया पर प्रभुत्व की भावना आज भी बर्तानी मानसिकता पर हावी है और फ्रांस पर लगातार गुलिस्ट और नेपोलियनवादी मानसिकता छाई हुई है।

3. भारत को उदार हिन्दुवादी राष्ट्रवाद (जैसा कि गांधी ने इसे प्रस्तुत किया और उसके बाद तथाकथित धर्मनिरपेक्ष ताकतों, जैसे—कांग्रेसी, कम्युनिस्टों, समाजवादियों और सामाजिक सुधारवादियों आदि) सभी ने इसे अपनाया और इसके कट्टर हिन्दू संस्करण (यानि आर.एस.एस. और इसके परिवार द्वारा फैलाये गये हिन्दुत्व) ने भारतवर्ष के उन प्राचीन सिद्धान्तों को खोदा जो इसे अद्वितीय ग्लोबल सृजन मानते हैं जिनका अर्थ है कि वर्तमान और भूतकाल में इसके समानान्तर कोई व्यवस्था नहीं रही है। पाकिस्तानी रूढ़िवादियों में सन् 1971 में बांग्लादेश बनने के विनाशकारी अनुभव के बाद भी 'अपनी इस्लामिक पवित्र भूमि' (पाकिस्तान) की सीमाओं को दक्षिण एशिया और मध्य पूर्व में बढ़ाने का सपना और सम्मोहन अभी भी कायम है।

4. पांच परमाणु हथियारों वाले एकाधिकारी राज्यों की कट्टर राष्ट्रवादी मानसिकता इन तथ्यों से स्पष्ट होती है कि वे समयबद्ध परमाणु निशस्त्रीकरण कार्यक्रम को पसन्द नहीं करते और असीमित अवधि तक इन पर अपना एकाधिकार कायम रखना चाहते हैं। अमेरिका परमाणु हथियारों का 'पहले प्रयोग' न करने के विचार का भी विरोध करता है। फ्रांस और ब्रिटेन भी इस बिन्दु पर अपने आपको वचनबद्ध नहीं करना चाहते हैं।

5. राष्ट्रवाद का स्वभाव कट्टर राष्ट्रवादी नहीं है। कुछ राष्ट्रीय राज्य आज भी

सामाजिक विकास में बहुत सकारात्मक भूमिका अदा कर रहे हैं।, उदारहण के लिए दक्षिण अफ्रिका, यूक्रेन, बेलारूस, कजाकिस्तान ने अपने परमाणु कार्यक्रम छोड़ दिये हैं चाहे उन्हें वे विरासत में मिले थे या नहीं। अर्जेन्टाइना और ब्राजील भी परमाणु हथियार विकसित करने की क्षमता रखते हैं परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं करने का फैसला लिया है।

6. राष्ट्रवाद, औद्योगिक, वैज्ञानिक और तकनीकी सामाजिक ज्ञान एवं इसके औद्योगिक श्रम-विभाजन और इसके राष्ट्रीय राज्य के संगठन (अपने विशेष संविधान और कानूनों सहित) से पैदा हुआ जीवन का एक तरीका है।

7. हालांकि औद्योगिक ढांचा कदम-दर-कदम एक सूचना, वैज्ञानिक, तकनीकी और सामाजिक ज्ञान, इसके ग्लोबल श्रम विभाजन एवं इसके अन्तरनिर्भर राज्य (जो क्षेत्रीय समुहों और संयुक्त राष्ट्र से जुड़े हुए हैं) में तब्दील हो गया है। परन्तु अभी तक महान शक्तिशाली राष्ट्र बनने की मानसिकता की जगह तर्कसंगत ग्लोबल मानसिकता प्रतिस्थापित नहीं हो पाई है।

8. इस तरह की राष्ट्रीय मानसिकता की निरन्तरता का कारण इस तथ्य में छुपा हुआ है कि पी-5 और जी-8 जैसी शक्तिशाली राष्ट्रीय राज्य जो सभी सूचनाओं, आर्थिक और फौजी संसाधनों पर एकाधिकार रखते हैं वे निरन्तर इस कोशिश में लगे हैं कि विश्व व देश के स्तर पर पुरानी चल रही अनुचित व गैर-न्यायिक व्यवस्था चलती रहे इसके लिए वे जनता के बीच अति राष्ट्रवादी रवैया पैदा करने में लगे हुए हैं।

II

9. चल रही विश्व व्यवस्था की अनुचितता और गैर-न्यायिक इन तथ्यों से देखी जा सकती है कि प्रत्येक देश में सार्वत्रिक मतदान को कानून के राज या लोकतंत्र का स्वीकृत उसूल माना हुआ है जबकि संयुक्त राष्ट्र संघ को 5 वीटो रखने वाली ताकतें संचालित करती है जिससे बाकी बचे 180 यू.एन. सदस्यों की भूमिका कम हो जाती है और अप्रासंगिक हो जाती है यही 5 वीटो अधिकार रखने वाली ताकतें परमाणु हथियारों पर एकाधिकार रखती है। आई.एम.एफ. और विश्व बैंक भी इन्हीं शक्तियों द्वारा नियंत्रित है जिनकी मतदान शक्ति उनके अपने-अपने शेयर से जुड़ी है।

10. आगे, थोड़े-से विकसित देशों की एक चौथाई आबादी विश्व संसाधनों के 80 प्रतिशत भाग पर उपभोग करती है जबकि 125 से अधिक विकासशील देशों में निवास कर रही तीन चौथाई आबादी के लिए केवल 20 प्रतिशत हिस्सा छोड़ती है।

11. और आगे, आधी मानवता, जो महिलाओं से बनती है, लगातार बुरे बर्ताव और दुर्व्यवहार की शिकार होती आ रही है।

12. दुनिया में बढ़ती असमानता और गरीबी वर्तमान विश्व-व्यवस्था का एक अत्यधिक दुखदायी पहलू है। 1995 की विश्व विकास रिपोर्ट दर्शाती है कि निगम के

व्यवस्थापकों (सी ई ओ) ने फैक्ट्री मजदूरों की तूलना में कम से कम 149 गुना अधिक वेतन पाया और विश्व के 358 खरबपति दुनिया की आबादी के 45 प्रतिशत के बराबर सम्पति रखते हैं।

13. लगभग 200 करोड़ लोग यानि दुनिया में काम करने योग्य उम्र वाली आधी जनसंख्या से अधिक लोग निम्न आय की आर्थिकता में जीवन बसर करते हैं और जिनकी प्रति वर्ष व्यक्तिगत आय 695 डॉलर से कम है और लगभग काम की उम्र वाली एक तिहाई जनसंख्या बेरोजगार है।

14. खाद्य और कृषि संगठन के अनुसार विकासशील देशों की लगभग 20 प्रतिशत आबादी यानि लगभग 78 करोड़ लोगों को अपर्याप्त भोजन मिलता है और 19 करोड़ 20 लाख बच्चे प्रोटीन व ऊर्जा की कमी यानि कुपोषण के शिकार हैं।

15. राष्ट्रीय राज्यों के अन्दर भी परिस्थितियां ज्यादा भिन्न नहीं है। उनके सामाजिक हालातों में अन्तर होने के बावजूद सामाजिक जीवन की गुणवत्ता के कुछ पहलू एक जैसे ही चले आ रहे हैं। उदाहरण के लिए, प्रत्येक देश की राजनीतिक प्रक्रिया पर धन बल का प्रभुत्व बना हुआ है जिसमें विकासशील देशों में बाहुबल और प्राचीन निष्ठाओं का असर भी जुड़ जाता है। आर्थिक प्रक्रिया में गला काटु प्रतियोगिता, सट्टेबाजी, ब्लैकमेलिंग, असमानता और गरीबों को वंचित रखने का चरित्र बना हुआ है। अनैतिक और बेईमान तरीके निरन्तर जीवन की पद्धति बने हुए हैं। मानवाधिकार और सामाजिक न्याय हर कहीं उपेक्षित पहलू बने हुए हैं।

16. लगभग प्रत्येक देश में, विधानपालिका सदस्य निरन्तर विशिष्ट संसदीय विशेषाधिकारों का उपयोग करते हैं। न्यायपालिका, न्यायालय की अवमानना के तहत अत्यधिक शक्ति के कारण लोगों के प्रति गैर जवाबदेह बनी हुई है। नौकरशाही, सरकारी गोपनीयता कानून और पुरातनों कानूनों के तहत असीमित अधिकारों से सुसज्जित होने के कारण लोगों पर सवारी करते हैं। कानून लागू करने वाली संस्थाओं (एजेन्सियों) के सदस्य अपने आपको ही कानून मानते हैं।

कानून धनवानों के पक्ष में जाता है और गरीब व वंचित लोगों के वाजिब अधिकारों को भी अस्वीकार करता है।

17. वर्तमान मानव समाज में उपरोक्त वर्णित तथ्य गंभीर विकृतियों को प्रतिबिम्बित करते हैं। यह स्थिति मांग करती है कि मानव समुदाय सामूहिक व राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर चीजों को ठीक करने के लिए भरसक कोशिश करें। परन्तु इस प्रकार के प्रयत्न न तो संयुक्त राष्ट्र या विश्व के एजेण्डो पर है और ना ही किसी राष्ट्रीय सरकार की उत्कट इच्छा बने हैं।

III

18. वर्तमान विश्व व्यवस्था की उपरोक्त असमानता और अतर्कसंगतता वाली

प्रकृति के चलते 5 वीटो अधिकार प्राप्त शक्तियों के हाथों में परमाणु एकाधिकार का होना अत्यधिक खतरनाक है। इस सन्दर्भ में एनपीटी और सीटीबीटी दोनों गैर-न्यायिक और भेदभावपूर्ण हैं।

19. परमाणु हथियार इस पृथ्वी पर समस्त जैव-जगत के लिए बड़ा खतरा प्रस्तुत कर रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों के तहत परमाणु हथियारों को बनाना और उपयोग करना अमानवीय और गैरकानूनी है। सभी देशों के वैज्ञानिक 1940 की शुरूआत से ही इन हथियारों की खिलाफत करते रहे हैं और मांग करते रहे हैं कि इनके बनाने पर पूर्ण रोक लगाई जाए और बने हुए हथियारों को नष्ट किया जाए। परन्तु कट्टर राष्ट्रवाद और प्रभुत्ववाद के खिलाड़ी राष्ट्रीय हितों का झण्डा फहराते हुए किसी भी समझदार सलाह को सुनने से मना कर देते हैं।

20. मानवता के हित मांग करते हैं कि विश्व में जल्दी से जल्दी समयबद्ध पूर्ण परमाणु निशस्त्रीकरण किया जाए। परन्तु संयुक्त राष्ट्र के साथ-साथ बहुत से राष्ट्रीय राज्य इस मसले पर आश्चर्यजनक रवैया अपनाये हुए हैं। वर्तमान रूप में एनपीटी और सीटीबीटी (जो परमाणु हथियारों के खात्मे के लिए समय तय नहीं करती है) को इन देशों द्वारा समर्थन देना कोई तर्कसंगत व्यवहार का द्योतक नहीं है। पहले से ही इन दो संधियों की भारत व पाकिस्तान द्वारा खिलाफत करना केवल परमाणु बम बनाने के विकल्पों को खुला रखने की मात्र चालबाजी थी।

IV

21. इस प्रदत (विद्यमान) परिदृश्य में यह आवश्यक है कि हर जगह के लोग इस मसले को खुद अपने हाथों में लें और मांग करें ताकि अपनी-अपनी सरकारों को वर्तमान एनपीटी और सीटीबीटी में संशोधन करवाने के लिए उठ खड़े होने और दबाव डालने के लिए तैयार किया जा सके। इन संधियों में संशोधन की मांगें निम्न होनी चाहिए—

(क) सभी परमाणु हथियारों को निर्धारित समय (25 वर्ष) के भीतर समाप्त करना,

(ख) सभी परमाणु हथियारों वाले राज्य तत्काल अपने-अपने परमाणु अस्त्र-शस्त्र भण्डार को संयुक्त राष्ट्र महासभा के नियंत्रण में सौंप दें।

(ग) और बाद में बदलती अन्तर्राष्ट्रीय वास्तविकता के अनुरूप और सुरक्षा परिषद की किसी तरह से दखलन्दाजी के बगैर परमाणु हथियारों वाले शासन की सम्पूर्ण भविष्य की प्रक्रिया का निर्णय लिया जाए तथा अन्ततः निर्धारित समय के भीतर उन्हें सम्पूर्ण नष्ट करने की तरफ आगे बढ़ा जाए।

❋ ❋ ❋

पोकरण II और चागाई परमाणु परीक्षणों के बाद उपमहाद्वीप में बने हालात पर

4 जुलाई (11 A.M.) से 5 जुलाई (6 PM) 1998 को चण्डीगढ़ में आयोजित दो दिन के सम्मेलन के लिए निमंत्रण

प्रिय दोस्त,

हम, नीचे हस्तान्तरित, इस सम्मेलन की आयोजित समिति के सदस्य, गंभीरता से आपको प्रस्तावित सम्मेलन में भाग लेने के लिए आंतत्रित करते हैं ताकि उपरोक्त विषय के विभिन्न आयामों पर विचार-विमर्श किया जा सके।

इस सम्मेलन को बुलाने की आवश्यकता इस तथ्य से उभरी है कि परमाणु हथियार परीक्षणों की दो शृंखलाओं ने 50 साल पुराने भारत-पाक टकराव को इसके नए परमाणु आयाम के साथ तीव्र कर दिया है। इससे विश्व और इस क्षेत्र के लोगों के लिए हालात अत्यधिक खतरनाक हो गये हैं इस सम्मेलन को बुलाने का उद्देश्य इस उपमहाद्वीप में उत्पन्न हुए युद्ध जैसे हालात को समाप्त करने के लिए कुछ सहमति कायम करना तथा लोगों को जागरूक बनाने और इस सहमति को आगे बढ़ाने में लोगों की भागीदारी कायम करने के लिए कार्य योजना बनाना है। सम्मेलन के कार्यक्रम (एजेण्डा) में निम्नलिखित बिन्दु शामिल होंगे, जबकि इसमें भाग लेने वाले सदस्यों का अन्तिम अधिकार होगा कि वे इस एजेण्डा में कुछ भी जोड़ा व घटा सकते हैं या इस प्रस्ताव को किसी भी तरीके से यानि जैसा चाहे वैसा पुनर्गठित कर सकते हैं।

⋆ उपमहाद्वीप में परमाणु विस्फोटों से पहले के हालात।

⋆ भारत और पाकिस्तान द्वारा हालिया किये गये परमाणु विस्फोट और उनके परिणाम।

⋆ परमाणु विस्फोट करके भारत ने क्या खोया क्या पाया?

⋆ क्या परमाणु बम शांति के लिए एक गारण्टी है या इसका भय युद्ध का निवारण करता है?

⋆ राष्ट्रीय सुरक्षा का अर्थ और परिभाषा।

⋆ भारतीय और दक्षिण एशियाई लोगों की वर्तमान सुरक्षा आवश्यकताएं।

⋆ इस मोड़ पर भारतीय जनता की सुरक्षा को खतरा कहां से आ रहा है।

⋆ दक्षिण एशिया में अस्थिरता और उपमहाद्वीप में विवाद और टकराव की मूल जड़ जम्मू-कश्मीर समस्या है।

⋆ मूल समस्या का एक उचित और वास्तविक हल निकालना।

⋆ विश्व और दक्षिण एशिया दोनों स्तरों पर परमाणु हथियारों के सवाल का एक न्यायिक और व्यवहारिक उत्तर प्राप्त करना।

⋆ हमारा अगला कदम क्या होना चाहिए।

सम्मेलन स्थल : म्यूजियम आर्ट गैलेरी लैक्चर हॉल, सेक्टर 10, चण्डीगढ़

हम आपको सम्मेलन हॉल में देखने के लिए उत्सुक रहेंगे। कृपया अगर आप अपने पहुंचने की सूचना निम्नांकित पते पर भेज दें तो आपके आभारी रहेंगे।

अज दी आवाज (डेली), 131, रणजीत नगर, जालंधर

फोन : 0181-225427

समुचित भोजन और ठहरने के प्रबन्ध की जिम्मेदारी आयोजन समिति की होगी। हमें अफसोस है कि हमारे वित्तीय हालात कमजोर होने के कारण हमारे लिए विशिष्ट सदस्यों को यातायात खर्च देना सम्भव नहीं होगा।

आयोजन समिति

❋ ❋ ❋

इतिहास में कृषि का विकास

कृषि की धारणा

(1) कृषि, विज्ञान और उद्योग दोनों की द्योतक है।

(2) विज्ञान के तौर पर यह एक सिद्धान्त का इजहार करती है जो जमीन से भिन्न-भिन्न तरह की फसलों जैसे-अनाज, व्यापारिक फसलों, फलों, सब्जियों आदि का ज्ञान देती है। तथा भूमि, पानी, जैव विविधता, जंगल जैसे कृषि साधनों को विकसित करती है एवम् अन्य कृषिकारी गतिविधियों जैसे-पशुपालन, मछली-पालन, मुर्गी-पालन, मधु-मक्खी पालन, कृषिकारी जंगल, कृषि आधारित उद्योग, इत्यादि को आगे लाती है।

(3) उद्योग के तौर पर यह पैदावार की एक प्रणाली की सूचक है जो अपने आर्थिक, वित्तीय, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विस्तार का विकास करवाती है एवम् भिन्न-भिन्न कृषि उत्पादों के प्रबन्ध एवम् काश्तकारी से संबंधित सभी कार्यों को संगठित करती है।

कृषि की उत्पत्ति

(4) कृषि की उत्पत्ति लगभग 10,000 साल पहले हुई, जब एक खास माहौल ने पौधों की खोज एवम् पशुपालन की संभावना को पैदा किया। उस समय बर्फीला युग समाप्ति की तरफ था। बर्फीले पहाड़ों का क्षय हो रहा था। कई हजार सालों में मौसमी जीव-जन्तु लगातार देखे जाने लगे जो पत्थर युग में पहले शिकारियों के भोजन का साधन बनने लगे थे। मनुष्य जाति के लिए विशेष पौधे और पशु साधनों के उपयोग सीखने के लिए नए हालात पैदा हुए।

(5) कृषि की खोज ने मनुष्य जीवन में एकदम से ही श्रेष्ठ स्थान हासिल नहीं किया। पहले 5 हजार साल पशुपालन (जैसे पशुओं का घरेलुकरण एवम् पशुओं का पालन-पोषण) मनुष्य जीवन का मुख्य रास्ता रहा क्योंकि शुरूआती कृषि अभी तक मनुष्य के भोजन की जरूरतों को पुरा करने लायक नहीं थी। पहले 10 हजार साल मनुष्य पुरी तरह भोजन इकट्ठा करने और भोजन के लिए शिकार करने पर निर्भर रहा।

(6) कृषि पाँच हजार ईसवी पूर्व में श्रेष्ठ सामाजिक प्रणाली बन गई थी। कृषि के बारे में मनुष्य के ज्ञान को मानवता के लिए पानी के साधनों के नजदीक बसने के हालात पैदा कर दिए। उस समय हमारे गृह पर कुल आबादी लगभग 1 करोड़ थी।

(7) अभी तक पशुओं का घरेलुकरण एवम् कृषि दोनों संसार के भिन्न-भिन्न देशों में अलग-अलग स्तर का प्रतिनिधित्व करते थे।

(8) पुरातत्व विज्ञान के प्रमाण संकेत करते हैं कि काश्तकारी पहले उन

सभ्यताओं ने व्यवहार में लाई जिन्होंने अच्छे जंगली उत्पादों को एकत्र करने के ढंग से कुछ हद तक एक जगह टिके रहने की जीवन-शैली अपनाई। मौजूदा समय के कबीलों की खोज से यह अनुमान लगता है कि उन शुरूआती सभ्यताओं ने जंगली पौधों और उनकी विशेषताओं का कुछ हद तक ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

(9) पौधे-पालन के दो शुरूआती केन्द्रों का अस्तित्व लगभग 6000 ईसवी पूर्व सामने आया था। इनमें एक दक्षिण-पश्चिम एशिया, यह सिरिया के रास्ते से मेसोपोटामिया के मैदानी क्षेत्र और निचले पूर्वी-भूमध्य सागर के तटीय क्षेत्र से मिश्र की नील घाटी तक फैला हुआ है। दूसरा क्षेत्र दो अमेरिकन महाद्वीपों में था। यह उत्तरी मैक्सिको से दक्षिण अमेरिका के उत्तरी हिस्से वाला इलाका है।

(10) उद्योग के तौर पर कृषि, इसकी उत्पत्ति से लेकर समय-समय खेती के औजारों, उपयोगी सामग्री और फसलों की विभिन्नता में सुधार से पहले से अच्छी होती गई।

रेडियो कार्बन डेटिंग तकनीकी में दर्शाया है कि मेसापोटामिया के मैदानों में बड़े अनाज एमर (यानि, टी डिकोकुम जो दूसरी सभी नश्लों का पुरखा कणक था एवम् बड़े दाने वाले जंगली कणक का उत्तराधिकारी था) तथा छोटे अनाज एनकोर्न (जो छोटे दाने वाले जंगली गेहूँ टी एगिलोपोइट्स का उत्तराधिकारी था) की काश्त होती थी। पशुपालकों एवं किसानों के स्थानान्तरण से कृषि का ज्ञान दुनिया के एक कोने से दूसरे कोने में शीघ्रता से फैला। तीन-चार हजार ईसवी-पूर्व में हम मिश्र, ईरान, सिंधु घाटी की सभ्यता, चीन, यूरोप के क्षेत्रों में किसान सभ्यता देखते हैं।

(11) दोनों अमेरिका में कृषि की उत्पत्ति का अपना इतिहास है। पुरातत्व विज्ञान के प्रमाण सुझाते है कि मैक्सिकों के उत्तरी क्षेत्र में शुरूआती कृषि उन लोगों द्वारा जो मुख्यतौर पर खेल और भोजन इकट्ठा करने पर निर्भर थे, 6000 ईसवी पूर्व में शुरू हुई। शुरूआती फसलों में हलवा-कद्दू, पेठा, काली मिर्च व फलियां शामिल थी। अनाज काफी बाद में आया। मक्की की शुरूआती किस्म (एक जंगली किस्म की व्युत्पत्ति) लगभग 3000 ईसवी पूर्व में पैदा हुई। संसार के हिस्सों में किसान सभ्यता की उत्पत्ति और विस्तार (1500 ईसवी पूर्व के आस-पास) तीन हजार साल से पहले हुआ।

(12) मिससिपी घाटी और पेरू के समुद्री तट पर वनस्पति की खेती का विस्तार मैक्सिकों क्षेत्र से पहले सामने आया, पेरू के समुद्री तट पर वनस्पति काश्त कद्दू, काली मिर्च, घिया, कपास आदि, 2200 ईसवी पूर्व में पैदा हुई। उत्तरी मिससिपी घाटी में वनस्पति के और समूह में हलवा-कद्दू या पेठा, कद्दू-सुंदर और सुरजमुखी की खेती 1000 ईसवी पूर्व से भी पहले प्रगट हुई। अमेजन नदी और औरीनौके के जंगलों में उष्ण कटीबन्धीय जड़दार फसलें जैसे-कड़वे कसावा पौधे,

मीठे कसावा पौधे और यार्न की खेती की रवायत 1000 ईसवी पूर्व के नजदीक पैदा हुई।

(13) भोजन इकट्ठा करने वाले से शिकारी, चरवाह से किसान के रूप में बदलने में 10 से 20 लाख साल का समय लगा जो कि महान् ऐतिहासिक तब्दीली का प्रतिनिधित्व करता है क्योंकि यह मनुष्य सभ्यता के शुरूआत से मध्ययुग में बदलने का सूचक है, इसके साथ भोजन की पूर्ति ज्यादा भरोसेमंद हो गई एवम् मनुष्य का अस्तित्व और सुरक्षित हो गया। मनुष्य की शारीरिक मशक्कत भोजन इकट्ठा करने और शिकार करने की गतिविधियों से कम कठोर हो गई। इसने स्वाभाविक ही मनुष्य के विकास की दर को तेज किया।

कृषि का विकास

(14) शुरूआती खेती की तकनीक, छड़ी और कसिये के साथ खुदाई करना बनी, उसके बाद समय-समय पर खेती से संबंधित औजारों और फसलों, दोनों के बारे में मनुष्य के व्यवहारिक तजुरबे से लगाातर सुधार होता गया।

(15) विश्वास किया जाता है कि हल, मेसोपोटामिया क्षेत्र में चौथी सदी ईसवी पूर्व में पैदा हुआ। हल के आने से जमीन की मिल्कियत को किसी प्रणाली और बहुत तरह की खेतीबाड़ी के विकास की जरूरतों को पैदा किया। लोहे का हल 400 ईसवी पूर्व के नजदीक आया। पूरे यूरोप में पहली 4 सदियों के दौरान घोड़े से चलाए गये हल से खेती को बढ़ावा मिला, इसके परिणामस्वरूप छोटी-खेती की प्रणाली प्रचलित हुई। कुछ समय बाद एक मालिक प्रणाली की जगह खुले खेत प्रणाली ने ले ली, जिससे फाले की पत्ती वाले हलों का प्रयोग होने लगा। यह सहकारी प्रणाली थी जिसमें जमीन व खेती सांझे रूप में की जाती थी और जमीन पर मिल्कियत व्यक्तिगत थी। मध्य युग में जमीन का मालिक राजा या जागीरदार या चर्च होता था और इनके अधीन रहने वाली सभ्यता काम करती थी और यह कुल उत्पादन का आधा या एक तिहाई मालिक को देता था।

(16) कई सदियों तक खेतीबाड़ी विश्व उद्योग में निर्विवाद अगुवाई में रही जबकि बहुत थोड़े क्षेत्रों के कुछ काम-धन्धों जैसे खानों व व्यापार ने इसे बाईपास किया।

(17) 18वीं और 20वीं सदी की औद्योगिक क्रांति (जिसके नतीजे के तौर पर शहरी क्षेत्र पैदा हुए, बन्धुआ खेत मजदूर की जगह किराये के मजदूर ने ले ली और फलस्वरूप भोजन की माँग में बढ़ोतरी हुई) के साथ खेतीबाड़ी और आबादी के क्षेत्र में नई तब्दिलियाँ आई।

(18) खेतीबाड़ी क्षेत्र में खुले खेत मालिकी प्रणाली की जगह बन्द खेत मालिकी प्रणाली बन गई, खेतीबाड़ी वस्तु (मालों) में बदल गई, मंडी के साथ जुड़

गई और सारी जंगली जमीन बोवाई के अधीन आ गई। इन तब्दिलियों के साथ खेतीबाड़ी से उत्पादकता में और बढ़ोतरी हुई, परन्तु पूर्ण रूप से रवायती खेती ने श्रेष्ठ स्थान बनाए रखा।

(19) ज्यादा उत्पादन और मनुष्य की कम कठिन मेहनत के कारण मानव-तादाद में तेज गति से बढ़ौत्तरी हुई। अभी, रवायती खेती विशाल आबादी की बढ़ती भोजन जरूरतों से बहुत पीछे रह गई थी। परन्तु इस खाई को पाटने के लिए और क्षेत्र खेतीबाड़ी के अधीन लाए गये।

(20) ऐतिहासिक तौर पर जंगल और चारागाह की जमीन पर मुदाखलत (बेदखल) ने किसान समुदाय को भोजन पैदावार बढ़ाने का जवाब-प्रदान किया। पिछले दो सौ सालों से ऊपर, विश्व में काश्त (खेती) अधीन कुल क्षेत्र 60 करोड़ हैक्टेयर से 150 करोड़ हेक्टेयर की बढ़ोत्तरी की। अभी भी अन्दाजे संकेत कर रहे है कि विश्व में कमजोर और फालतू जमीन को पुन: सुधार कर बोवाई योग्य जमीन मौजूद 150 करोड़ हैक्टेयर से 210 करोड़ हैक्टेयर तक बढ़ौत्तरी की जा सकती है, भारत समेत एशिया में बोवाई योग्य जमीन में बढ़ौत्तरी की संभावना 10 प्रतिशत से कम है।

यह नोट करना कितना दिलचस्प है कि विश्व स्तर पर पिछले 50 सालों में अनाज में केवल 8 प्रतिशत वृद्धि बोवाई लायक जमीन के क्षेत्र में बढ़ौत्तरी से संभव हुई है, जबकि बाकी 92 प्रतिशत वृद्धि सिंचाई तकनीकों में सुधार तथा उच्च-उत्पादन देने वाले बीजों के उपयोग से संभव हुई है। विश्व अनाज का लगभग 46 प्रतिशत सिंचित क्षेत्र से आता है जिसमें से 1950 में 8 करोड़ हैक्टेयर से 1993 में 24 करोड़ हैक्टेयर की बढ़ौत्तरी हुई।

(21) स्पष्टतया, खेती योग्य जमीन के विस्तार से अनाज पैदावार में हुई थोड़ी बढ़ौत्तरी ने सबको वाकिफ करवा दिया कि खेती-फार्मों के विस्तार की अपेक्षा विज्ञान और तकनीक का विकास खेतीबाड़ी पैदावार की भविष्य की जरूरतों को पूरी करेगा। एक बार फिर, मनुष्य की प्रवीणता और अमली (व्यावहारिक) सूझबूझ मानवता को इस मुश्किल पर काबू पाने के योग्य बनाएगी। रवायती (पारम्परिक) खेती उच्च किस्म के बीजों, रासायनिक खादों और नदीन-नाशक दवाईयों, सिंचाई सुविधाओं में बढ़ोतरी, आदि से नई तकनीक आधारित खेती में बदल गई।

हरित क्रांति ने 25 सालों तक बेरोक विकास करवाया परन्तु 1990 में यह ठहराव के दौर में पहुचं गई।

मौजूदा समय कृषि

(22) विश्वस्तर पर बोवाई योग्य जमीन का अनुपात विश्व की कुल जमीन का एक चौथाई से कुछ अधिक है। लगभग एक तिहाई बोवाई योग्य जमीन फसलों के

अधीन है। बाकी दो तिहाई हिस्सा पशुधन के चारे के लिए चरागाह के रूप में काम में लिया जाता है। फसली पैदावार देश के मुताबिक अलग-अलग है।

(23) आज विश्व की कुल आबादी अनुमात: 6 अरब है जिसमें से लगभग 40 प्रतिशत से कम खेतीबाड़ी में लगी हुई हैं मनुष्य के भोजन की लगभग 99 प्रतिशत सप्लाई जमीन से होती है। यह दर्शाती है कि जमीन और प्राकृतिक साधन—पानी, जंगल, जैव-विभिन्नता, आदि—मनुष्य के अस्तित्व के लिए कितने जरूरी है।

(24) खाद्य एवम् कृषि संगठन (F.A.O.) की तरफ से नवम्बर 1996 में रोम में करवाये गए विश्व खाद्य सम्मेलन की तरफ से विश्व खाद्य सुरक्षा प्रदान करने एवम् सारे लोगों की सुरक्षा तथा पौष्टिक भोजन के अधिकार के प्रति अपनी प्रतिबद्धता प्रगट की गई थी। इसने विश्व स्तर पर भूखमरी खत्म करने और 2015 तक भूखे लोगों की आधी गिनती घटाने का निमन्त्रण दिया।

(25) परन्तु, खाद्य एवं कृषि संगठन की तरफ से मार्च 1998, में जारी "खाद्य दृष्टिकोण" लगातार तीसरे साल विश्व भोजन भंडार में गिरावट की चेतावनी दे रहा है। इसने चीन, पाकिस्तान और पूर्वी यूरोप के हिस्सों में गैर-अनुकूल हालातों की निशानदेही की है। हालांकि इसने समूचे हालात के संतोषजनक होने की वकालात की है। फिर भी हालात पर गहराई से नजर रखने की मांग की है। क्योंकि खाद्य कमी वाले देशों में 1998 की फसलों में किसी भी किस्म की खराबी से कीमतों में बढ़ोत्तरी के साथ गंभीर नतीजे निकल सकते हैं।

(26) इसके उलट, वाशिन्गटन आधारित संसार निगरानी संस्था ने चेतावनी दी है कि एफ.ए.ओ. "भोजन पैदावार का बढ़ाकर अन्दाजा लगाती है।" इसने दावा किया है कि विश्व में प्रति-व्यक्ति अनाज पैदावार हकीकी तौर पर गिरावट की तरफ जा रही है। इसके अनुसार, 1950 से 1984 तक विश्व भोजन में औसतन सालाना 3 करोड़ टन की बढ़ौत्तरी हुई जिसमें, 1984 से 1992 के दौरान एक करोड़ बीस लाख टन की कमी आई। जिसने निशानदेही की है कि अब और 2030 के बीच इसमें 90 लाख टन की गिरावट आ जायेगी, जबकि विश्व जनसंख्या बढ़कर 8 अरब 90 करोड़ हो जाएगी।

(27) विश्व की लगभग 1 अरब आबादी जिन्दगी जीने योग्य भोजन प्राप्त करने से भी गरीब है। विश्व में लगभग 80 करोड़ लोग हर रोज भूखे सोते हैं। उत्तरी कोरिया में 1997 में 5 लाख लोगों को भूख ने निगल लिया था।

(28) इसी तरह विश्व में भूखमरी और पौष्टिक भोजन की समस्या ने गंभीर रूप धारण कर लिया है। एफ.ए.ओ. के अनुसार अपौष्टिक भोजन खाने वाले लोगों की गिनती बढ़कर 65 करोड़ हो जाएगी जो 1976 में 45 करोड़ थी।

❋ ❋ ❋

आज भारतीय कृषि की स्थिति

I

कृषि का भारतीय आर्थिकता में महत्वपूर्ण स्थान है। यह भारत की कुल घरेलू पैदावार में 29.4 प्रतिशत का योगदान देती है। भारत की समूची जनसंख्या के लिए खाद्य सामग्री उपलब्ध करवाती है। और 65 प्रतिशत भारतीय लोगों को रोजगार प्रदान करती है (चाहे उनमें से ज्यादातर जो कृषि में लगे है, उनको पूर्ण रोजगाार नहीं मिलता)। यह औद्योगिक उपयोग के लिए कच्चा माल जैसे-खाद्य और फल प्रोसेसिंग, खास तौर पर निर्यात उत्पाद महत्वपूर्ण बन गया है। भारत का विदेशी व्यापार भी चावल, कपास, कपड़ा, चाय, पटसन, बादाम, तम्बाकू और कॉफी आदि की शकल में कृषि का मान्य हिस्सा बन गया है।

पारम्परिक भारतीय कृषि हमेशा क्षेत्र बढ़ाकर उत्पादकता बढ़ाने की कोशिश करती है परन्तु पर्यावरणीय संकट के बाद कृषि में त्रिमुखी उद्देश्यों जैसे-उत्पादकता, टिकाऊपन और न्यायपूर्णता की तरफ दिशा तब्दील कर ली है।

II

भारत के पास, विश्व के भोगौलिक क्षेत्र का लगभग 2.4 प्रतिशत हिस्सा है परन्तु उसके पास विश्व की आबादी का तकरीबन 16 प्रतिशत और 20 प्रतिशत से ज्यादा पशुधन है। यह दर्शाता है कि भारत में जमीन और पशुधन के अनुपात में बड़ा फर्क है परन्तु यह हकीकत का केवल एक पक्ष है। दूसरा पक्ष है कि कई बड़े और विकसित देशों के मुकाबले भारत के पास जोताई योग्य भूमि की बहुत बड़ी मात्रा है।

उदाहरण के लिए अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और चीन भारत के आकार से लगभग तीन गुना और रूस लगभग 6 गुना बड़ा है, परन्तु ये जोताई योग्य जमीन में भारत से पीछे है। भारत की 16 करोड़ 60 लाख हेक्टेयर जोताई योग्य जमीन के मुकाबले में चीन के पास लगभग 10 करोड़ हेक्टेयर जोताई योग्य जमीन है, आस्ट्रेलिया के पास 4 करोड़ 63 लाख हैक्टेयर, कनाडा के पास 4 करोड़ 58 लाख हैक्टेयर, रूस के पास 13 करोड़ तथा अमेरिका के पास 18 करोड़ हैक्टेयर जोताई योग्य जमीन हैं भारत के पास भूमि का आकार 32 करोड़ 90 लाख हैक्टेयर है जबकि प्रतिशतवार इसके पास बहुत उच्च प्रतिशत यानि 50.05 प्रतिशत भाग जोताई योग्य है। भारत के पास बहुत अनुकूल भौगोलिक स्थिति है। यहाँ सारे साल सूरज की रोशनी रहती है, भारत दो फसली यहाँ तक की बहु फसली प्रणाली अपना सकता है।

III

कृषि की 50 साल लम्बी प्रक्रिया पर नजर डालने से दृष्टिपात होता है कि देश

ने 1950 वे और 1960 वे दशक की अनाज की कमी जो 1965-66 और 1966-67 में दो गंभीर अनाज की कमियों के रूप में शिखर पर पहुंची थी, उस पर काबू पा लिया। इसी कृषि की प्रक्रिया ने देश को 1949 में इसकी 5 करोड़ 49 लाख 2 हजार टन अनाज पैदावार, 1991 में इसकी प्रति व्यक्ति 395 ग्राम उपलब्धि से आज 500 ग्राम तक पहुंचने के साथ ही 1997-98 में लगभग 19 करोड़ 40 लाख टन तक पहुँचा दिया है, इसने देश की खाद्य आयात पर निर्भरता को भी खत्म कर दिया। अनाज के अलावा, यहाँ और खाद्य सामग्री जैसे-चीनी, खाद्य-तेलों, दूध, माँस, फलों, सब्जियों आदि में बढ़ौत्तरी की है।

यह सारा कुछ हरित-क्रान्ति द्वारा संभव हुआ (इस क्रांति के अगुवा प्रसिद्ध वैज्ञानिक नार्मन ई बॉलाग का धन्यवाद) जिसकी नई तकनीकों ने किसानों को देश एवम् विश्व में उनकी उत्पादकता में दृष्टिपात करने लायक बढ़ौत्तरी के योग्य बनाया। 50 सालों के दौरान (खास तौर पर 1970 एवम् 1997 में) भारत की कृषि पैदावार में 4 गुना बढ़ौत्तरी हरित क्रांति की सफलता की कहानी को दर्शाता है। भारतीय सरकार का योगदान इतना था कि इसने सिंचाई सुविधाओं को फैलाकर (सिंचाई समर्थता 1947 के 2 करोड़ हैक्टेयर से बढ़ाकर 5 करोड़ हैक्टैयर तक बढ़ा दी), बीज, खादों, कीटनाशक दवाईयों, खेती मशीनरी आदि जैसी भिन्न-भिन्न किस्म की कृषि उपयोगी सामग्री बनवाकर एवम् वितरित करके तथा लगभग 24 वस्तुओं के लिए निम्नत्तम समर्थन मूल्य को यकीनी बनाकर इस प्रक्रिया को आसान बनाया।

परन्तु इस योगदान (सिंचाई सुविधाओं, कृषि उपयोगी सामग्री एवम् न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रदान करना) ने कितनी योग्य और रचनात्मक कारगुजारी दिखाई, सरकार की इस कारगुजारी को त्रिपक्षीय उद्देश्य जैसे-उत्पादकता, टिकाऊपन एवम् न्यायपूर्णता के आधार पर रखकर ही एक तर्कसंगत नजरिया अपनाया जा सकता है।

IV

कृषि में उत्पादकता के मुद्दे का अर्थ है इसकी कृषि उपयोगी सामग्री का उचित प्रबन्ध, जो हर एक इकाई के उत्पादन में बढ़ौत्तरी के साथ-साथ समूची पैदावार की बढ़ौत्तरी को प्रकट करे। भारतीय कृषि की समूची विकास दर को इस तरह देख सकते है कि 1970-96 के बीच भारत की कृषि की प्रक्रिया 2.1 प्रतिशत विकास दर के साथ विकसित हुई जबकि इसी समय चीन की 6%, मलेशिया की 7%, थाईलैण्ड की 4.6 प्रतिशत और इन्डोनेशिया की विकास दर 3.7 प्रतिशत रही। भारत का प्रति हैक्टेयर चावल उत्पादन 2576 किलोग्राम, एशिया में सबसे कम है। जबकि विश्व का औसत चावल उत्पादन 3581 किलोग्राम और चीन का 5859 किलोग्राम है। भारत का प्रति हैक्टेयर मक्की का उत्पादन 1474 किलोग्राम के मुकाबले विश्व का औसत

उत्पादन 3257 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर है। सूरजमुखी में चीन की उत्पादकता तीन गुनी ज्यादा है जबकि भारत में प्रति हैक्टेयर गेहूं का उत्पादन 2420 किलोग्राम है और यह चीन में 3318 किलोग्राम है। कपास में भारत का प्रति हैक्टेयर उत्पादन 246 किलोग्रम है जबकि आस्ट्रेलिया में यह 1510 किलोग्राम तथा इजरायल में 783 किलोग्राम है।

1947-48 में भारत का संसार की कृषि पैदावार में 11% हिस्सा था परन्तु आज यह घटकर 9% रह गया है।

1990 से कृषि संकट में बढ़ोतरी हो रही है। आबादी में बढ़ौत्तरी की दर के मुकाबले कृषि विकासदर असल में पीछे रह गई है। साल 1997-98 में देश की कृषि पैदावार में 2 प्रतिशत कमी आई है बफर अनाज भंडार साल दर साल घटता जा रहा है।

आर्थिक सर्वेक्षण 1997 के अनुसार 1990 के दशक में अनाज पैदावार में औसतन 1.7 की सालाना बढ़ौत्तरी, आबादी में 1.9 प्रतिशत सालाना बढ़ौत्तरी से कम है। इसने दालों एवम् तेज बीजों में ठहराव को भी परिलक्षित किया है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की तरफ से 197 में जारी आंकड़ों के अनुसार 1990-91 से 6 सालों में अनाज पैदावार में 1.5 करोड़ टन की बढ़ौत्तरी हुई है जबकि इससे पहले के 5 सालों में 2.6 करोड़ टन की बढ़ौत्तरी हुई थी यहां तक कि 1980-81 और 1990-91 के दौरान अनाज पैदावार सालाना 3.1 प्रतिशत की दर के साथ बढ़ती रही जबकि 1990-91 और 1996-97 के दौरान विकास दर घटकर 1.4 प्रतिशत से भी कम हो गई।

भारतीय आर्थिकता निरीक्षण केन्द्र (C.M.I.E.) ने सितम्बर 1998 में भारतीय आर्थिकता के बारे में भविष्यवाणी करते हुए कहा है कि 1996-97 में 199.32 मैट्रिक टन एवम् 1997-98 में 194.09 मैट्रिक टन अनाज उत्पादन के मुकाबले 1998-99 में 193.95 मैट्रिक टन के नजदीक उत्पादन होने की संभावना है।

कृषि वस्तुओं के प्रबन्ध पर नजर डालने से हम देख सकते है कि इसकी बदइन्तजामी के कारण देश को बहुत बड़ा नुकसान उठाना पड़ रहा है।

आवाजाही तथा भंडारण की कमजोर सुविधाओं के कारण अनाज में हर साल लगभग 20 प्रतिशत घाटा पड़ता है। जिसकी कीमत 50 हजार करोड़ बनती है। भारत आज फलों एवम् सब्जियों का विश्व में सबसे बड़ा उत्पादक है फिर भी 28 हजार करोड़ के प्रोसेसड अनाज के विश्व व्यापार में इसका हिस्सा 1 प्रतिशत से भी कम है, जबकि यह 23 हजार करोड़ रुपये मूल्य का लगभग 40 प्रतिशत उत्पादन हर साल बर्बाद कर देता है। कुछ विकासशील देशों के 40 प्रतिशत और विकसित देशों के 70 प्रतिशत के मुकाबले देश में पैदा होने वाले फल तथा सब्जियों के कुल उत्पादन का

केवल 1.3% हिस्सा प्रोसेस किया जाता है।

उत्तर-पूर्व भारत में अनानास का जरूरत से ज्यादा उत्पादन होता है जो कि प्रासेसिंग के लिए बहुत बढ़िया मौका प्रदान करता है परन्तु प्रभावशाली आवाजाही प्रणाली नहीं होने के कारण यह मुश्किल बन गया है।

इसके आगे, भारत में प्रोसेसिंग खाद्य उद्योग, कच्चे माल के उत्पादन से मंडी तक के जुड़वे प्रबन्ध के साथ आज तक आधुनिक वैज्ञानिक रास्ते पर संगठित नहीं किया। उत्पादन के ज्यादातर ढंग परम्परागत है अत: इसका उत्पादन क्षमता पर असर पड़ता है।

मंडीकरण भी उतनी ही महत्वपूर्ण समस्या है, मुकाबलेबाजी में लाभ-प्राप्ति योग्य प्रोसेसिंग कड़ी, उच्च गुण आधारित उत्पादन तथा मंडी दलालों की गिनती कम करने की माँग करती है।

भारतीय उद्योग महासंघ तथा मैकेन्से एण्ड कम्पनी द्वारा किया गया अध्ययन दर्शाता है कि कई देशों में प्रोसेसिंग ने बढ़िया कृषि व्यवहार के द्वारा किस तरह नुकसान घटाया और उत्पादन में बढ़ौत्तरी की है। इसके अनुसार बाकी विश्व का तजुरबा दर्शाता है कि भोजन प्रोसेसिंग ज्यादा लाभदायक प्रयोगों में से एक है।

V

टिकाऊपन का अर्थ है फसल तथा मनुष्य-पशु उत्पादकता के लिए जरूरी प्राकृतिक साधनों-जैसे-भूमि, पानी, जंगल, जैव-विविधता आदि की सम्भाल तथा उनका न्यायपूर्ण प्रबन्ध करना।

जहाँ तक भारत के प्राकृतिक साधनों का सवाल है, यह रिकार्ड में दर्ज 30 करोड़ 50 लाख हैक्टेयर है जो कुल 32 करोड़ 90 लाख हैक्टेयर में फैले हुए है। इनको मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है।

(क) कृषि क्षेत्र, शुद्ध जोताई क्षेत्र, हालिया पड़ती जमीन तथा काश्त योग्य फालतू जमीन अधीन रकबा लगभग 18 करोड़ हैक्टेयर है। पिछले तीन दशक से 14 करोड़ 30 लाख हैक्टेयर का यह क्षेत्र लगातार स्थिर है।

(ख) वातावरणीय क्षेत्र, जंगली, फुटकर वृत्तदार फसलों तथा वृक्षों के झुण्ड, चारागाह तथा बंजर जमीनों के अधीन लगभग 10 करोड़ 20 लाख हैक्टेयर रकबा है।

(ग) गैर-कृषि क्षेत्र के धन्धों के अधीन जमीन समेत गैर-कृषि क्षेत्र अधीन रकबा 2 करोड़ 20 लाख हैक्टेयर है।

ताजा अन्दाजे दर्शाते है कि खेतीबाड़ी योग्य जमीन की 60 प्रतिशत ऊपरी सतह खोरे, सेम तथा खारेपन से पीड़ित है। 1 करोड़ 60 लाख हैक्टेयर पहाड़ी खड्डों

तथा छोटे नदी-नालों के अधीन है। इस तरह यह बड़े पैमाने पर भूमि क्षय की समस्या की गंभीरता को दर्शाता है।

पानी तथा हवा के कटाव के कारण देश हर साल 1200 करोड़ टन धरातली मिट्टी गवाँ रहा है जो हर साल 5 करोड़ टन अनाज पैदा करने की क्षमता रखती है। लगभग 1 करोड़ 80 लाख हैक्टेयर जमीन सेम तथा खारेपन के अधीन है।

विश्व के दूसरे हिस्सों में चरागाह के 60 प्रतिशत जमीन के मुकाबले, भारत की 40 प्रतिशत जमीन चारागाह अधीन है जबकि भारत में पशुओं की संख्या विश्व के पशुओं का 20 प्रतिशत है। इन्हीं की वजह से चरागाह भूमि पर अधिक भार है। दुनिया में सबसे अधिक पशुओं की 45 करोड़ आबादी देश के प्राकृतिक साधनों की समर्थता से कहीं ज्यादा है। यहाँ खेतों के अधीन अच्छी भूमि को गैर-खेतीबाड़ी कामों के लिए उपयोग में लेने पर कोई रूकावट (चैक) नहीं है। भूमि का कटाव रोकने के लिए विशाल प्रभाव वाले व्यर्थ भूमि तथा वाटरशेड (जल विभाजक) प्रोग्राम अभी बनने हैं।

पानी की समस्या और भी गंभीर है। वर्षा के पानी से भारत साल के अन्दर 40 करोड़ हैक्टेयर पानी प्राप्त करता है। 1 हैक्टेयर मीटर पानी का वजन लगभग 100 टन होता है। 40 करोड़ हैक्टेयर मीटर की उपलब्धि (या औसत सालाना दरयावी बहाव) के बीच से 18 करोड़ 70 लाख हैक्टेयर मीटर है। इसका लगभग 70 मीटर जमीन के नीचे वाला पानी है। इस तरह सालाना वर्षा के पानी का केवल 29 प्रतिशत उपयोगी है बाकी समुद्र में चला जाता है। हम केवल 20 प्रतिशत नियन्त्रित करके उपयोग में लाते हैं। वर्षा के पानी का 20 प्रतिशत और नियंत्रण से भारत 8 करोड़ हैक्टेयर मीटर अधिक पानी जुटा सकेगा।

अन्दाजन प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति 2400 घन मीटर पानी की उपलब्धि के बावजूद, राज्यों और विभिन्न ऋतुओं में पानी की उपलब्धि असमान है। कुछ राज्यों जैसे राजस्थान, मेघालय आदि के बीच पानी की बहुत कमी है। दूसरा चिन्ताजनक लक्षण सिंचाई के लिए धरातली पानी की अपेक्षा जमीन के अन्दर के पानी की तरफ रूझान काफी बढ़ रहा है। जमीन के अन्दर के पानी के साथ 1965-66 में काश्त अधीन एक तिहाई क्षेत्र में की जा रही सिंचाई का अनुपात आज बढ़कर 50 प्रतिशत तक पहुँच गया है। पानी का स्तर तेजी के साथ नीचे जा रहा है। सबसे चिन्ताजनक समस्या यह है कि कृषि रसायनों की हद से अधिक उपयोग या रासायनिक उद्योगों की तरफ से पैदा किए जा रहे कचरे की मिलावट के साथ ज्यादा इलाकों में पानी ज्यादा से ज्यादा प्रदुषित होता जा रहा है।

जंगलों के मामले में पिछले 50 सालों में बहुत नुकसान उठाया है। इनका आकार इस दौरान घटकर आधा रह गया है। अब भी इनके ऊपर मानवीय और व्यापारिक दबाव बढ़ रहा है। हालांकि भारत के पास अमीर जैव-विविधता वाला इलाका है, गर्म स्थानों (कीमती जीन सम्भालने वाली) जैसे पूर्वी हिमालय के क्षेत्र और पश्चिमी घाट हमारे देश में मौजूद है।

जैव विविधता (ने 1994 में जैव-तकनीक के लिए आधार मुहैया किया) के लिए कुछ पौधों की किस्मों को सम्भालने की जरूरत है।

इस तरह सिकुंड़ रही जमीन, पानी, जंगल और पौधें के जनन के साधनों की समस्याओं को सम्बोधित करके भारत की टिकाऊ खेतीबाड़ी नीति बनाई जा सकती है। इस तथ्य को नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए कि हमारे वातावरणीय पहलुओं की सामर्थ्य असीमित नहीं है।

VI

कृषि क्षेत्र में न्यायसंगतता की समस्या ग्रामीण मानवीय साधनों के न्यायिक आधार पर विकास में निहित है। आम रूप में इसका अर्थ है ग्रामीण लोगों की बौद्धिक तथा भौतिक जिन्दगी में विकास। विशेष रूप में यह ग्रामीणों में दबे-कुचले तथा कमजोर वर्गों के सामाजिक तथा आर्थिक विकास को प्रगट करती है।

12 प्रतिशत से ऊपर देहाती जनसंख्या भूमिहीन है, भारत में 78 प्रतिशत भूमि जोत 2 हैक्टेयर से भी कम है। अत: दो तिहाई के लगभग जोते 1 हैक्टेयर से भी कम है। समय के साथ-साथ इस तरह की जोतों की संख्या एवं इलाके के अनुपात में वृद्धि होती जा रही है। इसका अर्थ है अधिक से अधिक औसत एवं मध्यम दर्जे के खेत छोटे होते जा रहे है। जाने माने अर्थशास्त्री एस एस जोहल के मुताबिक सीमान्त कृषि पर आधारित परिवारों की मासिक आय राज्य सरकार के चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के मासिक वेतन से कम है और 2 हैक्टेयर के छोटे खेत वाले कृषक की मासिक आय सरकारी सेवा में लगे क्लर्क के मासिक वेतन से कम है। इस तरह भूमिहीन, छोटे तथा बहुत छोटे किसान ग्रामीण मानवीय साधनों का लगभग 90 प्रतिशत बनते हैं। इस बड़े ग्रामीण मानवीय संसाधनों की समस्याओं को सम्बोधित करके ही भारतीय कृषि न्यायसंगतता पर आधारित बन सकती है।

VII

"भारतीय कृषि की मौजूदा स्थिति" के बारे में हमारे विश्लेषण का अंत हम भारतीय कृषि से संबंधित दो महत्वपूर्ण राय देकर कर रहे हैं।

(अ)

पहली, प्रसिद्ध नक्षत्र विज्ञानी यू आर राव द्वारा 1996 में पटियाला में 83वीं

सर्व-भारत विज्ञान कांग्रेस में अपने अध्यक्षीय भाषण के दौरान की गई टिप्पणी है। इसमें कहा गया है, "चाहे भारत में सालाना अनाज उत्पादन 1947 के 5 करोड़ 5 लाख टन से बढ़ाकर 18 करोड़ टन तक पहुंचाने के लिए हरित क्रांति का धन्यवादी होना चाहिए फिर भी साल 2000 तक एक अरब से ज्यादा लोगों के लिए जरूरी 22 करोड़ टन अनाज पुरा करना बहुत मुश्किल है। सबसे चुनौतीपूर्ण तथ्य यह है कि अनाज पैदावार में लगभग ठहराव आ गया है,....जबकि देश की आबादी लगातार तेजी से बढ़ रही है, इसलिए आने वाले दशकों में लाखों लोगों के भूख से मरने का खतरा पैदा हो रहा है। हालांकि शुरूआती तौर पर रासायनिक खादों एवम् कीटनाशक दवाईयाँ के उपयोग, और उनको बड़े पैमाने पर अपनाने, बढ़िया काश्तकारों एवम् सिंचाई में बढ़ौत्तरी से हरित क्रांति के साथ खाद्य उत्पादन में नाटकीय बढ़ौत्तरी हुई, खेती के इस व्यवहार का नकारात्मक प्रभाव ऊपजाऊ कृषि भूमि के सेम तथा खारेपन से बंजर होने में निकला। किसी समय सभ्यता का जन्मदाता कहे जाने वाले उच्च पैदावारी गंगा व सिंध के मैदानों का लगभग 40 प्रतिशत क्षेत्र सेम, बड़े स्तर पर हो रही रासायनिक खादों के उपयोग, अनुचित निकास के कारण पूरी तरह बंजर बन गया है। अन्दाजे संकेत करते है कि भारत में कुल 16 करोड़ हैक्टेयर जोताई योग्य जमीन में से 10 करोड़ हेक्टेयर जमीन का पतन हो गया है, जिसका आधा हिसा पूरी तरह पतित होकर गैर-उपजाऊ बन गया है।

"हरित क्रांति के बावजूद भारत में कृषि उत्पादकता विश्व की औसतन 2.6 टन एवम् विकसित देशों की 5 टन प्रति हैक्टेयर से ऊपर के मुकाबले 1.6 टन हेक्टेयर के साथ सबसे कम है। विकसित देशों में प्रति व्यक्ति 1 हेक्टेयर के मुकाबले भारत में प्रति व्यक्ति केवल 0.17 हेक्टेयर जमीन उपलब्ध है जो बढ़ रही जनसंख्या के साथ आगे और भी छोटे टुकड़ों में बंट जायेगी। अफ्रीका तथा अन्य ऐशियाई क्षेत्रों की तरह भारत के कई हिस्सों में स्थानान्तरित खेती या झूमिंग पुरानी काश्त प्रणाली का उपयोग जो एक समय किसान हितैषी व्यवहार के रूप में स्वीकार की जा चुकी है। अब पर्यावरणीय गिरावट का कारण बन गई है। परती भूमि का लम्बा समय जो कि भूमि उपजाऊ ताकत बहाल करने की जिम्मेवार प्रक्रिया थी, आबादी के भारी दबाव के कारण 10 साल से घटकर 2 साल रह गया है। इसके नतीजे के तौर पर 50 लाख हेक्टेयर से ज्यादा झूम भूमि की गिरावट लाइलाज हो गई है।

"...भारत में जल साधनों का प्रबन्ध बहुत मायूसकून है...इसे पुन: बहाल करने की उचित सावधानी के बिना जमीन के अन्दर वाले पानी के बेअथाह उपयोग का नतीजा हमारे देश के ज्यादातर हिस्सों में पानी की सतह नीचे जाने में निकला है।

"...रासायनिक खादों तथा कीटनाशक दवाइयों का बेतहाशा उपयोग तथा वाटरसेड के कमजोर प्रबन्ध का नतीजा पानी के ऊपर बेअथाह दबाव में निकला है,

कीटनाशक दवाइयों ने पानी तथा कृषि उत्पादों को खराब करने के साथ-साथ बहुत बड़े क्षेत्र में अस्वीकार्य योग्य भूमि गिरावट की है। पानी और जमीनी सतह के कटाव ने हमारी 40 प्रतिशत खेती योग्य भूमि को प्रभावित किया है।

"...लगभग 4 करोड़ हेक्टेयर या देश के भौगोलिक क्षेत्र का 8वाँ हिस्सा बाढ़ प्रभावित क्षेत्र है, जिसके 5वें हिस्से या 80 लाख हेक्टेयर में हर साल भारी बाढ़ों के कारण 1500 जाने जाती है और फसलों तथा जायदादों का 30 करोड़ डालर का नुकसान होता है। कुछ सालों जैसे 1998 में 1 करोड़ हेक्टेयर फसली क्षेत्र के नुकसान के कारण 6 करोड़ लोग प्रभावित होने के कारण अन्दाजन 1500 अरब डालर एवम् 6000 जानों का नुकसान हुआ था। बार-बार पड़ रहे अकालों ने खासतौर पर भोली-भाली ग्रामीण आबादी की निराशा में बढ़ौत्तरी की है, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण 1987 का गंभीर अकाल था जिसने देश के 28 करोड़ 50 लाख लोगों को प्रभावित किया तथा लगभग 6 करोड़ हेक्टेयर फसली क्षेत्र को तहश-नहश कर दिया था।

(ब)

प्रसिद्ध भारतीय कृषि वैज्ञानिक एम.एस. स्वामीनाथन ने 'भारतीय कृषि के दी हिन्दू सर्वेक्षण 1996' में नीचे लिखित टिप्पणी की है "भारत की आबादी एक साल में 1.8 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। यदि यह रूझान चलता रहा तो आबादी 40 सालों में दुगुनी हो जागी। .....आबादी में बढ़ौत्तरी के साथ-साथ गरीबों की खरीद शक्ति में बढ़ौत्तरी से भोजन की मांग बढ़ती है, यद्यपि अपौष्टिकता और गरीबी साथ-साथ चल रही है।

"दूसरे रूप में प्रति-व्यक्ति बोवाई योग्य भूमि की उपलब्धि सिकुड़ती जा रही है। पानी उपयोग की योग्यता समूचे रूप में निम्न है। भूमि तथा पानी की प्रति व्यक्ति उपलब्धि से संभावित गिरावट के साथ अलग-अलग किस्म के जैविक तथा अजैविक दबाव फेल रहे है। ".....विदेशी विशेषज्ञों का कहना है कि आबादी में बढ़ौत्तरी तथा पर्यावरण में गिरावट की मौजूदा दर एवम् गरीबों की खपत समर्थता में सुधार के साथ मिलकर भारत को सन् 2030 में 4 करोड़ टन अनाज आयात करना पड़ेगा। यह इसकी तरफ से 1966 में किए गए आयात से चार गुना अधिक है। जो हरित क्रांति आने से पहले की गई थी। भारत को इस मुद्दे का गंभीरता के साथ निरीक्षण करना चाहिए। अत: कृषि क्षेत्र को पीछे छोड़कर संतोष नहीं होना चाहिए।

".....भारत में कृषि की सघनता और विभिन्नता की प्राप्ति में असफलता से सामाजिक विनाश होगा। यह इसलिए होगा क्योंकि कृषि.....70 प्रतिशत आबादी को रोजगार प्रदान करती है। .....इसलिए अब पर्यावरण तौर पर टिकाऊ तथा सामाजिक हरित क्रांति या इसको सदाबहार हरित-क्रांति में तब्दील करने की जरूरत है।

भारतीय कृषि का 1995 के हिदू सर्वेक्षण में एम.एस. स्वामीनाथन ने नीचे लिखित टिप्पणी की है ".....खाद्य मंच पर ढीले होने का कोई समय नहीं है। ...आबादी बहुत जल्द 100 करोड़ हो जायेगी। प्रति व्यक्ति भूमि तथा पानी की उपलब्धता घटती जा रही है। जंगलों के अधीन क्षेत्र जैव-विविधता के नुकसान के साथ-साथ घट रहा है। खेती पानी की प्रबन्धता नीचे स्तर की है। अत: बहुत से इलाकों में जमीन के नीचे के स्तर के पानी का अति उपयोग गैर-टिकाऊ है और इसका दुरूपयोग हो रहा है। जैविक तथा अजैविक दबाव बढ़ रहे है तथा बढ़िया खेती योग्य भूमि पल-पल गैर-खेती उपयोग में तब्दील हो रही है।

".....सामाजिक-आर्थिक मजबूरियों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि खेती क्षेत्र से न केवल भोजन लिया जाए बल्कि आमदनी और रोजगार के मौके भी बढ़ाए जाए ...फसल एवं पशुओं, फसल व मछली उत्पादन, खेती-जंगल तथा एकीकृत कृषि प्रणाली के अन्य रूपों को अपनाकर घरेलू आमदनी तथा मूल्य बढ़ौत्तरी के लिए मौके मुहैया करवाये जा सकते है। सघन खेती, उपलब्ध भूमि, पानी, श्रम तथा पूँजी के संसाधन, इच्छित परिणाम हासिल करने में सहायता करेगी। .....इसलिए सघन कृषि-प्रणाली का आधार वातावरण, न्यायपूर्णता तथा आर्थिकता का सिद्धान्त होना चाहिए।"

❋ ❋ ❋

भारतीय कृषि में क्या गलत हुआ

I

(1) भारतीय कृषि का 50 साल का लम्बा व्यवहार तथा इसकी मौजूदा हालात के तथ्यों से देखा जा सकता है कि अर्न्तराष्ट्रीय एवम् विकासशील देशों के मुकाबले इसकी औसतन उत्पादकता बहुत कम है। यहाँ तक कि निम्न विकास दर भी इसने मानवी और हमारे सारे प्राकृतिक साधनों की सेहत को हानि पहुँचा कर एक बहुत भारी कीमत देकर प्राप्त की है। आर्थिक-सह-वित्तीय पत्र से गणना करने पर यह एक साल का घाटा हमारे कुल सालाना खाद्य पैदावार की कीमत से ज्यादा बैठता है। न्यायपूर्णता के मामले में इसने अमीर और गरीब में खाई बढ़ाई है। यह सच है कि इसने माँग के अनुसार खाद्य सुरक्षा प्राप्त की है, परन्तु उपलब्धि की कमी के कारण 40 प्रतिशत बेसहारा लोग आधे खाली पेट सो जाते हैं।

II

(2) हमारी निम्न औसत तथा खर्चीली कारगुजारी के बुनियादी कारण हमारी नुक्सदार बुनियादी कृषि धारणाओं तथा कृषि नीति है। पहली गलत बुनियादी धारणा मार्क्सवाद तथा पश्चिमी उदारवाद दोनों की तरफ से पेश किया गया यह सिद्धान्त रहा कि उद्योग के ऊँचा दर्जा हासिल करने से कृषि पिछड़ा एवम् दूसरे दर्जे का क्षेत्र बन गया है।

पहली दोषपूर्ण धारणा को आगे बढ़ाते हुए दूसरी गलत धारणा थी कि कृषि उद्योग की सहायक है। इसलिए प्राथमिकता के मामले में इसको निम्न स्थान दिया गया।

तीसरी गलत धारणा दो पक्षपाती तथा एकपक्षीय विचारों की है। खुला मंडीवाद कहता है कि केवल धनी किसानी आधारित तकनीक ही कृषि की सारी बिमारियों का इलाज है, जबकि मार्क्सवाद का कहना है कि खेत-मजदूर केन्द्रित भूमि सुधार ही कृषि विकास का एकमात्र और अन्तिम हल है।

चौथी गलत धारणा कहती थी कि कृषि आमदनी बढ़ाने में योगदान नहीं पा सकती, इसलिए कृषि पर वित्तीय बोझ लादकर उद्योग को विकसित किया जाना चाहिए।

पाँचवी गलत धारणा यह थी कि ग्रामीण गरीबों को उद्योगों के विकास के लिए मजदूरी-प्रदान करने के लिए गाँवों से शहरी क्षेत्रों में जाना चाहिए।

छठी गलत धारणा थी कि कृषि पूरी तरह धीमी गति वाली है अत: यह प्रेरणा स्रोत नहीं बन सकती।

सातवीं गलत धारणा थी कि छोटे किसान पिछड़े हुए हैं तथा पहलकदमी के योग्य नहीं थे।

नीति के संबंध में 1947 के बाद की अलग-अलग भारतीय सरकारों द्वारा अपनाया गया नुक्सदार दोगला व्यवहार था जिसने जय किसान का नारा दिया परन्तु संसदीय स्वीकृति द्वारा कोई राष्ट्रीय कृषि नीति स्वीकृत नहीं की। एक सरकारी कृषि नीति के मसौदे के बाद दूसरा अपनाया गया तथा कई दफा संसद के दोनों सदनों में मामला बहस में आया, परन्तु परिणाम हमेशा शून्य रहा।

कृषि मंत्रालय तथा योजना आयोग में तेजी के साथ तब्दीली के कारण कृषि कार्यक्रम और इसकी प्राथमिकताओं को ठोस रूप नहीं दिया जा सका। ऐसी अस्पष्ट नीति भारत की केन्द्रित प्रणाली तथा सत्ता की भूखी एवम् रिश्वतखोर राजनीति पर आधारित थी।

(3) विश्व एवम् अलग-अलग राष्ट्रीय अनुभवों ने दर्शाया है कि पिछली सारी धारणाएं आधारहीन थी क्योंकि कृषि विकास का मुख्य साधन बन सकती है तथा तकनीक व किसान दोनों साथ-साथ कृषि विकास में योगदान दे सकते हैं।

III

(4) भारतीय कृषि की कमजोर कारगुजारी के अल्पकालीन कारणों को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है : उत्पादकता में रुकावटें, टिकाऊपन में रुकावटें तथा न्यायपूर्ण में रुकावटें हैं।

(क) उत्पादकता में रुकावटें

कृषि उत्पादकता में मुख्य रुकावट भारत में कुछ समय से कृषि फार्मों का अव्यवहारिक होना है। देश में 63 प्रतिशत क्षेत्र बारानी है। यहाँ कृषि से आमदन आकर्षित करने योग्य नहीं है। बाकी 37 प्रतिशत 'हरित क्रान्ति' क्षेत्र में 1991 से 78 प्रतिशत खेती जोत 2 हैक्टेयर से भी कम थी। कृषि के लिए जमीन के हिस्से के सिकुड़ने के साथ लगातार बढ़ रहे जनसंख्या दबाव, जोताई योग्य भूमि की प्रति व्यक्ति घट रही उपलब्धतता, किसान परिवारों के टूटने तथा भूमि जोतों के बँटवारे के कारण बहुसंख्यक भूमि जोतें गैर-लाभदायक बनती जा रही है। छोटी जोत वाली भूमि की गैर-लाभदायकता तथा उपजाऊ एवम् जोताई योग्य जमीन के ऊपर बढ़ रही उद्योगों के साथ हर साल लगभग 20 लाख बहुत ही गरीब किसानों की खेती-मालिकी भूमिहीनता में बदल रही है। ग्रामीण आबादी का 15 प्रतिशत भूमिहीन मजदूर पहले ही तरस खाने योग्य हालात में जी रहे हैं।

आगे कृषि के तेज विकास के साथ-साथ लगभग बराबर की दर पर जरूरी इनपुट सामग्री पर खर्च भी बढ़ रहा है। 1975-76 एवम् 1996-97 दौरान गेहूँ की

खेती पर खर्च छः गुना से भी ज्यादा, कपास की खेती पर सात गुना से ज्यादा, तथा चावल की खेती पर 10 गुना से भी ज्यादा बढ़ गया है। अब, उपयोगी सामग्री पर खर्चा खेती से प्राप्त होने वाली आमदन से अधिक होता जा रहा है। इसने कृषि कर्ज-जाल को बढ़ाया है। कर्जे के बोझ तथा जरूरी उपभोगी वस्तुओं पर बढ़े खर्च से किसान खुदकुशियों के रास्ते पड़ गया है।

साधनों तथा उपयोगी सामग्री के उपयोग की तुलनात्मक महारत और योग्यता की कमी के कारण भारत की फसलों की औसत पैदावार अर्न्तराष्ट्रीय एवम् विकासशील देशों की औसत से भी कम है।

बुनियादी ढाँचे, जैसे कि बिजली, आवाजाही, भंडारण की कमजोर सहुलियतों के कारण भारत में विश्व की तुलना में कटाई के बाद सबसे ज्यादा नुकसान होता है। केन्द्र तथा राज्य माल गोदाम निगमों के बावजूद देहाती इलाकों में मालगोदाम की सहूलियतें नाकाफी हैं।

यहाँ तक कि कृषि में सरकारी तथा प्राइवेट निवेश 1980 से लगातार घट रहा है।

कर्जे की नाकाफी सहूलियते कृषि के विकास के रास्ते में बाधा बनी हुई है। लगभग 65 प्रतिशत कर्जा 30 से 50 प्रतिशत तक की बहुत उच्च दरों पर साहूकारों से लिया जाता है। सरकारी बैंक ग्रामीण क्षेत्रों के लिए कर्जा का लक्ष्य अपनी कुल कर्जा राशि का 18 प्रतिशत रखते हैं, परन्तु 12 प्रतिशत ही दिया जाता है। इस समस्या के हल के लिए कृषि-सहकारी मार्केट सोसाईटियों की गिनती बहुत ही कम है। वित्तीय रूकावटे एक तरफ तो छोटे एवम् बहुत छोटे किसानों को काश्त के नए तरीके अपनाने तथा पैदावार बढ़ाने के रास्ते में रूकावटें बन जाती है। तथा दूसरी तरफ किसानों, खास तौर से पट्टेदारों, बंटाईदारों एवम् छोटे किसानों को अच्छे समय एवम् अच्छे मूल्य का इन्तजार करने की जगह कटाई के तुरन्त बाद कम कीमतों पर फसल को बेचने के लिए मजबूर करते हैं।

नाकाफी फसली बीमा सेवाओं के कारण जुए रूपी कृषि की अनिश्चतताओं के विरुद्ध कोई सुरक्षा की गारटी नहीं है।

कृषि एवम् सहायक उत्पादों का भारत के निर्यात में हिस्सा कम हो रहा है जो कि 1996-97 में भारत के कुल निर्यात के 20.5 प्रतिशत से घट कर 1997-98 में 18.83 प्रतिशत हो गया और इसी तरह 1998-99 में इसके और कम होने की संभावना है।

भारतीय कृषि में प्रभावशाली खोज की कमी, जिस पर विकसित देशों द्वारा कृषि की कुल सालाना पैदावारी लागत की 2 प्रतिशत के मुकाबले भारत की तरफ से

कुल सालाना पैदावार लागत की 0.3 फीसदी खर्च करना, उत्पादकता बढ़ाने के रास्ते में बड़ी रूकावट है।

इलैक्ट्रोनिक मीडिया की तरफ से लगातार प्रसारण के बावजूद आधुनिक कृषि तकनीकों नई तकनीकी खोजों तथा मार्केट कीमतों की सूचना की कमी किसानों को इनके लाभदायक उपयोग से वंचित रखती है।

कृषि मार्केटिंग केन्द्र एवम् मंडी योजना तथा डिजायन केन्द्र के स्थापना जो अभी तक लगातार काम कर रहे है, इसके बावजूद मार्केटिंग प्रणाली (नियन्त्रित तथा अनियन्त्रित दोनों) में कई कमियां है। ये है (1) एक ही जगह पर ढेर लगाकार बेचने के कारण पैदावार की सारी गुणवताओं की स्तरबन्दी एवम् मानदंडीकरण की कमी। इस व्यवहार के अधीन (जिसे दड़ा बिक्री के नाम से जाना जाता है), बढ़िया किस्मों की पैदावार करने वालों की कोई हौसला अफजाई नहीं होती है। केन्द्रीय क्वालिटी कन्ट्रोल लेबोरेट्री नागपुर एवं आठ क्षेत्रीय रियायती क्वालिटी कन्ट्रोल लेबोरेट्री केवल उन्हीं का विश्लेषण करती है जो सॅम्पल उनके पास भेजे जाते हैं। (2) किसानों को लूटने के लिए कुछ ब्याज दरें, कम कीमतें, गैर-मानदंडीय तोल तथा पेमानों जैसे बेईमान तरीके आज भी चल रहे हैं। (3) दलालों की मौजूदगी किसानों का हिस्सा घटाती है और (4) कर्ज, आवाजाही तथा भंडारण जरूरतें पहले बताये अनुसार कृषि प्रक्रिया को भारी चोट मारती है।

(ख) टिकाऊपन के रास्ते में रुकावटें

उच्च पैदावारी क्षेत्रों में कृषि के टिकाऊपन के लिए मुख्य चुनौती रासायनिक खादें, नदीननाशक तथा कीटनाशक दवाइयों का अन्धाधुन्ध उपयोग है, जिसने भूमि गिरावट एवम् भूमि की जैविक क्षमता के पतन एवम् जल उपलब्धता की कमी की कीमत पर उच्च विकास दर प्रदान की है। इस तरह इसे उपयोगी सामग्री का उपयोग दो गुना या कई मामलों में इसकी शुरूआत से ही अब तक तिगुना हो गया है।

आगे, चावल-गेहूँ फसली चक्र-प्रणाली जो कि केन्द्र की विशेष सुरक्षा नीति के आधार पर बना, उच्च पैदावरी क्षेत्रों में टिकाऊपन के संकट का मुख्य कारण है। इसके परिणाम पहले ही इन क्षेत्रों में प्राकृतिक साधनों जैसे जमीन, पानी पर ज्यादा दबाव तथा उत्पादकता एवम् इसके किसानों की लाभदायकता के पतन में निकले हैं।

जमीन तथा पानी साधनों के तेजी से हो रहे पतन के कारण कृषि पैदावार बहुत पिछड़ गई है।

बिजाई क्षेत्र के केवल 37 प्रतिशत क्षेत्र को सिंचाई सुविधाएं कवर करती है, नाकाफी सिंचाई सहुलियतें तथा शुद्ध बिजाई क्षेत्र का 63 प्रतिशत वर्षा पर निर्भर होना एक और रुकावट है।

(स) न्यायसंगतता के रास्ते में रुकावटें

कृषि न्यायसंगतता के रास्ते में बड़ी रुकावट शिक्षा की कमी, गरीबी, अज्ञानता, अन्ध विश्वास, रुढ़ीवाद एवम् पुरानी पड़ चुकी रस्मों तथा संस्थाओं की तरफ से ज्यादातर किसानों की पारम्परिक व जीवन निर्वाह योग्य खेती के साथ बन्धने के कारण चौतरफा फैले निरूत्साही ग्रामीण वातावरण को उचित आधार पर मानवीय संसाधनों के विकास की है। दूसरी रूकावट कृषि की निम्न उत्पादकता एवम् विकास दर है। इसके अलावा यहाँ गैर-प्रभावी भूमि सुधार हुए हैं। बड़ी अड़चन देश के सबसे दबे-कुचले खेत-मजदूरों की लगातार जारी तरस योग्य हालत है। जमीन के ऊपर आबादी के ज्यादा दबाव का नतीजा खेत-मजदूरों के लिए कम मजदूरी में निकलता है। इसके अपने पक्ष से किसी और क्षेत्र में लाभदायकता की कमी के कारण यह और कोई क्षेत्र चुनने में असमर्थ हैं। छोटे एवं बहुत छोटे किसानों की जमीन इकाई लाभदायकता की कमी के कारण, संस्थात्मक कर्जा सहुलियतों की कमी के कारण उनको सहुकारों की तरफ धकेलता है और उनकी पूँजी का शिकार बनाता है।

❋ ❋ ❋

आज भारतीय कृषि क्या मांग करती है

I. आम परिप्रेक्ष्य

पिछले कुछ दशकों से अर्न्तराष्ट्रीय एवम् राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर नया कृषि तजुरबा सामने लाया गया है। यह दर्शाता है कि कृषि की दो पारम्परिक धारणाओं जैसे कि (क) प्राकृतिक संसाधनों को असीमित समझकर इनको मानवी शोषण का शिकार बनाना और (ख) साधारण किसानों को नगन्य तथा फिजूल भीड़ के रूप में देखना। इन दोनों धारणाओं के आधार पर आधुनिक कृषि को नहीं चलाया जा सकता है।

इन गलत धारणाओं को वास्तविक आधार पर नया रूप देने की जरूरत है। इनमें से पहली है, कुदरत के पक्ष से, कुदरती संसाधनों एवम् मानवीय संसाधन दोनों अन्तसंबंधित एवम् आत्मनिर्भर है। इसलिए इनमें से कोई भी एक दूसरे के साथ अन्तरक्रिया के बिना विकास नहीं कर सकते हैं। यह अन्तरक्रिया मानवी समाज का एक पक्ष बनती है तथा दूसरी, मनुष्य समाज के पक्ष से, आम जनता हर सामाजिक प्रक्रिया की शुरूआती निर्माता होती है जिसको भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों एवम् माहिरों द्वारा प्रक्रिया में ढालकर चमकाया और आखिरी शकल दी जाती है। दोनों सामाजिक वर्ग आत्मनिर्भर है एवम् आपसी अन्तरक्रिया के बिना विकास नहीं कर सकते। यह मानव समाज का दूसरा पक्ष बनता है।

मानव समाज के दोनों पक्ष माँग करते हैं कि इन दोनों की विकास प्रक्रिया के प्रसार को जारी रखने के लिए आगे वर्णित तीन ताकतों के हितों का सुमेल बनाना जरूरी है, ये है, प्राकृतिक संसाधन, आम जनता एवम् माहिर तथा विशेषज्ञ ग्रुप। अब इसे अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने स्वीकृत कर लिया है। त्रिपक्षीय उद्देश्य जैसे कि उत्पादकता, टिकाऊपन तथा न्यायसंगतता को पूरा करने की बड़ी कोशिशों के द्वारा ही यह मकसद प्राप्त किया जाता सकता है। इनमें से उत्पादकता पुरे मानव समाज, आम जनता तथा माहिरों समेत के, हित में है, टिकाऊपन प्राकृतिक संसाधनों एवम् मानवी समाज दोनों के हितों की सुरक्षा करती है एवम् न्यायसंगतता आम जनता तथा माहिरों के हितों (स्वस्थ मानवीय समाज की स्थापना के द्वारा) को एकजुट करती है। प्राकृतिक तौर पर, भारतीय कृषि की सारी रूकावटों का जवाब देने के लिए तथा इसकी पुनरसंरचना के लिए यह उद्देश्य हमारा व्यापक परिप्रेक्ष्य बनता है।

II. उत्पादकता वृद्धि के लिए

उत्पादकता सुधार के लिए तीन तकनीकों की जरूरत है कृषि प्रक्रिया का प्रभावशाली प्रबन्ध, बोवाई योग्य जमीन का विस्तार तथा तकनीकी विकास।

(क) प्रभावशाली प्रबन्ध

यह उत्पादकता के रास्ते में रुकावटों—जैसे (i) कृषि ढाँचें (ii) संसाधनों और उपयोगी सामग्री तथा (iii) मार्केट तथा वित्तीय मामलों—का उचित प्रत्युत्तर जरूरी है।

(i) कृषि ढाँचा

कृषि ढाँचें की पहली तथा बड़ी रुकावट भूमि जोतों को टुकड़ों में बँट जाना है जो आर्थिक तथा वित्तीय दोनों तरह से अव्यवहारिक बन गई है। हमारे ऊपर दिए गए त्रिपक्षीय उद्देश्यों के लिय यह जरूरी है कि हम इसको इस ढंग से हल करें कि एक तरफ हमारी भूमि जोत की व्यवहारिक इकाइयां (पैदावार के आधुनिक साधनों के उपयोग के अनुसार) बने एवम् दूसरी तरफ छोटे-छोटे किसानों के हितों की सुरक्षा करें। हमारे विचारों के अनुसार इसकी प्राप्ति के लिए भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में छोटे तथा बहुत छोटे किसानों (चार एकड़ से कम इकाइयों वाले) को तीन विशाल किस्म के कृषि उप ढाँचों में अपने जोतों को पुनर्संरचित करने के लिए तैयार किया जाना चाहिए।

(अ) सिंचाई वाली दो फसली भूमि, अलग-अलग क्षेत्रों में भूमि के गुणात्मक फर्क के अनुसार उत्पादन समर्थता (क्षमता) के लिए 10 एकड़ जमीन के प्राइवेट फार्म बनाने, यह किसानों की तरफ से एक दूसरे के साथ खेत सांझे करके भी बनाए जा सकते है। या एक छोटे या बहुत छोटे किसान द्वारा दूसरे छोटे तथा बहुत छोटे किसानों से ठेके या बँटाई पर लेकर भी 10 एकड़ का फार्म बनाया जा सकता है। ऐसे किसानों को उपयोग सामग्री तथा निवेश के लिए विशेष रियायतें दी जाए तथा जमानत के तौर पर भूमि गिरवी रखकर कम ब्याज पर कर्जे दिए जाएं। इन इकाइयों की मंडी लागतों को घटाने एवम् ज्यादा मंडी लाभ लेने के लिए सही सहकारी मंडियों में जोड़ देना चाहिए।

(ब) दरम्याने तथा छोटे किसानों की तरफ से जमीनों को मिलाकर अलग-अलग क्षेत्रों में भूमि के गुण अनुसार सिंचाई योग्य दो फसली भूमि के 100 एकड़ के सहकारी फार्म बनाए जा सकते हैं। ऐसे फार्म फसली उत्पादन तथा मंडीकरण दोनों के लिए बरते जाने चाहिए। ऐसा कानून बनाना चाहिए कि इसके संस्थात्मक फायदों के लिए कोई भी चार एकड़ की मिल्कयत से ज्यादा वाले किसानों को इसका सदस्य बनने की इजाजत नहीं होगी। तजुरबा दर्शाता है कि धनी किसान प्राय: इन संस्थाओं पर हावी हो जाते हैं। तथा अपने फायदे के लिए इनका (कमजोर किसानों का) शोषण करते हैं। सदस्य द्वारा मुख्य तौर पर किराये आधारित मजदूरी प्रदान की जाएगी। केवल विशेष केसों में ही बाहर से मजदूर लाए जाएंगे। सहकारी कृषि नए कानून पर आधारित होनी चाहिए, जो इसको लोक (जन) आधारित लहर बनाए तथा अफसरशाही की हर किस्म की दखलन्दाजी पर पूर्ण रोक लगाए।

(स) इकरारनामा खेती को केन्द्र तथा राज्य सरकारों की तरफ से विकसित करनी चाहिए। इकरारनामे द्वारा खेती (काश्त) का अर्थ है कि किसी उद्योगपति (जिसको अपने उद्योग के लिए विशेष कच्चे माल की जरूरत हो) या किसी निर्यातकर्ता (जो विशेष गुणात्मक कृषि माल को प्राप्त करना चाहता हो) या उनके नजदीकी किसी कृषि आधरित औद्योगिक इकाई (जिसको प्रासेस करने के लिए विशेष कृषि उत्पादक की जरूरत हो) के साथ इकरारनामें या समझौते के तहत् छोटे एवम् दरम्याने (मध्यम) किसानों द्वारा विशेष फसल की काश्त करना। यह प्रबन्ध एक तरफ छोटे एवम् बहुत छोटे किसानों के लिए अपनी जमीन की मिलिकियत तथा नियन्त्रण यकीनी बनाता है तथा दूसरी तरफ उनको व्यवहारिक बनाने के नजदीक ले जाता है।

काश्त का बुनियादी विचार लेबोरेट्री, फैक्ट्री, भूमि तथा मंडी के तत्वों को एकजुट करना है। इसका उद्देश्य संबंधित उत्पाद के उच्च मात्रा में उत्पादन का प्रबन्ध करना हैं किसानों को ब्लाकों में संगठित करके स्वीकृत कीमत पर इलाके एवम् मात्रा के लिए इकरारनामें पर दस्तखत करने एवम् बीज व नर्सरी जैसी चीजें उन्हें मुहैया करवाई जाएं। इकरारनामा काश्त, छोटे तथा बहुत छोटे किसानों की तरफ से 10 एकड़ वाले बनाए सिंचाई अधीन सहकारी फार्मो के लिए ज्यादा फायदेमंद है। इकरारनामा काश्त, दवाइयों वाले पौधे, जैव-विविधता, खेती-बंटवारा एवम् सम्भालने सहित सारी फसलों के लिए की जा सकती है। ऐसे बहुत से इलाके है जहाँ प्राइवेट तथा सरकारी क्षेत्र के उद्योग इसको विकसित कर सकते है। भारत में गन्ने व तम्बाकू उद्योग पहले ही इकरारनामा काश्त का उपयोग करते है। चीन, थाईलैंड और कई अन्य देशों ने अपने कई इलाकों में औद्योगिक खेती संबंध विकसित किए है। नई दिल्ली को इन तजुरबों से सीखना चाहिए। और इनको अपने हालात के अनुसार अपनाया जा सकता है।

(द) जहाँ तक बड़ी और मध्यम खेती जोतों का संबंध है इनके मालिकों को उनके फार्मों पर साधारण तरीके के साथ खेती करने की इजाजत होनी चाहिए।

(य) जहाँ तक खेत-मजदूरों का संबंध है, उनकी मायूसकून हालातों में सुधार के लिए कुछ कदम उठाने की माँग करती है। ये हैं....

(i) न्यूनतम मजदूरी तय करना और इसको सख्ती के साथ लागू करना।

(ii) उन भूमिहीनों को जिनको भूमि सुधारों, भूदान, ग्रामदान आदि अधीन पहले जमीनें मिली थी परन्तु वे आज तक उस पर स्थापित नहीं है उनको पुन: स्थापित करना चाहिए।

(iii) खाली जमीन जो किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए न रखी गई हो, को बचे भूमिहीनों को एलॉट किया जाना चाहिए।

(iv) पीने के पानी, शिक्षा और स्वास्थ्य की सामाजिक सुरक्षा की जानी चाहिए।

(v) ग्रामीण मकान स्थल सह मकान निर्माण योजना को लागू करना।

(vi) केन्द्र और संबंधित राज्य की तरफ से बराबर हिस्सेदारी के साथ हर एक मजदूर के लिए 30,000 रुपये देने यकीनी बनाना।

(vii) खेत मजदूरों के लिए बुढ़ापा पेन्शन स्कीम चलाना।

जहाँ तक खेती-बाड़ी को पुन: संगठित करने के चार अन्तर्राष्ट्रीय तजुरबों का सम्बन्ध है जैसे भूतपूर्व सोवियत या कम्युनिस्ट देशों का सामुदायिकरण का मॉडल, अमरीकी बड़े पैमाने की पूँजीवादी खेती, कुछ देशों में चलती सरकार केन्द्रित सहकारी खेती एवम् नई पैदा हो रही सहकारी खेती, ये सारे बढ़िया मॉडल साबित नहीं हुए, क्योंकि ये विश्व कृषि के मौजूदा त्रिपक्षीय उद्देश्यों जैसे उत्पादकता, टिकाऊपनता एवम् न्यायसंगता के साथ टकराते हैं प्रथमतया इनमें से कोई भी टिकाऊ खेती में खड़ा नहीं रहता, द्वितीयत: सोवियत मॉडल बराबरी पर जोर देता है, यह उत्पादकता को नजरअन्दाज करता है, अफसरशाही वाली सहकारी मॉडल भ्रष्टाचार से भरा हुआ है, और अमेरीकी तथा मौजूदा सहकारी मॉडल न्यायसंगत का ध्यान रखे बिना केवल उत्पादकता पर जोर देते हैं।

(ii) साधनों-संसाधनों का उपयोग

भूमि-सेहत एवम् जमीन के नीचे के खारे पानी जो रासायनिक खादों, कीटनाशकों एवम् नदीननाशक दवाइयों के ज्यादा उपयोग के कारण बढ़ रहा है, इसको रोकने के लिए भारतीय कृषि के माहिरों की राय अनुसार, निर्जीव उपयोगी सामग्री के विकल्प के तौर पर 1/3 हिस्सा जैविक (हरा या खेती यार्ड) खादों का उपयोग किया जाना चाहिए।

बहु फसलीकरण का ढंग अपनाकर कृषि उत्पादकता में गिरावट, भूमि पर बढ़ रहे बेअथाह भार को तथा पानी के अति-उपयोग को रोकने, जो कि माहिरों के विचारों के मुताबिक चावल-गेहूँ फसली चक्र प्रणााली का एक प्रभाव है। चावल-गेहूँ फसली चक्र के नीचे आने वाले क्षेत्र का कम से कम 30 प्रतिशत क्षेत्र और लाभदायक विकल्प वाली फसलों जैसे, फलों, सब्जियों एवम् खेती वन इत्यादि में तब्दील करना चाहिए।

संसाधन सामग्री के अच्छे प्रबन्ध से कृषि उत्पादकता बढ़ाना, अच्छे प्रबन्ध से अनाज, फलों और सब्जियों के कटाई के बाद के नुकसानों को रोककर हमारी कुल सालाना कृषि आमदनी में 25 प्रतिशत बढ़ौत्तरी करना।

खेतीबाड़ी को उद्योग का दर्जा देना।

भूमि सुधारों के अधूरे काम को पूरा करना एवम् इसकी पुरानी कमजोरियों को दूर करना।

किसानों हर गाँव में नई तकनीकों, उपयोगी सामग्री एवम् संबंधित कृषि तब्दीलियों की निरन्तर, समयबद्ध तथा उचित जानकारी देने के लिए राज्य स्तरीय विशेष सेवा शुरू करना।

प्राकृतिक संसाधनों की सम्भाल रखते हुए कुल उत्पादकता में बढ़ौत्तरी करना।

अनाज, दालों तथा बीजों के उत्पादकता विकास को फैलाना।

पैदावार के सारे साधनों तथा तत्त्वों को प्रभावशाली रूप में उपयोग करना।

समूचे रूप में और फसलवार जमीन, पानी तथा पशुधन की प्रत्येक इकाई की उत्पादकता बढ़ाना एवम् इनको अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों के स्तर पर लाना।

बारानी तथा बरसाती इलाकों में कृषि को विकसित करना।

कृषि-वन प्रणाली विकसित करना जैसे – जंगली वृक्षों से मिलती फसलें उगाना। यह काश्तकारों को अल्पकालीन एवम् दीर्घकालीन फायदा पहुँचायेगी।

भूमि सेहत में सुधार, पानी का उचित उपयोग तथा रोजगार-सह-आमदनी की बढ़ौत्तरी के लिए फसल-विविधता प्रणाली अपनाना।

बाकी बचा सिंचाई कार्य 10 सालों की समय सीमा में पूरा करना।

प्रभावशाली अवशिष्ट प्रबन्ध प्रणाली द्वारा फालतू पदार्थ को पुन: उपयोग में लाना।

सुरक्षित किस्मों को बचाने, उपयोग करने, विनिमय, हिस्सेदारी और उत्पाद को बेचने के किसानों के पारम्परिक अधिकार कायम रखने के लिए कानून बनाना परन्तु वो मार्के वाले बीजों को व्यापारिक मकसद के लिए नहीं बेचे।

(iii) मंडी और वित्तीय कारक

कृषि को उद्योग का दर्जा देना।

आवाजाही नेटवर्क तथा भंडारण के विकास एवम् कटाई के बाद के नुकसान घटाने के लिए अनाज, फलों व सब्जियों की कम से कम समय में संभाल में सुधार करके बुनियादी ढाँचा विकसित करने के लिए जरूरी फण्ड मुहैया करवाना।

गैर-जरूरी नियन्त्रण अथवा नियमों को हटाना एवम् देश में कृषि उत्पादों के मुक्त-आवागमन को सुनिश्चित बनाना। कृषि में निवेश तथा सुविधाओं में बढ़ौत्तरी को प्राथमिकता देना और ग्रामीण ऋण प्रणाली को कृषि एवम् कृषि-उद्योगों को खास करके सीमान्त और बहुत छोटे किसानों को दुगुना कर्जा देकर पुनरगठित करना, कुल कर्जे तथा निवेश के 30 प्रतिशत द्वारा कृषि के लिए बैंक कर्जे तथा निवेश में बढ़ौत्तरी करना।

देश स्तर पर प्रभावशाली फसल बीमा स्कीम को सुनिश्चित बनाना, जो कि हर फसल के जोखिम के ठोस अनुमानों पर आधारित हो। बड़ी किस्तों की हालत में छोटे तथा मध्यम किसान उन किस्तों को जुटाने के योग्य नहीं होंगे।

ठोस कृषि-मूल्य नीति को सुनिश्चित करना। कृषि उत्पादों की कीमतों में बढ़ौत्तरी के लिए गाँवों में तथा आस-पास कृषि प्रोसेसिंग उद्योग विकसित करना। यह किसानों की आवाजाही, भंडारण, माँग तथा रोजगाार समस्याओं को हल करने में मददगार होंगे एवम् ग्रामीण क्षेत्रों में खुशहाली लायेंगे।

(ब) जोताई योग्य क्षेत्र का विस्तार

उपलब्ध क्षेत्र में किसी नई जोताई योग्य जमीन में बढ़ौत्तरी की बहुत कम संभावना है परन्तु 16 करोड़ 60 लाख हैक्टेयर जमीन जो बर्बादी एवम् गिरावट में है, इसको जोताई योग्य बनाया जा सकता है यदि इस बारे में उचित कदम उठाये जाएं। बढ़ी हुई कृषि की माँग को विकास में बढ़ौत्तरी से ही पूरी कर सकते हैं।

(स) तकनीकी विकास

कृषि में खोज तथा विकास के लिए फण्ड एलाटमेन्ट की बढ़ौत्तरी 0.3 प्रतिशत से 1 प्रतिशत करना।

पर्यावरणीय प्रणाली की सम्भाल तथा प्रबन्ध के लिए नई खोजे करना।

पर्यावरण अनुकूल, स्थान के मुताबिक, कम निवेश सामग्री, प्रतियोगी लागत तथा व्यक्तिगत स्तर की तकनीकें विकसित करना।

शुष्क जमीनों के लिए नई तकनीकें विकसित करना।

अनाज, फलों तथा सब्जियों के लिए नई हाईब्रिड-किस्में विकसित करना।

नई प्रोसेसिंग तकनीकों को विकसित करना।

जैविक-खादों के लिए नई तकनीकें विकसित करना।

भारतीय खोज संस्थाओं को अन्तर्राष्ट्रीय नेट-वर्क के साथ जोड़ना।

सरकारी तथा प्राइवेट फंडों के आकर्षण के द्वारा कृषि-खोज, खासकरके पौधों की नई किस्मों की खोज में तीव्रता लाना।

परिशोधन परियोजनाओं के द्वारा शहरी अपशिष्ट पदार्थों से खाद पैदा करना।

कृषि के बचेखुचे पदार्थों से कम लागत वाली बिजली पैदा करना जैसा चावल के भूसे से।

वृक्षों तथा जंगलों के विकास के लिये क्लोनिंग तकनीक का उपयोग करना।

III. टिकाऊपन प्राप्त करने के लिए

पौधे लगाकर बंजड़ इलाकों को हरा-भरा बनाना। जंगल क्षेत्र बढ़ाना।

क्षयग्रस्त भूमि और कमजोर भूमि के पुन: उपयोग के लिए प्रोजेक्ट तैयार करना।

नदी, बरसाती, जमीनी, सीवरेज और समुन्दरी पानी के उपयोग के लिए वैज्ञानिक संयुक्त उपयोग प्रणाली को विकसित करना।

प्राकृतिक संसाधनों का प्रभावशाली प्रबन्ध करना।

टिकाऊ तकनीकों के उपयोग पर जोर देना, पानी अनाजों के नुकसान तथा पौष्टिक भोजन के प्रबन्ध संबंधी एकजुट तकनीक विकसित करना। यह क्षमता को बढ़ाने तथा ऊर्जा की बचत के द्वारा उत्पादन की बढ़ौत्तरी में सहायक कदम होगा। इस प्रकार उत्पादन के खर्चे को कम करेगा।

भारत की सिंचाई समर्थता (अन्दाजन 11 करोड़ 40 लाख हैक्टेयर) खासतौर पर खुश्क भूमि इलाके के लिए वर्षा के पानी को सम्भालकर, बढ़ाना।

कृषि उत्पादकता में सुधार, पर्यावरण सुरक्षा तथा जैव-विविधता की रक्षा के लिए जमीन की ऊपरी सतह, पानी; जंगल तथा प्राकृतिक साधनों की सम्भाल के लिए पहलकदमियाँ लेना।

देश के हर जिले में नीचे लिखे नुक्तों के आधार पर टिकाऊ भूमि उपयोगी प्रणाली बनाना तथा उसे आगे बढ़ाना।

(क) टिकाऊ तीव्रीकरण : अच्छी भूमि की सेहत पर उचित ध्यान देकर उस पर तीव्र खेती की जा सकती है (मौजुदा समय में देश के लिए समूचे रूप में 136 फार्म हैं)।

(ख) क्षेत्रों की पुन आरोग्यता : बंजड़ भूमि विकास कारोबारों के ठीक उपयोग के द्वारा कमजोर जमीनों को पुन: आरोग्य किया जा सकता है।

(ग) क्षेत्र का संरक्षण : जंगलों और जैव-विविधता से भरपूर क्षेत्रों की पुरानी शुद्धता कायम रखी जानी चाहिए।

ग्रामीण व कस्बों में बस रहे लोगों के साथ निचले स्तर तक बने संगठनों के सहयोग से टिकाऊ भूमि और पानी उपयोग की नीतियों और कार्यविधियों को प्रमुख उद्देश्यों के रूप में अपनाना।

गाँवों के साथ जुड़ा एक आसान पहुँच योग्य तथा प्रभावशाली जिला खोज सूचना केन्द्र कायम करना।

देश के तुलनात्मक पिछड़े क्षेत्रों में नई तकनीकों तथा उपयोगी सामग्री का ज्ञान फैलाना एवम् पहुँचाना।

छोटे स्तर के जल विभाजक के लिए टिकाऊ एकजुट विकास रणनीति की शुरूआत करना।

IV. न्यायसंगतता सुनिश्चित बनाने के लिए

उत्पादकता, टिकाऊपन तथा न्यायसंगतता के आधार पर कृषि का विकास करने में सबसे महत्वपूर्ण काम ग्रामीण मानवीय संसाधनों का विकास करना है। क्योंकि वे कृषि से संबंधित लोग हैं, केवल वो ही प्राकृतिक संसाधनों तथा कृषि की उपयोगी सामग्री के इस्तेमाल से इसकी विकास प्रक्रिया को जारी रख सकते है। एक बार किसी प्रक्रिया से संबंधित लोगों के जागृत और प्रेरित हो जाने से कोई भी संभव काम हकीकी और चमत्कारिक तरीके से पूरा हो जाता है।

ग्रामीण मानवीय संसाधनों का विकास करना, कार्यों की पूर्ति के लिए जरूरी है।

(i) शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढाँचे में सुधार करना।

(ii) ग्रामीण जनता के ज्ञान तथा कुशलता को विकसित करना।

(iii) खेत-मजदूरों तथा सीमान्त किसानों के जीवन सुविधाओं को अच्छा बनाना।

(iv) छोटे किसानों को उपयोग सामग्री से रियायत देना तथा उन्हें सस्ते कर्जे मुहैया करवाना।

(v) मध्यम तथा अमीर किसानों के लिए स्थिर कीमत नीति, आजाद राष्ट्रीय मंडी, दीर्घकालीन कर्जे, निर्यात सुविधाओं, आदि को सुनिश्चित बनाना।

(vi) भिन्न-भिन्न स्कीमों जैसे आई आर डी पी, जवाहर रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना आदि के तहत ग्रामीण विकास के लिए मिलने वाले फंडों के उचित उपयोग के लिए ग्रामीण चुनिन्दा कमेटियों को निगरानी का अधिकार देना।

(vii) अफसरशाही कानूनों में संशोधन करके तथा विभाग की अफसरशाही नीति में तब्दीली द्वारा सहकारी लहर का पूर्ण जनवादीकरण करना।

(viii) महिला को उसके पति की जमीन सहित सारी जायदाद में सह-मालिक बनाना तथा सभी चुनावी संस्थाओं में उन्हें 50 प्रतिशत आरक्षण देना।

(ix) हर पंचायत (यानि इसके सारे सदस्यों सहित) को प्रत्येक 6 महीने बाद (यानि साल में दो बार) अपने हलके की मिटिंग करके अपने 6 महीने का रिकार्ड आम सभा में उस पर टिप्पणी करने के लिए प्रस्तुत करना, कानूनी जिम्मेवारी बना कर वोटरों के आगे पंचायत को जवाबदेह बनाना।

❋ ❋ ❋

भारत की 'हरित क्रांति' कृषि जकड़ में पंजाब को गंभीर कृषि संकट का सामना

I

आज पंजाब के पास विश्व के भौगोलिक क्षेत्र का 0.0003 प्रतिशत भाग है परन्तु यह विश्व की कुल पैदावार से गेहूँ का 2.27 प्रतिशत, चावलों का 2.04 प्रतिशत, तथा कपास का 2.05 प्रतिशत हिस्सा डालता है। राष्ट्रीय स्तर पर देश के भौगोलिक क्षेत्र का इसके पास महज 1.5 प्रतिशत क्षेत्र है परन्तु देश के अन्दर गेहूं का 21 प्रतिशत, चावलों का 9 प्रतिशत और कपास की 15 प्रतिशत पैदावार के द्वारा पंजाब देश की कुल कृषि पैदावार में तकरीबन 9 प्रतिशत योगदान दे रहा है। यह पिछले दो दशकों से केन्द्रीय पूल में चावल का 50 प्रतिशत और गेहूँ का 70 प्रतिशत योगदान डाल रहा है। पंजाब का अपना क्षेत्र 50 लाख 3 हजार (5.03 मेघा) हैक्टेयर है। इसमें 42 लाख 10 हजार हैक्टेयर फसलों के अधीन है। इस प्रकार पंजाब का 84 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र फसलों के अधीन है। फसली सघनता 1947-48 में 117 प्रतिशत से आज 183 प्रतिशत हो गई है। 1950-51 में 53 प्रतिशत के मुकाबले सिंचाई वाला करीब 94 प्रतिशत क्षेत्र है। फलस्वरूप बड़े स्तर पर मुख्य रूप से चावल-गेहूं फसली चक्र, व्यापक सिंचाई तथा बड़ी मात्रा में रासायनिक निवेश (कीटनाशक तथा नदीननाशक दवाइयाँ, खादों आदि) पंजाब की कृषि की विशेषताएं हैं।

पिछले 50 सालों के दौरान पंजाब में अनाज पैदावार 20 लाख टन से बढ़कर 1996-97 तक 2 करोड़ 18 लाख टन तक पहुँच गया। इसका अर्थ है कि इसमें 11 गुना बढ़ौत्तरी हुई है। खेतीबाड़ी पंजाब राज्य की कुल घरेलू पैदावार में 44 प्रतिशत हिस्सा डालती है।

काश्तकारों की गिनती 1960-61 में 160200 के मुकाबले में बढ़कर 1995-96 में 1992000 तक पहूँच गई है। इस दौरान खेत-मजदूरों की गिनती में 5 गुना बढ़ौत्तरी हुई है। पंजाब की कृषि में लगे मनुष्यों की गिनती 1995-96 तक करीब दुगुनी हो गई। टिब्यून 26.11.97

कृषि पैदावार में बढ़ौत्तरी की बड़ी प्राप्ति 1965-66 में तब हुई जब अधिक उपज देने वाली मैक्सिकन किस्म की गेहूँ पहली बार राज्य में आई। दूसरा बड़ा कदम 1970 के मध्य में आया जब चावल की लघु किस्त सामने आई, इसके साथ चावल की पैदावार में कई गुना बढ़ौत्तरी हुई।

II

उत्पादन में एक मिसाली बढ़ौत्तरी के बाद पंजाब की कृषि आज कई बहुत सी गंभीर समस्याओं से घिरी हुई है। इसकी चावल, गेहूँ, कपास, गन्ना, मक्की आदि की उत्पादकता गिरावट की तरफ जा रही है इसके उत्पादन के पर्यावरणीय तत्व, पानी, जंगल, जैव-विविधता आदि हद से ज्यादा दबाव के अधीन है। इसकी ग्रामीण आर्थिकता ज्यादा से ज्यादा अन्यायपूर्ण बनती जा रही है। पंजाब में काश्त अधीन क्षेत्र में बढ़ौत्तरी की कोई गुंजाइश नहीं हैं अधिकतर कृषि योग्य भूमि काश्त अधीन है। मुख्य कृषि उपयोगी सामग्री की खपत राष्ट्रीय स्तर पर 165 किलोग्राम के मुकाबले बहुत ज्यादा है। बढ़ रही आबादी के कारण जमीन के टुकड़ों में बँटने के कारण लघु से लघु किसानों के लिए कृषि अब घाटे का सौदा बन गई है। निवेश वस्तुओं की कीमतों और मजदूरी में बढ़ौत्तरी के साथ उत्पादन लागत बढ़ गई है। 1975-76 से 1996-97 के उपलब्ध आँकड़े दर्शाते है कि गेहूँ की काश्त में 6 गुना, कपास में 7 गुना और चावल की काश्त में 10 गुना लागत बढ़ गई है। कृषि के खर्चे में हुई बढ़ौत्तरी ने कृषि भाइचारे की कर्जदारी में बढ़ौत्तरी की है (ट्रिब्यून 6.8.98 पेज 9) अनुमान लगाया गया है कि पंजाब के ऊपर कुल कृषि ऋण 5700 करोड़ रुपये है। ऋण ब्याज का सालाना बोझ 1103 करोड़ पड़ रहा है जो कृषि उत्पादन के शुद्ध मूल्य का लगभग 11 प्रतिशत है। पंजाब की कृषि की बढ़ रही अव्यवहारिकता का नतीजा कितने ही किसानों द्वारा की गई आत्महत्याओं से उजागर होता है। इस सब-कुछ से पंजाब की कृषि के दृश्य का स्पष्ट अन्दाजा लगता है।

III

समस्या की गहराई को समझने के लिए हाल ही में प्रकाशित तीन विशेषज्ञों की रिपोर्टों का विवरण देना जरूरी है। जिन्होंने पंजाब कृषि की असल हालत ऊभारी है। एक रिपोर्ट में तीन सदस्यीय केन्द्रीय टीम जो केन्द्रीय कृषि मंत्रालय ने पंजाब और हरियाणा की कृषि समस्याओं और उनके हल का गंभीर विश्लेषण करने के लिए बनाई थी, इसने विशेषज्ञों, राजनीतिज्ञों और अफसरशाहों के साथ विचार-विमर्श के बाद तैयार की थी। दूसरी रिपोर्ट पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के दो प्रोफेसरों द्वारा 'पंजाब कृषि का एक अध्ययन' प्रस्तुत किया है। तीसरी रिपोर्ट पंजाब राज्य के वित्तिय संसाधनों का विश्लेषण है जो लोक वित्त और नीति के राष्ट्रीय संस्थान, नई दिल्ली द्वारा सामने लाया गया है।

पहली रिपोर्ट (1998) जो कृषि अनुसन्धान की राष्ट्रीय परिषद् की तरफ से प्रकाशित की गई है। इसमें कहा गया है कि पंजाब और हरियाणा की कृषि में गिरावट राष्ट्रीय चिन्ता का विषय है।

क्योंकि ये दोनों केन्द्रीय खाद्य भंडार में गेहूँ का 85 प्रतिशत और चावल का 60 प्रतिशत योगदान डालते हैं और जिनके पास बहुत ही अनुकूल हवा-पानी, नहरी-प्रणाली का जाल, भूगर्भीय जल, मंडी का बनियादी ढाँचा, मानवीय उत्साह, नये प्रयोगों का जज्बा और सख्त मेहनत है—कृषि में गिरावट का अर्थ है राष्ट्रीय आर्थिकता और खाद्य सुरक्षा को खतरा पैदा होना। यह पंजाब और हरियाणा की कृषि ही है जिसने राष्ट्रीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली को जारी रखा है। यह प्रक्रिया अभी जारी है परन्तु इसने गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों दृष्टियों से क्षति उठाई है।

मुख्य फसलों के रूझानों जैसे उत्पादन, प्रति इकाई उत्पादकता, सिंचाई, पौध संरक्षण, इत्यादि का जायजा लेने के बाद कमेटी इस नतीजे पर पहूँची कि अधिकतर समस्याएँ गेहूँ-चावल फसली चक्र और कमजोर भूमि सेहत के कारण पैदा हुई है। एक सावधान आशावाद का इजहार करते हुए रिपोर्ट में 'हरियाणा और पंजाब नजरिया, 2020' नाम की परिप्रेक्ष्य योजना तैयार करने का सुझाव दिया गया।

कमेटी ने किसानों की जरूरतों के साथ एकजुटता के आधार पर एक व्यापक पर्यावरणीय सुरक्षा प्रोग्राम को तलाशने का सुझाव दिया है। ब्लाक या शुरूआती स्तर पर जरूतमंद फसली निवेश की गुणात्मक पूर्ति के लिए "एक खिड़की" प्रणाली की जरूरत है। पर्यावरणीय गिरावट पर रोक के लिए एक उद्यमी पैकेज को भी तैयार करना चाहिए।

पंजाब और हरियाणा में उत्पादन गिरावट का मुख्य कारण भूमि-सेहत की खराबी माना जाता है।

इसने अधिकतम पैदावारी किस्मों की बिजाई और प्रति इकाई उत्पादकता बढ़ाकर खाद्य उत्पादन में बढ़ौत्तरी करने, जैसे -फल, सब्जियों, मुर्गी-फार्म, और दूध उत्पादन, बढ़ती आबादी, खेतिहर जमीन के घटने और शहरीकरण को रोकने पर बल दिया है। इसने कृषि को कृषि-उद्योग और कीमत जोड़ के द्वारा बदल कर इसका वाणिज्यकरण कर दिया है।

(ख)

(क) एक और अध्ययन (1998) में पंजाब कृषि की गिरावट के बारे में तीन नुक्ते नोट किए गए हैं -

(i) प्रति व्यक्ति फसल आमदन विकास दर में गिरावट (ii) कृषि विकास दर में कमी (iii) चावल, गेहूँ और गन्ने के उत्पादन की प्रति एकड़ असल आमदनी में हो रही कमी। इन उपरोक्त नुक्तों का विवरण देते हुए रिपोर्ट कहती है कि, प्रति-व्यक्ति असल आमदन 1993-94 में 4022 रुपए प्रति वर्ष थी जिसका 1996-97 में बढ़कर 4371 रुपये होने के कारण देश के समूचे विकास को 17.64 प्रतिशत के मुकाबले

8.66 प्रतिशत दर्शा रही है। पशुधन समेत कृषि की औसत सालाना विकास दर छठी योजना में 5.44 प्रतिशत से घटकर आठवीं योजना में 3 प्रतिशत हो गई जो आगे बढ़कर 9वीं योजना में और भी घटकर 2.38 प्रतिशत रह गई। चावल-गेहूँ फसली चक्र का स्तर 1981-82 में प्रति व्यक्ति असल आमदन में सिफारिश की गई तकनीक के स्तर से 1981-82 की 3410 के मुकाबले 1997-98 में 3186 रुपये से नीचे आ गई। गन्ने के मामले में तुलनात्मक आँकड़े 4150 रुपये से 2199 रुपये तक की गिरावट दर्शाते हैं।

अध्ययन में नोट किया गया है कि कृषि में लाभदायकता की कमी के फलस्वरूप-जमीन के ठेके की कीमत के घटने से आमदनी में और अधिक गिरावट आई है। आमदनी में कमी तथा मुद्रास्फीति के बढ़ने के कारण या तो किसान अपनी जायदाद बेच रहे हैं या कर्जे में डूब रहे हैं संस्थात्मक ऋण की कमी के कारण किसान आढतियों से ऊँची ब्याज दरों से कर्जा लेने के लिए मजबूर हैं।

(ख) खेतीबाड़ी में गिरावट के कारणों को सूचीबद्ध करते हुए अध्ययन टिप्पणी करता है कि बावजूद कृषि उत्पादों की कीमतों में बढ़ौत्तरी के, उपयोगी सामग्री (Input) की कीमतें भी तेजी से बढ़ती जा रही है। दूसरी तरफ फसल उत्पादकता में स्थिरता के परिणामस्वरूप लाभदायकता में कमी आ गई है।

स्थाई पूँजी खासकर खेती-मशीनरी (ट्रेक्टरों की गिनती 1980-81 की 125 हजार से बढ़कर 1995-96 में 350 हजार से ज्यादा हो गई है) में अधिकतर निवेश ने उत्पादन लागत में बढ़ौत्तरी की है। इसने सूची में कमजोर आर्थिक हालतों के कारण देहाती इलाकों में साक्षरता की निचली दर और पंजाब में काश्त अधीन जमीनों के आकार (45 प्रतिशत किसान दो एकड़ से भी कम के मालिक है) में गिरावट को भी दर्ज किया गया है। अनिश्चित मौसम, पानी की सतह में गिरावट, और कपास क्षेत्र में सेम ने हालत बदत्तर कर दी है।

इलाज सुझाते हुए अध्ययन में कृषि साजो-सामान (जैसे स्प्रे-पम्प, बिजाई वाली मशीन, ट्रेक्टर का सामान, खादों तथा कीटनाशक दवाइयों), में अधिकतर रियायतों की सिफारिश, मुफ्त बिजली सप्लाई की हिमायत और समयबद्ध गुणात्मक निवेश की माँग की गई है। इसमें अलग-अलग पेमानों के माध्यम से भूमि जोतों के आकार में बढ़ौत्तरी करने की वकालत की गई है। इनमें से एक पैमाना जमीन-पट्टा मंडी (लेण्ड लीज मार्केट) को उदार बनाना है, जिसमें कानून अधीन भूमि के छिनने के जोखिम के बिना लघु किसान अपनी जमीनों को पट्टे (लीज) पर दे सकें और विकल्प के तौर पर रोजगार के मौके तलाश सके। इसने ग्रामीण उद्योगों के माध्यम से गैर-कृषि रोजगाार पैदा करने, पंजाबी किसानों को दूसरे राज्यों में जाने और सुधार के लिए कमजोर जमीनों को खरीदने की अनुमति देकर, दूसरे राज्यों से मजदूरों की

निरन्तरता से किसानों और उदार संस्थाओं से अच्छा तालमेल पैदा करने की सिफारिश भी की है। इसमें केन्द्र सरकार को प्राकृतिक साधनों के बड़े निकास, जैसे भूगर्भीय जल, भूमि उपजाऊपन आदि की जगह पंजाब को राष्ट्रीय पूल में भेजी गेहूँ और चावल से रायल्टी देने की अपील की है।

(ग)

सार्वजनिक वित्त और नीति का राष्ट्रीय संस्थान, नई दिल्ली से प्रकाशित तीसरी रिपोर्ट (1998) में कहा गया है कि सभी लम्बे-चौड़े वादों के बावजूद पंजाब को आज आर्थिक चुनौती का सामना है।

रिपोर्ट के अनुसार इस चुनौती का मुख्य पहलू बुनियादी ढाँचा निवेश में गिरावट, पूँजी निवेश और माली एडजेस्टमेंट की जरूरत से अधिक बोझ डालना, पानी के उपयोग की बढ़ रही अयोग्यता और एक अव्यवहारिक विद्युत क्षेत्र, सभी स्तरों पर प्राइमरी शिक्षा बीच में छोड़े जाने की उच्च दर, आदि हैं। पंजाब 1994-95 की कीमतों से 14188 रुपए प्रति व्यक्ति आमदन वाला तीसरा खुशहाल राज होने के बावजूद इस राज्य में भावी वृद्धि और विकास के आसार के बारे में गंभीर चिन्ता ऊभरी है।

राज्य की आर्थिकता का सबसे चिन्ताजनक मुद्दा 1980 के मध्य में इसकी विकास दर का राष्ट्रीय विकास दर से भी नीचे रहना शुरू हुई और सत्ता छोड़ रही एक सरकार की तरफ से बहुत से लोक लुभावने नारे उपयोग में लाना तथा उसके बाद आने वाली सरकार उन्हें वापिस लेने की बजाय उलटे और पक्की पैरवी करने लग गई।

रिपोर्ट चेतावनी देती है कि यदि संस्थात्मक, अंचल और वित्तीय नीतियों को साधन पैदा करने के अनुकूल बनाने के लिए साहसी कदम नहीं उठाए गए तो राज्य की आर्थिकता लगातार गिरावट की और बढ़ती जाएगी।

IV

उपरोक्त लेखा जोखा यह दर्शाता है कि पंजाब गंभीर कृषि संकट का शिकार है। इस संकट का केन्द्रीय लक्षण है कि राज्य में कृषि अब लाभदायक धन्धा नहीं रहा है। इस संकट के और नोट करने योग्य पैदावारी लक्षण है : कृषि उत्पादकता गिरावट की तरफ जा रही है, जबकि उपयोग सामग्री की लागतें निरन्तर बढ़ रही हैं, समूचे रूप में और प्रति व्यक्ति कृषि विकास दरें राष्ट्रीय औसत से बहुत पीछे है, कपास, गन्ना तथा मक्की में गिरावट का रूझान जारी है जबकि गेहूँ और चावल ठहराव में है। चावल-गेहूँ फसली चक्र द्वारा प्रति व्यक्ति (1981-82 आधारित) असल आमदन नीचे की तरफ जा रही है, मुख्य रूप से चावल के संरक्षण के लिए गुणात्मक नियमों की कमी के कारण पंजाबी चावल देश में अपना शुरूआती आकर्षण गंवा चुके हैं,

पंजाब के किसान चावल-गेहूँ फसली चक्र के ऊपर निर्भर हो गए हैं क्योंकि उनको कोई और रास्ता दिखाई नहीं देता, तेजी से बढ़ रहा कर्ज जाल किसानों को खुदकुशी की ओर धकेल रहा है।

प्राकृतिक संसाधनों के पतन के कारण संकट का पर्यावरणीय पक्ष उतना ही गंभीर है। भूमि बिमार है, जल-स्रोत गिरावट की ओर जा रहे हैं, खारापान और सेम बढ़ रहे हैं, औद्योगिक कचरे, जैसे-नाइट्रेट्स, सल्फेट्स और क्लोाइड के कारण धरातली तथा भूगर्भीय जल दोनों दूषित हो कर मनुष्य की खपत के अयोग्य बनते जा रहे हैं। जंगली कवच (मुख्य तौर पर शिवालिक की पहाड़ियों में केन्द्रित), सिकुड़ रहा है। यह भौगोलिक क्षेत्र का केवल 3 प्रतिशत रह गया है बाकी जंगल इसकी धरती के आधार का कम से कम 20 प्रतिशत होना चाहिए। यहाँ तक कि 10 प्रतिशत वृक्ष और गैरसेहतमंद पर्यावरण में है।

कृषि संकट का विस्तार भी स्पष्ट है। कृषि की लाभदायकता में कमी के कारण जमीन के ठेके की कीमत घट गई है। परिवारों की संख्या में बढ़ौत्तरी के साथ जमीन की मालिकी का बँटवारा हो रहा है।

संकट का मनुष्य के साथ संबंधित पक्ष भी कम गंभीर नहीं है। मानव संख्या बढ़ रही है, गरीबी बढ़ रही है, बेरोजगारी में बढ़ौत्तरी हो रही है, शिक्षा (खासतौर पर प्राईमरी स्तर पर); स्वास्थ्य की रक्षा तथा बुनियादी ढाँचा बुरी हालत में है, ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की कमी, गरीबी, बेरोजगारी, अज्ञानता, अन्धविश्वास आदि के कारण निराशाजनक माहौल पैदा हो रहा है। खेत-मजदूर तथा बहुत छोटे और छोटे किसानों की हालत बद से बदत्तर होती जा रही है।

आर्थिक संकट का समूचा प्रतिबिम्ब बहुत चुनौतीपूर्ण है। राज्य का सामान्य विकास गिरावट में है। जहाँ औसत सालाना विकास दर गिरावट में है, कृषि प्रधानता वाली इसकी कुल घरेलू पैदावार के साथ राज्य की आर्थिकता असन्तुलित है, इसके साँझे फंड में कुछ भी शामिल किए बिना दूसरे राज्यों के मुकाबले पंजाब में कोई बड़ा केन्द्रीय प्लांट नहीं लगाया गया, पंजाब को केन्द्रीय सहायता देश में सबसे कम है, भारत के किसी भी हिस्से की तरफ से पंजाब में कोई बड़ा प्राइवेट निवेश नहीं किया गया, औद्योगिक विकास के बहुत पिछड़ा होने का कारण जरूरत से कम वित्त हो सकता है, छोटी औद्योगिक इकाइयों की बिमारी भी बैंक की बहुत ज्यादा ब्याज दर के कारण बढ़ रही है, चीनी उद्योग भी (20 चालू मिलों के साथ) गड़बड़ ग्रस्त है।

V

वहीं हरित क्रांति जिसने लगभग दो दशक पहले पंजाब को भारत का अन्न भंडार बनाया तथा देश में सबसे ज्यादा प्रति व्यक्ति आय के साथ इसके लोगों के लिए

खुशहाली लाई, आज पतन के संकेत क्यों दर्शा रही है? मुख्य कारण भूमि सेहत की बदत्तर हालत के साथ ही भूमि के मालिकाना का घट रहा आकार, रासायनिक खादों, कीटनाशक तथा नदीननाशक दवाइयों का अधिक उपयोग, चावल-गेहूँ फसली चक्र प्रणाली, बरतों (उपयोगी) सामग्री पर बढ़ रहा खर्च, साधनों तथा निवेश के उपयोग की कुशलता एवम् योग्यता की कमी, कमजोर बुनियादी सहूलियतें (जैसे बिजली, यातायात और भंडारण इत्यादि), जरूरत से कम कर्जे की सहुलियतें, धन कुबेरों द्वारा ऊँची ब्याज दरों, जरूरत से कम फसल बीमा सेवाओं, भारत के कुल निर्यात में छोटा हिस्सा, किसानों के लिए आवश्यक खोजों की कमी, किसानों को मौजूदा खेती तकनीकों एवम् नई तकनीकी खोजों तथा मंडी कीमतों की सूचना की कमी, खेतीबाड़ी मंडी प्रणाली में नुक्स, देहाती क्षेत्रों में शिक्षा की कमी, गरीबी, बेरोजगारी, पुराने रीति रिवाज तथा परम्पराएं आदि हैं।

फिर भी पंजाब कृषि संकट के लिए मुख्य जिम्मेवारी केन्द्र तथा राज्य सरकार की है। केन्द्र की जिम्मेवारी इस तथ्य में है कि यह कृषि पैदावार की राष्ट्रीय विकास दर को बढ़ाने में निराशाजनक हद तक असफल हुई है। इसने अपने अधिक खाद्य भंडार की जरूरतें पुरी करने के लिए आसान रास्ता अपनाकर कीमतों तथा मंडी के अलग-अलग प्रलोभन के तहत् पंजाब व हरियाणा की कृषि पर बेतहाशा बोझ लाद दिया। हालांकि यह 1980 के शुरू में ही स्पष्ट हो गया था कि पंजाब में धमाकेदार बड़ा कृषि संकट ऊभर रहा है और यह कि सरकार के अपने कृषि विशेषज्ञों के मुताबिक यह चावल-गेहूँ के फसली चक्र के प्रभाव के कारण है केन्द्र ने इस गंभीर खतरे को पंजाब के लोगों से छिपाए रखा तथा अपनी जरूरतों के लिए पंजाब की कृषि का शोषण जारी रखा। यहाँ तक कि यह अभी भी अपने उसी रास्ते पर चल रही है तथा पंजाबियों को चावल-गेहूँ फसली चक्र के स्थान से फसली विविधता से ज्यादा लाभदायक तथा उचित रास्ता अख्तियार करने के लिए कायल नहीं करती है। राज्य सरकार इस पक्ष से जिम्मेवार है कि इसने न तो पंजाबियों को खतरे की गंभीरता के बारे में सूचित किया और ना ही इस चुनौती का मुकाबला करने के लिए कोई कार्य योजना तैयार की और ना ही पंजाब कृषि एवम् इसके किसानों को बर्बादी से बचाने के लिए केन्द्र से समयबद्ध तथा उचित ढंग अपनाने के लिए कहा।

VI

अब भारतीय लोगों के सामने आम तौर पर तथा पंजाबियों के लिए खासतौर पर सवाल है कि चीजों को ठीक रास्ते पर कैसे लाया जाए। इसके विशाल सन्दर्भ में सारे हरित-क्रांति इलाके के लोगों मुख्यतौर से हरियाणा, पश्चिमी उत्तरप्रदेश तथा राजस्थान में गंगानजर जिले को अलग-अलग मात्रा में इस समस्या का सामना करना

पड़ रहा है। हमारे अपने तजुरबे के साथ-साथ विश्व तजुरबा दर्शाता है कि इस संकट के बुनियादी कारण को जवाब देने के लिए पंजाब को अपनी कृषि को टिकाऊ, उत्पादक तथा न्यायसंगत आधार पर पुनर-निर्माण, प्रासंगिक आर्थिक तब्दिलीयों के द्वारा इसकी असन्तुलित, न सम्भालने योग्य तथा अन्याय संगत आर्थिकता को संतुलित, सम्भालने योग्य तथा न्यायसंगत आर्थिकता में तब्दील करना चाहिए।

(क)

भूमि सेहत एवम् पानी सुरक्षा की पुनर्स्थापना बाबत् टिकाऊपन प्राप्त करने के लिए।

भूमि सेहत एवम् भूगर्भीय जल के गहरे होने, जो रासायनिक खादों, कीटनाशक एवम् नदीननाशक दवाइयों के ज्यादा उपयोग के कारण बढ़ रहा है। इसको रोकने के लिए भारतीय कृषि विशेषज्ञों की राय के अनुसार निर्जीव उपयोगी सामग्री के विकल्प के तौर पर 1/3 जैविक पदार्थ (हरा या खेती यार्ड) या जैविक खादों का उपयोग किया जाना चाहिए। पंजाब कृषि के विकास के लिए यह रणनीतिक कार्य है।

बहु फसलीकरण का ढंग अपनाकर भूमि पर बढ़ रहे बेअथाह भार को तथा पानी के अति-उपयोग को रोकना जो कि विशेषज्ञों के विचारों के अनुसार चावल, गेहूँ फसली चक्र प्रणाली का एक प्रभाव है। चावल-गेहूँ फसली चक्र के तहत् क्षेत्र का कम से कम 30 प्रतिशत भाग दूसरी लाभदायक विकल्पकारी फसलों, फलों, सब्जियों आदि द्वारा तब्दील करना चाहिए। पंजाब कृषि के विकास का यह फौरी मुख्य काम है।

कृषि वन-पालन को विकसित करना जैसे दोनों तरह के अल्पकालीन व दीर्घकालीन फायदे के लिए भूमि तथा जल के फायदे को यकीनी बनाने के लिए कृषि-वन पालन फसलों को पैदा करना।

सारी खाली जगहों में वृक्ष लगाना और मटैले क्षेत्र को हरा-भरा बनाकर जंगली कँवर में बढ़ौत्तरी करना।

नीचे लिखे नुक्तों के आधार पर हर ब्लोक में टिकाऊ भूमि उपयोग प्रणाली को एकीकृत करना तथा व्यवहार में लाना।

(क) टिकाऊ संघनीकरण (तीव्रीकरण) : अच्छी भूमि केवल तभी उत्पादन में तीव्र वृद्धि के लायक हो सकती है अगर भूमि की सेहत पर उचित ध्यान दिया जाए।

(ख) पुनर्स्थापन इलाके : उचित विरान भूमि विकास योजनाओं के द्वारा कमजोर जमीन की अच्छी सेहत पुन: कायम की जा सकती है।

(ग) संरक्षित इलाका : जंगल या अन्य क्षेत्रों की जैव-विविधता को उनकी भरपूर प्राचीन शुद्धता के साथ कायम रखना चाहिए।

जल-विभाजकों का माइक्रों स्तर पर एकीकृत टिकाऊ विकास रणनीतियों के लिए पहल करना।

पानी, जिसमें नदी, वर्षा, भूगर्भीय जल, तथा गन्दे नालों का पानी शामिल है, इसके इस्तेमाल से वैज्ञानिक संयोजन प्रणाली के प्रयोग को विकसित करना।

विरान तथा कमजोर भूमि के अधिकतम सुधार के लिए राज्य या जिला स्तर पर परियोजना कायम करना।

देहाती-क्षेत्रों, खास करके पिछड़े क्षेत्रों में टिकाऊ तकनीकों के उपयोग को जोरदार ढंग से फैलाना तथा नई तकनीकी ज्ञान को लोगों तक फैलाना एवम् पहुँचाना।

कृषि उत्पादकता, पर्यावरणीय सुरक्षा, जल संरक्षण तथा जैव-विविधता सुधार के लिए भूमि की ऊपर वाली सतह, पानी, जंगल एवम् प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए सम्पूर्ण पैमाने पर पहलकदमी करना।

जनाधार वाले संगठनों तथा ग्रामीण लोगों की तरफ से जमीन, पानी, जंगल एवम् प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के बारे में नीतियों को मुख्य निशाने के तौर पर अपनाना।

पानी, कीट, पोष्टिक पदार्थों के प्रबन्ध से संबंधित एकीकृत तकनीकी का विकास करना। यह उत्पादन में बढ़ौत्तरी करेगी, क्षमता में वृद्धि करेगी और उत्पादन लागत घटायेगी।

ब्लाक स्तर पर विशेष सूचना सेवा केन्द्र कायम करना जिसका काम हर गांव के किसानों को नई तकनीकी, निवेश, नई सरकारी स्कीमों, वित्त मार्केट तथा कृषि से सम्बन्धित मुद्दों की लगातार, समयबद्ध तथा उचित जानकारी देना। कृषि तकनीकी, मशीनरी, निवेश आदि के बारे में हर सम्बन्धित डीलर के लिए आवश्यक जानकारी देना कानूनन आवश्यक बनाना।

(ब)

उत्पादकता बढ़ाने के लिए

कृषि उत्पाद की कीमतों में बढ़ौत्तरी करने के लिए गाँवों तथा उनके आस-पास कृषि-प्रोसेसिंग उद्योगों (बड़े, मध्यम एवम् लघु) को विकसित करना। यहाँ पँजाब की कृषि में चावल-गेहूँ फसल चक्र क्रम की जगह पर फसली विविधता का तरीका अख्तियार करना पंजाब कृषि के पुनर-स्थापना अथवा आगे के विकास के लिए और पंजाब की आर्थिकता के सन्तुलन अथवा व्यवहारिकता को निर्मित करने के लिए यह निर्णायक काम है।

पंजाब, इसके ज्यादा अनाज के कारण अलग-अलग तरह के खाद्य-प्रोसेसिंग

उद्योग के पुरी तरह योग्य है। यह बागवानी फसलों की पैदावार के भी अनुकूल है जिससे अलग-अलग तरह के ज्यूस तैयार करके उनकी शुरूआती कीमत में बढ़ोत्तरी हो सकती है। प्रोसेस किए खाद्य पदार्थ अथवा फलों के ज्यूस को निर्यात करने के लिये, जरूरत के अनुसार बिजली का होना, शीत भंडारों की स्थापना, प्रोसेसिंग सहुलियतें मुहैया करवाने, जैसे-पैकेज, डब्बाबंदी तथा बोतलें भरना, शीतलीकरण करने और खाद्य सामग्री तथा फलों की कीमत हासिल करने के लिए उनको निर्जलीकरण करने के साथ जरूरी बुनियादी ढाँचा खड़ा करने की जरूरत है।

ताजा सब्जियें तथा फल देश के अलग-अलग हिस्सों में पहुँचाये जा सकते हैं बशर्ते आवाजाही का तसल्लीबख्श प्रबन्ध हो। वह किराए के जहाजों के द्वारा यूरोप में भी भेजे जा सकते है। यह सब-कुछ ही समय पर तथा उचित सूचना किसानों तक पहुँचानी जरूरी है। देश की अलग-अलग मंडियों में फलों और सब्जियों की कीमतों की सूचना उनको ठीक बिक्री स्थान चुनने में मदद देगी। इसी तरह यूरोप की मंडियों की कीमतों की फोन तथा फैक्स के द्वारा मिली जानकारी के साथ किसान माल सप्लाई करेंगे। यहाँ राज्य सरकार को इच्छित भूमिका निभाने की जरूरत है।

कृषि को उद्योग का दरजा देना।

आवाजाही नेट-वर्क में सुधार तथा भंडारण में वृद्धि (कोल्ड स्टोरों समेत) तथा सब्जियों की समय पर संभाल सहुलियतों के साथ कटाई के बाद के घाटे को कम करके बुनियादी विकास के लिए जरूरी फंड प्रदान करना। कृषि निवेश तथा अधिक सहायता बढ़ाने को प्राथमिकता देना।

कृषि तथा कृषि उद्योग और खासतौर पर छोटे तथा बहुत छोटे किसानों को नया रूप देना। केन्द्र सरकार को उसके कुल कर्जे तथा निवेश का 30 प्रतिशत कृषि में निवेश करने तथा कर्जा बढ़ाने के लिए कहना।

राज्य स्तर पर प्रभावशाली फसल बीमा स्कीम यकीनी बनाना जो हर फसल के लिए जोखिम के ठोस अनुमान पर आधारित हो। यदि बीमा की किस्त ज्यादा होगी तो छोटे तथा मध्यम किसान उसको नहीं भर सकेंगे।

राज्य की सभी मुख्य फसलों के लिए एक विश्वसनीय कृषि कीमत नीति सुनिश्चित करना।

भूमि, पानी तथा पशुधन के संसाधनों एवम् निवेश के प्रभावशाली उपयोग के द्वारा समूची तथा फसलवार उत्पादकता में बढ़ोत्तरी करना।

मोटा अनाज, दालें अथवा बीजों की उत्पादकता की बढ़ौत्तरी को फैलाना।

प्राकृतिक संसाधनों को संभालते हुए उत्पादकता के समूचे तत्वों को बढ़ाना।

कृषि प्रक्रिया के अच्छे प्रबन्ध के द्वारा कृषि उत्पादकता को बढ़ाना, उदाहरण

के लिए, आवाजाही, शीत भंडारों, मार्केट तथा प्रोसेसिंग इकाइयों के इन्तजाम के द्वारा फलों तथा सब्जियों की कटाई के बाद के नुकसान को रोककर राज्य की सालाना कृषि आमदन में अच्छी बढ़ौत्तरी हो सकती है।

भूमि सुधारों के अधूरे पड़े काम को पूरा करना।

(स)

न्यायसंगतता को सुनिश्चित करने के लिए

उत्पादक, टिकाऊ तथा न्यायसंगतता के आधार पर कृषि का विकास करना, सबसे महत्वपूर्ण काम ग्रामीण मानव संसाधनों का विकास करना है क्योंकि यह कृषि के साथ संबंधित लोग ही हैं, केवल वही प्राकृतिक संसाधनों तथा कृषि की उपयोग सामग्री के इस्तेमाल द्वारा इसकी विकास प्रक्रिया को जारी रख सकते है। एक बार किसी प्रक्रिया के साथ संबंधित लोगों के जागृत तथा प्रेरित हो जाने पर कोई भी संभव काम हकीकी (वास्तविक) बन सकता है। ग्रामीण मानव संसाधनों का विकास करना, यह उपरोक्त कामों की पूर्ति के लिए जरूरी है।

(i) कृषि-ढाँचे में तब्दीली के लिए

कृषि न्यायसंगतता (तथा उत्पादकता भी) के लिए मुख्य रूकावट भूमि जोतों का कम हो रहा आकार है। इसके साथ एक साधारण पविार की औसतन जरूरतों की पूर्ति करने के लायक आमदन भी नहीं होती। इस तरह उनको गैर-टिकाऊ बना दिया है। मौजुदा समय, ऐसी कुल भूमि जोते, (4 एकड़ से कम क्षेत्र वाली), राज्य की कुल भूमि जोतों का दो तिहाई है, इसलिए राज्य के दो तिहाई बहुत छोटे तथा छोटे किसान केवल जिन्दा रहने के स्तर पर जी रहे हैं। यदि इनमें खेत-मजदूर (ज्यादातर गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे) को शामिल कर लिया जाए तो पँजाब में इनकी संख्या 80 प्रतिशत से ज्यादा बनती है।

हमारे दिए हुए त्रिपक्षीय आम परिप्रेक्ष्य में इन रूकावटों को इस तरह दूर करना जरूरी है कि एक तरफ हमारी भूमि जोतों को योग्य इकाइयाँ (उत्पादन के सभी आधुनिक साधन उपयोग करने के योग्य) बनाना तथा दूसरी तरफ बहुत छोटे तथा छोटे किसानों के हितों की सुरक्षा करना। हमारे विचारों के अनुसार अलग-अलग क्षेत्रों में बहुत छोटे तथा छोटे किसानों को अपनी जोते तीन विशाल किस्म के कृषि आधारित ढाँचे में पुन: कायम करने के लिए तैयार करना चाहिए।

(क) सिंचाई वाली दो फसली भूमि, अलग-अलग क्षेत्रों में भूमि के गुणात्मक फर्क के अनुसार उत्पादक क्षमता के लिए 10 एकड़ जमीन के प्राइवेट फार्म बनाना, यह किसानों द्वारा एक दूसरे के साथ खेत-साँझे करके भी बनाए जा सकते हैं या एक

छोटे अथवा मध्यम किसान के द्वारा दूसरे छोटे अथवा बहुत छोटे किसानों से ठेके अथवा बटाँई पर लेकर भी 10 एकड़ का फार्म बनाया जा सकता है। ऐसे किसानों को उपयोग सामग्री अथवा निवेश के लिए विशेष रियायतें दी जाएं तथा जमानत के तौर पर भूमि गिरवी रखकर कम ब्याज दर पर कर्जे दिए जाएं। इन इकाइयों को मंडी लागत घटाने तथा ज्यादा मंडी लाभ लेने के लिए सही सहकारी मंडियों में पिरोना चाहिए।

(ख) बहुत छोटे तथा छोटे किसानों द्वारा जमीने मिलाकर अलग-अलग क्षेत्रों में भूमि के गुण के अनुसार सिंचाई योग्य दो फसली भूमि के 100 एकड़ के सहकारी फार्म बनाए जा सकते है। ऐसे फार्म फसली उत्पादन तथा मंडीकरण दोनों के लिए उपयोग किए जाने चाहिए। ऐसा कानून बनाना चाहिए कि इसके संस्थात्मक लाभों के लिए कोई भी 4 एकड़ की मालिकी से ज्यादा वाले किसान को इसका सदस्य बनने की इजाजत नहीं होगी। तजुरबा दर्शाता है कि धनी किसान अक्सर इन संस्थाओं पर प्रभावी हो जाते हैं तथा अपने लाभ के लिए इनका शोषण करते हैं। सदस्यों द्वारा मुख्य तौर पर किराए आधारित मजदूरी प्रदान की जाएगी। केवल विशेष केसों में ही बाहर से मजदूर लगाए जाएंगे। सहकारी खेती नए कानून पर आधारित होनी चाहिए, जो इसको लोक-आधारित लहर बनाए तथा अफसरशाही की हर किस्म की दखलन्दाजी के ऊपर पूर्ण रोक लगाए।

(ग) इकरारनामा काश्तकारी को केन्द्र तथा राज्य सरकारों के द्वारा विकसित करना चाहिए। इकरारनामें द्वारा काश्त का अर्थ है किसी उद्योगपति (जिसको अपने उद्योग के लिए विशेष कच्चे माल की जरूरत हो) अथवा किसी निर्यातकर्ता (जो विशेष गुणात्मक कृषि की वस्तु का निर्यात करना चाहता हो) अथवा उनके नजदीक किसी कृषि-आधारित औद्योगिक इकाई (जिसको प्रोसेस करने के लिए विशेष कृषि उत्पाद की जरूरत हो) के साथ इकरारनामा या समझौते के तहत् छोटे तथा बहुत छोटे किसानों के द्वारा विशेष फसल की काश्त करना। यह प्रबन्ध एक तरफ छोटे व बहुत छोटे किसानों के लिए अपनी जमीन की मिल्कियत तथा नियन्त्रण को सुनिश्चित बनाता है और दूसरी तरफ उनको व्यवहारिक बनाने के नजदीक ले जाता है।

इकरारनामा काश्त का बुनियादी विचार लेबोरेट्री, फैक्ट्री, भूमि अथवा मंडी के तत्त्वों को एकजुट करना है। इसका उद्देश्य संबंधित उत्पाद की उचित मात्रा में उत्पादन का प्रबन्ध करना है। किसानों को ब्लाकों में संगठित करके स्वीकृत कीमतों पर इलाके तथा मात्रा के लिए इकरारनामा के ऊपर दस्तखत करना तथा बीज या नर्सरी जैसी जरूरी चीजें उनको मुहैया करवाई जाए। इकरारनामा काश्त छोटे तथा बहुत छोटे किसानों द्वारा 10 एकड़ के बनाएं सिंचाई अधीन सहकारी फार्मों के ज्यादा अनुकूल है। इकरारनामा काश्त; दवाइयों वाले पौधों, जैव विविधता, खेती-वन संरक्षण समेत सभी

फसलों के लिए की जा सकती है। ऐसे बहुत से इलाके है जहाँ प्राइवेट (निजी) तथा सरकारी क्षेत्र के उद्योग इसको विकसित कर सकते है। भारत में गन्ना और तम्बाकू उद्योग इकरारनामा काश्त का उपयोग करते हैं। चीन, थाइलैंड और कई और देशों ने अपने इलाकों में औद्योगिक-कृषि सम्बन्ध विकसित किए हैं। नई दिल्ली को इन तजुरबों से सीखना चाहिए तथा इनको हमारी हालातों के अनुसार अपनाया जा सकता है।

(घ) जहाँ तक बड़ी तथा मध्यम खेती जोतों का सम्बन्ध है, इनके मालिकों को उनके फार्मों पर साधारण तरीके से खेती करने की इजाजत होनी चाहिए।

(ड़) जहाँ तक खेत-मजदूरों का संबंध है उनकी मायूसकून हालातों में सुधार के लिए कुछ सुधारमयी कदम उठाने की माँग करती है। ये है :

(i) न्यूनतम मजदूरी तय करना तथा इसको सख्ती से लागू करना।

(ii) उन भूमिहीनों, जिनको भूमि सुधारो, भूदान, ग्रामदान आदि के तहत पहले जमीनें मिली थी, लेकिन वे अभी तक उन पर बसे या स्थापित नहीं हुए है, उनकी पुनर-स्थापना करना।

(iii) खाली जमीन जो किसी जन उद्देश्य के लिए ना रखी हो, उसको बाकी बचे भूमिहीनों को एलॉट किया जाना चाहिए।

(iv) पीने के पानी, शिक्षा एवम् स्वास्थ्य सुविधाओं की सामाजिक सुरक्षा करना।

(v) ग्रामीण निवास क्षेत्र तथा घर-निर्माण क्षेत्र स्कीमों को लागू करना।

(vi) केन्द्र तथा संबंधित राज्य सरकार की बराबर हिस्सेदारी के साथ हर एक खेत मजदूर के लिए 30,000 रुपये देना यकीनी बनाना।

(vii) खेत-मजदूरों के लिए बुढ़ापा-पेन्शन स्कीम चलाना।

कृषि-ढाँचे का उपरोक्त लाइनों पर पुनरस्थापन करके कृषि प्रक्रिया को ज्यादा उत्पादक एवम् व्यवहारिक बनाया जा सकेगा।

(ii) ग्रामीण ढाँचे के जनवादीकरण के लिए

(i) ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं एवम् बुनियादी ढाँचे में गुणात्मक सुधार करना।

(ii) ग्रामीण लोगों के ज्ञान एवम् महारत का विकास करना।

(iii) खेत-मजदूरों तथा सीमान्त किसानों के जीवन हालातों को बेहतर बनाना।

(iv) छोटे किसानों को रियायती उपयोगी सामग्री तथा सस्ता कर्जा मुहैया करवाना।

(v) मध्यम तथा धनी किसानों के लिए टिकाऊ कीमत नीति, आजाद देशी बाजार, दीर्घकालीन कर्जे, निर्यात सुविधाओं आदि को यकीनी बनाना।

(vi) अलग-अलग विकास स्कीमों-आई.आर.डी.पी. जवाहर रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना आदि के अधीन गाँवों में खर्च होने वाले फंडों के उचित उपयोग के लिए गाँवों की चुनी हुई कमेटियों को उनकी निगरानी करने का अधिकार देना।

(vii) सहकारी लहर का इसके अफसरशाह कानून में संशोधन करके तथा विभाग की अफसरशाही नीति में तब्दीली करके पूरी तरह जनवादीकरण करना।

(viii) महिलाओं को जमीन समेत उनके पति की जायदाद में सह-मालिक बनाना तथा उन्हें सारी चुनिन्दा संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण देना।

(ix) हर पंचायत इसके सारे सदस्यों को हर 6 महीने बाद (या साल में दो बार) अपने हल्के के दौरा करने तथा अपना 6 महीने का रिकार्ड वोटरों की आम सभा में उनके बहस-मुबाहिसे तथा टिप्पणियों के लिए पेश करने की कानूनी जिम्मेवारी बनाकर, वोटरों के आगे जवाबदेह बनाना।

आखिर में, पंजाब के किसानों को राज्य सरकार से कहना चाहिए कि वह पंजाब के प्राकृतिक संसाधनों को हुए नुकसान का मूल्य चुकाने के लिए केन्द्र से माँग करे।

❋ ❋ ❋

भारत में बारानी खेती की चुनौतियाँ

बारानी भूमि की समस्याएँ

बारानी क्षेत्र शक्तिहीन क्षेत्र होता है जिसमें पौधे के लिए आवश्यक तत्वों, खास तौर से नाइट्रोजन और फास्फोरस की कमी होती है। विशेषज्ञों के अनुसार धरती के धरातल का 40 प्रतिशत हिस्सा बारानी है।

भारत में बारानी खेती लगभग 9 करोड़ 70 लाख हैक्टेयर यानि 14 करोड़ 38 लाख हैक्टेयर कुल जोताई योग्य भूमि का लगभग 70 प्रतिशत क्षेत्र में की जाती है। सम्पूर्ण सिंचाई समर्थता के करीब 2010 ईसवी तक विकसित करने के बाद भी 50 प्रतिशत जोताई योग्य जमीन बरसात पर निर्भर करेगी। और आगे, बहुत से बरसाती क्षेत्र बरसात की अनिश्चितता के तहत ही रहेंगे।

भारत की बारानी खेती 40 प्रतिशत मनुष्य आबादी तथा 60 प्रतिशत पशुओं की सहायता करती है। यह क्षेत्र भारत की कुल खाद्य पैदावार में 40 प्रतिशत योगदान देता है।

बारानी खेती की जोते बहुत छोटी है। लगभग 76 प्रतिशत बारानी काश्तकारों के पास 2 हैक्टेयर से भी कम जमीन है जो भी टुकड़ों में और दूर-दूर बिखरी हुई हो सकती है। ऐसे हालात में सीमित आधुनिकीकरण (मशीनीकरण) भी मुश्किल हो जाता है।

बारानी भूमि की ऊपरी परत बुरी तरह खराब हो गई है। खुष्की (शुष्कता) के दौरों में वृद्धि तथा गैर-नियन्त्रित चारागाहों के कारण वनस्पति कवर बरबाद हो गया है। वनस्पति रहित भूमि परत तेज पानी तथा तेज हवाओं के कोप को झेलती रहती है।

खाद-मिट्टी से भरपूर परत के हट जाने से ऊपरी-परत में पौधों के लिए आवश्यक पौष्टिक तत्वों की कमी हो गई है। देश में हर साल औसतन प्रति हैक्टेयर 16.4 टन भूमि परत कटाव के कारण बह जाती है। यह बारानी भूमि परत की बेरोक-टोक गैर-उपजाऊपन को प्रगट करती है।

भूमि खार उत्पादकता से अब तथा निरन्तर गम्भीर समस्या के तौर पर जारी रहेगी। भारत के कुल 32 करोड़ 90 लाख हैक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र में से लगभग 17 करोड़ 50 लाख हेक्टेयर क्षेत्र भूमि गिरावट की अलग-अलग प्रक्रियाओं से पीड़ित है।

पशु-पालन मुख्य तौर पर बारानी क्षेत्र में प्रचलित है। इसलिए चारा पैदा करना, मनुष्य तथा पशुओं के अस्तित्व के लिए भोजन सुरक्षा जितना ही महत्वपूर्ण है।

सिंचित कृषि

अब यह अच्छी तरह स्थापित हो गया है कि बरसाती पानी से कम बरसाती क्षेत्र में भी कृषि की ज्यादा गुँजाइश बन गई है। बरसात हर साल भारतीय जमीन के ऊपर 40 करोड़ हैक्टेयर मीटर के बराबर पानी देती है। स्थलीय आकृति के कारण उपलब्ध धरातली पानी बहाव के 40 प्रतिशत हिस्से को बड़े भंडार में बदला जा सकता है। (सिंचाई कमीशन की रिपोर्ट)।

फिर बड़ी मात्रा में बरसाती पानी जल विभाजक (वो भूमि क्षेत्र है जो एक मात्र रास्ते से धरातली पानी को बहाया करता है, दरिया का रास्ता बड़ा जल विभाजक है जबकि दरम्याने जलविभाजक वो होते है जो बचे-खुचे या नदी की तरह बहते हैं) जिसे छोटी स्तर की दखलन्दाजी से कृषि के लिए उपलब्ध करवाया जा सकता है। यह इकट्ठा किया गया पानी अकाल के साथ संबंधित फसली असफलताओं का प्रभावशाली मुकाबला कर सकता है। राष्ट्रीय कृषि कमीशन ने बरसाती पानी को जल विभाजक द्वारा उपयोग करने का सुझाव दिया है।

आगे, हर कोशिश पशु-धन की जरूरतों तथा फसली बचत सिंचाई की पूर्ति की आवश्यकता को पूरा करने के लिए बह रहे पानी को इकट्ठा करने के लिए सारे छोटे और दरम्यारे जल भंडार (जैसे छोटे तालाब, कुएं, तालाब आदि) बनाकर इकट्ठा करने की होनी चाहिए।

उत्पादकता बढ़ाने एवम् बारानी खेती को टिकाऊपन प्रदान करने के अलावा जल-वहन के ऊपर नियन्त्रण होगा तथा खार को हटायेगा, जल विज्ञान में सुधार करेगा, संकट के समय जरूरत के अनुसार पानी प्रदान करेगा और मिट्टी के भराव को घटायेगा।

भूमि उपयोग-प्रणाली

सारी बारानी जमीन फसलों के अनुकूल नहीं है, कुछ चरागाहों के विकास के अनुकूल हो सकती है और कुछ वृक्षों वाली खेती, बारानी बागवानी तथा खेती-वन प्रणाली के अनुकूल हो सकती है। बदलवी भूमि उपयोग प्रणाली खासतौर से सीमांत भूमि के लिए कम जोखिम वाली, ज्यादा उत्पादक तथा लाभदायक हो सकती है।

बारानी खेती तकनीक पुरी तरह भूमि परत के अनुसार तथा इलाके में अलग-अलग, परत की किस्म पर निर्भर तथा क्षेत्र के बरसाती बानगी के अनुसार होगी।

भूमि उपयोग फार्म का चुनाव भूमि समर्थता, पर्यावरणीय हालातों तथा मंडी की स्वीकृति तथा माँग पर निर्भर करेगी। सुधरी फसली किस्मों का चुनाव, खादों का

उपयोग तथा खेती कार्यक्रम के लिए समयबद्धता आदि, सुधरी फसली तकनीक के बुनियादी तत्व है। फसली विविधता किसी भूमि उपयोग प्रणाली का जरूरी हिस्सा होती है। वृक्ष या चारागाह आधारित फसलों की कृषि के साथ सुमेलता होनी चाहिए।

बारानी भूमि तथा गरीबी

बारानी खेती का भारत में गरीबी की निरन्तरता के साथ नजदीकी संबंध है। हमारी जोताई योग्य जमीन का 70 प्रतिशत खुद मुँह बोलती है जो 50 प्रतिशत आबादी के जीवन निर्वाह का साधन है। तर्क के तौरपर इसके हल के साथ एक तरफ पर्यावरणीय संरक्षण तथा दूसरी तरफ हमारे लोगों की बहुसंख्या तथा राष्ट्रीय आर्थिकता को फायदा होगा।

स्पष्ट है, यह बहुत बड़ा काम है, जो पारम्परिक अफसरशाही तरीकों से हल नहीं हो सकता। यह प्रवृतियों तथा व्यवहारों में बुनियादी तब्दिली की माँग करता है। सबसे पहले, आगे भूमि गिरावट को रोकने तथा इसके पुन: उपजाऊ बनाने के लिए पहली शर्त लोगों की भागीदारी कायम करवाना है। यह केवल क्षेत्र की विशालता करके ही जरूरी नहीं है बल्कि अगर यह गैर-सम्बोधित रही तो इसके बढ़ने की प्रवृत्ति भी जारी रहेगी। आगे भूमिहीनों का बड़ी संख्या में अस्तित्व की समस्या का अन्य आयाम प्रस्तुत करती है। तीसरी जटिलता, बारानी भूमि के बड़े हिस्सों की मिल्कियत बड़ी संख्या में व्यक्तियों के साथ-साथ राज्य के पास होने से पैदा होती है। एक और मुद्दा अलग-अलग मालिकों की जमीन के ऊपर बनने वाले जल विभाजक प्रोग्रामों को लागू करने का है।

उपरोक्त रूकावटों पर काबू पाने के लिए तथा समस्या को वाजिब ढंग से हल करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाने जरूरी है।

(क) बारानी खेती के समाज विज्ञान तथा इनके लाभदायक प्रभावों का ग्रामीण क्षेत्रों तथा देश के चुनिन्दा देहाती क्षेत्रों में सुचना केन्द्र खोलकर प्रचार करना।

(ख) अलग-अलग वर्गों के किसानों में अलग-अलग तरह से हौंसला अफजाई करना। यह काश्त योग्य फालतू भूमि (जंगल एवम् साँझी जमीन को छोड़कर तथा गैर-कानूनी कब्जे वाले जंगलों, सरकारी या चारागाह भूमि, भूमिहीनों की 50 प्रतिशत आरक्षण वाली भूमि को) भूमि बँटवारा कमेटियों के द्वारा, पशुओं, कृषि संबंधित औजारों तथा उपयोगी सामग्री की जरूरतों को पुरा करने के लिए वित्तीय सहायता के साथ-साथ भूमिहीनों को एलॉट करना, बारानी खेती वाले किसानों के कर्जे के भार में कटौती करना, जरूरी वस्तुओं के लिए कर्जे की सहुलियतें देना, आदि जरूरी कदम हैं।

(ग) हर गाँव में बारानी खेती की समस्याओं से निपटने के लिए संबंधित

व्यक्तियों को सहकारी तथा ग्रामीण स्तर के संगठनों में संगठित करना।

(घ) ग्रामीण समुदाय में छोटे-बड़े मालिकाना स्तर का ध्यान रखे बिना सारी बारानी खेती वाले क्षेत्रों की जिम्मेवारी उठाने की भावना भरना।

(ड़) अपने पति की जमीन में सह-मालिक बनाकर महिलाओं को बारानी खेती के लिए मुहिम संगठित करने में शामिल करना।

(च) भूमि परत तथा बरसाती पानी को राष्ट्रीय खजाना स्वीकार करते हुए बारानी खेती पर आधारित वाटरशेडों को विकसित करने के लिए नीतियाँ घड़ना तथा जरूरी कानूनों को व्यवहार में लाना। एक गाँव का भाईचारा सहकारिता में जुड़कर वाटरशेड आधारित संसाधनों के विकास, इनकी सम्भाल तथा उचित उपयोग—जैसे भूमि परत तथा जल संरक्षण, खेती विस्तार, बायो-बैस प्लान्ट कृषि-वन एवम् बचत/उधार स्कीमों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

❋ ❋ ❋

भारतीय जंगल
जंगल निवासियों तथा सरकारी अधिकारियों के साँझे प्रबन्ध की माँग करते हैं।

I

(1) जंगल का अर्थ है, सजीव संरचनाओं का समुदाय जिसमें वृक्ष मुख्य नायक होते हैं।

(2) जंगल, वृक्षों तथा झाड़-झंखाड़ द्वारा रोका गया बड़ा इलाका वास्तव में सारे मानवीय तथा पशु जीवन का प्रजनक है। वैज्ञानिक तथ्य इस बात के गवाह है कि पौधे कार्बन-डाईआक्साइड खींचते है और ऑक्सीजन छोड़ते है, जबकि मनुष्य तथा पशु आक्सीजन लेते है एवम् कार्बन-डाईऑक्साइड छोड़ते है। यह आपसी विनिमय इनको अन्तरनिर्भर बनाता है, ये एक-दूसरे के बिना नहीं रह सकते। 1 हैक्टेयर सघन जंगल प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा 30 टन आक्सीजन पैदा करता है तथा बिल्कुल बराबर मात्रा में कार्बन-डाईआक्साइड सोख लेता है। इतना ही देवदार का जंगल तथा गीरीदार फल वृक्ष का जंगल क्रमवार 36 टन तथा 68 टन धूल खींचकर बहुत बड़े धूल शोषक का काम करते हैं या जंगल में खुशबूदार गुणों वाले तत्वों जिनको फाइटोन साइडस कहा जाता है, मनुष्य और पशु जीवन के लिए नुकसान देह बिमारी फैलाने वाले बैक्टिरिया को मारते हैं।

(3) जंगल न केवल हवा साफ करते है बल्कि पानी को शुद्ध करते है तथा भूमि कटाव को भी रोकते है, असल में जंगल, पानी तथा भूमि अन्तरसंबंधित है एवम् एक की समस्या दूसरे दोनों से अलग होकर हल नहीं होती।

(4) स्पष्ट है कि हमारी धरती पर मनुष्य तथा पशु-पक्षी समर्थक वातावरण के विकास में जंगल प्रमुख तत्व है, अत: इनके बिना हमारे गृह पर किसी किस्म की जिन्दगी सम्भव नहीं हो सकती।

(5) मनुष्य ने अपने शुरूआती समय में ही वृक्षों के महत्व को समझ लिया था। उनका विचार था कि वृक्ष प्रकृति का समाप्त नहीं होने वाला तथा एक मुफ्त तोहफा है। उन्होंने वृक्षों को अपनी व्यक्तिगत तथा सामाजिक जरूरतों, जैसे भोजन, सूत, चारा, ईंधन, दवाइयाँ आदि के लिए लाभदायक साधनों के तौर पर उपयोग किया। पर वो इस तथ्य के प्रति पूरी तरह जागरूक नहीं था कि जंगल हमारे पर्यावरण के रक्षक हैं तथापि इस पौधा घर से बने शिश महल को बनाने के लिए प्रकृति को लाखों साल लगे हैं। अभी तीन दशक पहले तक लोग इस सूझबूझ से अनजान थे कि जंगल प्रकृति का सीमित घटनाक्रम है जो मनुष्य द्वारा अन्धे उपयोग करने पर कुछ सदियों में

ही नष्ट हो सकता है।

(6) जितने समय तक जंगलों को असीमित प्राकृतिक तोहफा समझा गया, यह हर जगह किसी तरह के प्राइवेट तथा सामाजिक नियन्त्रण से बाहर रहे, परन्तु औद्योगिक क्रांति के आने के साथ जंगलों को व्यापारिक धन तथा साधनों के रूप में देखा जाने लगा। उसके बाद, बहुत सी राष्ट्रीय सरकारों ने इनको अपने नियन्त्रण में ले लिया। इस तरह राजकीय जायदाद में तब्दील कर दिया।

II

(7) भारत में, यह बर्तानवी उपनिवेशवादी शासन था जिसने पहली बार जंगलों को अपने नियन्त्रण में लिया और 1864 में इस क्षेत्र के प्रबन्ध के लिए वन-विभाग बनाया। बर्तानवी लोगों ने जंगलों का व्यापारिक शोषण शुरू किया तथा यह उनके राज के अन्त तक चलता रहा। यह रूझान रूकने तथा वापिस मुड़ने के बजाए बर्तानिया के बाद के 5 दशकों के दौरान और बढ़ा।

(8) 1864 में पहली जंगल नीति (ब्रितानिया के अधीन) बनाते समय देश की 40 प्रतिशत भूमि पर जंगल-कवर मौजूद था। 1952 में यह घटक 22 प्रतिशत रह गया एवम् 1980 से वृक्ष सघनता वाला जंगल क्षेत्र 12 प्रतिशत तक नीचे चला गया, जबकि वैज्ञानिक तौर पर यह हमारी कुल भूमि का 33 प्रतिशत होना चाहिए। भारत के जंगल सर्वेक्षण के अनुसार 1987 से 1989 के दौरान उड़ीसा के अकेले कोरापूट जिले में 400 वर्ग किलोमीटर महत्वपूर्ण जंगल नहीं रहा तथा 1991 एवम् 1993 के दौरान उत्तर-पूर्व में 783 वर्ग किलोमीटर जंगल एवम् गैर-जंगल कवर गायब हो गया। (हिन्दुस्तान टाईम्स, 17.11.97, पेज 13)

(9) "जंगलों के हालात के बारे में 1997 में जारी सर्वेक्षण रिपोर्ट दर्शाती है कि केवल 1996 और 1997 के दो सालों में जंगल के नीचे वाला क्षेत्र 5500 वर्ग किलोमीटर तक सिकुड़ गया है।" (हिन्दू, 10.3.98, पेज 14)

(10) "तेजी के साथ जंगल कटाई के मुकाबले जंगल लगाने की दर बहुत नीची है। इसके अलावा जो थोड़ा जंगल लगाया जाता है वह एकरूपी है, जिसके साथ वनस्पति की विविधता की सघनता को ठेस पहुँचती है। हमारे 12 प्रतिशत जंगल-कवर का बड़ा हिस्सा एक किस्म के वृक्षों का है जिसका जैव-विविधता तथा भूमि परत की सम्भाल पर सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है। दूसरे शब्दों में आज भारत की भूमि के केवल मामूली हिस्से पर ठोस कुदरती जंगल बचा हुआ है।" (हिन्दुस्तान टाइम्स 17.11.97, पेज 13)

(11) निरन्तर जंगल-शोषण में वृद्धि ने स्थानीय उपयोग पर ज्यादा कटौतियाँ लगाना अटल बना दिया है। इसने जंगल निवासियों या जंगलों के आस-पास के 6

करोड़ निवासियों के हितों को ठेस पहुँचाई, जो उनके जीवन तथा अस्तित्व का साधन थे। इसके फलस्वरूप, कई जगहों पर स्थानीय लोगों ने जंगलों पर ज्यादतियों के खिलाफ विरोध प्रगट किया। इस जंगल घटाने वाली नीति ने आखिर में जैविक-विविधता का पतन किया एवम् भूमि कटाव तथा बाढ़ों में बढ़ौत्तरी की।

(12) जंगलों की विलक्षण पर्यावरणीय महत्वता के बारे में समझ केवल 1970 में आई, जब उपग्रह के चित्रमयी दृष्टांतों ने प्रगट किया कि देश के, 19.49 प्रतिशत भोगौलिक क्षेत्र पर जंगली कवर है जिसमें शानदार सघनता वाला जंगल 11.73 प्रतिशत है जो 40 प्रतिशत या उसे अधिक सघनता लिए हुए है। इसने यह भी संकेत किया कि देश हर साल जंगल का औसतन 13 लाख हैक्टेयर गवा रहा है, जंगल गिरावट तथा बर्बादी के कारण एक साल में तीन करोड़ से 5 करोड़ टन अनाज के बराबर की मात्रा में भूमि की ऊपरी परत खराब हो रही है, पहाड़ी क्षेत्रों में जंगलों की कटाई के कारण पानी के तेज बहाव से वनों में तेजी से गारा मिट्टी भरी जा रही है।

(13) पहली बार, भारत सरकार इस खतरे के प्रति गम्भीर हुई परन्तु सत्ता एवम् धनबल की दिशावाली राजनीति के कारण इसने अधूरे मन से जंगल-नीतियों में कुछ तब्दिलियाँ लाना शुरू किया। इसके परिस्थिति विज्ञान, विकास तथा स्थानीय लोगों, जंगल निवासियों के जंगल के प्रति अधिकारों एवम् इसके बिगाड़ को रोकने के लिए सामाजिक-जंगल कार्य योजना तैयार करने को स्पष्ट किए बगैर स्वीकृत किया। वन-एक्ट 1988 साँझी वन-मैनेजमेन्ट का इकरार करता है, जिसमें स्थानीय लोगों एवम् वन अधिकारी जंगलों का प्रबन्ध करते हैं परन्तु व्यवहार में इसने राज के प्रभुत्व वाला वन-तरीका जारी रखा हुआ है जो जंगल काटने में जंगल निवासियों को जिम्मेवार समझता है, ना कि अपनी नुक्सदार वन-नीति को। इसने अपने डंडे के जोर तथा केन्द्रीयकरण एवम् अफसरशाही रास्ते पर विश्वास किया तथा लोगों को अलग-थलग कर दिया है।

(14) प्रशासकीय तौर पर सरकार ने जंगलों को तीन श्रेणियों में बाँटा है—

(क) 40 प्रतिशत से ज्यादा शानदार कंवर वाले सघन जंगल (ख) 10 से 40 प्रतिशत शानदार कंवर वाले खुले जंगल एवम् (ग) छोटे वृक्षों, काँटेदार वृक्षों तथा झाड़ियों वाले खुष्क जंगल। 1993 के भूमि उपग्रह दृष्टान्त पर आधारित 7 करोड़ 70 लाख 8 हजार हैक्टेयर रिकोर्डेड जंगल है 4 करोड़ 14 लाख 92 हजार हैक्टेयर रिजर्व जंगल, 2 करोड़ 33 लाख 8 हजार हैक्टयर संरक्षित जंगल, 1 करोड़ 22 लाख 8 हजार हैक्टेयर बंजर जंगल तथा 42 लाख 56 हजार हेक्टेयर मैनग्रोव (एक वृक्ष या झाड़ी जिसका छिलका दवाइयाँ बनाने तथा चमड़ा रंगने के काम आता है) वनस्पति है।

(15) हालांकि जनवरी 1985 में सरकारी तौर पर यह ऐलान किया गया था कि हर साल 50 लाख हैक्टेयर भूमि हरे मुकुट अधीन लाई जाएगी परन्तु अभी तक 50 प्रतिशत निशाना भी पुरा नहीं किया गया। यदि जंगलों की कटाई की प्रक्रिया को प्रभावशाली ढंग से रोका एवम् मोड़ा नहीं गया तो भारत जल्दी ही दुनिया में सबसे बड़ा रेगिस्तान बन सकता है।

(16) सरकारी वन-नीति की बड़ी असफलता के मुकाबले उन कुछ इलाकों में जहाँ कुछ समर्पित स्वयंसेवी एजेन्सियों ने सामाजिक वन-पालक प्रक्रिया के व्यवहार में तथा फैसले लेने में लोगों की भागीदारी कायम कर ली है, उनको कुछ क्षेत्रों में सफलता मिली है।

III

(17) राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय तजुरबों से सीखने के बाद सरकार के लिए अब टिकाऊ, उत्पादक एवम् न्यायसंगत वन-नीति अपनानी संभव हो जानी चाहिए, जो दो बुनियादी उद्देश्यों पर आधारित हो, एक तरफ पर्यावरणीय सुधार तथा दूसरी तरफ स्थानीय लोगों की जरूरतों को यकीनी बनाना। इसके ऊपर समूचे देश में पुरी तरह विचार-विमर्श होना चाहिए। और नुक्तों के अलावा तजरुबा इन जरूरतों को उभारता है।

(18) धारणा के तौर पर, लोग जंगलों के दोस्त दिखने चाहिए, उनके दुश्मन नहीं। इसके लिए सरकार को पर्यावरणीय पक्षीय और लोक पक्षीय नीति अपनानी चाहिए।

(19) उदाहरण के तौर पर वन-मैनेजमेन्ट का राजकीय एकाधिकार का तरीका तब्दील करके वन निवासियों तथा वन अधिकारियों के बीच हिस्सेदारी पर आधारित साँझी मैनेजमेन्ट में तब्दील होना चाहिए। वन प्रबन्ध की हिस्सेदारी वाला ढाँचा कानूनों में भी दर्ज होना चाहिए।

(20) विश्व स्तर पर वन प्रबन्ध का तजुरबा दर्शाता है जहाँ स्थानीय लोगों को कुछ हद तक साथ लिया गया वहाँ वन-आगजनी की घटनाएँ नहीं हुई, जब उनका कोई सम्बन्ध या हित नहीं होता तो वन-सुरक्षा के लिए सामाजिक सन्दर्भ समाप्त हो जाता है। उन जंगलों में आग लगने की घटनाओं पर काबू पाया गया जहाँ स्थानीय लोगों को अधिकार तथा जिम्मेवारियां सौंपी गई। जहाँ बिना जिम्मेवारियों के अधिकार (जैसे कि सरकारी वन एजेन्सियों) तथा अधिकारों के बिना जिम्मेवारियां (जैसे कि स्थानीय लोग) हों, वहाँ प्राकृतिक संसाधन नजरअन्दाज रहते है और दुरूपयोग के शिकार होते हैं। एकतरफापन हर कहीं बेसुरापन तथा असन्तुलन पैदा करता है।

(21) पर्यावरणीय तौर पर सभी कोशिशें, जैविक जीव विविधता विकसित करने तथा सामाजिक एवम् जल हालात के विकास करने की तरफ होनी चाहिए।

(22) भारत के पास 1996 में लगभग 1 करोड़ 53 लाख हैक्टेयर या भारत के कुल क्षेत्र के 4.5 प्रतिशत क्षेत्र में 80 राष्ट्रीय पार्कों तथा 441 जंगली जीव रखने वाले 531 स्थान है परन्तु इसमें से ज्यादातर क्षेत्र निहित स्वार्थों के उपयोग व नियन्त्रण के तहत् है।

(23) वन जीवन के उचित प्रबन्ध के लिए यह जरूरी है कि जंगल निवासियों तथा सरकारी अधिकारियों के बीच पार्कों एवम् संरक्षित वन क्षेत्र के लिए बनी प्रबन्धक कमेटियों में भागीदारी द्वारा लोगों का रोजगार, पर्यटन आय में हिस्सेदारी तथा जंगली जानवरों द्वारा नुकसान तथा मानवीय नुकसान का वाजिब मुआवजा यकीन बनाकर सहयोगी संबंध विकसित किया जाएं।

(24) सामाजिक तौर पर, जंगल निवासियों को अपनी व्यक्तिगत जरूरतों के लिए चारा तथा दूसरी चीजें जंगल की समर्थता के अनुसार ले जाने का अधिकार होना चाहिए। जंगल निवासियों की जरूरतें वन समुदाय के नेट-वर्क तथा चारागाह (जो कि रेवेन्यू तथा सुरक्षित भूमि में विकसित करनी चाहिए) द्वारा पूरी की जानी चाहिए। यह क्षेत्र विविध-जैविक स्थानीय जरूरतों की पूर्ति के लिए पौधों की कई किस्मों की देखभाल के लिए समर्पित होना चाहिए तथा इसकी मैनेजमेन्ट वन-निवासियों तथा सरकारी वन अधिकारयिों की साँझे तौर पर होनी चाहिए। जहाँ जरूरत हो, यहाँ तक कि आरक्षित वन भूमि भी जायज स्थानीय जरूरतों के लिए उपयोग की जा सकती है।

(25) विकास के पक्ष से, व्यापारिक उत्पादन को टिकाऊ विकास में तब्दील करने पर जोर देना चाहिए, जो कि पर्यावरणीय जरूरतों का लोगों की जरूरतों के साथ सुमेल बैठाये। व्यापारिक उद्देश्यों के लिए वृक्ष काटना पूरी तरह बन्द होना चाहिए तथा लकड़ी की जरूरतों के लिए पूर्ति निजी जंगलों से करनी चाहिए। छोटे वन-उत्पाद (जैसे तेन्दू पत्ते, सालसीडस, आनाया, राल इत्यादि) स्थानीय तथा राष्ट्रीय आर्थिकता के हित में विकसित करने चाहिए।

(26) सुरक्षा क्षेत्र (लगभग 1 करोड़ 50 लाख हैक्टेयर) तथा सामुदायिक भूमि नेटवर्क (जिसमें 3 करोड़ हैक्टेयर पतित आरक्षित जंगल शामिल है) के अलावा बाकी बची जंगली भूमि अन्दाजन 3 करोड़ हैक्टेयर को वाटरशेड संरक्षण तथा छोटे जंगली उत्पादों के दोहरे काम के लिए उपयोग किया जा सकता है। छोटे जंगली उत्पाद, बड़ी आर्थिक कार्यवाहियों को पैदा कर सकते हैं जिनको वन-मजदूर सहकारिता के द्वारा सुव्यवस्थित किया जा सकता है।

IV

(27) सरकारों तथा पर्यावरण प्रेमी ग्रुपों की एक जेनेवा आधारित विश्व संरक्षण युनियन ने विश्व के वृक्षों पर अपनी पहली महत्वपूर्ण रिपोर्ट में कहा है कि

एक बार गृह पर 80 हजार से 1 लाख वृक्षों की किस्मों में से 100 के लगभग विलुप्त हो गई हैं तथा 860 से ज्यादा इसी रास्ते पर जा रही हैं।

(28) इसने नोट किया है कि वृक्ष, पर्यावरणीय प्रणाली सेवाओं का बड़ा हिस्सा प्रदान करते हैं जो हरेक के लिए लाभदायक हैं। ये पानी को शुद्ध करने, भूमि कटाव को रोकने तथा हवा को साफ करने का काम करते हैं।

(29) इसने दर्ज किया कि जंगली वृक्ष कार्बन-डाईआक्साइड ज़ज्ब करके मनुष्य को सालाना 5 खरब डालर का लाभ पहुँचाते हैं। नहीं तो ये विश्व ताप को बढ़ावा देगा। मलेशिया व इन्डोनेशिया में लकड़ी के लिए वृक्ष काटे हैं तथा ताड़ व खजूर की पौध लगाने के लिए स्थान बनाए हैं। ब्राजील तथा अफ्रीका में मनुष्यों के रहने के लिए कमरे तथा खेती के स्थान के लिए जंगल काट दिए है।

(30) रिपोर्ट के अनुसार जंगल धरती पर अमेरिका के क्षेत्र से भी अधिक, 1 करोड़ 30 लाख वर्गमील क्षेत्र में फैले हुए हैं परन्तु जंगलों का 1 प्रतिशत हर साल खत्म हो रहा है।

(31) रिपोर्ट में चेतावनी दी गई है कि शुष्क तथा उष्ण कटीबन्धीय जंगलों में ज्यादातर वृक्ष औरों की तुलना में बड़े स्तर पर काटे जा रहे हैं। इनकी विविधता का स्तर भी ऊंचा है।

(32) एक गैर-सरकारी संगठन, वाशिंगटन आधारित वर्ल्ड वाच संस्था ने अपनी हालिया रिपोर्ट में दर्ज किया है कि भारत समेत कई देशों में गैर-कानूनी लकड़ी व्यापार में बढ़ौत्तरी के कारण संसार का लगभग आधा जंगल समाप्त हो गया है, जहाँ सरकारी अधिकारियों द्वारा दोगले ढंग से तस्करों के साथ मिलकर जंगल लगाने के लिए आए कीमती फंडों को बर्बाद किया जाता है।

(33) इस रिपोर्ट के अनुसार भ्रष्टाचार इस समस्या को और बदत्तर बना रहा है। इसमें इन्डोनेशिया का उदाहरण दर्ज है, जहाँ राजनीतिक अगुवाओं पर जंगल लगाने के लिए रखे फंडों को व्यक्तिगत मन्तव्यों के लिए उपयोग करने का दोष लगाया गया है।

(34) इसमें कहा गया है कि पिछले दो दशकों से कानूनी लकड़ी व्यापार 142 अरब डालर पहुँच गया है परन्तु यह गैर-रिर्पोटेड, गैर-कानूनी व्यापार का बहुत छोटा हिस्सा है, गैर-लकड़, जंगली उत्पाद घट रहे हैं, ऐसे छोटे उत्पादों की बेरोक-टोक बरबादी हो रही है, रिपोर्ट के अनुसार यह भारत की निर्यात आमदनी का 3/4 हिस्सा है अत: वन-क्षेत्र आधे से अधिक रस्मी रोजगार प्रदान करता है।

(35) इनमें से एक उत्पाद, रतन, एक शराब जो उष्ण कटीबंधीय जंगल से प्राकृतिक तौर पर पैदा होती है जो फर्नीचर बनाने के काम के लिऐ बड़े स्तर पर

उपयोग की जाती है (विश्व व्यापार में केवल एशिया से 2.7 अरब डालर की सालाना निर्यात किया जाता है) यह लगभग 5 लाख लोगों को रोजगार देती है।

(36) रिपोर्ट में निमन्त्रण दिया गया है कि सरकारें गैर कानूनी लकड़ी व्यापार को चैक करने के लिए सख्त कानून बनाने, जंगल लगाने के कार्यक्रम बनाने तथा संसार के घट रहे जंगली कंवर को रोकने के लिए लकड़ी उत्पाद का दौर पुन: शुरू करे।

V

(37) जंगलों तथा टिकाऊ विकास के बारे में 26 सदस्यी विश्व कमीशन ने अपनी अन्तिम रिपोर्ट, "हमारा जंगल, हमारा भविष्य" (जो चेन्नई में सितम्बर 1998 में स्वीकृत की गई) में भारत समेत 15-राष्ट्रीय वन सुरक्षा काउन्सिल स्थापित करने की सिफारिश की गई है। इसका उद्देश्य तेजी के साथ वन संकट का हल ढूँढ़ने के लिए काम करना होगा। वन संकट के हल के लिए काम केवल सरकारों तक सीमित नहीं रहना चाहिए। इसलिए अकादमिक एवम् खोज संस्थाओं, गैर-सरकारी संगठनों के वैज्ञानिकों, वन समुदाय तथा वन-औद्योगिक संगठनों की भागीदारी समेत समाज के इस क्षेत्र के साथ संबंधित अलग-अलग वर्गों की कोशिशों को एकजुट करना चाहिए।

(38) कमीशन ने देश के वन साधनों का समान संख्यात्मक सूचक अंक प्रदान करने के लिए वन-पूँजी सूचक अंश (FCI) विकसित करने की भी सिफारिश की। यह वन पर्यावरणीय प्रणाली सेवाओं के उचित अन्दाजे के लिए विश्व फ्रेम वर्क को आसान बना देगा, जो एक पूँजी भंडार को संगठित करेगा, जो जैविक जीवन को टिकाऊ बनायेगा।

(39) ऐतिहासिक तजुरबा दर्शाता है कि मानवीय दिमागों तथा नीतियों में तब्दीली रातोंरात नहीं आती। पुरानी प्रवृत्तियों तथा व्यवहार की यथास्थिति कायम रखने के लिए हमेशा नई तब्दिलीयों का विरोध करती है। हकीकत की ताकत देर-सेवर हरेक को अपने साथ चलने के लिए मजबूर कर देती है।

❋ ❋ ❋

आई डी पी
का बारहवां पार्टी अधिवेशन

1. इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक पार्टी (आई डी पी) का बारहवां पार्टी सम्मेलन 26 से 29 दिसम्बर 1998 को राजस्थान के हनुमानगढ़ टाऊन कस्बे में हुआ था। इसमें राजस्थान, दिल्ली, जम्मू-कश्मीर एवं पंजाब से 83 डेलीगेट तथा 42 पर्यवेक्षकों ने भाग लिया।

2. सम्मेलन ने पार्टी की कमजोरियों और कमियों का गंभीर जायजा लिया। इसमें पीड़ादायक अनुभूति की गई कि 1996 के ग्यारहवें बीकानेर पार्टी सम्मेलन तथा 1997 के जोधपुर के विशेष पार्टी सेशन में लिए गए निर्णयों की आम तौर पर अवहेला की है। यहां पर आम सहमति थी कि हमारी सैद्धान्तिक, व्यावहारिक और संगठनात्मक क्षमता का सृजनात्मक तरीके से उपयोग करने में हम असफल रहे हैं और हमारी कारगुजारी निरन्तर औसत से निम्न दर्जे पर खड़ी है।

3. एक बार पुनः सम्मेलन में हमारी लाइन के अनुसार सोचने और कार्य करने के तरीकों में व्यक्तिगत एवं सामूहित तौर पर सचेत परिवर्तन लाने की प्रतिज्ञा की गई।

4. सम्मेलन में 5 दस्तावेजों को स्वीकृत किया, जो निम्न हैं –

i. मानव अन्तरनिर्भरता की वर्तमान स्थिति और इसकी प्राथमिकताएं

ii. दक्षिण एशिया के मामलों की स्थिति और उनकी आवश्यकताएं

ii. वर्तमान भारतीय वास्तविकताएं और उनकी मांगें

iv. नवम्बर 98-विधान सभा चुनावों के संकेत

v. जम्मू-कश्मीर पर

जिनको इस नोट के बाद आगे पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है।

❋ ❋ ❋

मानव अन्तरनिर्भरता की वर्तमान स्थिति
तथा उसकी प्राथमिकताएँ

I

1. मानव जाति का एक दूसरे में आपसी विश्वास और तालमेल मानवीय अन्तरनिर्भरता का द्योतक है। यह सामाजिक जीवन (अर्थात्, एक समूह, समुदाय या समाज में रहना) के प्रमुख लक्षणों में से एक है। सामाजिक जीवन का दूसरा प्रमुख लक्षण अन्तरक्रिया (यह आपसी क्रिया या तो एकता से या संघर्ष के रूप में होती है) है जो एक तरफ निश्चित मानवीय समूह (या समुदाय या समाज) के अन्दर (अर्थात् इसके सदस्यों के बीच) और दूसरी तरफ अन्य मानवीय समूहों के साथ होती है। ये दोहरे मूलभूत लक्षण (यानि अन्तरनिर्भरता और अन्तरक्रिया) मानव समाज की शुरूआत से ही मानवीय जीवन की पद्धति बने हुए हैं।

II

2. मानवीय सामाजिक जीवन, इसके 2 मूलभूत स्वरूपों अन्तरनिर्भरता व अन्तरक्रिया के साथ शून्य से या अचानक पैदा नहीं हुआ। यह प्रकृति के मौलिक नियम अर्थात् बह्माण्ड के विभिन्न घटनाक्रमों के बीच अन्तरनिर्भरता व अन्तरक्रिया के नियमों के मुताबिक पैदा हआ है।

प्रकृति-मानव अन्तरनिर्भरता व अन्तरक्रिया की प्रक्रिया एक विशिष्ट तरीके से आगे बढ़ती है। अपने तर्कसंगत स्वभाव के मुताबिक मानव जाति विभिन्न प्राकृतिक घटनाक्रमों (सकारात्मक और नकारात्मक दोनों) के लक्षणों और उनके आपसी जुड़ाव व गति के दौरान उनके निश्चित श्रम विभाजन को समझने की कोशिश करती है। सकारात्मक का उपयोग करते हुए व नकारात्मक को छोड़ते हुए वह खोजे गए प्राकृतिक घटनाक्रमों के सिद्धान्त, व्यवहार और संगठन की अपनी निश्चित समझ के मुताबिक अपने आपको व्यवस्थित करता है। इस गति के दौरान, हालांकि मानवजाति प्रकृति को बदलती (उसके सीमित दायरे में) है, बदले में प्रकृति उसे प्रदत प्राकृतिक घटनाक्रमों के सैद्धान्तिक, व्यवहारिक और संगठनात्मक पद्धति के अनुसरण करने के लिए बाध्य करती है। उदाहरण के लिए, परमाणु का उपयोग करने के लिए किसी को अपने आपको परमाणु के सिद्धान्त, व्यवहार और संगठन (जैसा कि मानवजाति ने उसके बारे में समझा है और कार्यान्वन किया है) के मुताबिक समझ बनानी पड़ती है यानि उसके गुणों के साथ अनुकूलता बैठानी पड़ती है।

3. ऐतिहासिक तौर पर, मानव जाति अन्तरनिर्भरता और अन्तरक्रिया की 4 सामाजिक अवस्थाओं-यानि, गण, कबीला, धार्मिक समुदाय और राष्ट्र-से गुजरी है। जिसमें से प्रत्येक अवस्था अपने निश्चित सामाजिक संरचना के लक्षणों-यानि विचार-

धारा, राजनीति, आर्थिकता और संस्कृति से परिलक्षित होती है। अब वह अपने पाँचवे युग में प्रवेश कर गई है जिसे आम तौर पर ग्लोबल (या अन्तर्राष्ट्रीयकरण) के रूप में जाना जाता है। यह वह दौर है जिसमें सम्पूर्ण मानवजाति एक सामाजिक इकाई बनने की प्रक्रिया में है। यह देशों (या राष्ट्रों) की अन्तरनिर्भरता की मंजिल भी कहलाती है।

मानवीय अन्तरनिर्भरता और अन्तरक्रिया के नये भूमण्डलीय और इसका आधार प्रकृति की विभिन्न नई प्रक्रियाओं-यानि, अन्तरिक्ष, ऊर्जा, जैव, पदार्थ, सूचना इत्यादि के बारे में मानव द्वारा अभी नया हासिल किया गया वैज्ञानिक तकनीकी ज्ञान है। इस ज्ञान ने सभी स्थानीय बाधाओं को हटाते हुए मानवजाति को विश्व स्तर पर प्रकाश की गति में संचार करने तथा ध्वनि से तेज गति में व्यक्तिगत सम्पर्क करने एवम् भौतिक चीजों का विनिमय करने के योग्य बनाया है। इस प्रकार मानवजाति भूमण्डलीय दृष्टिकोण की मंजिल पर पहुंच गई है। यही कारण है कि भूमंडलीकरण आज की शाश्वत कहावत बन गई है। यह प्रक्रिया उल्टी नहीं की जा सकती है। मार्क्सवाद, पश्चिमी उदारवाद, कैथोलिकवाद, इस्लाम, बुद्धवाद, हिन्दूवाद, इत्यादि का उद्देश्य और कार्यप्रणाली मिशनरी होने के बावजूद दुनिया को अपने-अपने विश्वासों के मुताबिक एकताबद्ध नहीं कर पाये, क्योंकि मानवीय अन्तरनिर्भरता और अन्तरक्रिया कुछ ही क्षेत्रों (इलाकों, देशों, इत्यादि) तक सीमित थी।

5. भूमंडलीकरण ने राष्ट्रीय मसलों-जैसे कि गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता, जनसंख्या वृद्धि, पर्यावरणीय प्रदूषण, सामाजिक न्याय की कमी, मानव अधिकारों का उल्लंघन, अल्पसंख्यकों के साथ भेदभाव, महिला-दमन, बच्चों की अवहेलना, नस्ली संघर्षों, अधिनायकवाद, अति उपभोग इत्यादि को ग्लोबल (भूमण्डलीय) मसलों में तब्दील कर दिया है। ये सभी समस्याएं विकास के पुराने मॉडल में पैदा हुई और उभरी। इनको पुरानी प्रशासनिक तकनीक से नहीं निपटाया जा सकता है। आज, वे एक समन्वित परन्तु न्यायिक हल की मांग करते हैं। स्पष्टतया, आज विश्व में मुख्य रूझान एकीकरण का है, खासकरके समाजिक विकास की बाधाओं पर नियन्त्रण के लिए आर्थिक एकीकरण आवश्यक है। भिन्न-भिन्न एकीकरण की प्रक्रियाओं को समस्त राष्ट्रीय राज्य भी उनके स्तर पर संचालित (प्रबन्धित) नहीं कर सकते हैं। विश्व एकीकरण प्रक्रिया और राष्ट्रीय प्रबंधों के गैर-एकीकरण चरित्र के बीच अन्तरविरोध आज विश्व के विकास में आधारभूत रूकावट है। इस प्रकार, आज विश्व किसी रूप में एकीकरण की तरफ गतिमान है। फिर भी कोई नहीं जानता है कि इसकी अन्तिम शक्ल कैसी होगी।

6. विश्व में प्रत्येक महत्वपूर्ण विकास से भू-मण्डलीकरण की प्रक्रिया स्पष्ट होती है, जैसे आर्थिक क्षेत्र में पूंजी की गति, विनिमय के माध्यम, शेयर एवं मुद्रा बाजारों, व्यापार, तकनीकी, पैटेन्ट्स, व्यापार से संबंधित बौद्धिक सम्पदा अधिकारों,

माल का उत्पादन-सभी वैश्विक बन गए है।

7. पुरानी चल रही राष्ट्रीय समस्याओं का भू-मण्डलीकरण होना तथा राष्ट्रीय आर्थिकताओं का भू-मण्डलीय आर्थिकता के साथ आर्थिक एकीकरण अब नए राजनैतिक प्रबंध के उचित रूपों और सांस्कृतिक मूल्यों के विकास की आवश्यकता को पैदा कर रहे है। लोकतंत्र के विस्तृत एवं गहन राजनैतिक मसले-जैसे शासकों की जवाबदेही पर दबाव देना, लोगों को अधिकार सम्पन्न बनाना, खासकर के महिलाओं को, बहुसंख्यकों एवं अल्पसंख्यकों को समान दर्जा देना, विश्वस्तर पर मानव अधिकारों की पालना करना, सभी तरह के विवादों का हल शांतिपूर्ण तरीकों से निकालना इत्यादि—आज के भूमण्डलीय राजनैतिक प्रबंध के ऐजेन्डा में मुख्य बिन्दु बन गये है। मानव जाति के भाई चारे के लिए करुणा एवं सहिष्णुता, लोकतांत्रिक व्यवहार, लिंग समानता, सभी आस्था प्रणालियों एवं जीवन के तरीकों के लिए समान दर्जा, भ्रष्टाचार, हिंसा एवं अश्लीलता का विरोध इत्यादि, मानवीय सांस्कृतिक मूल्यों की पृष्ठभूमि तैयार हो रही है।

संयुक्त राष्ट्र के महासचिव ने प्रस्ताव किया है कि राष्ट्रीय राज्यों के आन्तरिक अथवा बाह्य दोनों मामलों में किसी भी तरह की सैनिक ताकत का उपयोग करने से पहले विश्व संस्था से अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता होनी चाहिए, 50 साल पहले यू.एन. चार्टर द्वारा स्वीकृत मानव अधिकारों को एक नई सुसंगत परिभाषा के साथ सार्वत्रिक तौर पर लागू करने की माँग करना, विनोचेट के मामले में ब्रिटिश हाऊस ऑफ लार्डस ने निर्णय दिया कि आधारभूत मानव अधिकारों को विश्व के किसी भी भाग में किसी भी पीड़ित की शिकायत के आधार पर राष्ट्रीय कानूनों की कोई परवाह किए बगैर लागू किया जा सकता है और किया जाना चाहिये। यूरोप में अन्तर्राष्ट्रीय अपराधिकरण न्यायालय की स्थापना एक स्थाई अन्तर्राष्ट्रीय अपराधिक न्यायालय के ढांचे को कई राज्यों द्वारा सहमति प्रदान की गई है (जुलाई, 1998), जिसके अधिकार क्षेत्र में मानवता के विरूद्ध युद्ध के अपराधिक मामले भी होंगे। यह सभी बिन्दु एक नये अर्न्तराष्ट्रीय न्याय-शास्त्र और भू-मण्डलीय कानून व्यवस्था के उभरने की ओर संकेते देते हैं, जिसमें मानवाधिकारों के भारी हनन पर किसी एक व्यक्ति द्वारा भी अपराध को अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में घसीटा जा सकता है।

8. सूचना तंत्र, इंटरनेट, अंतरिक्ष उपग्रहों, कम्प्यूटर्स, रोबोट्स, इत्यादि विश्व को तेजी से एक इकाई में बांध रहे हैं।

9. अमेरिका के एक ध्रुवीय महाशक्तिवाद की जगह बहुध्रुवीयवाद का स्थान लेना सैनिक आधारित प्रभुत्ववादी रूझान के कमजोर होने का संकेत है। क्षेत्रीय समूहों का उभरना (जैसे-ई सी, नाफ्टा, एपेक, एशियान, मरक्यूसर, दक्षिण और पूर्व अफ्रिकन साझा बाजार, सार्क, एन्जस, अमेरिकी देशों का संगठन, गल्फ सहयोग परिषद्), नई

और पुरानी भू-मण्डलीय एवं बहुआयामी संस्थाएं (जैसे संयुक्त राष्ट्र एवं इसकी विभिन्न संस्थाएं, आई एम एफ, विश्व बैंक, आई एल ओ, विश्व व्यापार संगठन, सी टी बी टी और एन पी टी और अन्य बहुत से भू-मण्डलीय आयोगों और समितियों, इत्यादि) राष्ट्रवाद के सुपर राष्ट्रवाद में रूपान्तरण के प्रारम्भिक रूपों के द्योतक है।

10. अपराध, मादक पदार्थों की तस्करी, धन निचोड़ना, आतंकवादी गतिविधियां, हिंसा और अश्लीलता केन्द्रित मनोरंजन, अति उपभोक्तावाद, बढ़ रही राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक असमानताएँ, इत्यादि जो सभी राष्ट्रीय राज्य प्रणाली के उत्पाद है और इन सबका अन्तर्राष्ट्रीयकरण हो जाना ही आज की भू-मण्डलीय प्रक्रिया में अवरोध है।

III

11. भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के सामने बहुत सी भिन्न-भिन्न चुनौतियाँ है। सभी तरह के रूढ़ीवादी निश्चयवाद-यथा धार्मिक, सांस्कृतिक, नस्ली, आर्थिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय इत्यादि - इसके सामने भिन्न-भिन्न पैमाने से चुनौती खड़ी कर रहे हैं लेकिन मुख्य खतरा रूढ़िवादी पश्चिमी स्वतंत्र बाजार से आ रहा है। जिसे अमेरिका की अगुवाई में विकसित देशों में संचालित किया जा रहा है। ये देश सामाजिक उन्नति के साथ-साथ भूमण्डलीकरण प्रक्रिया के लिए बाजार को एक मात्र वाहक के रूप में पेश करते हैं। मार्क्सवादी (वामपंथी) मॉडल का राज्य केन्द्रित रूढ़ीवाद भूमण्डलीकरण के रास्ते में दूसरी बाधा है तथा विभिन्न धार्मिक नस्ली रूढ़िवादी किस्में तीसरी बाधा बनती है।

भूमण्डलीय समस्याओं से निपटने के अमेरिका के आजकल के तरीके ये है जैसे 'आतंकवादी' नेता बिन लादेन को दण्डित करने के लिए अफगानिस्तान व सूडान में स्थित तथाकथित आतंकवादी केन्द्रों पर क्रुज मिसाइले दागना; अमेरिका की आधारभूत नीति से मतभेद रखने वाले प्रत्येक देश के खिलाफ एक तरफा प्रतिबन्ध थोप देना; शीत युद्ध समाप्त होने के बावजूद नाटो सैनिक तंत्र को मजबूत करना, प्रत्येक अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान में अपनी रॉय थोपने का रूझान अख्तियार करना, अमेरिकी नीति से अलग रॉय रखने वाले देश को धमकी देना, अति-उपभोग को प्रोत्साहित करना, और सबसे ऊपर विकसित और विकासशील देशों के बीच आर्थिक असमानता को बढ़ाना, और अमेरिका सहित प्रत्येक देश में विद्यमान इस असमानता पर चुप्पी साधे रखना, इत्यादि-यह सत्ता से ग्रसित अन्धराष्ट्रवादी मानसिकता का साफ इजहार है जो भूमण्डलीकरण प्रक्रिया के विकास में भारी बाधा उत्पन्न कर रही है।

12. भू-मण्डलीकरण की प्रकृति के हकीकत को पहचान कर इसके प्रति उचित रूख अपनाना तथा इसकी प्राथमिकताओं को तय करके उसका ठीक जवाब देकर ही उपरोक्त सभी चुनौतियों का मुकाबला किया जाना संभव है।

13. जहां तक इसकी प्रकृति का संबंध है, भू-मण्डलीकरण वर्तमान राष्ट्रीय संरचनाओं में आवश्यक परिवर्तनों के साथ अंतिम रूप से सम्पूर्ण मानव समुदाय की एक सामाजिक इकाई बनाने का संकेत दे रहा है। इस प्रक्रिया के दौरान सभी मानवीय मसले भू-मण्डलीय बन गये है। एक तरफ मानव समाज और प्रकृति दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर के हितों में सामंजस्य करके ही मानव जाति इन मसलों को हल कर सकेगी। आने वाली व्यवस्था में उच्च और निम्न, गरीब-अमीर, लिंग असमानता, और प्रत्येक देश के अन्दर तथा देशों के बीच असमानताओं में उचित स्तरीकरण कायम होगा। अब मानव समुदाय किसी क्षेत्र या समूह के तौर पर नहीं वरन सम्पूर्ण इकाई के तौर पर सम्पन बनेगा। भू-मण्डलीकरण के इस युग में यह विश्वास करना कि कोई एक देश या समूह दूसरे पर अपना प्रभूत्व कायम कर सके या पिछड़ेपन, गरीबी और अभाव के बीच वह सम्पन्न रह सके, यह विकृत सोच होगा। इस वक्त सभी आधारभूत मानवीय मसले भू-मण्डलीय बन चुके हैं जिन्हें प्रत्येक देश को दूसरे देशों (विशेषकर पड़ौसी देशों) के साथ मित्रता एवं सहयोग से हल करना पड़ेगा। जो कोई भी अपने पड़ौसियों के साथ सहयोगात्मक भाव नहीं अपनायेगा और अपने राष्ट्रीय, क्षेत्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों में तनाव पैदा करेगा, उसे भू-मण्डलीयकरण की प्रक्रिया के नकारात्मक प्रभावों को भुगतान पड़ेगा। यह नई सामाजिक वास्तविकता मांग करती है कि पुराने सोच और व्यवहार के हमारे रूख में उचित परिवर्तन करके इसे नये सोच और व्यवहार में बदला जावे।

14. भू-मण्डलीकरण प्रक्रिया के स्वभावानुसार, निम्नलिखित प्राथमिकताओं के आधार पर इस प्रक्रिया को बेहतर बनाया जा सकेगा।

तर्कसंगत मानवतावाद एवं वैज्ञानिक यथार्थवाद के आम दृष्टिकोण वाले सामाजिक परिप्रेक्ष्य को अपनाना हमारी प्रथम प्राथमिकता है। यह दोनों ही एक तरफ समाज के अन्दर के असंतुलनों तथा दूसरी तरफ प्रकृति (यानि पर्यावरण) और समाज के बीच गैर-सामंजस्य को ठीक तरह से हल करने पर जोर देते है। सभी तरह के अतर्कसंगत एवं अवास्तविक धारणाओं का विरोध करते हुए तर्कसंगत और वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए लोगों को जागरूक करना एवं भागीदारी सुनिश्चित करना आज मुख्य कार्य है।

तर्कसंगत, न्यायिक, व्यवहारिक भू-मण्डलीय व्यवस्था कायम करना द्वितीय प्राथमिकता है, जिसमें कानून के राज (जिसका सबसे महत्वपूर्ण कारक लोगों को अधिकार सम्पन्न बनाना हो) के द्वारा सभी राजनैतिक संस्थाओं का पूर्ण लोकतांत्रिकरण करना सुनिश्चित किया जावे। संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से नीचे की तरफ अथवा इसके विपरीत प्रक्रिया से प्रारम्भ करते हुए हालातों के अनुसार लोकतांत्रिक सुधारों के वाहक के रूप में सभी स्तरों पर लोगों को खड़ा करना ही मुख्य

कार्य बनता है। कोई भी शक्तिशाली पदाधिकारी को प्रदत्त विशेषाधिकार वाले सभी कानूनों, नियमों एवं मानदण्डों से वंचित किया जाना चाहिये।

सभी देशों को उनके बीच मित्रतापूर्ण एवं सहयोगात्मक विदेश नीति के अनुसरण के लिए प्रोत्साहित करना तथा दुनियां में व्याप्त सभी तनाव के बिन्दुओं (देश के अन्दर और आपसी) पर बातचीत और समझौता वार्ताओं के द्वारा समाप्त करने हेतु या तो द्विपक्षीय वार्ता या किसी अन्य माध्यम, संयुक्त राष्ट्र संघ के महत्वता के साथ पूरा करके विश्व में एक सच्ची शांति सुनिश्चित किया जाना ही तीसरी प्राथमिकता है। यहां मुख्य कार्य युद्ध, टकराव व सैनिकीकरण के खिलाफ लोगों को लामबन्द करना और सी टी बी टी में दो संशोधनों के लिए मांग करना यानि (क) एक उचित समय के अन्दर भू-मण्डलीय परमाणु नि:शस्त्रीकरण और (ख) परमाणु हथियार वाले देशों द्वारा अपने परमाणु हथियारों का नियन्त्रण संयुक्त राष्ट्र संघ को तत्काल सौंपना उनके अंतिम समाप्ति तक।

एक वास्तविक विकास मॉडल को हाथ में लेना, जिसमें प्रकृति, मानव समाज और प्रत्येक व्यक्ति के हितों का संतुलन बनाये रखना चौथी प्राथमिकता है। संतुलित आर्थिक वृद्धि के प्रयास हेतु तीन पक्षीय उद्देश्य-यानि, उत्पादकता, (सामाजिक मांगों को पूरा करने के लिए), समता (व्यक्तिगत हितों की रक्षा के लिए) और टिकाऊपन (पर्यावरणीय आवश्यकता की रक्षा हेतु) - की पालना करनी होगी। इस प्रकार एक तरफ मानव संसाधनों तथा दूसरी तरफ प्राकृतिक संसाधनों को विकसित किया जा सकेगा। बाजार व्यवस्था से उत्पन्न वृद्धि (उच्चतम उत्पादकता पाने के लिए) और राज्य द्वारा संगठित सामाजिक न्याय (समता और टिकाऊपन सुनिश्चित करने के लिए) के दोहरे सिद्धान्तों को बढ़ाने हेतु और मानव समुदायों (गरीब-अमीर, ग्रामीण-शहरी, लिंग असमानता आदि) के बीच सभी असमानताओं को मिटाने की मांग करने के लिए लोगों को तैयार करना मुख्य कार्य है।

गतिविधि के प्रत्येक क्षेत्र में मानवीय, जनवादी, जवाबदेह, खुली, पारदर्शी और ईमानदार मानदण्डों द्वारा चरित्रित मूल्य आधारित प्रणाली का अनुकरण पांचवी प्राथमिकता है। यहां अनैतिकता और घटिया व्यवहार से हमारे पर पड़ने वाले बुरे प्रभावों के बारे में लोगों को सहमत करना मुख्य कार्य है।

15. आज कहीं भी तर्कसंगत, न्यायिक एवं व्यवहारिक प्रणाली का निर्माण नहीं किया जा सकता है, अगर ऐसे सामाजिक बदलाव की जरूरत के प्रति लोग अचेत रहते है। जब तक लोगों के मस्तिष्क में तर्कसंगतता, न्याय अथवा व्यवहारिकता का विकास नहीं होता, तब तक कोई संविधन, कानून, राज्य सरकार, संस्था, पार्टी या संचार माध्यम के द्वारा उदार प्रशासनिक व्यवस्था का सृजन एक गांव में भी नहीं किया जा सकता है। (18.12.1998)

❋ ❋ ❋

दक्षिण एशिया में मामलों की स्थिति और उसकी जरूरतें

I

1. दक्षिण एशियाई क्षेत्र जिसमें सात देश सम्मिलित है (भारत, पाकिस्तान, बंग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, मालद्वीव) एक तरफ यह क्षेत्र मानवीय एवं प्राकृतिक विपुल क्षमताएं लिए हुए है जबकि दूसरी तरफ हमारी दुनिया का यह क्षेत्र सबसे पिछड़ा और गरीब क्षेत्र है, जो कि इसके मामलों की स्थिति का विरोधाभासी चित्रण प्रस्तुत करता है।

II

2. यह क्षेत्र सुसम्पन्न जैव-विविधता और प्राकृतिक संसाधनों के साथ भौगोलिक तौर पर आपस में सटे हुए हैं जिसमें मानव समुदाय का पांचवा हिस्सा निवास करता है, जिनका एक साझा इतिहास और सामाजिक नस्ली घनिष्ठता है। इसमें 70 करोड़ उपभोक्ता है, अमेरिका के बाद सबसे बड़ा रेलवे नेटवर्क (92, 250 किमी.) दुनिया का सबसे सिंचित भूमि क्षेत्र (लगभग 68 करोड़ हैक्टेयर), यहां तक कि कई विकसित क्षेत्रों से भी संख्या में ज्यादा मात्रा में वैज्ञानिक एवं तकनीकी व्यक्ति हैं—जो इसके सकारात्मक पक्ष को दर्शाते हैं।

उपरोक्त सभी विशेषताएं एक सम्पन्न दक्षिण ऐशियाई समुदाय को विकसित करने के आधार और इसके अन्दर संतुष्ट समाज को बनाने में सहायक हो सकते हैं।

3. यद्यपि इस समय सम्पूर्ण क्षेत्र और इसका प्रत्येक देश चौतरफा करुणादायक तस्वीर पेश करता है। इस शताब्दी के मध्य तक दुनिया के अन्य विकासशील देशों की तुलना में बेहतर दक्षिण एशियाई राष्ट्र आज मानवीय और पर्यावरणीय मसलों के द्विआयामी संकट से घिरा है तथा यहां के लोगों को अमानवीय स्तर पर धकेल रहा है।

4. जहां तक मानव संसाधनों का सम्बन्ध है, दक्षिण एशिया के 40 करोड़ से ऊपर लोग रात को भूखे सोते हैं। अन्य 30 करोड़ लोग गरीबी की रेखा से कुछ ऊपर हैं। आधे से अधिक दक्षिण एशियाई लोग अनपढ़, एक तिहाई बेघर, 40 प्रतिशत अर्द्ध बेरोजगार, एक तिहाई लोगों को शुद्ध पीने का पानी और दूसरी स्वास्थ्य सुविधा की कमी है तथा तीन चौथाई लोगों को शौचालय सुविधा उपलब्ध नहीं है। पांच साल से छोटे 53 प्रतिशत बच्चे कम वजन के हैं। 5 से 14 वर्ष के बीच के लगभग 10 करोड़ बच्चे बाल श्रमिक हैं, महिलाओं की स्थिति अत्यधिक दयनीय है। दक्षिण एशिया महिला उत्पीड़न में दुनिया के शीर्ष पर है।

5. इन देशों की औसत वार्षिक प्रति व्यक्ति आय 309 डालर है, यह अफ्रीका

के उप सहारा क्षेत्र के 555 डालर से बहुत नीचे है जो दो दशक पूर्व दुनिया का सबसे अधिक गरीब क्षेत्र था। इन देशों की अलग-अलग राष्ट्रीय आय भी दुनिया में सबसे कम आय वाले देशों में से है जिसमें भूटान की 180 डालर और भारत की 300 डालर राष्ट्रीय आय है।

भिन्न-भिन्न दूसरे सामाजिक विभेद गरीबी की समस्या को और अधिक बढ़ा रहे हैं।

6. दक्षिण एशिया में 12 करोड़ 60 लाख बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा, 69 करोड़ लोगों को बुनियादी स्वास्थ्य सुविधा और 77 करोड़ लोगों को शुद्ध पीने का पानी, 8 करोड़ 70 लाख बच्चों के लिए भरपूर पोषण और 28 करोड़ 70 लाख विवाहित जोड़ों के लिए परिवार कल्याण सेवाओं के प्रावधान की आवश्यकता है।

यह सब एक विपुल धन राशि की मांग करते हैं। किन्तु शासक वर्ग अपनी प्राथमिकताओं का अनुसरण करता है। फलस्वरूप गलत सरकारी नीतियों से उत्पन्न अन्दरूनी एवं बाह्य विवादों में क्षेत्र के अधिकतर वित्तीय संसाधन बर्बाद हो जाते हैं।

III

7. इस क्षेत्र के पर्यावरणीय संसाधन गवाह है कि पिछले पांच दशक में प्राकृतिक संसाधनों का विस्तृत क्षय किया गया है। तेज गति से नष्ट होते वनों के कारण आच्छादित जंगल घटाकर क्षेत्र के 17.5 प्रतिशत भूभाग में रह गये हैं, जिससे बाढ़ और सूखा जैसी कुछ विपदाएं पर्यावरणीय व्यवस्था के दबाव से सीधी जुड़ी हैं। ग्रीन हाउस प्रभाव से उत्पन्न भू-मण्डलीय ताप वृद्धि के कारण सभी समुद्री किनारे गंभीर स्थिति में फंस गये हैं जिसमें मालद्वीप और बांग्लादेश को अत्यधिक आघातों से गुजरना होगा।

8. निम्न वृद्धि के साथ, संसाधनों की बर्बादी ने आंतरिक व बाह्य दोनों तरह के सरकारी ऋण भार में बढ़ौत्तरी की है। बढ़ रहे ऋण सेवा भुगतान के साथ-साथ सैनिक खर्च में वृद्धि तथा कोश के दुरुपयोग और बर्बादी ने क्षेत्र की ऋण-शाख को गिरा दिया है जिससे भूमण्डलीय संसाधनों की भरपूर मात्रा को सहायता एवं निवेश के लिए आकर्षित प्रतियोगी क्षेत्रों की तरफ जाने वाले दीर्घकालीन बहाव नाम मात्र 3.6 प्रतिशत हिस्सा प्राप्त कर रहा है और विश्व व्यापार में केवल 1 प्रतिशत हिस्सेदार हैं, जबकि दुनिया की आबादी का 20 प्रतिशत हिस्सा यहां निवास करता है। इन रूझानों के प्रतिकूल प्रभाव स्वरूप बड़ी मात्रा में मानवीय, प्राकृतिक और वित्तीय संसाधनों का उलटा प्रवाह दक्षिण एशिया से विकसित देशों की तरफ चल रहा है तथा यह क्षेत्र और अधिक हाशिये की तरफ बढ़ रहा है।

IV

9. क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग और व्यापार के अनुसार क्षेत्रीय समूहों का निर्माण

करने का भूमण्डलीय रूझान जो कि भूमण्डलीय प्रक्रिया की अति आवश्यक मांग है। इसको पूरा करने के लिए 7 दक्षिण एशियाई देशों ने सन् 1985 में क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) का गठन किया परन्तु 13 वर्ष से अधिक अस्तित्व में रहने के बावजूद वह कोई महत्वपूर्ण योग्यता नहीं दिखा सका है।

10. उदाहरण के लिए संयुक्त राष्ट्र के अनुमान के मुताबिक सार्क के 7 सदस्यों के बीच उनके कुल विश्व व्यापार का मुश्किल से 3 प्रतिशत से थोड़ा अधिक व्यापार होता है, जबकि इसके विपरित यूरोपियन समुदाय और एशियान देश आपस में क्रमशः 80 प्रतिशत एवं 20 प्रतिशत व्यापार करते हैं।

ग्लोबल ट्रेड डवलपमेंट के अनुसार दक्षिण एशिया का एक कार्यकारी साझा बाजार वर्तमान व्यापार क्षमता को शताब्दी के अन्त तक 3 बिलियन डालर से 15 बिलियन डालर तक पहुंचा सकता है, परन्तु सार्क के वर्तमान रूप में यह संभव नहीं हो सकता।

11. 1997 में, 9वें माले सार्क सम्मेलन में इस क्षेत्र को दक्षिण एशियाई मुक्त व्यापार क्षेत्र (साफ्टा) में 2001 तक बदलने की घोषणा की तथा इस प्रकार क्षेत्रीय विकास को तेज करने का निर्णय लिया। 10वें कोलम्बो सार्क सम्मेलन में इसके सातों सदस्यों ने व्यापार के 2459 आइटमों पर तटकर को कम करने पर सहमति प्रदान की एवं भारत ने व्यापार के 2000 आइटमों से आयात प्रतिबंध को हटाने की घोषणा की। भारत ने अभी सार्क देशों में भारतीय संयुक्त उद्यमों पर लगाये प्रतिबंधों की सीमा 4 मिलियन डालर से 15 मिलियन डालर तय की है, जो कि विलम्ब से लिया गया निर्णय है।

V

12. सभी प्रकार की बाधाओं का हल नहीं होने की वजह से सार्क का विकास अभी तक अवरुद्ध है। ऐसा इसलिए है क्योंकि सार्क को बहुत सी बाधाओं को पार करना है। जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक विवाद एक सबसे बड़ी बाधा है। दूसरी बाधा छोटे सदस्य देशों को यह संदेह होना कि भारतीय माल से उनके बाजार भर जायेंगे। भारत और प्रत्येक सार्क सदस्य के बीच का द्विपक्षीय खिंचाव तीसरी बाधा है। चौथी बाधा सार्क सदस्य देशों के शासक समूह के सामने आन्तरिक राजनीतिक बाध्यता है जो द्विपक्षीय विवादों को अपने अपने पक्ष में उपयोग करने की कोशिशों के कारण उत्पन्न हुई। पांचवीं बाधा भारत के 'बड़े भाई' वाली भूमिका है, जिसमें भूतकाल में अपने छोटे भाइयों पर प्रभुत्व करने की कोशिश की।

13. एक साझा बाजार के लिए इसके सदस्यों के बीच मित्रतापूर्ण व्यवहार, सहयोग और भागीदारी की आवश्यकता है। इसका निर्माण अविश्वास, संदेह, तनाव

और टकराव के वातावरण में नहीं किया जा सकता। जब तक ऐसे वातावरण को बनाने वाले कारणों को हटा नहीं दिया जाता, तब तक सार्क सदस्यों के बीच आपसी विश्वास के सच्चे सम्बन्ध स्थापित नहीं किये जा सकते हैं।

14. सार्क के अन्दर सहानुभूतिपूर्ण वातावरण पैदा करने की जिम्मेवारी तर्कसंगत और आवश्यक तौर पर भारत पर आती है, क्योंकि क्षेत्र के लगभग सभी द्विपक्षीय विवादों में यह सबसे बड़ा हिस्सेदार है। अपने व्यापारिक हिस्सेदारों के बीच सद्इच्छा का बीजारोपण करके उन्हें रियायत देने का बलिदान भी उचित कदम साबित होगा जो न केवल दक्षिण एशिया एवं विश्व बल्कि भारत में शान्ति, लोकतंत्र और विकास हेतु सेवा का कारण होगा। प्रथमतया जम्मू-कश्मीर समस्या का एक उचित हल निकालने से विश्व का मुख्य ज्वलंत बिन्दु शान्त होगा और जनता के पैसे की बर्बादी का खात्मा होगा यानि भारत और पाकिस्तान के बीच अनावश्यक हथियारों की दौड़ समाप्त होगी जिसके परिणामस्वरूप ये दोनों देश 50 वर्ष से चल रहे असहनीय रक्षा खर्च के कारण विश्व स्तर पर विकास और सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में हाशिये पर चले गये हैं।

जम्मू-कश्मीर समस्या की मूलभूत प्रकृति (यानि कानूनी अर्थों में एक द्विपक्षीय मसला परन्तु राजनीतिक पैमाने के अनुसार एक त्रिपक्षीय सवाल) और इसकी धरातलीय वास्तविकताओं (यानि भारत-पाकिस्तान ने जम्मू-कश्मीर पर अकेले अपना ही नियंत्रण शामिल करने के लिए अपनी राष्ट्रीय इज्जत दांव पर लगा रखी है, कश्मीरी भारत से बाहर निकलने की इच्छा रखते हैं, जबकि जम्मू-कश्मीर के अन्य नस्ली समुदायों की अपनी-अपनी आकांक्षाओं और उद्देश्य है) से प्रस्थान करते हुए इस समस्या का ऐसा न्यायिक, उचित और व्यवहारिक हल निकाला जाए जिससे एक तरफ भारत और पाकिस्तान दोनों के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों में सामजंस्य कायम हो और उद्देश्य की पूर्ति हो जाए। इस उसूल के आधार पर सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर राज्य पर भारत-पाक या सार्क सहराज्य (जो केवल इस राज्य से सम्बन्धित सुरक्षा, विदेश मामले और मुद्रा को सम्भालेंगे) की स्थापना करना ही एक उचित विकल्प है। जिसमें एक संघीय ढांचे के तहत जम्मू-कश्मीर क्षेत्र की आठों नस्ली क्षेत्रों को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान की जाए। ऐसा प्रबन्ध एक तरफ भारत, पाकिस्तान और जे.के. लोगों के बीच भागीदारी पैदा करेगा और दूसरी तरफ सार्क के विकास का रास्ता खोलेगा।

द्वितीय, सार्क देशों के छोटे सदस्यों को भारतीय मालों के उनके बाजारों में छा जाने की चिन्ता को उचित गारंटी से दूर करके इस क्षेत्र में व्यापार एवं विकास को बढ़ावा दिया जावे, जो सभी के लिए लाभप्रद है।

तृतीय, द्विपक्षीय खिंचाव-जैसे भारत और बंग्लादेश के बीच-गंगा जल से सम्बन्धित मामलों, चकमा आदिवासियों, साझी सीमाओं, भारत को परिवहन सुविधाएं, भारत में बंग्लादेशी अप्रवासी इत्यादि, भारत और नेपाल के बीच काला पानी के

सम्बन्धित सवालों, 1950 के भारत नेपाल मित्रता सन्धि, जल बंटवारा और कुछ बिजली परियोजना के मसले, इत्यादि; भारत और श्रीलंका के बीच एल टी टी ई खाड़कूवाद से सम्बन्धित मसले, हिन्द महासागर में एक दूसरे के क्षेत्र में मछली पकड़ने के मसले इत्यादि; भूटान में नेपाली प्रवासियों के मामले में नेपाल के साथ इसके विवाद में भारत द्वारा सहायता देने से मना करने पर भूटान की नाराजगी का प्रश्न; और माल द्वीप के सुरक्षा मसलों-को शान्त करने से सम्बन्धित देशों में नई दोस्ताना उमंग पैदा होगी।

चतुर्थ, दूसरे सार्क सदस्यों के साथ झगड़े वाले मसलों को हल करने से इन देशों के लोगों में भारत विरोधी एहसास समाप्त होगा।

पंचम, सभी सार्क देशों के बीच दोस्ताना सम्बन्धों का बीजारोपण करने से भारत की 'बड़े भाई' वाली तस्वीर बदलेगी और एक लोकतांत्रिक तथा तर्कसंगत देश की तस्वीर उभरेगी।

आज, यह अत्यधिक स्पष्ट है कि अगर सार्क इस काम को हाथ में लेने में असफल हो जाता है तो आम तौर पर सभी सम्बन्धित लोगों और खास तौर पर भारत और पाकिस्तान के लिए विनाशकारी स्थिति पैदा हो सकती है। आम तौर पर यह स्थिति विश्व के दूसरे देशों की तुलना में दक्षिण एशियाई देशों के विकास की प्रक्रिया को रोक सकती है। यह खास तौर पर भारत और पाकिस्तान की आर्थिक स्थिति को खराब कर देगी जो उनकी टकरावादी नीतियों और तीव्र होते अन्दरूनी नस्ली विवादों से जुड़कर दोनों बहुनस्ली देशों को अस्थिर कर सकती है। (19.12.98)

❋ ❋ ❋

वर्तमान भारत की वास्तविकताएं और उनकी मांगें

I

1. इतिहास बताता है कि मानव ने शुरूआत से ही अपने सामाजिक अस्तित्व की समस्याओं को समझने की कोशिश की है। और इसने ऐसा विश्वास सामाजिक विकास की प्रक्रिया के तथ्यों को जानकर किया है। आज जब वह एक नए सामाजिक युग में प्रवेश कर रहा है तो हमारे सामाजिक रहन-सहन और सम्बन्धों की वास्तविकताओं को समझने का अति आवश्यक दायित्व आ गया है। यह स्वाभाविक तौर पर हमसे अपनी मूल सामाजिक इकाई अर्थात भारत की जरूरतों को समझने की मांग करता है।

II

2. भारत की आज प्रमुख सामाजिक वास्तविकता यह है कि इसकी दिशा (अर्थात् सिद्धान्त) गति (अर्थात् व्यवहार) एवं संरचना (अर्थात संगठन), हालिया उभरी वैश्वीकरण की प्रक्रिया से तय हो रहे हैं। यह तथ्य हमारी सरकार व संसद के राष्ट्रीय कार्यक्रम (अर्थात पैटेंट बिल, इंश्योरेन्स बिल, रूस से रणनीतिक साझेदारी, सीटीबीटी का सवाल, रुपये डालर विनिमय दर, विदेशी विनिमय, जनसंख्या वृद्धि, पर्यावरणीय प्रदुषण, मानव अधिकारों का हनन, विदेशी कर्जा) तथा उसी तरह भारत का विश्व के बहुत से संगठनों (जैसे यू एन, आई एम एफ, विश्व बैंक, और अन्य दर्जनों अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं) का सदस्य बनना और उनके निर्णयों के प्रति वचनबद्धता से स्पष्ट होता है। यह सब दर्शाते है कि कैसे भारत (विश्व के अन्य देशों की तरह) एक नई उभर रही भूमण्डलीय व्यवस्था से बंध गया है। आज कोई भी देश इस ऐतिहासिक प्रक्रिया से बाहर रहकर विकास नहीं कर सकता, परन्तु यह हमारी प्रमुख वास्तविकता का मात्र एक पक्ष है।

3. इस वास्तविकता का दूसरा पक्ष यह है कि हम आज की वास्तविकता का जवाब वैश्वीकरण के पूर्व की धारणाओं से दे रहे हैं। जैसे कि हिन्दुत्ववादी राष्ट्रीयता (जो चार हजार वर्ष पुरानी वैदिककालीन कबीलाई वास्तविकता पर आधारित है); मंडलवाद निर्देशित राष्ट्रीयता (जो 2000 वर्ष से ज्यादा पुरानी जातीय वास्तवविकता से निर्देशित है); तथा भारतीय धर्मनिरपेक्षता (जो गांधी के उदारवादी हिन्दुत्व तथा नेहरू के धन व सत्ता आधारित अवसरवाद का एक घालमेल) जो सभी धर्मों से हांकी जा रही है।

ये धारणाएं जनता की धार्मिक व जातीय भावनाओं या सत्ता व धन के प्रभाव में संचालित होने वाले विचारों का शोषण करके, सत्ता हथियाने एवं धन हड़पने में काम आती है; लेकिन ये धारणाएं 21वीं सदी की वैश्वीकरण की प्रक्रिया की मांगों के अनुरूप नहीं है तथा इस प्रकार देश के लोगों की सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा

नहीं कर सकती है।

4. वैश्वीकरण प्रक्रिया; एक ऐसे सामाजिक माडल की मांग करती है जिसमें तर्कसंगत मानवतावादी सामाजिक दृष्टिकोण, लोक सत्ता केन्द्रित कानून के शासन पर आधारित एक नया राजनीतिक ढांचा; उत्पादकता, टिकाऊपन एवं समता वाले तीनों उद्देश्यों के साथ एक नया विकास माडल; मानवीय प्रजातात्रिक मूल्य प्रणाली और एक नई शान्तिपूर्ण, सौहार्दपूर्ण एवं तनावमुक्त भूमण्डलीय पर्यावरणीय से परिलक्षित एवं मानवीय भाईचारे की धारणा और राष्ट्रों के बीच दोस्ती और सहयोग के सिद्धान्त पर आधारित व्यवहार के इर्द-गिर्द केन्द्रित एक नई सांस्कृतिक पद्धति का निर्माण करना शामिल है।

5. यद्यपि हिन्दूवादी एजेण्डा, एक राष्ट्र, एक संस्कृति और एक देश की राजनीति में मशगूल हैं (जो भारत के विविध बहु सांस्कृतिक, बहुधार्मिक, बहुजातीय एवं बहुभाषायी चरित्र के विपरीत है); स्वदेशी आर्थिकता (जो विश्व आर्थिकता से इसके एकीकरण का विरोध करती है), समान नागरिकता संहिता (अल्पसंख्यक जब तक लोकतांत्रिक निजी कानूनों से सहमत नहीं हो जाते, तब तक उनके निजी कानूनों के प्रयोग के अधिकार से मनाही करना) धारा 370 का उन्मूलन (जम्मू-कश्मीर के स्वायतता के दर्जे से मनाही करना) लेकिन व्यवहार में हिन्दुत्व के नायक अपने पूरे कार्यक्रम से विपरीत चल रहे हैं और कांग्रेस एवं संयुक्त मोर्चा के नुस्खे का अनुसरण कर रहे हैं।

6. मण्डलीकरण का एजेण्डा; जातीय आधारित सामाजिक न्याय की वकालात करता है। लेकिन व्यवहार में, जातीय जनित राष्ट्रवाद का अनुसरण करता है। यहीं एक सूत्रीय कार्य योजना निचली जातियों के लिए संसद, विधानसभा, नौकरियों में आरक्षण को सम्मिलित करती हैं। इसकी छिन्न-भिन्न सामाजिक विचारधारा के अनुरूप (अर्थात् 4000 जातियों के अस्तित्व की सामाजिक वास्तविकता) जो कई जातीय आधारित राजनैतिक साज समान रखती है, जैसे-बी एस पी, आर जे एस, सोसलिस्ट पार्टी (मुलायम नेतृत्व गुट), जनता दल, एस जे पी (चन्द्रशेखर धड़ा) इत्यादि। इन जातीय ग्रुपों में मात्र चार का ही विशेष जनाधार है, जिनको कुछ बड़ी जातियों का समर्थन हासिल है, उदाहरण के लिए राष्ट्रीय जनता दल बिहार में यादव आधारित, उत्तर प्रदेश में यादवों पर आधारित समाजवादी पार्टी, समता पार्टी बिहार में कुर्मी जाति पर आधारित तथा बहुजन समाज पार्टी दो या तीन राज्यों में सूचिबद्ध जातियों पर प्रभाव रखती है।

7. भारतीय धर्म निरपेक्षतावाद (जिसे कांग्रेस ने सम्भाल रखा है तथा वामपंथियों का समर्थन हासिल है) वर्तमान केन्द्रिकृत संविधान और न्यायशास्त्र के तहत लोकतांत्रिक

व्यवस्था कायम करने का दावा करता है। लेकिन इस ब्राण्ड के 45 वर्ष लम्बे प्रयोग ने 1950 के मध्यम स्तरीय विकसित भारत को दुनिया का सबसे पिछड़े हुए क्षेत्र में तब्दील कर दिया है।

8. स्पष्ट तौर पर, इनमें से कोई भी ब्राण्ड नये वैश्वीकरण मॉडल से कोई प्रासंगिकता नहीं रखता। इसी वजह से इन सभी सैम्पलों (जैसे नरसिम्हा राव चलित कांग्रेस शासन, संयुक्त मोर्चा सरकार या भाजपा निर्देशित गठबन्धन) ने अपने समय में वैश्वीकरण प्रक्रिया की विभिन्न आवश्यकताओं का प्रत्युत्तर दिया परन्तु वैश्वीकरण आंदोलनों को आगे बढ़ाने को कोई सामाजिक पहलकदमी नहीं की। इसका कारण बीते समय के राष्ट्रवादी सिद्धान्त के गर्भ में है, जिसमें विश्व दृष्टिकोण की कमी रही है। हमारे युग में ऐसा दृष्टिकोण एक अन्तर्राष्ट्रीय सोच तथा देशों की अन्तर निर्भरता के दृष्टिकोण (एक वैश्विक दिशा या दक्षिण एशिया केन्द्रित राष्ट्रीयता की सोच) से उभरता है या उभर सकता है।

III

9. आज भारत की दूसरी सामाजिक वास्तविकता यह है कि निम्न स्तरीय रहन-सहन के हालात ने हमारे मानवीय संसाधनों की क्षमता का गला घोंट रखा है।

आजादी के 5 दशक बाद भी 62 प्रतिशत हमारे लोग गरीबी की श्रेणी में आते हैं, 40 प्रतिशत पूर्ण गरीबी में जी रहे हैं, उनके पास रोजगार नहीं, घर नहीं, समुचित भोजन नहीं, बिजली नहीं तथा पीने का सुरक्षित पानी नहीं, इत्यादि। 40 प्रतिशत के पास मूल स्वास्थ्य सुविधाएं नहीं, 75 प्रतिशत के पास शौचालय सुविधा नहीं, 10 प्रतिशत शहर की गन्दी बस्तियों में रहते हैं, 48 प्रतिशत पूर्ण निरक्षर हैं, 5 प्रतिशत बेराजगार हैं तथा 33 प्रतिशत अर्द्ध रोजगार पर हैं, 33 प्रतिशत के पास स्वयं के घर नहीं, 10 प्रतिशत अपंग हैं जो निहायत उपेक्षित समूह हैं, लगभग 12 प्रतिशत भूमिहीन जो हमारे समाज की सबसे गरीब परत है, लगभग 53 प्रतिशत बच्चे मौलिक व गुणात्मक शिक्षा से वंचित है। लगभग 75 प्रतिशत महिलाएं देश में किसी न किसी रूप में उत्पीड़न की शिकार हैं।

टी ओ आई सर्वे के मुताबिक 80 प्रतिशत भारतीय काम के लिए विदेशों में जाना चाहते हैं। बुद्धिजीवियों का भारत से पलायन निरन्तर जारी हैं। लगभग 6000 उच्च प्रशिक्षित भारतीय जिनमें 40 प्रतिशत इंजीनियर, 10 से 12 प्रतिशत डाक्टर व 15 से 20 प्रतिशत वैज्ञानिक हैं-लाभदायक धन्धा हासिल करने के लिए दूसरे देशों में चले जाते हैं।

यू एन डी पी रिपोर्ट 1998 के मुताबिक भारत 1997 से मानव विकास सूचकांक में 174 देशों में 138वें से खिसक कर 139 वें स्थान पर तथा पाकिस्तान उसी

दौरान 139वें स्थान से 138वें पर आ गया हैं यह सूचकांक आमदनी के आधार पर देशों की स्थिति नहीं दर्शाता है बल्कि औसत सीमा, साक्षरता, अन्य सुविधाओं को इंगित करता है।

भारत के आर्थिक विकास पर ध्यान दिलाते हुए रिपोर्ट चेतावनी देती है कि देश को इस विकास पर भारी कीमत चुकानी पड़ रही है, जबकि यह जलवायु के विनाश और विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं को जागृत कर रहा है।

एक मोटे अनुमान के मुताबिक पर्यावरणीय क्षति पर 1 वर्ष में 1000 करोड़ डालर (सन् 1992 के सकल घरेलु उत्पादन का 4.5 प्रतिशत है) राशि के बर्बाद होने के आंकड़े पेश करती है, अगर उच्च अनुमान लगाया जाये तो कुछ पर्यावरणीय क्षति की कीमत 1380 करोड़ (अथवा जी डी पी का 6 प्रतिशत) राशि होगी।

रिपोर्ट बताती है कि भारत की शहरी वायु प्रदुषण लागत 130 करोड़ डालर प्रति वर्ष है जबकि जल-प्रदुषण की वजह से प्रति वर्ष स्वास्थ्य कीमत की मात्रा 570 करोड़ डालर है जो देश की कुल पर्यावरणीय कीमत की लगभग 3/5 वां हिस्सा है।

सन् 1996 की यू एन डी पी रिपोर्ट ने कहा है कि दक्षिण एशिया में विशेषकर भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल एवं भूटान में 29 प्रतिशत लोग अत्यन्त गरीबी में जी रहे हैं तथा 62 प्रतिशत से ज्यादा की स्थिति ऐसी है जो उनके भविष्य पर विपरीत प्रभाव डाल सकती है।

1947 में 34 करोड़ 20 लाख से आज 100 करोड़ की अद्वितीय जनसंख्या बढ़ौत्तरी गंभीर सामाजिक तनाव का कारण बन गई है।

IV

10. आज के भारत की तीसरी सामाजिक वास्तविकता है कि इसके प्राकृतिक पर्यावरण की विस्तृत क्षति हुई है। पर्यावरणीय संसाधन स्वयं अपने हालात बयान करते हैं।

14 करोड़ 30 लाख हैक्टेयर कुल उपजाऊ भूमि का लगभग 60 प्रतिशत भाग सेम, भूमि कटाव एवं लवणता से ग्रसित है। दूसरी 1 करोड़ 60 लाख हैक्टेयर भूमि दर्रे एवं नदी-नालों से क्षतिग्रस्त है। इतनी भारी मात्रा में भूमि क्षय, इस समस्या की गंभीरता को दर्शाता है।

वनों की दशा सबसे दयनीय है। 1864 में 40 प्रतिशत देश की भूमि पेड़ों से ढकी हुई थी। 1952 में यह 22 प्रतिशत थी जो आज कम हाकर 11 प्रतिशत रह गई है।

पानी की समस्या और भी गंभीर है। वर्षा के पानी की बर्बादी तथा भूजल पर भारी दबाव एवं दुरुपयोग के कारण पानी की उपलब्धता निरन्तर घटती जा रही है।

पहले से ही कस्बों एवं गांवों में पानी की कमी खतरे की घंटी बन चुकी है। पानी की गुणवत्ता (चाहे बहता पानी हो या भूजल एवं सतही जल भण्डार हो) लगातार गिर रही है।

जहरीले रसायन के प्रयोग, मोटर गाड़ी वाहन एवं कोयला आधारित थर्मल संयंत्र तथा कुछ उद्योग प्रदूषण पैदा कर रहे हैं। विज्ञान एवं वातावरण केन्द्र ने बताया है कि भारत में जी डी पी पिछले 20 वर्षों में दुगने से कुछ ज्यादा बढ़ी है, जबकि इसकी तुलना में वाहनों से प्रदूषण 8 गुणा बढ़ गया है।

भूमण्डलीय ताप अब एक वास्तविकता बन रहा है और पूर्व भविष्यवाणी से ज्यादा तेज गति से फैल रहा है।

भूमि और पानी की गिरावट एवं वनों के कटाव तथा वायु प्रदूषण ने मनुष्य प्रजाति सहित भारत के जैविक संसाधनों (45000 पौधों व 75000 जीव जन्तुओं) के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया है।

V

11. आज भारत की चौथी सामाजिक वास्तविकता, इसकी राजनैतिक प्रक्रिया के अपराधीकरण की है। राजनीति के अपराधीकरण का तात्पर्य है कि हमारी राजनीतिक प्रक्रिया का—राजनैतिक माफिया गैंगों, सत्ता के दलालों, अतिरिक्त संवैधानिक केन्द्रों, सत्ता का दुरुपयोग करने वालों, साम्प्रदायिक व जातिवादी तत्वों तथा धनबल व भुजबल के मालिकों के द्वारा संचालन हो रहा है। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ है कि अपराध का राजनीतिकरण हो गया है।

माफिया संस्कृति में एक खतरनाक बढ़ौत्तरी हो रही है। यह दूर तक फैल गई है। माफिया जिन्दगी के हर मोड़-प्रशासन, जंगल, शिक्षा, स्टॉक और मुद्रा बाजार, आयात व निर्यात, इत्यादि-पर फैल चुका है। 1994 की सरकारी बोहरा कमेटी रिपोर्ट के अनुसार "माफिया देश में समानान्तर सरकार चला रहा है।"

माफियावाद का अधिपत्य, कानून के शासन की विकृति, तथा वर्तमान ढाँचे में लोगों को थोड़े बहुत उपलब्ध अधिकारों के हनन को इंगित करता है। राजनेता और उनकी पार्टियां कानून के शासन के बजाय स्वयं के शासन को स्थापित करने में रूचि रखती है। राज्य की सभी प्रमुख संस्थाऐं जो अपने सम्बन्धित सामाजिक क्षेत्र में कानून का शासन सुनिश्चित करने का दायित्व वहन करती है, जो आज जनता में चौतरफा असफल हो चुकी है।

माफियावाद ने अपराध समूहों को बढ़ाया है। उन्होंने आम नागरिक की सम्पत्ति, जीवन की सुरक्षा तथा प्रशासनिक सुचारू कार्य विधि को खतरे में डाल दिया है। परिणामस्वरूप, भारत में अपराध दर में बढ़ोत्तरी हो गई है। गृह मंत्रालय के ताजा

दस्तावेज के अनुसार, अखिल भारतीय अपराध दर 12.4% पर स्थित है। राजस्थान 1996 में अपराध प्रवृत राज्यों की सूची में सबसे उपर है, जबकि उसी वर्ष मैट्रोपोलिन शहरों में दिल्ली अपराध की श्रेणी में सबसे ऊपर थी। देश में महिलाएं सबसे ज्यादा जुल्म की शिकार है। देहली के एक महिला समूह के अनुसार, 76% महिलाऐं देश में यौन उत्पीड़न से किसी न किसी रूप में शिकार है। मानसिक चिकित्सालयों में बन्दी महिलाओं में से 60% महिलाऐं पागल नहीं है, बल्कि पति एवं ससुराल वालों की निर्दयता की शिकार हैं। महिलाओं के बाद, अनुसूचित जाति व जन-जाति तथा अल्पसंख्यक, अपराधियों के लक्ष्य है।

साम्प्रदायिकतावाद, जातिवाद व भ्रष्टाचार राजनीति के अपराधीकरण के दूसरे रूप हैं। स्पष्टतया: अपराध युक्त राजनीति में कोई वाजिब स्वतंत्रता व प्रजातंत्र का अस्तित्व नहीं हो सकता है।

VI

12. भारत की पांचवी सामाजिक वास्तविकता आज उभर रहे मुख्य आर्थिक वित्तीय संकट की है। सभी प्रमुख आर्थिक-वित्तीय संकेतक खतरे की घंटी बजा रहे हैं। आर्थिक मोर्चे पर औद्योगिक वृद्धि का रूझान गिरावट की ओर है। यह 1996-97 से एक दीर्घकालीन मंदी से पीड़ित चल रहा है। इसके 12% के विपरीत 4.5% से ज्यादा बढ़ने की उम्मीद नहीं हैं। कृषि उत्पादन की भी उपर उठने की सम्भावना नहीं है। निर्यात (जिसकी 1995-96 से गिरावट जारी थी) की सम्भावनाएं भी धूमिल लगती हैं।

विदेशी पर्यटकों का आगमन और उनसे विदेशी मुद्रा की आमदनी अनुमानित आय से कम प्राप्त हुई है। बढ़ता हुआ व्यापारिक अन्तर तथा अदृश्य बाधाऐं चालू लेखा-जोखा पर संकट पैदा करने वाली है। इनमें से सभी आर्थिक मूलाधार, कोई उम्मीद प्रदान नहीं करते हैं।

जहाँ तक पूंजी लेखा का संबंध है, भारत में चल रहे भू-मण्डलीय आर्थिक संकट से फायदा उठाने की योग्यता नहीं है। यह बड़े पैमाने पर पूंजी प्रवाह को आकर्षित करने में सफल नहीं हो सका है, क्योंकि इसकी एफ डी आई पर कोई सुस्पष्ट नीति नहीं है, और इसने कोई प्रशासनिक एवं ढांचागत उन्नति तथा कृषि सुधार लागू नहीं किया हैं। परमाणु परीक्षणों ने भी नकारात्मक प्रभाव डाले हैं। इसने सरकारी घाटा घटाने की बजाए उच्च आबकारी संग्रह और आयात सीमा-शुल्क के माध्यम से राजस्व बढ़ाने का प्रस्ताव किया है।

राजस्व वित्तीय परिदृश्य भी धूमिल है। एन सी ए ई आर की मध्यावधि समीक्षा कहती है कि खर्चों को कम करने में नाकामयाबी राजस्व की कमी तथा

आर्थिक वृद्धि के बजट निर्धारित बढ़ोतरी से भी नीचे होने से 1998-99 के बजट के वित्तीय संकेतक के लक्ष्य गलत होने वाले हैं।

इस सर्वे के मुताबिक कुल वित्तीय घाटा जी डी पी के लक्षित 5.6% से भी ऊपर होने की उम्मीद है क्योंकि केन्द्र का वास्तविक खर्चा बजट में तय राशि से ज्यादा होगा।

इसमें कहा है कि आर्थिकता में लगातार सुस्ती सरकारी राजस्व में उपलब्धता कम कर देगी। सरकारी कार्यक्रम वर्ष 1998-99 के धन आपूर्ति व्यवस्था 15% से 15.5% के अनुरूप नहीं है।

यह रिपोर्ट आगे बताती है कि व्यापारिक घाटा भी बढ़ने वाला है, आयात में 6% तथा निर्यात में 9.2% बढ़ोतरी मानते हुए यह आंका गया है कि व्यापार घाटा संतुलन 8566 मिलियन डालर, पिछले वर्ष के 6799 मिलियन डालर से 26% से ऊपर बैठेगा।

भारतीय आर्थिक मामलात की स्थिति और भी बुरी है अब भारत पर एक गंभीर आर्थिक गिरावट टकटकी लगाए हुए हैं।

VII

13. भारत की छठी सामाजिक वास्तविकता इसकी अति उपभोक्तावादी संस्कृति है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति निर्णय लेने में मूल रूप से धन एवं सत्ता पर विचार करता है। इसकी विशेषता है कि यह एक तरफ सच्चाई, शान्ति, अहिंसा, समानता और न्याय जैसे सार्वभौम मूल्यों को तोते की तरह रटते हैं जबकि दूसरी तरफ व्यवहार में सभी तरह की चालबाजी, धोखाधड़ी की विशेषताओं को बनाए रखते हैं।

कहना कुछ व करना कुछ की दोगली संस्कृति ने सामाजिक जीवन के हर क्षेत्र में धन एवं सत्ता की छीना झपटी में उलझा दिया है। नैतिक मूल्यों के दूषितकरण से यह सार्वजनिक और राजनैतिक दोनों स्तरों तक सड़ गई है।

राजनैतिक स्तर पर ये अपना लक्ष्य शान्ति को एवं अहिंसा को अपना मौलिक सिद्धान्त घोषित करते हैं जबकि वास्तव में सैनिकीकरण एवं टकराव के रास्ते का अनुसरण करते हैं। ये लोकतंत्र की कसमें खाते हैं जबकि अपने विपक्षी का हर तरह से दमन करते हैं।

धर्म निरपेक्षतावाद की कसमें खाते हुए उसके पालन की घोषणा करते हैं ठीक उसी समय ये साम्प्रदायिक एवं जातिवादी ताकतों से आँख मिचौली करते हैं। ये भ्रष्टाचार से लड़ने की प्रतिज्ञा करते हैं जबकि सभी तरह के भ्रष्टाचार को महिमा मंडित करते हैं।

सार्वजनिक स्तर पर इसने चारों ओर अनैतिक वातावरण पैदा कर दिया है, खाद्य पदार्थ में मिलावट, निम्न स्तर का माल और नशीले पदार्थ, पानी, बिजली, राशन

कार्ड, गैस सुविधा, टेलिफोन कनेक्शन, रेलवे आरक्षण, स्कूल में भर्ती, कॉलेज, हॉस्पिटल, घर या दुकान किराये पर लेना इत्यादि में कालाबाजारी, घटिया कम्पनियां, रोजगार कार्यालय, वीसा एजेन्सियों के मार्फत धन निचोड़ना, टैक्स चोरी, धन ऐंठना, तस्करी, विदेशी व्यापार में ठगी, बांड धोखाधड़ी, शेयर घोटाले इत्यादि, ये सभी बिना किसी रुकावट के फल-फूल रहे हैं।

इसने ऐसा सामाजिक वातावरण पैदा कर दिया है, जहां सभी तरह की बेईमानियां पारितोषिक बन गई हैं।

VIII

14. भारत की सातवीं सामाजिक वास्तविकता यह है कि इसको राष्ट्रीय महानता वाली शक्ति आधारित धारणा जो तर्कसंगत तौर पर प्रभुत्व और सैनिकीकरण की ओर ले जाती है।

राष्ट्रीय महानता की आकांक्षा करना राष्ट्रीयता के सामान्य लक्षणों में से एक है। परन्तु कुछ राष्ट्रवाद हकीकत के मुताबिक (यानि अपने अन्दरूनी एवं बाह्य शक्ति संतुलन का लेखा-जोखा करते हुए) रास्ता अपनाते हैं जबकि दूसरे कुछ मनोगत तरीके से व्यवहार करते हैं, उदाहरणार्थ—द्वितीय महायुद्ध के दौरान जापान और जर्मनी तथा हाल में सोवियत संघ इत्यादि।

राष्ट्रीय महानता की भारतीय चाहत भी एक सामान्य राष्ट्रीय लक्षण रही है, परन्तु यह दो गलत धारणाओं से पीड़ित है, एक तरफ इसका विशाल क्षेत्र में फैलाव (लेकिन बहुनस्लीय के साथ) का घमण्ड और दूसरा कथन इसकी अलौकिक भूमि होने के दावे में निहित है, जिसके अनुसार ये इस पृथ्वी पर अद्वितीय भूमिका को अदा करने की मिथ्या धारणा बनाए हुए है और यही विश्वास इसके प्रारम्भ (1947) से क्षेत्रीय महाशक्तिवाद का रास्ता चुनने में मौलिक तर्क पैदा करते हैं। सामाजिक शान्ति, समानता व न्याय के ऊपर बन्दूक की राजनीति को प्राथमिकता देने से ही इसे अपने पड़ौसियों पाकिस्तान व चीन से बगैर जनता के लिए कोई ठोस प्राप्ति के चार युद्धों से गुजरना पड़ा है। शीत युद्ध काल के समाप्ति के बाद से वैश्विक सैनिक खर्चा 1987 से प्रतिवर्ष 4 बिलियन डालर घटता जा रहा है तथा जब दुनिया के प्रत्येक क्षेत्र में सैनिक खर्च कम हो गये वहीं मात्र भारत पाकिस्तान सैनिक बजट को बढ़ा रहे हैं। भारत विकासशील देशों में हथियारों का भी सबसे बड़ा आयातक होने की विशेष योग्यता रखता है और अब यह नाभिकीय विस्फोट करके और आगे बढ़ गया है।

भारत अपनी बन्दूक की राजनीति को चीन व पाकिस्तान से दोहरे खतरे को दर्शा कर न्यायोचित ठहराता है। लेकिन यह तर्क वर्तमान विश्व वास्तविकता को नकारता है जो हमारे युग की बन्दूक राजनीति को निरर्थक रेखांकित करता है। एक

वास्तविकता यह है कि सोवियत यूनियन का महाशक्तिवाद ढह गया क्योंकि वह अपनी जनता को रोटी व स्वतंत्रता प्रदान करने में असफल हो गया। दूसरी ओर गैर सैनिक जापानी एवं जर्मन माडल, युद्धों में बर्बाद दोनों देशों ने अपने आपको विश्व आर्थिक महाशक्तियों में रूपांतरित किया है, जिन्हें विश्व समुदाय, सुरक्षा परिषद की स्थाई सदस्यता की सर्वसम्मत सहमति दे रहा है।

तीसरी वास्तविकता यह है कि गैर टकरावावादी रास्ता अख्तियार करने वाले देश—कनाडा, आस्ट्रिया, स्केण्डेनवियाई देश, कास्टारिका तथा कुछ दूसरे एशियन, लेटिन अमेरिका तथा अफ्रिकन देशों ने अपने नागरिकों के कल्याण के लिए संतोषजनक स्तर बनाए रखने की योग्यता हासिल कर ली है।

भारत का क्षेत्रीय महाशक्तिवाद (जो सैनिकीकरण की आवश्यकता पर बल देता है) का ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि इसने एक तरफ भारत के अपने पड़ौसियों से सम्बन्ध सुधारने में हमेशा बाधा डाली है, विशेष तौर पर पाकिस्तान के साथ तथा दूसरी तरफ भारत का सामाजिक विकास का गला घोटा है तथा इसे दुनिया के सबसे गरीब देशों में रखा है।

IX

15. भारत की आठवीं सामाजिक वास्तविकता इसके दो सेफ्टी वाल्व – न्यायपालिका और मीडिया की गिरती हुई प्रभावशीलता है।

(A)

अब यह मोटे तौर पर माना गया है कि देश के न्यायिक प्रशासन में एक चौंकाने वाला पतन हो गया है। यहां तक कि भारत के राष्ट्रपति के आर नारायणन एवं मुख्य न्यायाधीश ए एस आनन्द भी विभिन्न कारणों से इस स्थिति पर अत्यधिक चिंता महसूस करते हैं।

राष्ट्रपति ने नई दिल्ली में एक सेमीनार में इस पर अपनी चिन्ताओं को प्रकट किया जहां भारत के मुख्य न्यायाधीश भी मौजूद थे। उन्होंने न्यायिक प्रक्रिया की धीमी गति को गंभीरता से लिया तथा जनता को न्याय से वंचित करने के रूप में चित्रित किया है। भारत के विभिन्न अदालतों में लम्बित पड़े 3 करोड़ मुकदमों को गंभीरता से लेते हुए उन्होंने कहा कि सरकार एवं न्यायपालिका को इन्हें सुलझाने के लिए युद्ध स्तर पर कदम उठाने चाहिए। उन्होंने कहा कि जनहित याचिका के बावजूद अपीलों की अन्तहीन प्रक्रिया और मुकदमे की प्रक्रिया में अत्यधिक धन की जरूरत, नागरिकों को कानून की पहुंच से दूर कर देती है। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि यदि वकील सभी तरीकों से केसों की प्रक्रिया को लम्बित करने के जिम्मेवार है तो जज अपनी इच्छा पर केसों को स्थगित करके कानून के दुरुपयोग को रोकने में असफल रहे हैं।

मुख्य न्यायाधीश ने केसों के भारी ढेर का कारण विभिन्न स्तर पर बड़ी तादाद में रिक्त पदों का होना तथा भारत की जनसंख्या को देखते हुए जजों की संख्या का अनुपात कम होना बताया है।

जो भी बात हो, विलम्ब और महंगे न्याय की समस्या नई नहीं है। अनेकों आयोगों और कमेटियों ने इसके कई अचूक उपाय सुझाये है किन्तु हालात और अधिक बिगड़े हैं। हजारों अप्रचलित व पुराने कानूनों ने प्रक्रियाओं, नियमावलियों, विधि-नियमों का जंगल खड़ा कर दिया है। देश के 2500 केन्द्रीय कानूनों में से 1300 कानून अनावश्यक है तथा लगभग 25000 राज्य कानूनों में से 15000 गैर उपयोगी कानून हैं (जो सार्वजनिक व्यवसाय को निपटाने में देरी का कारण हैं), यही केन्द्रिय व राज्य कानून कार्यालयों में भ्रष्टाचार के स्रोत बन गये हैं। सभी न्यायिक स्तर पर घालमेल को सुधारा जाना चाहिए। लोक अदालत भी सस्ता व शीघ्र न्याय दिलाने का एक तरीका हो सकता है। इस कार्य के लिए वर्तमान न्यायिक ढांचा असंतुलित साबित हो गया है।

(B)

जहां तक प्रेस की भूमिका का सम्बन्ध है, भारत में इसका 200 वर्ष लम्बा सकारात्मक इतिहास है। लेकिन हाल ही में यह कुछ पतन के लक्षण दिखा रही है। इसका प्रमुख कारण समाचार पत्रों के मालिकों के दृष्टिकोणीय परिवर्तन में निहित है।

पहले समाचार पत्र का मालिक मात्र इसके प्रसार में तभी हस्तक्षेप करते थे जब उसमें उनका व्यक्तिगत हित प्रभावित होता था, ऐसे हालातों में अखबार सामाजिक मसलों के प्रति कमोबेश एक स्वस्थ रूझान अख्तियार करते थे। लेकिन अब उन मालिकों ने अपने हितों को पूरा करने के लिए अखबार का बाजारू माल के तौर पर व राजनैतिक औजार के रूप में इस्तेमाल करना शुरू कर दिया। इसके अनुरूप बहुत से मालिकों ने अपने अखबारों के प्रबन्ध में जरूरी तब्दीलियां कर दी हैं। स्पष्ट तौर पर इसी से भारतीय प्रेस की प्रक्रिया में एक उल्टा परिणाम हुआ। अब इसका और अधिक व्यक्तिगतकरण और वाणिज्यकरण हो गया है, जिससे सामाजिक समस्याओं के प्रति इसके सकारात्मक दृष्टिकोण का वजन घट गया है, और मुख्य तौर पर यह भड़काऊ इन्द्रियानुभव खबरों की छटनी करता है।

स्वतंत्र प्रेस की प्रक्रिया में अन्य रुकावट राजनीतिज्ञों द्वारा छपाई और विज्ञापन में रियायतों के जरिये अखबारों को अपने पक्ष में करने के प्रयासों से पैदा होती है और शासक पार्टी द्वारा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का उपयोग इत्यादि अन्य बाधाकारी कदम हैं।

प्रेस की स्वतंत्रता और इसकी जनता के प्रति जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए एक कड़े निगरानी तंत्र की आवश्यकता है।

X

16. भारत की नौवीं सामाजिक वास्तविकता नवम्बर 98 के चुनाव के भाजपा गठबन्धन में पैदा हुआ संकट है। यह संकट पांच तथ्यों से स्पष्ट होता है - भाजपा तथा संघ परिवार में उदारवादी एवं अतिवादी घटकों के बीच बढ़ता अन्तर्विरोध, बढ़ती हुई मुद्रास्फीति, अराजकता और भ्रष्टाचार, भाजपा गठबंधन के विरुद्ध बढ़ता असंतोष, भाजपा तथा इसके सहयोगी गठबंधन के बीच उभर रहे मतभेद, और भाजपा विरोधी सभी ताकतों का सोनिया नेतृत्व वाली कांग्रेस को समर्थन। ये सभी रूझान संकेत देते है कि आने वाले दिन भाजपा गठबंधन के लिए बहुत कठिन होंगे।

XI

17. उपरोक्त वर्णित सभी सामाजिक वास्तविकताएं सभी सम्बन्धित पक्षों से एक उचित प्रत्युत्तर की मांग करती है।

प्रथम मांग भूमण्डलीकरण की प्रकृति तथा उसकी प्राथमिकताओं के सवाल पर स्पष्ट होने एवं इस पर लोगों को जागृत करना।

द्वितीय मांग दक्षिण एशिया के मामलों की स्थिति और इसकी आवश्कताओं के बारे में स्पष्ट होना एवं इस पर लोगों को जागृत करना।

तृतीय मांग भारत की वर्तमान वास्तविकता तथा उनकी मांगों के बारे में स्पष्ट होना एवं इस पर लोगों को जागृत करना।

चौथी मांग है कि वर्तमान भारतीय वास्तविकताओं पर भूमण्डलीकरण के सिद्धान्त और प्राथमिकताओं को लागू करके भारत के विकास का आम कार्यक्रम तैयार किया जाए, इस प्रकार भारत के एक अन्तरनिर्भर (या भूमण्डलीय दिशा या दक्षिण एशिया केन्द्रित) राष्ट्रवादी मॉडल को क्रियान्वित किया जाए। यहाँ ऊपर बताए गए अन्तरनिर्भर राष्ट्रवाद के कार्यक्रम के पक्ष में लोगों को जागृत और लामबन्द करना अति आवश्यक है।

तात्कालिक महत्व की पांचवीं मांग हमारे जन कार्य की शुरूआत के लिए वंचित और कम सुविधा प्राप्त वर्गों (यानि गरीब, भूमिहीन, असंगठित, शहरी श्रमिक, हाकर्स, रिक्शा चालक, खदान मजदूर, शहरी गन्दी बस्ती निवासियों, किराये पर रहने वाले, छोटे उद्योगों में काम करने वाली महिलाओं, मजदूर, छोटे और सीमान्त किसान, मछुआरे, अपंग, अंधे, महिलाएं, बच्चे, विद्यार्थी, नौजवान, बेरोजगार, दलित, आदिवासी, पिछड़ों इत्यादि) की समस्याओं को छांटना और उनके हल के लिए उन्हें जागृत और लामबंद करना है और आगे बढ़ती हुई कीमतों, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, अपराध, मानव अधिकारों के हनन, महिलाओं और कमजोर तबकों पर अत्याचार के विरोध में जनता को संगठित करना भी आवश्यक है। (20.12.98)

❋ ❋ ❋

नवम्बर 1998 के विधान सभा चुनावों के संकेत

I

उपर्युक्त चुनावों में भाजपा हारी तथा कांग्रेस जीती। इस घटना के संबंध में कई कारण सामने आ चुके हैं।

कुछ कहते है कि यह बढ़ती हुई कीमतों को रोकने, बढ़ती कानूनहीनता व असुरक्षा तथा फैलते हुए भ्रष्टाचार इत्यादि में केन्द्रीय सरकार की असफलता के कारण ऐसा हुआ।

दूसरे कहते हैं कि यह सत्ता विरोध में मत था।

अभी तक अन्य मानते है कि यह भाजपा के संकीर्ण हिन्दुत्व कार्यसूची को लागू करने का परिणाम है जैसे-शिक्षा का साम्प्रदायिकरण, अल्पसंख्यकों पर अत्याचार तथा कमजोर तबकों की उपेक्षा इत्यादि।

और कुछ इसका कारण भाजपा के अन्दर विद्रोहियों को मानते हैं।

और कुछ उसे भाजपा शासित प्रदेशों की सरकारों की घटिया कार्यकुशलता के विरोध में मत मानते हैं।

अभी भी कुछ इस पक्ष में हैं कि इस घटना के लिए सोनिया फेक्टर जिम्मेवार था।

ये सभी तर्क कुछ दम रखते हैं।

II

प्रमुख कारण दिखता है कि भाजपा लोगों की अपेक्षाएं पूरी करने में असफल रही। इसके वायदे व कारगुजारी में काफी अन्तर रहा। यह एक दूसरी प्रकार की कांग्रेस आई साबित हुई। यहां तक कि कांग्रेस से भी ज्यादा कमजोर इसकी कारगुजारी रही। एक अलग तरह की पार्टी की इसकी भ्रामक छवि तथा "एक योग्य नेता तथा एक स्थिर सरकार" का वादा व्यवहारिक धरातल पर टुकड़े-टुकड़े हो गया। इसका हिन्दुत्व आधारित राष्ट्रवाद तथा परमाणु देशभक्ति, दुनियादारी के सार्वजनिक मुद्दों की तुलना में कम प्रभावी साबित हुए। इससे यह भी संकेत मिलता है कि अतिवादी राजनीति आज हर जगह आमतौर पर गैर उत्पादक होती है और विशेषतौर से बहुआयामी देशों में पूरे तौर पर गैर उत्पादक होती है। यह भाजपा की केन्द्रीय व राज्य सरकारों सहित सम्पूर्ण भाजपा के विरोध में अविश्वास का मत था। कांग्रेस आई की जीत का आधार सोनिया फेक्टर का तर्क यह विश्वास नहीं दिलाता कि इसने फरवरी 98 के आम चुनावों में काम क्यों नहीं किया था।

III

इन चुनावों की आवाज प्रथम संकेत देती है कि मतदाता लम्बी मंजूरी नहीं दे सकते। वे जिसे चुनते हैं उस सरकार से जवाब देही मांगते हैं यदि उनका प्रतिनिधि समय पर जवाब देने में असफल रहता है तो अगले चुनावों में वे उनका बोरी-बिस्तर गोल कर देते हैं।

दूसरा संकेत यह है कि मतदाता किसी उपलब्ध व्यवहारिक विकल्प को चुनते है, भले ही उन्होंने उसे पिछली बार हरा दिया हो। उनकी प्राथमिकता मुख्य रूप से उनकी तात्कालिक अनुभूतियों से जुड़ी है। यह मतदान से मतदान अलग-अलग हो सकती है या कई बार स्थिर रह सकती है।

तीसरा संकेत है कि लोगों ने कांग्रेस आई को मत दिया क्योंकि तीन राज्यों में मतदाताओं के सामने मात्र यही व्यवहारिक पसन्द थी। दूसरा गैर भाजपा, गैर-कांग्रेस दल वहां कोई वजूद या प्रभाव नहीं रखता था। वे दूसरी गैर भाजपा दलों में नहीं गए, जैसा कि वामपंथी पार्टियों, क्योंकि उनके संबंधित नेतृत्व ने पहले से ही भाजपा नेतृत्व की केन्द्र सरकार को हटाने के लिए बगैर शर्त के कांग्रेस आई को समर्थन दे दिया था। कांग्रेस आई को मिले वोट भाजपा विरोधी मत को पेश करता है, किसी द्विपक्षीय चुनावी ध्रुवीकरण को नहीं जिसमें एक तरफ कांग्रेस आई तथा दूसरी तरफ भाजपा हो।

चौथा संकेत है कि भाजपा नेतृत्व वाली केन्द्र सरकार के लिए आने वाला समय बड़ा कठिन है। इस वक्त यह अनुमान लगाना अपरिपक्वता है कि यह कितने समय तक चलेगी। इसका रूझान अप्रेल, 1999 में कुछ राज्यों के होने वाले विधान सभाओं के चुनावों के बाद स्पष्ट होने वाला है। कुछ समय के लिए भाजपा के सहयोगी दल, सत्ताधारी गठबन्धन में ठहर सकते हैं।

पांचवा संकेत है कि तीन राज्यों में भाजपा से कांग्रेस आई को सत्ता हस्तान्तरण सांपनाथ की जगह नागनाथ का परिवर्तन है। भाजपा की हार से हिन्दुत्व ताकतों को नुकसान पहुँचा है जबकि कांग्रेस आई की जीत का मतलब है अधिनायकवादी व चापलूस (बन्धुआ मजदुर) संस्कृती को मजबूती। कांग्रेस आई की उपलब्धियां अस्थायी साबित होने वाली है, यदि वह अपने 5 दशकों की पुरानी गलत राजनीति से गंभीरता से सबक नहीं लेती तथा एक व्यक्ति केन्द्रित राष्ट्रीय राजनीति तथा सांगठनिक ढांचे को बदलकर उचित लोकतांत्रिक तरीका नहीं चुन लेती।

❋ ❋ ❋

जम्मू-कश्मीर पर

1. यह सदन प्रस्ताव करता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या का एक ऐसा उचित, न्यायिक और व्यावहारिक हल त्रिपक्षीय आधार पर निकाला जाए जो एक तरफ भारत और पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों और दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर के लोगों के साथ भारत-पाकिस्तान के लोगों के हितों में समन्वय कायम कर सके।

2. भारत और पाकिस्तान के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों को जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक या सार्क सहराज्य कायम करके संतुलित किया जा सकता है और किया जाना चाहिए, जिसमें सहराज्य के जिम्मे जम्मू-कश्मीर की रक्षा, विदेशी मामले और मुद्रा होनी चाहिए। जबकि भारत व पाकिस्तान के लोगों के हितों के साथ जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों में समन्वय जे.के. को अर्द्ध-स्वतंत्रता प्रदान करके (जिसमें राज्य की प्रत्येक नस्ली-क्षेत्रीय पहचान को अधिकतम सम्भव स्वायतता प्रदान की जाए) की जा सकती है और की जानी चाहिए।

3. जहां तक जम्मू-कश्मीर की विभिन्न पहचानों के भिन्न-भिन्न मामलों और आकांक्षाओं के बीच समन्वय कायम करने का ताल्लुक है इसके लिए राज्य द्वारा संघीय संविधान अपनाया जाना चाहिए जिसमें एक तरफ प्रत्येक नस्ली क्षेत्र को अधिकतम सम्भव स्वायतता दी जाए और आगे जिला, ब्लॉक व गांव स्तर पर ताकतों के विकेन्द्रीकरण करने का प्रावधान हो और दूसरी तरफ एक जम्मू-कश्मीर राज्य की वचनबद्धता पर पहरेदारी की जाए। इस राज्य का एक साझा मुखिया हो और उसका चुनाव नस्ली-क्षेत्रीय कौंसिलों द्वारा किया जाए एवं राज्य का एक साझा उच्च न्यायालय, एक साझा चुनाव आयोग, एक साझा लोक सेवा आयोग हो, इन सभी आयोगों की नियुक्ति नस्ली-क्षेत्रीय कौंसिलों द्वारा की जाए जिनमें प्रत्येक नस्ली ईकाई का एक प्रतिनिधि हो।

4. जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक या सार्क सहराज्य, आज की दुनिया में एक नये ग्लोबल निर्देशित विकास मॉडल का एक नया प्रयोग होगा जो प्रदर्शित कर सकेगा कि कैसे देशों के अलग-अलग राष्ट्रीय हितों में मेल बैठाया जाए और विभिन्न नस्लों की अलग-अलग आकांक्षाओं और मामलों में समन्वय बैठाया जाए।

5. जम्मू-कश्मीर राज्य में, खासकर घाटी में सुरक्षा बलों द्वारा किए जा रहे महिलाओं के बलात्कार, निर्दोष लोगों की हत्या, घरों को आग लगाना, यातना और पिटाई करना, इत्यादि-मानवाधिकारों के हनन की भी निंदा करती है। (21.12.98)

❋ ❋ ❋

नीचे के तीन लेख (बहुध्रुवीय दुनिया में एशिया, एशिया में नई आर्थिक व राजनैतिक स्थिति—उसकी प्रवृत्तियां तथा द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय सहयोग संबंधी विकास की सम्भावनाएं, एशिया में आपसी समझ, सुरक्षा व सहयोग मजबूत करने में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका) को 27 से 29 नवम्बर, 1998 को नई दिल्ली में एशियन विज्ञान एवं संस्कृति अध्ययन केन्द्र में आयोजित एक सेमीनार में इस पत्रिका की तरफ से प्रस्तुत किए गए।

बहुध्रुवीय दुनिया में एशिया

I

1. जैसा कि इसके विषय से स्पष्ट है उपरोक्त शीर्षक तीन पक्षीय एजेण्डा वाला परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करता है। यह एक ऐसी वैश्विक धारणा पर जोर देता है जो एशिया के साथ-साथ दुनिया को अपने ही तर्क के नजरिये से देखता है। इस दृष्टिकोण से शुरू करते हुए एजेण्डा का दूसरा भाग एशिया में द्विपक्षीय और बहुआयामी क्षेत्रीय सहयोग के विकास के सम्बन्ध में प्रवृत्तियों और संभावनाओं का अनुमान लगाने की मांग करता है। इस विश्लेषण का अनुसरण करते हुए तीसरे भाग में सार्वजनिक एवं गैर-सरकारी संस्थानों की एशियन क्षेत्रीय सहयोग में प्रासंगिक भूमिका का मूल्यांकन करने की आवश्कता जाहिर की गई है। इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि हमारे एजेण्डा का पहला भाग कैसे बाद के दो भागों पर वाद-विवाद के लिए तर्कसंगत स्वर-शैली और इसके दायरे को तय कर देता है।

2. उपरोक्त वर्णित भूमिका के पहले भाग के अनुसार स्वाभाविकतया बहुध्रुवीय दुनिया की धारणा का सवाल इस व्याख्या की मांग करता है कि क्या यह एजेण्डा आज की दुनिया में द्विपक्षीय और बहुआयामी क्षेत्रीय सहयोग के प्रत्याशित वाद-विवाद के लिए एक वास्तविक वैश्विक संभावना प्रदान करता है।

हमारा विचार है कि बहुध्रुवीय दुनिया की संभावना (यद्यपि यह विद्यमान विश्व के आयामों में से एक को प्रतिबिम्बित करती है) मूलभूत वैश्विक वास्तविकता को प्रतिबिम्बित नहीं करती है। और मूलभूत वैश्विक वास्तविकता की संभावना खोजे बगैर एशिया में द्विपक्षीय और बहुआयामी क्षेत्रीय सहयोग के सवाल और एशिया में सहयोग एवं सुरक्षा को मजबूत करने में सार्वजनिक और गैर-सरकारी संस्थानों की भूमिका पर उचित तरीके से वाद-विवाद नहीं किया जा सकता है।

II

3. वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के सिद्धान्त और व्यवहार के अनुसार एक ध्रुव की परिभाषा एक महाशक्ति के रूप में की जाती है और इस तरह का दर्जा तय करने का पैमाना सशस्त्र ताकत होता है। ध्रुवीयता सैनिक ताकत के कई केन्द्रों (चाहे किसी विशिष्ठ राज्य या उनके गठजोड़ों से बना हो) का द्योतक है जो विश्व के विस्तृत क्षेत्र में शक्ति संतुलन को प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं। इस प्रकार, बहुध्रुवीय दुनिया का अर्थ है शक्ति के बहुत से केन्द्रों वाली एक दुनिया।

4. बहुध्रुवीयता (एक जटिल और लचीला शक्ति संतुलन वाला ढांचा) में किसी अकेले पात्र को अत्यधिक महत्वता प्राप्त नहीं होती है क्योंकि इसमें नायकों की संख्या काफी अधिक होती है। प्रत्येक शक्ति केन्द्र दूसरे सभी पात्रों को संभावित विरोधी या/और संभावित सहयोगी के रूप में देखता है। प्रत्येक केन्द्र, दूसरे केन्द्रों की तुलना में अपनी स्थिति मजबूत करने की कोशिश करता है। द्वि-ध्रुवीयता (या 2 महाशक्तियों) के युग की तुलना में विरोधियों के बीच वैर-भाव का स्तर नीचा होता है। इसमें शत्रुता को अत्यधिक तीव्र नहीं होने दिया जाता।

5. आज दुनिया में विद्यमान चार सशस्त्र शक्ति केन्द्रों, यानि यू.एस. ई.सी. (या नाटो), चीन और रूस में से न तो एक ओर ना ही उनका कोई समूह भूमण्डलीय विकास के मार्ग को तय करने की स्थिति में है। फिर भी परमाणु हथियारों पर अपना एकाधिकार सुनिश्चित रखने और सुरक्षा परिषद् में अपना-अपना वीटो अधिकार बनाए रखने के लिए अनुचित तरीके अपनाना उनकी विद्यमान भूमण्डलीय वास्तविकता के बारे में शक्ति आधारित समझ और संकीर्ण राष्ट्रीय प्रतिक्रिया के ऐन मुताबिक है। ये दोनों विशेषाधिकार आज यू.एन. (विश्व प्रबन्ध का वर्तमान केन्द्र) के लोकतांत्रिकरण तथा मानव विरोधी परमाणु हथियारों से छुटकारा पाने के रास्ते में सबसे बड़ी बाधा बने हुए हैं। न केवल यू.एन. की शक्ति पर एकाधिकार रखने और परमाणु हथियारों पर नियंत्रण रखने के सम्बन्ध में बल्कि दूसरी मानवीय आवश्यकताओं के सम्बन्ध में भी उनकी (शक्तिशाली राष्ट्रों की) भूमिका सामाजिक तौर पर भी एतराज योग्य है। उदाहरण के लिए ये देश हमारी पृथ्वी के पर्यावरण में सबसे बड़े प्रदूषक हैं (इस तरह से हमारे ग्रह पर सम्पूर्ण जैव-जीवन के लिए खतरा पैदा करते हैं) और दुनिया के संसाधनों के सबसे बड़े हस्तगतकर्ता है (अपनी जनसंख्या के 20 प्रतिशत लोगों के लिए 80 प्रतिशत साधनों का उपभोग करते हैं जबकि विश्व की अन्य 80 प्रतिशत आबादी के लिए केवल 20 प्रतिशत साधन छोड़े हैं)। स्पष्टतया वे जब तक अपने प्रभुत्वकारी दृष्टिकोण और तरीके को बदल नहीं देते तब तक उन्हें 'विश्व वृद्धि इंजिन' स्वीकार नहीं किया जा सकता।

6. ऐतिहासिक तौर पर, बहुध्रुवीयता की व्यवस्था 1991 के अन्त में उभरी, जब यू.एस.एस.आर. के विघटन के साथ समाजवादी ब्लॉक का बिखराव हुआ,

बर्लिन की दिवार ढहाई गई, इत्यादि घटनाएं घटित हुई। शीत युद्ध के युग का और 1995 के बाद की द्वि-ध्रुवीयता की शक्ति व्यवस्था (1987 से जो कमजोर हो रही थी) पर अन्तिम विराम लगा। इस प्रकार, दुनिया में कुछ समय के लिए यू.एस. केन्द्रित एक ध्रुवीय हालात पैदा हुए। परन्तु जल्दी ही इस एक ध्रुवीयता को विद्यमान बहु ध्रुवीयता ने विस्थापित कर दिया था।

III

7. यू.एस.एस.आर. के गिरने, समाजवादी ब्लॉक के बिखरने, द्वि-ध्रुवीयता और शीत युद्ध के समाप्त होने, तदनन्तर यू.एस. की एक ध्रुवीयता के कमजोर होने तथा बहु-ध्रुवीयता के उभरने के पीछे क्या कारण थे। स्पष्टतया, इसके पीछे न तो यू.एस. की सशस्त्र ताकत थी और न ही दूसरी तीन शक्ति केन्द्रों की सैनिक ताकत थी। यहां तक कि बिखरने के बाद आज का रूस भी सैनिक ताकत में अमेरिका से कम ताकतवर नहीं है तथा बाकी बचे तीन सैनिक ध्रुवों की साझी सैनिक ताकत से भी अधिक ताकतवर है।

8. सिंहावलोकन करने पर पाते हैं कि इतिहास में सैनिक ताकत ने मुश्किल से ही कभी मूलभूत सामाजिक बदलाव या पुरानी पड़ चुकी व्यवस्था की रक्षा का काम किया हो। उदाहरण के लिए हालिया समय की सबसे मजबूत सैनिक ताकत ग्रेट ब्रिटेन, अपनी औपनिवेशिक व्यवस्था को कायम नहीं रख सकी। उसके पहले ईश्वरीय आदेश वाले राजा सामंती प्रबन्ध को सुरक्षित रखने में नाकामयाब रहे और लोकतांत्रिक व्यवस्था को अंगीकार करना पड़ा। गणों और कबीलों को उस समय उभर रहे कृषिकारी जीवन को स्वीकार करना पड़ा।

9. ऐसा ही मामला अन्य सामाजिक बदलाव के परम्परागत सिद्धान्तों (जैसे आर्थिकता, राजनीति, संस्कृति या धर्म को क्रमशः समाज में प्रेरक शक्ति मानते हैं) पर लागू होता है। आर्थिकता को आधार मानने की मार्क्सवादी अवधारणा (यानि पैदावारी शक्तियों द्वारा पैदावारी सम्बन्धों में बदलाव लाने की धारणा) और वर्ग संघर्ष को सामाजिक परिवर्तन का कानून मानने वाले विचारों ने किसी भी समय और कहीं भी काम नहीं किया। स्लाव संस्कृति और क्रिश्चियन धर्म की समानता रूस, यूक्रेन और बायलो-रूस को एक साथ रखने में नाकामयाब रही। यूक्रेन ने अपने आपको भूतपूर्व सोवियत संघ से सबसे पहले आजाद होने की घोषणा की थी। इसी तरह, अरब संस्कृति और इस्लामी विश्वास 21 अरब देशों को एक महासंघ में एकीकृत कर पाने में सफल नहीं हुआ। धर्म के आधार पर पाकिस्तान अपनी एकता को कायम नहीं रख सका। एक ही धर्म (हिन्दुवाद) के आधार पर भारत और नेपाल एक नहीं हो सकते।

10. ऐतिहासिक अनुभव सिद्ध करता है कि चाहे अल्पकालीन बदलाव हो या

दीर्घकालीन-ये दोनों ही सामाजिक श्रम विभाजन (Social Division of Labour एस.डी.ओ.एल.) में निरन्तर होने वाले परिवर्तन के कारण होते हैं। सामाजिक श्रम विभाजन एक व्यापक धारणा है जो मानवीय गतिविधियों की विभिन्न श्रेणियों या सामाजिक कार्य-यानि, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय, जनसांख्यिकी इत्यादि का द्योतक है। प्रत्येक तरह का कार्य एक विशिष्ट धारणा, तरीके और संगठन से परिलक्षित होता है। सामाजिक श्रम विभाजन समाज में 2 आधारभूत अन्तरक्रियाओं से (क) प्रकृति और मानव जाति की अन्तरक्रिया से और (ख) स्वयं मानव समुदाय के अन्दर की अन्तरक्रिया से पैदा होता है।

11. प्रकृति और मानव जाति के बीच की अन्तरक्रिया से वैज्ञानिक-तकनीकी ज्ञान सामने आता है। उदाहरण के लिए, परमाणु के ज्ञान के उपयोग की मांग है कि मानव के सिद्धान्त, व्यवहार और संगठन में परमाणु के नियमों का पालन किया जाए और पदार्थ की संरचना के बारे में परम्परागत यांत्रिक समझ को रद्द कर दिया जाए। इसी तरह से हमारे सामाजिक ज्ञान में प्रत्येक इजाफा उस समय के निश्चित सामाजिक श्रम विभाजन की आवश्यकताओं के अनुसार मानव संसाधनों को विकसित करने की समर्थता उत्पन्न करता है। दोनों तरह के ज्ञान एक दूसरे की सहायता करते हैं तथा पुराने की बजाए नए सामाजिक श्रम विभाजन को प्रचलित करके मानव जाति की सेवा करते हैं।

12. मानव जाति की शुरूआत से ही उपरोक्त वर्णित 2 मूलभूत अन्तरक्रियाएं हमारे सामाजिक श्रम विभाजन में लगातार बदलाव लाती रही है। जिसका परिणाम अल्पकालीन और दीर्घकालीन (यानि व्यवस्थागत) परिवर्तनों के रूप में निकलता रहा है।

13. सामाजिक श्रम विभाजन (एस डी ओ एल) में अनवरत परिवर्तनों के अनुसार मानवीय अन्तरनिर्भरता सह अन्तरक्रिया लगातार एक अवस्था से दूसरी में से गुजरते हुए लगातार बढ़ती चली गई है। गण स्तर से शुरू करते हुए और विभिन्न अवस्थाओं से गुजरते हुए, आज मानवीय अन्तरनिर्भरता सह अन्तरक्रिया वैश्विक स्तर पर कायम हो गई है। वैज्ञानिक-तकनीकी ज्ञान की पांच मुख्य शाखाओं (यानि अन्तरिक्ष, सूचना, ऊर्जा, जैव-विज्ञान और पदार्थ तकनीकी) ने हालात इतने बदल दिए हैं कि मानवीय मानसिक अन्तरनिर्भरता सह अन्तरक्रिया रेडियो तरंगों की गति में चालित है, जबकि उससे सम्बन्धित शारीरिक सम्पर्क के लिए ध्वनि तरंगों से तेज गति हासिल कर ली है। सामाजिक श्रम विभाजन (एस डी ओ एल) के वैश्वीकरण का अर्थ है कि सभी मानवीय मसले-राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, जनसांख्यिक और पर्यावरणीय-सार्वभौमिक बन गए हैं

14. मानवीय मसलों का वैश्वीकरण आवश्यकता पैदा करता है कि सभी देश आपस में सामाजिक गतिविधि (खास करके आर्थिकता) के सभी क्षेत्रों में आवश्यक पहलकदमियां लें। परन्तु सोवियत संघ और समाजवादी ब्लॉक ने एक देश में समाजवाद की विजय के स्टालिनवादी मत को अंगीकार करते हुए लम्बे समय तक आम तौर पर विश्व के साथ और खास तौर पर विकसित देशों के साथ सभी तरह की अन्तरक्रिया से अपने आपको सीमित रखा। आगे, उन्होंने मार्क्सवादी अभिधारणा की पालना करते हुए बाजार तन्त्र के उपयोग तक को नकारा एवं उसकी जगह आदिम अदला-बदली प्रणाली को अख्तियार किया। इस प्रकार, विभिन्न देशों के बीच में आपसी सहयोग की ग्लोबल अति आवश्यकता के उलट सोवियत संघ के नेतृत्व में समाजवादी ब्लॉक द्वारा बाकी विश्व के साथ साझेदारी को आम तौर पर नकारने तथा एक पार्टी के प्रभुत्व वाले अधिनायकवादी राजनीतिक ढांचे से जुड़कर सैनिकीकरण पर अत्यधिक जोर देने तथा आर्थिक कुशलता सह-उत्पादकता की अवहेलना करने का परिणाम सोवियत संघ के गिरने, समाजवादी ब्लॉक के बिखरने और शीत युद्ध के समाप्त होने के रूप में निकला।

V

15. एक सम्पूर्ण विश्व (यानि मानव समुदाय) की समझ मांग करती है कि सभी आधारभूत मानवीय समस्याओं का समाधान अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य के साथ करना चाहिए। जिसके अनुसार सभी सवालों का हल विभिन्न देशों के सहयोग और साझेपन द्वारा निकाले जाने की आवश्यकता है और समुचित हल निकाला भी तभी जा सकता है। इसके उलट बहु-ध्रुवीय दुनिया के परिप्रेक्ष्य की आवश्यकता है कि बहुध्रुवीय परिप्रेक्ष्य को अख्तियार किया जाए जो मानवीय मसलों को ध्रुवीय तरीके से देखता है और उनका हल विभिन्न ध्रुवों के बीच आपसी टकराव में पाता है।

16. स्पष्टतया, इन दो दृष्टिकोणों को निहितार्थ एशिया के लिए भी एक दूसरे से भिन्न रूप में ही निकलेगा।

17. सम्पूर्ण विश्व का परिप्रेक्ष्य एक नये उभर रहे वैश्विक मानवीय समाज की रोशनी में एशिया महाद्वीप की सामाजिक पुनर्संरचना का आह्वान करता है। नया उभर रहा वैश्विक मानवीय समाज जिसकी तात्कालिक अवस्था विभिन्न इलाकों में क्षेत्रीय समुदायों (जैसे यूरोपीय समुदाय, नाफ्टा, मरक्यूसर, कुछ भूतपूर्व सोवियत गणतंत्रों से बना राज्यों का राष्ट्रमंडल, सार्क, खाड़ी सहयोग परिषद, एशियान इत्यादि) के रूप में उभरने की एक विशेषता लिए हुए है। सामाजिक पुनर्संरचना के सम्बन्ध में वैश्विक दिशा के लिए आवश्यक अन्य सिद्धान्तों को शामिल किया जा सकता है : वैज्ञानिक यथार्थवाद का आम दृष्टिकोण; तर्कसंगत मानवतावाद का सामाजिक दृष्किोण; मित्रता

और सहयोग पर आधारित सच्ची शान्ति कायम करने के लिए सभी देशों का विदेश-सह-रक्षा मामला, मुख्य कार्य होना; कानून के राज पर निर्भर ऐसी जनवादी व्यवस्था कायम करना जिसमें लोगों को अधिकारवान बनाना और निर्णय करने की भूमिका में उन्हें शामिल करना इसके अति महत्वपूर्ण घटक हों; उत्पादकता, समता और टिकाऊ योग्यता की तरफ निर्देशित टिकाऊ विकास का सिद्धान्त अपनाना; मूल्य आधारित संस्कृति जो तर्कसंगत सोच और मानवीय तथा उदार आचरण को प्रोत्साहित करती हो; यूएन और सभी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों का (जो अभी तक द्विध्रुवीय दुनिया की सन् 1945 की वास्तविकता पर आधारित है) वर्तमान अन्तरनिर्भर विश्व की प्रकृति के अनुरूप लोकतांत्रिक उसूलों पर सुधार करना। स्पष्टतया, सम्पूर्ण विश्व का परिप्रेक्ष्य एक सम्पन्न, न्यायिक, समतावादी और टिकाऊ विश्व व्यवस्था की स्थापना करने की तरफ ले जाता है।

18. सम्पूर्ण विश्व के परिप्रेक्ष्य के उलट बहुध्रुवीय दुनिया का परिप्रेक्ष्य अपने पूर्ववर्ती ध्रुवीय किस्मों की तरह ही, तर्कसंगत तौर पर विवाद, प्रतिद्वंद्विता, सैनिकीकरण, अति महाशक्तिवाद और प्रभुत्ववाद को अपनाता है।

अनुभव दर्शाता है कि अधिपति बनने (overlodship) का तर्क वास्तव में अधिनायकवाद, असमानता और गैर टिकाऊपन के रास्ते पर ले जाता है। आज यही वैश्वीकरण (या विश्व मानवीय एकता) के रास्ते में मुख्य बाधा बनते हैं।

19. विश्व समस्याओं के प्रति अमेरिका का वर्तमान बर्ताव का तरीका—जैसे, 'आतंकवादी' नेता, बिन लादेन को दंडित करने के लिए अफगानिस्तान के अन्दर क्रूज मिसाइलों से आक्रमण करना, प्रत्येक विसम्मत देश पर आर्थिक मसलों में एक तरफा प्रतिबंध थोपना, शीत युद्ध की समाप्ति के बावजूद नाटो सैनिक तंत्र का सुदृढ़ीकरण करना, प्रत्येक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन में अपनी बात थोपने का रुख अख्तियार करना; यू एस नीति से मतभेद रखने वाले प्रत्येक देश को धमकी देना—ये सब शक्ति-संस्थापित मानसिकता का साफ इजहार है। अन्य शक्ति केन्द्र, यूरोपीय समुदाय आम तौर पर अमेरिका का समर्थन करता है जबकि कभी-कभी जब अमेरिका स्वयं उसके हितों पर चोट करता है तब वह खिलाफत करता है। इसी तरह कुछ कम मात्रा में चीन के ताईवान, तिब्बत, सिनकियांग, स्प्रेटलेज द्वीपों, जेके पर भारत-पाक विवाद, परमाणु हथियार एकाधिकार और सुरक्षा परिषद में वीटो आदि सम्बन्धों में चीनी तरीके को भी शक्ति से सरोबार व्यवहार का सूचक ही कहा जा सकता है।

स्पष्टतया, बहु-ध्रुवीय दुनिया का पूर्वानुमान सम्पूर्ण विश्व वास्तविकता का उल्लंघन करते हुए विश्व विकास की प्रक्रिया में बाधा खड़ी करता है। इसे एशिया में चल रहे राजनैतिक-आर्थिक हालातों के अध्ययन के लिए परिप्रेक्ष्य के रूप में

अख्तियार करने से निश्चित ही एक संभव वास्तविक विश्लेषण में बाधा पहुंचेगी। आज कोई भी किसी सामाजिक सवाल का तब तक उचित परीक्षण नहीं कर सकता या इसको दिए जाने वाले प्रत्युत्तर को परिभाषित नहीं कर सकता जब तक विश्व वास्तविकता को ठीक तरह से समझ नहीं लिया जाता।

VI

20. प्रत्येक तरह के महाशक्तिवाद का धरातल रूढ़िवाद है। आज, उभर रही विश्व मानव समुदाय की प्रक्रिया को मुख्य खतरा राष्ट्रीय रूढ़िवाद से (और धार्मिक, सांस्कृतिक या नस्ली रूढ़िवाद से मुख्य खतरा नहीं है जो कि राष्ट्रवाद की तुलना में पुराने ढंग के हैं) पेश आ रहा है। और इस रूढ़िवाद के दो मुख्य रूप हैं, यानि पश्चिमी उदारवाद और मार्क्सवाद हैं। ये अपने परिवर्तित एक तरफा सूत्रों के साथ, यानि 'स्वतंत्र बाजारवाद' और 'राजकीय केन्द्रीयवाद' के रूप में क्रमशः हमारे मानवीय विकास में हर कहीं बाधा डाल रहे हैं। ऐसी चुनौती का सामना हकीकत का (हर स्तर और प्रत्येक क्षेत्र में) एक वास्तविक मूल्यांकन करके और इसका प्रासंगिक प्रत्युत्तर देकर ही किया जा सकता है और किया जाना चाहिए। (23.11.98)

❋ ❋ ❋

एशिया में नयी आर्थिक व राजनैतिक स्थिति-उसकी प्रवृत्तियाँ तथा द्विपक्षीय और बहुपक्षीय सहयोग सम्बन्धी विकास की सम्भावनाएँ

(अ) एशिया की भौगोलिक स्थिति

भू-मण्डल के भूमि क्षेत्र का एक तिहाई भाग घेरते हुए एशिया दुनिया का सबसे बड़ा महाद्वीप है। उत्तर से दक्षिण तक यह 5000 मील से भी अधिक तक यानि, आर्कटिक वृत के ठीक ऊपर से भूमध्य रेखा के नीचे तक फैला हुआ है। पूर्व से पश्चिम तक यह 5500 मील से ज्यादा फैला हुआ है। इसके समुद्री किनारों की लम्बाई 35000 मील से ज्यादा है। एक तरफ इसमें हिमालय (पृथ्वी में सबसे ऊंचा शिखर) शामिल है तो दूसरी ओर इसमें पड़त भूमि तथा बहुत विशाल मरूस्थस्ल का क्षेत्र है। एशिया में लगभग सभी तरह की जलवायु विद्यमान है। जनसंख्या में दुनिया का 3/5 वां हिस्सा एशिया में शामिल है। यह दुनिया की ज्यादातर प्राचीन सभ्यताओं का घर है। दुनिया की सर्वप्रथम सभ्यताएं, मिश्र, मेसोपोटामिया, पर्सिया, सिंधुघाटी तथा उत्तरपूर्व चीन इसमें आती है। चीन व भारत दुनिया की सबसे पुरानी सतत सभ्यताएं हैं।

(ब) आधुनिक एशिया का उदय

भूमण्डलीय रंग भूमि पर आधुनिक एशिया का उदय, तीन सदियों तक उपनिवेशिक आधीनता के तहत् रहकर, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद का अपूर्व विकास है। यह विकास प्रथमतः यूरोपीय साम्राज्यवादी देशों का द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण हुए भारी नुकसान के कारण पैदा हुई कमजोर स्थिति से प्रशस्त हुआ तथा द्वितीयतः, 20वीं शताब्दी के प्रथम अर्द्धशती में स्वतंत्रता आन्दोलनों से प्राप्त शक्ति के द्वारा प्रशस्त हुआ।

पिछले पाँच दशकों के दरम्यान, एक जागृत एशिया ने दुनिया के मामलात् में प्रमुख भूमिका निभाई है। कई तरह से यह भूमण्डलीय अंतरक्रियाओं का केन्द्र बन गया है। इसके ज्यादातर क्षेत्र (जैसे मध्यपूर्व या पश्चिम एशिया, पूर्वी एशिया या सुदूर पूर्व, दक्षिण पूर्व एशिया तथा दक्षिण एशिया) और देश (जैसे चीन, कोरिया, वियतनाम, जापान, भारत, इंडोनेशिया, पाकिस्तान, बंगलादेश इत्यादि) एक या दूसरी तरह अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं के मध्य रहे हैं।

(स) दुनिया की राजनीति में एशिया

एशिया के देशों में अनेकों विभिन्नताएं तथा कई समानताएं है। दुनिया की भू-राजनीति के संदर्भ में, एशियां पांच प्रमुख क्षेत्रों में बांटा जा सकता है। वे हैं सुदूर

पूर्व या पूर्व एशिया, दक्षिण पूर्वी एशिया, दक्षिण एशिया, पश्चिमी एशिया या मध्य एशिया, तथा केन्द्रीय एशिया (पहले का सोवियत गणराज्य)।

शीत युद्ध के बाद के परिदृश्य में, एशिया अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति का एक बड़ा केन्द्र बन गया है। कम्बोडियाई समस्या का समाधान तथा पश्चिमी एशिया की शान्ति प्रक्रिया का प्रादुर्भाव स्वागत योग्य प्रगति है। तो भी, इराक-कुवैत मतभेद, तथा संयुक्त राष्ट्र का ईराक के विरुद्ध कार्यवाही, अनेकों एशियाई देशों में जातीय युद्ध, जैसे कि (अफगानिस्तान, श्रीलंका, बर्मा, बंग्लादेश इत्यादि), जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक मतभेद, चीन व ताईवान के बीच तनावपूर्ण सम्बन्ध, पूर्वी तिमोर-इण्डोनेशिया तनाव, स्प्रेटली द्वीपों पर चीन तथा कुछ एशियाई देशों के बीच विवाद, उत्तरी कोरिया-दक्षिण कोरिया के बीच मनमुटाव, अमेरिका-जापान सुरक्षा समझौता, इन्डोनेशिया में सुहातों के विरुद्ध हुए दंगे, मलेशिया में महाथिर व इब्राहिम के बीच मन-मुटाव, कुछ मध्य पूर्वी देशों में सुधारवादी व रूढ़िवादी धड़ों के बीच संघर्ष, तिब्बत में असंतोष, कुरीयल द्वीप पर जापान व रूस में मतभेद, रूढ़िवादियों का कुछ देशों में उदय, तथा सोवियत संघ के बिखराव ने विश्व मामलात में एशिया की भूमिका को सीमित करने का काम किया है।

(द) विश्व आर्थिकता में एशिया और मौजूदा आर्थिक संकट

एशिया पिछले पांच दशकों से आर्थिक क्षेत्र में बड़ी डगों से बढ़ा है। जापान, चीन, कोरिया, ताईवान, हांगकांग तथा एशियान देशों ने विश्व आर्थिकता ने नयी राह दी है। जापान महा आर्थिक शक्ति बन गया है। चीन दुनिया में नम्बर एक आर्थिक शक्ति की शुभ स्थिति प्राप्त करने हेतु विश्व में बढ़त बना रहा है। एशियान देश भी नये आर्थिक रिकार्ड कायम करने में समर्थ हो रहे हैं। सौलह महीने पहले, सम्पूर्ण विश्व का मानना था कि पूर्व तथा दक्षिण पूर्व एशिया जल्दी ही दुनिया के आर्थिक विकास का भविष्य बनने जा रहे हैं। किन्तु जुलाई 1997 से ये देश गम्भीर आर्थिक व वित्तीय संकट का सामना कर रहे हैं। यह संकट एशियान देशों-थाईलैंड एवं इन्डोनेशिया से शुरू होकर कोरिया तक फैला और बाद में इसने पूर्व एवं दक्षिण पूर्व देशों के समूचे क्षेत्र को चपेट में ले लिया। 1997 के उतरार्द्ध में यह संकट रूस तक फैला तथा 1998 में तकरीबन सभी देशों को इसने प्रभावित किया। इस प्रकार यह संकट भूमण्डलीय वित्तीय संकट में बदल गया।

इस संकट के कई कारण बताए जाते हैं लेकिन उनमें से 2 विशेष उल्लेखनीय हैं। उनमें से एक आई एम एफ, विश्व बैंक, अमेरिका द्वारा प्रतिपादित किया गया है और दूसरा वामपंथियों द्वारा सामने लाया गया है।

आई एम एफ कहता है कि वर्तमान संकट का दोष मुक्त बाजार व्यवस्था पर

नहीं मंढा जा सकता, बल्कि इसका कारण अपने-अपने देशों में एकाधिकार तोड़ने, भ्रष्टाचार को रोकने और विनिमय दरों एवं सट्टेबाजी के लिए बैंक ऋण देने को नहीं रोक पाने में निहित है।

वामपंथी तर्क देते हैं कि आर्थिकता को पूंजी के लिए खोलने यानि बाजार के मुक्त खेल ने ही संकट को आमंत्रित किया हैं

फिर भी, वर्तमान विश्व आर्थिकता का नजदीकी दृश्य तथा इसका ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि इस संकट का लघुकालीन कारण, सट्टेबाजी भरी अनियमित मुद्रा व स्टॉक बाजार में निहित है जहाँ जुआ व धोखाधड़ी के शासन का बसेरा है, यह अराजकतावाद माँग व पूर्ति के विभिन्न वित्तीय कारकों अर्थात् मुद्रा व शेयर कीमत बनाम खरीददार व बेचने वाले के मनोवैज्ञानिक मिजाज के बीच संतुलन को विकृत करता है। इसका दीर्घकालीन कारण विश्व में बढ़ती असमानता (जहां 4/5 वें भाग के संसाधन विश्व की जनसंख्या के 1/5वें भाग के पास चले जाते हैं और विश्व के 4/5 वंचित लोगों के लिए 1/5 भाग के संसाधन बचते हैं) में निहित है। यह अधिकतर लोगों की खरीदने की ताकत को बांध देती है यानि कम कर देती है, जिससे मांग और पूर्ति के बीच की मूलभूत बाजार विकृति जन्म लेती है और परिणामस्वरूप मंदी आती है।

विशेषज्ञ कहते है कि संकट जल्दी ही समाप्त नहीं होने जा रहा है। उन्होंने अगले वर्षों में विश्व आर्थिकता के तेजी से गिरने की भविष्यवाणी की है। लेकिन एशियान रिपोर्ट सुझा रही है कि इसके सदस्य क्षतिपूर्ति करने के रास्ते पर है।

आने वाले समय में विश्व आर्थिकता या इसके किन्हीं राष्ट्रीय घटकों का चाहे कुछ हो परन्तु यह आवश्यक है कि विश्व अपने वित्तीय बाजार की अराजकतापूर्ण कार्य प्रणाली तथा सामाजिक असमानता के अमानवीय स्तर के प्रति गंभीर दृष्टिकोण अपनाए। मुद्रा और सट्टे बाजार की अव्यवस्था के नियम के लिए अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर सहमति से एक जनवादी, खुले और पारदर्शी कानूनों वाले रचनातंत्र की तात्कालिक आवश्यकता है, जबकि विश्व में एक उचित आर्थिक एवं सामाजिक समानता की स्थापना के लिए आवश्यक न्यायिक सुधार किए जाएं। इस साहसिक कार्य को एशिया को भी करना होगा।

(ई) एशिया का भविष्य

आज एशिया जाग चुका है। एशिया के देश आपसी तनावों और झगड़ों के चलने से पैदा होने वाले खतरों के प्रति पूर्ण जागरूक हैं। उन्होंने आपसी सहयोग तथा समन्वय से हासिल हो सकने वाले लाभदायक परिणामों का पूर्णतया अहसास कर लिया है। विकास के लिए क्षेत्रीय सहयोग की धारणा की बढ़ती लोकप्रियता को एक स्वस्थ

रूझान की जरूरत है। एशियान की प्रगति, सार्क का बनना, इ सी ओ का उभरना, जापान की आर्थिक-तकनीकी ताकत का विकसित होना, चीन की उभरती आर्थिक स्थिति, विकसित होते चीन जापान के सम्बन्ध, चीन-वियतनाम के बीच उभरता तनाव-शैथिल्य, चीन-ताईवान समझौते, एशिया को महाशक्ति टकराव से मुक्त रखने की इच्छा एवं शान्ति के लिए बढ़ रही जनचेतना इत्यादि निश्चित रूप से वे पहलू हैं जो विश्व विकास के भावी रास्ते में एशिया की बढ़ती भूमिका की तरफ इशारा करते हैं। यद्यपि, एशियाई राज्यों से शान्तिपूर्ण माध्यम से मतभेदों को मिटाने और अपने विवादों को हल करने की मांग है तथा अपने मध्य अधिक अर्थपूर्ण सहयोग सक्रिय तौर पर विकसित करने एवं संयुक्त राष्ट्र तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के जनवादीकरण की मांग पर दबाव डालने के लिए आपस में हाथ मिलाने की तात्कालिक आवश्यकता है।

एशिया में विभिन्न क्षेत्र के देशों के बीच द्विपक्षीय और बहुआयामी आर्थिक सहयोग के सवाल पर विकास की काफी संभावनाएं हैं। यह एशिया के 5 बड़े क्षेत्रों पर अनौपचारिक दृष्टिपात करने से साफ हो जाता है।

उदाहरण के लिए पश्चिमी एशियाई क्षेत्र की सम्पन्न तेल धरोहर के साथ समान भौगोलिक स्थिति, सांझी संस्कृति व इतिहास इत्यादि, क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग के लिए पर्याप्त आधार हैं। लेकिन आर्थिक सहयोग व राजनैतिक स्थिरता में प्रमुख पांच रुकावटें-अर्थात इराक बनाम अमेरिका-ब्रिटेन टकराव, इजरायली-फिलीस्तीनी शान्ति प्रक्रिया; इजरायली-सिरिया का गोलान पहाड़ियों पर विवाद; दक्षिण-लेबान में इजरायली सेनाओं की तैनाती; और खाड़ी के अरब देशों तथा इरान के बीच तीन द्वीपों पर विवाद-रास्ता रोके खड़ी हैं। जब तक वे सुलझा नहीं ली जाती, क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग की प्रक्रिया शुरू होना मुश्किल है।

उसी तरह केन्द्रीय एशियाई क्षेत्र इसकी विशाल तेल व गैस धरोहर तथा सांझी भू-भौगोलिकी, संस्कृति एवं इतिहास भी आर्थिक विकास की संभावनाओं का क्षेत्र गठित करती है। लेकिन यू एस, रूस, इ सी, चीन, टर्की, ईरान तथा पाकिस्तान विश्व के आर्थिक खिंचावों में शामिल होकर इस क्षेत्र के आर्थिक विकास में बाधा पहुंचाते हैं।

इसी तरह दक्षिण एशिया क्षेत्र, इसके मानवीय व भौतिक संसाधनों तथा एक जैसी भू-भौतिकी, संस्कृति व इतिहास के बल पर एक प्रमुख आर्थिक शक्ति बनने की पूरी योग्यता रखता है, बशर्ते यह जम्मू-कश्मीर समस्या का भारत व पाकिस्तान के बीच एक संतोषपूर्ण समाधान निकाले जो दक्षिण एशिया के दो बड़े खिलाड़ी हैं।

दक्षिण-पूर्व एशिया क्षेत्र ने अपने 1967 के शुरूआत से ही आर्थिक सहयोग

का एशिया में एक उदाहरण पेश किया है। इसने अपनी साख से बहुत सी आर्थिक उपलब्धियां प्राप्त की हैं, जैसे-मानव संसाधन विकास पर बल देना, सार्वजनिक वित्तीय गुणदोष का चित्रण कर राजस्व घाटा कम करने की दूरदर्शिता, कृषि विकास को बढ़ावा, उच्च बचत दर तथा सफलतापूर्वक ढांचागत विकास करना। इसकी प्रमुख असफलताएं-अधिनायकवादी शासन पद्धति का अस्तित्व बने रहना, प्रजातांत्रिक अधिकारों की कमी, प्राकृतिक संसाधनों के बचाव का अनदेखापन, फलता-फूलता भ्रष्टाचार, विदेशी कर्ज (विशेष तौर पर अल्पकालीन कर्ज) का गलत प्रबन्धन, तथा पूंजीगत खाता तब्दीली में निहित है। इसके विगत सकारात्मक व नकारात्मक प्रदर्शन से सही पाठ सीखते हुए, एशियान के पुनः उत्थान की प्रत्येक संभावना मौजूद हैं।

पूर्वी एशियाई क्षेत्र, जिसमें उच्च आर्थिक सम्पादन करने वाले देश, जैसे जापान, चीन (हांगकांग), दक्षिण कोरिया तथा ताइवान शामिल हैं जो एशिया में आर्थिक तौर पर सबसे आगे हैं। यदि इस क्षेत्र के देश साझा बाजार स्थापित करने का प्रबन्ध करे, तो यह शायद दुनिया का सम्पन्नतम जोन के रूप में विकसित हो सकता है। इसके रास्ते में प्रमुख अवरोध हैं—उत्तर कोरिया/दक्षिण कोरिया बंटवारा, चीन/ताईवान संघर्ष, जापान-अमेरिका सुरक्षा सन्धि तथा जापान की अमेरिका से निकटता, जापान-उत्तर कोरिया अविश्वास, चीन-जापान मतभेद इत्यादि।

दुनिया का सबसे बड़ा महाद्वीप होने के नाते, एशिया को विश्व प्रबन्ध व विकास में अपना वाजिब रोल अदा करते हुए आगे आना चाहिए। लेकिन यह तभी संभव हो सकता है जब यह एशियाई देशों में आर्थिक विकास व राजनैतिक एकता को मजबूत करे। एशिया के पुनः उत्थान का तात्पर्य किसी दूसरे देशों पर किसी प्रकार का प्रभुत्व नहीं है। इसका अर्थ साधारणतः यह है कि एशिया के सभी प्राकृतिक व मानवीय संसाधनों का रचनात्मक प्रबन्ध करना, यहां शान्ति और सुरक्षा की विश्व प्रक्रिया को मजबूत करना, जनता को अधिकार सम्पन्न बनाना, उत्पादक, समता और टिकाऊपन पर आधारित विकास करना एवं मानवीय संस्कृति वाली व्यवस्था कायम करने का मार्ग प्रशस्त करना। (24.11.98)

❋ ❋ ❋

एशिया में आपसी समझ, सुरक्षा व सहयोग मजबूत करने में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका

I

1. आज गैर-सरकारी संगठन (एन जी ओ) दुनिया तथा प्रत्येक देश में एक महत्वपूर्ण स्थिति में आ गये हैं। द्वितीय विश्व युद्धकाल के बाद से इनके आकार में एक अद्‌भुत बढ़ौत्तरी हुई है। गैर सरकारी अनुमानों के मुताबिक, ये पूरी दुनिया में 10 लाख से ऊपर है।

2. साधारणत: परिभाषित, गैर सरकारी संगठन वे संस्थाएं है जो ऐसे सार्वजनिक मुद्दों को सम्भालते हैं, जो सम्बन्धित सरकारों द्वारा कभी नकार दिये जाते है तो कभी बिगाड़ दिये जाते हैं। इन मुद्दों में विस्तृत मामले आते हैं जैसे कि पर्यावरण, जनसंख्या, साक्षरता, शिक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा, गरीबी, बेराजगारी, कल्याणकारी योजनाएं, विकास योजना, मानवाधिकार, महिला शक्तिसम्पन्नता, बच्चों का पालन पोषण, सूचना तकनीकी, विभिन्न देशों के लोगों के बीच आपसी सहयोग बढ़ाने, इत्यादि सम्मिलित है।

3. गैर सरकारी संगठनों की विश्व में दो विविधताएं कार्य करती हैं। कुछ मात्र एक राज्य की सीमाओं में काम करती है तो कुछ अंतर्राष्ट्रीय है। उनके पास स्वयं का कोई वित्त नहीं है। वे सामान्यत: विभिन्न स्रोतों से अपनी वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करती है। कुछ अपनी सम्बन्धित सरकारों से प्राप्त करती है, जबकि उनमें से बड़ी संख्या विभिन्न उदार एजेन्सियों (विभिन्न देशों में कार्यरत) से और सबसे ऊपर बहु राष्ट्रीय कम्पनियों से फण्ड प्राप्त करती है।

4. ऐतिहासिक तौर पर, सार्वजनिक सेवा या स्वंयसेवी उपकारिता उतनी पुरानी है जितनी मानवतावाद है। दान, करूणा, परोपकार, उदारता, सद्‌भावना व मानव प्रेम का विचार, जब से मानव सामाजिक हुआ तब से काम कर रहा है। स्वयं सेवा से तात्पर्य, स्वतंत्र एवं अवैतनिक सेवा से है तथा हर युग में ऐसा ही रहा है। लेकिन एक प्रदत्त मूल्य में यह भी अब एक बाजारी वस्तु बन गयी है।

5. एन जी ओ की कार्यसूची व क्रियाकलाप एक नजर में दर्शाते हैं कि उनमें से ज्यादातर का एक साफ व सुस्पष्ट सामाजिक उद्देश्य नहीं है। वे सामान्यत अपनी कार्य योजना धनकोष एजेन्सियों से प्राप्त करते हैं, इस प्रकार से वे केवल लागू करने वाले ब्यूरो की तरह काम करते हैं। उनमें से कुछ अपना कार्यक्रम लागू करते है-उनको आवश्यक धन संसाधनों की पूर्ति करने में बड़ी मुश्किल का सामना करना पड़ता है।

6. जिन उद्देश्यों की एन जी ओ वकालात करते रहे हैं वे अलग-अलग समय में अलग-अलग रहे हैं। 1940 के दशक के उत्तरार्द्ध में वे युद्धोपरान्त पुनर्निर्माण व

पुनर्वास में समर्पित थे। 1950 के दशक में वे शीत युद्ध व नाभिकीय शस्त्रों के भय का सवालिया निशान बने। 1960 के दशक में उनका फैलाव विकास क्रियाकलापों की ओर दर्शाता है। 1970 के दशक में उनकी कार्यसूची में पर्यावरण, तकनीकी व विकास का महत्व रहा। 1980 के दशक में ये मानवाधिकार सम्बन्धी कार्यों से संचालित हुए। 1990 के दशक में गरीबी, जनसंख्या, महिलाओं को अधिकार सम्पन्न बनाने इत्यादि कार्य मुख्य एजेण्डा बन गए।

II

7. एन जी ओ का आश्चर्यजनक उत्थान बेवजह नहीं हुआ था।

प्रथमत: वे एक विशिष्ट काल के उत्पाद थे जहां मानवीय समाज की गति राष्ट्रों की अन्तरनिर्भरता की ओर तेज हुई। यह एक ऐसा परिवर्तन था (जो नये पैदा हो रहे सामाजिक श्रम विभाजन की मांग के अनुरूप था) जो सार्वजनिक मामलों के संचालन में लोगों की सक्रिय भागीदारी की मांग करता है (जहां अकेली अफसरशाही इन कामों में अपर्याप्त सिद्ध हुई है)।

द्वितीयत:, वे उस क्षेत्र में साहसिक कार्य करते हैं जो राज्य के विकास कार्यक्रम में भुला दिये जाते हैं। आदिवासियों, असंगठित क्षेत्र की महिलाओं, बच्चों, निस्सहाय लोगों, अन्धे, अनाथों और इसी तरह के अन्य वंचित हिस्से के लोगों में काम करना, उनके विशेष ध्यान वाले क्षेत्र बन गए हैं।

तृतीयत:, वे सम्बन्धित लोगों के साथ घुलमिल जाने का तरीका अख्तियार करते हैं। इससे वे लोगों को एकजुट व प्रोत्साहित कर उन्हें विकास की प्रक्रिया में भाग लेने के समर्थ बनाते हैं।

चतुर्थत:, इन्हें उन बड़े व्यापारियों से वित्तीय समर्थन मिलता रहा है जो सामाजिक तनावों और राष्ट्रीय झगड़ों को कम करना चाहते थे ताकि उनका व्यापार अविघ्न रूप से फल-फूल सके एवं सामाजिक समस्याओं के हल हेतु स्वयं के बाजार आधारित समाधान को लागू कर सकें।

और पंचम् इन्हें उन विकसित देशों ने चैम्पियन की तरह आगे किया जो आर्थिक समानता व सामाजिक न्याय के लोकप्रिय साम्यवादी सिद्धान्तों का मुकाबला करना चाहते थे ताकि गरीब व वंचित लोगों को अपनी तरफ खींचा जा सके।

8. देश-विशेष के कार्यक्रम के सम्बन्ध में एन जी ओ का कार्य सीमान्त व पीड़ितों के फायदे में नीतियां बनाने के लिए राज्यों को प्रेरणा देता है-इस प्रकार यह कार्य आम तौर पर लोगों और खास तौर पर गरीबों की सकारात्मक सेवा करता है।

9. पार राष्ट्रीय मुद्दों पर इन्होंने कई सम्मेलन आयोजित किए और इस प्रकार पार राष्ट्रीय आम सहमति उभारने की कोशिश की।

III

10. हालिया रूझान इंगित करते है कि कैसे कुछ एन जी ओ को छोड़कर आमतौर पर वे अपनी स्थिति खोते जा रहे हैं जो उन्होंने पिछले कुछ दशकों में हासिल की थी। इस हालात के कई पहलु जिम्मेवार हैं।

प्रथमत: एन जी ओ द्वारा भूखों, नंगों और घरविहीन करोड़ों लोगों की खुशहाली के लिए लुभावनी योजनाओं, तड़क-भड़क वाले तरीकों और बड़े-बड़े वादों के बावजूद लोगों की स्थिति वहीं खड़ी है जहां वे पहले थे।

विश्व भर में निहायत गरीब लोगों की संख्या निरन्तर 140 करोड़ के लगभग बनी हुई है। 1 करोड़ 80 लाख लोग प्रतिवर्ष भूख और भूख से संबंधित बिमारियों से मारे जाते हैं। 5 वर्ष से छोटे लगभग 1 करोड़ 30 लाख बच्चे प्रति वर्ष कूपोषण से मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं। लगभग 6 लाख महिला प्रतिवर्ष गर्भधारण और बच्चे के जन्म के समय मौत का शिकार होती है तथा यूनीसेफ के मुताबिक इससे 30 गुना अधिक महिलाएं ऐसी चोटो-घावों से पीड़ित होती है जिनके बारे में आम तौर पर बताया नहीं जाता और इलाज नहीं करवाया जाता है। लगभग 170 करोड़ लोगों को शुद्ध पानी नहीं मिलता है तथा 300 करोड़ लोगों को शौचालय सुविधा उपलब्ध नहीं है। अकेले शहरों में लगभग 60 करोड़ लोग या तो बेघर बार है या "जीवन और स्वास्थ्य के लिए चुनौतिपूर्ण पर्यावरण" में जीवन बसर कर रहे हैं (मानव आवास के लिए यू.एन. केन्द्र)। वर्तमान विश्व में 260 करोड़ काम के लायक लोगों में से 12 करोड़ बिल्कुल बेरोजगार हैं और 68 करोड़ अर्द्ध-रोजगार प्राप्त लोग है, जो दोनों समय का भोजन ठीक से प्राप्त नहीं कर सकते, जबकि दूसरी तरफ अधिक से अधिक लोग जवानी की आयु में दाखिल हो रहे हैं जो उत्पादक रोजगार की तलाश करने लगते हैं। अपराध कई गुना बढ़ गया है। अकेले अमेरीका में प्रतिवर्ष औसतन 1 करोड़ 50 लाख अपराधिक मामले पुलिस में दर्ज होते हैं। प्रतिवर्ष लगभग 30 लाख बच्चों को प्रताड़ित किया जाता है और लगभग 7000 बच्चों को गोली से घायल कर दिया जाता है। अकेले नशीले पदार्थों पर प्रतिवर्ष होने वाला खर्चा 80 विकासशील देशों की संयुक्त घरेलु सकल उत्पाद से अधिक बढ़ गया है।

1998 की यू एन डी पी मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार विश्व के मात्र 20 प्रतिशत लोग 86 प्रतिशत संसाधन व्यक्तिगत उपभोग के लिए खर्च करते हैं।

"इस वर्ष भूमण्डलीय उपभोग 240 खरब डालर है जो 1975 के आंकड़े से 6 गुना है। विकासशील देशों की 440 करोड़ जनता में से 3/5 वां भाग ऐसी बस्तियों में रहता है जहां सफाई की आधारभूत निकास व्यवस्था नहीं है। लगभग एक तिहाई लोगों को शुद्ध पीने का पानी उपलब्ध नहीं है, एक चौथाई लोगों के लिए काम चलाऊ

आवास व्यवस्था नहीं हैं, 1/5वें भाग लोगों की पहुंच आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं तक नहीं है, बच्चों का 1/5वां भाग पांचवी तक की शिक्षा भी प्राप्त नहीं कर पाता है।" यह रिपोर्ट और आगे बताती है कि "यूरोप में 11 अरब डालर मूल्य की आइसक्रीम का उपभोग होता है जबकि घरेलु कुत्ते-बिल्लियों के भोजन पर यूरोप और अमेरिका में 17 अरब डालर के आसपास खर्च होता है। अमेरिका और यूरोप में सुगन्धित प्रसाधनों पर 12 अरब डालर का खर्चा होता है जबकि जापान 35 अरब डालर व्यापारिक मनोरंजन पर खर्च करता है। रिपोर्ट आगे भेद खोलती है कि विश्व के मात्र 3 धनवान लोगों के पास 48 सबसे कम विकसित देशों के संयुक्त घरेलू सकल उत्पाद के बराबर धन है।"

विश्व के 225 धनवानों के पास संयुक्त सम्पति 10 खरब डालर से अधिक है जो विश्व की 250 करोड़ आबादी यानि 47 प्रतिशत लोगों की कुल आय के बराबर है। विश्व के 32 सबसे अधिक धनवानों की सम्पति दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालद्वीप) के साथ-साथ ईरान व अफगानिस्तान के संयुक्त घरेलु सकल उत्पाद से अधिक है। 1965 में विश्व के 7 सबसे धनवान देशों की औसत प्रति व्यक्ति आय सबसे गरीब 7 देशों के लोगों की आय से 20 गुनी अधिक थी जो कि 1995 में बढ़कर 39 गुना हो गई। अफ्रीका में अब औसत प्रति व्यक्ति आय विकसित देशों की तुलना में मात्र 7 प्रतिशत है। दक्षिण अमेरिका में 1970 के दशक के अन्त में जहां यह औद्योगिक देशों की तुलना में एक तिहाई थी, अब यह अनुपात एक चौथाई हो गया है।

द्वितीयत:, एन जी ओ नेतृत्व के बारे में जैसी प्राय: रिपोर्ट पढ़ी और सुनी जाती है कि उनका न केवल जीवन का तरीका बल्कि उनका काम का रुख भी एशोआरामी होता जा रहा है। जन सेवा यानि विनम्रता, सादगी और तपस्या का स्तर भी गिरता जा रहा है।

तृतीयत:, विदेशी फण्ड का मसला भी षड़यन्त्र का हिस्सा बन गया है। अब एन जी ओ को अधिक से अधिक इन फण्डों के संदर्भ में और उनके उपभोग के आधार पर जाना जाता है। इन फण्डों की मात्रा वास्तव में अत्यधिक है।

एसोसियेटेड प्रेस के वाशिंगटन डिसपेच (9 नवम्बर 1998) के अनुसार वे (यानि एन जी ओ) सरकारों से भी अधिक शक्तिशाली हो सकते हैं। वे विश्व बैंक या किसी भी देश से ज्यादा सहायता बांटते है। इनमें से कुछ का बजट बड़ी कारपोरेशनों से अधिक हैं। इनमें से कुछ विश्व की किसी भी महानतम् सेना की तरह अपने आपको अत्यधिक खतरे में झोंकने को तैयार रहती है। विश्व संकट को सम्भालने में, बड़े व्यवसायी व बड़ी सरकारें भी, बड़े गैर लाभ वाले इन संगठनों से पिछड़ जाते हैं जो

ट्रिलियन-बिलियन से भी ज्यादा प्रति वर्ष खर्च करते हैं। कल ही एक अध्ययन प्रकाशित हुआ है। इसके अनुसार अगर एन जी ओ की गति को एक राष्ट्र माना जाए तो यह राष्ट्रों में से एक आठवीं आर्थिक शक्ति होगी। ये न तो व्यापार है और न ही किसी सरकार के भाग है, हजारों गैर-लाभदायक या गैर सरकारी संस्थान या एन जी ओ भूमण्डल पर दनदना रहे हैं।

भारत में सन् 1984 में एन जी ओ को विदेशी योगदान 254 करोड़ रुपये था और यह अगले दो सालों मे ही 350 करोड़ रुपये पहुंच गया। यह अनुमानित है कि पिछले कुछ समय से अब तक 2000 करोड़ रुपये से अधिक विदेशी दान केवल ग्रामीण विकास के लिए एन जी ओ को मिला। यहां ऐसे भी अकेले संगठन है जिनका वार्षिक बजट 3 करोड़ रुपये से 50 करोड़ रुपये के बीच है।

सरकारी रिपोर्टों के मुताबिक भारत में 50 प्रतिशत रजिस्टर्ड एन जी ओ या तो अस्तित्व में ही नहीं या धन की धोखाधड़ी में उलझे हुए हैं।

चौतरफा यह विश्वास बना हुआ है कि एन जी ओ धन हड़पने के लिए बने हुए हैं न कि लोगों की सेवा के लिए।

चतुर्थ, जहां तक बनावट का सम्बन्ध है एन जी ओ का नेतृत्व और कार्य प्रणाली का रूझान अत्यधिक असंतुष्टीजनक है। संगठनात्मक तौर पर एन जी ओ अधिक से अधिक नौकरशाहीकृत होते जा रहे हैं। शानदार भवनो, स्टाफ, अफसरशाही, फण्ड इत्यादि, स्वयं सेवी कार्य की पहली आवश्यकता बन गए हैं। एन जी ओ नेतृत्व एकाधिकार प्राप्त करते जा रहे हैं। ज्यादातर एन जी ओ एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों द्वारा शुरू किये जाते हैं और वहीं संगठन पर पूर्ण नियंत्रण रखते हैं। असल में ये एक व्यक्ति आधारित संगठन है। इनकी निर्णय करने की प्रक्रिया गलत बन चुकी है क्योंकि अकेला नेता स्वयं ही संगठन के लिए निर्णय लेता है। स्वाभिवकतया, एन जी ओ में लोगों की भागीदारी का कार्यक्रम समाप्त प्राय है।

पंचम्, एन जी ओ के कार्यक्रम प्रायः लोगों की बजाए खुद संगठन के ही हितों की सेवा करते हैं। दानदाताओं द्वारा टेलर-निर्मित स्कीमों को लागू करवाना, अब उनका मुख्य पहलू बन चुका है। अपने आप नया उद्यम खड़ा करने के लिए ये अब आम तौर पर ऐसे क्षेत्रों की खोज करते हैं जहां वित्तीय सहायता आसानी से मिलती है। पैसा, लाभ, पारितोषिक, अकड़ या बांकपान, विशेषाधिकार आदि ही अब इनके उद्देश्य रह गये हैं।

IV

11. एन जी ओ आन्दोलन के गिरते प्रभाव का कारण प्रथमतया, बाजार-नेतृत्व वाली विश्व व्यवस्था में गैर-बराबरी बढ़ रही है-परिणामस्वरूप गरीबी, बेराजगारी,

बेघरबारता, बीमारी, निरक्षरता और अन्य सामाजिक बुराइयां बढ़ रही हैं। बहु राष्ट्रीय कम्पनियों से निर्देशित एन जी ओ के हल पीड़ितों को मामूली सहायता कर पाते हैं यह कपड़े पर पैबन्द लगाने के समान है।

द्वितीयतः, इसका कारण उपभोगवादी स्वयंसेवीवाद में निहित है जो कैरियरवाद की तरफ झुकता है।

तृतीयतः, इसका कारण एन जी ओ का गैर नियमावली पर आधारित होना है जिससे इसके अनियमित और अव्यवस्थित तरीके, जिनमें सारे अधिकार एक व्यक्ति या गुट में केन्द्रित किये हुए हैं, जो लोगों के संसाधनों का अपवित्रता से दुरुपयोग करते हैं।

V

12. इनका दीर्घकालीन हल ऐसी व्यवस्था की पुनरचना करने में है जिसका आधार तर्कसंगतता, लोकतंत्र, टिकाऊपन और समता हो, ऐसी कानून पर आधारित व्यवस्था हो जिसमें जनता को सभी सामाजिक प्रक्रियाओं में अधिकार सम्पन्न कर शक्तिशाली बनाया जाए, विकास की प्रक्रिया को उत्पादकता, समता और टिकाऊपन के साथ जोड़ा जाए, मानवतावादी संस्कृति को प्रोत्साहित किया जाए तथा न्यायिक विश्व शान्ति को इसकी नीव माना जाए और तर्कसंगत मानवतावाद को इसकी दिशा बनाई जाए।

13. इसका अल्पकालीन हल एन जी ओ आन्दोलन को एक जनवादी, पारदर्शी, न्यायिक तथा टिकाऊपन की दिशा में पूरी तरह सुधारे जाने में निहित है। इसके लिए राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय दोनों स्तर पर एन जी ओ सेक्टर के नियमन की स्पष्ट नीति तय करना जरूरी है। सभी एन जी ओ कानून द्वारा संचालित होने चाहिए। धन देने, खर्च करने, कार्य करने और लेखा-जोखा इत्यादि उनकी सभी गतिविधियों के लिए जनवादी मानदण्ड निर्धारित किये जाने चाहिए। इसके लिए एक ऐसी पर्यवेक्षक कमेटी का गठन करना चाहिए जिसमें आधे एन जी ओ के प्रतिनिधि लिये जाए जबकि आधे सम्बन्धित लोग (यानि प्रोजेक्ट से प्रभावित समूहों में से) लिए जाए। पार-राष्ट्रीय एन जी ओ, संयुक्त राष्ट्र निर्मित कानूनों से संचालित होने चाहिए, जबकि प्रत्येक देश को अपने एन जी ओ को व्यवस्थित करने के लिए अपने कानूनों को बनाना व लागू करना होना चाहिए।

VI

14. वर्तमान हालात में, पार-राष्ट्रीय और राष्ट्रीय दोनों तरह के न्यायिक एन जी ओ और उनके दानदाता एशिया में आपसी विश्वास, सुरक्षा और सहयोग को मजबूत करने में सकारात्मक भूमिका अदा कर सकते हैं; बशर्ते कि वे एशिया की

वास्तविकताओं से प्रस्थान करें और उनको उचित प्रत्युत्तर दें।

प्रथम वास्तविकता है कि अधिकतर एशियाई देशों में एन जी ओ के बारे में आम धारणा है कि पश्चिमी धन पर निर्भर ये संस्थाएं एशियाई देशों के हितों की देखरेख नहीं करती हैं।

द्वितीय वास्तविकता है कि किसी भी पार-राष्ट्रीय एन जी ओ ने मुश्किल से ही कभी एशियाई तथा अन्य विकासशील देशों की अत्यधिक गंभीर गरीबी की समस्या को उठाया हो। जबकि पूरे विश्व में मानव अधिकारों के हनन के खिलाफ मजबूत विरोध खड़ा करने का उचित कार्य करने के बावजूद इन्होंने 140 करोड़ लोगों के अमानवीय गरीबी के स्तर (जो ज्यादातर एशिया में निवास करते हैं) पर जीवन बसर करने जैसे सबसे महत्वपूर्ण मानव अधिकार हनन पर मुश्किल से ही कभी मुंह खोला है। अगर कुछ जाने-माने एन जी ओ संयुक्त रूप से विश्व बैंक, यू एन डी पी और दूसरे सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं को एशिया के किसी शहर में गरीबी के मुद्दे पर सम्मेलन आयोजित करने के लिए तैयार करें जिसमें इस क्षेत्र के भिन्न-भिन्न इलाकों का प्रतिनिधित्व भी हो, ऐसे सम्मेलन में गरीबी उन्मूलन की ठोस योजना बनाई जाए, इस तरह के प्रयास से इस महाद्वीप के लोगों के बीच सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाने में मदद मिलेगी।

तृतीय वास्तविकता है कि एशियाई देशों के बीच कई द्विपक्षीय विवादास्पद मसले हैं। एन जी ओ और कुछ अन्य जन संगठन मिलकर दोनों पक्षों के जागरुक लोगों की विचार गोष्ठियां आयोजित कर सकती है ताकि आपसी विश्वास को बढ़ाया जा सके।

चतुर्थ वास्तविकता है कि यहां कई ऐसे मसले हैं जैसे जनसंख्या नियंत्रण, महिलाओं को अधिकार सम्पन्न बनाना, बच्चों का कल्याण, पर्यावरण, सामाजिक न्याय, मानव अधिकारों, परमाणु निशस्त्रीकरण, राष्ट्रवाद और अन्तर्राष्ट्रीयवाद को जोड़ना, देशों के बीच विवादों को समाप्त करना, ताकत की भूमिका, बढ़ती हुई अन्तरनिर्भरता के दौर में राष्ट्रीय राज्य प्रणाली की प्रासंगिकता, सहायता, कर्जा और व्यापार के मसले, इत्यादि-जिनमें विभिन्न एशियाई देशों के लोगों की दिलचस्पी है। अगर एशिया के विभिन्न क्षेत्रों के तर्कसंगत लोगों को इन विषयों पर वाद-विवाद के लिए इकट्ठा किया जा सके और इस क्रम को जारी रखा जा सके तो यह एशिया में आपसी सम्बन्धों को मजबूत करने में मदद देगा।

पंचम् वास्तविकता है कि विभिन्न एशियाई क्षेत्रों के लोगों के बीच सांस्कृतिक एकता विद्यमान है। अगर उनमें से जागरुक लोगों को उस सभ्यता के क्रमिक विकास तथा उसका अन्य संस्कृतियों से सम्बन्ध विषय पर सम्मेलन आयोजित करने के लिए

प्रोत्साहित किया जाए तो यह इन देशों के बीच सहयोग और दोस्ती को मजबूत करने में योगदान देगी।

छठी वास्तविकता है कि देश की विशिष्टि समस्याओं-जैसे गरीबी, सामाजिक पिछड़ापन, निरक्षरता इत्यादि-को हल करने के लिए अनुभव ने दर्शाया है कि अगर सम्बन्धित लोगों को लामबंद किया जाता है और उन्हें अपनी मुश्किलों से निपटने के तरीके खोजने की स्वतंत्रता दी जाती है तो वे इनका हल अधिक अच्छा निकाल सकते हैं। इस अनुभव का अनुसरण करके एन जी ओ लोगों को प्रेरित और उत्साहित कर सकते हैं।

सातवीं वास्तविकता है कि एशियाई लोग दूसरे विकासशील देशों के लोगों की तरह ही विकसित और विकासशील देशों तथा गरीब व अमीर के बीच बढ़ती असमानता से दुखी हैं। एन जी ओ ने अभी तक इस मसले को नहीं उठाया है। अगर वे एशिया के किसी क्षेत्र या पूरे महाद्वीप का सम्मेलन बुलाकर इस पर बहस मुबाहिसा करवाये तो इससे एशिया महाद्वीप की मजबूती के उद्देश्य को भारी सहायता होगी। (25.11.98)

❋ ❋ ❋

राजस्थान विश्वविद्यालय में 11 नवम्बर, 2000 को गांधी अध्ययन संस्थान में 'वैश्वीकरण, भारत सरकार की नीति और अकाल व विकास पर राजस्थान राज्य सरकार की नीति' विषय पर इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक पार्टी द्वारा आयोजित सेमीनार में मुख्य वक्ता आर. पी. सर्राफ के संबोधन को नीचे उद्धृत किया गया है।

वैश्वीकरण प्रक्रिया और उसके तकाजे

(1) जयपुर सेमीनार में बोलते हुए आर.पी. सर्राफ ने कहा कि यह सेमीनार एक पक्ष ने बुलाई है, इससे भी अच्छा होता अगर यह सेमीनार जयप्रकाश नारायण समर्थक, गांधीवादी, वामपंथी, आदि भिन्न-भिन्न विचार वाले समूहों ने मिलकर बुलाई होती। यानि, जिन-जिन को लगता है कि व्यवस्था ठीक नहीं चल रही है और लोगों को नुकसान हो रहा है, उन सब लोगों को ऐसी सेमीनार मिलकर बुलानी चाहिए थी। उन्होंने सेमीनार में रखे गए विषय पर भी कहा कि इसमें कई विषय है और विस्तृत है जबकि समय की सीमा के मद्देनजर इसे एक विषय पर केन्द्रित किया जाना चाहिए था। फिर भी आयोजकों का अच्छा प्रयास है जिसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं। आज की सेमीनार में कुछ साथी अपने विचार रख चुके हैं, उन्होंने काफी अच्छे विचार इस विषय पर रखे हैं।

(2) अब हमें इस विषय पर विचार करते हुए यह छाँटना चाहिए कि ठीक क्या है और गलत क्या है। ठीक व गलत को पहचानने के सिलसिले में दो बातों को ध्यान में रखना जरूरी है। पहला तो मामलात का कारण क्या है और दूसरा इससे निपटने का कारगर कार्यक्रम (एजेण्डा) क्या हो सकता है। उदाहरण के लिए एड्स, टीबी आदि किसी भी गम्भीर बीमारी का कारण पता लगने पर उसका इलाज किया जा सकता है। जिस बीमारी के कारण का पता नहीं लगता है उसका इलाज सम्भव नहीं होता है। अभी एड्स के कारण का पता नहीं है अत: समुचित इलाज भी सम्भव नहीं है।

I वैश्वीकरण की प्रक्रिया को दुनिया की सरकारें और जनता मानती है

(3) आज की सेमीनार का एक विषय वैश्वीकरण है। इसके सम्बन्ध में एक विचार कहता है कि यह पश्चिम या किसी विशिष्ट महाशक्ति द्वारा ठोंसा जा रहा है। परन्तु यह विचार हकीकत से परे हैं क्योंकि दुनिया में 199 सरकारें हैं, उन सभी ने इसे चुपचाप कैसे स्वीकार कर लिया है। आखिर इन सभी सरकारों को उन देशों की जनता ने चुना है, इन सभी ने वैश्वीकरण को स्वीकार किया है, और इन देशों की जनता या तो बार-बार उन्हीं राजनीतिज्ञों अथवा उन जैसे राजनीतिज्ञों को चुनती रहती है जिन्होंने

वैश्वीकरण को माना है। चाहे ऐसा उन्होंने अपने पुराने राष्ट्रीय विचारों के साथ घालमेल करते हुए व हिचकिचाहट के साथ माना है।

(4) जहाँ तक समस्याओं का सम्बन्ध है ये वैश्वीकरण के पहले ही चली आ रही हैं। उदाहरण के लिए भारत में गरीबी सन् 1947 में 60 प्रतिशत के करीब थी जो बाद में कुछ कम हुई और अब फिर ऊपर चढ़ रही है। बीमारी, गरीबी, अनपढ़ता, शुद्ध पानी की कमी, बेरोजगारी, असमानता आदि समस्याएं उसी तरह कायम हैं और कुछ तो बढ़ रही हैं, कुछ नई समस्याएँ पैदा हो रही हैं। भ्रष्टाचार की समस्या लगातार बढ़ रही है जो बहुत पुरानी समस्या है। नेहरू जी ने कहा था कि भ्रष्टाचारी व्यक्ति को बिजली के खम्भे से बाँध कर पिटाई की जाएगी परन्तु आज तक कभी भी भ्रष्टाचारियों के खिलाफ कोई बड़ी कार्यवाही नहीं की गई जबकि भ्रष्टाचार बढ़ता ही जा रहा है। भारतीय रिजर्व बैंक की 1995 की रिपोर्ट के मुताबिक भारत के सकल राष्ट्रीय आय (जीडीपी) का एक तिहाई भाग काले धन की सूरत में मौजूद है और यह मुट्ठी भर लोगों के पास है तथा बढ़ता ही जा रहा है। राजीव गांधी के कथन के अनुसार विकास से सम्बन्धित 100 पैसे में से 85 पैसे भ्रष्टाचार की बलि चढ़ जाते हैं। निस्संदेह भ्रष्टाचार वैश्वीकरण की वजह से नहीं बढ़ रहा है, इसकी प्रक्रिया काफी पहले से निरन्तर चल रही है। इसी तरह आज बेरोजगारी की वजह नई तकनीक और दूसरी वजह पुरानी सामाजिक व्यवस्था और बढ़ती हुई आबादी है। जबसे वैश्वीकरण नाम की प्रक्रिया शुरू हुई है तबसे उपरोक्त समस्याएँ बढ़ गई हैं।

(5) विश्व बैंक की विकास रिपोर्ट 2000-2001 के मुताबिक अमीर और गरीब देशों के बीच फर्क पिछले 40 वर्षों में दो गुना बढ़ गया है। रिपोर्ट के अनुसार सबसे अमीर 20 देशों की औसत आय सबसे गरीब 20 देशों की औसत आय से 37 गुना अधिक है। पिछली शताब्दी में विश्व की सम्पदा तथा सूचना तकनीकी में जैसी उपलब्धि हुई है वैसी मनुष्य के सम्पूर्ण इतिहास में कभी हासिल नहीं हुई थी। परन्तु इस उपल्ब्धि का समान रूप से वितरण नहीं हुआ। इससे दुनिया में असमानता की असाधारण स्थिति पैदा हो गयी। दुनिया में गरीबी का आलम यह है कि लगभग आधी आबादी अर्थात् 6 अरब में से 2 अरब अस्सी करोड़ लोग मात्र 2 डालर प्रतिदिन से भी कम पर गुजारा-करते हैं तो एक अरब 20 करोड़ लोग अर्थात् आबादी का पाँचवा हिस्सा एक डालर प्रतिदिन से भी कम पर गुजारा करता है। इन गरीबों में से 44 प्रतिशत लोग दक्षिण एशिया में रहते हैं।

(6) लैटिन अमेरिका, दक्षिण एशिया और उपसहारा अफ्रीकी देशों में गरीबों की संख्या बढ़ रही है। इसी तरह यूरोप और मध्य एशिया के वे देश जो अब बाजार अर्थव्यवस्था के दौर से गुजर रहे हैं वहाँ एक डालर प्रतिदिन से कम पर गुजारा करने

वाले लोगों की संख्या में भी काफी वृद्धि हुई है। गरीबों का एक स्वरूप विभिन्न देशों के भीतर बढ़ रही असमानता के रूप में नजर आ रहा है। यह असमानता समुदायों, क्षेत्रों, जातीयताओं और महिलाओं के स्तर पर ज्यादा नजर आती है।

(7) यू.एन.डी.पी. रिपोर्ट के मुताबिक दुनिया के तीन अरबपतियों के पास सम्पदा सबसे कम विकसित 48 देशों के कुल घरेलु उत्पादन से अधिक है। 1996 में 447 अरबपतियों की कुल सालाना आमदनी दुनिया की कुल आबादी के आधे गरीब लोगों की आमदनी के बराबर थी।

(8) दिसम्बर 1999 में वाल्सस्ट्रीट बैंकों (अमेरिका) ने 13 लाख डालर अपने शेयर होल्डरों में बोनस तक्सीम करने के लिए रखें जबकि दुनियां में 1 अरब 20 करोड़ गरीब लोग प्रतिदिन 1 डालर पर गुजारा करते हैं। जिसका मतलब यह है कि वाल्सस्ट्रीट के बैंकरों ने सिर्फ बोनस वाले दिन दुनिया के 1/5 गरीबों की प्रतिदिन की आमदनी से 10 गुना बोनस हासिल किया।

(9) भारत को ही देखिए, इसकी व्यवस्था पर नजर डालने से हर जगह बेइन्साफी व अस्थिरता ही हावी नजर आती है। जबकि इसका संविधान, कानून और सरकारें प्रतिदिन सामाजिक न्याय और कानून के राज की दुहाई देती रहती है। लेकिन यहाँ रोजी-रोटी की समस्या की हालत खराब है। हमारे स्कूल, हॉस्पीटल, सड़कें आदि सभी की हालत गड़बड़ है। यहाँ तक कि व्यवस्था की इस हालात से पैसे वाला भी संतुष्ट नहीं है। हमारी इस व्यवस्था में भी कुछ प्रतिशत लोग तो निहायत ईमानदार एवं अच्छे हैं। लेकिन इस व्यवस्था में खराबी करने वालों को प्रोत्साहन मिलता है। सन् 1995 की बोहरा रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत की व्यवस्था पर माफिया हावी हो गया है।

(10) जाहिर है कि उपरोक्त नकारात्मक समस्याएं वैश्वीकरण की प्रक्रिया से पहले से ही मौजूद हैं और अभी तक चल रही हैं तथा बढ़ रही हैं। तब इस सन्दर्भ में सवाल पैदा हेता है कि वैश्वीकरण की प्रक्रिया क्या है और यह कहाँ से पैदा हुई है। क्या यह किसी महाशक्ति (सुपरपावर) की इच्छा से उत्पन्न हुई है या क्या यह विकसित देशों की विकासशील देशों के खिलाफ चालबाजी का परिणाम है।

(11) जब तक हम वैश्वीकरण की प्रक्रिया की प्रकृति, स्वभाव या गुण को वास्तविकता के धरातल पर विश्लेषित नहीं करते तब तक हम उसकी हकीकत और चलन को नहीं जान सकते ।

II वैश्वीकरण की प्रक्रिया क्या है?

(12) वैश्वीकरण की प्रक्रिया वस्तुगत हकीकत है, मनोगत नहीं है। यह प्रक्रिया मनुष्य और प्रकृति की अन्तरक्रिया से पैदा हुई है। मनुष्य की इच्छा (ख्वाहिश)

से पैदा नहीं हुई है, इस प्रक्रिया को न किसी महाशक्ति ने पैदा किया है और न ही विकसित या विकासशील देशों ने उत्पन्न किया है। इन्सान शुरू से प्रकृति के साथ अन्तरक्रिया से वस्तुगत चीजें पैदा करता रहा है। इस तरह उसने विज्ञान के कई सूत्र खोजे हैं, जिन्होंने हमारे जीवन को बदला है, हमारे जीवन पर भारी असर डाला है। इसी की वजह से हमारा दृष्टिकोण, व्यवहार और सांगठनिक ढांचा बदलता रहा है।

(13) उपरोक्त घटनाक्रम दो बुनियादी अन्तरक्रियाओं से पैदा होता रहा है। इनमें से एक बुनियादी अन्तरक्रिया मानव और प्रकृति के बीच होती है और दूसरी बुनियादी अन्तरक्रिया मानव और मानव के बीच होती है। प्रकृति के साथ अन्तरक्रिया हमारी जीवन पद्धति (सोच, कहना और करना, संगठित होना) को बदल देती है। यह हमारे रहन-सहन को बदल देती है। यह हमारे श्रम विभाजन को तय करती है। उदाहरण के लिए जब हम बिजली के बल्ब का उपयोग करते हैं तो उसे इच्छा के मुताबिक संचालित नहीं कर सकते हैं बल्कि उसके नियम के अनुसार बिजली के स्विच को दबा करके ही जला सकते हैं। एक इंजीनियर मेकेनिक्स के नियम के मुताबिक चले तो मशीन को चला सकता है, अपनी मर्जी के मुताबिक नहीं चला सकता। मनुष्य ने बिजली, मशीन, परमाणु या प्राकृतिक संसाधनों के नियम नहीं बनाए हैं, वे तो उन प्राकृतिक चीजों के ही गुण हैं, जिन्हें मनुष्य ने खोजा, जाना और समझा है। प्रकृति के नियमों को जानकर ही मनुष्य उन्हें अपने उपयोग में ले सकता है। मानव खुद भी प्रकृति का अंग है और उसके अपने नियम हैं।

प्रकृति के साथ मानव की अन्तरक्रिया में अब कुछ बड़े परिणाम पैदा हुए हैं। पिछले कुछ समय से मानव ने रेडियो तरंगों का आविष्कार करके सूचना तंत्र की गति प्रकाश के वेग से कायम कर ली है। हममें से कोई भी महानुभाव सैकण्डों में अमेरिका में बैठे किसी व्यक्ति से बातें कर सकता है। किसी भी व्यक्ति का भाषण सारे विश्व में प्रसारित किया जा सकता है। एक सैकण्ड में हमारे मन का दूसरों के मन से मिलाप हो जाता है। हमारा शारीरिक मेल-मिलाप भी ध्वनि की गति से तेज कर पाना सम्भव हो गया है। हवाई जहाज की गति ध्वनि से तेज हो गई है। केवल 8 घंटे में सारी पृथ्वी का चक्कर लगाया जा सकता है। पुराने समय में यह कार्य अत्यधिक कठिन होता था। भारत की खोज में निकला व्यक्ति अमेरिका पहुँच जाता था और अमेरिका की खोज में निकला व्यक्ति कहीं और पहुंच जाता था। जब मानसिक और शारीरिक सम्पर्क तेज गति से सम्भव हो गये हैं तो हमारे बीच की दूरियां छोटी हो गई और हमारी अन्तरनिर्भरता और अन्तरक्रिया बढ़ती चली गई है। अब हमारे सम्पर्क और आपसी अन्तरक्रिया का स्तर राष्ट्रीय सरहदों को पार कर गया है। अब राष्ट्रीय सीमाएँ वैश्विक अन्तरक्रिया को रोक नहीं सकती हैं।

(14) इतिहास में राष्ट्र बनने के वक्त भी एक ऐसा समय आया था जब नई औद्यौगिक तकनीक के अनुरूप जनता के राज का गुर जानकर हमने राजाओं के राज की व्यवस्था को बदल लिया था।

(15) आज जब मानव की अन्तरक्रिया की प्रक्रिया अन्तर्राष्ट्रीय बन गई है और 199 से अधिक देशों की सरकारों और सारी दुनिया के लोगों ने इस वैश्वीकरण की प्रक्रिया को स्वीकार कर लिया है। इनमें से कुछ कहते हैं, वैश्वीकरण की प्रक्रिया खराब है, कुछ कहते हैं ठीक है। जबकि कुछ कहते हैं इसमें सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलू मौजूद हैं। परन्तु व्यवहारिक तौर पर इसकी वस्तुगत हकीकत को सभी मान रहे हैं और अपने दृष्टिकोण के मुताबिक प्रत्युत्तर दे रहे हैं।

(16) आज अगर नकारात्मक पहलू ज्यादा पैदा हो रहे हैं तो वे कहाँ से पैदा हो रहे हैं, यही जानने की बात है और यही एक बुनियादी प्रश्न है। हम सब भी तो वोट देकर जो सरकार बना रहे हैं, वह सरकार वैश्वीकरण का कार्यक्रम (एजेण्डा) ही ला रही है। चाहे किसी भी पार्टी की सरकार आये वह वैश्वीकरण का कार्यक्रम ही बतायेगी परन्तु उसके वैश्वीकरण की समझ और उसके प्रत्युत्तर का तरीका अपना ही होगा। उदाहरण के लिए वामपंथी भी आये तो वैश्वीकरण की बात ही कहेंगे।

III. वैश्वीकरण के चलते सकारात्मक परिणाम क्यों नहीं निकल रहें हैं

(17) यहाँ सोचने लायक सवाल यह है कि हर विचारधारा व रुझान ज्वलंत समस्याओं के हल के लिए वैश्वीकरण का रास्ता ही क्यों अपनाता है? जबकि वैश्वीकरण के समर्थक और विरोधी दोनों का ही कहना है कि ये समस्याएँ वैश्वीकरण की प्रक्रिया से निकल रही हैं। क्या यह हकीकत है या उनकी वैश्वीकरण की गलत समझ की वजह से ये समस्याएँ पैदा हो रही हैं।

(18) असल में वैश्वीकरण तो एक प्रक्रिया है जो वस्तुगत वास्तविकता है। यह अन्तरनिर्भरता की नई मंजिल है जिसमें राष्ट्र एक दूसरे पर निर्भर हो गये हैं। अब पुराने आत्मनिर्भर-सम्प्रभू राष्ट्रों की जगह विश्व अन्तरनिर्भर राष्ट्रों की एक अन्तर्राष्ट्रीय इकाई बन गया है।

विज्ञान और तकनीक के विकास ने दुनिया को एक ऐसे गाँव में बदल दिया है जिसका काम का बँटवारा (श्रम विभाजन) वैश्विक स्तर पर हो रहा है। अन्तरनिर्भरता की इस वैश्विक वस्तुगत हकीकत की ताकतों को पुरानी राष्ट्रीय व्यवस्थाओं की हकीकतों से निकले प्रचलित पुराने सोच, सिद्धान्तों और मॉडलों से पूरा करने की नाकामयाब कोशिशों के कारण पुरानी समस्याएँ जारी है और नई पैदा हो रही है। हालांकि इस नई वस्तुगत हकीकत से मेल बैठाने के लिए पुराने मनोगत सोच और

सिद्धान्तों में हिचकिचाहट के साथ संशोधन और सुधार करके उदारीकरण नाम की प्रक्रिया शुरू की गई है, परन्तु पुराने एक तरफा दृष्टिकोणों के चलते आवश्यक परिवर्तन नहीं कर पाने की वजह से वैश्वीकरण की वस्तुगत जरूरत के उलट उसकी गति को मन्द कर रही है व समस्याओं का कारण बन रही है।

(19) इस घटनाक्रम को हकीकी तौर पर समझने के लिए आज हमारे सामने मुख्य सवाल यह है कि वैश्वीकरण के क्या तकाजे हैं, उसकी क्या जरूरतें हैं, इसकी क्या माँगें हैं और इसकी क्या अति आवश्यक शर्तें हैं।

IV. वैश्वीकरण की प्रक्रिया के तकाजे और एकतरफा विचारधाराओं के मॉडलों का प्रत्युत्तर

(20) वैश्वीकरण प्रक्रिया के क्या तकाजे हैं? वस्तुगत हकीकत से निकली इस वैश्वीकरण की प्रक्रिया का तकाजा है कि उसे तर्कसंगत मानवीय एवं पर्यावरण केन्द्रित विश्व व्यवस्था प्रदान की जाए। इसकी जरूरत है कि इसे 200 राष्ट्रीय राज्यों की बजाए सम्पूर्ण विश्व के एक डेमोक्रटिक अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था से संचालित किया जाए।

वैश्वीकरण की यह प्रक्रिया एक ऐसी न्याय संगत, समतावादी, शान्तिवादी, जनवादी विश्व सामाजिक व्यवस्था की माँग करती है जिसकी प्राथमिकताएँ, पर्यावरण और जनता हो और जिसका उसूली आधार पर्यावरणीय टिकाऊपन, उत्पादकता, पारदर्शिता, लोगों की भागीदारी एवं नियन्त्रण की जनवादी व्यवस्था हो। दूसरे अर्थों में वैश्वीकरण की प्रक्रिया की अति आवश्यक शर्त है कि मानव उसे ऐसी न्यायसंगत विश्व व्यवस्था प्रदान करे जिसमें वह अबाध गति से आगे बढ़ सके। ऐसी विश्व व्यवस्था की राजनीति, आर्थिकता और संस्कृति वर्तमान राष्ट्रीय राज्यों (देशों) की राष्ट्रीय राजनीति, अर्थनीति और संस्कृति से भिन्न होगी।

(21) आत्मनिर्भर राष्ट्रों की पुरानी राष्ट्रीय व्यवस्थाओं से निकले महाशक्तिवादी, गैर जनवादी, प्रभुत्वकारी, एकाधिकारी, जन विरोधी एवं प्रकृति विरोधी एक तरफा सिद्धान्तों के चलते वैश्वीकरण की वस्तुगत वास्तविकता की सहज गति को बाधित किया जा रहा है।

(22) यह अमेरिका तथा सुरक्षा परिषद् के पांच वीटो आधारित महाशक्तियों की प्रभुत्वकारी नीति ही है जो संयुक्त राष्ट्र को विश्व शांति और विश्व विकास के जनवादी केन्द्र में तब्दील नहीं होने देते हैं। भारत जैसे विकासशील देश भी इसी महाशक्तिवादी प्रभुत्वकारी नीति का अनुसरण करते हुए सुरक्षा परिषद् में अपनी सीट स्थायी करने की माँग ही करते हैं। परन्तु यू एन के जनवादीकरण की माँग न तो विकसित राष्ट्र करते हैं और ना ही विकासशील देश करते हैं। ऐसी गैर जनवादी विश्व

व्यवस्था के चलते सुरक्षा बजटों में आवश्यक कटौती नहीं होती है जो वैश्वीकरण के लिए एक भारी बाधा है।

(23) विकासशील देशों में वाम और दक्षिण कट्टरपंथी कहते हैं कि हमारे विकासशील (भारत सहित) को अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं (डब्लू.टी.ओ., विश्व बैंक, मुद्रा कोष, इत्यादि) से बाहर निकल जाना चाहिए और विकासशील देश यह भी कहते हैं कि विकसित देश हमारे साथ व्यापार और निवेश के क्षेत्र में बेइन्साफी करते हैं। जबकि इन देशों की सरकारें अपने अन्दर गरीबी पैदा कर रही है तथा कारपोरेट सेक्टर को बढ़ावा दे रही है जो कि विकसित देशों का ही एजेन्डा है और आई एम एफ, वर्ल्ड बैंक की बुनियाद है। हम कारपोरेट सेक्टर को डेमोक्रेटिक सेक्टर में तब्दील करके गरीबी कम कर सकते हैं। हमें विकसित और विकासशील राष्ट्रों की एकाधिकार वाली व्यवस्था की जगह लोगों की भागीदारी और नियन्त्रण की जनवादी व्यवस्था बनाने के लिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का लोकतान्त्रिकरण करवाना चाहिए। इन संस्थाओं को छोड़ना नहीं चाहिए।

(24) हमें इसके लिए जनता की धनबल और सत्ताशक्ति के पीछे चले जाने की मानसिकता में तब्दीली लानी होगी। आज जनता किसी सिद्धान्तवादी, ईमानदार व अच्छे व्यक्ति की बजाए प्रलोभनों के वश में आकर वोट डालती है। जनता तात्कालिक लाभ की संकीर्ण मनोवृत्तिवश दीर्घकालीन हितों को नजरअन्दाज करती है। इस जन चेतना को विकसित करना होगा।

(25) आज हमारे देश में 58000 करोड़ रुपये रक्षा बजट पर खर्च करना तय है, जबकि इस पर वास्तव में 62000 करोड़ रुपये खर्च होंगे। हमारे देश का 50 प्रतिशत बजट ऋण का ब्याज चुकाने पर जाता है, 20 प्रतिशत बजट रक्षा पर खर्च होता है। बाकी 15 प्रतिशत अनुदानों में खर्च होता है, जिसे गरीबों को नहीं दिया जाता है। बाकी पैसे नौकरशाहों के वेतन-भत्तों के रूप में खर्च हो जाता है। 81000 करोड़ रुपये हमारा योजनागत खर्च है, 2 लाख 50 हजार का गैर-योजनागत खर्च है। सोचिए, जिस देश में योजनागत खर्च एक चौथाई हो तो वह देश कैसे विकास कर सकता है।

(26) हमारे देश पर ऋण चढ़ रहा है तो उसे हमारी नस्लों को चुकाना है। स्टेट सेक्टर घाटे में चल रहे हैं तो इसकी पूर्ति जनता से ही की जायेगी। नेताओं का कुछ नहीं जायेगा। नेता तो अपने हिस्सों का आयकर भी नहीं देते हैं। भारत के चार भूतपूर्व प्रधानमंत्रियों के खिलाफ दावे हैं। और कोई नहीं पूछता है इन बातों को। हममें संवेदना ही नहीं बची है। जब हम अन्याय को बर्दाश्त करते हैं तो न्याय कैसे माँग सकते हैं। जो न्याय माँगना चाहता है वह कम से कम लोगों को सूचित करे कि क्या

गलत हो रहा है और क्या सही हो रहा है। तब सही गलत का ठीक फैसला हो सकता है।

(27) आज के वैश्वीकरण की बड़ी माँग यही है कि महाशक्तियों के प्रभुत्ववाद की बजाए लोगों की भागीदारी वाली राजनीति चाहिए, आर्थिकता चाहिए, संस्कृति चाहिए। महाशक्तिवाद की राजनीति सत्ता बल से चलती है जबकि जन समर्थक राजनीति लोगों के बल पर, लोगों के अपने अधिकार व समझ से और लोगों की जरूरत के मुताबिक चलती है। लोगों को आर्थिकता ऐसी चाहिए जो न्याय और बराबरी कायम करे और पर्यावरण की रक्षा करे। जबकि प्रभुत्व पर कायम महाशक्तिवादी राजनीति को कारपोरेट सेक्टर (संगठित क्षेत्र) के एकाधिकार वाली आर्थिक व्यवस्था चाहिए।

(28) कारपोरेट क्षेत्र* पर बोलते हुए श्री सर्राफ ने कहा कि बाजार निर्देशित कारपोरेट सेक्टर विकास की आर्थिक अवधारणा है। इसमें कम्पनियों पर ब्लॉक शेयरधारी समूहों का एकाधिकार होता है और आखिर तक जारी रहता है। यह हर सामाजिक मामले में बाजार आधारित सिद्धान्त को निर्णायक करार देता है। जिससे हर सामाजिक मामला वाणिज्यिक बन जाता है। जहाँ तक बाजार का सवाल है यह गैर-जरूरी नहीं है, यह जरूरी है। बाजार कोई जगह या संस्था नहीं है बल्कि जहाँ भी विनिमय हो रहा है वहाँ बाजार है। चाहे वह विनिमय गाँव की दुकान में हो या चाय की दुकान में हो। बाजार पुराने जमाने से रहा है। पहले वस्तु विनिमय होता था। अनाज के बदले मवेशी या औजार इत्यादि वस्तुओं का आपसी विनिमय होता रहा है। अब मुद्रा ने विनिमय का रूप बदल दिया है।

* कारपोरेट क्षेत्र का अर्थ है उद्योग का वह संगठित क्षेत्र जो बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तथा राष्ट्रीय बड़े उद्योगों (जैसे टाटा, बिड़ला, अम्बानी आदि के उद्योग) से गठित है।

यहाँ यह कहना जरूरी है कि हम बाजार निर्देशित विकास दर्शन और बाजार तन्त्र की विनिमय व्यवस्था में फर्क करके देखें। बाजार निर्देशित विकास दर्शन कारपोरेट सिस्टम को ही मजबूत बनाता है और जनता के हितों के खिलाफ काम करता है। जबकि बाजार-तन्त्र हर सिस्टम में विनिमय के लिए जरूरी है, और हमेशा रहा है तथा आगे भी रहेगा।

कारपोरेट व्यवस्था के तहत् बाजार प्रतियोगिता से पूँजी कुछ हाथों में संचित होती है। इसी से बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का जन्म हुआ है। बहुत से देशों में काम करने की वजह से इनका सह नामकरण हुआ है। हर कम्पनी का किसी न किसी देश में रजिस्ट्रेशन हुआ है। फर्क इतना है कि जिस कम्पनी के पास पूँजी अधिक है वह कई देशों में व्यापार करने लगती है उसको बहु राष्ट्रीय कम्पनी नाम दे दिया गया है।

जबकि हमारे जैसे अल्प विकसित देश की रजिस्टर्ड कम्पनियों के पास कम पूँजी और कमजोर प्रतियोगी क्षमता होने की वजह से बाहर के देशों में पूँजी निवेश नहीं कर सकती है। इसीलिए उन्हें बहुराष्ट्रीय कम्पनी नाम नहीं दिया जाता है। वास्तव में बहुराष्ट्रीय किसी न किसी देश में रजिस्टर्ड कम्पनियाँ ही हैं। आज हर राष्ट्र में कम्पनी के मिलते जुलते नियम हैं। हर जगह बुनियादी नियम यह है कि कम्पनियाँ कारपोरेट सेक्टर के प्रबन्धन में ही चलती हैं। मौजूदा कम्पनी कानूनों के तहत् यह प्रबन्ध स्थायी बन गया है। ये कम्पनी कानून दौलतमन्द शेयरधारियों के पक्ष में है और आम शेयरधारियों, मजदूरों और जनता के पक्ष में नहीं है। इस कम्पनी कानून के तहत् कम्पनी का एक बोर्ड ऑफ डायरेक्टर कायम किया जाता है जिसे प्रबन्ध के सम्पूर्ण अधिकार हासिल हैं और ये डायरेक्टर सारी उम्र उस पर काबिज रहते हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की पूँजी शोषण करती है अत: ये काम की नहीं है। लेकिन यह पूँजी का प्रबन्ध है।

इसका विरोध करते हुए इसका विकल्प भी पेश किया जाना चाहिए। इसके विरोधी, अप्रासंगिक हो चुके स्टेट सेक्टर को ही विकल्प के तौर पर पेश करते हैं और इस तरह इनका विरोध बेमानी बन जाता है।

कम्पनी कानून के तहत रजिस्ट्रेशन के लिए प्रोमोर्टस की तरफ से जो मेमोरेन्डम ऑफ एसोसिएशन पेश किया जाता है उसमें प्रोमोटर शेयर की कीमत सामान्य शेयरों की तुलना में बहुत कम रखी जाती है। जबकि साधारण शेयरों की कीमत कई गुना ज्यादा रखी जाती हैं। प्रोमोर्टस हिस्सेदारी के तौर पर ब्लॉक शेयर खरीद लेते हैं। जिनके बल पर वे कम्पनी पर एकाधिकार कायम रखने में सफल रहते हैं।

सम्पूर्ण विश्व की राष्ट्रीय व्यवस्थाओं का अवलोकन हमें दर्शाता है कि चाहे स्टेट सेक्टर हो या कारपोरेट सेक्टर हो, दोनों पर जनता का नियन्त्रण नहीं है। स्टेट सेक्टर में राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों का एकाधिकार बन जाता है जबकि कारपोरेट क्षेत्र में प्रोमोर्टस या ब्लाक शेयर होल्डर्स का एकाधिकार बन जाता है।

(29) भारत सरकार अंधाधुंध पूँजी को इकट्ठा करके कारपोरेट सेक्टर में लगा रही हैं। वाजपेयी सरकार ने तो अपनी आर्थिक नीति को अमेरिका सरकार की आर्थिक नीति से पूरी तौर पर नत्थी कर दिया है। काँग्रेस ने आधा उदारीकरण किया था जबकि वाजपेयी सम्पूर्ण उदारीकरण कर रहे हैं। यह सरकार पूरी तरह स्वतंत्र बाजार की आर्थिकता की नीति अपना रही है जिसमें गरीबों व पर्यावरण पर कौन ध्यान देता है। इस व्यवस्था में तो कारपोरेट क्षेत्र के दौलतमन्दों और उनके इर्द-गिर्द घूमने वाले लोगों को लाभ पहुँचता है। इस व्यवस्था में गरीबों को बहुत कम मिलता है। बेरोजगारी बढ़ रही है, गरीबी बढ़ रही है। अमेरिका सहित समस्त कारपोरेट क्षेत्र के

प्रभुत्व वाली उदारवादी व्यवस्था दुनिया भर में संकट में है। हमारे यहाँ कुछ लोग कहते हैं अमेरिका लूट रहा है परन्तु यह नहीं देखते कि भारतीय पूँजीपति और भारत सरकार भी भारत के अन्दर कारपोरेट सेक्टर को ही मजबूत कर रहे हैं। इस मॉडल के विरोधियों को इसका विकल्प देना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं साम्राज्यवाद लूट रहा है। साम्राज्यवाद की परिभाषा ही गलत है। औपनिवेशिक साम्राज्यवाद इतिहास में अवश्य रहा है। अब साम्राज्यवाद नहीं है। पूँजी की परिभाषा को ठीक करना होगा।

(30) मार्क्सवाद की एक धारणा पर बोलते हुए श्री सर्राफ ने कहा कि मार्क्सवाद के मुताबिक पूँजी संचित श्रम है, चूँकि, तकनीक भी पूँजी का ही भाग है इसीलिए वह भी संचित श्रम है। परन्तु यह धारणा ठीक नहीं है। तकनीक एक प्राकृतिक घटनाक्रम है। यह श्रम का रूप नहीं है। यद्यपि, तकनीक को खोजने व उत्पादन में श्रम का योगदान होता है। दिमागी कसरत तकनीक को खोजने में महत्वपूर्ण योगदान करती है परन्तु ठोस रूप में तकनीक एक भौतिक चीज है। यह एक मानवीय चीज नहीं है। प्रत्येक तकनीक, चाहे वह ऊर्जा तकनीक है, परमाणु तकनीक है या अन्य कोई पदार्थ तकनीक है प्रत्येक तरह की तकनीक भौतिक रूप में विद्यमान है।

अत: तकनीक अपने भौतिक रूप में अलग अस्तित्व रखती है, उसका अलग प्राकृतिक गुण होता है जिसे मनुष्य को समझना और उससे तालमेल कायम करना पड़ता है तभी दोनों (मनुष्य और तकनीक) की अन्तरक्रिया सम्भव हो पाती है।

उपरोक्त मार्क्सवादी अवधारणा वर्तमान वैश्विक श्रम विभाजन के युग में पूर्णतया अप्रासंगिक है। हमें पर्यावरण और जन समर्थक मॉडल के निर्माण में यह काम नहीं दे सकती।

(31) गाँधीवाद की एक धारणा पर बोलते हुए श्री सर्राफ ने कहा कि गाँधीजी की धारणा है कि पूँजीपति तो पूंजी का ट्रस्टी होता है। इसका अर्थ है कि वह पूँजी जनता को हस्तान्तरण कर देता है या कर सकता है। तो सवाल उठता है कि जब पूँजीपति पूँजी के नियन्त्रण को हस्तान्तरण कर सकता है या कर देता है, तो व्यवस्था को बदलने या जनता के नियत्रंण के लिए कोशिश करने की जरूरत ही नहीं पैदा होती। यह आज की नई तकनीक और वैश्विक स्तर के श्रम विभाजन में लोगों की भागीदारी और नियत्रंण की जनवादी व्यवस्था की माँग के उलट धारणा बनती है।

(32) यू एन में वीटो अधिकार की तरह ही आई एम एफ, वर्ल्ड बैंक, इत्यादि अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं में भी विकसित देशों के विशेष अधिकार हैं। ये संस्थाएं कारपोरेट सेक्टर के हित के अनुसार ऋण देती हैं। इन संस्थाओं के बुनियादी नियमों को बदलने या इन संस्थाओं का जनवादीकरण करने की कोशिश की जानी चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि हमें आई एम एफ, वर्ल्ड बैंक, डब्ल्यू टी ओ से अलग हट जाना

चाहिए। यह तो अव्यवहारिक बातें हैं। आज की अन्तरनिर्भर दुनिया में ऐसा करना अलाभदायक ही नहीं असम्भव है। आज चीन जैसा देश विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू टी ओ) में सदस्य बनने के लिए 15 साल से लाइन में लगा हुआ है। क्यूबा और विएतनाम भी इस लाइन में खड़े हैं। इसका मतलब है इन अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों के बगैर काम नहीं चलता है। अत: इन संस्थानों के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलू हैं। उदाहराण के लिए जब कोई अन्तर्राष्ट्रीय संस्था अकाल या अन्य काम के लिए पैसा देती है तो उसका सकारात्मक पक्ष यह है कि थोड़ी बहुत गरीब जनता की भी सहायता हो जाती है और गरीब जनता को पीने का पानी ही मिल जाता है जबकि इसका नकारात्मक पक्ष यह है कि ये संस्थाएँ कारपोरेट सेक्टर के माध्यम से यह पैसा लगाने की शर्ते लगायेगी। यह नकारात्मक पक्ष बनता है। हमें माँग करनी चाहिए कि पैसा न तो कारपेरेट सेक्टर के माध्यम से और ना ही सरकारों के माध्यम से बल्कि लोगों के सहयोग व भागीदारी से लगाया जाए। हमें अन्धाधुन्ध विरोध की बजाए जनता को प्रबन्ध में भागीदार बनाने वाला विकल्प पेश करना चाहिए।

(33) आज जब दुनिया एक हो रही है तो हमें दुनिया के सामने विकल्प देने वाला एजेण्डा पेश करना चाहिए। ऐसे वक्त में हमें इनसे अलग होकर कहाँ डेढ़ इंच की मस्जिद बना सकते हैं। दुनिया से अलग होने की बातें बेमानी हैं।

(34) हमारी सरकार हमेशा दुनिया से एटम बम खत्म करने का नारा देती रही है परन्तु खुद ने एटम बम का धमाका कर दिया। आज वैश्वीकरण को एटम बम की नहीं शांति की जरूरत है। वैश्वीकरण की माँग है कि सभी परमाणु हथियार यू एन ओ को सौंप दें। यू एन ओ उन्हें नष्ट करे या जरूरत समझे तो थोड़े बहुत अपने पास रख ले। यह कार्य आज की राष्ट्रीय सरकारें और परमाणु सम्पन्न सरकारें नहीं करना चाहती हैं। इसका सीधा अर्थ है कि यह नीति वैश्वीकरण के रास्ते में बड़ी बाधा है। इससे सैनिक बजट बढ़ते रहते हैं, बेरोजगारी, गरीबी बढ़ती रहती है। और हम में से कुछ लोग वैश्वीकरण को ही इनका कारण समझने लगते हैं। अगर ऐसी गलत समझ बनी तो वर्तमान में चल रही गलत राष्ट्रीय सरकारें कई सालों तक चलती रहेंगी। वैश्वीकरण को बुराइयों की जड़ समझकर उसके पीछे पड़ने से बुराई पैदा करने वाले लोग खुश होते हैं कि हमारा पीछा छूटा और लोग दिग्भ्रमित होने से हमारी उम्र और बढ़ेगी। लोगों में धनबल और सत्ताबल का विरोध करने की कोई नहीं सोचेगा और उल्टा वैश्वीकरण के पीछे पड़ जायेंगे तो अच्छी व्यवस्था कैसे बनेगी।

(35) आज हमें प्रभुत्ववाद की जगह शान्ति एवं धनबल, बाहुबल व सत्ताबल की जगह मूल्य आधारित राजनीति लाने के लिए लोगों को तैयार करना होगा। व्यवस्थागत खराबियों के लिए आम जनता का भी दोष है। आखिर आम जनता ही

अपने वोटों से खराबी करने वालों को चुनती है। आम जनता भी धनबल व सत्ताबल देखकर वोट देती है। चाहे कितना भी ईमानदार व आदर्श व्यक्ति को चुनाव में खड़ा किया जाए उसे लोग वोट नहीं डालते हैं। लोग कहते हैं क्या फायदा है इसे वोट डालने का, जब यह जीतेगा नहीं तो हमारा वोट बेकार जायेगा। जबकि वास्तव में खराब व्यक्ति को वोट डालने से वोट खराब होता है। सही व्यक्ति को वोट डालने से वोट खराब नहीं होता चाहे वह व्यक्ति हार ही क्यों न जाए। हमें लोगों को मूल्य (उसूल) आधारित दिशा पर चलने के लिए तैयार करना होगा। लोगों को बदलना होगा तभी वर्तमान अनुचित व्यवस्था को एक न्यायिक, जनवादी विश्व व्यवस्था में बदला जा सकता है।

(36) आजकल एक पहलू गैर-सरकारी संस्थानों (एन जी ओ) का भी है। एन जी ओ भी मुख्य तौर पर कारपोरेट व्यवस्था को ही कायम रखने का काम कर रहे हैं। इसमें करोड़ों-अरबों रुपये लगे हैं। इन्हें कुछ कारपोरेट सेक्टर ने बनाए हैं जबकि कुछ सरकारों ने बनाए हैं। इनमें से सभी खराब नहीं हैं परन्तु कुछ में पैसे का दुरुपयोग होता है, भ्रष्टाचार होता है। कई हालातों में व्यवहार काफी खर्चीला है।

देखिए, सिएटल में प्रदर्शन करना हो तो एन जी ओ के सदस्य हवाई जहाज से हजारों पहुँच जाते हैं जबकि आम आदमी के पास बस पर यात्रा करने के पैसे नहीं हैं। यहाँ से मद्रास जाना हो तो लोग कहते हैं कि कैसे जायेंगे, पूरे महीने की आय किराये में ही खर्च हो जायेगी। लेकिन एन जी ओ सदस्य हवाई जहाजों में घूमते हैं। पीकिंग में महिलाओं की कान्फ्रेन्स हुई थी। वहाँ 40 हजार एन जी ओ सदस्य पहुँच थे। हमें सभी का अध्ययन करना चाहिए। इसमें बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ भी हैं, सरकार भी हैं, एन जी ओ भी हैं हालांकि वो सरकार से अलग हैं। लेकिन ये सब चल रही मूल कारपोरेट व्यवस्था को बनाए रखना चाहते हैं।

(37) जहाँ तक वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था को बदलने का सवाल है इसके लिए वैकल्पिक एजेण्डा की जरूरत है। वामपंथी और कुछ अन्य विचारशाखाएँ स्टेट सेक्टर को इसका विकल्प पेश करती हैं। लेकिन स्टेट सेक्टर वैसा ही एकाधिकारवादी है जैसा कारपोरेट सेक्टर है, परन्तु क्षमता व कुशलता के मैदान में कारपोरेट क्षेत्र से स्टेट सेक्टर पिछड़ जाता है।

(38) स्टेट सेक्टर पर बोलते हुए श्री सर्राफ ने कहा कि वामपंथी स्टेट सेक्टर को पब्लिक सेक्टर भी कहते हैं। परन्तु यह सही धारणा नहीं है, क्योंकि पब्लिक (जनता) का स्टेट पर नियन्त्रण नहीं होता है। वामपंथी कहते हैं कि स्टेट सेक्टर (राजकीय क्षेत्र) बनाने से जनता का भला होता है, परन्तु हालिया सोवियत संघ और समाजवादी धड़े के अनुभव ने इसे नकार दिया है। समाजवादी धड़े का पतन हो गया

है। समाजवाद में सभी नकारात्मक पहलू नहीं है, उसमें सकारात्मक पहलू भी हैं, परन्तु सकारात्मक और नकारात्मक में से नकारात्मक पक्ष प्रधान हो गए। परिणाम स्वरूप, समाजवादी व्यवस्था का पतन हो गया।

राज्य (स्टेट) को लोगों का पयार्य बनाना गलत है राज्य अलग चीज है, जनता अलग चीज है। जब हम राज्य को सामाजिक व्यवस्था का मुख्य खिलाड़ी मानते हैं तो परिणाम ठीक नहीं निकलते हैं। क्योंकि वह शासक वर्ग की राजनीतिक जरूरतों को ही अपनी प्राथमिकता बना लेता है। उसके साथ ही सारी दुनिया और हमारे राष्ट्र का अनुभव बताता है कि स्टेट सेक्टर घाटे में चलता है। अपने देश में ही देखिए, इस क्षेत्र का मुनाफा 2 से 3 प्रतिशत के बीच रहता है, जबकि बैंक ब्याज 9 से 15 प्रतिशत है। इस घाटे का कारण यह है कि इस सेक्टर पर या तो बड़े राजनीतिज्ञों या बड़े नौकरशाहों का नियन्त्रण रहता है और इसे आर्थिक जरूरतों की बजाए राजनीतिक जरूरतों के मुताबिक चलाया जाता है, श्रमिकों की प्रबन्धन में कोई भागीदारी नहीं है। उन्हें केवल इतना अधिकार दिया हुआ है कि निकालेंगे नहीं। श्रमिकों की नौकरी स्थायी है। बस श्रमिकों को इस पर ही खुश रखा जाता है। श्रमिकों को चाहे हड़ताल का अधिकार कम दिया जाए परन्तु उनके वेतन संबंधी अधिकारों को स्थायी और समय-समय पर उसमें सुधार और माँगों को पूरा किया जाता रहा है। स्टेट को हालांकि पब्लिक सेक्टर का नाम दिया जाता है परन्तु आज तक श्रमिकों या लोगों को बिल्कुल भी हिस्सेदार नहीं बनाया गया है, इसमें रूस, चीन और सभी समाजवादी राष्ट्रों का अनुभव शामिल है। कहीं भी श्रमिकों एवं जनता को प्रबन्ध में भागीदारी नहीं दी गई है। श्रमिकों की किसी भी यूनियन ने भी प्रबन्धन के अधिकार के लिए कभी हड़ताल नहीं की है। चाहे स्टेट सेक्टर घाटे में चलता रहा और आखिरकार पश्चिमी देशों के कारपोरेट क्षेत्र से प्रतियोगिता में पीछे रह गया। इसका परिणाम समाजवादी व्यवस्था के विघटन के साथ-साथ स्टेट सेक्टर की जगह दुनिया में कारपोरेट सेक्टर बढ़ने के रूप में निकला है।

(39) दरअसल स्टेट सेक्टर और कारपोरेट सेक्टर दोनों राष्ट्रीय राज्यों के दो विकास मॉडल हैं। इन्होंने अपने दौर में राष्ट्रीय राज्यों की विकास जरूरतों को पूरा किया। लेकिन ये अब वैश्वीकरण के तकाजों को पूरा नहीं करते हैं। कारपोरेट सेक्टर, बाजार, पूँजी और पूँजीपतियों के नियन्त्रण में चलता है और उनके हितों की ही ज्यादा सेवा करता है जबकि स्टेट सेक्टर शासक राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों की राजनीतिक और पूँजी प्राथमिकताओं को ही मुख्य तौर पर सामने रखता है। इन दोनों का विकल्प एक मानवीय और पर्यावरण आधारित मॉडल ही हो सकता है। इस मॉडल में नम्बर एक की भूमिका लागों की है। इस एजेण्डा के बिना लोगों को संगठित नहीं किया जा सकता है और ना ही कोई जनवादी मोर्चा या संगठन बनाया जा सकता है। महज

विरोध की बुनियाद पर सकारात्मक एजेण्डा नहीं बनाया जा सकता है। कोई कहें भाजपा साम्प्रादियक है उसके खिलाफ मोर्चा बना लो या काँग्रेस के खिलाफ सत्ता के लिए मोर्चा बना लो, जो कोई ऐसा करेगा वह व्यवस्था का सकारात्मक विकल्प नहीं दे सकेगा और शायद चल रही व्यवस्था से बदत्तर विकल्प ही देगा। लोगों की बेहतरी के लिए क्या एजेण्डा है जो चल रही व्यवस्था को हटाकर एक अच्छी व्यवस्था कायम करेगा, यह बताया जाना चाहिए। ऐसे एजेण्डा के बिना किसी किस्म का संगठन नहीं बनाना चाहिए। हमारे एजेन्डे में हकीकतें और उनका समाधान अवश्य होना चाहिए। इन सब पर बैठकर बातें होनी चाहिए। इसमें यह भी बहस हो कि कौनसा सेक्टर बेहतर है। स्टेट सेक्टर का क्या परिणाम निकला है, कारपोरेट सेक्टर का क्या अर्थ है। इन सब धारणाओं पर खुल कर बहस होनी चाहिए।

(40) हम कह सकते हैं कि इसकी जगह मानवीय और पर्यावरण केन्द्रित मॉडल बनाया जाए। जिसमें कारपोरेट क्षेत्र के प्रबन्धन पर जनता का नियन्त्रण कायम हो। इस तरह कारपोरेट क्षेत्र को डेमोक्रेटिक क्षेत्र में बदल दिया जाए। आम शेयर होल्डर को प्रबन्धन में कम अधिकतर हासिल हैं और श्रमिक प्रबन्धन के अधिकारों से वंचित हैं। आम शेयरधारियों को उनके शेयरों के मुताबिक प्रबन्धन में हिस्सा दिया जाना चाहिए और श्रमिकों को प्रबन्ध में एक तिहाई प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए। पिछले 80 सालों में हमारे देश में ट्रेड यूनियनें बनी हैं, श्रमिकों को प्रबन्धन में भागीदार बनाने की माँग पर एक बार भी हड़ताल नहीं की है। हमारा कहना है कि श्रमिकों के प्रतिनिधि भी प्रबन्धन में उसी तरह भागीदार बनाए जाए, जैसे टाटा, बिड़ला या बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के डायरेक्टरों को बनाया हुआ है।

(41) कम्पनी कानून में कारपोरेट सेक्टर में जो प्रामोटर शेयर हैं उन्हें तय करने (फ्लोट करने) का अधिकार कम्पनी की शुरूआत करने वालों को दिया गया है। इस संक्रमणकालीन समय के लिए एक तिहाई प्रबन्धन में इन्हीं लोगों की भागीदारी रखी जा सकती है। एक तिहाई शेयर श्रमिकों तथा बाकी बचे एक तिहाई शेयर आम शेयर होल्डर को दिया जा सकता है। इस प्रकार यह तुलनात्मक न्यायिक व्यवस्था होगी। फिर 10 साल बाद प्रोमोर्टस शेयर समाप्त हो सकते हैं। इस प्रकार सारा नियन्त्रण जनता को सौंपा जा सकता है।

आजकल कारपोरेट क्षेत्र की लगभग सभी कम्पनियाँ पब्लिक लिमिटेड कम्पनियाँ हैं। निजी कम्पनियां नहीं हैं क्योंकि आजकल की कम्पनियों में लगा पैसा तो जनता का पैसा ही है। स्टेट सेक्टर की कम्पनियों में लगा पैसा तो जनता का पैसा ही है। लेकिन स्टेट सेक्टर का नियन्त्रण अफसरों के हाथों में दे दिया गया है या कारपोरेट को दे दिया गया है या दिया जा रहा है। जबकि यह नियन्त्रण जनता को दिया जाना

चाहिए। यह विकल्प है। पूँजी पर जनता के जनवादी नियन्त्रण से ही शोषण, गरीबी, बेरोजगारी जैसी समस्याओं से निजात पाया जा सकता है और अतिरिक्त धन बचाया जा सकता है, जिससे आर्थिकता को बेहतर बनाया जा सकता है। यह हिन्दुस्तान और पूरी दुनिया में किया जा सकता है, परन्तु इसके लिए केवल आर्थिक व्यवस्था ही नहीं बल्कि राजनीतिक और सांस्कृतिक व्यवस्था भी बदलनी पड़ेगी। अकेली आर्थिक व्यवस्था बदलने का सिद्धान्त एक तरफा है। हमें राजनीतिक व्यवस्था यू एन से लेकर अपने देश और गाँव व पंचायत और व्यक्ति तक के स्तर पर ठीक करने की जरूरत है। गाँव में पैसा ग्राम सभाओं के जरिए क्यों न खर्च किया जाए। एक सरकारी अफसर के हवाले पैसा क्यों छोड़ा जावे। इसमें भ्रष्टाचार खत्म नहीं हो तो कम तो होगा ही। हिसाब मासिक अथवा दो महिने में एक बार जनता के सामने रखा जाए। जब जनता हिसाब नहीं लेती है, और हिसाब देने वाला अपने आपको जनता के प्रति जवाबदेह नहीं समझता है तो भ्रष्टाचार व कालाधन बढ़ता है। ये बुराइयाँ बाहर से थोड़े ही आती हैं या पाकिस्तान थोड़े ही पैदा करती है। हमें चुनौती कराची या लाहौर से थोड़े ही आती है। हमें चुनौती नई दिल्ली से आती है। खतरा आन्तरिक है। सारी बुराइयों की जड़ मुख्य तौर पर हमारे अन्दर है। जनता को खतरा चल रही व्यवस्था से है। इस व्यवस्था का विकल्प तैयार करना जरूरी है। विकल्प का एजेन्डा, इसके खिलाड़ी और लोग तैयार करने हैं फिर व्यवस्था बदल जाती है। इस तब्दीली की प्रक्रिया 10 या 20 साल में पूरी हो जायेगी। जितना गुड़ डालेंगे उतना ही मीठा हो जायेगा। जितनी मेहनत करोगे उतना ही फल मिलेगा।

(42) सेमीनार के विषय के दूसरे नुक्ते (भारत सरकार की अर्थनीति) के बारे में इससे पहले मुख्य बातें हो चुकी हैं, उनसे अर्थव्यवस्था और उसकी निर्देशित नीति की अकुशलता जाहिर है। इस पर और कुछ कहने की जरूरत ही नहीं है।

(43) राजस्थान में अकाल की समस्या पर बोलते हुए श्री सर्राफ ने कहा कि राजस्थान में अकाल की समस्या है। पानी की समस्या है। पशुओं के लिए, फसल के लिए, पानी की जरूरत है। सरकार ने या जनता ने जल संग्रहण नहीं किया। दुनिया में जल संग्रहण एक नई बात है। केन्द्रीय और राज्य स्तरीय जल संग्रहण विभाग खुले हैं। लेकिन राजस्थान में पिछले 3 साल से अकाल पड़ रहा है। इस साल भी वर्षा का पानी जाया हो गया। जल संग्रहण नहीं किया गया। ट्रकों से पानी पहुँचाया जा रहा है। यह होना चाहिए लोगों को राशन भी मिले, पानी भी मिले, लेकिन इसके साथ अकाल की समस्या को समाप्त करने की दीर्घकालीन योजना होनी चाहिए जो हमारी समस्या का हल कर सके। रेगिस्तान रोकने का प्रोग्राम बनाया जाए, प्लांटेशन की जाए, जंगल लगाया जाए, पर्यावरण विकास हो ताकि खेती, इन्सान, जीव-जन्तु सभी के लिए ठीक हो। जनता क्यों न करें। केवल सरकार पर ही निर्भर क्यों रहे। लोगों को इन एजेन्डों

पर तैयार करें। यह नहीं करेंगे तो फिर लोगों में यही धारणा रहेगी कि फलां मुख्यमंत्री ने खराब कर दिया या कांग्रेस ने खराब कर दिया या भाजपा ने खराब कर दिया, इत्यादि यह तो नकारात्मक एजेन्डा बनता है। हम लोगों को बताएँ कि कांग्रेस का एजेन्डा इस तरह गलत है या भाजपा का एजेन्डा इस तरह गलत है और ठीक क्या है इसे टेस्ट करके देखें। खराबियां चाहे विश्व स्तर की है या देश अथवा राज्य स्तर की है, अलग-अलग नहीं है। ये सब गलत विचारधारा से जुड़ी हुई हैं। इन सबकी खराबी यह है कि यह जनता और पर्यावरण को प्रथमिकता नहीं देती है। नया विज्ञान जाहिर करता है कि मानव का पर्यावरण से चोली दामन का साथ है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड और परमाणु सहित प्रत्येक प्रक्रिया अन्तरनिर्भरता व अन्तरक्रिया में है। हर अणु-परमाणु व कण और उनकी प्रक्रियाएं अन्तरनिर्भर है और अन्तरक्रिया में है। चीजें अपने पर्यावरण पर निर्भर हैं तथा उसके साथ अन्तरक्रिया में है। मानव भी अपने पर्यावरण पर अन्तरनिर्भर है और अन्तरक्रिया करता है

मानव की आपसी अन्तरनिर्भरता इतिहास में छोटे-छोटे गणों, कबीलों व रियासतों के समूह के रूप में थी और अब यह अन्तरनिर्भर दुनिया के स्तर पर कायम हो गई है।

इस प्रक्रिया को सम्पूर्ण तौर पर भी हम समझे और इसके भागों को भी समझे और इन भागों से सम्बधित व्यवस्था को भी जाने। आज दुनिया की हकीकत को भी समझें और इसका प्रासंगिक एजेण्डा भी बनाए। तो सब अच्छे लोग एक मंच पर इकट्ठे हो सकते हैं। ऐसे संक्षिप्त डिबेट में तो कभी-कभी हारने-जीतने का सवाल बन जाता है। हम यहाँ जीतने-हारने के लिए आज का सेमीनार नहीं कर रहे हैं। हम सब जो यहाँ बैठे हैं, इस व्यवस्था को खराब मानने वाले लोग हैं, हम अपने विचारों को शेयर करे। चल रही व्यवस्था में क्या गलत है, कहां-कहां गलत है उसे ठीक कैसे किया जा सकता है। इसकी राजनीति क्या हो, आर्थिकता क्या हो, संस्कृति क्या हो। यह सोचें तो मेरे ख्याल में हिन्दुस्तान में जल्दी तब्दीली लाई जा सकती है। लेकिन इस तब्दीली के लिए आज के वैश्वीकरण के युग में जरूरी है कि राष्ट्रवाद के चक्कर में न फँसे और न ही दूसरों को फँसाये रखे। वैश्वीकरण का तकाजा है कि विश्व शान्ति की दिशा पर अमल करें। शान्ति के अमल के लिए जरूरी है कि हम विवादित मसलों को बातचीत और सुलह से हल करें। कश्मीर के मसले पर जरूरी है कि हम शान्ति का रास्ता अपनाए और बातचीत से इस समस्या का हल करे। बातचीत नहीं करना महाशक्तिवाद का एजेण्डा है। आज के युग में दुश्मन भी वार्ता करते हैं। जिनको आतंकवादी कहते हैं उनसे भी बातचीत करते हैं।

(44) हम खुद नहीं देखते कि हम कितने तर्कसंगत है। 1995 में संसद के दोनों सदनों में एक मत से प्रस्ताव पास किया कि कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है

और इस पर कोई बात नहीं की जायेगी। कश्मीर मसला विवादास्पद नहीं है। इस पर वाजपेयी ने हाथ खड़ा किया और नरसिंह राव का हाथ भी उपर था। 1998 में वाजपेयी लाहौर घोषणा पत्र पर दस्तखत करके आये कि कश्मीर समस्या है जिसे भारत-पाक के बीच द्विपक्षीय वार्ता से हल किया जायेगा। इस पर कोई नहीं बोला। किसी प्रेस ने सवाल नहीं खड़ा किया कि यह अभिन्न अंग अब विवादित कैसे बन गया, हमारी पार्लियामेन्ट के उस प्रस्ताव का क्या हुआ? इस पर ना किसी राजनीतिज्ञ और ना किसी संसद सदस्य ने सवाल खड़ा किया। 1962 में भारतीय संसद में एक मत से प्रस्ताव पारित किया कि जब तक भारत-चीन सीमा पर चीन का एक भी सिपाही रहेगा तब तक चीन से बात नहीं करेंगे। उसी जगह पर चीन के हजारों सिपाही आज भी है। इसी दौरान बहुत से भारतीय नेता चीन का दौरा कर आये। नरसिंह राव, राजीव गांधी भी चीन गए और सबसे पहले वाजपेयी चीन गए जब वे जनसंघी थे और जनता पार्टी के शासन में विदेश मंत्री थे। उसी मंत्रिमंडल में आडवाणी भी मंत्री थे। वाजपेयी विदेश मंत्री के तौर पर चीन गए। अभी वाजपेयी चीन में ही थे कि चीन ने वियतनाम पर आक्रमण कर दिया। यह वाजपेयी और भारत की बेइज्जती थी। जिस पर वाजपेयी ने न तो चीन में और ना ही भारत आने के बाद कोई प्रतिक्रिया व्यक्त की और चुप्पी ही साधे रखी। यह नहीं कहा कि चीन ने गलत किया है। इस तरह हम हथियारों के बल पर नहीं बल्कि उससे भी ज्यादा विचारों के दृष्टिकोण से आतंकवादी है। मजबूत की गलती पर बोलते नहीं, कमजोर को छूट देते नहीं। हम कसम कुछ लेते हैं और करते कुछ और हैं। क्या झूठ से राष्ट्र बनेगा, क्या इससे हमारे राष्ट्रीय हितों की पूर्ति होगी। सत्ता राजनीति का यह रास्ता महाशक्तिवाद का रास्ता है जो आतंकवाद को जन्म देता है। राष्ट्र सच्च बोलने से ही बनता है।

आज तो रेड़ी वाला भी समझने लगा है कि एक ही रेट बताओ नहीं तो ग्राहक बिदक जाता है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की भी यह समझ हो गई है कि उपभोक्ता को अच्छी सेवा दो। हम स्वदेशी की बाते करते हैं, लेकिन बाथरूम में साबुन, टूथपेस्ट, तेल, परफ्यूम सब बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के होते हैं। हम हिन्दी का प्रचार करते हैं लेकिन हमारे बच्चे, हमारे लीडरों के बच्चे अंग्रेजी मीडियम में पढ़ते हैं।

(45) वाजपेयी ने कहा कि हिजबुल मुजाहीद्दीन कश्मीरी आतंकवाद है, वह हमारा भाई है। एक ही बयान आया कि हमारे आर्मी कमाण्डर ने स्वागत किया। हमारा गृह सचिव बात करने गए और उन्होंने तथाकथित आतंकवादियों के साथ फोटो खिंचवाए और यही लोग दिल्ली में आतंकवाद को राष्ट्रद्रोही के रूप में मानते हैं। हिन्दुस्तान की बदकिस्मती है कि अच्छे लोग हैं परन्तु उनमें से कुछ दिशा पर स्पष्ट नहीं है और कुछ आत्मकेन्द्रित हैं। यह स्थिति जन एकता के रास्ते में रुकावट बनती है।

फारूख अब्दुल्ला ने स्वायत्तता की माँग की परन्तु हमारी प्रेस ने उसे देशद्रोही

कहा। वह देशद्रोही कैसे हो गया। स्वायत्तता स्वयं राज करने का हक है। यह डेमोक्रेसी का उच्च रूप है। क्या इस समझ से हम न्याय कर सकते हैं? इसका नतीजा अन्याय में ही निकलता है। अब देखिए, एटम बम कैसे न्याय कर रहा है। जब से एटम बम बनाया है तब से असुरक्षा बढ़ रही है। गणत्रंण दिवस और स्वतन्त्रता दिवस जब मनाये जाते हैं तो पूरी सेना को सचेत करना पड़ता है। 26 जनवरी को युद्ध जैसा माहौल हो जाता है हमारा गणत्रंण दिवस सेना के हवाले होता है।

(46) आज दुनिया में 14 देश है जहाँ सेना ही नहीं है, कोस्टारिका उनमें से एक है। हालांकि ये देश छोटे हैं। छोटे हैं इसलिए सुपर पावर बनने का ख्वाब नहीं रखते हैं। चीन, भारत बड़े हैं और सुपर पावर बनना चाहते हैं। लेकिन सुपर पावर के रास्ते से जायेंगे कहाँ। इस रास्ते से आखिर कूड़े के ढेर पर ही पहुँचना है।

(47) अंत में श्री सर्राफ ने सभी श्रोताओं से अपील करते हुए कहा कि हमें अच्छे लोगों को एक मंच पर लाने के लिए सहमति बनाने के लिए कदम उठाने चाहिए। सेमीनार केवल दिखावे के लिए नहीं बल्कि गोलमेज के चारों तरफ बैठकर आम सहमति की तरफ कदम-ब-कदम आगे बढ़ाना चाहिए। बुनियादी और फौरी जन सवालों पर हमारा आपस में विचारों का फर्क रहेगा। लेकिन आहिस्ता-आहिस्ता यह फर्क दूर होता जायेगा। हमें एक बात पकड़ लेनी है कि लोगों की ताकत ही तब्दीली ला सकती है और उसके लिए लोगों को जागृत करना ही हमारा मुख्य कार्य है।

मैं सभी साथियों का शुक्रगुजार हूं कि जो कुछ मुझे कहना था वह उन्होंने कहने दिया और सुना। धन्यवाद।

जयपुर सेमीनार में उठाये कई सवालों का जवाब देते हुए श्री सर्राफ ने कहा कि मैं किसी के सवालों का जवाब नहीं देना चाहता हूं, मैं तो केवल अपनी कुछ बातों को संक्षेप में कहना चाहता हूँ।

हम सभी वक्ताओं के आभारी हैं कि हमें मूल्यवान विचार सुनने को मिले हैं। प्रो. रमेशजी ने दो बातें रखी हैं। मैं उनके सम्बन्ध में कुछ कहूँगा। रमेशजी ने दो बातें सवाल के रूप में रखी हैं। उनका पहला सवाल है कि श्रम की बचत करने वाली तकनीकी बेरोजगारी खड़ी कर रही है, अतः ऐसी बढ़ रही तकनीकी समाज में बेरोजगारी को बेकाबू कर देगी।

इस सम्बन्ध में मेरा मत है कि अगर यही व्यवस्था रहेगी तो बेरोजगारी बढ़ेगी। अगर व्यवस्था बदल दी जाए तो नई तकनीकी बेरोजगारी नही बढ़ा सकेगी।

प्रो. साहब का दूसरा सवाल है कि सकारात्मक कार्यक्रम (पॉजीटिव एजेण्डा) कैसे बनाया जाए? इन दोनों सवालों का ही जवाब है कि मानव मैत्रिक और पर्यावरण

मैत्रिक व्यवस्था का निर्माण करने वाला एजेण्डा सकारात्मक भी होगा और बेरोजगारी को भी रोक देगा।

आज के हालात में हमें विकास की समझ बदलनी होगी। हमें विकास का मॉडल बदलने की जरूरत है। विकास की परिभाषा बदलने की जरूरत है। उदारवादी आर्थिक वृद्धि और मुनाफे को विकास के रूप में परिभाषित किया है। इस सिद्धांत के अनुसार आर्थिक वृद्धि में अधिक उत्पादकता, कम लागत और गुणवत्ता के तीनों गुणों को लिया जाता है। यानि पश्चिमी उदारवादी सिद्धांत में आर्थिक वृद्धि का मतलब है, उत्पादन में वृद्धि हो, उसकी लागत कम हो तथा उसकी गुणवत्ता अच्छी बने। यह सिद्धांत केवल आर्थिक वृद्धि पर जोर देता है और प्रतियोगिता पर जोर देता है। जबकि इससे लोगों का कुछ बने या न बने और पर्यावरण चाहे बरबाद हो जाये। यह सिद्धांत एक तरफा है। अत: आर्थिक वृद्धि की प्राथमिकताओं को बदलना चाहिए। ऐसे एक तरफा सिद्धांत के चलते हमारी व्यवस्था पर्यावरण को तबाह कर देगी और बेरोजगारी जैसी गंभीर समस्याओं को असाध्य बना देगी। आज की दुनिया में यह एक तरफा उसूल नहीं चलेगा।

अत: हमें नये उसूलों वाली व्यवस्था बनानी होगी। उसमें आर्थिक वृद्धि के उसूल की नई प्राथमिकताओं से और नये उसूलों से जोड़ना जरूरी है। इसके लिए आर्थिक वृद्धि को दो प्राथमिकताओं और पांच आधारभूत उसूलों के साथ जोड़ने की जरूरत है। ये उसूल ज्यादा भी हो सकते हैं परन्तु अभी मुख्य पांच उसूलों को आधार बनाया जा सकता है। आर्थिक वृद्धि की प्राथमिकताएं पर्यावरण और जनता होनी चाहिए यानि इसका उद्देश्य प्रकृति और मानव का विकास करना, प्राथमिकता पर होना चाहिए। पाँच आधारभूत उसूलों में पहला उसूल टिकाऊपन (सिस्टेनेबिलिटी) का होना चाहिए। टिकाऊपन दो बिन्दुओं पर आधारित होना चाहिए, यानि पर्यावरण की दृष्टि से भी और मानव संसाधनों की दृष्टि से भी सस्टेनेबल होना। ज्यादा खर्च करने और कुप्रबन्ध करने का सिद्धांत भी नहीं चलेगा, जिसमें उद्यम को घाटे में चलाया जाता है, यह उसूल भी नहीं चलेगा। कुशलता और क्षमता का प्रतियोगी स्तर कम से कम उतना होना चाहिए जितना स्वतंत्र बाजार व्यवस्था निकालती है। मानवीय वित्त और आर्थिक व्यवस्था एवं पर्यावरण, दोनों के मुताबिक सस्टेनेबल होना जरूरी है। इसका दूसरा मुख्य पहलू साम्यता या सामाजिक न्याय का है। यह उचित व न्यायिक व्यवस्था का उसूल हैं। इसमें सामाजिक न्याय और बराबरी दोनों पहलू आते हैं। मानव की हमेशा से दो माँगें और आकांक्षाएं रही हैं, जो बहुत पुरानी हैं और अभी तक पूरी नहीं हुई है, वह है सामाजिक न्याय और बराबरी की चाहत। तीसरा मुख्य उसूल उत्पादकता का है। उत्पादकता में तीनों गुण मौजूद होने चाहिए, यानि उत्पादन की कीमत कम होना, गुणवता में सुधार होना और उत्पादन में वृद्धि होना। चौथा पहलू जनवाद (डेमोक्रेसी)

का है। जनवाद का मतलब है प्रबन्ध कैसा हो, नियन्त्रण कैसा हो। इसमें जनता का नियन्त्रण होना चाहिए, जिसमें निजी हित और साझे हित दोनों का उचित प्रबन्धन होना चाहिए। निजी प्रबन्धन भी ठीक होना चाहिए, जिसमें अहम की समस्या का भी उचित नियन्त्रण हो सके और साझा प्रबन्धन भी ठीक हो। पाँचवां पहलू पारदर्शिता का है। वो चाहे निजी कार्यवाही हो या साझी कार्यवाही हो वह लोगों के सामने पारदर्शी होनी चाहिए, यानि खुली होनी चाहिए। दो प्राथमिकताओं के साथ इन पाँच उसूलों को आधार बनाया जाए तो एक नये समाज को बनाया जा सकता है, चलाया जा सकता है यानि समाज को संचालित किया जा सकता है।

ऐसे जनता के नियन्त्रण वाले समाज में श्रम की बचत करने वाली तकनीकी और उससे बचने वाले समय का उचित प्रबन्धन किया जा सकेगा। ऐसे प्रबन्ध में जितनी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां बनेगी उनका प्रबन्धन आज के कारपोरेट सेक्टर (संगठित औद्यौगिक क्षेत्र) की तरह नहीं बल्कि प्रबन्धन में एक तिहाई शेयरधारी जनता, एक तिहाई श्रमिकों तथा एक तिहाई धनधारियों (जब तक समाज में विशिष्ट दौलतमंद मौजूद रखते हैं) की भागीदारी से संगठित औद्यौगिक क्षेत्र को नियन्त्रित किया जाए जो तब डेमोक्रटिक सेक्टर कहलायेगा।

नई तकनीकी आने से आराम का समय अधिक बचता है तो उस समय का ठीक प्रबन्धन किया जा सकता है। इसको प्रबन्धन बोर्ड नियन्त्रित कर सकता है। कार्यवाही समय और आराम के समय का अनुपात प्रबन्ध बोर्ड तय कर सकता है।

पहले जब कम विकसित तकनीकी थी उस समय काम के 12 घंटे थे। धीरे-धीरे काम के 8 घंटे किए गए। अब तकनीकी के प्रभाव से काम के घंटे 5 या 3 घंटे भी हो सकते हैं। बचे समय को एशो आराम की बजाए नई खोज और अन्वेषण करने, समाज की व्यक्तिगत और सामुदायिक मूल्य व्यवस्था ठीक करने व सांस्कृतिक स्तर ऊँचा उठाने या उचित मनोरंजन और शौक पूरा करके नई ऊर्जा हासिल करने में उपयोग किया जा सकता है। हमें उसूलों पर आधरित समाज को संगठित करने के लिए लोगों को तैयार करना चाहिए।

अत: विकास मॉडल पर हमारी साझी राय बन सके तो साझा सकारात्मक कार्यक्रम (पॉजीटिव एजेण्डा) बन सकता है। विकास की धारणा पर एकमत होने पर हम संगठित हो सकते हैं। असल में मानव के बीच मुख्य मतभेद विकास की धारणा के बारे में है। यह विकास किसके नियन्त्रण में चले और कैसे चले? यह मुख्य मतभेद वाला बिन्दु हैं।

दूसरा सिद्धांत राजकीय प्रबन्ध का है। यह सोच पैदावारी शक्तियों के विकास पर जोर देता है। इस सोच के मुताबिक मुख्यतया पैदावारी साधनों के विकास से स्वत:

विकास हो जाता है। यह सिद्धांत पर्यावरण और मानव संसाधनों के चौतरफा विकास के बहुत से पहलुओं की अवहेलना करता है।

इस तरह विकास की धारणा पर हमारी साझी राय बन सके तो नई तकनीक से उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी तथा सकारात्मक एजेण्डा को बनाने में मदद मिलेगी। इसी से मानवीय एकता कायम होगी।

एक और सवाल, राष्ट्रीय हितों का सवाल है। हमे इस सवाल पर भी नई रोशनी में विचार करना चाहिए। हमें सभी सवालों पर समय के साथ-साथ थोड़ा परिर्वतन अवश्य करना चाहिए। आज जब सारी दुनिया अन्तरनिर्भर बन गई है तो राष्ट्रीय हितों के साथ-साथ दूसरे राष्ट्रों के साथ साझे अन्तर्राष्ट्रीय हित भी बन गये हैं यानि हमारे हित अन्तरनिर्भर हो गये हैं अब हमारे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय हितों को कैसे जोड़ा जाए यह सवाल भी हमारे सामने हैं।

अगर हम कहें कि हम तो केवल राष्ट्रीय हितों को ही ध्यान में रखेंगे तो उससे टकराव और युद्ध की तैयारी निकलती है। क्योंकि राष्ट्रों के जन्म से ही राष्ट्रीय रक्षा की तैयारी के लिए सेनाओं को खड़ा करना बड़ा कार्य रहा है।

जबकि आज की अन्तरनिर्भर राष्ट्रों की दुनिया में शान्ति की राजनीति मुख्य एजेण्डा बन गया हैं। शान्ति के कार्यक्रम के बगैर आज विकास की धारणा काम नहीं कर सकती है। आज ऐसे विकास का सिद्धान्त चल सकता है, जिसमें प्रकृति और मानव को प्राथमिकता पर रखा जाए और पाँच उसूलों को मुख्य आधार बनाया जाए।

एक और सवाल है कि रूस की समाजवादी व्यवस्था की उपलब्धियों को बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया जाता है जबकि आज की हकीकत को नजरअन्दाज किया जाता है। आज के रूस की आर्थिकता पर माफिया का कब्जा है। यह आज की हकीकत है। दूसरा उदाहरण चीन का दिया जाता है जो हमसे 10 गुना ज्यादा विदेशी पूँजी आयात कर रहा है और 100 प्रतिशत विदेशी निवेश की छूट दे रखी है और भूमि का प्रबन्ध ठेकेदारी व्यवस्था के तहत कर रहा है। ऐसे बहुत से अन्दरूनी परिवर्तन वहाँ किए जा रहे हैं।

दुनिया के सारे तथ्य हमें ध्यान में रखने चाहिए। हमें हर हकीकत जो हो रही है उसको ध्यान में रखना चाहिए।

प्रो. रमेश दाधीच साहब ने कुछ नई गहराइयों पर हमारा ध्यान खींचा है। मैं उनका आभारी हूँ। मैंने उन्हें समझने की कोशिश की है। सकारात्मक एजेण्डा बनाना और नई तकनीक से बेरोजगारी बढ़ने से निपटने में सफलता हासिल की जा सकती है। इसकी संभावना मौजूद है परन्तु यह हालात और कोशिश पर निर्भर करता है। कई बार संभावना हकीकत बन सकती है और कई बार संभावना के उल्ट भी हो जाता है। हमें

संभावना को परिपक्व करने की भरपूर कोशिश करना चाहिए। इसमें मुश्किलें काफी हैं। प्रोफेसर साहब ने कहा है कि इस एकता के रास्ते में और वर्तमान हालात में व्यक्ति और उसका अहम् नियन्त्रित करना मुश्किल है। आज के प्रचलित नजरियों में व्यक्तिगत हितों को बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया गया है। स्वतंत्र आर्थिकता, स्वतन्त्र मार्केट, स्वतन्त्र समाज और संगठित क्षेत्र के उदारवादी सिद्धान्त ने व्यक्तिवाद को बढ़ावा दिया है।यह सिद्धान्त निजी हित को मुख्य प्रेरक मानता है। एडम स्मिथ का उदारवादी सिद्धान्त निजी हित पर एक तरफा जोर देता है। जबकि हकीकत में निजी व साझा हित दोनों ही मानव के लिए प्रेरक है। कभी मनुष्य निजी हित को प्रमुखता देता है और कभी साझे हित को प्रमुखता देता है। उदारवादी सिद्धान्त आर्थिक वृद्धि और मुनाफे पर एक तरफा जोर देता है जो राष्ट्रों के निर्माण के समय उपयोगी रही है, उत्पादक रही है, इसीलिए चलती रही है परन्तु अब यह सिद्धान्त अनुपयोगी साबित होता जा रहा है। अत: इसकी प्रासंगिकता समाप्त हो रही है।

आज की अन्तरनिर्भर राष्ट्रों वाली अन्तर्राष्ट्रीय विश्व व्यवस्था को बाजार निर्देशित फिलासफी या राज्य नेतृत्वकारी विकास मॉडल से संचालित नहीं किया जा सकता है। ये दोनों एक तरफा सिद्धान्त आज की वस्तुगत हकीकत को प्रत्युत्तर देने में अप्रासंगिक हो चुके हैं। अत: पर्यावरण और मानव मैत्रिक, दो प्राथमिकताओं और पांच उसूलों वाला मॉडल ही इनका विकल्प हो सकता है। और इसी आधार पर हम सकारात्मक एजेण्डा बना सकते हैं और नई तकनीक व बढ़ती आबादी की वजह से बढ़ रही बेरोजगारी सहित सभी पुरानी व नई समस्याओं का हल ढूँढ सकते हैं। 11.11.2000

❋ ❋ ❋